श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

ŚRĪVIDYĀRṆAVATANTRAM

भाषाभाष्योपेतम्

भाषाभाष्यकार:

श्रीकपिलदेवनारायण

'स्वरूपावस्थित'

॥ श्रीः ॥
चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
496

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

उत्तरार्द्धम् ❋ तृतीयो भागः

(एकत्रिंशतः षट्त्रिंशश्वासात्मकः)

भाषाभाष्यकारः
श्री कपिलदेव नारायण
'स्वरूपावस्थित'

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

ISBN { 978-93-80326-46-7 (Set)
978-93-80326-51-1 (Vol. II, Pt. 3)

प्रकाशक :

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के 37/117 गोपाल मंदिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129
वाराणसी-221001
दूरभाष : (0542) 2335263

संस्करण : 2012
मूल्य : 7500.00 (1-5 भाग सम्पूर्ण)

अन्य प्राप्तिस्थान :

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली न. 21-ए, अंसारी रोड़, दरियागंज
नई दिल्ली-110002
दूरभाषः (011) 32996391, टेलीफैक्सः (011) 23286537

*

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड़, जवाहर नगर,
पोस्ट बॉक्स न. 2113, दिल्ली-10007

*

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पोस्ट बॉक्स न. 1069, वाराणसी-221001

मुद्रक

डीलक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

THE
CHAUKHAMBA SURBHARATI GRANTHMALA
496

ŚRĪVIDYĀRṆAVATANTRAM

of

ŚRĪ VIDYĀRAṆYAYATI

Sanskrit Text with Hindi Commentary

Uttarārdha ❋ Part Three

(31-36 Śvāsas)

Commented by

Sri Kapildev Narayan

Svarūpāvasthita

Chaukhamba Surbharati Prakashan

Varanasi (India)

Publishers :

CHAUKHAMBA SURBHARATI PRAKASHAN
(Oriental Publishers & Distributors)
K. 37/117, Gopal Mandir Lane
Post Box No. 1129
Varanasi 221001
Tel. : 0542 2335263
e-mail : csp_naveen@yahoo.co.in

Also can be had from :

CHAUKHAMBA PUBLISHING HOUSE
4697/2, Ground Floor
Gali No. 21-A, Ansari Road
Daryaganj, New Delhi 110002
Tel. : 011 23286537
e-mail : chaukhamba_neeraj@yahoo.com

CHAUKHAMBA SANSKRIT PRATISHTHAN
38 U.A. Bungalow Road, Jawahar Nagar
Post Box No. 2113
Delhi 110007

CHOWKHAMBA VIDYABHAWAN
Chowk (Behind to Bank of Baroda Building)
Post Box No. 1069
Varanasi 221001

पुरोवाक्

भारतीय संस्कृति में सृष्टि की अवधारणा ही देवताओं पर आधारित है। जिस प्रकार प्राणसञ्चार के अभाव में भौतिक जीवन का अस्तित्व सम्भव नहीं है, उसी प्रकार देवताओं की सत्ता के अभाव में सृष्टि का अस्तित्व भी सर्वथा अकल्पनीय है। भारतीय साहित्य में सृष्टि को चार युगों में विभाजित किया गया है—कृतयुग, त्रेता, द्वापर एवं कलियुग। साथ ही प्रत्येक युग के लिये अलग-अलग देवताओं की महत्ता भी प्रतिपादित की गई है। उसके अनुसार कृतयुग में ब्रह्मा, त्रेता में सूर्य, द्वापर में विष्णु एवं कलियुग में महेश्वर पूज्य होते हैं। पूजास्कन्ध में कहा भी गया है—

ब्रह्मा कृतयुगे देवस्त्रेतायां भगवान् रविः। द्वापरे भगवान् विष्णुः कलौ देवो महेश्वरः।।

किसी भी देवता के सफल अर्चन-हेतु सर्वप्रथम सुयोग्य गुरु से उस देवता के मन्त्र एवं अर्चन की विधि का ज्ञान प्राप्त करना साधक के लिये आवश्यक कहा गया है। गुरु की महिमा का प्रतिपादन करते हुये कुलार्णव तन्त्र में भगवान् शिव ने माता पार्वती से कहा है कि गुरु को तीन नेत्रों से रहित होते हुये भी शिव के सदृश, चार हाथों से रहित होने पर भी विष्णु के सदृश एवं चार मुखों वाला न होते हुये भी ब्रह्मा के सदृश होना चाहिये। उपर्युक्त लक्षण से सम्पन्न होने पर भी पिता, नाना, कनिष्ठ भ्राता एवं शत्रुपक्ष के आश्रित व्यक्ति को गुरुरूप में स्वीकार करना उचित नहीं होता। साथ ही शूद्र एवं स्त्री का तो कदापि गुरुरूप में वरण नहीं करना चाहिये। यह भी आवश्यक है कि दीक्षार्थी साधक को निर्लोभ, पैशुन्यरहित, स्थिर चित्त वाला, श्रद्धा-भक्ति से समन्वित एवं सुश्रूषा-परायण होना चाहिये। मन्त्रदीक्षा श्रावण, आश्विन, कार्तिक, फाल्गुन अथवा मार्गशीर्ष मास में ग्रहण करनी चाहिये। उसमें भी मुक्ति के लिये कृष्ण पक्ष एवं लौकिक समृद्धि-प्राप्ति के लिये शुक्ल पक्ष में दीक्षा ग्रहण करना उत्तम कहा गया है। तिथियों में पूर्णिमा, पञ्चमी, द्वितीया, सप्तमी, त्रयोदशी, दशमी एवं दिनों में रवि, बुध, गुरु, शुक्र समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले कहे गये हैं; अतः इन्हीं तिथियों एवं दिनों में दीक्षा ग्रहण करना उत्तम कहा गया है। फिर भी गर्हित महीनों में भी यदि ग्रहण लगा हो तो उस समय दीक्षा-ग्रहण शुभ होता है। कहा भी गया है—

निन्दितेष्वपि मासेषु दीक्षोक्ता ग्रहणे शुभा। न मासतिथिवारादिशोधनं सूर्यपर्वणि।।
सिद्धिर्भवति मन्त्रस्य विनाभ्यासेन वेगतः ।

रुद्रयामल में भी कहा गया है कि सूर्य-चन्द्र ग्रहण की स्थिति में एवं महापर्व में दीक्षाकर्म हेतु मास-नक्षत्र आदि के शोधन की कोई आवश्यकता नहीं होती—

सतीर्थेऽर्कविधुग्रासे महापर्वणि चैव हि। मन्त्रदीक्षां प्रकुर्वाणो मासर्क्षादीन्न शोधयेत्।।

दीक्षाग्रहण-हेतु मास-तिथि-पक्ष-दिनादि सम्बन्धी उपर्युक्त विधान होने पर भी जिस समय स्वयं की इच्छा एवं गुरु की आज्ञा हो जाय तो दीक्षाग्रहण अवश्य करना चाहिये—ऐसा शास्त्रों का निर्देश है। तत्त्वसार में कहा भी है—

यदेवेच्छा तदा दीक्षा गुरोराज्ञानुरूपतः। न तिथिर्न व्रतो होमो न स्नानं न जपक्रिया।।
दीक्षायाः कारणं किन्तु स्वेच्छा वाज्ञा गुरोरिह।

दीक्षाप्राप्ति के पश्चात् ही मन्त्रानुष्ठान का आरम्भ करना कल्याणकारी होता है। मन्त्रानुष्ठान-हेतु रुद्रयामल में कार्तिक, आश्विन, वैशाख, माघ, मार्गशीर्ष, फाल्गुन तथा श्रावण मास को उपयुक्त कहा गया है। स्मृतितत्त्व में कहा गया है कि पूर्णिमा, पञ्चमी, द्वितीया, सप्तमी, त्रयोदशी, दशमी अथवा जिस देव का अनुष्ठान अनुष्ठेय हो, उस देव की जो तिथि हो, वह तिथि मन्त्र-पुरश्चरण के लिये सुखद होती है। साथ ही रवि, शुक्र, बुध तथा बृहस्पति को मन्त्र का पुरश्चरण

करना विशेष फलदायक होता है। सोमवार को मन्त्रारम्भ मध्यम फल प्रदान करने वाला होता है; जबकि मंगलवार को किया गया मन्त्रारम्भ क्षयकारक एवं शनिवार का मृत्युकारक होता है। पुरश्चरणदीपिका में कहा भी गया है—

मन्त्रारम्भो रवौ शुक्रे बुधे जीवं विशेषतः। शनौ मृत्युः क्षयो भौमे सोमे मध्यफलं स्मृतम्।।

साथ ही यह भी कहा गया है कि स्थिर लग्न अर्थात् वृष, सिंह, वृश्चिक तथा कुम्भ लग्न विष्णु-मन्त्र का उपदेश देने के लिये; चर लग्न अर्थात् मेष, कर्क, तुला तथा मकर लग्न शिवमन्त्र के उपदेश-हेतु एवं द्विस्वभाव लग्न अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु और मीन लग्न शक्तिमन्त्र के उपदेश-हेतु उत्तम होते हैं। शब्दकल्पद्रुम में कहा भी है—

स्थिरलग्नं विष्णुमन्त्रे शिवमन्त्रे चरं ध्रुवम्। द्विस्वभावगतं लग्नं शक्तिमन्त्रे प्रशस्यते ।।

मन्त्रसाधना हेतु पुण्य क्षेत्र, नदी का किनारा, पर्वत की गुफा, पर्वतशिखर, तीर्थ प्रदेश, नदियों का संगम, पवित्र वन, एकान्त उद्यान, बिल्ववृक्ष के नीचे, पर्वत का किनारा, देवमन्दिर, समुद्र का किनारा एवं स्वयं का घर उत्तम होता है। पुरश्चरणचन्द्रिका में कहा भी है—

पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहा पर्वतमस्तकम्। तीर्थप्रदेशाः सिन्धूनां सङ्गमः पावनं वनम्।।
उद्यानानि विविक्तानि बिल्वमूलं तटं गिरेः। देवतायतनं कूलं समुद्रस्य निजं गृहम्।।
साधनेषु प्रशस्यन्ते स्थानान्येतानि मन्त्रिणाम्।

किसी भी मन्त्र की साधना घर में करने पर सौगुना, गोशाला में करने पर लाखगुना, देवमन्दिर में करने पर करोड़गुना एवं शिवसन्निधि में करने पर अनन्तगुना फल प्राप्त होता है। साधना बराबर पूर्वमुख या उत्तममुख बैठकर करनी चाहिये। लेकिन रात्रि में समस्त देवकार्य सदा उत्तराभिमुख बैठकर ही करना चाहिये। कहा भी है—

उपविश्यासने मन्त्री प्राङ्मुखो वा ह्युदङ्मुखः। रात्रावुदङ्मुखैः कार्यं देवकार्यं सदैव हि ।।

समस्त देवताओं की पूजा-विधि का निरूपण करते हुये रुद्रयामल में कहा गया है कि आरम्भ में ऋष्यादि न्यास करने के पश्चात् करशुद्धि करके अंगुलिन्यास एवं व्यापक न्यास करने के अनन्तर हृदयादि न्यास करना चाहिये। तदनन्तर तीन बार ताली बजा कर दिग्बन्धन करके प्राणायाम करना चाहिये। तत्पश्चात् ध्यान, पूजा तथा जप क्रमशः करना चाहिये। विना पञ्चशुद्धि किये पूजा करने पर वह पूजा अभिचार का रूप धारण कर लेती है; अतः पूजा आरम्भ करने के पूर्व पञ्चशुद्धि अवश्य करनी चाहिये। पञ्चशुद्धि में आत्मशुद्धि, स्थानशुद्धि, मन्त्रशुद्धि, हव्यशुद्धि एवं देवशुद्धि आते हैं। सम्यक् रूप से स्नान करने के उपरान्त भूतशुद्धि, प्राणायामादि करने के पश्चात् षडङ्गादि न्यास करने से आत्मशुद्धि होती है। स्थान मन्त्र से स्थान की शुद्धि की जाती है। मूल मन्त्राक्षरों को मातृकाक्षरों से ग्रथित कर क्रम-उत्क्रम से आवृत्ति करने पर मन्त्रशुद्धि होती है। मूल एवं अस्त्रमन्त्र से प्रोक्षण करने के उपरान्त धेनु आदि मुद्रा प्रदर्शित करने से हव्यशुद्धि होती है। इसी प्रकार पीठ पर सम्बद्ध देवता की प्रतिष्ठा करने के उपरान्त सकलीकरण करके दीप आदि एवं माला आदि को जल से तीन बार प्रोक्षण करने से देवशुद्धि होती है।

इस प्रकार पञ्चशुद्धि करने के उपरान्त आरभ्यमाण पूजा में सोलह उपचारों का प्रयोग करना चाहिये। वे सोलह उपचार होते हैं—पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नान, वस्त्र, आभूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, ताम्बूल, अर्चनस्तोत्र, तर्पण एवं नमस्कार। इन्हें ही षोडशोपचार पूजन कहा जाता है। फिर भी पञ्चोपचार पूजन करने से भी मनुष्य अखण्ड फलों को प्राप्त करके निश्चित रूप से अन्त में मोक्ष को प्राप्त करता है। कहा भी है—

गन्धं पुष्पं तथा धूपं दीपं नैवेद्यमेव च। अखण्डफलमासाद्य कैवल्यं लभते ध्रुवम्।।

अनुष्ठेय देव को प्रदान किये जाने वाले आसन आदि उपचारों का फल शैवरत्नाकर में निवेदित करते हुये कहा गया है कि आवाहन प्रदान करने से यज्ञफल, आसनदान से इन्द्रपद-प्राप्ति, पाद्य-दान से पापों से मुक्ति, अर्घ्यदान से अनर्घता-प्राप्ति, आचमनीय-दान से स्वस्थचित्तता एवं सुखप्राप्ति, स्नान-दान से व्याधिभय से मुक्ति, वस्त्रदान से आयु

की वृद्धि, यज्ञोपवीत-दान से वेदज्ञता, आभूषण-दान से आपत्तियों से मुक्ति, गन्धदान से काम-प्राप्ति, अक्षतदान से अक्षतत्त्व प्राप्ति, अनेकविध पुष्पदान से स्वर्ग में राज्य-प्राप्ति, धूपदान से पापों की समाप्ति, दीपदान से मृत्युनिवारण, नैवेद्य-दान से सर्वमान्य होने के साथ-साथ आत्मतृप्ति, मुखवासना-दान से कीर्ति-प्राप्ति, नीराजन-दान से आत्मा की शुद्धता, दर्पण-दान से प्रकाशमानत्व, फलदान से पुत्र प्राप्ति, ताम्बूलादि-दान से स्वर्गप्राप्ति, प्रदक्षिणा से पग-पग पर किये गये पर पापों का विनाश, दण्ड-प्रणाम से बालू के कणों की संख्या के बराबर वर्ष तक स्वर्ग में देवता के समीप निवास, स्तोत्रपाठ से दिव्य देह वाला होकर वाग्मीत्व की प्राप्ति एवं पुराणपाठ से समस्त पापों का नाश होता है—

आवाहनं तु यो दद्यात्स च क्रतुफलं लभेत्। आसनं रुचिरं दत्त्वा शक्रतत्त्वमवाप्नुयात्।।
पाद्येन पादकं हन्यादर्घ्येणाप्नोत्यनर्घताम्। ततश्चाचमनं दत्त्वा सुचित्तः सुखितां व्रजेत्।।
स्नानं व्याधिभयं हन्याद्वस्त्रेणायुष्यवर्धनम्। उपवीतं तु यो दद्याद् ब्रह्मवेत्तृत्वमेव च।।
भूषणानि च यो दद्यादनापद्यमवाप्नुयात्। गन्धेन लभते काममक्षतैरक्षतं भवेत्।।
नानापुष्पप्रदानेन स्वर्गे राज्यमवाप्नुयात्। धूपो दहति पापानि दीपो मृत्युविनाशनः।।
सर्वमानस्तु नैवेद्यं दत्त्वा तृप्तिरतो भवेत्। मुखवासनदानेन कीर्तिमान् भवति ध्रुवम्।।
नीराजनेन शुद्धात्मा दर्पणेन प्रकाशयेत्। फलदः पुत्रवान्मर्त्यस्ताम्बूलात्स्वर्गमाप्नुयात्।।
प्रदक्षिणं तु यः कुर्यात्पापं हन्ति पदे-पदे। दण्डप्रणामं यः कुर्याद्देवमुद्दिश्य सन्निधौ।।
वर्षाणि वसते स्वर्गे देहान्ते रेणुसंख्यया। स्तोत्रेण दिव्यदेहोऽपि वाग्मी भवति तत्क्षणात्।।
पुराणपठनेनैव सर्वपापक्षयो भवेत्।

देवताओं की अनुष्ठेय तिथियाँ इस प्रकार कही गई हैं—चैत्र एवं श्रावण शुक्ल चतुर्दशी को शिव की, द्वादशी को विष्णु की, सप्तमी को सूर्य की एवं चतुर्थी को गणेश की पूजा करनी चाहिये। माघ कृष्ण चतुर्दशी को विशेष रूप से शिव की पूजा करनी चाहिये। आश्विन के आरम्भिक नव दिनों में यथाविधि दुर्गापूजा करनी चाहिये। कृष्णाष्टमी को गोपाल-पूजा करनी चाहिये। चैत्र शुक्ल नवमी को राम की पूजा करनी चाहिये। वैशाख कृष्ण चतुर्दशी को नृसिंह की पूजा करनी चाहिये। भाद्र शुक्ल चतुर्थी तथा माघ शुक्ल चतुर्थी को गणेश की पूजा करनी चाहिये। भाद्र कृष्ण अष्टमी को महालक्ष्मी-पूजन करना चाहिये। माघ शुक्ल सप्तमी को विशेष रूप से सूर्य का पूजन करना चाहिये। किसी मास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि को यदि रविवार हो तो उस दिन सूर्यपूजन कर अर्घ्य अवश्य देना चाहिये।

प्रकृत भाग की विषयवस्तु

प्रस्तुत महनीय श्रीविद्यार्णव ग्रन्थ के इस पञ्चम भाग में इकतीस से छत्तीस तक छः श्वास गुम्फित हैं। इसके इकतीसवें श्वास में सर्वप्रथम त्रैयम्बक मन्त्र का स्वरूप, मन्त्र का अक्षरार्थ, पूजा-विधान आदि बताये गये हैं। त्रैयम्बक मन्त्रानुष्ठान के हवन में प्रयुक्त द्रव्यों का सविधि विवेचन किया गया है। इसके अनुसार त्रैयम्बक मन्त्र के अनुष्ठान से आयु-आरोग्य-ऐश्वर्य की प्राप्ति एवं अपमृत्यु का निवारण होता है। तदनन्तर त्रैयम्बक मन्त्रों का न्यास विवेचित किया गया है। साथ ही महामृत्युञ्जय मन्त्र, लिङ्गमुद्रा, होमविधि एवं काम्य प्रयोगों का विस्तृत विवेचन किया गया है। इसके पश्चात् गायत्री मन्त्र एवं उसके विधान तथा प्रयोगों को निरूपित करने के पश्चात् सम्बद्ध उत्पत्ति-स्थिति-लय-चम्पक न्यास प्रदर्शित किये गये हैं। तदनन्तर गायत्री मन्त्रार्थ स्पष्ट करने के साथ-साथ व्याहृतियों का भी अर्थ बताया गया है। गायत्री के प्रत्येक अक्षरों में शक्तितत्त्व का ध्यान स्पष्ट करते हुये यह भी बताया गया है कि गायत्री-जप के पूर्व चौबीस मुद्रायें प्रदर्शित करनी चाहिये। वे मुद्रायें हैं—सम्मुख, सम्पुट, वितत, विस्तृत, द्विमुख, त्रिमुख, चतुर्मुख, पञ्चमुख, षण्मुख, अधोमुख, व्यापकाञ्जलि, शकट, यमपाश, ग्रथित, सम्मुखोन्मुख, प्रलम्ब, मुष्टिक, मत्स्य, कूर्म, वराह, सिंहाक्रान्त, महाक्रान्त, मुद्गर एवं पल्लव। गायत्रीहृदय एवं गायत्रीकवच का विवेचन के पश्चात् गायत्री-पूजा की विधि स्पष्ट की गई है। तदनन्तर पात्रस्थापन

लक्षण, अर्घ्यादि द्रव्य, करशुद्धि, आवरणपूजा की विधि बताई गई है। गायत्री-निरूपण के पश्चात् कादि मत की रीति से मन्त्रपरायण का क्रम एवं ललिता के स्वरूपभेद के अनुसार यन्त्रों का विवेचन किया गया है। सिद्धवज्र यन्त्र, कोष्ठवज्र यन्त्र, वज्रलिङ्ग यन्त्र, मेरुलिङ्ग यन्त्र, महालिङ्ग यन्त्र, योनिचक्र, वज्रवज्रयन्त्र आदि के निर्माण की प्रक्रिया बताई गई है। ललिता विद्या के अक्षरों का अर्थ निरूपित करते हुये मन्त्रों के निर्माण का प्रकार, उनका क्रूरत्व एवं सौम्यत्व, उनके उपासकों का त्रैविध्य, गुरु-मन्त्र एवं देवता का भजनक्रम भी इस श्वास में निरूपित किया गया है।

बत्तीसवें श्वास में महागणपति के एकाक्षर मन्त्र, विरिगणेश मन्त्र, लक्ष्मीगणेश मन्त्र, त्र्यक्षर शक्तिगणेश मन्त्र, चतुरक्षर शक्तिगणेश मन्त्र, क्षिप्रप्रसादन विनायक मन्त्र, चतुरक्षर हेरम्ब मन्त्र, सुब्रह्मण्य गणेश मन्त्र, महागणेश मन्त्र का उद्धार एवं उनके अनुष्ठान की सम्पूर्ण विधि प्रदर्शित की गई है। भूमिबीज को स्पष्ट करते हुये महागणपति के यन्त्र का स्वरूप बताते हुये गणेश के अन्य यन्त्रों का भी स्वरूप स्पष्ट किया गया है। कामनाभेद से गणेश के विविध ध्यान बताये गये हैं। गणेश के तर्पण में विविध द्रव्यों के विविध फल भी बताये गये हैं। तदनन्तर त्रैलोक्यमोहन गणपति एवं शक्तिगणेश की सविधि अर्चापद्धति बताई गई है। इसके पश्चात् भोगगणेश मन्त्र, हरिद्रागणेश मन्त्र एवं उसके प्रभाव तथा मन्त्रग्रहण का प्रकार प्रदर्शित किया गया है। तदनन्तर स्तम्भन, आकर्षण, वश्य, उच्चाटन, विद्वेषण एवं मारण यन्त्र तथा उनके साधन आदि बताये गये हैं। वक्रतुण्ड के मन्त्रान्तरों को स्पष्ट करते हुये उनके पूजन-विधि के साथ-साथ आथर्वणिक मन्त्र एवं गणेश गायत्री को भी विवेचित किया गया है। तदनन्तर सविधि उच्छिष्ट गणेश का मन्त्र, काम्यसाधन एवं वश्य-उच्चाटन-मारण आदि में उसके प्रयोग बताये गये हैं। गणेश के विविध मन्त्रों का निरूपण करने के पश्चात् बलिमन्त्र बताया गया है। इस प्रकार गणेशमन्त्रों का सांगोपांग सविधि निरूपण करने के पश्चात् मञ्जुघोष मन्त्रों को बताते हुये श्रुतिधरी एवं सार्वज्ञ विद्या भी प्रदर्शित की गई है। तदनन्तर चरणायुध मन्त्र, शास्तृमन्त्र, शास्तृगायत्री, वैवस्वत मन्त्र, चित्रगुप्त मन्त्र, आसुरी मन्त्र, कुबेर मन्त्र, विश्वावसु मन्त्र एवं शताक्षर मन्त्र का अर्चादि-सहित विवेचन किया गया है।

तैंतीसवें श्वास में सर्वप्रथम शताक्षर मन्त्र का उद्धार एवं उसके धारण की विधि प्रदर्शित करते हुये वरुण के ऋङ् मन्त्र का पूजन-विधान बताया गया है। तदनन्तर ऋणमोचन यन्त्र, ज्वरोन्मादादि-नाशन यन्त्र, कृत्याभिभव यन्त्र, ग्रहोन्मादादि-नाशन यन्त्र, सर्वसमृद्धिप्रद यन्त्र, बलिनिषूदन यन्त्र, ग्रहपीड़ा-प्रशमन यन्त्र को बनाने की विधि प्रदर्शित की गई है। तदनन्तर समस्त ग्रहों के वेदोक्त मन्त्र बताते हुये उनके स्तोत्र एवं उनके प्रयोग भी बताये गये हैं। मंगलकल्प एवं मंगल मन्त्र का अर्चन-पूजनसहित विवेचन किया गया है। ऋणमोचन स्तोत्र के साथ-साथ मंगल व्रत की कथा एवं मंगल व्रत के उद्यापन की विधि भी प्रदर्शित की गई है। ऋक्-यजुः-साम-अथर्व विधानों को स्पष्ट करते हुये मृत्युञ्जयप्रयोग की विशेष विधि एवं पार्थिव पूजा की विशेष विधि भी प्रदर्शित की गई है। तत्पश्चात् लिङ्गस्तव को निरूपित करते हुये भयनाशन यन्त्र, आपद्विनाशन यन्त्र, बालरक्षा यन्त्र, कुबेर यन्त्र, बन्दीमोक्षण यन्त्र, भूरिविजय मन्त्र, रत्नधारा मन्त्र, कुबेर मन्त्र, विस्फोटक हरण मन्त्र, पञ्चमुख हनुमन्मन्त्र एवं हनुमान के द्वादशाक्षर मन्त्र का सविधि विवेचन करते हुये वानरेया मुद्रा एवं काम्य प्रयोग विधि भी विधिवत् स्पष्ट की गई है।

चौंतीसवें श्वास में हनुमान् के विविध मन्त्रों तथा यन्त्रों को बताया गया है। सबसे पहले हनुमान का पूजन यन्त्र, धारण यन्त्र एवं प्रतिमा यन्त्र का विधान बताया गया है। तदनन्तर हनुमान का द्वादशाक्षर मन्त्र एवं मालामन्त्रों की पूजन-उपयोग की विधियों सहित विवेचना की गई है। तदनन्तर हनुमान का रक्षायन्त्र, अष्टाक्षर मन्त्र, ज्वरादि-नाशन मन्त्र बताये गये हैं। तत्पश्चात् आवाहनादि मुद्राओं का विवेचन करने के उपरान्त स्वस्तिक आदि आसनों का लक्षण बताया गया है। इसके पश्चात् षडन्वय शाम्भव रश्मिपूजा का क्रम प्रदर्शित करते हुये सौरपूजा विधि, शाम्भव पूजा प्रयोग, परेश्वर ध्यान, निर्वाण विद्या, कामधेनुचरण विद्या, निष्कल पाद विद्या, सकल पाद विद्या, शुक्ल रक्त-मिश्राम्बा चरण विद्या को स्पष्ट किया गया है। तदनन्तर गुरुक्रम एवं मूल मन्त्र को स्पष्ट करते हुये विविध रश्मियों का ध्यान एवं पूजन विधि प्रदर्शित

की गई है। इसके बाद षडन्वय अर्चन विधि बताते हुये संहारक्रम से अर्चन का विवचेन करने के पश्चात् वेदोक्त शाम्भव चरण मन्त्रोद्धार बताने के उपरान्त नवदुर्गापूजन का विधान बताया गया है। तदनन्तर दुर्गासप्तशती के तीनों चरितों की विनियोगादि विधि प्रदर्शित करते हुये उसके पाठ के फल बताये गये हैं। यहीं पर सप्तशती पाठ का प्रयोग बताने के साथ-साथ तीनों चरित्रों के पाठ के पृथक्-पृथक् फल भी बताये गये हैं।

पैंतीसवें श्वास में सर्वप्रथम नित्याओं एवं मातृकाओं की प्राणात्मता विवेचित की गई है। तदनन्तर एक ही वायु के वृत्तिभेद से संज्ञाभेद, श्वासों में चन्द्र एवं सूर्य का वास, इनका सामान्य फल, शिष्य को मन्त्रोपदेश का समय, श्वासों का कालात्मकत्व, प्राणोदय, वाम-दक्षिण दोनों नासाच्छिद्रों से श्वासप्रवाह काल में बलाधिक्य एवं श्वासों की वासना को स्पष्ट करते हुये योगसिद्ध योगियों का लक्षण बताया गया है। तत्पश्चात् काम्य विधि में पूर्ण मण्डलशक्तियों के नाम, पञ्चविध वर्णशक्तियाँ, छः कर्मों में पूज्य देवगण, षट्शाम्भव रश्मिपूजा का क्रम, नाड़ीचक्र का स्वरूप, अड़तीस मर्मस्थान, वायुओं के दश नाम एवं उनके कर्म, योग का स्वरूप, योग के अंग एवं प्रत्यूह, आसन एवं प्राणायाम में भेद बताते हुये योगसिद्ध का लक्षण बताया गया है। तदनन्तर प्रत्याहार एवं धारणा का स्वरूप, धारणासिद्धि के फल, आकाशगमनादि-सिद्धि के उपाय, परकाय-प्रवेश एवं आसन्न मृत्यु के लक्षण का निरूपण करते हुये देवीमाहात्म्य में पूज्य शक्तियाँ, माहात्म्य-पाठ का प्रमाण एवं फल बताया गया है। तत्पश्चात् षोडश नित्याओं का लोकात्मकत्व, नित्याओं का कालविग्रहत्व, कालचक्र में सप्त ग्रह-लोकस्थिति, नित्याओं का सोलह मेरुद्वीपादि देशों में परिवृत्तिक्रम, सात द्वीपों के नाम, कालचक्र में ग्रहों की स्थिति के कारण एवं नित्या लोक के मानादि बताये गये हैं। उसके पश्चात् पाँच प्रकार की षोडशी विद्या को स्पष्ट किया गया है। ये षोडशी विद्यायें है—रमादि षोडशी विद्या, परादि षोडशी विद्या, कामादि षोडशी विद्या, वागादि षोडशी विद्या एवं शक्त्यादि षोडशी विद्या। इनके साथ ही इनकी शक्तियों का भी निरूपण करने के पश्चात् सूक्ष्म होम का विधान एवं उसका स्वरूप बताया गया है। तदनन्तर प्राणग्निहोत्र मन्त्र, शक्ति एवं शिव का तेजस्त्रयात्मकत्व, कुण्डलिनी का स्वरूप, जीवन्मुक्त का लक्षण बताते हुये ज्ञान से हीन होने पर भी भक्ति के कारण सिद्धि-प्राप्ति को कहा गया है। तत्पश्चात् ब्रह्मादि का नित्याप्रेरितत्व एवं नित्या के भक्तों का लक्षण बताते हुये पर होम के स्वरूप का निरूपण किया गया है। दारिद्र्यध्वंसिनी पूजा को स्पष्ट करते हुये उसके आवरण शक्तियों को बताते हुये पूजा का फल भी बताया गया है। तदनन्तर परमार्थस्वरूप का विस्तृत विवेचन किया गया है। मुक्ति शब्द के अर्थ, 'मुक्ति' में हेतु और उसका प्रकार, बुद्धि के एक सौ सात गुण एवं भेद, इन्द्रियों का स्वरूप, बुद्धि एवं चित्त में पार्थक्य, प्राणों एवं जीवन का स्वरूप, काल का स्वरूप एवं भेद, ग्रहों के स्वरूप, जन्म-मरण का कारण, कालरूप परमात्मा की स्थिति, मुक्तों को पुनरागमन से मुक्ति, भूतों की स्थिति का प्रकार एवं जीवों के आगमन का विवेचन करने के उपरान्त सिद्धों का मरण निद्रा के समान होता है—यह बताया गया है। यह भी बताया गया है कि गुरुमुख से ही साधक को आत्मज्ञान प्राप्त होता है। आत्मज्ञानियों के सैंतालीस लक्षण बताते हुये उनके आचारों का भी निरूपण किया गया है। तदनन्तर जीवन्मुक्तों का ललितापूजन क्रम बताते हुये यह भी बताया गया है कि तन्त्रार्थ जानने का क्या फल होता है। इसके पश्चात् यन्त्रलेखन के पूर्व की विधि, यन्त्रलेखन का क्रम, यन्त्रगायत्री एवं यन्त्रलेखन के बाद की विधि निरूपित की गई है। तदनन्तर दिव्यस्तम्भन यन्त्र, मोहन यन्त्र, मृत्युञ्जय यन्त्र, विवादजयद यन्त्र, दुष्टवश्य यन्त्र, मान-जयप्रद यन्त्र, आजीवन वशप्रद यन्त्र, भृत्य दुष्ट प्रभुवशंकर यन्त्र, भर्तृवशीकरण यन्त्र, आकर्षण यन्त्र, प्रतिवादी-स्तम्भन यन्त्र, अग्नि-निवर्तन यन्त्र, विद्वेषण-मारण-उच्चाटन यन्त्र, उपसर्गादि दोष-ग्रह-भूत-ज्वर-सर्पभयमोचन-बन्धमोक्षद यन्त्र के निर्माण की विधि बताई गई है। यन्त्रों के विविध भेदों का निरूपण करते हुये रक्षायन्त्र, वशीकरण यन्त्र, मृत्युञ्जय यन्त्र, ज्वरघ्न यन्त्र, भुजंगहारि यन्त्र, धूमावती मन्त्र, घर्मटिका विद्या, प्रेतराज यन्त्र, यममन्त्र, निग्रह यन्त्र, काली एवं यममन्त्र, गारुड़ यन्त्र-मन्त्र, सञ्जीवन-पिण्ड यन्त्र, वाक्स्तम्भन यन्त्र आदि विविध यन्त्रों के निर्माण का प्रकार बताते हुये यन्त्रलेखन-हेतु प्रयुक्त द्रव्यों का भी विवेचन किया गया है। तदनन्तर किस यन्त्र का धारण नहीं करना चाहिये, इसे बताते हुये आद्य वर्णादि यन्त्रों की संख्या बताई गई है। इसके उपरान्त

श्रीविद्यापूजन में प्रात:कृत्य को स्पष्ट करते हुये गुरुध्यान-प्रार्थना, अजपा जपसंकल्प, हंसरूप ध्यान, अजपा-निवेदन, मन्त्रस्नान, विभूतिधारण, सन्ध्यावन्दन, गायत्री मन्त्र, सन्ध्याओं का ध्यान, तर्पणाविधि, विशेष आचमन एवं श्रीचक्रावरणस्थ देवता के तर्पण का क्रम बताया गया है। तत्पश्चात् मातृकाकमल में आधार शक्ति का पूजन, दीपनाथ पूजनक्रम, गुर्वादि वन्दन, भूतापसारण, गणेश-पञ्चमी-दुर्गा-विघ्न-शरभ-अघोर-सुदर्शन विद्यायें, भूतशुद्धि का प्रकार, पापपुरुष का ध्यान एवं उसका दहन, भूतोत्पत्ति, प्राणप्रतिष्ठा एवं प्राणशक्ति का ध्यान बताया गया है। इसके अनन्तर अन्त: एवं बहि: मातृका न्यास, दशविध मातृका न्यास, कलामातृका न्यास, श्रीकण्ठादि मातृका न्यास, केशवादि मातृका न्यास, लज्जाबीजादि मातृका न्यास, रमाबीजादि मातृका न्यास, कामबीजादि मातृका न्यास, त्रिशक्तिमातृका न्यास, प्रपञ्चयाग मातृका न्यास, बाला मातृका न्यास, श्रीविद्यामातृका न्यास, परामातृका न्यास, कामरति न्यास एवं अड़तीस कलान्यासों का निरूपण करते हुये श्वास का समापन किया गया है।

अन्तिम छत्तीसवें श्वास में न्यासों का विस्तृत विवेचन किया गया है। इनमें मालिनी, लिंग, करशुद्धि, नव आसन, परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी, कामकला, कलालिका, कामकला-सोमकला, योगपीठ, चतुष्पीठ, पञ्चप्रेतासन, षडासन, चतुरासन न्यासों का वर्णन करते हुये षोढ़ा न्यास के अन्तर्गत गणेश, ग्रह-नक्षत्र, योगिनी एवं राशिपीठ न्यास का विशद विवेचन किया गया है। तदनन्तर श्रीचक्र में संहार क्रम से नौ आवरण न्यास बताये गये हैं। इसके पश्चात् स्थिति श्रीचक्र में विद्यान्यास, कूटन्यास, अक्षर न्यास, नव योनि न्यास, शृंखला न्यास. नव चक्र न्यास, अष्टाष्टक न्यास, वशिनी आदि अष्टक न्यास, भूषण न्यास, षडङ्ग न्यास, तत्त्वचतुष्टय न्यास एवं अमठ न्यास का विवेचन किया गया है। तदनन्तर ऊर्ध्वाम्नाय न्यासक्रम को बताते हुये उसके मन्त्रों को भी बताया गया है। इसके पश्चात् गुरुपादुका न्यास, पञ्चवक्त्रन्यास, मूर्तिषडङ्गन्यास का विवेचन करके महाषोढ़ा न्यास में किये जाने वाले ध्यान को बताया गया है। तत्पश्चात् प्रपञ्च न्यास, भुवन न्यास, मूर्ति न्यास, मन्त्र न्यास, दैवत न्यास, मातृका न्यास, विश्रान्ति चरण न्यास, प्रकाश चरण न्यास, पञ्चाम्बा न्यास का सविधि विवेचन करते हुये स्वपारम्पर्य न्यास की विधि स्पष्ट करते हुये षोडश मूल विद्या न्यास एवं षडाधार विद्या न्यास की विधि प्रदर्शित की गई है। तदनन्तर योनि, लिङ्ग सुरभि, हेति (कपाल, ज्ञान, शूल, पुस्तक), वनमाला, नभोमुद्रा (खेचरी मुद्रा), महामुद्रा एवं संघट्ट मुद्रा का विवेचन करने के उपरान्त पराप्रासाद का ध्यान आदि बताते हुये मण्डल-अर्चन की विधि स्पष्ट की गई है। इसके पश्चात् अर्घ्य स्थापन का क्रम, आत्मपूजन, पादुकास्मरण, चरणविद्या, नव नाथ, षोडश मूल विद्या, शुक्ल-रक्त चरणविद्या, मिश्र चरणविद्या, पीठपूजा, देवशुद्धि, महात्रिपुरसुन्दरी का ध्यान, आन्तर यजनविधि, तिथिनित्या आदि का अर्चनक्रम, आवरण पूजाविधान, समयदेवता का पूजन-विधि निरूपित करते हुये मूल देवी को धूप-दीप-नैवेद्य-आरती दान की विधि प्रदर्शित की गई है। तदनन्तर विद्या के जप-हेतु मन्त्रन्यास, चतुराम्नाय पूजा का क्रम, षड्दर्शन का अर्चन क्रम, सिद्धान्त विद्या अर्चनक्रम, देवता के अभिवादन में प्रयुक्त पाँच मुद्रायें, उपस्थान सहस्राक्षरी, प्रस्तार सहस्राक्षरी, आवरण सहस्राक्षरी, अन्त्ययाग विधि, निष्कल ब्रह्मविद्या, अन्त्येष्टि करने वाले के कृत्य आदि विषयों का सविधि विवेचन करते हुये श्वास के साथ-साथ ग्रन्थ की भी समाप्ति की गई है।

इस प्रकार छत्तीस श्वासों एवं पाँच भागों में विभक्त अति बृहत्काय यह श्रीविद्यार्णव ग्रन्थ समस्त प्रमुख देवताओं के अर्चन के सांगोपांग स्वरूप को विवेचित करने वाला अतिशय महनीय, स्वाहणीय एवं श्लानीय ग्रन्थरत्न है। अद्यावधि किसी भी प्रकार की भाषा टीका से अलंकृत न होने के कारण यह ग्रन्थ सामान्य जिज्ञासुओं एवं ज्ञानपिपासुओं के लिये अतिशय दुरूह बना हुआ था। आशा है, प्रकृत भाषा टीका से ग्रन्थ के भाव एवं विधियों को आत्मसात् करने में पाठकवर्ग सौविध्य का अनुभव करेगा एवं विविध मन्त्र-यन्त्र का ज्ञान प्राप्त कर गुरु की आज्ञानुसार प्रयोग कर लोककल्याण के कार्य में प्रवृत्त होगा।

स्वरूपावस्थित कपिलदेव नारायण

विषयानुक्रमणी

विषयाः	पृष्ठाङ्काः

एकत्रिंशः श्वासः

द्वात्रिंशः श्वासः

त्रयस्त्रिंशः श्वासः

षट्त्रिंशः श्वासः

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

(श्रीविद्या का सम्पूर्ण ग्रन्थ)

उत्तरार्द्धम् : तृतीयो भागः

(३१-३६ श्वासात्मकः)

▼

यह विशेष रूप से ध्यातव्य है कि इस ग्रन्थ में पठित किसी भी मन्त्र अथवा यन्त्र का सद्गुरु से आज्ञा प्राप्त किये विना प्रयोग नहीं करना चाहिये; अन्यथा करने पर होने वाले किसी भी प्रकार के अनिष्ट के लिए स्वयम्भू उपासक स्वयं उत्तरदायी होगा।

॥ श्रीः ॥

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

* उत्तरार्द्धम् : तृतीयो भागः *

अथैकत्रिंशः श्वासः

त्रैयम्बकमन्त्राभिधानम्

शारदातिलके (२३.१)—

अथ त्रैयम्बकं मन्त्रमभिधास्याम्यनुष्टुभम्। यं भजन्तं नरं कालः स्वयमीक्षितुमक्षमः ॥१॥ इति।

सारसंग्रहे—

भुजङ्गेशसमारूढा पूतना वसुधेन्दुयुक्। बकं यजामहे प्रोच्य सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ॥१॥
उर्वारुकमिवेत्युक्त्वा बन्धनान्मृ-पदं वदेत्। त्योर्मुक्षीय-पदं ब्रूयान्मामृतादित्युदीरयेत् ॥२॥
त्रैयम्बकमनुः प्रोक्तो भजतां मृत्युनाशनः।

भुजङ्गेशो रेफस्तदारूढा पूतना तकारः, वसुधा यकारः, इन्दुरनुस्वारः, एतैः त्र्यं इति। अन्यानि पदानि स्वरूपाणि।

शारदातिलक में कहा गया है कि अब मैं अनुष्टुप् त्र्यम्बक मन्त्र के विधान को कहता हूँ, जिसका भजन करने वाले मनुष्य को स्वयं काल भी देखने में असमर्थ हो जाता है।

सारसंग्रह के अनुसार त्रैयम्बक उद्धार करने पर मन्त्र होता है—त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। यह त्र्यम्बक मन्त्र मृत्यु का नाशक होता है।

मन्त्रनिरुक्तिः

मन्त्रनिरुक्तिमाह वशिष्ठः—

अथातः संप्रवक्ष्यामि मन्त्रस्यार्थं समासतः। तिस्रो देव्यो दि(य)तश्चैव संजाता लोकमातरः ॥१॥
द्यौरापः पृथिवी चेति तस्मात् त्र्यम्बक उच्यते। यच्चाम्बकानि चक्षूंषि त्रीण्यस्य स त्रियम्बकः ॥२॥
त्रिलोचनं त्रिलोकेशं तं वयं पूजयामहे। यो लोके दृश्यते गन्धः शोभनः सर्ववस्तुषु ॥३॥
स सर्वोऽस्यैव देवस्य सुगन्धिः कथ्यते ततः। अथवा शोभनैर्गन्धैः पुष्पैश्चापि मनोहरैः ॥४॥
धूपदीपादिभिश्चैव पूजनीयो महेश्वरः। सर्वेषामेव देवानां गन्धर्वोरगरक्षसाम् ॥५॥
उपासकानां सर्वेषां पुष्टिहेतुरुमापतिः। उर्वारुकं यथा पक्वं स्वयं मुच्येत बन्धनात् ॥६॥
अहमेवं प्रसादेन देवदेवस्य शूलिनः। अनायासेन मुच्येयं मृत्योर्लोकभयङ्करात् ॥७॥
ततः प्राप्यामृतं देवं तमेव परमेश्वरि। मा भूवं तद्वियुक्तोऽहमिति मन्त्रार्थयोजना ॥८॥

मन्त्रार्थयोजना—वसिष्ठ के अनुसार तीन देवियों के द्यौ आप पृथ्वी स्वरूप लोकमाता होने के कारण इसे त्र्यम्बक कहते हैं। जिसकी जप आदि तीन आँखें हों, उन्हें त्रियम्बक कहते हैं। जो त्रिलोचन त्रिलोकेश हैं, उनकी पूजा हम करते हैं। संसार की सभी वस्तुओं में जो गन्ध हैं, वे सभी इसी देव के हैं; इसलिये इन्हें सुगन्धि कहते हैं अथवा सुन्दर गन्धयुक्त मनोहर फूलों से धूप-दीपादि से पूज्य ये महेश्वर हैं। सभी देवों, गन्धर्वों, सर्पों, राक्षसों, सभी उपासकों में पुष्टि के कारण उमापति हैं। जैसे उर्वारुक पकने पर स्वयं बन्धनमुक्त हो जाता है, उसी प्रकार हम भी देवदेव शंकर की कृपा से अनायास ही लोकभयंकर मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं। उससे अमृत प्राप्त करके हम कभी भी उससे विमुक्त न हों, यही मन्त्रार्थ है।

मन्त्रविधानम्

एवं विदित्वा मन्त्रार्थमृषिं छन्दोऽस्य दैवतम्। जपहोमादि कर्तव्यं साक्षान्मृत्युजयार्थिना ॥९॥
यस्मादनेन मन्त्रेण मृत्युं जयति मानवः। मृत्युञ्जयस्ततः प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥१०॥
अनेनैव तु मन्त्रेण पूर्वे ब्रह्मर्षयोऽमलाः। मृत्युं विजित्य संप्राप्ता ऐश्वर्यमणिमादिकम् ॥११॥ इति।

शारदातिलके (२३.२)—
वसिष्ठोऽस्य ऋषिः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्। देवतास्य समुद्दिष्टस्त्र्यम्बकः पार्वतीपतिः ॥१॥

वसिष्ठः—
अग्नये हृदयायेति नमोऽन्तो हृदये स्थितः। त्र्यम्बकाय च शिरसे स्वाहान्तं शिरसे न्यसेत् ॥१॥
त्रिनेत्राय शिखायेति वषडन्तं शिखां स्मरेत्। (वसिष्ठाय कवचाय हुमन्तं कवचं स्मरेत्) ॥२॥
नेत्रत्रयेऽग्निवीर्याय वौषडन्तमुदाहृतम्। रुद्रदैवतङेऽस्त्राय फडन्तास्त्रमुदाहृतम् ॥३॥
प्रागाद्यासु चतुर्दिक्षु दिगस्त्रं कारयेत् क्रमात्। दुर्गां विनायकं चैव नन्दीशं क्षेत्रपालकम् ॥४॥
एते दिग्बन्धमन्त्राः स्युर्मन्त्रतो ये उदाहृताः। अथवैतस्य मन्त्रस्य वर्णतोऽङ्गानि कल्पयेत् ॥५॥ इति।

इस प्रकार मन्त्रार्थ ऋषि छन्द देवता को जानकर मृत्यु को जीतने की इच्छा वालों को जप-होमादि करना चाहिये। इस मन्त्र से मनुष्य मृत्यु को भी जीत लेता है; इसी से इसे मुनियों और तत्त्वदर्शियों ने मृत्युञ्जय कहा है। पहले इसी मन्त्र से ब्रह्मर्षियों ने मृत्यु को जीत कर अणिमादि ऐश्वर्य को प्राप्त किया था।

शारदातिलक में कहा गया है कि इसके ऋषि वसिष्ठ, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता पार्वतिपति त्र्यम्बक शिव हैं। वसिष्ठ ने कहा है कि अग्नये हृदयाय नमः से हृदय में न्यास करे। त्र्यम्बकाय शिरसे स्वाहा से शिर में न्यास करे। त्रिनेत्राय शिखायै वषट् से शिखा में न्यास करे। वसिष्ठाय कवचाय हुं से कवच में न्यास करे। अग्निवीर्याय नेत्रत्रयाय वौषट् से नेत्रों में न्यास करे। रुद्रदेवतायै अस्त्राय फट् से अस्त्रन्यास पूर्वादि चारो दिशाओं में करे। दुर्गा विनायक नन्दी क्षेत्रपाल क्रमशः दिग्बन्ध मन्त्र हैं। मन्त्रवर्ण से षडङ्ग न्यास करे।

पूजाप्रयोगः

शारदातिलके (२३.३)—
विभक्तैर्मन्त्रवर्णैः स्यात् षडङ्गानां प्रकल्पना। हृदयं त्रिभिराख्यातं चतुर्भिः शिर ईरितम् ॥१॥
शिखाष्टभिः समुद्दिष्टा नवभिः कवचं मतम्। पञ्चभिर्नेत्रमाख्यातमस्त्रं त्रिभिरुदाहृतम् ॥२॥
पूर्वपश्चिमयाम्येन्दुवक्त्रेषु तदनन्तरम्। उरोगलास्येषु पुनर्नाभिहृत्पृष्ठकुक्षिषु ॥३॥
लिङ्गपायूरुमूलान्तर्जानुयुग्मेषु तत्परम्। तद्वृत्तयुग्मे स्तनयोः पार्श्वयोः पादयोः पुनः ॥४॥
पाण्योर्नासिकयोः शीर्षे मन्त्रवर्णान्न्यसेत्क्रमात्। पदान्येकादश न्यसेच्छिरोभ्रूयुगलाक्षिषु ॥५॥
वक्त्रे गण्डयुगे भूयो हृदये जठरे पुनः। गुह्योरुजानुपादेषु न्यासमेवं समाचरेत् ॥६॥
हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाससंस्थं (कान्तं) शिवं स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥७॥

देवं पूर्वोदिते पीठे पूजयेद् वृषभध्वजम्। मूर्तिं मूलेन संकल्प्य वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ॥८॥
पूर्वमङ्गानि संपूज्य पश्चान्मूर्तीः प्रपूजयेत्। अर्केन्दुवसुधातोयवह्नीरवियदात्मनः ॥९॥
द्वितीयावरणे पूज्यो मूर्तयोऽष्टाविमाः क्रमात्। रमा राका प्रभा ज्योत्स्ना पूर्णोषा पूरणी सुधा ॥१०॥
अष्टाविमाः क्रमात् पूज्यास्तृतीयावरणे ततः। विश्वा विद्या सिता प्रह्वा सारा सन्ध्या शिवा निशा ॥११॥
चतुर्थावरणे पूज्याः शक्तयोऽष्टौ क्रमादिमाः। आर्या प्रज्ञा प्रभा मेधा शान्तिः कान्तिर्धृतिर्मतिः ॥१२॥
पञ्चमावरणे पूज्याः क्रमादेतास्ततः परम्। धरोमा पाविनी पद्मा शान्ताऽमोघाऽजयाऽमला ॥१३॥
षष्ठावरणगाः पूज्याः लोकपालास्ततः परम्। सप्तमावरणे पूज्यास्तदस्त्रैरष्टमावृतिः ॥१४॥ इति।

अर्कमूर्तिरीशानः, इन्दुमूर्तिर्महादेवः, वसुधामूर्तिर्भवः, तोयमूर्तिः शर्वः, वह्निमूर्तो रुद्रः, ईरमूर्तिरुग्रः, वियन्मूर्तिर्भीमः, यजमानमूर्तिः पशुपतिः। अत्र प्रमाणं तु जगत्प्रसिद्धः पौराणिकः पार्थिव(लिङ्ग)पूजाक्रमः। अत्र केचिच्छर्वः क्षितिमूर्तिः भवो जलमूर्तिरित्याहुः तन्न, यथा क्षितितोयादीनां भूतानां क्रमस्तथा भवादिमूर्तिन्यासप्रकरणे 'भवं च करभद्रां च शर्वं च खगलामपि' इत्यादिक्रम एवोक्तः, अत एव तदसङ्गतमिति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि वशिष्ठाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीमृत्युञ्जयरुद्राय देवतायै नमः। इति विन्यस्य सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐ अग्नये हृदयाय नमः। त्र्यम्बकाय शिरसे स्वाहा। त्रिनेत्राय शिखायै वषट्। वसिष्ठाय कवचाय हुं। अग्निवीर्याय नेत्रत्रयाय वौषट्। रुद्रदैवताय अस्त्राय फट्। इति मन्त्रैः करषडङ्गन्यासं कृत्वा, दुं दुर्गायै नमः। गं गणपतये नमः। नं नन्दीशाय नमः। क्षं क्षेत्रपालाय नमः, इति पूर्वादिचतुर्दिक्षु दिग्बन्धनक्रमेण न्यसेत्। अथवा त्र्यम्बकं हृदयाय। यजामहे शिरसे। सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं शिखायै। उर्वारुकमिव बन्धनात् कवचाय। मृत्योर्मुक्षीय (नेत्राभ्यां)। मामृतात् अस्त्राय। इमि मन्त्रैः करषडङ्गन्यासं कृत्वा, मुखे पूर्ववक्त्रस्थाने त्र्यं नमः। चूडाधः पश्चिमवक्त्रस्थाने वं०। दक्षिणकर्णे दक्षिणवक्त्रस्थाने कं०। वामकर्णे उत्तरवक्त्रस्थाने यं०। उरसि जां०। गले मं०। मुखे हें०। नाभौ सुं०। हृदि गं०। पृष्ठे न्धिं०। कुक्षौ पुं०। लिङ्गे ष्टिं०। पायौ वं०। दक्षोरुमूले र्धं०। वामोरुमूले नं०। दक्षोरौ उं०। वामोरौ र्वां०। दक्षजानुनि रुं०। वामजानुनि कं०। दक्षजानुवृत्ते मिं०। वामजानुवृत्ते वं०। दक्षस्तने बं०। वामस्तने न्धं०। दक्षपार्श्वे नात्०। वामपार्श्वे मृं०। दक्षपादे त्यों०। वामपादे र्मुं०। दक्षपाणितले क्षीं०। वामे यं०। दक्षनसि मां०। वामे मृं०। शिरसि तात्०। इति वर्णान् विन्यस्य, शिरसि त्र्यम्बकं नमः। भ्रूमध्ये यजामहे०। नेत्रयोः सुगन्धिं०। मुखे पुष्टिवर्धनम्०। गण्डद्वये उर्वारुकं०। हृदि इव०। जठरे बन्धनात्०। गुह्ये भृत्योः०। ऊरुद्वये मुक्षीय०। जानुनोः मा०। पादयोः अमृतात् नमः। इति एकादशपदानि विन्यस्य, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते प्रागुक्तं शैवं पीठं संपूज्य, तत्र देवतामावाह्य स्थापनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गानि संपूज्याष्टदलेषु देवाग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन—ईशानाय सूर्यमूर्तये नमः। महादेवाय सोममूर्तये०। भवाय क्षितिमूर्तये०। शर्वाय जलमूर्तये०। रुद्राय अग्निमूर्तये०। उग्राय वायुमूर्तये०। भीमाय आकाशमूर्तये०। पशुपतये यजमानमूर्तये०। इति संपूज्य, दलाग्रेषु—रमायै नमः। राकायै०। प्रभायै०। ज्योत्स्नायै०। पूर्णायै०। उषायै०। पूरण्यै०। सुधायै०। इति संपूज्य, द्वितीयाष्टदलमूलेषु स्वाग्रादारभ्य—विश्वायै नमः। विद्यायै०। सितायै०। प्रह्वायै०। सारायै०। सन्ध्यायै०। शिवायै०। निशायै०। इति संपूज्य, तद्दलेषु—आर्यायै नमः। प्रज्ञायै०। प्रभायै०। मेधायै०। शान्त्यै०। कान्त्यै०। धृत्यै०। मत्यै०। इति संपूज्य, तद्दलाग्रेषु—धरायै नमः। उमायै०। पाविन्यै०। पद्मायै०। शान्तायै०। अमोघायै०। अजयायै०। अमलायै०। इति संपूज्य, प्राग्वत् चतुरस्रवीथीद्वये लोकपालांस्तदस्त्राणि च संपूज्य, धूपदीपादि सर्वं प्राग्वत् कृत्वा समापयेदिति।

तथा—

जपेन्मन्त्रमिमं लक्षमेवं ध्यायञ्जितेन्द्रियः। जुहुयाद् दशभिर्द्रव्यैरयुतं घृतसंप्लुतैः ॥१॥

पूजा-प्रयोग—पूजन प्रक्रिया का निरूपण करते हुये शारदातिलक में कहा गया है कि प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि वसिष्ठाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्रीमृत्युञ्जयरुद्राय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ अग्नये हृदयाय नमः, त्र्यम्बकाय शिरसे स्वाहा, त्रिनेत्राय शिखायै वषट्, वसिष्ठाय कवचाय हुं, अग्निवीर्याय नेत्रत्रयाय वौषट्, रुद्रदेवताय अस्त्राय फट्। इन्हीं मन्त्रों से करन्यास भी करे।

तदनन्तर दुं दुर्गायै नमः, गं गणपतये नमः, नं नन्दीशाय नमः, क्षं क्षेत्रपालाय नमः—इन मन्त्रों से दिग्बन्ध क्रम से न्यास करे अथवा मन्त्रपदों से इस प्रकार न्यास करे—त्र्यम्बकं हृदयाय नमः, यजामहे शिरसे स्वाहा, सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् शिखायै वषट्, उर्वारुकमिव बन्धनात् कवचाय हुं, मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्ण न्यास—मुख (पूर्वमुख) के स्थान में त्र्यं नमः। शिखा के नीचे पश्चिम मुख में बं नमः। दाहिने कान के पास दक्षिण मुख में कं नमः, बाँयें कान के पास उत्तर मुख में यं नमः, हृदय में जां नमः, गल में मं नमः, मुख में हें नमः, नाभि में सुं नमः, हृदय में गं नमः, पृष्ठ पर न्धिं नमः, कुक्षि में पुं नमः, लिङ्ग में ष्टिं नमः, पायु में वं नमः, दक्ष ऊरुमूल में धं नमः, वाम ऊरुमूल में नं नमः, दक्ष ऊरु पर उं नमः, वाम ऊरु पर र्वां नमः, दक्ष जानु पर रुं नमः, वाम जानु पर कं नमः, दक्ष जानुवृत्त पर मिं नमः, वाम जानुवृत्त पर वं नमः, दक्ष स्तन पर बं नमः, वाम स्तन पर न्धं नमः, दक्ष पार्श्व नात् नमः, वाम पार्श्व में मृं नमः, दक्ष पाद में त्यों नमः, वाम पाद में र्मुं नमः, दक्ष हस्ततल में क्षीं नमः, वाम हस्ततल में यं नमः, दाहिनी नासिका में मां नमः, बाँयीं नासिका में मृं नमः, शिर पर तात् नमः।

एकादश पद न्यास—शिर पर त्र्यम्बकं नमः, भ्रूमध्य में यजामहे नमः, नेत्रों में सुगन्धिं नमः, मुख में पुष्टिवर्धनं नमः, दोनों गालों पर उर्वारुकं नमः, हृदय में इव नमः, जठर में बन्धनात् नमः, गुह्य में मृत्यो नमः, दोनों ऊरुओं में मुक्षीय नमः, जानुओं में मां नमः, पैरों में अमृतात् नमः। तब इस प्रकार ध्यान करे—

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाससंस्थं (कान्तं) शिवं स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे।।

ध्यान के बाद आत्मपूजा करे। पूर्वोक्त शिवपीठ की पूजा करे। उसमें देवता का आवाहन करके स्थापनादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। कर्णिका में अंगपूजा करे।

अष्टदल में देवाग्र दल से प्रारम्भ करके प्रादक्षिण्य क्रम से इस प्रकार पूजा करे—ईशानाय सूर्यमूर्तये नमः, महादेवाय सोममूर्तये नमः, भवाय क्षितिमूर्तये नमः, शर्वाय जलमूर्तये नमः, रुद्राय अग्निमूर्तये नमः, उग्राय वायुमूर्तये नमः, भीमाय आकाशमूर्तये नमः, पशुपतये यजमानमूर्तये नमः। दलाग्रों में रमायै नमः, राकायै नमः, प्रभायै नमः, ज्योत्स्नायै नमः, पूर्णायै नमः, उषायै नमः, पूरण्यै नमः, सुधायै नमः—इन मन्त्रों से पूजा करे। द्वितीय अष्टदलमूलों में अपने आगे से प्रारम्भ करके इनसे पूजा करे—विश्वायै नमः, विद्यायै नमः, सितायै नमः, प्रह्वायै नमः, सारायै नमः, सन्ध्यायै नमः, शिवायै नमः, निशायै नमः। उसके दलों में इस प्रकार पूजा करे—आर्यायै नमः, प्रज्ञायै नमः, प्रभायै नमः, मेधायै नमः, शान्त्यै नमः, कान्त्यै नमः, धृत्यै नमः, मत्यै नमः। उसके दलाग्रों में इस प्रकार पूजा करे—धरायै नमः, उमायै नमः, पाविन्यै नमः, पद्मायै नमः, शान्तायै नमः, अमोघायै नमः, अजयायै नमः, अमलायै नमः।

इस प्रकार पूजन करके चतुरस्र की दोनों वीथियों में लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करके धूप-दीपादि पूर्ववत् समर्पित कर पूजा का समापन करे। तदनन्तर जितेन्द्रिय रहकर इस मन्त्र का जप एक लाख करे। घृतसंप्लुत दश द्रव्यों से दश हजार हवन करे।

होमद्रव्याणि

बिल्वं पलाशं खदिरं वटं च तिलसर्षपौ। दौग्धं दुग्धं दधि पुनर्दूर्वां तानि विदुर्बुधाः ॥२॥

दौग्धं पायसं। सहस्रमेकैकद्रव्येण।

तर्पयित्वाभिषिच्याथ ब्राह्मणांस्तोषयेद् गुरुम्। एवं कृते प्रयोगार्हो जायतेऽयं महामनुः ॥३॥ इति।

वसिष्ठः—

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्यास्त्रयो वर्णा द्विजातयः। आत्मार्थं जपहोमादि कुर्युर्नित्यमतन्द्रिताः ॥१॥
परार्थमपि कुर्वीत ब्राह्मणो मन्त्रवित्तमः। दातव्या दक्षिणा तत्र यथा तुष्येद् द्विजोत्तमः ॥२॥
आत्मार्थं वा परार्थं वा न कुर्यादितरो जनः। यदि कुर्याज्जपादीनि लोभादज्ञानतोऽपि वा ॥३॥
त्रयीसारेण मन्त्रेण स्वयमेव विनश्यति। आमपात्रे यथान्यस्तं पयो दधि घृतं मधु ॥४॥
तस्य पात्रस्य दौर्बल्यात्सह पात्रेण नश्यति। एवं मन्त्रं त्रयीसारं यदन्यो धारयेन्नरः ॥५॥
क्षिप्रं विनाशमायाति स मन्त्रो निष्फलो भवेत्। तस्मादाचार्यतो लब्ध्वा चीर्णदेवव्रतो द्विजः ॥६॥
मृतसञ्जीविनीं विद्यां गोपयेत् तां प्रयत्नतः। अनया विद्यया विप्र सर्वकार्याणि साधयेत् ॥७॥
आयुरारोग्यमैश्वर्य्यमपमृत्युं जयेत सः। इति।

हवनीय दश द्रव्य हैं—बेल, पलाश, खैर, वट, तिल, सरसों, घृत, दूध, दही, दूर्वा। प्रत्येक द्रव्य से एक-एक हजार हवन करे। तर्पण-मार्जन-ब्राह्मणभोजन कराकर उन्हें सन्तुष्ट करे। गुरु को भी सन्तुष्ट करे। ऐसा करने से साधक को महामन्त्र के प्रयोग की योग्यता प्राप्त होती है।

वसिष्ठ ने कहा है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य—ये द्विज वर्ण कहे गये हैं; इन्हें अपने लिये निरालस होकर नित्य जप-होमादि करना चाहिये। मन्त्रज्ञानी ब्राह्मण दूसरों के लिये भी जप-होमादि करे तो उस द्विजोत्तम को दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करना चाहिये। द्विजों के अतिरिक्त अन्य को अपने लिये या दूसरों के लिये जपादि नहीं करना चाहिये। यदि लोभ या अज्ञान से कोई ऐसा करता है तो वेदत्रयी के सारस्वरूप यह मन्त्र उसका नाश कर देता है। कच्चे पात्र में दूध, दही, घी, मधु रखने से पात्र की दुर्बलता से जैसे पात्र के साथ-साथ द्रव्य भी नष्ट हो जाता है, वैसे ही इस त्रयीसार मन्त्र को द्विज के अतिरिक्त अन्य कोई यदि धारण करता है तो उसका नाश शीघ्र हो जाता है और मन्त्र निष्फल हो जाता है। इसलिये आचार्य से दीक्षा लेकर इस मृतसंजीवनी विद्या को द्विज गुप्त रखे। इस विद्या से विप्र सभी कार्यों का साधन कर सकता है एवं आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, अपमृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकता है।

न्यासविधिः

अथापरन्यासस्तत्र वासिष्ठकल्पे—

अथ न्यासविधिं वक्ष्ये मन्त्रस्यास्य महामुने। सर्वदोषप्रशमनं सर्वकल्याणकारकम् ॥१॥
तेनैव मुच्यते सद्यो मृत्योः कालकृतादपि। अक्षराणि त्रयस्त्रिंशदस्मिन् मन्त्रे महामुने ॥२॥
तानि देवा त्रयस्त्रिंशदिति शास्त्रेषु निश्चयः। आदावष्टौ वसून् विद्याद्रुद्रानेकादशोत्तरान् ॥३॥
ततः स्युर्द्वादशादित्याः प्रजापतिरनन्तरम्। वषट्कारोऽमितः प्रोक्तः सर्वानन्दमयं शिवः ॥४॥
ध्रुवोऽध्वरश्च सोमश्च आपश्चैवानिलोऽनलः। प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः ॥५॥
वीरभद्रश्च शम्भुश्च गिरिशश्चाज एकपात्। अहिर्बुध्न्यः पिनाकी च भुवनाधीश्वरस्तथा ॥६॥
कपाली दिक्पतिः स्थाणुर्भर्गो रुद्राः प्रकीर्तिताः। धातार्यमा च मित्रश्च वरुणोंऽशुर्भगस्तथा ॥७॥
विवस्वानिन्द्रपूषाख्यौ पर्जन्यस्तदनन्तरः। त्वष्टा विष्णुरिति प्रोक्ता आदित्या द्वादश क्रमात् ॥८॥
एवमेतानि रूपाणि देवानां कल्पितानि वै। अक्षराणि न्यसेन्मन्त्री सर्वाङ्गेषु समाहितः ॥९॥
मूर्धादिपञ्चवक्त्रेषु प्रथमं पञ्चकं न्यसेत्। दक्षिणस्य करे च स्यात्पञ्चस्थानेषु पञ्चकम् ॥१०॥
तत्रस्थदेवता ध्यात्वा न्यसेत् पञ्चाक्षराण्यतः। ततः पराणि पञ्चैव वामहस्ते न्यसेत् क्रमात् ॥११॥
ततस्तु दक्षिणे पादे सन्धिस्थानेषु पञ्चसु। पराणि पञ्च विन्यस्य वामपादे तथा न्यसेत् ॥१२॥
ततश्च दक्षिणे पार्श्वे वामपार्श्वे न्यसेत् क्रमात्। पृष्ठे नाभौ च गुह्ये च मुक्षीयत्रितयं न्यसेत् ॥१३॥
भ्रुवोर्मध्ये परगले हृदये मामृतात् न्यसेत्। एवं विन्यस्य सर्वाङ्गे ततोऽन्ते प्रणवं न्यसेत् ॥१४॥

यस्याङ्गेषु न्यसेदेवं मन्त्री मन्त्रं समाहितः। तस्य मृत्युभयं नास्ति न च व्याधिकृतं भयम् ॥१५॥
एवमेतेन रौद्रेण कवचेनाभिरक्षितम्। वेतालाश्च पिशाचाश्च गन्धर्वोरगराक्षसाः ॥१६॥
पराभिचारकृत्याश्च ये चान्ये च ग्रहादयः। एनं द्रष्टुं न शक्तास्ते साक्षान्मन्त्रशरीरिणम् ॥१७॥
एतद्रहस्यं परमं साक्षाद्देवान्मया श्रुतम्। य एनं धारयत्येव स निःशत्रुर्न चान्यथा ॥१८॥ इति।

अथैतन्न्यासप्रयोगः—तत्र शिरसि त्रिं ध्रुवाय नमः। मुखे यं ध्वराय०। दक्षिणकर्णे बं सोमाय०। वामे कं आपाय०। चूडाधः यं अनिलाय०। दक्षबाहुमूले जां अनलाय०। तन्मध्ये मं प्रत्यूषाय०। मणिबन्धे हें प्रभासाय०। तदङ्गुलिमूले सुं वीरभद्राय०। तदग्रे गं शम्भवे०। वामबाहुमूले न्धिं गिरिशाय०। तन्मध्ये पुं अजैकपदे०। मणिबन्धे ष्टिं अहिर्बुध्न्याय०। तदङ्गुलिमूले वं पिनाकिने०। तदग्रे र्धं भुवनाधीश्वराय०। दक्षोरुमूले नं कपालिने०। तज्जानुनि उ दिशांपतये०। तद् गुल्फे र्वां स्थाणवे०। तदङ्गुलिमूले रुं भर्गाय०। तदग्रे कं धात्रे०। वामोरुमूले मिं अर्यम्णे०। तज्जानुनि वं मित्राय०। तद् गुल्फे वं वरुणाय०। तदङ्गुलिमूले न्धं अंशवे०। तदग्रे नात् भगाय०। दक्षपार्श्वे मृं विवस्वते०। वामपार्श्वे त्यों इन्द्राय०। पृष्ठे र्मुं पूष्णे०। नाभौ क्षीं पर्जन्याय०। गुह्ये यं त्वष्ट्रे०। भ्रुवोर्मध्ये मां विष्णवे०। परगले मृं प्रजापतये०। हृदये तात् अमितवषट्काराय नमः।

वासिष्ठ कल्प में अन्य न्यास का विवेचन करते हुये कहा गया है कि हे महामुने! अब मैं इस मन्त्र के दूसरे प्रकार के न्यास को कहता हूँ। यह न्यास सर्वदोषनाशक एवं सर्वकल्याणकारक है। इससे कालकृत मृत्यु से भी साधक मुक्त हो जाता है। इस मन्त्र में तैंतीस अक्षर होते हैं और उन अक्षरों के तैंतीस देवता होते हैं—ऐसा शास्त्र में कहा गया है।

न्यास—शिर पर त्रिं ध्रुवाय नमः, मुख में यं ध्वराय नमः, दाहिने कान में बं सोमाय नमः, बाँयें कान में कं आपाय नमः, शिखा के नीचे यं अनिलाय नमः, दाहिने बाहुमूल में जां अनलाय नमः, उसके मध्य में मं प्रत्यूषाय नमः, मणिबन्ध में हें प्रभासाय नमः, अंगुलिमूल में सुं वीरभद्राय नमः, अंगुलि के आगे गं शम्भवे नमः, वाम बाहुमूल में न्धिं गिरीशाय नमः, मध्य में पुं अजैकपदे नमः, मणिबन्ध में ष्टिं अहिर्बुध्न्याय नमः, अंगुलिमूल में वं पिनाकिने नमः, अंगुलि के आगे र्धं भुवनाधीश्वराय नमः, दक्ष ऊरु मूल में नं कपालिने नमः, जानु पर उं दिशांपतये नमः, गुल्फ पर र्वां स्थाणवे नमः, अंगुलिमूल में रुं भर्गाय नमः, अंगुल्यग्रे कं धात्रे नमः, वामोरु मूले मिं अर्यम्णे नमः, जानुनि वं मित्राय नमः, गुल्फे वं वरुणाय नमः, अंगुलिमूल में न्धं अंशवे नमः, अंगुलि के आगे नात् भगाय नमः, दक्ष पार्श्व में मृं विवस्वते नमः, वाम पार्श्व में त्यों इन्द्राय नमः, पृष्ठ पर मृं पूष्णे नमः, नाभि में क्षीं पर्जन्याय नमः, गुह्य में यं त्वष्ट्रे नमः, भौहों के मध्य में मां विष्णवे नमः, गले के पीछे मृं प्रजापतये नमः, हृदय में तात् अमितवषट्काराय नमः। सभी अंगों में इस प्रकार के न्यास के बाद 'ॐ' का न्यास करे। जो मन्त्री समाहित होकर इस मन्त्र का अंगों में न्यास करता है, उसे न मृत्यु भय होता है और न ही व्याधिभय होता है। इस रौद्र कवच से रक्षित की ओर वेताल, पिशाच, गन्धर्व, सर्प, राक्षस, पराभिचार कृत्या या अन्य ग्रहादि देख भी नहीं सकते। वह साक्षात् मन्त्ररूप हो जाता है। साक्षात् देव से मैंने इस रहस्य को सुना है। जो इसे धारण करता है, वह शत्रुरहित हो जाता है।

ग्रन्थान्तरे—

अथ त्रैयम्बकं मन्त्रमभिधास्याम्यनुष्टुभम्। यं भजन्तं नरं कालः स्वयमीक्षितुमक्षमः ॥१॥
वसिष्ठोऽस्य मुनिः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्। देवतास्य समुद्दिष्टस्त्र्यम्बकः पार्वतीपतिः ॥२॥
विभक्तैर्मन्त्रवर्णैः स्यात् षडङ्गानां प्रकल्पना। चतुर्भिर्हृदयं प्रोक्तं शिरस्तावद्भिरीरितम् ॥३॥
शिखाष्टभिः समुद्दिष्टा नवभिः कवचं मतम्। पञ्चभिर्नेत्रमाख्यातमस्त्रं त्रिभिरुदाहृतम् ॥४॥
पूर्वपश्चिमयाम्योदग्वक्त्रेषु तदनन्तरम्। उरोगलांसेषु पुनर्नाभिहृत्पृष्ठकुक्षिषु ॥५॥
लिङ्गपायूरुमूलान्तर्जानुयुग्मेषु तत्परम्। तद्वृत्तयुग्मे स्तनयोः पार्श्वयोः पादयोः पुनः ॥६॥
पाण्योर्नासिकयोः शीर्षे मन्त्रवर्णान्न्यसेत् क्रमात्। पदान्येकादश न्यसेच्छिरोभ्रूयुगलाक्षिषु ॥७॥
वक्त्रे गण्डयुगे भूयो हृदये जठरे पुनः। गुह्योरुजानुपादेषु न्यासमेवं समाचरेत् ॥८॥ इति।

महामृत्युञ्जयमन्त्रोद्धारः

तद्यथा पूर्वोक्तमन्त्रोद्धारः—

आदौ प्रासादबीजं तदनु मृतिहरं तारकं व्याहृतीश्च
प्रोच्चार्य त्र्यम्बकं यो जपति मृतिहरं भूय एवं तथाद्यम्।
कृत्वा न्यासं षडङ्गं स्ववदनत ऋचं मण्डलान्तः प्रविष्टं
ध्यात्वा योगीशरुद्रं स जयति मरणं शुक्रविद्याप्रसादात् ॥९॥

एषा षट्प्रणवी विद्या महामृत्युविनाशिनी। चतुर्दशस्वरोपेतो हकारो बिन्दुसंयुतः ॥१०॥
शिवप्रसादजनकं प्रासादमिति कथ्यते। बीजं मृत्युञ्जयं प्रोक्तं देवप्रणवसंज्ञकम् ॥११॥
नकुलीशोऽग्निमारूढो वामनेत्रार्धचन्द्रवान्। मायाबीजं च शक्तिः स्याद् देवीप्रणवसंज्ञिका ॥१२॥
षष्ठस्वरेण संयुक्तो जकारो बिन्दुसंयुतः। बीजं मृत्युहरं नाम द्वितीयं संप्रकीर्तितम् ॥१३॥
सविसर्गं सकारेण मृत्युञ्जयमथाब्रुवे। ध्रुवस्तारस्तथोंकारो मूलं ज्योतिः स्वयंस्थितः ॥१४॥
वेदादि तारको युक्तो शाखाद्विप्रणवान्वितः(?)। महामृत्युञ्जयं प्रोक्तं प्रासादं मृत्युनाशनम् ॥१५॥
तारकं व्याहृतिश्चैव व्यस्तान्येतान्यनुक्रमात्। विलोमव्याहृतिश्चैव संपुटं प्रणवद्वयम् ॥१६॥

ततो व्याहृतयस्तिस्रो मन्त्रः षट्प्रणवान्वितः।
वेदादिभूरादिपदत्रयं च जपेन्मनुं मृत्युहरं त्रियम्बकम्।
जपेत् फलार्थी विधिवत् प्रयुक्तं प्रासादमृत्युञ्जयसंपुटेन ॥१७॥

अगस्त्य उवाच

देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक। मृत्युञ्जयविधिं ब्रूहि जपपूजादिसंयुतम् ॥१॥
पीठपूजादि यन्त्रं च होमं च कृपया वद।

ब्रह्मोवाच

शृणु वत्स समासेन मृत्युञ्जयविधानकम्। यज्ज्ञात्वा मुच्यते मर्त्यो मृत्युव्याधिमहद्भयात् ॥२॥
ग्रहपीडासु सर्वासु महोग्रे चापि मण्डले। वियोगे बान्धवानां च जनमारे उपस्थिते ॥३॥
छत्रभङ्गे जनच्छेदे महामृत्युविनाशने। अभिचारे समुत्पन्ने मनोधर्मविपर्यये ॥४॥
मृत्युञ्जयस्य देवस्य विधानं क्रियते बुधैः। यदा कदाचित् समये चन्द्रताराबले शुभे ॥५॥
शुभवारे शुभतिथौ शुभनक्षत्रसंयुते। शुभलग्ने शुभे योगे शुभग्रहसमन्विते ॥६॥
मृत्युञ्जयस्य देवस्य विधानारभ्य इष्यते। मण्डिते शङ्करद्वारे चित्रिते मण्डपान्विते ॥७॥
दीपस्थानं तु संशोध्य रक्तकम्बलसंयुतम्। ब्राह्मणान् वेदशास्त्रज्ञानाहूय गतमत्सरान् ॥८॥
स्वस्तिवाचनपूर्वं तु साधनं परमं वदेत्। प्रारब्धस्य च कार्यस्य सदृशो जप उत्तमः ॥९॥
ऊनाधिकं च कार्याच्च जपेत्तद्विफलं स्मृतम्। राष्ट्रभङ्गे जनक्लेशे महारोगनिपीडिते ॥१०॥
कोटिसंख्याजपः प्रोक्तो मुनिभस्तत्त्वदर्शिभिः। सामान्यगदपीडायां दुःस्वप्नस्य च दर्शने ॥११॥
मृत्युञ्जयस्य मन्त्रस्य जपेल्लक्षमितं शुभम्। अपमृत्युविनाशाय जपेदयुतसंमितम् ॥१२॥
दुर्वाणीश्रवणे चैव सुहृदामनृते क्षुते। यात्राकामे रुजां नाशे सहस्रं वा समापयेत् ॥१३॥
आदावभ्यर्च्य देवेशं शङ्करं लोकशङ्करम्। गर्भागारं जलैर्गाङ्गैः क्षालयेच्चन्दनान्वितैः ॥१४॥
दशाङ्गैर्धूपयेद् धूपैः स्नपयेच्छङ्करं ततः। पञ्चामृतेन मन्त्रेण सपुष्पैः साक्षतैः सह ॥१५॥
पयो दधि घृतं गव्यं शर्करा च शुभं मधु। गायत्र्या शर्कराशुद्धजलस्नानं ततः परम् ॥१६॥
तैलाभ्यङ्गः शुभः शम्भोः सर्वकार्येषु चोत्तमः। यथाविधि विधातव्यः सर्वक्लेशनिवारकः ॥१७॥

चन्दनेन सुगन्धेन कुर्याद् देवस्य लेपनम् । स्थावरे पाणिना कार्यो जङ्गमे सकनिष्ठकम् ॥१८॥
ततः पुष्पैविधातव्या पूजा देवस्य शूलिनः । कल्पोद्भवैर्यथोद्दिष्टैर्यथा स्यात् सुमनोहरम् ॥१९॥
दशाङ्गैर्धूपयेत् पश्चाद् दीपैर्नीराजयेत् ततः । दीपिकाभिश्च भोज्यैस्तु नैवेद्यैः परितोषयेत् ॥२०॥
ताम्बूलमर्पयेत् साङ्गं प्रीत्या देवस्य शूलिनः । न्यस्तबीजाक्षरो मन्त्री जपेत् संचिन्त्य शङ्करम् ॥२१॥
यावन्नो जृम्भणं निद्रा शरीरस्यावमर्दनम् । स्थीयते मन्त्रिणा तावदेवं स्याज्जप उत्तमः ॥२२॥
भूतशुद्धिं पुरा कृत्वा ततो जयमुदीरयेत् ।

प्रणवव्याहृतिसहितत्र्यम्बकं यजामहे इति ऋक् मृतसञ्जीविनीविद्या, महामृत्युञ्जयबीजसंपुटत्र्(यु)क्, त्र्यम्बकमिति मन्त्रस्यायमर्थः—त्रयाणां ब्रह्मविष्णुरुद्राणां पितरं यजामहे, इति शिष्यसहितो वसिष्ठोऽब्रवीत् इति। किं विशिष्टमित्यत्राह—सुगन्धिं प्रसारितपुण्यकीर्तिं। किं विशिष्टं पुष्टिवर्धनं जगद्बीजमुरुशक्तिमित्यर्थः। कस्य वर्धकमणिमादिशक्तिवर्धकम्, अतस्तत्प्रसादादेव मृत्योर्मरणात् संसाराद्वा मुक्षीय वियुज्येय। यथा बन्धनात् उर्वारुकं पक्वकर्कटीफलं मुच्यते तद्वन्मां मरणात् संसाराद्वा मोचय। किं मर्यादीकृत्य आअमृतात् सायुज्यान्तं मोक्षपदपर्यन्तमित्यर्थः इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, वसिष्ठऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्छन्दसे नमो मुखे, महामृत्युञ्जयाय देवतायै नमो हृदि, देवप्रणवप्रासादबीजाय नमो गुह्ये, देवीप्रणवमायाबीजशक्तये नमो जान्वोः, ॐ कीलकाय नमः पादयोः, अभीष्टसिद्धये विनियोगः सर्वाङ्गेषु। ततो मूलमन्त्रेण करशुद्धिं कृत्वा प्रणवं करतलयोर्विन्यस्य, मूलमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा, व्याहृत्यादिमन्त्रपादचतुष्ठायं करयोरङ्गुष्ठदिकनिष्ठान्तमङ्गुलिषु विन्यस्य, त्र्यम्बकं सर्वज्ञाय ह्रां हृदयाय नमः। यजामहे नित्यतृप्ताय ह्रीं शिरसे स्वाहा। सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं अनादिबोधाय ह्रूं शिखायै वषट्। उर्वारुकमिव बन्धनात् वह्निनेत्रवज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय ह्रैं कवचाय हुं। मृत्योर्मुक्षीय नित्यमलुप्तशक्तये ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। मामृतात् अचिन्त्यानन्तशक्तये ह्रः अस्त्राय फट्। ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा देहाङ्गन्यासमारभेत्। ॐ त्र्यं त्र्यक्षेशाय त्रिनेत्राशक्तिसहिताय नमः शिखायां। ॐबं बालार्कतेजसे बलप्रभेदिनीशक्तिसहिताय नमः शिरसि। ॐकं कालान्तकेशाय कल्याणीशक्तिसहिताय नमः ललाटे। ॐयं विघ्नेशाय यज्ञरूपाशक्तिसहिताय नमः भ्रुवोः। ॐजां जालन्धरेशाय ज्वालामुखीशक्तिसहिताय नमः नेत्रयोः। ॐमं महादेवेशाय महाशक्तिसहिताय नमः श्रोत्रयोः। ॐहें हाकिनीशाय हैमवतीशक्तिसहिताय नमः नासिकायां। ॐसुं सुगन्धीशाय सुगन्धिशक्तिसहिताय नमः गण्डयोः। ॐगं गन्धेशाय गम्भीराशक्तिसहिताय नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐधिं महीशाय धीराशक्तिसहिताय नमः अधरोष्ठे। ॐपुं पुण्डरीकाक्षेशाय पूर्णाशक्तिसहिताय नमः ऊर्ध्वदन्तेषु। ॐष्टिं द्रष्टे(अधिष्ठे)शाय अधिष्ठानीशक्तिसहिताय नमः अधोदन्तेषु। ॐवं वरिष्ठेशाय वरेण्याशक्तिसहिताय नमः हन्वोः। ॐर्धं धर्मेशाय धर्मशक्तिसहिताय नमः चिबुके। ॐनं नन्दीशाय नन्दिनीशक्तिसहिताय नमः वक्त्रे। ॐ उं ऋद्धीशाय उमाशक्तिसहिताय नमः कण्ठे। ॐर्वां वरुणेशाय वामाशक्तिसहिताय नमः स्कन्धयोः। ॐरुं रुद्रेशाय रूपवतीशक्तिसहिताय नमः बाह्वोः। ॐकं कान्तेशाय कान्तिशक्तिसहिताय नमः हृदये। ॐमिं मीढुष्टमेशाय शिवाशक्तिसहिताय नमः वक्षसि। ॐवं वेदेशाय वेदगर्भाशक्तिसहिताय नमः स्तनयोः। ॐबं बन्धिनीशाय बन्धिनीशक्तिसहिताय नमः हृदये। ॐधं धन्वीशाय धनुष्मतीशक्तिसहिताय नमः नाभौ। ॐनात् नार्के(के)श्वराय पुष्टिशक्तिसहिताय नमः कट्यां। ॐमृं मृत्युञ्जयेशाय मृत्युनाशिनीशक्तिसहिताय नमः गुह्ये। ॐत्यों त्यंत(नित्ये)शाय नित्याशक्तिसहिताय नमः पायौ। ॐर्मुं मुक्तीशाय मुकुन्दाशक्तिसहिताय नमः पार्श्वयोः। ॐक्षीं क्षितीशाय क्षेमङ्करीशक्तिसहिताय नमः ऊर्वोः। ॐयं योगीशाय मन्त्रभेदिनीशक्तिसहिताय नमः गुल्फे। ॐमां मन्त्रेशाय मन्त्रप्रभेदिनीशक्तिसहिताय नमः पादतलयोः। ॐमृं अमृतेशाय अमरशक्तिसहिताय नमः पादोर्ध्वे। ॐतात् तन्वीशाय तन्वीशक्तिसहिताय नमः पादयोः। इति वर्णन्यासः। ॐत्र्यम्बकं त्रिपुरान्तकेशाय त्रैलोक्यशक्तिसहिताय नमः शिरसि। ॐयजां यज्ञवतीशाय सुगन्धाशक्तिसहिताय नमः ललाटे। ॐमहें महत्तत्त्वेशाय मायाशक्तिसहिताय नमः

श्रोत्रयोः। ॐसुगन्धिं सुगन्धीशाय सुगन्धिशक्तिसहिताय नमः नासिकायां। ॐपुष्टिं पुरुषेशाय पुरन्दरीशक्तिसहिताय नमः वदने। ॐवर्धनं वरेशाय वशङ्करीशक्तिसहिताय नमः कण्ठे। ॐऊर्वा उमापतीशाय ऊर्ध्वरेखाशक्तिसहिताय नमः हृदये। ॐरुकं रूपवतीशाय रुक्मवतीशक्तिसहिताय नमः कट्यां। ॐमिवं मित्रेशाय मित्रवतीशक्तिसहिताय नमः कट्यां। ॐबन्धनात् बालचन्द्रमौलीशाय बर्बरीशक्तिसहिताय नमः गुह्ये। ॐमृत्योः मन्त्रेशाय मन्त्रवतीशक्तिसहिताय नमः ऊर्वोः। ॐमुक्षीय मुक्तिकरीशाय मुक्तिकरीशक्तिसहिताय नमः जान्वोः। ॐमा महाकालेशाय महाशक्तिसहिताय नमः जङ्घयोः। ॐअमृतात् अमृतेशाय अमृतवतीशक्तिसहिताय नमः आधारे। इति पदन्यासः। ॐत्र्यम्बकं भवेशाय भूतशक्तिसहिताय नमः आधारे। ॐयजामहे शर्वेशाय शर्वाणीशक्तिसहिताय नमः स्वाधिष्ठाने। ॐसुगन्धिं रुद्रेशाय विरूपाशक्तिसहिताय नमः मणिपूरे। ॐपुष्टिवर्धनं पुरुषवरदेशाय वंशवर्धिनीशक्तिसहिताय नमः अनाहते। ॐऊर्वारुकमिव उग्रेशाय उग्रशक्तिसहिताय नमः विशुन्द्धौ। ॐबन्धनात् महादेवेशाय मानवतीशक्तिसहिताय नमः आज्ञायां। ॐमृत्योर्मृक्षीय भीमेशाय भद्रकालीशक्तिसहिताय नमः ब्रह्मरन्ध्रे। ॐमामृतात् ईशानेशाय ईश्वरीशक्तिसहिताय नमः सहस्रदले। इति वाक्यन्यासः। ॐत्र्यम्बकं यजामहे त्र्यम्बकेशाय त्र्यम्बिकाशक्तिसहिताय नमः पूर्ववक्त्रे। ॐसुगन्धिं पुष्टिवर्धनं मृत्युञ्जयेशाय वामाशक्तिसहिताय नमः दक्षिणवक्त्रे। ॐउर्वारुकमिव बन्धनात् महादेवेशाय भीमाशक्तिसहिताय नमः पश्चिमवक्त्रे। ॐमृत्योर्मृक्षीय मामृतात् सञ्जीवनीशाय द्रौपदीशक्तिसहिताय नमः उत्तरवक्त्रे। इति चरणन्यासः। ॐत्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् महेशाय गौरीशक्तिसहिताय नमः दक्षिणपादे। ॐउर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् शाम्भवेशाय व्यापिनीशक्तिसहिताय नमः वामपादे। इत्यर्धऋग् न्यासः। ॐत्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। सर्वाख्येशाय अनाख्याशक्तिसहिताय नमः सर्वाङ्गे। इति ऋङ्न्यासः। एवं षड्विन्यासः। देहाङ्गन्यासं कृत्वा षडङ्गन्यासमारभेत्—ॐनमो भगवते त्र्यम्बकाय शूलपाणये नमः स्वाहा ह्रां हृदयाय नमः। ॐ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐनमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा ह्रूं शिखायै वषट्। ॐनमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय खट्वाङ्गपाणये ह्रैं कवचाय हुं। ॐनमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसामाथर्वणमूर्तये ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐनमो भगवते मृत्युञ्जयायाग्नित्रयाय ज्वलस्व ज्वलस्व मां रक्ष रक्ष रोगान् विध्वंसय विध्वंसय दुष्टान्निवारय निवारय अघोरास्त्राय फट् ह्रः अस्त्राय फट्। ॐत्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय उमाकालाग्निरुद्राय नमः पादयोः। ॐत्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कालाग्निमूर्तये नमः जङ्घयोः। ॐत्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय उमाधारिणे नमः ऊर्वोः। ॐत्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कामविध्वंसिने नमः गुह्ये। ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय पञ्चवक्त्राय नमः वक्त्रे। ॐत्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय नीलकण्ठाय नमः गले। ॐत्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय चन्द्रार्कवह्निनेत्राय नमः नेत्रयोः। ॐत्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय सर्वाभरणभूषितायामृतप्लुताय नमः मूर्धादिपादान्तम्। ॐसदाशिवाय नमः शिखायां। ईशानाय० मूर्ध्नि। तत्पुरुषाय० मुखे। अघोराय० हृदि। वामदेवाय० ऊरुद्वये। सद्योजाताय नमः पादयोः। इति।

एवं न्यासविधिं कृत्वा शिवो भूत्वा शिवं यजेत्। न्यासमूलमिदं सर्वं न्यासं पूर्वं समाचरेत् ॥१॥
न्यासेन रहितं कर्म चार्धं गृह्णन्ति राक्षसाः। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन न्यासकर्म समाचरेत् ॥२॥

ग्रन्थान्तर में कहा गया है कि अब अनुष्टुप् त्र्यम्बक मन्त्र विधान कहता हूँ,जिसके भजन से मनुष्य को स्वयं काल भी कुछ नहीं कर सकता। इसके ऋष्यादि न्यास इस प्रकार होते हैं—वसिष्ठऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे, महामृत्युञ्जयाय देवतायै नमः हृदि, ॐ ह्रौं नमो गुह्ये, ह्रीं शक्तये नमः जान्वोः, ॐ कीलकाय नमः पादयोः, अभीष्टसिद्धये विनियोगः सर्वांगेषु।

षडङ्ग न्यास—मूल मन्त्र से करशुद्धि करके करतल में ॐ का न्यास करे। मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। व्याहृतियों के सहित मन्त्र के पादचतुष्टय से अंगूठों से कनिष्ठाओं तक न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार हृदयादि न्यास करे—त्र्यम्बकं सर्वज्ञाय ह्रां हृदयाय नमः, यजामहे नित्यतृप्ताय ह्रीं शिरसे स्वाहा, सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं अनादिबोधाय ह्रूं शिखायै वषट्, उर्वारुकमिव बन्धनात् वह्निनेत्रवज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय ह्रैं कवचाय हुं। मृत्योर्मुक्षीय नित्यमलुप्तशक्तये ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, मामृतात् अचिन्त्यानन्तशक्तये ह्रः अस्त्राय फट्। तदनन्तर मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करके देहाङ्ग न्यास करे।

देहाङ्ग में मन्त्रवर्ण न्यास—ॐ त्र्यं त्र्यक्षेशाय त्रिनेत्राशक्तिसहिताय नमः (शिखा में), ॐ वं बालार्कतेजसे बलप्रभेदिनी-शक्तिसहिताय नमः (शिर पर), ॐ कं कालान्तकेशायकल्याणीशक्तिसहिताय नमः (ललाट में), ॐ यं विघ्नेशाय यज्ञरूपा शक्ति-सहिताय नमः (भौहों में), ॐ जां जालन्धरेशाय ज्वालामुखीशक्तिसहिताय नमः (आँखों में), ॐ मं महादेवेशाय महाशक्तिसहिताय नमः (दोनों कान में), ॐ हें हाकिनीशाय हैमवतीशक्तिसहिताय नमः (नासिका में), ॐ सुं सुगन्धीशाय सुगन्धिशक्तिसहिताय नमः (गालों पर), ॐ गं गन्धेशाय गम्भीराशक्तिसहिताय नमः (ऊपरी ओठ में), ॐ धिं महीशाय धीराशक्तिसहिताय नमः (नीचले ओठ में), ॐ पुं पुण्डरीकाक्षेशाय पूर्णाशक्तिसहिताय नमः (ऊपरी दाँतों में), ॐ ष्ठिं अधिष्ठेशाय अधिष्ठानीशक्तिसहिताय नमः (नीचले दाँतों में), ॐ वं वशिष्ठेशाय वरेण्याशक्तिसहिताय नमः (ठुड्डी में), ॐ र्धं धर्मेशाय धर्मशक्तिसहिताय नमः (चिबुक में), ॐ नं नन्दीशाय नन्दिनीशक्तिसहिताय नमः (मुख में), ॐ उं ऋद्धीशाय उमाशक्तिसहिताय नमः (कण्ठ में), ॐ र्वां वरुणेशाय वामाशक्तिसहिताय नमः (कन्धों पर), ॐ रुं रुद्रेशाय रूपवतीशक्तिसहिताय नमः (बाहुओं में), ॐ कं कान्तेशाय कान्तिशक्तिसहिताय नमः (हृदय में), ॐ मिं मिडुष्टमेशाय शिवाशक्तिसहिताय नमः (वक्षःस्थल पर), ॐ वं वेदेशाय वेदगर्भा-शक्तिसहिताय नमः (स्तनों पर), ॐ बं बन्धिनीशाय बन्धिनीशक्तिसहिताय नमः (हृदय में), ॐ धं धन्वीशाय धनुष्मतीशक्ति-सहिताय नमः (नाभि में), ॐ नात् नाकेश्वराय पुष्टिशक्तिसहिताय नमः (कमर में), ॐ मृं मृत्युंजयेशाय मृत्युनाशिनीशक्तिसहिताय नमः (गुह्य में), ॐ त्यों नित्येशाय नित्याशक्तिसहिताय नमः (पायु में), ॐ र्मुं मुक्तीशाय मुकुन्दाशक्ति सहिताय नमः (बगल में), ॐ क्षीं क्षितीशाय क्षेमंकरीशक्तिसहिताय नमः (ऊरुओं में), ॐ यं योगीशाय मन्त्रभेदिनीशक्तिसहिताय नमः (गुल्फ पर), ॐ मां मन्त्रेशाय मन्त्रप्रभेदिनीशक्तिसहिताय नमः (पादतलों में), ॐ मृं अमृतेशाय अमरशक्तिसहिताय नमः (पैरों के ऊपर), ॐ तात् तन्वीशाय तन्वीशक्तिसहिताय नमः (पैरों पर)।

मन्त्रपद न्यास—ॐ त्र्यम्बकं त्रिपुरान्तकेशाय त्रैलोक्यशक्तिसहिताय नमः (शिर पर), ॐ यजां यज्ञवतीशाय सुगन्धा-शक्तिसहिताय नमः (ललाट में), ॐ महें महत्तत्त्वेशाय मायाशक्तिसहिताय नमः (कानों में), ॐ सुगन्धिं सुगन्धीशाय सुगन्धि-शक्तिसहिताय नमः (नासिका में), ॐ पुष्टिं पुरुषेशाय पुरन्दरीशक्तिसहिताय नमः (मुख में), ॐ वर्धनं वरेशाय वशंकरीशक्तिसहिताय नमः (कण्ठ में), ॐ उर्वां उमापतीशाय ऊर्ध्वरेखाशक्तिसहिताय नमः (हृदय में), ॐ रुकं रूपवतीशाय रुक्मवतीशक्तिसहिताय नमः (कमर में), ॐ मिवं मित्रेशाय मित्रवती शक्ति सहिताय नमः (कमर में), ॐ बन्धनात् बालचन्द्रमौलीशाय बर्बरीशक्ति-सहिताय नमः (गुह्य में), ॐ मृत्योः मन्त्रेशाय मन्त्रवतीशक्तिसहिताय नमः (ऊरुओं में), ॐ मुक्षीय मुक्तिकरीशाय मुक्तिकरी-शक्तिसहिताय नमः (जानुओं में), ॐ मां महाकालेशाय महाशक्तिसहिताय नमः (जाङ्घों में), ॐ अमृतेशाय अमृतवतीशक्तिसहिताय नमः (आधार में)।

मन्त्र वाक्य न्यास—ॐ त्र्यम्बकं भवेशाय भूतशक्तिसहिताय नमः (आधार में), ॐ यजामहे शर्वेशाय सर्वाणीशक्ति-सहिताय नमः (स्वाधिष्ठान में), ॐ सुगन्धिं रुद्रेशाय विरूपाशक्तिसहिताय नमः (मणिपूर में), ॐ पुष्टिवर्धनं पुरुषवरदेशाय वंश-वर्धिनीशक्तिसहिताय नमः (अनाहत में), ॐ उर्वारुकमिव उग्रेशाय उग्रशक्तिसहिताय नमः (विशुद्धि में), ॐ बन्धनात् महादेवे-शाय मानवतीशक्तिसहिताय नमः (आज्ञा में), ॐ मृत्युर्मृक्षीय भीमेशाय भद्रकालीशक्तिसहिताय नमः (ब्रह्मरन्ध्र में), ॐ मातृ-तात् ईशानेशाय ईश्वरीशक्तिसहिताय नमः (सहस्रदल में)।

मन्त्र चरण न्यास—ॐ त्र्यम्बकं यजामहे त्र्यम्बकेशाय त्र्यम्बिकाशक्तिसहिताय नमः (पूर्वमुख में), ॐ सुगन्धिं पुष्टि-वर्धनं मृत्युञ्जयेशाय वामाशक्तिसहिताय नमः (दक्षिण मुख में), ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् महादेवेशाय भीमाशक्तिसहिताय नमः (पश्चिम मुख में), ॐ मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् सञ्जीविनीशाय द्रौपदीशक्तिसहिताय नमः (उत्तर मुख में)।

मन्त्रार्ध ऋङ्न्यास—ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् महेशाय गौरीशक्तिसहिताय नमः (दायें पैर में), ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् शाम्भवेशाय व्यापिनीशक्तिसहिताय नमः (बाँयें पैर में)।

पूर्ण ऋङ्न्यास—ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् सर्वाख्येशाय अनाख्याशक्तिसहिताय नमः मन्त्र से समस्त अंगों में न्यास करे।

इन छ: प्रकार के देहाङ्ग न्यासों को करने के बाद इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकाय शूलपाणये नम: स्वाहा ह्रां हृदयाय नम:, ॐ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा ह्रूं शिखायै वषट्, ॐ नमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय खट्वांगपाणये हैं, कवचाय हुं, ॐ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजु:सामाथर्वणमूर्तये ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ नमो भगवते मृत्यञ्जयायाग्नित्रयाय ज्वलस्व ज्वलस्व मां रक्ष रक्ष रोगान् विध्वंसय विध्वंसय दुष्टान्निवारय निवारय अघोरास्त्राय फट् ह: अस्त्राय फट्।

ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय उमाकालाग्निरुद्राय नम: (पैरों में), ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कालाग्निमूर्तये नम: (जाँघों में), ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय उमाधारिणे नम: (ऊरुओं में), ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कामविध्वंसिने नम: (गुह्य में), ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय पञ्चवक्त्राय नम: (मुख में), ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय नीलकण्ठाय नम: (गले में), ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय चन्द्रार्कवह्निनेत्राय नम: (आँखों में), ॐ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय सर्वाभरणभूषितायामृतप्लुताय नम: (मूर्धा से पैर तक), ॐ सदाशिवाय नम: (शिखा में), ॐ ईशानाय नम: (मूर्धा में), ॐ तत्पुरुषाय नम: (मुख में), ॐ अघोराय नम: (हृदय में), ॐ वामदेवाय नम: (दोनों ऊरुओं में), ॐ सद्योजाताय नम: (दोनों पैरों में)।

महामृत्यञ्जय मन्त्र—मूलोक्त श्लोकों के उद्धार करने पर षट्प्रणवान्वित मन्त्र होता है—ॐ हौं जूं स: ॐ भूर्भुव: स्व: ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॐ हौं ॐ जूं स: ॐ भूर्भुव: स्व:— यह बावन अक्षरों का मृतसञ्जीवनी मन्त्र है। योगेश्वर रुद्र का ध्यान करके इस मन्त्र का विधिवत् जप करने से साधक मृत्यु को भी जीत लेता है।

अगस्त्य ने कहा—हे देवदेव! महादेव!! भक्तों पर अनुग्रह करने वाले!!! जप-पूजा आदि से समन्वित मृत्युञ्जय मन्त्र की विधि मुझसे कहिये; साथ ही पीठपूजा-यन्त्र एवं होम की विधि भी मुझे बताइये। ब्रह्मा ने कहा—वत्स! मृत्युञ्जय-विधान सुनो, जिसे जानकर मनुष्य मृत्युरूपी व्याधि के महान् भय से छुटकारा पा जाता है। सभी ग्रहपीड़ा में महा उग्र मण्डल में, बान्धवों के वियोग में, जनमारी होने पर, राष्ट्रभंग में, जनच्छेद में, महामृत्यु विनाश में, अभिचार होने पर, मन धर्म के विपर्यय में विद्वान् को मृत्युञ्जय देव का विधान करना चाहिये। जब कभी किसी भी समय में शुभ चन्द्र-तारा-बल, शुभ वार, शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र, शुभ लग्न, शुभ योग, शुभ ग्रह स्थिति में मृत्युञ्जय देव के विधान का अनुष्ठान करना चाहिये। शिवालय के द्वार पर चित्रित मण्डप में दीपस्थान को निश्चित कर वेद-शास्त्र ज्ञानी मात्सर्यरहित ब्राह्मणों को बुलाकर रक्त कम्बल के आसन पर उन्हें आसीन कराकर स्वस्तिवाचनपूर्वक इसका साधन कराना चाहिये। प्रारब्ध कार्य के अनुरूप जप उत्तम होता है। न्यूनाधिक करने से जप विफल होता है। राष्ट्रभंग, जनक्लेश, महारोग से पीड़ा होने पर तत्त्वदर्शी मुनियों के अनुसार एक करोड़ जप करना चाहिये। सामान्य रोग पीड़ा, बुरे स्वप्न दर्शन होने पर मृत्युञ्जय मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिये। अपमृत्यु-विनाश के लिये दश हजार जप करना चाहिये। अशुभ बोली सुनने पर, सुहृदों के अनृत में, यात्रा क्रम में, रोगनाश के लिये एक हजार जप करना चाहिये। एतदर्थ सर्वप्रथम लोकशंकर देवेश शंकर का अर्चन करे। गर्भागार को गंगाजल में चन्दन मिलाकर स्वच्छ करे। दशांग धूप देकर शंकर को स्नान करावे। तब पञ्चामृत मन्त्र से पुष्पाक्षत से दूध, दही, गोघृत, शक्कर, मधु से गायत्री मन्त्र से स्नान कराकर शुद्ध जल से स्नान करावे। सभी कार्यों में शम्भु का तैलाभ्यङ्ग करना शुभ होता है। यथाविधि करने से सभी क्लेशों का निवारण होता है। चन्दन सुगन्ध का देव को लेप लगावे। स्थावर लिङ्ग में हाथ से लेप लगावे और जङ्गम में कनिष्ठासहित लेपन करे। तब भगवान् शम्भु को पुष्प अर्पण करे। कल्प में जैसा कहा गया है, उसी के अनुसार सुन्दर फूल चढ़ावे। दशांग धूप से धूपित करे। दीपदान करे। तब भोज्य नैवेद्य अर्पण करके सन्तुष्ट करे। दीपक से आरती करे। देव शूली की प्रसन्नता के लिये ताम्बूल प्रदान करे। बीजाक्षरों से न्यास करके ध्यानसहित जप करे जब तक जम्भाई नींद शिथिलता न हो तब तक जप करना उत्तम होता है। पहले भूतशुद्धि करके जप करना चाहिये।

मृत्युञ्जयध्यानम्

ध्यानम्। ततश्चन्द्रमण्डलोपरि बद्धपद्मासनं चन्द्रवर्णं स्रवदमृतचन्द्रकलाधरं योगमुद्राबद्धाधरहस्तद्वयं धृतामृत-पूर्णकलशोत्तरकरद्वयं सोमसूर्याग्नित्रिलोचनं बद्धपिङ्गलजटाजूटं नागयज्ञोपवीतिनं नागाभरणभूषणं भक्तानुकम्पिनं भस्मानुलेपिनं श्रीरुद्रं ध्यायेत्।

शुद्धस्फटिकसङ्काशं त्रिनेत्रं पञ्चवक्त्रकम्। गङ्गाधरं जटाजूटखण्डेन्दुमण्डितं तथा ॥१॥
कपालमालिनं सौम्यं योगासनगतस्थितिम्। व्याघ्रचर्माम्बरधरं बद्धनागेन्द्रभूषणम् ॥२॥
वामे करे त्वभयदं दक्षिणे वरदं तथा। कपालकुण्डलं सव्ये त्रिशूलं दक्षिणे करे ॥३॥
ध्यायेन्मृत्युञ्जयं देवं मृत्युरोगविनाशनम्। एवं ध्यात्वा द्विजः सम्यक् त्र्यम्बकजपमारभेत् ॥४॥ इति।

ध्यानान्तरम्—

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाससंस्थं शिवं स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥५॥
गौरीं चतुर्भुजां चण्डीं त्रिनेत्रां मुकुटोज्ज्वलाम्। पद्मदर्पणहस्तां च वरदाभयहस्तकाम् ॥६॥
दिव्यवस्त्रपरीधानां दिव्यालङ्कारभूषिताम्। प्रसन्नवदनां ध्यात्वा शिवोत्सङ्गे तु वामतः ॥७॥

एवं ध्यात्वा स्नेहपूर्णेन मनसा पूर्वोक्तमार्गेणार्चनं कृत्वा शरणं व्रजेत्।

त्रियम्बक महादेव पाहि मां शरणागतम्। जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः ॥८॥
तावकस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मृड। इति विज्ञाप्य देवेशं जपेन्मन्त्रं च त्र्यम्बकम् ॥९॥

इस प्रकार न्यास करने के बाद शिव स्वरूप होकर शिव की पूजा करे। इन सबों का मूल न्यास ही है; इसलिये पहले न्यास करे। न्यासरहित जप को राक्षस हर लेते हैं। इसलिये सभी प्रयत्न से न्यास करना चाहिये। न्यास के पश्चात् चन्द्रमण्डल के ऊपर पद्मासन में विराजमान श्वेत वर्ण, चन्द्रमा के अमृत कलाओं को धारण करने वाले, नीचले दोनों हाथों को योगमुद्रा से बद्ध किये हुये, ऊपर के दोनों हाथों में अमृतपूर्ण कलश धारण किये, सोम-सूर्य-अग्निरूप तीन नेत्रों वाले, जटाजूट बाँधे, सर्प का यज्ञोपवीत धारण किये, सर्पों का आभूषण पहने, भक्तों पर दया करने वाले, भस्म का लेप लगाये श्री रुद्र का इस प्रकार ध्यान करे—

शुद्धस्फटिकसङ्काशं त्रिनेत्रं पञ्चवक्त्रकम्। गङ्गाधरं जटाजूटखण्डेन्दुमण्डितं तथा।।
कपालमालिनं सौम्यं योगासनगतस्थितिम्। व्याघ्रचर्माम्बरधरं बद्धनागेन्द्रभूषणम्।।
वामे करे त्वभयदं दक्षिणे वरदं तथा। कपालकुण्डलं सव्ये त्रिशूलं दक्षिणे करे।।
ध्यायेन्मृत्युञ्जयं देवं मृत्युरोगविनाशनम्। एवं ध्यात्वा द्विजः सम्यक् त्र्यम्बकजपमारभेत्।।

अथवा इस प्रकार ध्यान करे—

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाससंस्थं शिवं स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे।।
गौरीं चतुर्भुजां चण्डीं त्रिनेत्रां मुकुटोज्ज्वलाम्। पद्मदर्पणहस्तां च वरदाभयहस्तकाम्।।
दिव्यवस्त्रपरीधानां दिव्यालङ्कारभूषिताम्। प्रसन्नवदनां ध्यात्वा शिवोत्सङ्गे तु वामतः।।

इस प्रकार ध्यान करके भक्ति से पूर्वोक्त मार्ग से अर्चन करके रुद्र का शरण ग्रहण करे। शरणागत होने का मन्त्र है—

त्रियम्बक महादेव पाहि मां शरणागतम्। जन्ममृत्युजरारोगैः पीड़ितं कर्मबन्धनैः।।
तावकस्त्वद्प्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मृड।

देवेश से ऐसी प्रार्थना करके त्र्यम्बक मन्त्र का जप करे।

लिङ्गमुद्राविधिः

अङ्गुल्यग्राणि मूले तु कृत्वाङ्गुष्ठे निपीडयेत्। मुष्ठिमुद्रा शिवस्योक्ता सैव शान्तिप्रदायिनी ॥१०॥

'एष ते रुद्र भाग' इति लिङ्गमुद्रां प्रदर्शयेत्।

श्रीकामः शीर्ष्णि कुर्वीत तेजस्कामस्तु नेत्रयोः। मुखे त्वन्नाद्यकामस्तु ग्रीवायां रोगनाशने ॥११॥

हृदये सर्वकामस्तु नाभौ ज्ञाने प्रदर्शयेत्। प्रजाकामस्तु गुह्ये वै पशुकामस्तु गुल्फयोः ॥१२॥
जानुभ्यां ग्रामकामस्तु राष्ट्रकामस्तु पादयोः। वशीकरणकामस्तु वामहस्ते प्रदर्शयेत् ॥१३॥
पापक्षयेऽभिचारे वा व्याधिरोगविनाशने। बहिः शरीरात् कुर्वीत शिवस्याग्रे तु संस्पृशेत् ॥१४॥ इति।

अंगुलियों के अग्रभाग को अंगूठों से सटाकर शिव की मुट्ठी मुद्रा बनाने से शान्ति प्राप्त होती है। 'एष ते रुद्रभाग' मन्त्र से लिङ्ग मुद्रा दिखावे। धन की कामना से शिर पर, तेज की कामना से आँखों में, अन्नादि की कामना से मुख में और रोगनाश के लिये गले में मुद्रा दिखानी चाहिये। सभी कामनाओं के लिये हृदय में, ज्ञान के लिये नाभि में मुद्रा प्रदर्शित करनी चाहिये। प्रजा की कामना से गुह्य में, पशु-कामना से गुल्फों में, ग्राम की कामना से जानुओं में, राष्ट्र की कामना से पैरों में, वशीकरण की कामना से बाँयें हाथ में मुद्रा दिखानी चाहिये। पापनाश, अभिचार, व्याधि, रोगविनाश के लिये शरीर के बाहर मुद्रा दिखाकर शिव का स्पर्श करना चाहिये।

पूजाविधानम्

अथ पूजा—

त्रिभिर्व्याहृतिभिः कुर्यान्निर्माल्यस्य विसर्जनम्। मलस्नानं ततः कुर्यात् पात्रे देवं निधाय च ॥१॥
गन्धमाल्यैः सुगन्धैश्च चात्मानं चार्चयेद् बुधः। आवाहनासनं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ॥२॥
स्नानं वस्त्रोपवीतं च गन्धपुष्पं यथाक्रमम्। सहस्रशीर्ष इत्यादिऋग्भिस्तु दशभिर्यजेत् ॥३॥
ततः पीठं समाराध्य गन्धपुष्पाक्षतैः शुभैः। आधारशक्तिं कूर्मं च कैलासं मन्दराचलम् ॥४॥
पृथिवीवेदिकां चैव सिंहासनस्य पादुकाम्। चतुर्थ्यन्तनमोन्तं च पीठमध्ये समर्चयेत् ॥५॥
धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च यथाक्रमम्। हुताशनादिकोणेषु ततः प्रागादिषु क्रमात् ॥६॥
धर्मादींश्च यजेत्तत्र नञ्पूर्वांश्च यथाक्रमम्। सिंहासनस्य कोणेषु वह्न्यादिषु यथाक्रमम् ॥७॥
गुणत्रयं तथा विद्याश्चतुर्थ्यन्तं नमोन्तकैः। अतः परं प्रवक्ष्यामि मण्डलस्य तु लक्षणम् ॥८॥
अत्रादौ मण्डलं कार्यं मनोज्ञैः शालितण्डुलैः। पूर्वमष्टादश रेखा उत्तरेऽष्टादश तथा ॥९॥
एकेनोना च नवतिः कोष्ठकाणां शतद्वयम्। आवाह्य देवतास्तत्र त्र्यम्बकाद्याश्च शक्तिकाः ॥१०॥
रमा माया प्रभा ज्योत्स्ना पूर्णा पूर्णामृता सुधा। विश्वा विद्या प्रभा प्रह्वा सारा सन्ध्या शिवा निशा ॥११॥
ओघा प्रज्ञा प्रभा मेधा कान्तिः शान्तिर्धृतिः स्मृतिः। परा जया ह्यविघ्नी च पद्मा क्षान्तिस्तथैव च ॥१२॥
अघोरा अजया माला कलास्त्रिंशत् प्रकीर्तिता। कलाज्ञानविहीनानां पूजनं निष्फलं भवेत् ॥१३॥
प्रणवादिनमोन्तैश्च चतुर्थीपदमध्यगाः। सर्वत्र प्रजपेन्मन्त्रं ततः पीठं प्रपूजयेत् ॥१४॥
क्षारक्षीरदधिसर्पिःस्वादोदकसुरेक्षवः। प्रणवादिनमोऽन्ताश्च सागरांस्तत्र पूजयेत् ॥१५॥
जम्बुद्वीपं ततः प्लक्षं शाल्मलिं कुशसंज्ञकम्। क्रौञ्चं शाकं पुष्करं च द्वीपानि तु ततो यजेत् ॥१६॥
भूर्लोकोऽथ भुवर्लोको स्वर्गलोको महर्जनः। तपो लोकः सत्यलोकः क्रमात्तत्रैव पूजयेत् ॥१७॥
अतलं वितलं चैव तलातलमतः परम्। रसातलं च पातालं सुतलं च महातलम् ॥१८॥
आत्मतत्त्वान्तरात्मा परमात्मा ज्ञानमेव च। चतुर्थ्यन्तप्रयोगेण नमोन्तेन प्रपूजयेत् ॥१९॥
गङ्गा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती। नर्मदा सिन्धु कावेरी नमोन्तेन प्रपूजयेत् ॥२०॥
संवत्सराश्च ऋतवो मासाः पक्षा दिनानि च। प्रणवादिनमोन्तेन ततः शक्तीः प्रपूजयेत् ।२१॥
वामा ज्येष्ठा तथा श्रेष्ठा रौद्री काली तथैव च। कलविकरणी चैव बलविकरणी तथा ॥२२॥
बलप्रमथनी चैव सर्वभूतदमन्यथ। मनोन्मनी भगवती कालरुद्रात्मने नमः ॥२३॥
उमा चण्डेश्वरो नन्दी महाकालस्तथैव च। वृषभो भृङ्गिरीटिश्च स्कन्दश्चैव क्रमाद्यजेत् ॥२४॥
इन्द्रादिलोकपालांश्च पूजयेत् तदनन्तरम्। सरस्वतीं च दुर्गां च गणेशं क्षेत्रपालकम् ॥२५॥

तत्तद्बीजेन संपूज्य वसूनष्टौ तथा यजेत् । रुद्रानेकादश चैव द्वादशादित्यकान् यजेत् ॥२६॥
भैरवाष्टौ ततः पूज्या ब्राह्म्यादींश्च ततो यजेत् । ध्रुवोऽध्वरस्तथा सोम आपश्चैवानिलोऽनलः ॥२७॥
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः । वीरभद्रश्च शम्भुश्च गिरिशोऽप्यजएकपात् ॥२८॥
अहिर्बुध्न्यः पिनाकी च भुवनाधीश्वरस्तथा । दिशांपतिः पशुपतिः स्थाणुर्भर्ग इति स्मृतः ॥२९॥
आदित्यः सविता सूर्यः पूषा मित्रस्तथैव च । तमोघ्नश्च हिमघ्नश्च अरुणो भानुरेव च ॥३०॥
मार्तण्डो भास्करश्चेति तथैव च दिवाकरः । असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्तभैरवः ॥३१॥
कपाली भीषणश्चैव संहारश्चाष्ट भैरवाः । ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ॥३२॥
वाराहीन्द्राणी चामुण्डा महालक्ष्म्योऽष्ट मातरः। इति।

ततस्त्र्यम्बकमन्त्रेण पञ्चामृतस्नानादिषोडशोपचारपूजां कुर्यात् । प्लुतप्रणवयोगेन स्नपयेत्। आवाहनस्थापनसंनिधानसंनिरोधनसंमुखीकरणसकलीकरणावगुण्ठनामृतीकरणपरमीकरणयोनिलिङ्गमहासरस्वतीमुद्राः प्रदर्शयेत्। तत आवरणपूजां कुर्यात्। तत्र न्यासोक्तदेवता अष्टाविंशत्युत्तरशतं शक्तयः पूज्याः।

सद्योजाताष्टका ज्ञेया वामदेवास्त्रयोदश । अघोरस्य कला ह्यष्टौ पुरुषस्य चतुष्कलाः ॥३३॥
ईशानस्य कलाः पञ्च क्रमेण परिकीर्तिताः । अष्टात्रिंशत् कला ज्ञेयाः पूजनीयाः प्रकीर्तिताः ॥३४॥
शशिनी चाङ्गदा हृष्टा मरीचिर्ज्वालिनी तथा । ईशानस्य कलाः पञ्च नीराजनपरानुगाः ॥३५॥
निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शान्तिस्तथैव च । पुरुषस्य कला ह्येताश्चतस्त्रः परिकीर्तिताः ॥३६॥
तमा मोहा क्षमा निद्रा व्याधिर्मृत्युः क्षुधा तृषा । अघोरस्य कला ह्येताश्चाष्ट संज्ञोपलक्षिताः ॥३७॥
रजा रक्षा रतिर्वाह्या कामसंजीवनी तथा । कृपा वृद्धिः क्षमा धात्री भूषणी मोहिनी तथा ॥३८॥
वामदेवकलाः ह्येताः कीर्तिताश्च त्रयोदश । ऋद्धिः सिद्धिर्लघुर्लक्ष्मीर्मेधा कान्तिः स्वधा प्रजा ॥३९॥
सद्योजातकला ह्येता ह्यष्ट संज्ञोपलक्षिताः । शुद्धस्फटिकसङ्काशं निर्मलानन्दसंज्ञितम् ॥४०॥
तत्त्वं निधनकं चैव ईशानोर्ध्वमुखं स्मरेत्।

'ईशानः सर्वविद्यानां' इति मन्त्रेणेशानस्योर्ध्वमुखं पूजयेत्।

पद्मरागसमाभासं जपाबालार्कसन्निभम् । वक्त्रं च संप्रियं स्निग्धं पूर्वं तत्पुरुषं स्मरेत् ॥४१॥
'तत्पुरुषाय' इति मन्त्रेण तत्पुरुषस्य पूर्ववक्त्रं पूजयेत्।

नीलाभं च समस्तेज्यं करालं विकृताननम् । दक्षिणस्यां दिशि ध्यातमघोरस्य मुखं स्मरेत् ॥४२॥
'अघोरेभ्य' इति मन्त्रेणाघोरस्य दक्षिणमुखं पूजयेत्।

नित्यं च हेमवर्णाभं दिव्यरूपं सुलक्षणम् । कामिन्यर्धाङ्गसंयुक्तं वक्त्रं वामोत्तरं यजेत् ॥४३॥
'वामदेवाय' इति मन्त्रेण वामदेवस्योत्तरं मुखं पूजयेत्।

सुश्वेतं शङ्खवर्णाभं नीलकण्ठस्य शोभितम् । गङ्गार्धचन्द्रमौलिस्थं सद्योजातं तु पश्चिमम् ॥४४॥

'सद्योजात'मिति मन्त्रेण सद्योजातस्य पश्चिमवक्त्रं पूजयेत्।

अथाङ्गपूजा—त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कालाग्निद्राय नमः पादौ पूजयामि। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कालाग्निमूर्तये नमः जंघे पूजयामि। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय उमाङ्गधारिणे नमः ऊरू०। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कामविध्वंसिने नमः गुह्यं०। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय नीलकण्ठाय नमः कण्ठं०। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय पञ्चवक्त्राय नमः वक्त्रं०। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय चन्द्रार्कवह्निनेत्राय नमो नेत्रं०। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्रायामृतप्लुताय दिव्यशरीराय नमः सर्वाङ्गं पूजयामि। ततो मूलमन्त्रेण गन्धपुष्पधूपदीपनैवेद्याचमनीयान्तं कर्म समापयेदिति। ततो मूलमन्त्रं जप्त्वा विसर्जयेत्। पुरश्चरणं तु। तदुक्तम्—

जपेन्मन्त्रमिमं लक्षमेवं ध्यायञ्जितेन्द्रियः। जुहुयादयुतं द्रव्यैर्दशभिर्घृतसंप्लुतैः ॥१॥
बिल्वं पलाशं खदिरं वटं च तिलसर्षपान्। दौग्धं दुग्धं दधि पुनर्दूर्वान्तानि विदुः क्रमात् ॥२॥
पञ्चाक्षरोदिते पीठे पूजयेद् वृषभध्वजम्। मूर्तिं मूलेन संकल्प्य वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ॥३॥
पूर्वमङ्गानि संपूज्य पश्चान्मूर्तीः प्रपूजयेत्। अर्केन्दुवसुधातोयवह्नीरवियदात्मनः ॥४॥
रमा राका प्रभा ज्योत्स्ना पूर्णोमा पूषणी सुधा। अष्टाविमाः क्रमात् पूज्यास्तृतीयावरणे ततः ॥५॥
विश्वा विद्या सिता प्रह्वा सारा सन्ध्या शिवा निशा। चतुर्थावरणे पूज्याः शक्तयोऽष्टौ क्रमादिमाः ॥६॥
आर्या प्रज्ञा प्रभा मेधा कान्तिः शान्तिर्धृतिर्मतिः। पञ्चमावरणे पूज्याः क्रमादेतास्ततः परम् ॥७॥
एवं कृते प्रयोगार्हो जायतेऽयं महामनुः। इति।

पूजा—भूर्भुवःस्वः से निर्माल्य का विसर्जन करे। देव को पात्र में रखकर स्नान कराये। स्वयं का गन्ध-माला-सुगन्ध से अर्चन करे। तब देव का आवाहन आसन पाद्य अर्घ्य आचमनीय स्नान वस्त्र उपवीत गन्ध पुष्प से यथाक्रम सहस्त्रशीर्ष इत्यादि दश ऋचाओं से अर्चन करे। तब पीठ पूजा गन्ध, पुष्पाक्षत से करके आधारशक्ति, कूर्म कैलास मन्दराचल पृथ्वी वेदी सिंहासन पादुका का अर्चन चतुर्थ्यन्त नाम में नमः लगाकर पीठ मध्य में करे। आग्नेयादि कोणों में धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य की पूजा करे। अधर्म अज्ञान अवैराग्य अनैश्वर्य की पूजा पूर्वादि दिशाओं में करे। सिंहासन के अग्न्यादि कोणों में गुणत्रय और विद्या का पूजन चतुर्थ्यन्त नाम में नमः लगाकर करे।

अब पूजामण्डल का लक्षण कहता हूँ। पूजा मण्डल के लिये शालि चावल से अट्ठारह रेखा पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर की ओर बनावे। इससे दो सौ नवासी कोष्ठ बनते हैं। उसमें त्र्यम्बकादि तीस कलाओं का आवाहन करके पूजा करे। ये तीस कलायें हैं—रमा, माया, प्रभा, ज्योत्स्ना, पूर्णा, पूर्णामृता, सुधा, विश्वा, विद्या, प्रभा, प्रह्वा, सारा, सन्ध्या, शिवा, निशा, ओघा, प्रज्ञा, प्रभा, मेधा कान्ति, शान्ति, धृति, स्मृति, परा, जया, अविघ्नी, पद्मा, क्षान्ति, अघोरा, अजया, माला। कला-ज्ञानविहीनों की पूजा निष्फल होती है। सबों के आदि में प्रणव, अन्त में नमः और बीच में चतुर्थ्यन्त नाम लगाकर सर्वत्र पीठ पूजा करे।

इसके बाद नमक, दूध, दही, सर्पि, स्वादिष्ट जल, सुरा, ईख रस के सात सागरों की पूजा इनके चतुर्थ्यन्त नाम के साथ आदि में प्रणव एवं अन्त में नमः लगाकर करे। इसके बाद जम्बुद्वीप, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक, पुष्कर—इन सात द्वीपों की पूजा करे। इसके बाद भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महः लोक, जनः लोक, तपोलोक और सत्यलोक—इन सात लोकों की पूजा करे। इसके बाद अतल, वितल, तलातल, रसातल, पाताल, सुतल, महातल—इन सात लोकों की पूजा करे। तब आत्मतत्त्व, अन्तरात्मा, परमात्मा की पूजा चतुर्थ्यन्त नाम के साथ नमः लगाकर करे। तब गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी की पूजा करे। संवत्सर, ऋतु, मास, पक्ष, दिनों की पूजा करे। तब वामा, ज्येष्ठा, श्रेष्ठा, रौद्री, काली, कलविकरणी, बलविकरणी, बलप्रमथनी, सर्वभूतदमनी, मनोन्मनी, भगवती, कालरुद्रात्मन की पूजा करे। तब उमा, चण्डेश्वर, नन्दी, महाकाल, वृषभ, भृंगी, स्कन्द की पूजा क्रम से करे। इसके बाद इन्द्रादि लोकपालों की पूजा करे। तब सरस्वती, दुर्गा, गणेश, क्षेत्रपाल की पूजा उनके बीजमन्त्रों से करे। तब आठ वसुओं, एकादश रुद्रों एवं द्वादश आदित्यों की पूजा करे।

तदनन्तर आठ भैरवों और ब्राह्मी आदि आठ शक्तियों की पूजा करे। आठ वसुओं के नाम हैं—ध्रुव, अध्वर, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष एवं प्रभात। एकादश रुद्रों में वीरभद्र, शम्भु, गिरीश, अज, एकपाद, अहिर्बुध्न्य, पिनाकी, भुवनाधीश, दिशांपति, पशुपति, स्थाणु एवं भर्ग आते हैं। बारह आदियों में आदित्य, सविता, सूर्य, पूषा, मित्र, तमोघ्न हिमघ्न, अरुण, भानु, मार्तण्ड, भास्कर एवं दिवाकर हैं। आठ भैरवों में असिताङ्ग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कपाली, भीषण और संहार हैं। अष्ट मातृकाओं में ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा और महालक्ष्मी आती हैं।

इसके बाद त्र्यम्बक मन्त्र से पञ्चामृत स्नानादि से षोडशोपचार पूजा करे। प्लुत प्रणव योग से स्नान करावे। आवाहन,

स्थापन, सन्निधापन, सन्निरोधन, सम्मुखीकरण, सकलीकरण, अवगुण्ठन, अमृतीकरण, परमीकरण करके योनि लिङ्ग महासरस्वती मुद्रा दिखावे। तब न्यासोक्त एक सौ अट्ठाईस शक्तियों की पूजा करे।

सद्योजात की कला ८, वामदेव की कला १३, अघोर की कला ८, तत्पुरुष की कला ४, ईशान की कला ५—इन कुल अड़तीस कलाओं की पूजा करे। ईशान की पाँच कलायें शशिनी, अंगदा, हृष्टा, मरीचि एवं ज्वालिनी हैं। तत्पुरुष की चार कलाओं के नाम निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या और शान्ति हैं। अघोर की आठ कलाओं के नाम तमा, मोहा, क्षमा, निद्रा, व्याधि, मृत्यु, क्षुधा एवं तृषा हैं। वामदेव की तेरह कलायें रजा, रक्षा, रति, वाह्या, काम, सञ्जीवनी, कृपा, वृद्धि, क्षमा, धात्री भूषणी मोहिनी हैं। सद्योजात की आठ कलायें ऋद्धि, सिद्धि, लघु, लक्ष्मी, मेधा, कान्ति, स्वधा एवं प्रजा हैं।

'ईशान: सर्वविद्यानां' मन्त्र से ऊर्ध्व मुख ईशान की पूजा करे। पद्मराग मणि के समान प्रकाशमान, जपा एवं बाल सूर्य के सदृश, प्रसन्नमुख तत्पुरुष का स्मरण पूर्व दिशा में करे और 'तत्पुरुषाय' मन्त्र से पूर्व वक्त्र की पूजा करे। नीलवर्ण, भयंकर, विकृत मुख वाले अघोर का दक्षिण दिशा में स्मरण करे एवं 'अघोरेभ्य' मन्त्र से दक्षिणमुख की पूजा करे। श्वेत शंख-सदृश कान्ति वाले, नीले कण्ठ वाले, गंगा एवं अर्धचन्द्र को शिर पर धारण करने वाले सद्योजात का पश्चिम दिशा में स्मरण करे एवं 'सद्योजात' मन्त्र से पश्चिम मुख की पूजा करे। नित्य पीत वर्ण, दिव्य स्वरूप वाले, सुन्दर लक्षणों से युक्त, आधे अंग में कामिनी से युक्त वामदेव का उत्तर दिशा में स्मरण करे एवं 'वामदेवाय' मन्त्र से उत्तरमुख की पूजा करे। अंग पूजा इस प्रकार करे—त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कालाग्निरुद्राय नम: पादौ पूजयामि, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कालाग्निमूर्तये नम: जङ्घे पूजयामि, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय उमाङ्गधारिणे नम: ऊरूं पूजयामि, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कामविध्वंसिने नम: गुह्यं पूजयामि, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय नीलकण्ठाय नम: कण्ठं पूजयामि, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय चन्द्रार्कवह्निनेत्राय नमो नेत्रं पूजयामि, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय अमृतप्लुताय दिव्यशरीराय नम: सर्वाङ्गं पूजयामि। तब मूल मन्त्र से गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य आचमनी देकर कर्म समाप्त कर मूल मन्त्र का जप कर पूजा का विसर्जन करे।

पुरश्चरण—जितेन्द्रिय रहकर ध्यानसहित एक लाख मन्त्रजप करे। घृतप्लुत निम्नांकित दश द्रव्यों में से प्रत्येक से एक-एक हजार के क्रम से कुल दश हजार हवन करे। ये द्रव्य हैं—बेल, पलाश, खैर, वट, तिल, सरसों, घृत, दूध, दही, दूर्वा। पञ्चाक्षर मन्त्र से उक्त पीठ पर वृषभध्वज की पूजा करे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके संकल्प करके विहित मार्ग से पूजा करे। पहले प्रथम आवरण में अंगों की पूजा करे। तब द्वितीय आवरण में पञ्चमूर्ति की पूजा करे। यह दूसरा आवरण है। तृतीयावरण में सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश एवं स्वयं की पूजा कर रमा, राका, प्रभा, ज्योत्स्ना, पूर्णा, उमा, पूषणी, सुधा—इन आठ की पूजा करे। चतुर्थ आवरण में विश्वा, विद्या, सिता, प्रह्वा, सारा, सन्ध्या, शिवा, निशा—इन आठ शक्तियों की पूजा करे। पञ्चमावरण में आर्या, प्रज्ञा, प्रभा, मेधा, कान्ति, शान्ति, धृति, मति—इन आठ शक्तियों की पूजा करे—इतना करने पर महामन्त्र के प्रयोग की अर्हता प्राप्त होती है।

प्रयोगविध्यन्तरम्

अथ प्रयोगा उच्यन्ते—

सर्वेषां चैव मन्त्राणां पूर्वसेवा कृता तथा। लक्षैकेन सुसिध्यन्ति दशांशेनैव होमयेत्॥१॥
पूर्वसेनार्थमयुतं गुग्गुलं घृतसंप्लुतम्। भूतशुद्धिं पुरा कृत्वा न्यासजालमतः परम्॥२॥

शुक्लाम्बरधर: शुक्ल: शुक्लमाल्यानुलेपन: सपत्नीक: सर्त्विक् साचार्यो यजमानो मङ्गलघोषेण संपूर्णकलश-सहित: शकुनादिमन्त्रघोषेण कुण्डस्थदेशं स्थण्डिलदेशं वा प्राप्य, तत्रोपविश्य प्राणानायम्य, अद्येत्यादि देशकालौ संकीर्त्य, मया कृतस्य कारितस्य वा जपस्य संपूर्णफलावाप्त्यर्थं तद्दशांशहोमममुकद्रव्येण करिष्ये। तदङ्गतया गणेशपूजनं मातृकापूजनं नान्दीमुखश्राद्धं च करिष्ये इति संकल्प्य, संस्कृत्य ग्रहवेद्यां ग्रहस्थापनं कृत्वा, ग्रहाधिदेवता: प्रत्यधिदेवता गणपतिदुर्गाक्षेत्रपालकान् इन्द्राद्यष्टदिक्पालांश्च तत्तन्मन्त्रै: स्थापयित्वा, तत्रैकं मध्ये कलशं संस्थाप्य तन्मुखे वस्त्रोपरि महामृत्युञ्जयमन्त्रं संस्थाप्य, मन्त्रवर्णसंख्याकमाषपरिमितां प्रतिमां तदुपरि संस्थाप्य तां शोधयेत्। प्रथमं देवं प्रणिपत्यैवं प्रार्थयेत्—'स्वागतं देवदेवेश विश्वरूप नमोऽस्तु ते। शुद्धेऽपि त्वदधिष्ठाने शुद्धिं कुर्यां सहस्व

ताम्'। ततो न्यासपूर्वकं रुद्राभिषेकं कुर्यात्। ततोऽग्नेरुत्तारणम्। 'अग्निः सप्तिं वाजम्भरं (१०.८०.१) इति जप्त्वा पुनः सर्वसूक्तेनाभिषेकः कार्यः। प्रथमं सप्तमृत्तिकाभिरालिप्य शुद्धोदकेन प्रक्षाल्य कोष्ठं हरिद्रावयवश्रीखण्डकचोर-कमुस्ताचूर्णेनोद्वर्त्य जलेन प्रक्षालयेत्। 'आपो हि ष्ठा' (१०.९.१) इति ऋग्भिरभ्यर्च्य ततः पुष्पाक्षतान् गृहीत्वा 'आ त्वा वहन्तु हरयः' (१.१६.१) इति ध्यात्वा 'स्वामिन् सर्वजगन्नाथ यावत् पूजावसानकम्। तावत्त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु'। आवाहनादिकल्पोक्तप्रकारेण षोडशोपचारपूजां कुर्यात्।

दशक्लेशे हि संसारे प्राप्तोऽहं शरणागतः। भक्त्या समर्चयाम्यद्य सफलं चास्तु पूजनम् ॥१॥
साधु वासाधु वा कर्म यद्यदाचरितं मया। तत्सर्वं भगवञ्छम्भो गृहाण विधिपूर्वकम् ॥२॥
अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया। दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर ॥३॥
महादेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल। भक्त्या कृतं मया देव तत्सर्वं सफलं कुरु ॥४॥
इति प्रार्थनां कृत्वा, पुनः प्रार्थयेत्।

जय देव जगन्नाथ जय शाश्वत शङ्कर। जय सर्वसुराध्यक्ष जय सर्वसुरार्चित ॥१॥
जय सर्वगुणातीत जय सर्ववरप्रद। जय नित्य निराधार जय विश्वम्भराव्यय ॥२॥
जय विश्वैकवन्द्येश जय नागेन्द्रभूषण। जय गौरीपते शम्भो जय चन्द्रार्धशेखर ॥३॥
जय कोट्यकर्सङ्काश जयानन्तगुणाश्रय। जय रुद्र विरूपाक्ष जयाचिन्त्य निरञ्जन ॥४॥
जय नाथ कृपासिन्धो जय भक्तार्तिभञ्जन। जय दुस्तरसंसारसागरोत्तारण प्रभो ॥५॥
प्रसीद मम देवेश संसारार्तस्य बिभ्यतः। सर्वपापक्षयं कृत्वा रक्ष मां परमेश्वर ॥६॥
महादारिद्र्यमग्नस्य महापापहतौजसः। महाशोकनिमग्नस्य महारोगातुरस्य च ॥७॥
ऋणभारपरीतस्य दह्यमानस्य कर्मभिः। ग्रहैः प्रपीड्यमानस्य प्रसीद मम शङ्कर ॥८॥
दरिद्रः प्रार्थयेद् देवं पूजान्ते गिरिजापतिम्। अर्थार्थी वापि राजा वा प्रार्थयेदेवमीश्वरम् ॥९॥
दीर्घमायुः सदारोग्यं कोशवृद्धिर्बलोन्नतिः। ममास्तु नित्यमानन्दः प्रसादात्तव शङ्कर ॥१०॥
शत्रवः संक्षयं यान्तु प्रसीदन्तु मम ग्रहाः। नश्यन्तु दस्यवो राष्ट्रे जनाः सन्तु निरापदः ॥११॥
दुर्भिक्षमारीसन्तापाः शमं यान्तु महीतले। वसुसस्यसमृद्धिश्च भूयात् सुखमयं दिशि ॥१२॥
एवमाराधयेद् देवं जपहोमार्चनादिषु। यावत् कर्म समाप्येत तावत् सन्निहतो भवेत् ॥१४॥ इति।

मन्त्र के प्रयोग—इन सभी मन्त्रों की पूर्वसेवा के बाद एक लाख जप एवं उसके दशांश हवन से सिद्धि प्राप्त होती है। पूर्वसेवा का अर्थ यह है कि पहले भूतशुद्धि करके समस्त न्यास करे। तब घृत से प्लुत गुग्गुल से दश हजार हवन करे। यजमान पत्नीसहित श्वेत माला, श्वेत वस्त्र, श्वेत अनुलेपयुक्त होकर ऋत्विकों और आचार्य के साथ मंगल घोष के साथ, पूर्ण कलश सहित शकुनादि मन्त्र घोष के साथ कुण्ड या स्थण्डिल के निकट बैठे। प्राणायाम करे। देश-काल का स्मरण करते हुये जपफल की प्राप्ति के लिये होम का सङ्कल्प करे। साथ ही अंगभूत गणेशपूजन, मातृकापूजन एवं नान्दीश्राद्ध का भी सङ्कल्प करे। संस्कृत ग्रहवेदी पर ग्रह-स्थापन करके ग्रहाधिदेवता, प्रत्यधिदेवता, गणपति, दुर्गा, क्षेत्रपाल, इन्द्रादि अष्ट दिक्पालों को उनके मन्त्रों से स्थापित करे। मध्य में एक कलश स्थापित करे। कलश के मुख पर वस्त्र रखकर उसमें महामृत्यञ्जय मन्त्र स्थापित करे। मन्त्र वर्णसंख्या के माप के बराबर प्रतिमा स्थापित करके उसका शोधन करे। पहले देव को प्रणाम करे तब इस प्रकार प्रार्थना करे—

स्वागतं देवदेवेश विश्वरूप नमोस्तु ते। शुद्धेऽपि त्वदधिष्ठाने शुद्धिं कुर्यां सहस्व ताम्।।

तब न्यासपूर्वक रुद्राभिषेक करे। तब अग्नि उत्तारण करे। 'अग्निः सप्तिं वाजम्भरं' का जप करके पुनः सभी सूक्तों से अभिषेक करे। पहले सप्तमृत्तिका से लिप्त कर शुद्ध जल से स्वच्छ करके कोष्ठों को हल्दी, यव, श्रीखण्ड, कचूर,

मुस्ताचूर्णमिश्रित जल से प्रक्षालित करे। 'आपोहिष्ठा' ऋचा से अर्चन करे। हाथ में पुष्पाक्षत लेकर 'आ त्वा वहन्तु हरयः' से ध्यान करके इस मन्त्र से आवाहन करे—

स्वामिन् सर्वजगन्नाथ यावत् पूजावसानकम्। तावत्त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

आवाहन के बाद कल्पोक्त प्रकार से षोडशोपचार पूजा करे। तब इस प्रकार प्रार्थना करे—

दशक्लेशे हि संसारे प्राप्तोऽहं शरणागतः। भक्त्या समर्चयाम्यद्य सफलं चास्तु पूजनम्।।
साधु वासाधु वा कर्म यद्यदाचरितं मया। तत्सर्वं भगवञ्छम्भो गृहाण विधिपूर्वकम्।।
अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया। दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर।।
महादेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल। भक्त्या कृतं मया देव तत्सर्वं सफलं कुरु।।

इन श्लोकों से प्रार्थना करने के बाद पुनः इस प्रकार प्रार्थना करे—

जय देव जगन्नाथ जय शाश्वत शङ्कर। जय सर्वसुराध्यक्ष जय सर्वसुरार्चित।।
जय सर्वगुणातीत जय सर्ववरप्रद। जय नित्य निराधार जय विश्वम्भराव्यय।।
जय विश्वैकवन्द्येश जय नागेन्द्रभूषण। जय गौरीपते शम्भो जय चन्द्रार्धशेखर।।
जय कोट्यकर्सङ्काश जयानन्तगुणाश्रय। जय रुद्र विरूपाक्ष जयाचिन्त्य निरञ्जन।।
जय नाथ कृपासिन्धो जय भक्तार्तिभञ्जन। जय दुस्तरसंसारसागरोत्तारण प्रभो।।
प्रसीद मम देवेश संसारार्तस्य बिभ्यतः। सर्वपापक्षयं कृत्वा रक्ष मां परमेश्वर।।
महादारिद्र्यमग्नस्य महापापहतौजसः। महाशोकनिमग्नस्य महारोगातुरस्य च।।
ऋणभारपरीतस्य दह्यमानस्य कर्मभिः। ग्रहैः प्रपीड्यमानस्य प्रसीद मम शङ्कर।।
दरिद्रः प्रार्थयेद् देवं पूजान्ते गिरिजापतिम्। अर्थार्थी वापि राजा वा प्रार्थयेदेवमीश्वरम्।।
दीर्घमायुः सदारोग्यं कोशवृद्धिर्बलोन्नतिः। ममास्तु नित्यमानन्दः प्रसादात्तव शङ्कर।।
शत्रवः संक्षयं यान्तु प्रसीदन्तु मम ग्रहाः। नश्यन्तु दस्यवो राष्ट्रे जनाः सन्तु निरापदः।।
दुर्भिक्षमारीसन्तापाः शमं यान्तु महीतले। वसुसस्यसमृद्धिश्च भूयात् सुखमयं दिशि।।

जप होम अर्चनादि में इस प्रकार की आराधना से जब तक कर्म समाप्त नहीं होता तब तक देव सन्निहित रहते हैं।

होमविधिः

ततो होमं कुर्यात्। होमकुण्डे चतुर्दिक्षु द्वारपालान् प्रतिष्ठाप्य 'गणानां त्वा०' जातवेदसे०' 'क्षेत्रस्य पतिना वयं०' 'प्रणो देवी०' इति मन्त्रैः प्रतिष्ठाप्योपविश्य, प्राणायामपूर्वकमृष्यादिन्यासं कृत्वा, पादयोः विष्णवे नमः। हृदये ब्रह्मणे नमः। शिरसि महेश्वराय नमः। शिखायां सप्तर्षिभ्यो नमः। नासिकायां सप्तजिह्वाय नमः। श्रोत्रयोः अश्विनीदेवताभ्यां नमः। चक्षुषोः शशिभास्कराभ्यां नमः। जिह्वायां सरस्वत्यै नमः। वाचि बृहस्पतये नमः। दन्तेषु माधवाय नमः। हृदये हव्यवाहनाय नमः। पादयोः गन्धर्वाप्सरोभ्यो०। कण्ठे द्वादशादित्येभ्यः०। दक्षिणहस्ते एकादशरुद्रेभ्यः०। वामे अष्टवसुभ्यो०। उपकवचे द्वादशादित्येभ्यः। अहमेव परमात्मा। त्र्यम्बकाय त्रिपुरान्तकेशाय शूलपाणये स्वाहा हृत्। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कपर्दिने स्वाहा शिरः। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय नीलकण्ठाय स्वाहा शिखा। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय सर्वसिद्धिफलप्रदाय [illegible] कवचं। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय ज्ञानमूर्तये स्वाहा नेत्रे। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय ज्वल ज्वल प्रज्वल २ प्रतापय स्वाहा अस्त्रं। ततः पूर्ववद् ध्यात्वा अग्निं परिसमूह्य ऋक्शाखाप्रयोगं कुर्यात्। मन्त्रहोमं कृत्वा ततः स्विष्टकृतं हुत्वा, बलिदानं कृत्वा हस्तौ पादौ प्रक्षाल्याचम्य प्राणानायम्य सङ्कल्पेहोम-संपूर्णफलवाप्त्यर्थं पूर्णाहुतिहोमं करिष्ये, समुद्रादूर्मि०मूर्धानं दिवः० पुनस्त्वादित्या० सप्त ते अग्ने० धामन्ते एतैर्मन्त्रै-र्हुत्वा आचार्याय प्रतिमां दद्यात्। ततः श्रेयःसंपादनं कृत्वाचार्यर्त्विक्—गणपतिजपब्राह्मणेभ्यो गन्धमाल्यादिवस्त्रा-लङ्करणानि दत्त्वा, यथोचितदक्षिणां दत्त्वा, ब्राह्मणान् भोजयित्वा दक्षिणादिभिः सन्तोष्य विसर्जयेत्। इति होमविधिः।

तदनन्तर हवन करे। होम कुण्ड के चारो दिशाओं में द्वारपालों की स्थापना 'गणानां त्वा०' 'जातवेदसे०' 'क्षेत्रस्य पतिना वयं०' 'प्र णो देवी' से करके बैठे। प्राणायामपूर्वक ऋष्यादि न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार न्यास करे—पैरों में विष्णवे नमः, हृदय में ब्रह्मणे नमः, शिर पर महेश्वराय नमः, शिखा में सप्तर्षिभ्यो नमः, नासिका में सप्तजिह्वाय नमः, कानों में अश्विनी देवताभ्यां नमः, आँखों में शशिभास्कराभ्यां नमः। जिह्वा में सरस्वत्ये नमः, मुख में बृहस्पतये नमः, दाँतों में माधवाय नमः, हृदय में हव्यवाहनाय नमः, पैरों में गन्धर्वाप्सरोभ्यो नमः, कण्ठ में द्वादशादित्येभ्यो नमः, दाहिने हाथ में एकादशरुद्रेभ्यो नमः, बाँयें हाथ में अष्टवसुभ्यो नमः, उपकवच में द्वादशादित्येभ्यो नमः।

षडङ्ग न्यास इस प्रकार करे—त्र्यम्बकाय त्रिपुरान्तकेशाय शूलपाणये स्वाहा हृदयाय नमः, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय कपर्दिने स्वाहा शिरसे स्वाहा, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय नीलकण्ठाय स्वाहा शिखायै वषट्, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय सर्वसिद्धिफलप्रदाय स्वाहा कवचाय हुम्। त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय ज्ञानमूर्तये स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल प्रतापय स्वाहा अस्त्राय फट्। तब पूर्ववत् ध्यान करके अग्नि का परिसमूहन करके ऋक्शाखोक्त प्रयोग करे। मन्त्रहोम करके स्विष्टकृत् हवन करे। तब बलिदान देकर हाथ-पैर धोकर प्राणायाम करे। सङ्कल्प होम के सम्पूर्ण फल की प्राप्ति के लिये पूर्णाहुति होम करे। समुद्रादूर्मि०, मूर्धानं दिवः०, पुनस्त्वादित्या०, सप्त ते अग्ने०, धामन्ते० मन्त्रों से हवन करे। आचार्य को प्रतिमादान करे। तब श्रेयःसम्पादन करके आचार्य ऋत्विक् गणपति जप ब्राह्मणों को गन्ध माला वस्त्र अलंकार देकर यथोचित दक्षिणा देकर ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करके पूजा का विसर्जन करे।

काम्यप्रयोगाः

अथ काम्यप्रयोगाः—

दूर्वाभयार्द्रसमिधो गोघृतेन समन्विताः। होतव्याः शान्तिके विप्र शान्तिर्येन भवेत् स्फुटा ॥१॥
समिधो राजवृक्षोत्था होतव्याः स्तम्भकर्मणि। मेषीघृतेन संयुक्ताः सहदेव्या सुसिद्धिदाः ॥२॥
खादिाः मारणे प्रोक्ताः कटुतैलेन संयुताः। उत्पा(च्चा)टयेन्महीं सर्वां सशैलवनकाननाम् ॥३॥
यशश्चैव सदा होमे कुसुमैर्दाडिमोद्भवैः। अजाघृतेन देवर्षीन् वशयेत् सचराचरम् ॥४॥
वशमायान्ति ताः सर्वाः यज्ञनागाङ्गनादयः। जातिनिर्माल्लिकाहोमो घृतेन सहितो भवेत् ॥५॥
सध्यानां कन्यकाः सर्वाः साधकाग्रे पतन्ति च। करवीरैस्तु रक्तैस्तु योषितो वशमानयेत् ॥६॥
शतपत्रैः कृतो होमः पृथ्वीलाभं करोति च। होमाच्च पिचुमन्दैश्च मतिमाञ्जायते नरः ॥७॥
अङ्कोलपुष्पहोमेन सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि। अर्कपुष्पैः सदारोग्यं मन्दारैरर्थसंपदः ॥८॥
तथैव पालिपुष्पैश्च राजानं गिरिकर्णकैः। नीलपुष्पैस्तथा होमे देशं च वशमानयेत् ॥९॥
ब्राह्मणास्तु वशं यान्ति वन्यैः सुक्षितिसंभवैः। कदम्बपुष्पहोमेन यक्षिणीं वशमानयेत् ॥१०॥
कुन्दपुष्पैस्तु सौभाग्यं विद्या रक्तोत्पलैर्भवेत्। बिल्वपत्रैस्तु राज्यं च चक्रवर्तित्वमम्बुजैः ॥११॥
अशोकपुष्पहोमेन सर्वशोकविनाशनम्। कर्णिकापुष्पहोमेन राज्यप्रीतिमवाप्नुयात् ॥१२॥
हरीतक्या च आरोग्यं व्याधिनाशो विभीतकैः। चूतपुष्पफलैर्होमश्चिन्तितार्थफलप्रदः ॥१३॥
जम्बूफलैश्च होमेन यशश्चाप्नोति निर्मलम्। न्यग्रोधफलहोमेन सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥१४॥
दाडिमीफलहोमेन दैत्यकन्यां समानयेत्। कूष्माण्डफलहोमेन धान्यसिद्धिमवाप्नुयात् ॥१५॥
बदरीफलहोमेन रत्नलाभो भवेद् ध्रुवम्। पिचुमन्दफलैः पुष्पैर्विद्वेषाकर्षणं परम् ॥१६॥
द्राक्षाफलैः सदावश्यं स्थावरं जङ्गमं तथा। नारिकेलफलैर्होमे वृद्धिमाप्नोति चाव्ययाम् ॥१७॥
कुटजीफलहोमेन वेतालीसिद्धिमाप्नुयात्। चम्पकैश्च कृते होमे सिद्धयन्तेऽप्सरसां गणाः ॥१८॥
तिलैश्च शान्तिकं कुर्यान्मधुघृतसमन्वितम्। राजिकालवणैरेव वश्याकर्षणकं परम् ॥१९॥
शिलातालकहोमेन मारयेद्रिपुजं कुलम्। बिल्वमूलकहोमेन शक्रतुल्यो भवेन्नरः ॥२०॥

प्रियङ्गकदलीपुष्पैः सर्वसत्त्वं वशं नयेत्। दूर्वाङ्कुरसमिद्भिस्तु अमृताखण्डसंयुतम् ॥२१॥
घृतमधुसुसंयुक्तं महामृत्युविनाशनम्। अयुतं जुहुयाद्बिल्वसमिद्भिः संपदे सुधीः ॥२२॥
जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षस्य समिद्भिर्ब्रह्मतेजसे। खादिरैरयुतं हुत्वा कान्तिं पुष्टिमवाप्नुयात् ॥२३॥
वटवृक्षस्य समिधो जुहयादयुतावधि। धनधान्यसमृद्धः स्यादचिरेणैव साधकः ॥२४॥
तिलैस्तत्संख्यया हुत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते। सिद्धार्थैरयुतं हुत्वा शत्रून् विजयते नृपः ॥२५॥
अनेनैव विधानेन नश्येन्मृत्युरकालतः। पायसेन कृतो होमो रक्षाश्रीकीर्तिदायकः ॥२६॥
शुद्धान्नपशुदुग्धेन हुत्वा कृत्यां विनाशयेत्। अयमेवं मनोर्होमः शान्तिश्रीसंपदावहः ॥२७॥
दधिदुग्धेन संपातं कुर्याद्विद्वेषणं मतम्। प्रत्यहं जुहुयान्मन्त्री दूर्वा अष्टोत्तरं शतम् ॥२८॥
आमयानखिलाञ्जित्वा दीर्घमायुरवाप्नुयात्। जुहुयाज्जन्मदिवसे पायसान्नैर्घृतान्वितैः ॥२९॥
इष्टामनिन्दितां लक्ष्मीमारोग्यमतुलं यशः। गव्यदुग्धघृताक्ताभिर्दूर्वाभिर्जुहुयाद्वशी ॥३०॥
सविंशतिशतं सम्यक् स्वजन्मदिवसे सुधीः। आमयैः सकलैर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुधीः ॥३१॥
शाल्मलीसमिधः सर्पिः पयोन्नं त्रिशतं सुधीः। जुहुयाद् ब्राह्मणानन्ते भोजयेन्मधुरान्वितम् ॥३२॥
प्रीणयेद् धनधान्याद्यैरात्मनो गुरुमादरात्। अनामयमवाप्नोति दीर्घमायुः श्रिया सह ॥३३॥
सघृतेन पयोन्नेन हुत्वा पर्वणि पर्वणि। राज्यश्रियमवाप्नोति षण्मासान्नात्र संशयः ॥३४॥
लाजैर्विशुद्धैर्जुहुयात् कन्यायाः सुवराप्तये। क्षीरद्रुमसमिद्धोमाद् ब्राह्मणादीन् वशं नयेत् ॥३५॥
स्नात्वा सहस्रं प्रजपेदादित्याभिमुखो मनुम्। आधिव्याधिविनिर्मुक्तो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥३६॥
अनेन मनुना सर्वं साधयेदिष्टमात्मनः।

इति मृत्युञ्जयप्रयोगः।

काम्य प्रयोग—गोघृत समन्वित आर्द्र दूर्वा से शान्ति कर्म में हवन करे तो शान्ति होती है। स्तम्भन में अमलतास की समिधा से हवन करे। इसमें भेड़ी का घी और सहदेई मिलाकर हवन करने से सिद्धि मिलती है। कड़ुआ तेल से संयुक्त खैर की समिधा के हवन से मारण होता है। इससे सभी पहाड़ जंगल के साथ पृथ्वी का उच्चाटन होता है। अनारफूलों के हवन से यश मिलता है। बकरी के घी से हवन करने पर देवर्षि सहित चराचर वश में होते हैं। घृतसहित जाति मल्लिका फूलों के हवन से सभी यक्ष-नागकन्यादि वश में होती हैं। लाल कनैल के फूलों से हवन करने पर सभी साध्य कन्या और स्त्रियाँ साधक के वश में होकर प्रणाम करती हैं। शतपत्री के हवन से पृथ्वी का लाभ होता है। पिचुमन्द के हवन से मनुष्य गतिमान होता है। अंकोल पुष्प के हवन से आठो सिद्धियाँ मिलती हैं। अकवन के फूलों से हवन करने पर आरोग्य और मन्दारफूलों के हवन से धन-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार पालिपुष्पों के हवन से राजा एवं गिरिकर्णिकानील पुष्पों के हवन से देश वश में होते हैं। शुद्ध भूमि में उत्पन्न जंगली पुष्पों के हवन से ब्राह्मण वश में होते हैं। कदम्बपुष्प के हवन से यक्षिणी वश में होती है। कुन्दपुष्पों के हवन से सौभाग्य और लाल उत्पल के हवन से विद्या की प्राप्ति होती है। बेलपत्री के हवन से राज्य और कमल के हवन से चक्रवर्तित्व प्राप्त होता है। अशोक के फूलों से हवन करने पर सभी शोकों का नाश होता है। कर्णिकापुष्प के हवन से राज्य की प्रीति मिलती है। हर्रे के हवन से आरोग्य एवं लिसोड़े के हवन से व्याधि का नाश होता है। आम्रमञ्जरी और फल के हवन से इच्छित फल मिलता है। जामुनफलों के हवन से निर्मल यश होता है। वटवृक्ष के फलों के हवन से सभी सिद्धियाँ मिलती हैं। अनारफलों के हवन से दैत्यकन्या आती है। कुष्माण्डफल के हवन से धान्य मिलता है। वैरफल से हवन करने पर रत्नलाभ होता है। पिचुमन्द पुष्प-फल के हवन से विद्वेषण एवं आकर्षण होता है। द्राक्षाफल के हवन से स्थावर-जंगम वश में होते हैं। नारिकेल फल से हवन करने पर अव्यय वृद्धि होती है। कुटजी फल के हवन से वेताल सिद्ध होते हैं। चम्पा के फूलों से हवन करने पर अप्सरागणों की सिद्धि होती है। मधु-घीमिश्रित तिल के हवन से शान्ति होती है। राई नमक के हवन से परम आकर्षण होता है। शिलाताल के हवन से द्विजकुल का नाश होता है।

बेल की जड़ से हवन करने पर मनुष्य इन्द्र के समान होता है। प्रियंगु और केले के फूलों से हवन करने पर सर्वसत्त्व वश में होते हैं। गुडूची और दुर्वांकुर की समिधाओं को घी-मधु से संयुक्त करके हवन करने से महामृत्यु का नाश होता है। संपदा के लिये बेल की समिधा से दश हजार हवन करना चाहिये।

ब्रह्मतेज के लिये पलाश की समिधाओं से हवन करे। खैर की समिधाओं से दश हजार हवन करने पर कान्ति और पुष्टि की प्राप्ति होती है। वटवृक्ष की समिधाओं से दश हजार हवन करने पर थोड़े ही दिनों में धन-धान्य की समृद्धि मिलती है। दश हजार हवन तिल से करने पर सभी पापों से मुक्ति हो जाती है। सरसों से दश हजार हवन करने पर राजा शत्रु को जीत लेता है। सरसों के हवन से अकाल मृत्यु नहीं होती है। पायस से हवन करने पर रक्षा, श्री एवं कीर्ति की प्राप्ति होती है। शुद्ध अन्न में पशु दूध मिलाकर हवन करने से कृत्या का नाश होता है। इस मन्त्र से हवन करना शान्ति, श्री एवं सम्पदादायक है। दही, दूध के हवन के समय हुतसम्पात से विद्वेषण होता है। प्रतिदिन दूर्वा से एक सौ आठ हवन करने से सभी रोगों से मुक्त होकर साधक दीर्घायु प्राप्त करता है। जन्मदिनों में घी-मिश्रित पायसान्न के हवन से इच्छित धन एवं आरोग्य मिलता है। गोदुग्ध घी से अक्त दूर्वा के हवन से वश्य होता है। जन्मदिन में इस प्रकार का एक सौ बीस हवन करने से साधक सभी रोगों से मुक्त होकर सौ वर्षों तक जीवित रहता है। सेमर की समिधा, गाय का घी, दूध अन्न से तीन सौ हवन करके ब्राह्मणों को मीठा भोजन करावे एवं अपने गुरु को धन-धान्य देकर प्रसन्न करे तो धन के साथ-साथ आरोग्य और दीर्घायु की प्राप्ति होती है। घी, दूध, अन्न से पर्वो में हवन करने पर राज्यश्री की प्राप्ति छः महीनों में होती है। कन्या के लिये सुन्दर वर-प्राप्ति के लिये लावा से हवन करे। क्षीरद्रुम की समिधाओं से हवन करने पर ब्राह्मणादि वश में होते हैं। स्नान करके सूर्य की ओर मुख करके प्रतिदिन एक हजार जप करे तो साधक आधि-व्याधि से मुक्त होकर दीर्घायु प्राप्त करता है। इस मन्त्र से अपने सभी अभीष्टों को सिद्ध किया जा सकता है।

गायत्रीविधानन्तत्प्रयोगश्च

अथ श्रीविद्यावरणाङ्गत्वेन गायत्रीविधानम्। तत्र शारदातिलके (प० २१)—

अथो वक्ष्यामि गायत्रीं तत्त्वरूपां त्रयीमयीम्। यया प्रकाश्यते ब्रह्म सच्चिदानन्दलक्षणम् ॥१॥
प्रणवाद्या व्याहृतयः सप्त स्युस्तत्पदादिकाः। चतुर्विंशत्यक्षरात्मा गायत्री शिरसान्विता ॥२॥
सर्ववेदोद्धृतः सारो मन्त्रोऽयं समुदाहृतः। ब्रह्मा देव्यादिगायत्री परमात्मा समीरितः ॥३॥
ऋष्याद्याः प्रणवस्यैते मुनिभिः परिकीर्तिताः। प्राग्वत् कृत्वा षडङ्गानि ध्यायेद्विष्णुं तथा ततः ॥४॥

तथा तत्प्रकरणोक्तप्रकारेण।

जमदग्निभरद्वाजभृगुगौतमकश्यपान्। विश्वामित्रवसिष्ठाख्यौ व्याहृतीनामृषीन् विदुः ॥५॥
गायत्र्युष्णिगथानुष्टुब् बृहतीपङ्क्तयः पुनः। त्रिष्टुब्जगत्यौ छन्दांसि कथितानि मनीषिभिः ॥६॥
सप्तार्चिरनिलः सूर्यो वाक्पतिर्वरुणो वृषा। विश्वेदेवाः क्रमादासां देवताः परिकीर्तिताः ॥७॥
भूराद्याभिर्व्याहृतिभिः षड्भिः कुर्यात् षडङ्गकम्। व्याहृतीः सप्त भूराद्याः हृन्मुखांसोरुयुग्मके ॥८॥
जठरे न्यस्य मन्त्रज्ञो ध्यायेत्ता व्याहृतीस्ततः। स्थानानि सप्त लोकाः स्युः सर्वासां स्वस्वसंज्ञकाः ॥९॥
स्वे स्वे च वर्णतरवो रूपयौवनसंयुताः। क्षौमवस्त्रपरीधानाः सर्वाभरणभूषिताः ॥१०॥
उन्निद्राम्भोजवदनाः प्रभामण्डलमण्डिताः। सितोपवीतहृदयाः सपवित्रचतुष्कराः ॥११॥
अभयाक्षस्त्रगप्यत्र(?)वरहस्तसरोरुहाः। एवं होमजपारम्भे ध्येया व्याहृतयो द्विजैः ॥१२॥
गायत्र्या मुनिराख्यातो विश्वामित्रो महाद्युतिः। गायत्री छन्द इत्युक्तं देवता सविता स्मृतः ॥१३॥
एतान् विन्यस्य ऋष्यादीन् गायत्र्यर्णांस्तनौ न्यसेत्। पत्सन्धिषु ध्वजे नाभौ हृत्कण्ठभुजसन्धिषु ॥१४॥
आस्यनासाकपोलाक्षिकर्णभ्रूमस्तके पुनः। पाश्चात्योत्तरयाम्यप्रागूर्ध्ववक्त्रेषु साधकः ॥१५॥
पदानि दश विन्यस्येदेषु स्थानेषु मन्त्रवित्। शिरोभ्रूमध्यदृग्वक्त्रे कण्ठहृन्नाभिगुह्यक्त्रे ॥१६॥

जानुनोः पादयोर्युग्मे तच्छिरः शिरसि न्यसेत्। हृदयं ब्रह्मणे प्रोक्तं विष्णवे शिर ईरितम् ॥१७॥
शिखा रुद्राय कवचमीश्वराय समीरितम्। नेत्रं सदाशिवायोक्तमस्त्रं सर्वात्मने स्मृतम् ॥१८॥
षडङ्गान्येवमुक्तानि यथास्थानं प्रविन्यसेत्। शिरसोऽस्य मुनिर्ब्रह्मा छन्दो देव्यादिका स्मृता ॥१९॥
मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै र्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशान् पाशं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारबिन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥२०॥
गायत्री परमात्मास्य देवता कथिता बुधैः।

कशः काशः, गुणं त्रिशूलम्। दक्षाधःकरमारभ्य दक्षवामदक्षवामक्रमेणोपर्युपरि द्वन्द्वक्रमेणायुधानि ध्येयानि ।

सप्तव्याहृतिसंयुक्तां गायत्रीं शिरसान्विताम्। त्रिरुश्चरन् धिया प्राणान् धारयेद्यतमानसः ॥२१॥
प्राणायामोऽयमाख्यातः समस्तदुरितापहः। प्राणायामान् पुरा कृत्वा गायत्रीं सन्ध्ययोर्जपेत् ॥२२॥
विधाय मण्डलं विद्वान् त्रिकोणोज्ज्वलकर्णिकम्। अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं चतुरस्त्रत्रयावृतम् ॥२३॥
सौरं पीठं यजेत् तत्र दीप्तादिनवशक्तिभिः। मूलमन्त्रेण क्लृप्तायां मूर्तौ देवीं प्रपूजयेत् ॥२४॥
त्रिषु कोणेषु संपूज्या ब्राह्म्याद्याः शक्तयोः बहिः। आदित्याद्यास्ततः पूज्या उषादिसहिताः क्रमात् ॥२५॥
ततः षडङ्गान्यभ्यर्च्य केसरेषु यथाविधि। प्रह्लादिनीं प्रभां पश्चान्नित्यां विश्वम्भरां पुनः ॥२६॥
विलासिनीप्रभावत्यौ जयां शान्तां यजेत् पुनः। कान्तिं दुर्गासरस्वत्यौ विश्वरूपां ततः परम् ॥२७॥
विशालासंज्ञितामीशां व्यापिनीं विमलां यजेत्। तमोपहारिणीं सूक्ष्मां विश्वयोनिं जयावहाम् ॥२८॥
पद्मालयां परां शोभां पद्मरूपां ततोऽर्चयेत्। ब्राह्म्याद्याः सारुणा बाह्ये पूजयेत् प्रोक्तलक्षणाः ॥२९॥
ततोऽर्चयेद् ग्रहान् बाह्ये शक्राद्यानायुधैः सह। इत्थमावरणैर्देवीं दशभिः परिपूजयेत् ॥३०॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां भोक्ता स्याद् द्विजसत्तमः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीपरमात्मने देवतायै नमः। इति विन्यस्य, पूर्वं प्रवणप्रकरणोक्तप्रकारेण करषडङ्गन्यासान् कृत्वा तथैव विष्णुं ध्यात्वा, पुनः शिरसि जमदग्निभरद्वाजभृगुगौतमकाश्यपविश्वामित्रवसिष्ठेभ्य ऋषिभ्यो नमः। मुखे गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगतीभ्यश्छन्दोभ्यो नमः। हृदये अग्निवायुसूर्यगुरुवरुणवृषविश्वे-देवेभ्यो देवताभ्यो नमः। इति विन्यस्य, ॐभूः हृदयाय नमः। ॐभुवः शिरसे स्वाहा। ॐस्वः शिखायै वषट्। ॐमहः कवचाय हुं। ॐजनः नेत्रेभ्यो वौषट्। ॐ तपः सत्यं अस्त्राय फट्। इति मन्त्रैः करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ततः हृदि ॐभूः नमः। मुखे ॐभुवः नमः। दक्षांसे ॐस्वः नमः। वामांसे ॐमहः नमः। दक्षोरौ ॐजनः नमः। वामोरौ ॐ तपः नमः। जठरे ॐ सत्यं नमः। इति विन्यस्य, प्रथमोक्तरूपा व्याहृतीर्ध्यात्वा, शिरसि विश्वामित्रऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये सवित्रे देवतायै नमः। इति विन्यस्य, ॐ ब्रह्मणे नमः हृदयाय नमः। विष्णवे नमः शिरसे स्वाहा। रुद्राय नमः शिखायै वषट्। ईश्वराय नमः कवचाय हुं। सदाशिवाय नमः नेत्रत्रयाय वौषट्। सर्वात्मने नमः अस्त्राय फट्। इति मन्त्रैः करषडङ्गन्यासं कृत्वा, पादाङ्गुलिमूलयोः तं नमः। गुल्फयोः त्सं नमः। जानुनोः विं नमः। ऊरुमूलयोः तुं नमः। लिङ्गे र्वं नमः। नाभौ रें नमः। हृदि णिं नमः। कण्ठे यं नमः। कराङ्गुलिमूलयोः भं नमः। मणिबन्धयो र्गो नमः। कूर्परयोः दें नमः। भुजमूलयोः वं नमः। मुखे स्यं नमः। नासिकयो धीं नमः। कपोलयोः मं नमः। नेत्रयोः हिं नमः। कर्णयोः धिं नमः। भ्रुवोः यों नमः। मस्तके यों नमः। चूडाधः नः नमः। वामकर्णे प्रं नमः। दक्षकर्णे चों नमः। मुखे दं नमः। शिरसि यात् नमः। शिरसि तत् नमः। भ्रूमध्ये सवितुर्नमः। नेत्रयोः वरेण्यं नमः। मुखे भर्गो नमः। कण्ठे देवस्य नमः। हृदि धीमहि नमः। नाभौ धियो नमः। गुह्ये यो नमः। जानुनोः नः नमः। पादयोः प्रचोदयात् नमः। इति विन्यस्य, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि

परमात्मने देवतायै नमः। इति विन्यस्य, शिरसि ॐ आपो ज्योती रसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवःस्वरों नमः। इति विन्यस्य, महाव्याहृतिभिः प्राणायामत्रयं कृत्वा, पुनश्च गायत्र्याः पदन्यासान्तं कृत्वा, ततश्चतुर्विंशतिन्यासः—

गायत्री-विधान—श्रीविद्या के अंगभूत गायत्री का विधान बताते हुये शारदातिलक में कहा गया है कि त्रयीमयी तत्त्वरूपा गायत्री सच्चिदानन्दलक्षण ब्रह्म को प्रकाशित करने वाली है। यह मन्त्र इस प्रकार का है—ॐ भू: ॐ भुव: ॐ स्व: ॐ मह: ॐ जन: ॐ तप: ॐ सत्यं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो न: प्रचोदयात् ॐ आपो ज्योति रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुव: स्वरोम्। इस मन्त्र को सभी वेदों का सार कहा गया है।

पूजा प्रयोग—प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:, मुखे देवी गायत्री छन्दसे नम:, हृदये श्रीपरमात्मने देवतायै नम:। इस प्रकार न्यास करने के पश्चात् सर्वप्रथम प्रणव प्रकरणोक्त रूप से कर-षडङ्ग न्यास करने के बाद उसी प्रकार से विष्णु का ध्यान करके पुन: इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसिजमदग्निभरद्वाजभृगुगौतमकाश्यपविश्वामित्रवसिष्ठेभ्यो ऋषिभ्यो नम:, मुखे गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगतीभ्यश्छन्दोभ्यो नम:, हृदये अग्निवायुसूर्यगुरुवरुणवृषविश्वेदेवेभ्यो देवताभ्यो नम:।

तदनन्तर इस प्रकार व्याहृति न्यास करे—ॐ भू: हृदयाय नम:, ॐ भुव: शिरसे स्वाहा, ॐ स्व: शिखायै वषट्, ॐ मह: कवचाय हुं, ॐ जन: नेत्रेभ्यो वौषट्, ॐ तप: सत्यं अस्त्राय फट्। इन्हीं मन्त्र से कर-षडङ्ग न्यास करने के बाद ॐ भू: नम:, ॐ भुव: नम:, ॐ स्व: नम:, ॐ मह: नम:, ॐ जन: नम:, ॐ तप: नम:, ॐ सत्यं नम: से क्रमश: हृदय, मुख, दाहिना कंधा, वाम कन्धा, दाहिना ऊरु, बाँयाँ ऊरु एवं जठर में न्यास करे। तदनन्तर पूर्वकथित रूप से व्याहृतियों का ध्यान करके शिरसि विश्वामित्रऋषये नम:, मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नम:, हृदये सवित्रे देवतायै नम: से ॐ ब्रह्मणे नम: हृदयाय नम: न्यास करके ॐ विष्णवे नम: शिरसे स्वाहा, ॐ रुद्राय नम: शिखायै वषट्, ईश्वराय नम: कवचाय हुं, सदाशिवाय नम: नेत्रत्रयाय वौषट्, सर्वात्मने नम: अस्त्राय फट्—इस प्रकार कर-षडङ्ग न्यास करे।

मन्त्र वर्ण न्यास—पैरों के अंगुलिमूल में तं नम:, गुल्फों में त्सं नम:, जानु में विं नम:, ऊरुमूलों में तुं नम:, लिङ्ग में र्वं नम:, नाभि में रें नम:, हृदय में णिं नम:, कण्ठ में यं नम:, हाथों के अंगुलिमूल में भं नम:, मणिबन्धों में र्गों नम:, कूर्परों में दें नम:, भुजाओं के मूल में वं नम:, मुख में स्यं नम:, नासिका में धीं नम:, गालों में मं नम:, आँखों में हिं नम:, कानों में धिं नम:, भौहों में यों नम:, मस्तक में यों नम:, शिखा के नीचे न: नम:, बाँयें कान में प्रं नम:, दाहिने कान में चों नम:, मुख में दं नम:, शिर पर यात् नम:।

मन्त्रपद न्यास—शिर पर तत् नम:, भ्रूमध्य में सवितुर्नम:, आँखों में वरेण्यं नर:, मुख में भर्गो नम:, कण्ठ में देवस्य नम:, हृदय में धीमहि नम:, नाभि में धियो नम:, गुह्य में यो नम:, जानुओं में न: नम:, पैरों में प्रचोदयात् नम:।

तदनन्तर शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:, मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नम:, हृदि परमात्मने देवतायै नम: से न्यास करके शिरसि ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुव: स्वरों नम: मन्त्र से न्यास करने के बाद व्याहृतियों से तीन प्राणायाम करके पुन: गायत्री मन्त्र के पदों का न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशान् पाशं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारबिन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे।।

सप्त व्याहृतियों से समन्वित गायत्री मन्त्र का तीन बार उच्चारण करते हुये सावधानीपूर्वक प्राणों को शिर पर धारण करे। यह प्राणायाम सभी दु:खों का नाशक कहा गया है। प्राणायाम के बाद गायत्री का दोनों सन्ध्याओं में जप करे। त्रिकोण के बाहर दो अष्टदल कमल बनाकर तीन चतुरस्र से घिरा मण्डल बनावे। सौर पीठ में दीप्तादि नव शक्तियों के साथ मूल मन्त्र से देवी की मूर्ति कल्पित करके पूजा करे। त्रिकोण के कोणों में ब्राह्मी आदि शक्तियों की पूजा करे। उसके बाहर उषादि सहित आदित्यादि की पूजा करे। केसर में षडङ्ग पूजा करे। प्रह्लादिनी प्रभा नित्या विश्वम्भरा विलासिनी प्रभावती जया शान्ता की पूजा

करे। कान्ति दुर्गा सरस्वती विश्वरूपा विशाला ईशा व्यापिनी विमला की पूजा करे। तमोपहारिणी सूक्ष्मा विश्वयोनि जयावहा पद्मालया परा शोभा पद्मरूपा ब्राह्मी आदि की पूजा करे। इसके बाहर ग्रहों, इन्द्रादि लोकपालों एवं उनके आयुधों की पूजा करे। ऐसा करने से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्राप्त होते हैं।

उत्पत्तिन्यासः

अङ्गं मन्त्रस्तथा पादः पदमक्षरकेशवौ। न्यासाः स्युर्वनमाला श्रीमुद्रा चोत्पत्तिसंज्ञकाः ॥१॥
हृदि मूर्ध्नि शिखायां च कवचे लोचनत्रये। अस्त्रे च विन्यसेत् तत्सवितुरित्याद्यनुक्रमात् ॥२॥
प्रथमं दक्षिणाङ्गुष्ठादारभ्याथ कनिष्ठिका। इतरेभ्यः समारभ्य न्यसेदङ्गुलिसन्धिषु॥३॥
अङ्गेषु विन्यसेत् पश्चान्मूर्ध्नि वक्त्रे गले हृदि। नाभिमेढ्रोरुपादेषु तारव्याहृतिसंयुतम् ॥४॥
गायत्रीमन्त्रमेषोऽयं मन्त्रन्यासः प्रकीर्तितः। न्यसेदनामिकायां च कनिष्ठे करयोस्तले ॥५॥
देहे शिरसि नाभौ च पादान् पादयुगेऽपि च। पुनः शिरसि भालेऽक्ष्णोर्मुखे कण्ठे तथा हृदि ॥६॥
नाभौ गुदे च जान्वादिपादयोश्चैव विन्यसेत्। पदन्यास इति प्रोक्तो वसिष्ठादिमहर्षिभिः ॥७॥
आरभ्य दक्षिणाङ्गुष्ठात् पश्चाद्यावत् कनिष्ठिकाम्। अङ्गुलीषु दशैतानि पदानि क्रमतो न्यसेत् ॥८॥
शीर्षभ्रूमध्यगे नेत्रयुगले वदने हृदि। नाभौ गुदे चोरुयुगे जानुद्वन्द्वे पदद्वये ॥९॥
दशस्थानेषु चैकैकं न्यसेत् पदमनुक्रमात्। अनामिकाभ्यां प्रणवं न्यसेत् करतलद्वये ॥१०॥
उभाभ्यां तर्जनीभ्यां च युगपद् व्याहृतित्रयम्। अङ्गुष्ठद्वयरेखासु विन्यसेत् तिसृषु क्रमात् ॥११॥
पर्वस्वङ्गुष्ठयोगेन अक्षराणि न्यसेत् पृथक्। मुखवृत्ते लोचनयोः कर्णयोर्नासयोरपि ॥१२॥
गण्डयोरोष्ठयोर्दन्तपंक्त्योः कण्ठे च वक्षसि। कुक्षौ नाभौ पार्श्वयोश्च गुह्ये जान्वोः पदोर्न्यसेत् ॥१३॥
चतुर्विंशतिवर्णांश्च नमोऽन्तान् प्रणवादिकान्। अक्षरन्यास इत्युक्तो मोक्षैकफलदो नृणाम् ॥१४॥
मूर्ध्नि भाले मुखे नेत्रयुगे कर्णद्वयेऽपि च। पुटद्वन्द्वे नासिकाया वदने चिबुके गले ॥१५॥
बाह्वोर्हृदि स्तनद्वन्द्वे नाभिदेशे च गुह्यके। ऊरुयुग् जानुयुग्मे च पदयुग्मे च विन्यसेत् ॥१६॥
वर्णानन्ते केशवाय नम इत्यादिकान् क्रमात्। याच्छ्रीकृष्णाय नम इत्यन्तान्नियतमानसः ॥१७॥
केशवन्यास एवं स्याद् भुक्तिमुक्तिफलप्रदः। दक्षिणेतरयोर्बाह्वोस्तर्जन्यङ्गुष्ठयुक्तया ॥१८॥
मुद्रया वनमालाख्यं न्यासं त्रिपदया न्यसेत्। कण्ठादिपादपर्यन्तं श्रीकरं मोक्षदं शुभम् ॥१९॥
शङ्खचक्रमनुध्यायन् गायत्र्यैकैकमक्षरम्। विन्यसेद्भुजयोर्न्यासं श्रीमुद्रापूर्वमुत्तमम् ॥२०॥
आदौ वृत्तं वसुदलमष्टकोणं ततः परम्। पश्चात् स्वरदलं ध्यायेल्लिखेद्वा भुजयोर्द्वयोः ॥२१॥
वृत्तमध्ये न्यसेत् तारं व्याहृतित्रयसंयुतम्। गायत्र्याः प्रथमं पादं न्यसेद्वसुदलान्तरम् ॥२२॥
द्वितीयं वसुकोणे च तृतीयं च तुरीयकम्। न्यसेत् स्वरदले विद्वान् सर्वपापनिवृत्तये ॥२३॥
इत्युत्पत्तिन्यासः।

सृष्टि-न्यास—अंगों में मन्त्र पद वर्णों का न्यास वनमाला रूप में श्रीमुद्रा से जब होता है तब उसे उत्पत्तिन्यास कहते हैं। मन्त्र के पदों का न्यास हृदय मूर्धा शिखा कवच त्रिनेत्र अस्त्र में तत्सवितु इत्यादि के रूप में क्रमश करे। पहले बाँयें अंगूठे से कनिष्ठा तक न्यास करे। इसके बाद अंगुलि की सन्धियों में न्यास करे। इसके बाद मूर्धा मुख गला हृदय नाभि अण्डकोश ऊरु पैरों में तार व्याहृति के साथ न्यास करे। इस न्यास को गायत्री मन्त्र न्यास कहते हैं। हाथ की अनामिका कनिष्ठा अंगुलियों में, देह शिर नाभि पैरों पादाङ्गुलियों में न्यास करे। तब शिर ललाट नेत्र मुख कण्ठ हृदय नाभि गुदा जानुओं पैरों में न्यास करे। वसिष्ठादि महार्षियों ने इस न्यास को पदन्यास कहा है। मन्त्र के दश पदों का न्यास दाँयें अंगूठे से बाँयीं कनिष्ठा तक करे। तब शिर भ्रूमध्य नेत्रद्वय मुख हृदय नाभि गुदा दो ऊरुओं दो जानुओं दो पैरों दश स्थानो में करे। अनामिकाओं में प्रणव का न्यास करे। दोनों तर्जनियों में युगपद तीन व्याहृतियों का न्यास करे। दोनों अंगूठों की रेखाओं में तीनों का न्यास करे। पर्व

अंगुष्ठ योग से अक्षरों का न्यास मुख नेत्रों कानों नासापुटों गण्डों ओठों दन्तपंक्तियों कण्ठ वक्ष कुक्षियों नाभि पार्श्वों गुह्य जानुओं पैरों में करे। चौबीस वर्णों का न्यास पहले ॐ और बाद में नम: लगाकर करना चाहिये। इस अक्षर न्यास को मोक्षप्रद कहते हैं। मूर्धा, भाल, मुख, नेत्रों, कानों, नासापुटों, मुख, चिबुक, गला, बाहु, हृदय, स्तनों, नाभि, गुह्य, ऊरुओं, जानुओं में पदयुग्म न्यास करे। वर्ण के पहले केशवाय नम: और बाद में कृष्णाय नम: लगाकर न्यास करे। इस प्रकार का केशव न्यास भोग-मोक्षप्रदायक होता है। दक्षिण से वाम बाहु तक तर्जनी-अंगुष्ठ योग से न्यास करे। वनमाला मुद्रा से तीन पदों का न्यास करे। कण्ठ से पैरों तक वनमाला न्यास श्री और मोक्षदायक है। शङ्ख-चक्रमन्त्र से गायत्री के एक-एक अक्षर का न्यास भुजाओं में श्रीमुद्रा से करे।

पूजन यन्त्र—पहले वृत्त, तब अष्टदल, तब अष्टकोण, तब षोडश दल के रूप में दोनों भुजाओं में लिखे। वृत्त में ॐ भूर्भुव स्व: लिखे। गायत्री के प्रथम पाद 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' को अष्टदल में लिखे। 'भर्गो देवस्य धीमहि' को अष्टकोण के कोणों में लिखे। 'धियो योन: प्रचोदयात् ॐ आपो ज्याती रसोऽमृतं' को षोडश दल में लिखे।

स्थितिन्यास:

अथ स्थितिन्यास:—

अङ्गं वर्णा: पद: पादश्चार्धऋग् व्यापकाह्वय:। तत्त्वमावृतिरित्यष्टौ न्यासा: स्यु: स्थितिसंज्ञका: ॥१॥
पादयो: पच्चतु:सन्ध्यो: कट्योर्नाभौ च पार्श्वयो:। पञ्चमास्ये ललाटे च दृशो: श्रुत्योश्च नासयो: ॥२॥
गण्डोष्ठदन्तजिह्वासु कण्ठदोर्मूलहृत्स्वपि। चतुर्विंशतिवर्णांश्च न्यसेदङ्गेष्वनुक्रमात् ॥३॥
एकैकमक्षरं ग्राह्यं दन्तयोर्बाहुमूलयो:। पादयो: पच्चतु:सन्ध्योर्नाभौ शीर्षे ललाटके ॥४॥
वक्त्रे कण्ठे च हृदये पदानि क्रमतो न्यसेत्। पादद्वये च जान्वादिगुदान्ते नाभिमण्डले ॥५॥
शीर्षे भाले नेत्रयुगे वक्त्रे कण्ठे च वक्षसि। गायत्र्या विन्यसेत् पादान् क्रमेणैव विचक्षण: ॥६॥
आनाभि पादादारभ्य न्यसेत् पादद्वयं मनो:। आचक्षु: शीर्षमारभ्य न्यसेत् पादं तृतीयकम् ॥७॥
न्यसेद्वक्षसि गायत्रीमृङ्न्यासोऽयमुदाहृत:। गायत्रीं व्याहृतियुतां कराभ्यां विन्यसेद्बुध: ॥८॥
पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाशमप्यथ। गन्धो रसस्तथा रूपं स्पर्शशब्दाविति स्थितौ ॥९॥
उपस्थपायुपादांश्च पाणिवाग्घ्राणजिह्वका:। लोचनं त्वक्तत: श्रोत्रं मनोबुद्धिरहङ्क्रिया: ॥१०॥
अव्यक्तमिति तत्त्वानि चतुर्थ्यन्तानि सर्वत:। नमोन्तकानि गायत्रीमन्त्रवर्णै: सबिन्दुकै: ॥११॥
आवापादौ ? च युक्तानि प्रणवादीनि पादयो:। जान्वोर्नाभौ च हृदये भ्रूमध्ये रन्ध्रयोरपि ॥१२॥
नासाजिह्वालोचनेषु त्वक्कर्णशेफपायुषु। पादपाण्यास्यनासासु जिह्वायां नयने त्वचि ॥१३॥
कर्णद्वये क्रमेणैव न्यसेद्भ्रुयो हृदि न्यसेत्। अवशिष्टानि चत्वारि तत्त्वानि तनुशुद्धये ॥१४॥

तत्प्रकारस्तु—ॐ भूर्भुव:स्व: तत्पृथिव्यात्मने नम: पादयो:, इत्यादि।

परिपूर्णं परं ब्रह्म स्वमात्मानं जगन्मयम्। तेजोमण्डलमध्यस्थं भावयन्नावृतीर्न्यसेत् ॥१५॥
दक्षिणस्य पदाङ्गुष्ठादारभ्य त्रिपदाक्षरै:। न्यसेद् वामपदाङ्गुष्ठपर्यन्तं मण्डलाकृति ॥१६॥

इति स्थितिन्यास:।

स्थिति न्यास—स्थिति न्यास में आठ प्रकार के न्यास होते हैं—अंग, वर्ण, पद, पादार्ध, ऋग, व्यापक, तत्त्व और आवृत्ति। पैरों की पाँचों सन्धियों, कमर, नाभि, पार्श्वों, पाँच मुखों, ललाट, आँखों, कानों, नासापुटों, कपोलों, ओठों, दाँतों, जीभ, कण्ठ, बाहुमूल और हृदय में चौबीस वर्णों का न्यास करे। दाँतों और बाहुमूलों में एक-एक अक्षर ग्राह्य हैं। पैरों की पाँचों सन्धियों, नाभि, शिर, ललाट, मुख, कण्ठ, हृदय में पदों का न्यास करे। दोनों पैरों, जानु से गुदा तक, नाभिमण्डल, शिर, ललाट, नेत्रों, मुख, कण्ठ, वक्ष में गायत्री के पदों का न्यास करे। पैरों से नाभि तक दो पदों का न्यास करे। शिर से आँखों तक तीसरे पद का न्यास करे। वक्ष में गायत्री से न्यास करे। इसे मृगन्यास कहते हैं। व्याहृतियों सहित गायत्री का न्यास

हाथों में करे। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द, गुदा, लिङ्ग, पैर, हाथ, जीभ, नाक, जीभ, आँख, त्वचा, कान, मन, बुद्धि, अहंकार, अव्यक्त—इन चौबीस तत्त्वों का न्यास चतुर्थ्यन्त नमोन्त सानुस्वार गायत्री वर्णों से करे। प्रणव के साथ पदों का न्यास पैरों, जानुओं, नाभि, हृदय, भ्रूमध्य, नासाछिद्रों, आँखों, त्वचा, कानों, लिङ्ग, गुदा, पैर, हाथ, मुख, नाक, जीभ, आँखों, त्वचा, कानों, हृदय में करे। शेष तत्त्वों से देहशुद्धि करे। शुद्धि का प्रकार है—ॐ भूर्भुवः स्वः तत्पृथिव्यात्मने नमः पादयोः इत्यादि। अपने को परिपूर्ण परम ब्रह्म जगन्मय तेजोमण्डल मध्य में स्थित होने की भावना करके न्यास करे। दाँयें पादाङ्गुष्ठ से आरम्भ करके गायत्री के अक्षरों को बाँयें पादाङ्गुष्ठ तक मण्डलाकार रूप में न्यास करे।

लयन्यासः

अथ लयन्यासः—

मन्त्रपादपदन्यासाक्षरदण्डकचम्पकाः । अङ्गव्यापकमित्यष्टौ न्यासाः स्युर्लयसंज्ञिताः ॥१॥
पादयोश्च चतुःसंध्योर्नाभौ हृदि गले पुनः । गायत्र्या विन्यसेत् तारव्याहृतित्रयसंयुतम् ॥२॥
पादोरुजानुजङ्घान्ते नाभौ हृदि गले मुखे । ललाटे मूर्ध्नि गायत्र्या न्यसेत् पादत्रयं क्रमात् ॥३॥
पादयोर्जानुनोः कट्योर्नाभौ हृदि गले मुखे । ललाटे मूर्ध्नि गायत्र्याः शिखायां विन्यसेद्दश ॥४॥
उभयोः पादयोः सन्धिचतुष्के नाभिवक्षसि । कण्ठे चोष्ठयुगे दन्तपंक्त्योस्तालद्वयेऽपि च ॥५॥
नासाश्रुत्योर्लोचनयोः पूर्वादिमुखपञ्चके । अक्षराणि चतुर्विंशद्गायत्र्या विन्यसेत् क्रमात् ॥६॥
एकैकमक्षरं तालुनासाश्रुत्यक्षिषु न्यसेत् । पञ्च पत्सन्धिषु गले ध्वजे नाभौ च वक्षसि ॥७॥
कण्ठे दोःसन्धिषु दशस्वोंकारादि नमोन्तकान् । गायत्र्या विन्यसेद्वर्णान् बिन्दुयुक्तान् यथाक्रमम् ॥८॥

ततो दण्डकन्यासं न्यसेत्।

पादजानूरुगुह्येषु नाभौ हृदि च वक्षसि । वक्त्रे भ्रूमध्यशिरसि पदानि क्रमतो न्यसेत् ॥९॥

संहार न्यास—संहार न्यास में मन्त्र, पाद, पद, अक्षर, दण्डक, चम्पक, अंग, व्यापक—ये आठ प्रकार के न्यास होते हैं। पैरों की चारों सन्धियों, नाभि, हृदय, गला में गायत्रीपदों का न्यास ॐ भुर्भुवः स्व के साथ करे। गायत्री के तीन पदों का न्यास पायुओं जानुओं कमर नाभि हृदय गला मुख ललाट मूर्धा में तीन-तीन के क्रम से करे। पायु, जानु, कमर, नाभि, हृदय, गला, मुख, ललाट, मूर्धा, शिखा में दश पदों का न्यास करे। दोनों पैरों की चार सन्धियों, नाभि, वक्ष, कण्ठ, ओठों, दन्तपंक्तियों, तालुओं, नाक, कानों, आँखों, पूर्वादि पाँच मुखों में गायत्री के चौबीस अक्षरों का न्यास करे। एक-एक अक्षर का न्यास तालु, नाक, कानों, आँखों में करे। पाँच पैर के जोड़ों में, गला, लिङ्ग, नाभि, वक्ष, कण्ठ, बाहुमूलों में पहले ॐ और बाद में नमः लगाकर सानुस्वार दस गायत्री वर्णों का न्यास करे। तब दण्डक न्यास पैर जानु, ऊरु, गुह्य, नाभि, हृदय, वक्ष, मुख, भ्रूमंध्य, शिर में दश पदों का न्यास क्रमशः करे।

चम्पकन्यासः

अथ चम्पकन्यासः। पूर्वोक्तस्थानेषु—ॐतं प्रह्लादिन्यै चम्पकनिभायै नमः। ॐत्सं प्रभायै अतसीपुष्पसन्निभायै नमः। ॐविं(स?नि)त्यायै पिङ्गलरूपायै नमः। ॐतु विश्वभद्रायै इन्द्रनीलप्रभायै नमः। ॐर्वं विलासिन्यै नीलरूपायै नमः। ॐरें प्रभावत्यै नीलवर्णायै नमः। ॐणिं जयायै विद्युन्निभायै नमः। ॐयं शान्तायै रक्तगौरवर्णायै नमः। ॐ भं कान्तायै जलदवर्णायै नमः। ॐर्गो दुर्गायै रक्तवर्णायै नमः। ॐ दें सरस्वत्यै मरकतसन्निभायै नमः। ॐवं विद्रुमायै जातीपुष्पसंनिभायै नमः। ॐस्यं विशालायै स्वर्णप्रभायै नमः। ॐधीं ईशायै कुङ्कुमप्रभायै नमः। ॐमं व्यापिन्यै पद्मरागनिभायै नमः। ॐहिं विमलायै शङ्खप्रभायै नमः। ॐधिं तमोपहारिण्यै पाण्डुरनिभायै नमः। ॐयों सूक्ष्मायै इन्द्रगोपसंनिभायै नमः। ॐ यों विश्वयोन्यै क्षौद्रसंनिभायै नमः। ॐनं जयावहायै आदित्योदयसंनिभायै नमः। ॐप्रं पद्मालयायै नीलोत्पलसन्निभायै नमः। ॐ चों परायै गोरोचनसंनिभायै नमः। ॐदं शोभायै कुन्देन्दुशंखनिभायै नमः। ॐयात् पद्मरूपायै स्फटिकसंनिभायै नमः।

चम्पकन्यास एषोऽयं सर्वपापप्रणाशनः। व्याहृतित्रयपादांश्च षडङ्गेषु न्यसेत् क्रमात्॥१०॥
व्यापकत्वेन गायत्रीं सप्तव्याहृतिपूर्विकाम्। शिरोन्तं तुर्यपादं च त्रिवारं विन्यसेत् पृथक्॥११॥
मूर्धादिपादपर्यन्तमामूर्धा च पदान्ति(?दि)कम्।

इति लयन्यासः।

चम्पक न्यास पूर्वोक्त स्थानों में इस प्रकार करे—ॐ तं प्रह्लादिन्यै चम्पकनिभायै नमः, ॐ त्सं प्रभायै अतसीपुष्पसन्निभायै नमः, ॐ विं नित्यायै पिङ्गलरूपायै नमः, ॐ तुं विश्वभद्रायै इन्द्रनीलप्रभायै नमः, ॐ र्वं विलासिन्यै नीलरूपायै नमः, ॐ रें प्रभावत्यै नीलवर्णायै नमः, ॐ णिं जयायै विद्युन्निभायै नमः, ॐ यं शान्तायै रक्तगौरवर्णायै नमः, ॐ भं कान्तायै जलदवर्णायै नमः, ॐ र्गों दुर्गायै रक्तवर्णायै नमः, ॐ दें सरस्वत्यै मरकतसन्निभायै नमः। ॐ वं विद्रुमायै जाती पुष्पसन्निभायै नमः, ॐ स्यं विशालायै स्वर्णप्रभायै नमः, ॐ धीं ईशायै कुङ्कुमप्रभायै नमः, ॐ मं व्यापिन्यै पद्मरागनिभायै नमः, ॐ हिं विमलायै शङ्खप्रभायै नमः, ॐ धिं तमोपहारिण्यै पाण्डुरनिभायै नमः, ॐ यों सूक्ष्मायै इन्द्रगोपसन्निभायै नमः, ॐ यों विश्वयोन्यै क्षौद्रसन्निभायै नमः, ॐ नः जयावहायै आदित्योदयसन्निभायै नमः, ॐ प्रं पद्मालयायै नीलोत्पलसन्निभायै नमः, ॐ चों परायै गोरोचनसन्निभायै नमः, ॐ दं शोभायै कुन्देन्दुशङ्खसन्निभायै नमः। ॐ यात् पद्मरूपायै स्फटिकसन्निभायै नमः।

यह चम्पक न्यास सभी पापों का विनाशक है। तीन व्याहृतियों और तीन पादों का क्रमशः षडङ्ग में न्यास करे। सात व्याहृतियों के साथ गायत्री शिरोमन्त्र सहित तीन बार व्यापक न्यास करे। पहले मूर्धा से पैरों तक, फिर पैरों से मूर्धा तक और फिर मूर्धा से पैरों तक न्यास करे।

गायत्रीमन्त्रार्थः

एवं चतुर्विंशतिन्यासान् विधाय गायत्र्या अर्थबोधो विधेयः। अत्र गायत्रीं प्रणवादिकसप्तव्याहृत्युपेतां शिरःसमेतां सर्ववेदसारमिति वदन्ति। एवं विशिष्टां गायत्रीं प्राणायामैरुपास्य प्रणवव्याहृतित्रयोपेता गायत्री जपादिभि-रुपास्या। तत्र शुद्धगायत्री प्रत्यग्ब्रह्मैक्यबोधिका, धियो यो नः प्रचोदयादिति नोऽस्माकं धियो बुद्धीः प्रचोदयात् सर्वबुद्धिसंज्ञान्तःकरणप्रकाशकः सर्वसाक्षी प्रत्यगात्मोच्यते। तत्र प्रचोदयाच्छब्दनिर्दिष्टस्यात्मस्वरूपतः परं ब्रह्म तत्सवितुः-पदैर्निर्दिश्यते। तत्रेदं 'ॐतत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः' इति तच्छब्देन प्रत्यग्भूतं स्वतःसिद्धं परं ब्रह्मोच्यते, सवितुरिति स्थितितयोपलक्षकसर्वप्रपञ्चोत्पादकलक्षणसमस्तद्वैतविभ्रमाधिष्ठानत्वं लक्ष्यते। वरेण्यमिति सर्वैर्वरणीयं निरतिशयानन्दरूपं, भर्ग इति अविद्यादोषभर्जनात् ज्ञानस्यैव विषयत्वं, देवस्य विषयस्येति सर्वद्योतना-त्मकाखण्डचिदानन्दकरः। तत्सवितुर्देवस्येत्यत्र षष्ठ्यर्थो राहोः शिरः इतिवदौपचारिकः। बुद्ध्यादिसर्वदृश्यसाक्षिलक्षणवत् निःस्वरूपं तत्सर्वाधिष्ठानं, रज्जुसर्पन्यायेन नापवादसमानाधिकरणरूपमेकत्वं सोऽहं इति न्यायेन सर्वसाक्षिप्रत्यगात्मनो ब्रह्मणा सह तादात्म्यरूपमेकत्वं भवतीति सर्वात्मब्रह्मबोधकोऽयं गायत्रीमन्त्रः संपद्यते। सप्तव्याहृतीनामप्ययमर्थः। भूरिति सन्मात्रमत्रोच्यते। भुवरिति सर्वं भावयति प्रकाशयतीति व्युत्पत्त्या चिद्रूपमुच्यते। स्वरिति स्वर्यते इति व्युत्पत्त्या सृष्टं सर्वं प्रेर्यमाणं स्वस्वरूपमुच्यते। मह इति महीयते पूज्यते इति व्युत्पत्त्या सर्वातिशयत्वमुच्यते। जन इति जनयतीति व्युत्पत्त्या सर्वकारणत्वमुच्यते। तप इति सर्वतेजोरूपत्वं, सत्यमिति सर्वबाधाधिकरणं यत्तेजोरूपं तत्सत्तार्थरूपं, तत्तदोंकारवाच्यं ब्रह्मैवात्मास्य चिद्रूपात्मभाव इति। यद्वा भूराद्याः सप्त लोकाः ॐकारशब्दवाच्यब्रह्मात्मकाः न तद्व्यतिरिक्तं किञ्चिदस्तीति व्याहृतयोऽपि सर्वात्मब्रह्मबोधिकाः। गायत्रीशिरसोऽप्ययमर्थः। आप इति 'आप्लृ व्याप्तौ' व्यापित्वमुच्यते, ज्योतिरिति प्रकाशरूपं, रस इति सर्वातिशयत्वं, अमृतमिति मरणादिसंसारनित्यमुक्तत्वं, ब्रह्मेति आत्मोच्यते, एवं सर्वव्यापि सर्वप्रकाशं सर्वातिशयं नित्यमुक्तमात्मस्वरूपं सच्चिदानन्दात्मकं यदोंकारवाच्यं ब्रह्माहमस्मीति, गायत्रीशिरसोऽपि सर्वात्मब्रह्मबोधकत्वम्। यज्ज्ञात्वा (जप्त्वा) पूर्ववत् प्राणायामादिव्याहृतिन्यासशिरसोन्यासादिकं विधाय चतुर्थपादगायत्रीमन्त्रजपं मोक्षार्थी कुर्यात्। 'परो रजसे सावदों' इति चतुर्थः पादः। अस्य विमल ऋषिः, गायत्री छन्दः, परमात्मा देवता। सवितुर्मण्डलान्तःस्थगुणातीतोऽसौ यः सोहं इति चतुर्थपादस्यार्थः। उदासीनो बीजं सुषुम्नानाडी सरस्वती शक्तिः। मोक्षार्थे विनियोगः। ॐपरः हृदयाय नमः। ॐ रजसे शिरसे स्वाहा। ॐसावदों शिखायै वषट्। ॐपरः कवचाय हुं। ॐरजसे नेत्रत्रयाय वौषट्। एवमङ्गुलीन्यासः। ध्यानम्—

ध्यायेद्भास्करशीतांशुवह्नीनां मण्डलोपरि। स्थिते वह्निपुरे नागदलपद्मसमाश्रितम् ॥१॥
अङ्गुष्ठमात्रममलं विष्णुमोङ्काररूपिणम्। सर्वदेवमयं देवमनन्तं सर्वतोमुखम् ॥२॥
स्वमायया समाक्रान्तं सूक्ष्मज्योति: स्वरूपकम्। स ब्रह्मा स शिव: सेन्द्र: सोऽक्षर: परम: स्वराट् ॥३॥

इति ध्यात्वा—

असित्रिखण्डयोनीश्च सुरभिं चाप्यजस्तनीम्। लिङ्गमुद्रां महामुद्रामञ्जलिं चापि दर्शयेत् ॥४॥
गायत्र्याश्छन्दो गायत्री विश्वामित्र ऋषिस्तथा। सविता देवताग्निस्तु मुखं ब्रह्मा शिरस्तथा ॥५॥
विष्णुश्च हृदयं शुक्लो ललाटं शुक्लवर्णता। सांख्यायनसगोत्रं स्याज्जपादौ विनियोगत: ॥६॥
त्रैलोक्यवरणा पृथ्वी देवता कुक्षिरेव च। एवं ध्यात्वा तु गायत्रीं जपेद् द्वादशलक्षणाम् ॥७॥
ब्रह्मचारी गृहस्थश्च प्रणवेन युतां जपेत्। अन्ते च प्रणवं कुर्यात्तेनासौ वृद्धिमाप्नुयात् ॥८॥
वानप्रस्थो जपं कुर्याच्चतुर्थसहितां तथा। रे इत्येतत्तु बीजं स्यात् यवर्ण: शक्तिरुच्यते ॥९॥
णीत्येतत् कीलकं प्रोक्तं गायत्र्यास्त्रिपदात्मन:। गायत्रीछन्द:पादानां विश्वामित्र ऋषिस्तथा ॥१०॥
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवतास्त्विति ता: क्रमात्। अक्षराणां च सर्वेषां प्रजापतिर्ऋषिस्त्था ॥११॥
विनियोगाङ्गविन्यासे गायत्री छन्द उच्यते। अक्षराणां च सर्वेषां वक्ष्यन्ते देवता: क्रमात् ॥१२॥
अग्निर्वायू रविर्विद्युद्यमो वरुण एव च। बृहस्पतिस्तु पर्जन्य इन्द्रो गन्धर्व एव च ॥१३॥
पूषा शिवश्च त्वष्टा च वसवश्च मरुत्तत:। सोमोऽङ्गिरा विश्वेदेवा अश्विनौ च प्रजापति: ॥१४॥
सर्वदेवश्च रुद्रश्च ब्रह्मा विष्णुश्च देवता:। जपकाले चिन्तनीयास्तासां सायुज्यमाप्नुयात् ॥१५॥

गायत्री का अर्थ—इस प्रकार चौबीस न्यासों के बाद गायत्री का अर्थ समझे। प्रणवादि सात व्याहृतियों और शिरोमन्त्र से युक्त गायत्री को सभी वेदों का सार कहा गया है। इस विशिष्ट गायत्री की उपासना के पहले इससे प्राणायाम करे तब जपादि से इसकी उपासना करे।

'परो रजसे सावदों' यह गायत्री का चतुर्थ पाद है। इसके ऋषि विमल, छन्द गायत्री और देवता परमात्मा हैं। चतुर्थ पाद का अर्थ है कि यह सवितुर्मण्डल में गुणातीत जो स्थित है, वहीं मैं भी हूँ।

इसका बीज उदासीन, शक्ति सुषुम्णा नाडी सरस्वती हैं। मोक्ष हेतु इसका विनियोग किया जाता है। इसका षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ पर: हृदयाय नम:, ॐ रजसे शिरसे स्वाहा, ॐ सावदों शिखायै वषट्, ॐ पर: कवचाय हुम्, ॐ रजसे नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ सावदों अस्त्राय फट्। इसी प्रकार अंगुलिन्यास भी करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

ध्यायेद्भास्करशीतांशुवह्नीनां मण्डलोपरि। स्थिते वह्निपुरे नागदलपद्मसमाश्रितम्।।
अङ्गुष्ठमात्रममलं विष्णुमोङ्काररूपिणम्। सर्वदेवमयं देवमनन्तं सर्वतोमुखम्।।
स्वमायया समाक्रान्तं सूक्ष्मज्योति: स्वरूपकम्। स ब्रह्मा स शिव: सेन्द्र: सोऽक्षर: परम: स्वराट्।।

उपर्युक्त ध्यान करके खड्ग, त्रिखण्डा, योनि, धेनु, लिङ्गमुद्रा, महामुद्रा अञ्जलिमुद्रा दिखावे। इस मन्त्र के ऋषि विश्वामित्र, छन्द गायत्री, देवता सविता हैं। अग्नि मुख, ब्रह्मा शिर, हृदय विष्णु, शुक्ल ललाट, शुक्ल वर्ण, गोत्र सांख्यायन एवं जप हेतु इसका विनियोग होता है। त्रैलोक्यवरणा पृथ्वी देवता कुक्षि है—इस प्रकार का ध्यान करके द्वादश लक्षण गायत्री का जप करे। ब्रह्मचारी एवं गृहस्थ प्रणव के साथ जप करे। अन्त में भी प्रणव लगाकर जप से बुद्धि प्राप्त होती है। वानप्रस्थ चौथे चरण के साथ जप करे। रे बीज एवं यवर्ण शक्ति है। णी कीलक है। गायत्री त्रिपदात्मक है। गायत्री छन्द के पादों के ऋषि विश्वामित्र हैं। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र देवता हैं। सभी अक्षरों के ऋषि प्रजापति हैं। विनियोग एवं अङ्गन्यास में गायत्री छन्द कहा जाता है। सभी अक्षरों के देवता क्रमश: इस प्रकार हैं—अग्नि, वायु, सूर्य, विद्युत्, यम, वरुण, बृहस्पति, पर्जन्य, इन्द्र, गन्धर्व, पूषा, शिव, त्वष्टा, वसु, मरुत्, चन्द्र, अङ्गिरा, विश्वेदेव, अश्विनीकुमार, प्रजापति, समस्त, देव, रुद्र, ब्रह्मा, विष्णु।

अक्षरतत्त्वानि

अथाक्षरतत्त्वानि—

पृथिवी पुष्करं तेजो वायुरम्बरमेव च। गन्धो रसोऽथ रूपं च स्पर्शः शब्दोऽपि वागपि ॥१६॥
हस्तावुपस्थः पायुश्च पच्छ्रोत्रे वक्त्रचक्षुषी। जिह्वा घ्राणो मनस्तत्त्वमहङ्कारो महांस्तथा ॥१७॥
गुणत्रयं च यत्तत्त्वं क्रमतस्तत्त्वनिश्चयः।

अक्षर के तत्त्व—पृथिवी, पुष्कर, अग्नि, वायु, आकाश, गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द, वाणी, दोनों हाथ, गुदा, लिङ्ग, कान, मुख, आँख, जिह्वा, नाक, मन, अहंकार, महत्तत्त्व—ये अक्षरतत्त्व हैं। गुणत्रय के जो तत्त्व हैं, वे क्रमतः निश्चित हैं।

अक्षरशक्तयः

अथाक्षरशक्तयोऽप्युच्यन्ते—

प्रह्लादिनी प्रभा नित्या विश्वभद्रा विलासिनी। प्रभावती जया शान्ता कान्ता दुर्गा सरस्वती ॥१८॥
विश्वमाया विशालेशा व्यापिनी विमला तथा। तमोपहारिणी सूक्ष्मा विश्वयोनिर्जयावहा ॥१९॥
पद्मालया परा शोभो भद्ररूपा च शक्तयः।

अक्षर-शक्तियाँ—अक्षरों की शक्तियाँ प्रह्लादिनी, प्रभा, नित्या, विश्वभद्रा, विलासिनी, प्रभावती, जया, शान्ता, कान्ता, दुर्गा, सरस्वती, विश्वमाया, विशाला, ईशा, व्यापिनी, विमला, तमोपहारिणी, सूक्ष्मा, विश्वयोनि, जयावहा, पद्मालया, परा, शोभा, भद्ररूपा हैं।

प्रत्यक्षरतत्त्वशक्तिध्यानानि

अथ प्रत्यक्षरध्यानान्युच्यन्ते—

तत्कारं चम्पकापीतं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्। शान्तं पद्मासनारूढं ध्यायेत् स्वस्थानसंस्थितम् ॥१॥
सकारं चिन्तयेदेवमतसीपुष्पसंनिभम्। पद्ममध्यस्थितं सौम्यमुपपातकनाशनम् ॥२॥
विकारं कपिलं नित्यं कमलासनसंस्थितम्। ध्यायेच्छान्तं द्विजश्रेष्ठो महापातकनाशनम् ॥३॥
तुकारं चिन्तयेत् प्राज्ञ इन्द्रनीलसमप्रभम्। निर्दहेत् सर्वदुःखानि ग्रहरोगसमुद्भवान् ॥४॥
र्वकारं वह्निदीप्ताभं चिन्तयेच्च विचक्षणः। भ्रूणहत्याकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥५॥
रेकारं विमलं ध्यायेच्छुद्धस्फटिकसंनिभम्। पापं विनश्यति क्षिप्रमगम्यागमनोद्भवम् ॥६॥
णिकारं चिन्तयेद्योगी शुद्धस्फटिकसंनिभम्। अभक्ष्यभक्षणं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥७॥
यंकारं तारकावर्णमिन्दुरेखाविभूषितम्। योगिनां वरदं ध्यायेद् ब्रह्महत्याविनाशनम् ॥८॥
भकारं कृष्णवर्णं तु नीलमेघसमप्रभम्। ध्यात्वा पुरुषहत्यादि पापं नाशयते द्विजः ॥९॥
र्गोकारं रक्तवर्णं च कमलासनसंस्थितम्। गोहत्यादिकृतं पापं नाशयन्तं विचिन्तयेत् ॥१०॥
देकारं रक्तसङ्काशं कमलासनसंस्थितम्। चिन्तयेत् सततं योगी स्त्रीहत्यादहनं परम् ॥११॥
वकारं शुक्लवर्णं तु जातीपुष्पसमप्रभम्। गुरुहत्याकृतं पापं ध्यात्वा दहति तत्क्षणात् ॥१२॥
स्यकारं तु तथा पीतं सुवर्णसदृशप्रभम्। मनसा चिन्तितं पापं ध्यात्वा दहति चानघः ॥१३॥
धीकारं चिन्तयेच्छुक्लं कुन्दपुष्पसमप्रभम्। पितृमातृवधात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥१४॥
मकारं पद्मरागाभं चिन्तयेद् दीपसंनिभम्। पूर्वजन्मार्जितं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥१५॥
हिकारं शङ्खवर्णं तु पूर्णचन्द्रसमप्रभम्। अशेषपापदहनं ध्यायेन्नित्यं विचक्षणः ॥१६॥
धिकारं पाण्डुरं ध्यायेत् पद्मस्योपरि संस्थितम्। प्रतिग्रहकृतं पापं स्मरणादेव नश्यति ॥१७॥

योकारं रक्तवर्णं तु इन्द्रगोपसमप्रभम्। ध्यात्वा प्राणिवधपापं निर्दहेन्मुनिपुङ्गव ॥१८॥
द्वितीयश्चैव संप्रोक्तो योकारो रक्तसन्निभः। निर्दहेत् सर्वपापानि नान्यैः पापैः प्रलिप्यते ॥१९॥
नःकारं तु मुखं पूर्वमादित्योदयसंनिभम्। सकृद् ध्यात्वा द्विजश्रेष्ठः स गच्छेद्वैष्णवं पदम् ॥२०॥
नीलोत्पलदलश्यामं प्रकारं दक्षिणामुखम्। सकृद् ध्यात्वा द्विजश्रेष्ठः स गच्छेद्ब्रह्मणः पदम् ॥२१॥
सौम्यं गोरोचनापीतं चोकारं चोत्तरामुखम्। सकृद् ध्यात्वा द्विजश्रेष्ठः स गच्छेद्वैष्णवं पदम् ॥२२॥
शुक्लवर्णेन्दुसंकाशं दकारं पश्चिमाननम्। सकृद् ध्यात्वा द्विजश्रेष्ठः स गच्छेद्वैष्णवं पदम् ॥२३॥
यात्कारस्तु शिरः प्रोक्तश्चतुर्वदनसप्रभः। प्रत्यक्षफलदो ब्रह्मविष्णुरुद्र इति स्थितः ॥२४॥
एवं ध्यात्वा तु मेधावी जपहोमौ करोति यः। न भवेत् सूतकं तस्य मृतकं च न विद्यते ॥२५॥
यस्त्वेवं न विजानाति गायत्रीं च तथाविधाम्। कथितं सूतकं तस्य मृतकं च तथानघ ॥२६॥
नैव दानफलं तस्य न च यज्ञफलं तथा। नैव तीर्थफलं प्रोक्तं तस्यैवं सूतके सति ॥२७॥
विन्यस्यैवं जपेद्यस्तु गायत्रीं वेदमातरम्। ब्रह्मलोकमवाप्नोति व्यासस्य वचनं यथा ॥२८॥
स्वरूपं यः पुनस्तस्याः कृत्वेवास्ते यथाविधि। ग्रहदोषैर्न लिप्येत अन्नपूर्णा वसुन्धरा ॥२९॥
यथाकथञ्चिज्जप्तैषा देवी परमभाविनी। सा च कामप्रदा प्रोक्ता किं पुनर्विधिना नृप ॥३०॥

प्रत्येक अक्षर का ध्यान—मन्त्र का 'तत्' पद चम्पा फूल के समान पीला एवं ब्रह्मा-विष्णु-शिवात्मक है। सकार अतसी के फूल के वर्ण का, पद्ममध्य में स्थित, सौम्य एवं उपपातक का नाशक है। विकार का वर्ण कपिल, कमलासन पर आसीन एवं शान्त स्वरूप है, इसका ध्यान महापातक-नाशक होता है। तुकार इन्द्रनील के समान है एवं ग्रह, रोगसमूह, भूत एवं सभी दुःखों का विनाशक है। वकार ज्वलित अग्नि वर्ण का है; यह भ्रूणहत्या के पाप को तत्क्षण नष्ट करता है। रेकार शुद्ध स्फटिक वर्ण का है, यह अगम्य-गमन के पापों का नाशक है। णिकार शुद्ध स्फटिक वर्ण का है, यह अभक्ष्य भक्षण के पाप को तत्क्षण नष्ट करता है। यकार तारक वर्ण इन्दु रेखा-विभूषित है, यह योगियों को वरद और ब्रह्महत्या का विनाशक है। मकार का वर्ण काले नील मेघ के समान है। यह पुरुषहत्या के पापों का नाश करता है। गोंकार का वर्ण लाल है, यह कमलासन पर स्थित है। चिन्तन करने से यह गोहत्या के पापों को नष्ट करता है। देकार का वर्ण लाल है एवं यह कमलासन पर स्थित है। यह स्त्रीहत्या के पापों का विनाशक है। वकार शुक्ल वर्ण एवं जाती पुष्पाभ है, यह गुरुहत्या के पापों का नाश करता है एवं स्यकार स्वर्णाभ पीला है, मानसिक पापों का विनाशक है। धीकार कुन्दपुष्पाभ है एवं पिता-माता के वध के पापों का नाशक है। मकार पद्मराग के वर्ण वाला एवं दीपक के समान है, यह पूर्व जन्म के पापों का नाशक है।

हिकार शङ्ख वर्ण पूर्ण चन्द्र के समान प्रभावान एवं पापों का पूर्ण विनाशक है। धिकार पद्मस्थित पाण्डुर वर्ण का है। स्मरण से यह प्रतिग्रहकृत पापों का नाशक है। योकार लाल रंग का, इन्द्रगोपसदृश प्रभा वाला एवं प्राणिवध के पापों का नाशक है। योकार लाल वर्ण का है और सभी पापों का नाशक है; साथ ही दूसरे पाप भी नहीं लगते हैं। नःकार उदित सूर्य के वर्ण का है। यह ध्यान से वैष्णव पद प्रदान करने वाला है। प्रकार नीलोत्पल दल का दक्षिणमुख है। इसका ध्यान करने से ब्रह्मा का पद प्राप्त होता है। चोकार उत्तरमुख एवं गोरोचन वर्ण का है; इसका ध्यान करने से वैष्णव पद प्राप्त होता है। शुक्ल वर्ण चन्द्रप्रभ पश्चिमानन दकार का ध्यान करने से वैष्णव पद प्राप्त होता है। यात्कार चतुरानन शिव के समान है; यह ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र का फल देने वाला है। इस प्रकार गायत्री का ध्यान करके जो जप-होम करता है, उसे मरण का शौच नहीं लगता। इस प्रकार गायत्री के विधान को जो नहीं जानता, उसे मरणाशौच लगता है, साथ ही उसे न दान का फल मिलता है और न ही यज्ञ का फल प्राप्त होता है। सूतक के कारण उसे तीर्थाटन का फल भी नहीं मिलता। इस प्रकार के न्यासों को करके जो वेदमाता गायत्री का जप करता है, उसे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है—ऐसा व्यास का वचन है। जो थोड़ा भी जप विधिवत् करता है, उसे ग्रहदोष नहीं लगता। अन्नपूर्णा पृथ्वी पर जहाँ-कहीं भी जो कोई इसका जप करता है, देवी परमभाविनी उसकी कामना पूरी करती हैं।

चतुर्विंशतिमुद्रानामानि

जपादौ च चतुर्विंशतिमुद्राः प्रदर्शयेत्—

संमुखं संपुटं चैव विततं विस्तृतं तथा। द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्पञ्चमुखं तथा ॥३१॥
षण्मुखोऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा। शकटं यमपाशं च ग्रथितं सन्मुखोन्मुखम् ॥३२॥
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यकूर्मवराहकाः। सिंहाक्रान्तः महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवस्तथा ॥३३॥
एता मुद्राश्चतुर्विंशा जपादौ विनियोजयेत्। सुरभिर्ज्ञानचक्रे च योनिः कूर्मोऽथ पङ्कजम् ॥३४॥
लिङ्गनिर्याणमुद्रे च जपान्ते तु प्रकीर्तिताः।

एतासां लक्षणान्यग्रे वदिष्यामि।

जप आदि में प्रयुक्त चौबीस मुद्रायें इस प्रकार हैं—१. सम्मुख, २. सम्पुट, ३. वितत, ४. विस्तृत, ५. द्विमुख, ६. त्रिमुख, ७. चतुर्मुख, ८. पञ्चमुख, ९. षण्मुख, १०. अधोमुख, ११. व्यापकाञ्जलि, १२. शकट, १३. यमपाश, १४. ग्रथित, १५. सन्मुखोन्मुख, १६. प्रलम्ब, १७. मुष्टिक, १८. मत्स्य, १९. कूर्म, २०. वराह, २१. सिंहाक्रान्त, २२. महाक्रान्त, २३. मुद्गर, २४. पल्लव।

गायत्रीहृदयम्

जपादौ तु गायत्रीहृदयं पठेत्। अथातो वसिष्ठः स्वयंभुवं परिपृच्छति, पृच्छामस्तावद्भगवन् गायत्रीं तां भोरनुब्रूहि। श्रीभगवानुवाच। ब्रह्मज्ञानोत्पत्तिं प्रकृतिं व्याख्यास्यामः, स्वाङ्गुल्या मथ्यमानात् फेनो भवति, फेनाद् बुद्बुदो भवति, बुद्बुदादण्डो भवति, अण्डाद् ब्रह्मा भवति, ब्रह्मणोऽग्निर्भवति, अग्नेर्वायुर्भवति, वायोरोंकारो भवति, ॐकाराद् व्याहृतिर्भवति, व्याहृत्या गायत्री भवति, गायत्र्याः सावित्री भवति, सावित्र्याः सरस्वती भवति, सरस्वत्या वेदा भवन्ति, वेदेभ्यो गायत्रीं भगवन् पृच्छामि व्याहृतीभिः प्रवर्तन्ते। किं वै भूः किं भुवः किं स्वः किं महः किं जनः किं तपः किं सत्यं कि तत् किं सवितुः किं वरेण्यं किं भर्गः किं देवस्य किं धीमहि किं धियः किं यः किं नः किं प्रचोदयात्। भूरिति भूर्लोकः, भुवरित्यन्तरिक्षलोकः, स्वरिति स्वर्लोकः, महरिति महर्लोकः, जन इति जनो लोकः, तप इति तपोलोकः, सत्यमिति सत्यलोकः, भूभुर्वःस्वरोमिति त्रैलोक्यम्। तदिति तदसौ तेजः, सोऽग्निः सवितुरिति (त)दादित्यो वरेण्योऽन्नं वै वरेण्योऽन्नमेव प्रजापतिः, भर्ग इत्यापो वै भर्गो यदापः स भर्गो, देवस्येतीन्द्रो देवो यद्वै तद्धीन्द्रियाणि सर्वपुरुषो नाम रुद्रो धीमहीत्यन्तरात्मा यदन्तरात्मा स प्रणवो धिय इत्यध्यात्मन् यदध्यात्मन् तत् परमं पदं, यो न इति पृथिवी वै यौनिः' प्रचोदयादिति कामः कामीमाँल्लोकानु प्रत्याह्वयते इत्यानृशँसो यदानृशँसः तत्परो धर्मः इत्येषा गायत्री किंगोत्रा कत्यक्षरा कतिपदा कतिकुक्षिः कतिशीर्षा?। साख्यायनसगोत्रा सा, चतुर्विंशत्यक्षरात्रयः पादाः, ऋग्वेदोऽस्याः प्रथमः पादो भवति, यजुर्वेदो द्वितीयः पादः, सामवेदस्तृतीय पादः। पूर्वा दिक् प्रथमा कुक्षिर्भवति, दक्षिणा द्वितीया, पश्चिमा तृतीया, उत्तरा चतुर्थी, ऊर्ध्वा पञ्चम्यधः षष्ठी, व्याकरणमस्याः प्रथमं शीर्षं भवति, शिक्षा द्वितीयं, कल्पस्तृतीयं, निरुक्तं चतुर्थं, ज्योतिषामयनमिति पञ्चमम्। किमु चेष्टितं किमुदाहृतं किं लक्षणं मीमांसा। अथर्वणवेदो विचेष्टितं, छन्दो विधिरित्युदाहरन्ति। को वर्णः कः स्वरः का देवता कानीमान्यक्षरदेवता। उषःकाले रक्ता, मध्याह्ने शुक्ला, अपराह्णे कृष्णा। पूर्वसन्ध्या ब्राह्मी, मध्याह्नसन्ध्या माहेश्वरी, अपराह्णसन्ध्या वैष्णवी। हंसवाहिनी ब्राह्मी, वृषवाहिनी माहेश्वरी, गरुडवाहिनी वैष्णवी। षड्जर्षभगान्धाराः स्वराः। पूर्वाह्णे गायत्री रक्ता कुमारी दण्डाक्षमालाकमण्डलुहस्ता निषण्णा पद्मपीठासनस्था हंसारूढा ब्रह्मदैवत्या भूर्लोकव्यवस्थिता ऋग्वेदसहितादित्यपथगामिनी। मध्याह्ने सावित्री श्वेताम्बरा श्वेतवर्णा यौवनस्था त्रिनेत्रा त्रिशूलहस्ता रजतपीठासनस्था वृषभारूढा रुद्रदैवत्या भुवर्लोकव्यवस्थिता यजुर्वेदसहितादित्यपथगामिनी। अपराह्णे सरस्वती कृष्णा वृद्धा पीतवासाश्चतुर्भुजा शंखचक्रगदासिहस्ता निषण्णा कनकपीठासनस्था विष्णुदैवत्या स्वर्लोकव्यवस्थिता सामवेदसहिता-दित्यपथगामिनी। 'प्रह्लादोऽत्रिर्वसिष्ठश्च शुकः कण्वः पराशरः। विश्वामित्रो

महातेजा: कपिल: शौनको महान्। याज्ञवल्क्यो भरद्वाजो जमदग्निस्तपोनिधि:। गौतमो मुद्गल: श्रेष्ठो वेदव्यासश्च रोमश:। अगस्त्य: कौशिको वत्स: पुलस्त्यो कपिलस्तथा। दुर्वासास्तपसा श्रेष्ठो नारद: कश्यपस्तथा'। गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् बृहती पंक्तिस्त्रिष्टुब् जगती कान्ति: बृहती पंक्तिरास्तारपंक्तिर्विराट् विष्टारपक्तिरक्षरपंक्ति: कात्यायनी ज्योतिष्मती त्रिष्टुप् छन्दो महाच्छन्दो भूरितिछन्दो भुवरिति छन्द: स्वरिति छन्दो भूर्भुव:स्वरोमित्येतानि छन्दांसि। प्रथममाग्नेयं द्वितीयं प्राजापत्यं तृतीयं सौम्यं चतुर्थमैशानं पञ्चममादित्यं षष्ठं बार्हस्पत्यं सप्तमं पितृदैवत्यमष्टमं भगदैवत्यं नवममार्यम्णं दशमं सावित्रं एकादशं त्वाष्ट्रं द्वादशं पौष्णं त्रयोदशमैन्द्राग्नं चतुर्दशं वायव्यं पञ्चदशं वामदेव्यं षोडशं मैत्रावरुणं सप्तदशं भ्रातृव्य(आंगिरसं)मष्टादशं वैश्वदेव्यं एकोनविंशं वैष्णवं विंश वासवं एकविंशं (रौद्रं द्वाविंशमाश्विनं त्रयोविंशं ब्राह्मं चतुर्विंशं सावित्रं) 'प्रह्लादिनी प्रभा नित्या विश्वभद्रा विलासिनी। प्रभावती जया शान्ता कान्ता दुर्गा सरस्वती। विद्रुमा च विशालेशा व्यापिनी विमला तथा। तमोपहारिणी सूक्ष्मा विश्वयोनिर्जयावहा। पद्मालया परा शोभा पद्मरूपा च शक्तय:। क्रमाच्चम्पकपुष्पाभमतसीपुष्पसन्निभम्। विद्रुमस्फटिकाकारं पद्मपुष्पसमप्रभम्। प्रवालं पद्मपत्राभं पद्मरागसमप्रभम्। तरुणादित्यसङ्काशं शङ्खकुन्देन्दुसन्निभम्। इन्द्रनीलमणिप्रख्यं मौक्तिकं कुङ्कुमप्रभम्। अञ्जनाभं च गाङ्गेयं वैडूर्यं क्षौद्रसन्निभम्। (हारिद्रं कृष्णं) दुग्धाभं रविकान्तिसमप्रभम्। शुकपिच्छसमाकारं क्रमेण परिकल्पयेत्। पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाश एव च। गन्धो रसश्च रूपं च स्पर्श: शब्दस्तथैव च। उपस्थ: पायु: पादश्च पाणिर्वागपि च क्रमात्। घ्राणं जिह्वा च चक्षुश्च त्वक्च श्रोत्रं तथैव च। मनो बुद्धिरहङ्कारमव्यक्तं च यथाक्रमम्। सुमुखं संपुटं चैव विततं विस्तृतं तथा। द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्पञ्चमुखं तथा। षण्मुखोऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा। शकटं यमपाशं च ग्रथितं संमुखोन्मुखम्। प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्य: कूर्मवराहकौ। सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवस्तथा। इति मुद्राश्चतुर्विंशा द्वादशात्मप्रतिष्ठिता:। एता मुद्रा न जानाति गायत्री निष्फला भवेत्। ब्रह्मा मूर्ध्नि संघाते विष्णुर्ललाटे रुद्रो (भ्रूमध्ये) केशा: मेघाश्चक्षुषी चन्द्रादित्यौ, कर्णौ शुक्रबृहस्पती, नासापुटावश्विनौ, दन्तोष्ठावुभयसन्धी, मरुतो बाहू, स्तनौ वसव:, ब्रह्मा हृदयं, पर्जन्यमाकाशं उदरं नाभि: अग्नि:, कटिरिन्द्राणी, जघनं प्राजापत्यं, कैलासमलयावूरू, विश्वेदेवा जानुनी, शशी जङ्घे, खुरा: पितर:, पृथ्वी पादौ, वनस्पतय: केशा लोमानि नखानि, मुहूर्तास्ते विग्रहा: केतुर्मासं ऋतु: सन्धिकालद्वयमाच्छादनं संवत्सरो निमिष: अहोरात्रावादित्यश्चन्द्रमा: प्रवरवरदा देवी पठेद्यो हृदयं ॐ तत्सवितुर्वरदाय नम: ॐ तत्प्रातरुपदिष्टाय नम:, सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति, प्रात: प्रयुञ्जानो रात्रिकृतं पापं नाशयति, तत्सायंप्रात: प्रयुञ्जानोऽपापो भवति। य इदं सावित्रं ब्राह्मण: पठेत् त्रीणि शतसाहस्त्र्या: सावित्र्या: षष्टिसहस्राणि जप्तानि फलानि भवन्ति, चत्वारो वेदा अधीता भवन्ति, सर्वेषु वेदेषु ज्ञातो भवति, सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति, स्वर्णस्तेयात् पूतो भवति, सुरापानात् पूतो भवति, ब्रह्महत्याया: पूतो भवति, स्त्रीहत्याया: पूतो भवति, वीरहत्याया: पूतो भवति, अगम्यागमनात् पूतो भवति, अभक्ष्यभक्षणात् पूतो भवति, पंक्तिशतसहस्राणां पंक्तिपावनात् पूतो भवति, अष्टौ ब्राह्मणान् ग्राहयित्वाऽपरिमितमायुर्भवति। य एवं वेद ब्रह्मलोकं स गच्छति श्रीब्रह्मलोकं स गच्छत्यों नम इति।

तदित्यवाङ्मनोगम्यं ध्येयं यत् सूर्यमण्डले। सवितु: सकलोत्पत्तिस्थितिसंहारकारिण: ॥१॥
वरेण्यमाश्रयणीयं यदाधारमिदं जगत्। भर्गस्य साक्षात्कारेण ह्यविद्याशक्तिदायकम् ॥२॥
देवस्य ज्ञानरूपत्वस्वानन्दात् क्रीडतोऽपि वा। धीमह्यहँ स एवेति तेनैवाभेदसिद्धये ॥३॥
धियोऽन्त:करणे वृत्ती: प्रत्यक्प्रवणचारिणी:। य: इत्यलिङ्गधर्मं यच्चेत्यज्ञानादिलक्षणम् ॥४॥
नोऽस्माकं बहुधाभ्यस्तभेदभिन्नदृशां तथा। प्रचोदयात् प्रेरयति प्रार्थना बहिरिष्यते ॥५॥
यो देव: सवितास्माकं धियो धर्मादिगोचरात्। प्रेरयेत्तस्य यद्भर्गस्तद्वरेण्यमुपास्महे ॥६॥
ब्रह्माणी चतुराननाक्षवलयं कुम्भं करै: स्रुक्स्रुवौ बिभ्राणारुणकान्तिरिन्दुवदना ऋग्रूपिणी बालिका।
हंसारोहणकेलिरम्बरमणेर्बिम्बार्चिता भूषिता गायत्री हृदि भाविता भवतु न: संपत्समृद्ध्यै सदा ॥७॥

रुद्राणी नवयौवना त्रिनयना वैयाघ्रचर्माम्बरा खट्वाङ्गत्रिशिखाक्षसूत्रवलयाभीतीर्दधानाम्बिका।
विद्युत्पिङ्गजटाकलापविलसद्बालेन्दुमौलिर्मुदा सावित्री वृषवाहनामृततनुर्ध्येया यजूरूपिणी ॥८॥
सेव्या सात्र सरस्वती भगवती पीताम्बराडम्बरा श्यामा सामजपान्विता परिमलोद्गात्राञ्चिता वैष्णवी।
ताक्ष्यर्स्था नवनूपुराङ्गदमणिग्रैवेयभूषोज्ज्वला हस्तालम्बितशङ्खचक्रसगदाभीतिः श्रिये चास्तु नः ॥९॥

इति कात्यायनीपाठः। इति पठित्वा गायत्रीं यथाशक्ति जप्त्वा तद्दशांशतस्तुर्यगायत्रीं जपेत्।

त्रिपदाजपसाद्गुण्यं तुर्य्याजाप्यदशांशतः। तुर्यजाप्यं विना येन कृतं यन्निष्फलं भवेत् ॥

एवं जपित्वा जपान्ते कवचं पठेत्।

गायत्री जप प्रारम्भ करने के पूर्व मूलोक्त गायत्रीहृदय एवं कात्यायनी का पाठ किया जाता है। तदनन्तर यथाशक्ति गायत्री का जप करने के बाद तुर्य गायत्री का दशांश जप करना चाहिये। कहा भी गया है कि त्रिपदा गायत्री की जपसंख्या का दशांश तुर्य गायत्री का जप करे। इसके जप के बिना जो त्रिपदा का गायत्री जप होता है, वह निष्फल होता है। इस जप के बाद कवच का पाठ करना चाहिये।

गायत्रीकवचम्

अस्य श्रीगायत्रीकवचमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुः-सामाथर्वाणश्छन्दांसि गायत्रीसावित्रीसरस्वत्यो देवताः ॐतद्बीजं याच्छक्तिः धीमहीति कीलकं मम समस्तपापक्षयार्थं गायत्रीकवचपाठे विनियोगः। गायत्र्या षडङ्गं विन्यस्य 'मुक्ताविद्रुमहेम' इति ध्यायेत्।

गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे। ब्रह्मसंध्या तु मे पश्चादुत्तरे मे सरस्वती ॥१॥
पावकीं मे दिशं रक्षेत् पावकोज्ज्वलशालिनी। यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधानभयङ्करी ॥२॥
वायवीं मे मृगारूढा रुद्राणी रूद्ररूपिणी। ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा ॥३॥
एवं सर्वत्र संरक्षेत् सर्वाङ्गं भुवनेश्वरी। तत्पदं पातु मे पादौ जङ्घे मे सवितुः पदम् ॥४॥
वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च। देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा ॥५॥
धियो यः पातु मे नेत्रे नःपदं मे ललाटकम्। एवं पादादिमूर्धान्तं मूर्धानं मे प्रचोदयात् ॥६॥
तदर्णः पातु मूर्धानं सकारः पातु भालकम्। चक्षुषी च विकारार्णः श्रोत्रे रक्षेत् तुकारकः ॥७॥
नासापुटौ र्वकारार्णः रेकारस्तु कपोलयोः। णिकारस्तूत्तरोष्ठं तु यंकारस्त्वधरोष्ठकम् ॥८॥
आस्यमध्ये भकारार्णो र्गोकारश्चिबुकं तथा। देकारः कण्ठदेशं तु वकारः स्कन्धदेशकम् ॥९॥
स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो वामहस्तकम्। मकारो हृदयं रक्षेद् हिकारो जठरं तथा ॥१०॥
धिकारो नाभिदेशं तु योकारस्तु कटिद्वयम्। गुह्यं रक्षेत्तु योकार ऊरू मेऽव्यान्नःकारकः ॥११॥
प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जङ्घदेशकम्। दकारो गुल्फदेशं तु यात्कारस्तु पदद्वयम् ॥१२॥
इतीदं कवचं दिव्यं बाधाशतनिवारणम्। चतुःषष्टिकलाविद्याविलासैश्वर्यसिद्धिदम् ॥१३॥
जपारम्भे तु गायत्र्या जपान्ते कवचं पठेत्। ब्रह्मस्त्रीगोवधान्मित्रद्रोहाद्यखिलपातकैः ॥१४॥
मुच्यते सर्वपापेभ्यो परं ब्रह्माधिगच्छति।

इति गायत्रीकवचम्।

गायत्री कवच का विनियोग—इस गायत्री कवच मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वर, छन्द ऋक्-यजुः-साम, देवता गायत्री-सावित्री-सरस्वती, बीज ॐ, शक्ति यात् एवं कीलक धीमहि है। समस्त पापों के नाश के लिये गायत्री कवच का विनियोग किया जाता है। विनियोग के पश्चात् षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार गायत्री का ध्यान करे—

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिषद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशान् पाशं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे।।

इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् गायत्री कवच का पाठ करना चाहिये। कवच का अर्थ इस प्रकार है—पूर्व में गायत्री, दक्षिण में सावित्री, पश्चिम में ब्रह्मसन्ध्या एवं उत्तर में सरस्वती मेरी रक्षा करें। अग्निकोण में पावकोज्ज्वलशालिनी एवं नैर्ऋत्य कोण में यातुधानभयंकरी मेरी रक्षा करें। वायव्य कोण में मृगारूढ़ा एवं ईशान कोण में रुद्ररूपिणी मेरी रक्षा करें। ऊपर ब्रह्माणी एवं नीचे वैष्णवी मेरी रक्षा करें। सर्वत्र समस्त अंगों की रक्षा भुवनेश्वरी करें। मन्त्र का 'तत्' पद मेरे पैरों की, 'सवितुः' पद जांघों की, 'वरेण्य' पद कटिदेश की, 'भर्ग' पद नाभि की, 'देवस्य' पद हृदय की, 'धीमहि' पद गले की, 'धियो यः' पद नेत्रों की, 'नः' पद ललाट की एवं पैर से मूर्धा तक 'प्रचोदयात्' पद मेरी रक्षा करे। मन्त्र का तत् पद मेरे मूर्धा की, 'स' मेरे भाल की, वि चक्षुओं की, तु श्रोत्रों की, र्व नासाछिद्रों की, रे कपोलों की, णि ऊर्ध्वोष्ठ की एवं यं अधरोष्ठ की रक्षा करे। भ मुखमध्य की एवं र्गो चिबुक की रक्षा करे। दे कण्ठदेश की एवं व स्कन्धदेश की रक्षा करे। स्य दाहिने हाथ की एवं धी बाँयें हाथ की रक्षा करे। म हृदय की एवं हि जठर की रक्षा करे। धि नाभि प्रदेश की एवं यो दोनों कटियों की रक्षा करे। मेरे गुह्य की रक्षा यो एवं ऊरुओं की रक्षा नः करे। जानुओं की रक्षा प्र, जाँघों की रक्षा चो, गुल्फदेश की रक्षा द एवं दोनों पैरों की रक्षा यात् करे। यह दिव्य कवच सैकड़ों बाधाओं का निवारण करने वाला है। यह चौंसठ कलाओं सहित चौंसठ विद्याओं एवं समस्त ऐश्वर्यों को देने वाला है। गायत्री मन्त्रजप के आरम्भ एवं अन्त में इस कवच का पाठ करने से ब्रह्महत्या, स्त्रीहत्या, गोहत्या, मित्रद्रोह आदि असंख्य पापों से साधक मुक्त हो जाता है। साथ ही समस्त पापों से मुक्त होकर परब्रह्म को प्राप्त करता है।

गायत्रीपूजाविधि

अथ गायत्रीपूजाविधिः। सा पूजा द्विविधा मानसिकबाह्यभेदात्। मानसिकपूजा यथा। तदङ्गत्वेन सौरपीठन्यासं कुर्यात्। ॐगुं गुरुभ्यो नमः मूर्ध्नि। गं गणपतये नमः मूलाधारे। ॐ आधारशक्त्यै नमः। ॐमूलप्रकृत्यै नमः। ॐकूर्माय नमः। ॐअनन्ताय नमः। ॐवराहाय नमः। ॐपृथिव्यै नमः। ॐ क्षीरार्णवाय नमः। ॐश्वेतद्वीपाय नमः। ॐकल्पवृक्षाय नमः। रत्नमण्डपाय नमः। रत्नवेदिकायै नमः। श्वेतच्छत्राय नमः। सितचामराभ्यां नमः। तन्मध्ये रत्नसिंहासनाय नमः। इति मूलाधारमारभ्य उपर्य्युपरि विन्यस्य सिंहासनदेवता न्यसेत्। ॐधर्माय नमः। ज्ञानाय नमः। वैराग्याय नमः। ऐश्वर्याय नमः। एते सिंहासनपादरूपिणः। एवं ॐअधर्माय नमः। अज्ञानाय नमः। अवैराग्याय नमः। अनैश्वर्याय नमः। इति अंसद्वयोरुद्वयप्रकल्पितपादचतुष्टयत्वेन धर्मादीन् मुखनाभिपार्श्वद्वयप्रकल्पितगात्रचतुष्टयत्वेन अधर्मादींश्च न्यसेत्। सिंहासनमध्ये ॐचिच्छक्त्यै नमः। ॐ मायाशक्त्यै नमः। आनन्दकन्दाय संविन्नालाय नमः। प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः। विकारमयकेसरेभ्यो नमः। पञ्चाशद्वर्णबीजाढ्यसकलतत्त्वरूपायै कर्णिकायै नमः। तस्यां ॐअं अर्कमण्डलाय नमः। ॐसों सोममण्डलाय नमः। ॐरं वह्निमण्डलाय नमः। ॐसं सत्त्वाय नमः। ॐरं रजसे नमः। ॐतं तमसे नमः। ॐअं आत्मतत्त्वाय नमः। ॐ मायातत्त्वाय नमः। ॐ विद्यातत्त्वाय नमः। ॐकलातत्त्वाय नमः। मध्ये परतत्त्वाय नमः। ॐआं आत्मने नमः। ॐअं अन्तरात्मने नमः। ॐपं परमात्मने नमः। ॐह्रीं ज्ञानात्मने नमः। ॐप्रभूताय नमः। ॐविमलाय नमः। ॐसाराय नमः। ॐसमाराध्याय नमः। (मध्ये) ॐअनन्ताय (परमसुखाय) नमः। इति तत्रैव दिक्षु मध्ये च विन्यस्य केसरेषु पूर्वाद्यष्टदिक्षु मध्ये च नव पीठशक्तीर्न्यसेत्। ॐरां दीप्तायै नमः। ॐरीं सूक्ष्मायै०। ॐरूं जयायै०। ॐरें भद्रायै०। ॐरैं विभूत्यै०। ॐरों विमलायै०। ॐरौं अमोघायै०। ॐरं विद्युतायै। ॐरः सर्वतोमुख्यै नमः। इति विन्यस्य, ॐनमो भगवत्यै ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकायै सौरयोगपीठात्मने नमः। इति मध्ये सिंहासनमन्त्रं विन्यस्य, मूलमन्त्रपूर्वकस्वेष्टदेवतामूर्तिं हृदये विन्यस्य, तदेव गुरुस्वरूपं परं ब्रह्म स्वात्मानुग्रहार्थनिलयां परमात्ममूर्तिं परोक्षज्ञानदायिनीं गायत्रीं मन्त्राधिदेवतां सगुणब्रह्मविद्यात्मिकां दिव्यमूर्तिं परममङ्गलात्मिकां सर्वावयवसंपन्नां सर्वाभरणभूषितां समस्तपरिवारसहितां सकलपुरुषार्थदात्रीं तेजोमयीं स्वहृदय-कमलमधितिष्ठन्तीं भावयित्वा मनसा षोडशोपचारपूजां कुर्यात्। इदमासनं स्वागतमस्तु प्रसीद पाद्यमिदमाचमनीयमिदं मधुपर्कमिदं पुनराचमनीयं स्नानमिदं वस्त्रमिदं सौरान्तमुपकल्प्य, छत्रचामरगीतनृत्यवाद्यादिमहापूजादिकं संकल्प्य तन्मयमना भूत्वा ध्यायेदिति मानसिकपूजा।

गायत्री पूजा विधि—गायत्री की पूजा मानसिक और बाह्य भेद से दो प्रकार की होती है। मानसिक पूजा के अंगरूप में सौर पीठ न्यास करे। ॐ गुं गुरुभ्यो नम: मूर्धि्न, ॐ गं गणपतये नम: मूलाधारे, ॐ आधारशक्तये नम:, ॐ मूलप्रकृत्यै नम:, ॐ कूर्माय नम:, ॐ अनन्ताय नम:, ॐ वराहाय नम:, ॐ पृथिव्यै नम:, ॐ क्षीरार्णवाय नम:, ॐ श्वेतद्वीपाय नम:, ॐ कल्पवृक्षाय नम:, रत्नमण्डपाय नम:, रत्नवेदिकायै नम:, श्वेतच्छत्राय नम:, सितचामराभ्यां नम:, तन्मध्ये रत्नसिंहासनाय नम:, मूलाधार से लेकर क्रमशः ऊपर-ऊपर न्यास करके सिंहासन देवता का न्यास करे।

ॐ धर्माय नम:, ज्ञानाय नम:, वैराग्याय नम:, ऐश्वर्याय नम:—ये सिंहासन के पादरूप हैं। अधर्माय नम:, अज्ञानाय नम:, अवैराग्याय नम:, अनैश्वर्याय नम:—इस प्रकार दोनों कन्धों से दोनों उरुओं तक में प्रकल्पित चार पाद के रूप में धर्मादि का न्यास करे। मुख नाभि दोनों पार्श्वों में प्रकल्पित चार अंगों में अधर्मादि का न्यास करे। सिंहासन मध्य में इनका न्यास करे—ॐ चिच्छक्त्यै नम:, ॐ मायाशक्त्यै नम:, आनन्दकन्दाय नम:, संविन्नालाय नम:, प्रकृतिमयक्षेत्रेभ्यो नम:, विकारमयकेसेरभ्यो नम:, पञ्चाशद्वर्णबीजाढ्यसकलतत्त्वरूपायै कर्णिकायै नम:।

कर्णिकाओं में अं अर्कमण्डलाय नम:, ॐ सों सोममण्डलाय नम:, ॐ रं वह्निमण्डलाय नम:, ॐ सं सत्त्वाय नम:, ॐ रं रजसे नम:, ॐ तं तमसे नम:, ॐ अं आत्मतत्त्वाय नम:, ॐ मायातत्त्वाय नम:, ॐ विद्यातत्त्वाय नम:, ॐ कलातत्त्वाय नम: से न्यास करे। मध्य में परतत्त्वाय नम: से न्यास करे। तदनन्तर ॐ आं आत्मने नम:, ॐ अं अन्तरात्मने नम:, ॐ पं परमात्मने नम:, ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नम:, ॐ प्रभूताय नम:, ॐ विमलाय नम:, ॐ साराय नम:, ॐ समाराध्याय नम:, मध्य में ॐ अनन्ताय परमसुखाय नम:—इस प्रकार केसर की दिशाओं तथा मध्य में न्यास करके केसर में, पूर्वादि आठ दिशाओं में और मध्य में पीठशक्तियों की पूजा करे।

पीठशक्तियों का न्यास इस प्रकार करे—ॐ रां दीप्ताय नम:, ॐ रीं सूक्ष्मायै नम:, ॐ रूं जयायै नम:, ॐ रें भद्रायै नम:, ॐ रैं विभूत्यै नम:, ॐ रों विमलायै नम:, ॐ रौं ममोध्यायै नम:, ॐ रं विद्युतायै नम:, ॐ र: सर्वतोमुख्यै नम:। इसके बाद ॐ नमो भगवत्यै ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकायै सौरयोगपीठात्मने नम: से सिंहासन के मध्य में मन्त्र का न्यास करे। मूल मन्त्र के साथ अपने इष्ट देवता की मूर्ति को हृदय में न्यस्त करे। उसी प्रकार गुरूस्वरूप परम ब्रह्म स्वात्मानुग्रहार्थनिलया परमात्म मूर्ति परोक्ष ज्ञानदायिनी मन्त्राधिदेवता सगुण ब्रह्म विद्यात्मिका दिव्य मूर्ति परम मंगलात्मिका सर्वावयवसम्पन्ना सर्वाभरणभूषिता समस्त परिवारसहित सकल पुरुषार्थदात्री तेजोमयी गायत्री के अपने हृदय कमल में स्थित होने की भावना करके सोलह मानसिक उपचारों से पूजा करे। आसन, स्वागत, पाद्य, मधुपक पुनराचमनीय स्नान वस्त्र की कल्पना करके छत्र-चामर-गीत-नृत्य-वाद्यादि महापूजादि का संकल्प करके तन्मय होकर ध्यान करना ही मानसिक पूजन कहलाता है।

गायत्रीयन्त्रविधानम्

बाह्यपूजायां तु यन्त्रं यथा—

शक्तेर्बाह्यकृशानुकोणविलसद् भूरादिसत्कर्णिकं वस्वब्जस्वरयुग्मकेसरदलैर्वर्गैस्त्रिवर्णं मनो:।
चूडामन्त्रसतुर्यवेष्टितमिदं क्ष्माकोणताराङ्कितं गायत्र्या: कथितं महर्षिभिरिदं यन्त्रं तु दिक्ष्वङ्कितम् ॥१॥ इति।

द्वितीययन्त्रं तु—

ब्रह्मोवाच

शृण्वन्तु ऋषय: सर्वे गायत्रीयन्त्रमुत्तमम्। यस्य विज्ञानमात्रेण सिद्धयोऽष्टौ करे स्थिता: ॥१॥
पूर्वं तु विष्णुना प्रोक्तं यन्त्रं मन्त्राङ्गसंयुतम्। रहस्यं परमं गुह्यं वेदान्तेष्वपि गोपितम् ॥२॥
अग्निमण्डलमालिख्य तन्मध्ये प्रणवं लिखेत्। मायास्त्रीबीजसंयुक्तं महामायां रमापतिम् ॥३॥
चिन्तामणिं नारसिंहं सुदर्शनमनुं क्रमात्। लिखेदष्टदलं बाह्ये तद् द्वारेषु च मन्त्रवित् ॥४॥
नारायणमनुं लिख्य सन्धौ तु नारसिंहकम्। मायाबीजेन संवेष्ट्य बहिर्दशदलं लिखेत् ॥५॥
दलेषु विलिखेत् कृष्णं सन्धौ राममनुं लिखेत्। स्त्रीबीजेन तु संवेष्ट्य तद्बहिर्द्वादशदलम् ॥६॥

वासुदेवं तद्दलेषु सन्धौ तु हयशीर्षकम्। मन्मथेन तु संवेष्ट्य तद्बहिः षोडशदलम् ॥७॥
तद्दलेषु स्वरांल्लिख्य तत्सन्धौ तु वराहकम्। चिन्तामण्या तु संवेष्ट्य बहिरष्टादशच्छदम् ॥८॥
दलेषु विलिखेत् कृष्णं सन्धौ चक्रे नृकेसरिम्। रामबीजेन संवेष्ट्य बहिर्द्वाविंशतिच्छदम् ॥९॥
तद्दलेषु च गायत्रीं तत्सन्धौ मन्त्रराजकम्। वेष्टने तु महामायां द्वात्रिंशद्दलमालिखेत् ॥१०॥
नृसिंहानुष्टुभं लेख्य सन्धौ चक्रमनुं लिखेत्। प्रणवेन तु संवेष्ट्य बहिः पार्थिवमण्डलम् ॥११॥
व्यञ्जनानि लिखेत् पश्चात्तन्मध्ये क्रमशोऽभितः। हंसहंसेति रक्षेति वाय्वग्न्यमृतसंयुतम् ॥१२॥
यन्त्रसंस्कारमन्त्रांश्च तन्मध्ये विलिखेत् सुधीः। प्राणप्रतिष्ठां कृत्वाथ जपकाले विशेषतः ॥१३॥
षोडशैरुपचारैश्चाप्यर्चयेन्मनसापि वा। ध्यात्वा मन्त्रं जपेत् पश्चादष्टोत्तरसहस्रकम् ॥१४॥
अष्टोत्तरशतं वापि अष्टाविंशतिमेव वा। चतुर्थ्यादिप्रदोषेषु गायत्रीं दशधा जपेत् ॥१५॥

इदं धारणायन्त्रम्, पूजायन्त्रमिति केचित्। प्रकृतौ तु—पूर्वोक्तं 'शक्तेर्बाह्येति' यन्त्रं पूजायां विशिष्टम्। स्वपुरतो मण्डलं कुर्यात्।

संमार्जनोपाञ्जनाभ्यां शोषणोल्लेखनेन च। गवां च परिवासेन भूमिः शुध्यति पञ्चधा ॥१६॥

वामहस्तेनाक्रम्य दक्षिणहस्तेन मण्डलं कृत्वा तत्र पूजायन्त्रं लिखेत्।

सिन्दूररजसा भूमौ लिखित्वा यन्त्रमर्चयेत्। अथवा हेमरूप्यादिपट्टपीठोपरि स्थितम् ॥१७॥

स्ववामभागे चतुरस्रमण्डलं कृत्वा तत्राधारमन्त्रप्रक्षालितं संस्थाप्य 'रांरीरूं अग्निमण्डलाय दशकलात्मने श्रीगायत्र्याः कलशाधाराय नमः' इति संपूज्य 'धूम्रार्चिरूष्मा ज्वलिनी ज्वालिनी विस्फुलिङ्गिनी। सुश्रीः सुरूपा कपिला हव्यकव्यवहे अपि। यादीनां दशवर्णानां कला धर्मप्रदा इमाः'। एतासां पूजा कर्तव्या। तदुपरि कलशं संस्थाप्य, मं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने श्रीगायत्र्याः कलशाधाराय नमः इति संपूज्य, 'तपिनी तापिनी धूम्रा मरीचिर्ज्वालिनी शुचिः। सुषुम्ना भोगदा विश्वा बोधिनी धारिणी क्षमा। कभाद्या वसुदाः सौराष्ठडान्ता द्वादशेरिताः'। कंभं तपिन्यै नमः, इत्यादिक्रमेण पूजयेत्। ततस्तन्मध्ये अनुलोमविलोममातृकां स्मरन् शुद्धोदकेनापूर्य, मं कामप्रदषोडशकलात्मने चन्द्रमण्डलाय श्रीगायत्र्याः कलशामृताय नमः इति संपूज्य, अं अमृतायै नमः इत्यादि पूजयेत्। 'अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टी रतिर्धृतिः। शशिनी चद्रिका ज्योत्स्ना कान्तिः श्रीः प्रीतिरङ्गदा। पूर्णा पूर्णामृता कामदायिन्यः स्वरजाः कलाः'। इति क्रमेण संपूज्य, तन्मध्ये 'गायत्र्यास्तु त्रिकोणं चे'ति यन्त्रं विलिख्य, तत्र 'ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि' इत्यादिना तीर्थमाकृष्य, 'गङ्गे च यमुने चैव' इति पठित्वा, 'गङ्गाद्याः सरितः सर्वाः सिन्ध्वाद्या जलदा नदाः। आयान्तु देवीपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः' इत्यावाहनादिपञ्चमुद्राः प्रदर्श्य ध्यायेत्। 'कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः। मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्थिताः। कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा'। इमं मे गङ्गे यमुने' इति पठेत्। इति कलशपूजा।

बाह्य पूजा में यन्त्र इस प्रकार बनाया जाता है—त्रिकोण बनाकर उसके मध्य में भूर्भुवः स्वः लिखे। उसके बाहर अष्टदल बनावे। दलों में दो स्वरों और गायत्री के तीन-तीन अक्षरों को लिखे। इसे आपो ज्योति रसोमृतं के आठ अक्षरों से वेष्टित करे। इसके बाहर चतुरस्र भूपुर बनावे। इसके कोणों में ॐ लिखे।

अन्य यन्त्र इस प्रकार कहा गया है—ब्रह्मा ने कहा कि हे ऋषियों! उत्तम गायत्री यन्त्र को सुनो, जिसके ज्ञान-मात्र से ही आठों सिद्धियाँ हस्तगत हो जाती हैं। वेदान्त में भी पूर्णतः गुप्त, रहस्यमय, मन्त्रांग-युक्त परम गुह्य यन्त्र को पहले विष्णु ने कहा था। त्रिकोण बनाकर उसके मध्य में ॐ लिखे। तीन बीजों से युक्त माया महामाया रमापति चिन्तामणि नारसिंह सुदर्शन मन्त्र उसके बाहर के अष्टदल में क्रमशः लिखे। दलों के बाहर नारायण मन्त्र लिखे। दलों की सन्धियों में नारसिंह मन्त्र लिखे। मायाबीज से उसे वेष्टित करे। इसके बाहर दशदल कमल बनावे। दलों में कृष्णमन्त्र और सन्धियों में राममन्त्र लिखे। स्त्रीबीज

से उसे वेष्टित करे। उसके बाहर द्वादश दल कमल बनावे। उसके दलों में वासुदेव मन्त्र और सन्धियों में हयग्रीव मन्त्र लिखे। मन्मथ मन्त्र वेष्टित करे। उसके बाहर षोडशदल कमल बनावे। दलों में स्वरों को लिखे। सन्धियों में वराह मन्त्र लिखे एवं चिन्तामणि मन्त्र से वेष्टित करे। इसके बाहर अट्ठारह दल कमल बनावे। दलों में कृष्ण मन्त्र लिखे। सन्धियों में नृसिंह मन्त्र लिखे एवं रामबीज से वेष्टित करे। इसके बारह बाईस दल कमल बनावे। दलों में गायत्री के अक्षरों को लिखे, सन्धियों में मन्त्रराज लिखे एवं महामाया से वेष्टित करे। इसके बाहर बत्तीस दल कमल बनावे। दलों में नृसिंह अनुष्टुभ मन्त्रवर्णों को लिखे, सन्धियों में सुदर्शन चक्र मन्त्र लिखे एवं प्रणव से वेष्टित करे। इसके बाहर भूपुर बनावे। उसमें व्यञ्जनों को लिखे। चारो कोणों में हंस हंस लिखे। यन्त्र का संस्कार करे। उसके मध्य में मन्त्र लिखे। जपकाल में प्राण-प्रतिष्ठा करे। षोडशोपचार से पूजा करे। चतुर्थी आदि प्रदोषों में गायत्री का जप दश बार करे। कुछ लोगों के अनुसार यह धारण यन्त्र है और कुछ के मत से पूजा यन्त्र है।

मण्डल-निर्माण हेतु सम्मार्जन, उपाञ्जन, शोषण, उल्लेखन एवं गोवास—इन पाँच प्रकार से भूमि का शोधन किया जाता है। इसी भूमि तल पर अपने सामने सिन्दूर से पूजा यन्त्र लिखकर अर्चन करे। अथवा सोना-चाँदी या वस्त्र पर लिखकर पूजा करे। अपने वाम भाग में चतुरस्र मण्डल बनाकर उस पर आधार स्थापित करे। रां रीं रूं अग्निमण्डलाय दशकलात्मने श्रीगायत्र्या कलशाधाराय नमः से उसकी पूजा करे। धूम्रार्चि, ऊष्मा, ज्वलिनी, ज्वालिनी, विस्फुलिङ्गिनी, सुश्री, सुरूपा, कपिला, हव्यवहा एवं कव्यवहा—दश ये अग्नि की धर्मप्रदा कलायें हैं, इनकी पूजा यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं से करे। उसके ऊपर कलश रखकर 'सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने श्रीगायत्र्याः कलशाधाराय नमः' से पूजा करके सूर्य की बारह कलाओं की पूजा करे। ये हैं—तपिनी, तापिनी, धूम्रा, मरीचि, ज्वालिनी, शुचि, सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी एवं क्षमा। 'कं भं तपिन्यै नमः' इत्यादि क्रम से इनकी पूजा करे। तब अनुलोम-विलोम मातृकाओं को कहकर शुद्ध जल कलश में भरे। 'मं कामप्रदषोडशकलात्मने चन्द्रमण्डलाय श्रीगायत्र्याः कलशामृताय नमः' से जल की पूजा करे। तब चन्द्रमा के सोलह कलाओं की पूजा करे। ये कलायें हैं—अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका, कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्णा, पूर्णामृता। ये स्वरजा कलायें कामदायिनी हैं। उसके मध्य में गायत्री का त्रिकोण यन्त्र लिखकर उसमें 'ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि' इत्यादि मन्त्र से तीर्थों को आकर्षित करके 'गंगे च यमुने चैव' का पाठ करे। तदनन्तर 'गङ्गाद्याः सरितः सर्वाः सिन्ध्वाद्या जलदा नदाः। आयान्तु देवीपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः।' मन्त्र से आवाहनादि पाँच मुद्राओं को दिखाकर इस प्रकार ध्यान करे—

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः। मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्थिताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।।

तदनन्तर 'इमं मे गंगे यमुने' का पाठ करे। इस प्रकार कलशपूजा सम्पन्न होती है।

पात्रस्थापनलक्षणम्

स्वदक्षिणभागे एवमेव साधारं शङ्खं संस्थाप्य शङ्खमुद्रां प्रदर्श्य तदुदकं सर्वत्र पूजोपकरणादिषु संप्रोक्ष्य कलशशङ्खयोर्मध्ये अर्घ्यादिपञ्चपात्राणि साधाराणि स्थापयेत्। 'अर्घ्यपात्रं तु वायव्ये नैर्ऋत्यां पाद्यपात्रकम्। आग्नेय्यां स्नानकलशं ईशे त्वाचमनीयकम्। मध्ये तु मधुपर्कं स्यादित्येतत्पात्रलक्षणम्।

तदनन्तर अपने दक्षिण भाग में आधार रखकर उस पर शङ्ख स्थापित कर उसमें जल भरे। शङ्ख मुद्रा दिखावे। उसी शंख के जल से सभी पूजन सामग्रियों का प्रोक्षण करे। कलश और शङ्ख के मध्य में अर्घ्यादि पाँच पात्रों को आधार पर स्थापित करे। अर्घ्य पात्र वायव्य में, नैर्ऋत्य में पाद्य पात्र, आग्नेय में स्नान कलश, ईशान में आचमनीय एवं मध्य में मधुपर्क पात्र स्थापित करे।

अर्घ्यादिद्रव्याणि

द्रव्याणि तु—

आपः क्षीरं कुशाग्राणि घृतं दधि तथा मधु। रक्तानि करवीराणि तथा रक्तं च चन्दनम् ॥१॥
भानोरपि च गायत्र्या अष्टाङ्गार्घ्यमुदाहृतम्। सिद्धार्थं कुङ्कुमं दूर्वा लोष्टं लामज्जकं शशी ॥२॥
अमूनि चात्र द्रव्याणि पाद्यस्य कथयन्ति षट्। फलकच्चोरकर्पूरकाष्टीलोशीरकाणि च ॥३॥
अमून्याचमनीयस्य द्रव्याणि कथयन्ति षट्। मधुपर्के च सक्षौद्रं दधि प्रोक्तं मनीषिभिः ॥४॥
दध्यभावे पयः कार्यं मध्वभावे तथा गुडः। इक्षुर्मधु घृतं चैव शर्करापयसायुतम् ॥५॥
पञ्चामृतमिदं प्रोक्तं वसिष्ठादिमनीषिभिः।

ततः पूर्ववत् सामान्यार्घ्यविशेषार्घ्ये स्वपुरतः पार्श्वयोर्दीपद्वयं संस्थाप्य मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा षडङ्गं विन्यस्य करशुद्धिं कुर्यात्।

पात्रों के द्रव्य—सूर्य गायत्री के अर्घ्य में पानी, दूध, कुशाग्र, घी, दही, मधु, लाल कनैल और लाल चन्दन—ये आठ द्रव्य मिलाये जाते हैं। पाद्य में सरसों, कुङ्कुम, दूर्वा, लोष्ट, लामज्जक, कपूर—ये छः द्रव्य मिलाये जाते हैं। आचमनीय में फल, कचूर, कर्पूर, खश आदि छः द्रव्य मिलाये जाते हैं। मधुपर्क दही, मधु, घी के मिश्रण से बनता है। दही न हो तो दूध और मधु न हो तो गुड़ के मिश्रण से मधुपर्क बनता है। पञ्चामृत में दूध, दही, घी, मधु, गुड़ मिलाये जाते हैं। तदनन्तर पूर्ववत् अपने आगे सामान्य अर्घ्य विशेषार्घ्य स्थापित करके पार्श्वों में दो दीपक जलाये। मूल मन्त्र में तीन प्राणायाम करे। षडङ्ग न्यास और करशुद्धि करे।

करशुद्धिः

प्रकोष्ठे मणिबन्ध्ये च पार्श्वयोः करयोस्तले। तत्पृष्ठे च तदग्रे च करशुद्धिरुदाहृता ॥१॥

करशुद्धि में पूरे हाथ, मणिबन्ध, करपार्श्व, करपृष्ठ, करतल, कराग्र का शोधन किया जाता है।

आवरणपूजाविधिः

ततः सौरपीठन्यासवत् पीठपूजां कृत्वा पीठमनुं विन्यस्य, तत्र 'मुक्ताविद्रुमहेम' इति ध्यानोक्तरूपिणीं स्वहृत्कमलस्थितां गायत्रीं परब्रह्मरूपिणीं वहन्नसापुटेन विनिर्गत्य पूजायन्त्रे उपविष्टामिति ध्यात्वा, आवाहनादिदशमुद्राः प्रदर्श्य षोडशोपचारपूजामष्टादशोपचारपूजां वा कुर्यात्।

आसनावाहने चार्घ्यं पाद्यमाचमनं तथा। स्नानवस्त्रोपवीतानि भूषणानि च सर्वशः ॥१॥
गन्धं पुष्पं तथा धूपं दीपमन्येन तर्पणम्। माल्यानुलेपने चैव नमस्कारविसर्जने ॥२॥

इत्यष्टादशोपचारैर्मूलेन देवतां सन्तर्प्यावरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा (शा० २१)—

विधाय मण्डलं विद्वांस्त्रिकोणोज्ज्वलकर्णिकम्। सौरं पीठं यजेत्तत्र दीप्तादिनवशक्तिभिः ॥१॥
मूलमन्त्रेण क्लृप्तायां मूर्तौ देवीं प्रपूजयेत्। कोणेषु त्रिषु संपूज्या ब्राह्म्याद्याः शक्तयो बहिः ॥२॥
आदित्याद्यास्ततः पूज्या उषादिसहिताः क्रमात्। ततः षडङ्गान्यभ्यर्च्य केसरेषु यथाविधि ॥३॥
प्रह्लादिन्यादिशक्तीश्च तद्बहिः पूजयेत् सुधीः। ब्राह्म्याद्याः सारुणा बाह्ये पूजयेत् प्रोक्तलक्षणाः ॥४॥
ततोऽभ्यर्चेद् ग्रहान् बाह्ये शक्राद्यानायुधैः सह। इत्थमावरणैर्देवीं दशभिः परिपूजयेत् ॥५॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां भोक्ता स्याद् द्विजसत्तमः॥ इति।

एवं क्रमेण पूजां कृत्वाक्षमालयाष्टोत्तरशतं गायत्रीजपं कृत्वा 'गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वप्रसादान्महेश्वरि'। इति तेजोरूपं जपं देव्या हस्ते समर्पयेत्।

तदनन्तर सौर पीठ न्यास के समान पीठपूजा करे। पीठमन्त्रों से न्यास करे। तब 'मुक्ताविद्रुमहेम' इत्यादि ध्यान में

कथित ब्रह्मरूपिणी गायत्री को अपने हृदयकमल में स्थित मानकर प्रवहमान नासा पुट से बाहर निकाल कर पूजा यन्त्र में बैठायें। ऐसा ध्यान करके आवाहनादि दश मुद्रा दिखाकर षोडशोपचार या अष्टादशोपचार पूजा करे।

अष्टादश उपचार पूजा में आसन, आवाहन, अर्घ्य, पाद्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, भूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, (तर्पण) नैवेद्य, माला, अनुलेप, नमस्कार एवं विसर्जन होते हैं। इस प्रकार पूजन के बाद मूल मन्त्र से देवता का तर्पण करके आवरण पूजा करें।

पूजा यन्त्र बनाकर त्रिकोण के मध्य में सौर पीठ की दीप्तादि नव शक्तियों से पूजा करे। मूल मन्त्र से देवी की मूर्ति कल्पित करके पूजा करे। कोणों में ब्राह्मी आदि शक्तियों की पूजा करे। उसके बाहर उषादि सहित आदित्य आदि की पूजा करे। तब केसर में षडङ्ग पूजा करे। उसके बाहर प्रह्लादि शक्तियों की पूजा करे। उसके बाहर ब्राह्मी आदि शक्तियों की पूजा करे। इसके बाहर नवग्रहों की पूजा करे। उसका बाहर इन्द्रादि और उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार दश आवरणों की पूजा करे। इसके करने से द्विजसत्तम धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का भोक्ता होता है।

इस क्रम से पूजा करके अक्षमाला पर एक सौ आठ गायत्री का जप करके 'गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपं, सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि' से तेजोरूप देवी को जप समर्पित करे।

काम्यप्रयोगः

तथा (शा० २१)—

व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं दीक्षितो जपेत्। तत्त्वलक्षं विधानेन भिक्षाशी विजितेन्द्रियः ॥१॥
क्षीरौदनतिलान् दूर्वाः क्षीरद्रुमसमिद्वरान्। पृथक् सहस्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ॥२॥
तत्त्वसंख्यासहस्राणि मन्त्रविज्जुहुयात् तिलैः। सर्वपापविनिर्मुक्तो दीर्घमायुः स विन्दति ॥३॥
आयुषे साज्यहविषा केवलेनाथ सर्पिषा। दूर्वात्रिकैस्तिलैर्मन्त्री जुहुयात् त्रिसहस्रकम् ॥४॥
अरुणाब्जैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयादयुतं ततः। महालक्ष्मीर्भवेत् तस्य षण्मासान्नात्र संशयः ॥५॥
ब्रह्मश्रिये प्रजुहुयात् प्रसूनैर्ब्रह्मवृक्षजैः। बहुना किमिहोक्तेन यथावत् साधुसाधिता ॥६॥
द्विजन्मनामियं विद्या सिद्धा कामदुघा मता। कामनायन्त्रमन्यच्च वक्ष्यामि भुवि दुर्लभम् ॥७॥
ह्रींकारं कर्णिकामध्ये व्याहृतीनां त्रिकोणकम्। बहिश्चाष्टदलं पद्मं प्रोक्तलक्षणपे(ल)क्षितम् ॥८॥
केसरेषु स्वरा लेख्या मन्त्रवर्णास्त्रयस्त्रयः। आदिवर्गाक्षराष्टौ च बहिर्माहेन्द्रमण्डलम् ॥९॥
आपोज्योतिरित्येतस्य वेष्टयेद् यन्त्रमुत्तमम्। भुजैरेनं समालिख्य रोचनाकुङ्कुमैः सुधीः ॥१०॥
प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा तु गले वा बाहुमूलके। धारयेत् पुष्टिरक्षायै रोगघ्नं भवति ध्रुवम् ॥११॥
ब्रह्मास्त्रमिति संप्रोक्तं विलोमपठितो मनुः। पूर्वोक्ता एव मुन्याद्या मन्त्रस्यास्य प्रकीर्तिताः ॥१२॥
प्रतिलोमक्रमादस्य षडङ्गानि प्रकल्पयेत्। वर्णन्यासपदन्यासौ विदध्यात् प्रतिलोमतः ॥१२॥
ध्यानभेदान् विजानीयाद् गुर्वादेशान्न चान्यथा। पूर्ववज्जपक्लृप्तिः स्याज्जुहुयात् पूर्वसंख्यया ॥१३॥
पञ्चगव्यसुपक्वेन चरुणा तस्य सिद्धये। अर्चनं पूर्ववत् कुर्याच्छक्तीस्तु प्रतिलोमतः ॥१४॥
सर्वत्र देशिकः कुर्याद्गायत्र्या द्विगुणं जपम्। क्रूरकर्माणि कुर्वीत प्रतिलोमविधानतः ॥१५॥
शान्तिकं पौष्टिकं कर्म कर्तव्यमनुलोमतः। प्रयोगकाले प्रजपेत् त्रिपदां च विलोमतः ॥१६॥
साधितो जायते पश्चान्मन्त्रोऽयं विधिनामुना। आग्नेयास्त्रं शिरः कृत्वा वायव्यं मूलमाकरोत् ॥१७॥
अस्त्रसंपुटितं चास्त्रं जपेदष्टसहस्रकम्। कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णाचतुर्दशी ॥१८॥
रात्रौ रात्रौ प्रजुहुयाद् व्रणतैलपरिप्लुतैः। चित्रमूलार्कधत्तूरविषवृक्षसमिद्वरैः ॥१९॥
रिपुर्गच्छेज्ज्वराक्रान्तः सकुटुम्बो यमालयम्। कृष्णपक्षे प्रतिपदमारभ्य मासमात्रकम् ॥२०॥
नद्यां समुद्रगामिन्यां स्नात्वा मन्त्री यथाविधि। आर्द्रवस्त्रो वृष्टिकाले स्थित्वा पितृपदिङ्मुखः ॥२१॥

शत्रुनामयुतं मन्त्रं जपेदष्टोत्तरं शतम्। त्रिकोणकुण्डे जुहुयाद्रात्रौ पूर्वोक्तसाधनैः ॥२२॥
रक्षितोऽपि रिपुः शीघ्रं ब्रह्मविष्णुशिवैरपि। गच्छेद्यमपुरं रोगैः पीडितः सह बान्धवैः ॥२३॥
ब्रह्मशीर्षकमन्त्रस्य ब्रह्मदण्डस्य चानघ। ऋष्यादिन्यासपूजादिप्रयोगान् मन्त्रवित्तमः ॥२४॥
ब्रह्मास्त्रवित् प्रकुर्याद्वै शत्रुनाशनकं विधिम्। अस्त्रत्रयं विजानाति विसर्गादानकर्मणः ॥२५॥
यः स एव शिवः साक्षान्निग्रहानुग्रहक्षमः।

इति गायत्रीविधानं समाप्तम्।

शारदातिलक में कहा गया है कि व्याहृतित्रय से संयुक्त गायत्री का जप दीक्षित साधक चौबीस लाख की संख्या में करे। अनुष्ठान काल में भिक्षान्न का भोजन करे। जितेन्द्रिय रहे। दूध, भात, तिल, दूब से क्षीरवृक्ष की समिधा से ज्वलित अग्नि में अलग-अलग तीन-तीन हजार हवन करे। तत्त्वसंख्या के बराबर अर्थात् चौबीस हजार हवन तिल से करे तो साधक सभी पापों से छूटकर दीर्घ काल तक जीवित रहता है। आयु के लिये गोघृत के साथ हवि से या केवल गोघृत से हवन करे। तीन-तीन दूर्वा के साथ तिल से तीन हजार हवन करने के बाद त्रिमधुराक्त लाल कमल से दश हजार हवन छः महीनों तक करने से साधक महती लक्ष्मी से सम्पन्न होता है। ब्रह्मश्री की प्राप्ति के लिये पलाश के फूलों से हवन करे। बहुत क्या कहा जाय, यथावत् साधना करने से द्विजों के लिये यह सिद्ध विद्या कामधेनु के समान हो जाती है।

अब संसार में दुर्लभ कामनायन्त्र को कहता हूँ। त्रिकोण की कर्णिका मध्य में ह्रीं भुर्भूवः स्वः लिखे। इसके बाहर अष्टदल कमल पूर्वोक्त प्रकार से बनावे। दलों के केसरों में दो-दो स्वरों के साथ मन्त्र के तीन-तीन अक्षरों को और अकचटतपयश लिखे। इसके बाहर माहेन्द्र मण्डल को 'आपो ज्योति' से वेष्टित करे। तब यह उत्तम यन्त्र बनता है। भोजपत्र पर गोरोचन कुङ्कुम से यन्त्र लिखकर प्राणप्रतिष्ठा करे। उसे गले या बाहुमूल में धारण करे तो पुष्टि एवं रक्षा होती है और रोगों का नाश होता है। इस मन्त्र के विलोम पाठ से ब्रह्मास्त्र बनता है। इस मन्त्र के ऋष्यादि पूर्ववत् होते हैं। प्रतिलोम क्रम से षडङ्ग कल्पित करे। वर्ण न्यास, पद न्यास भी प्रतिलोम क्रम से ही करे। गुरु के मुख से ध्यानभेद जानकर ही साधना करे; अन्यथा न करे। जपसंख्या पूर्ववत् है। पूर्व संख्या में ही हवन पंचगव्य में सुपक्व चरु से करे। शक्तियों की पूजा पूर्ववत् प्रतिलोम क्रम से करे। देशिक सर्वत्र दुगुना जप करे। प्रतिलोम विधान से क्रूर कर्म करे। शान्ति, पुष्टि कर्म अनुलोम जप से करे। प्रयोगकाल में विलोम क्रम से त्रिपदा का जप करे। इस विधि से यह मन्त्र सिद्ध होता है। आग्नेय दिशा में अस्त्र शिर और वायव्य में पैर करके अस्त्र से सम्पुटित मन्त्र का आठ हजार जप करे। कृष्णाष्टमी से प्रारम्भ करके कृष्ण चतुर्दशी तक प्रत्येक रात में व्रण तेल से परिप्लुत चित्रक मूल अकवन धत्तूर वृक्ष की समिधाओं से हवन करे। ऐसा करने से परिवारसहित शत्रु ज्वराक्रान्त होकर यमलोक चला जाता है।

कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ करके एक महीने तक साधक समुद्रगामिनी नदी में स्नान करके वृष्टिकाल में गीले वस्त्र में दक्षिण की ओर मुख करके शत्रु नाम के सहित मन्त्र का एक सौ आठ जप करे। रात में त्रिकोण कुण्ड में पूर्वोक्त साधनों से हवन करे तो ब्रह्मा, विष्णु, शिव से भी रक्षित शत्रु परिवारसहित रोग से पीड़ित होकर यमलोक चला जाता है। ब्रह्मशीर्ष मन्त्र से मन्त्रित ब्रह्मदण्ड (पलाश का दण्ड) से ऋष्यादि न्यास पूजादि प्रयोग करे। ब्रह्मास्त्रज्ञानी इससे शत्रुओं का नाश करता है। विसर्ग आदान कर्म में जो तीन अस्त्रों को जानता है, वह साक्षात् शिव के समान निग्रह कर्म में सक्षम होता है।

कादिमतरीत्या मन्त्रपारायणक्रमः

अथ कादिमतरीत्या मन्त्रपारायणक्रमः। स तु श्रीधर्माचार्यवर्यैः स्वकीये लघुस्तवे 'मायाकुण्डलिनी' इत्यादिश्लोकेन सूचितः। यथा—

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी
मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी।
शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी
ह्रींकारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि ॥१॥ इति।

माया ह्रीं, कुण्डलिनी ऐं, क्रिया क्लीं, मधुमती शुद्धा बिन्दुयुता विसर्गयुक्ता बिन्दुविसर्गयुक्ता चेति चतुर्विधमातृका। काल्यादीति दश विद्या:। एभि श्रीमदाराध्यचरणक्रियाप्राप्तो मन्त्रपारायणक्रम: प्रदर्श्यते, तत्र कृतप्रातराह्निकक्रियो विविक्ते स्थाने स्वासनमास्तीर्य 'आधारशक्तिकमलासनाय नम:' इति तत्संपूज्य, तत्र प्राङ्मुख उपविश्य, गुरुगणपतिपरदेवता: प्रणम्य, मूलविद्याया ऋष्यादिकरषडङ्गन्यासं चतुरासनदेवताष्टकन्यासं च विधाय देवीं ध्यात्वा मानसैरुपचारै: संपूज्य, श्रीपरदेवतात्मक: पारायणजपमारभेत्। तत्र—ॐमूलविद्यां ह्रींअकालीसौ:। मू० ह्रींआकालीसौ:। मू० ह्रींइकालीसौ:। मू० ह्रींईकालीसौ:। मू० ह्रींउकालीसौ:। मू० ह्रींऊकालीसौ:। मू० ह्रींऋकालीसौ:। मू० ह्रींॠकालीसौ:। मू० ह्रींऌकालीसौ:। मू० ह्रींॡकालीसौ:। मू० ह्रींएकालीसौ:। मू० ह्रींऐकालीसौ:। मू० ह्रींओकालीसौ:। मू० ह्रींऔकालीसौ:। मू० ह्रींअंकालीसौ:। मू०ह्रींअ:कालीसौ:। मू० ह्रींककालीसौ:। मू० ह्रींखकालीसौ:। मू० ह्रींगकालीसौ:। मू० ह्रींघकालीसौ:। मू० ह्रींङकालीसौ:। मू० ह्रींचकालीसौ:। मू० ह्रींछकालीसौ:। मू० ह्रींजकालीसौ:। मू० ह्रींझकालीसौ:। मू० ह्रींञकालीसौ:। मू० ह्रींटकालीसौ:। मू० ह्रींठकालीसौ:। मू० ह्रींडकालीसौ:। मू० ह्रींढकालीसौ:। मू० ह्रींणकालीसौ:। मू० ह्रींतकालीसौ:। मू० ह्रींथकालीसौ:। मू० ह्रींदकालीसौ:। मू० ह्रींधकालीसौ:। मू० ह्रींनकालीसौ:। मू० ह्रींपकालीसौ:। मू० ह्रींफवालीसौ:। मू० ह्रींबकालीसौ:। मू० ह्रींभकालीसौ:। मू० ह्रींमकालीसौ:। मू० ह्रींयकालीसौ:। मू० ह्रींरकालीसौ:। मू० ह्रींलकालीसौ:। मू० ह्रींवकालीसौ:। मू० ह्रींशकालीसौ:। मू० ह्रींषकालीसौ:। मू० ह्रीसकालीसौ:। मू० ह्रींहकालीसौ:। मू० ह्रींळकालीसौ:। मू० ह्रींक्षकालीसौ:। इत्येकपञ्चाशद्वारं जपित्वा, पुन: मूलं ह्रींअंकालीसौ:। मू०ह्रींआंकालीसौ:। मू० ह्रींइंकालीसौ:। इत्थं सबिन्दुभिर्मातृकाक्षरैरेकपञ्चाशद्वारं जपित्वा, पुन: मूलं ह्रींअ:कालीसौ:। मू० ह्रींआ:कालीसौ:। मू० ह्रींइ:कालीसौ:। मू० ह्रींई:कालीसौ इत्यादि, मू० ह्रींक्ष:कालीसौ: इत्यन्तं विसर्गसहितमातृकाक्षरैरेकपञ्चाशद्वारं जपित्वा, पुन: मूलं ह्रीअं:कालीसौ:। मू० ह्रींआं:कालीसौ:। मू०ह्रींइं:कालीसौ। मू० ह्रींईं:कालीसौ इत्यादि, मू० ह्रींक्षं:कालीसौ: इत्यन्तं बिन्दुविसर्गसहितमातृकाक्षरैरेकपञ्चाशद्वारं जपेत्। इति मायाबीजेन सह चतुर्विधमातृकावर्णैश्चतुरधिकद्विशत(२०४)वारं मूलविद्यां जपित्वा, पुन: मूलं ऐंअकालीसौ:। मू० ऐंआकालीसौ:। मू० ऐंइकालीसौ:। मू० ऐंईकालीसौ:। इत्यादि, मू० ऐंक्षकालीसौ: इत्यन्तं ५१। पुन: मूलं ऐंअंकालीसौ: इत्यादि, मू० ऐंक्षंकालीसौ: इत्यन्तं ५१। पुन: मूलं ऐंअ:कालीसौ: इत्यादि, मू० ऐंक्ष:कालीसौ: इत्यन्तं ५१। पुन: मूलं ऐंअं:कालीसौ: इत्यादि मू० ऐंक्षं:कालीसौ: इत्यन्तं ५१। इत्थं वाग्भवबीजेन सह चतुर्विधमातृकाक्षरैश्चतुरधिकद्विशत(२०४)वारं भूलविद्यां जपित्वा, पुन: मूलं क्लींअकालीसौ: इत्यादि मूलं क्लींक्षकालीसौ: इत्यन्तं ५१। पुन: मूलं क्लींअंकालीसौ: इत्यादि मू० क्लींक्षंकालीसौ: इत्यन्तं ५१॥ पुन: मुलं क्लींअ:कालीसौ इत्यादि मू० क्लींक्ष:कालीसौ इत्यन्तं ५१। पुन: मूलं क्लींअं:कालीसौ: इत्यादि मू० क्लींक्षं:कालीसौ: इत्यन्तं ५१ (२०४) इत्थं चतुर्विधमातृकाक्षरै: प्रत्येकं मायावाग्भवकामराजबीजै: सह (६१२) वारं मूलविद्यां जपेत्।

पुन: मूलं ह्रींअकलासौ: इत्यादि ५१। पुन: मू० ह्रींअंकलासौ: इत्यादि ५१। पुन: मू० ह्रींअ:कलासौ:५१। पुन: मू० ह्रीअं:कलासौ: इत्यादि ५१। (२०४)। पुन: मूलं ऐंअकलासौ: इत्यादि ५१। मूलं ऐअंकलासौ: इत्यादि ५१। मूलं ऐंअ:कलासौ इत्यादि ५१। मूलं ऐंअं:कालासौ: इत्यादि५१। (२०४) पुन: मूलं क्लींअकलासौ: इत्यादि ५१। मूलं क्लींअंकलासौ: इत्यादि ५१। मूलं क्लींअ:कलासौ: इत्यादि ५१। मूलं क्लींअं:कलासौ: इत्यादि ५१। (२०४)। इत्थं चतुर्विधमातृकाक्षरै: प्रत्येकं मायावाग्भवकामराजबीजै: सह द्वादशाधिकषट्शत (६१२) वारं मूलविद्यां जपेत्।

तत: मू० ह्रींअमालिनीसौ: इत्यादि मू० ह्रींक्षमालिनीसौ: इत्यन्तं ५१। मूलं ह्रींअंमालिनीसौ: इत्यादि मू० ह्रींक्षंमालिनीसौ: इत्यन्तं ५१। पुन: मू० ह्रींअ:मालिनीसौ: इत्यादि मू० ह्रींक्ष:मालिनीसौ: इत्यन्तं ५१। पुन: मू०

अं:मालिनीसौः इत्यादि मू० ह्रींक्षं:मालिनीसौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। पुनः मूलं ऐंअमालिनीसौः इत्यादि मू० ऐंक्षमालिनीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअंमालिनीसौः इत्यादि मू० ऐंक्षंमालिनीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअ:मालिनीसौः इत्यादि मू० ऐंक्ष:मालिनीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअं:मालिनीसौः इत्यादि मू० ऐंक्षं:मालिनीसौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। पुनः मूलं क्लींअमालिनीसौः इत्यादि मू० क्लींक्षमालिनीसौः इत्यन्तं ५१। मू० क्लींअंमालिनीसौः इत्यादि मू० क्लींक्षंमालिनीसौः इत्यन्तं ५१। मूलं क्लींअ:मालिनीसौः इत्यादि मू० क्लींक्ष:मालिनीसौः इत्यन्तं ५१। मूलं क्लींअं:मालिनीसौः इत्यादि मू० क्लींक्षं:मालिनीसौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। इत्थं चतुर्विधमातृकाक्षरैः प्रत्येकं मायावाग्भवकामराजबीजैः सह द्वादशाधिकषट्(६१२)शतवारं जपेत्।

ततः मूलं ह्रींअमातङ्गीसौः इत्यादि मू० ह्रींक्षमातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ह्रींअंमातङ्गीसौः इत्यादि मू० ह्रींक्षंमातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ह्रींअ:मातङ्गीसौः इत्यादि मू० ह्रींक्ष:मातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ह्रींअं:मातङ्गीसौः इत्यादि मू० ह्रींक्षंमातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। पुनः मूलं ऐंअमातङ्गीसौः इत्यादि मू० ऐंक्षमातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअंमातङ्गीसौः इत्यादि मू० ऐंक्षंमातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअ:मातङ्गीसौः इत्यादि मू० ऐंक्ष:मातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअं:मातङ्गीसौः इत्यादि मू० ऐं क्षं:मातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। पुनः मूलं क्लींअमातङ्गीसौः इत्यादि मू० क्लींक्षमातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० क्लींअंमातङ्गीसौः इत्यादि मू० क्लींक्षंमातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० क्लींअं:मातङ्गीसौः इत्यादि मू० क्लींक्षं:मातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। मू० क्लींअ:मातङ्गीसौः इत्यादि मू० क्लींक्ष:मातङ्गीसौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। इत्थं चतुर्विधमातृकाक्षरैः प्रत्येकं मायावाग्भवकामराजबीजैः सह द्वादशाधिकषट्शत(६१२)वारं जपेत्।

ततः मूलं ह्रींअविजयासौ इत्यादि मू० ह्रींक्षविजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० ह्रींअंविजयासौः इत्यादि मू० ह्रींक्षंविजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० ह्रींअ:विजयासौः इत्यादि मू० ह्रींक्ष:विजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० ह्रींअं:विजयासौः इत्यादि मू० ह्रींक्षं:विजयासौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। पुनः मूलं ऐंअविजयासौः इत्यादि मू० ऐंक्षविजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअंविजयासौः इत्यादि मू० ऐंक्षंविजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० ऐंअं:विजयासौः इत्यादि मू० ऐंक्ष:विजयासौ इत्यन्तं ५१। (२०४) पुनर्मलं क्लींअविजयासौः इत्यादि मू० क्लींक्षविजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० क्लींअंविजयासौः इत्यादि मू० क्लींअंविजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० वलींक्ष:विजयासौः इत्यादि मू० क्लींअं:विजयासौः इत्यन्तं ५१। मू० क्लींअं:विजयासौः इत्यादि मू० क्लींक्षं:विजयासौः इत्यन्तं ५१। (२०४)। इत्थं चतुर्विधमातृकाक्षरैः प्रत्येकं मायावाग्भवकामराजबीजैः सह द्वादशाधिकषट्शत(६१२)वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअजयासौः इत्यादि५१। मू० ह्रींअंजयासौः इत्यादि ५१। मू० ह्रींअ:जयासौः इत्यादि ५१। मू० ह्रींअं:जयासौः इत्यादि ५१। (२०४) । पुनर्मूलं ऐंअंजयासौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअजयासौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअ:जयासौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअं:जयासौः इत्यादि ५१। (२०४)। पुनर्मूलं क्लींअंजयासौः इत्यादि ५१। मूलं क्लींअंजयासौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअ:जयासौः इत्यादि ५१। मूलं क्लीअं:जयासौः इत्यादि ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वरीत्या (६१२) वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअभगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्रींअंभगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्रींअ:भगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्रींअं:भगवतीसौः इत्यादि ५१। (२०४)। पुनर्मूलं ऐंअभगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंभगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअ:भगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअं:भगवतीसौः इत्यादि ५१। (२०४)। मूलं क्लींअभगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअंभगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअ:भगवतीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअं:भगवतीसौ इत्यादि ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वरीत्या (६१२) वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअदेवीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्रींअंदेवीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्रींअ:देवीसौः इत्यादि ५१। मू०

ह्लींअःदेवीसौः इत्यादि ५१। (२०४) पुनः मूलं ऐंअदेवीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंदेवीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअःदेवीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंःदेवीसौः इत्यादि ५१। (२०४)। पुनः मू० क्लींअदेवीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअंदेवीसौः इत्यादि ५१! मू० क्लींअःदेवीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअंःदेवीसौः इत्यादि ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वरीत्या (६१२) वारं जपेत्।

पुनं मूलं ह्लींअशिवासौः इत्यादि ५१। मू० ह्लींअंशिवासौः इत्यादि ५१। मू० ह्लींअःशिवासौः इत्यादि ५१। मू० ह्लींअंःशिवासौः इत्यादि ५१। (२०४)। पुनर्मू० ऐंअशिवासौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंशिवासौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअःशिवासौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंःशिवासौः इत्यादि ५१। (२०४)। पुनः मूलं क्लींअशिवासौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअंशिवासौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअःशिवासौः इत्यादि ५१। मूलं क्लींअंःशिवासौः इत्यादि ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्लींअशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्लींअंशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्लींअःशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० ह्लींअंःशांभवीसौः इत्यादि ५१। (२०४)। पुनर्मूलं ऐंअशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंःशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० ऐंअंःशांभवीसौः इत्यादि ५१। (२०४)। पुनर्मूनं क्लींअशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअंशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअःशांभवीसौः इत्यादि ५१। मू० क्लींअंःशांभवीसौः इत्यादि ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वरीत्या (६१२) वारं जपेत्। इति संभूयैकस्मिन्दिने विंशत्युत्तरैकशताधिक-षट्सहस्र(६१२०)जपो भवति मूलविद्यायाः।

ततो द्वितीयदिने प्राग्वदासनादिपूजान्ते—मू० ह्लींअकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० ह्लींअंकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० ह्लींअःकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० ह्लींअंःकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१।(२०४)। पुनर्मूलं ऐंअकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० ऐंअंकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० ऐंअःकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० ऐंअंःकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। (२०४)। पुनर्मू० क्लींअकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० क्लींअंकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० क्लींअःकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। मू० क्लींअंःकाली हस्रीं सह्लीं इत्यादि ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वप्रकारेण ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्लींअकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअंकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअःकला हस्रीं सह्लीं ५१। मूलं ह्लींअंःकला हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। पुनः मू० ऐंअंकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअंकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअःकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअंःकला हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। मूलं क्लींअकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० क्लींअंकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० क्लींअःकला हस्रीं सह्लीं ५१। मू० क्लींअंःकला हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वरीत्या संभूय ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्लींअमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअंमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअःमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअंःमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। पुनर्मू० ऐंअमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअंमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअःमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअंःमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। पुनः मू० क्लींअमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० क्लींअंमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० क्लींअःमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० क्लींअंःमालिनी हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। इत्थं संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्लींअमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअंमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअःमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ह्लींअंःमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। मूलं ऐंअमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअंमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअःमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। मू० ऐंअंःमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१। (२०४)। मूलं क्लींअमातङ्गी हस्रीं सह्लीं ५१।

मू० क्लींअंमातङ्गी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअ:मातङ्गी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअं:मातङ्गी हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। इत्थं संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअविजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअंविजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअ:विजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअं:विजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। पुन: मू० ऐंअविजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअंविजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअं:विजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअं:विजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। मूलं क्लींअविजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअंविजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअ:विजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअं:विजया हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। इत्थं पूर्वरीत्या संभूय ६१२ वारं जपेत्।

पुन: मूलं ह्रींअजयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअंजयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअ:जयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअं:जयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। पुनर्मू० ऐंअजयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअंजयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअ:जयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअं:जयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। मूलं क्लींअजयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअंजयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअ:जया हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअं:जयाहस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। इत्थं संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअभगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअंभगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअ:भगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअं:भगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ मूलं ऐंअभगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। ऐंअंभगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू०ऐंअ:भगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअं:भगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। मूलं क्लींअभगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअंभगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअ:भगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअं:भगवती हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ इत्थं संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअदेवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअंदेवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअ:देवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअं:देवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ मू० ऐंअदेवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअंदेवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअ:देवी हस्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअं: देवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ मूलं क्लींअदेवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअंदेवी हस्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअ:देवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअं:देवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ इत्थं संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअशिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअंशिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअ:शिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअं:शिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ मूलं ऐंअशिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअंशिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअ:शिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअं:शिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ मूलं क्लींअशिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअंशिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअ:शिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअं:शिवा हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ इत्थं संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्।

पुनर्मूलं ह्रींअशांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअंशांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। म० ह्रींअ:शांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ह्रींअं:शांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ मूलं ऐंअशांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअंशांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअ:शांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० ऐंअं:शांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)॥ मू० क्लींअशांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअंशांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअ:शांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। मू० क्लींअं:शांभवी हस्त्रीं सह्रीं ५१। (२०४)। इत्थं संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपेत्। इत्थं द्वितीयदिनेऽपि (६१२०) वारं श्रीमूलविद्याजपो भवति।

ततस्तृतीयदिने प्राग्वदासनादिमानसपूजान्ते—मूलं ह्रींअकालीवौषट्। एवं चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह २०४।

ततो मू० ऐंअकालीवौषट्। एवं चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह २०४। मू० क्लींअकालीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह २०४। इत्थं प्रागुक्तरीत्या संभूय ६१२ वारं जपो भवति।

ततो मूलं ह्रींअकलावौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० ऐंअकलावौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० क्लींअकलावौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय। ६१२ वारं जपो भवति।

ततो मूलं ह्रींअमालिनीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मूलं ऐंअमालिनीवौषट्।चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मूलं क्लींअमालिनीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय पूर्वरीत्या ६१२ वारं जपो भवति।

ततो मूलं ह्रींअमातङ्गीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० ऐंअमातङ्गीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० क्लींअमातङ्गीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह पूर्वरीत्या (२०४)। संभूय ६१२ वारं जपो भवति।

मूलं ह्रींअविजयावौषट्।चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० ऐंअविजयावौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० क्लींअविजयावौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय ६१२ वारं जपो भवति।

मूलं ह्रींअजयावौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० ऐंअजयावौषट्। एवं मातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० क्लींअजयावौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय ६१२ वारं जपो भवति।

मूलं ह्रींअभगवतीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मूलं ऐंअभगवतीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मूलं क्लींअभगवतीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय ६१२ वारं जपो भवति।

मूलं ह्रींअदेवीवौषट्। इत्यादि चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० ऐंअदेवीवौषट्। इत्यादि प्रोक्तमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मूलं क्लींअदेवीवौषट्। इत्यादि प्रोक्तमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय ६१२ वारं जपो भवति।

मूलं ह्रींअशिवावौषट्। इत्यादि चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० ऐंअशिवावौषट्। इत्यादिचतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० क्लींअशिवावौषट्। इत्यादि चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय ६१२ वारं जपो भवति।

मूलं ह्रींअशाम्भवीवौषट्। इत्यादि चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मूलं ऐंअशाम्भवीवौषट्। चतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। मू० क्लींअशाम्भवीवौषट्। इत्यादिचतुर्विधमातृकाक्षरैः सह (२०४)। संभूय (६१२)। इत्थं तृतीयदिनेऽपि (६१२०) वारं मूलविद्याजपो भवति।

अथ चतुर्थदिने प्राग्वदासनादिमानसपूजान्ते—मू० ह्रींअकालीआह इत्यादि मायावाग्भवकामबीजैः प्रतिबीजं केवल-बिन्दु-विसर्ग-बिन्दुविसर्गयुक्तैर्मातृकाक्षरैः सह (६१२) वारं जपेत्। ततो मूलं ह्रींअकलाआह इत्यादि प्राग्वत् (६१२)। मू० ह्रींअमालिनीआह इत्यादि प्राग्वत् (६१२)। मू० ह्रींअमातङ्गीआह इत्यादि प्राग्वत् ६१२। मू० ह्रींअविजयाआह इत्यादि प्राग्वत् (६१२) मू० ह्रींअजयाआह इत्यादि प्राग्वत् ६१२। मू० ह्रींअभगवतीआह इत्यादि प्राग्वत् (६१२)। मू० ह्रींअदेवीआह इत्यादि प्राग्वत् (६१२)। मू० ह्रींअशिवाआह इत्यादि प्राग्वत् (६१२)। मू० ह्रींअशाम्भवीआह इत्यादि प्राग्वत् (६१२)। इत्थं संभूय चतुर्थदिनेऽपि (६१२०) वारं जपो भवति मूलविद्यायाः।

ततः पञ्चमदिने प्राग्वदासनादिमानसपूजान्ते—मूलं ह्रींअकलाह्स्त्रैंह्स्क्लींरींहस्त्रौंः एवं बीजत्रयादिचतुर्विधमातृकाक्षरैः सह काल्यादिदशनामभिः प्राग्वत् (६१२०) वारं जपेत्।

ततः षष्ठदिने प्राग्वदासनादिकल्पनान्ते मू० ह्रींअकालींह्रीं इत्यादि प्राग्वत् (६१२०) वारं जपेत्।

ततः सप्तमदिने प्राग्वदासनाद्यन्ते मू० ह्रींअकाली ह ५ ह ६ स ४ इत्यादि प्राग्वत् (६१२०) वारं जपेत्।

ततोऽष्टमदिने प्राग्वदासनाद्यन्ते मू० ह्रींअकालीहस्त्रौं सह्रौं इत्यादि प्राग्वत् (६१२०) वारं जपेत्।

ततो नवमदिने प्राग्वदासनाद्यन्ते मू० ह्रींअकालीहसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौः इत्यादि प्राग्वत् (६१२०) वारं जपेत्।

ततो दशमदिने प्राग्वदासनादिमानसपूजान्ते मू० ह्रींअकालीऐंक्लींसौः इत्यादि प्राग्वत् (६१२०) वारं जपेदिति मन्त्रपारायणक्रमः।

अस्मिन् पारायणजपे प्रोक्तक्रमेण दशभिर्दिनैः पर्यायो भवति। एवं दशभिर्दिनैः कर्तुमशक्तैरेकदिनस्य जपं पञ्चधा विभज्य नामद्वयस्य चतुर्विंशत्युत्तरद्विशताधिकसहस्रसंख्यं (१२२४) प्रत्यहं जपः कार्यः। ततः पञ्चाशता दिनैः पर्यायो भवति। अत्राप्यशक्तैः एकैकनाम्ना प्रतिबीजं चतुर्विधमातृकाक्षरैः सञ्जातद्वादशाधिकषट्शतसंख्यं (६१२) वा प्रत्यहं जपः कार्यः। तदा शतसंख्यैर्दिनैः पर्यायो भवति। एवमुक्तपर्यायेऽप्येकपर्यायानुसारेण साधकैर्मन्त्रपारायणजपः कार्य इति। अत्र पारायणक्रमे प्रागुक्तनामपारायणवदहर्गणादिविचाराभावाद्यदा गुरूपदेशः स्यात् तदैवारभ्य प्रोक्तविधिना साधकैः पारायणजपः कार्य इति। अत्र पारायणे काम्यफलादिकं नामपारायणोक्तमेव ज्ञेयं पृथक्फलानुक्तेः। 'एवं यः कुरुते नित्यं मन्त्रपारायणं बुधः। भुक्त्वेह भोगानखिलानन्ते देवीपदं व्रजेत्'। इति।

कादि मत की रीति से मन्त्रपारायण क्रम—श्री धर्माचार्यवर्य ने अपने लघुस्तव में मायाकुण्डलिनी इत्यादि श्लोक द्वारा सूचित किया है कि माया ह्रीं, कुण्डलिनी ऐं, क्रिया क्लीं, मधुमती अर्थात् शुद्धा, बिन्दुयुक्ता, बिन्दु, विसर्गयुक्ता—ये चार प्रकार की मातृकायें होती हैं। काली आदि दश विद्यायें हैं। प्रातः नित्य कृत्य करने के बाद विविक्त स्थान में अपना आसन बिछाकर 'आधारशक्तिकमलासनाय नमः' से उसकी पूजा करे। उस पर पूर्वमुख होकर बैठे। गुरु, गणपति एवं परदेवता को प्रणाम करे। मूल विद्या से ऋष्यादि कर-षडङ्ग न्यास करे। चतुरासन देवताष्टक का न्यास करके देवी का ध्यान करे। तदनन्तर मानसोपचार पूजा करके श्री परदेवतात्मक पारायण जप ॐ मूल विद्या ह्रीं अ काली सौः इत्यादि मूलोक्त क्रम से इक्यावन बार जप करे। इस प्रकार बिन्दु सहित मातृकाओं से इक्यावन बार जप करके पुनः मूल ह्रीं अः काली सौः इत्यादि रीति से विसर्गसहित मातृकाक्षरों से इक्यावन बार जप करे।

तदनन्तर मूल ह्रीं अंः काली सौः रीति से इत्यादि बिन्दु विसर्गसहित मातृकाक्षरों से इक्यावन बार जप करे। मायाबीज के साथ चतुर्विध मातृकाक्षरों के सहित मूल विद्या का जप करने पर जपसंख्या २०४ होती है। पुनः मूल ऐं अं काली सौः से इक्यावन से मूल ऐं क्षः काली सौ तक मूल ऐं अं काली सौः से मूल ऐं क्षं काली सौः तक इक्यावन, मूल ऐं अः काली सौः से मूल ऐं क्षः काली सौः तक इक्यावन, मूल ऐं अंः काली सौः से मूल ऐं मूल ऐं क्षः काली सौः तक इक्यावन प्रकार वाग्भव बीज के साथ चतुर्विध मातृकाक्षरों के जप से २०४ बार मूल विद्या का जप होता है।

पुनः मूल क्लीं अं काली सौः से मूल क्लीं क्षं काली सौः तक इक्यावन, मूल क्लीं अं काली सौः से मूल क्लीं क्षं काली सौः तक इक्यावन, मूल क्लीं अः काली सौः से मूल क्लीं क्षः काली सौः तक इक्यावन एवं मूल क्लीं अंः काली सौः से मूल क्लीं क्षंः काली सौः तक इक्यावन—इस प्रकार चतुर्विध मातृकाक्षरों का ह्रीं ऐं क्लीं के साथ जप करने से ६१२ जप मूलविद्या का होता है।

पुनः मूल ह्रीं अंः कला सौः इत्यादि इक्यावन, मूल ह्रीं अं कला सौः इत्यादि इक्यावन, मूल ह्रीं अः कला सौः इत्यादि इक्यावन, मूल हीं अंः कला सौः इत्यादि इक्यावन—इस प्रकार कुल दो सौ चार जप होते हैं। मूल ऐं अंः कला सौः इत्यादि इक्यावन, मूल ऐं अं कला सौः इत्यादि इक्यावन, मूल ऐं आं कला सौः इत्यादि इक्यावन एवं मूल ऐं अंः कला सौः इत्यादि इक्यावन—कुल दो सौ चार जप होते हैं।

मूल क्लीं अः कला सौः इत्यादि इक्यावन, मूल क्लीं अं कला सौः इत्यादि इक्यावन, मूल क्लीं अः कला सौः

इत्यादि इक्यावन एवं मूल क्लीं अं: कला सौ इत्यादि इक्यावन—कुल दो सौ चार जप होते हैं। इस प्रकार चतुर्विध मातृकाक्षरों से प्रत्येक का ह्रीं ऐं क्लीं बीजों के साथ जप से ६१२ बार मूल विद्या का जप होता है।

इसी प्रकार मालिनी के साथ ६१२, मातङ्गी के साथ ६१२, विजया के साथ ६१२, जया के साथ ६१२, भगवती के साथ ६१२, देवी के साथ ६१२, शिवा के साथ ६१२, शाम्भवी के साथ ६१२ जप होते हैं। कुल मिलाकर ६१२० जप मूल विद्या के होते हैं। यह प्रथम दिन का जप है। इसी रीति से क्रमश: दश दिनों तक जप होता है।

इस पारायण जप में प्रोक्त क्रम से दश दिनों में पर्याय होता है। इस प्रकार दश दिनों तक करने में अशक्त होने पर एक दिन के जप का पाँच भाग करके दो नामों के साथ १२२४ जप प्रतिदिन करना चाहिये। तब पचास दिनों में पर्याय होता है। इसमें अशक्त होने पर एक-एक नाम के साथ चतुर्विध मातृकाक्षरों से (६१२) जप प्रतिदिन करे। इस प्रकार के जप से सौ दिनों का पर्याय होता है। इस प्रकार के उक्त पर्यायों में से किसी एक पर्याय के अनुसार साधक मन्त्रपारायण जप करे। इस पारायण क्रम में अहर्गणादि का विचार न होने से गुरु के उपदेशानुसार कथित विधि से साधक पारायण जप करे। इस पारायण के काम्य फलादि नामपारायण के समान ही होते हैं। इसीलिये पृथक् फल नहीं कहा गया है। कहा गया है कि इस प्रकार नित्य जो मन्त्रपारायण करता है, वह इस मर्त्यलोक में समस्त भोगों को भोग कर अन्त में देवी पद को प्राप्त करता है।

ललितायाः स्वरूपभेदसमुत्थमन्त्राणामुपदेशः

अथ कादिमतोक्तललितायन्त्राणि लिख्यन्ते। श्रीतन्त्रराजे (३३शे पटले)—

अथ षोडशनित्यानामाद्या या ललितोदिता। तस्या यन्त्राणि कथ्यन्ते तद्विद्याभेदसंभवैः ॥१॥
रूपैः षष्टिसमोपेतनवशत्या यथाविधि। समस्तवाञ्छितावाप्तिकारणानि कृतात्मनाम् ॥२॥
ललितानित्यपूजायां यन्त्रं विश्वात्मविग्रहम्। षोडशानां च तस्याश्च पूजाकमलचक्रकम् ॥३॥
अमृताख्यघटं यन्त्रं सिद्धवज्रमतः परम्। कोष्ठवज्रं वज्रलिङ्गं मेरुलिङ्गं यथाविधि ॥४॥
महालिङ्गं योनियन्त्रं तथा तद्वज्रवज्रकम्। तदेव च महाकारं कोष्ठयन्त्राणि च क्रमात् ॥५॥
नवहस्तं त्रिहस्तं वा श्रीचक्रमभिषेचने। कुर्यात् स्थण्डिलपूजायां हस्तमात्रेऽतिसुन्दरम् ॥६॥
रत्नादिषु तु निर्माणे मानमिच्छावशाद्भवेत्। यदा सुविहिते पूजा शुभान्यस्मिंस्तथान्यथा ॥७॥
भ्रमेण वृत्तं निष्पाद्य सुसमे चतुरस्रके। प्रमृज्य तिर्यङ्मध्यस्थं सूत्रं तिर्यङ् निपातयेत् ॥८॥
सूत्राणि नव तेषु द्वे वृत्तस्पृष्टोभयान्तके। निधाय तद्द्वयोरन्तान्मध्यसूत्रान्ततः क्रमात् ॥९॥
कृते सूत्रचतुष्के तु षट्कोणं स्यात् त्रिसप्तगम्। द्व्यष्टाग्रतः समारम्भान्नवमं प्रथमान्तरा ॥१०॥
कुर्यात् सूत्रचतुष्के तु (चतुर्मर्मानुगुण्यतः। नवमप्रथमाग्राभ्यां तुर्यसप्तमकावधि ॥११॥
कुर्यात् सूत्रचतुष्के तु) मर्माष्टकविभेदनात्। ततश्चतुर्थषष्ठान्तद्वयारम्भात् तथाष्टगम् ॥१२॥
द्वितीयगं च सूत्राणां चतुष्कं पातयेत्तथा। चतुर्मर्मानुगुण्येन ततः पञ्चमकान्तयोः ॥१३॥
तृतीयगं सूत्रयुगं कुर्यान्मर्मद्वयाश्रयम्। मार्जयेन्मध्यगं ब्रह्मसूत्रं स्याच्चक्रमुत्तमम् ॥१४॥
बहिरष्टच्छदाम्भोजं तथा तद्द्विगुणच्छदम्। विधाय षड्भिर्वृत्तैश्च चतुरस्रं तथाष्टभिः ॥१५॥
सूत्रैर्विधाय तस्यैव प्राक्प्रत्यग्द्वारसंयुतम्। दक्षिणोत्तरतो रेखात्रयात् स्थानद्वयात् तथा ॥१६॥
कोणेषु तिर्य्यक्सूत्रैश्च चतुर्भिस्तान्यनुक्रमात्। द्विधा कुर्याच्च चत्वारि पदानि परमेश्वरि ॥१७॥
ललितार्चाचक्रमिदं लभ्यं सद्गुरुतः क्रमात्। सुन्दरं सुसमं सर्वलक्षणैश्च समन्वितम् ॥१८॥
अधोमुखैः पञ्चभिश्च चतुर्भिश्च तथोर्ध्वगैः। नवभिस्त्वेकसूत्रस्थैः स्यादेतदतिसुन्दरम् ॥१९॥
वृत्तस्पृष्टषडस्रं च तदस्पृष्टाष्टकं तथा। मर्मभिश्चाष्टदशभिर्युतं चक्रं सुलक्षणम् ॥२०॥
षड्रेखासन्धिमर्माख्यं सन्ध्याख्यद्वयसङ्गमात्। तच्चतुर्विंशतियुतं चक्रं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥२१॥
अन्यथा भिन्नमर्मादियुतचक्रसमर्चनात्। शस्त्राद् भयं महाव्याधिं दारिद्र्यमयशो मृतिम् ॥२२॥

तस्माल्लक्षणसंयुक्तमुक्तरूपं विधाय वै। चक्रं तत्रैव तां नित्यमर्चयन् मत्समो भवेत् ॥२३॥
विधाय वृत्तयोर्मध्यं चत्वारिंशत् सहाष्टभिः। प्रागादितिर्यक्सूत्राणि षट्सु षट्सु च पञ्चसु ॥२४॥
पश्चिमात् षट्त्रयेऽप्येवं तन्मध्ये मर्मयुक्तितः। विदध्यात् त्रीणि सूत्राणि कुर्यात् तेनातिसुन्दरम् ॥२५॥
त्र्यस्रं वृत्तं पञ्चदशच्छदानि च ततो बहिः। अष्टपत्राम्बुजं बाह्ये दशच्छदसरोरुहम् ॥२६॥
पुनर्दशच्छदं पद्मं चतुर्दशदलं ततः। अष्टच्छदाब्जं द्विगुणच्छदमष्टादशच्छदम् ॥२७॥
विधाय तस्य मध्ये तां समावाह्य यजेत्तथा। पश्चान्नाथान् पार्श्वयोश्च हेतीरन्यास्तथार्चयेत् ॥२८॥
एतस्मिन् पद्मचक्रस्य मध्ये तासां प्रपूजनात्। महतीं श्रियमाप्नोति ज्ञानान्मां च समाप्नुयात् ॥२९॥
पूर्वस्मिन् पूजयेद् देवीमुक्तक्रमसमन्वितम्। श्रियं ज्ञानात्तथावां च संयाति परमेश्वरि ॥३०॥

कादि मतोक्त ललिता यन्त्र—श्री तन्त्रराज में कहा गया है कि सोलह नित्याओं में ललिता पहली नित्या है। विद्याभेद से सम्भूत उसके यन्त्र नौ सौ साठ हैं। इनसे सभी वाञ्छाओं की प्राप्ति होती है। ललिता नित्या का पूजा यन्त्र विश्वात्मविग्रह है। उसके जो पूजाकमलचक्र हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं—अमृतघट, सिद्धवज्र, कोष्ठवज्र, वज्रलिङ्ग, मेरुलिङ्ग, महालिङ्ग, योनियन्त्र, वज्रचक्र एवं महाकारकोष्ठ यन्त्र। अभिषेक के लिये नव हाथ या तीन हाथ का चक्र बनता है। एक हाथ का स्थण्डिल पूजा के लिये बनता है। रत्नादि का यन्त्र-निर्माण इच्छानुसार होता है। विहित पूजा इसमें जितनी शुभ होती है, उतनी और कहीं नहीं होती।

समतल चतुरस्र वृत्त बनाकर पूरब से पश्चिम नव और उत्तर से दक्षिण नव सूत्रों का निपातन करे। तिर्यक् नव सूत्रों में से पश्चिम से तीसरे सूत्र के वृत्त को छूने वाले दोनों अग्रों से प्रारम्भ करके सातवें सूत्र के मध्य में मिला दे। सप्तम सूत्राग्रों से प्रारम्भ करके तृतीय सूत्र के मध्य में मिला दे। इससे एक षट्कोण बनता है। तब नवम सूत्राग्र से प्रारम्भ करके चौथे सूत्र के मध्य में मिला दे। चौथे सूत्राग्र से प्रारम्भ करके सप्तम सूत्र के मध्य में मिला दे। चतुर्थ सूत्राग्र से आरम्भ करके अष्टम के मध्य में मिला दे। छठे सूत्राग्र से आरम्भ करके द्वितीय सूत्र के मध्य में मिला दे। पञ्चम सूत्राग्र से प्रारम्भ करके तृतीय सूत्र के मध्य में मिला दे। इससे बिन्दु से चतुर्दशार तक के प्रधान यन्त्र बिन्दु त्रिकोण अष्टकोण अन्तर्दशार बहिर्दशार चतुर्दशार बन जाते हैं। इसमें अट्ठारह मर्म, चौबीस सन्धि और तैंतालीस त्रिकोण होते हैं। इसके बाहर अष्टदल बनावे। इसके बाहर षोडश दल बनावे। इसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र बनावे।

यह ललिता चक्र क्रमशः गुरु से लब्ध है। इसे सुन्दर, सुसम एवं सर्व लक्षणों से सम्पन्न बनाना चाहिये। इसमें पाँच त्रिकोण अधोमुख और चार त्रिकोण ऊर्ध्वमुख होते हैं। कहा गया है कि कुलाचार समयाचार सम्प्रदाय और आचार्यभेद से श्रीयन्त्रलेखन के अनेक प्रकारों का वर्णन मिलता है। श्रीयन्त्र में अट्ठारह मर्म और चौबीस सन्धियाँ होती हैं। दूसरे प्रकार से भिन्न मर्मों से युक्त चक्र के पूजन से शस्त्राघात, महाव्याधि, दारिद्र्य, अपयश और मृत्यु होती है। इसलिये पूर्वोक्त विधान से श्रीयन्त्र बनाकर नित्य अर्चन करने से मनुष्य शिव के समान हो जाता है।

अब वृत्त के मध्य में बिन्दु से चतुर्दशार तक बनाने के लिये इस वृत्त के बीच में एक ब्रह्मसूत्र देकर उसे अड़तालीस भागों में बाँट दे। इस ब्रह्मसूत्र के भागों के आधार पर पूर्व से पश्चिम की ओर क्रमशः छः-छः, पाँच-पाँच, तीन-तीन, तीन-तीन, छः-छः भागों के अन्तर पर नव-नव तिर्यक् रेखाएँ खींचे। इससे छठे भाग में मर्यादा वृत्त बनावे। इन सभी रेखाओं का समान आयाम अभीष्ट नहीं है। इसलिये विभिन्न मान से विभिन्न रेखाओं के दोनों सिरों को मिटा दे। मिटाने का मान इस प्रकार है—प्रथम-नवम सूत्र के दोनों ओर पाँच-पाँच अंश मिटावे। तीसरी-सातवीं रेखा का वृत्त स्पृष्ट रखे। चौथी-छठी रेखा के दोनों ओर सोलह-सोलह अंश मिटावे। पञ्चम रेखा के दोनों ओर अट्ठारह-अट्ठारह अंश मिटावे। अब उपर्युक्त रेखाओं के परस्पर संयोग से त्रिकोण बनावे। इस क्रम में रेखाओं की गणना पश्चिम से करनी चाहिये। तृतीय रेखा के वृत्त से सटे हुए दोनों छोरों से पूर्व की ओर पार्श्व रेखाएँ खींचकर वृत्त तक पहुँचे ब्रह्मसूत्र में त्रिकोण बनाता हुआ मिला दे। पुनः सप्तम सूत्र के वृत्त स्पृष्ट दोनों अग्रों से दो पार्श्व रेखाएँ खींचकर पश्चिम की ओर ले जाकर ब्रह्मसूत्राग्र से मिला दे। इससे एक षट्कोण बनता है।

प्रथम पश्चिम रेखा मध्य से दो पार्श्व रेखाएँ खींचकर अष्टम रेखा के दोनों अग्र भागों से जोड़ दे। इस प्रकार इन दोनों रेखाओं से षट्कोण के पश्चिम भाग से पूर्व की ओर दो मर्म बनते हैं। इसके बाद नवम रेखा के मध्य भाग से दो रेखाएँ पश्चिम की ओर खींचकर द्वितीय रेखा के दोनों अग्रों से मिला दे। इससे षट्कोण के पश्चिम भाग में दो और मर्म बन जाते हैं।

पुन: नवम रेखा के दोनों अग्रों से दो पार्श्व रेखाएँ पश्चिम की ओर ले जाकर चतुर्थ रेखा के मध्य में मिला दे। इन दोनों रेखाओं को खींचते समय ध्यान रहे कि सप्तम अष्टम तिर्यक् रेखा के सन्धिस्थानों का भेदन होने से चार मर्म बन जायँ। पुन: सप्तम सूत्र के मध्य से पश्चिम की ओर दोनों पार्श्वों में दो-दो मर्म बनाती हुई दो रेखाएँ खींचकर प्रथम पश्चिम रेखा के दोनों अग्रों से जोड़ दे। इससे चार मर्म और बनते हैं। पुन: अष्टम रेखा के मध्य से दो पार्श्व रेखाएँ पश्चिम की ओर खींचकर चतुर्थ रेखा के अग्रों से मिला दे। छठी रेखा के दोनों अग्रों से दो पार्श्व रेखाएँ खींचकर पश्चिम की ओर द्वितीय रेखादि मध्य में त्रिकोण बनाते हुए मिला दे। पञ्चम रेखा के दोनों अग्रों से दो रेखाएँ पश्चिम की ओर खींचकर सप्तम रेखा के मध्य में त्रिकोण बनाते हुए मिला दे। अन्त में ब्रह्मसूत्र को मिटा दे। इससे चर्तुदशार तक श्रीयन्त्र बन जायेगा। इसके बाहर अष्टदल षोड़शदल भूपुर बनावे। इस प्रकार के यन्त्र में देवी का आवाहन करके पूजा करे। इसके बाद पार्श्वों में गुरुओं की तथा अस्त्रों की पूजा करो। इस पद्म चक्र में उसकी पूजा करने से बहुत धन मिलता है, ज्ञान-सम्मान मिलता है। उक्त क्रमसमन्वित देवी की पूजा करने से धन और ज्ञान प्राप्त होते हैं।

अमृतघटाख्ययन्त्रप्रयोगफलम्

घटद्वयं समालिख्य बाह्याभ्यन्तरभेदत: । तन्मध्यं नवधा कृत्वा कोणेषु प्रथमं लिखेत् ॥३१॥
द्वितीयं दिक्षु संलिख्य मध्ये तार्तीयमालिखेत् । घटयोरन्तरा कृत्वा तिर्यग्रेखा: समन्तत: ॥३२॥
तेषु प्रदक्षिणं विद्यात् तार्तीयाक्षरसप्तकम् । लिखेद् बिन्दुविसर्गाभ्यां लिखेत् पञ्चामृताम्बुजम् ॥३३॥
आद्यनालमयं द्वन्द्वपत्रकेसरकर्णिकम् । विधाय च घटाधस्ताद् विदध्याद् विनियोगकम् ॥३४॥
मध्ये साध्याक्षरोपेतं कृत्वा तममृतं घटम् । बिभृयादभिषिञ्चेच्च जन्मर्क्षेष्वायुराप्तये ॥३५॥
कुहूपरागसंक्रान्तिदोषेष्वखिलशान्तये । अभिषिञ्चेदशेषार्तिशान्त्यै सिद्ध्यै च सम्प्रदाम् ॥३६॥
अपमृत्युमहारोगक्षयापस्मारशान्तये । त्रिवर्षमभिषेकं तु कुर्याज्जन्मत्रये तथा ॥३७॥
सर्वक्लेशविनिर्मुक्त: सुखी: वर्षशतं भुवि । अरोगी विजयी विश्ववन्द्यो भवति मानव: ॥३८॥
सौवर्णे राजते ताम्रे कृत्वैतत् सिक्थलिङ्गकम् । विधाय स्थापयेत् क्षौद्रे यजेत् सर्वापमृत्युजित् ॥३९॥
तार्तीयविद्यापुटितं नामालिख्य तु साधक: । ऊर्मिकादौ वहेत् सर्वसंपदेऽरिष्टशान्तये ॥४०॥
कृत्वाश्मनि तथा यन्त्रं तडागादिषु मध्यत: । स्थापयेत्तत्र ये स्नाता: नरा: स्यु: सुखिनोऽनिशम् ॥४१॥

अमृतघट यन्त्र—समतल भूमि पर अभीष्ट मान से वृत्त बनाकर उसके बाहर एक अंगुल के मान से दूसरा वृत्त बनावे। मध्य वृत्त में पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर दो-दो रेखाओं के समान दूरी पर खींचने से नव कोष्ठ बनते हैं। चारो कोणकोष्ठों में श्रीविद्या के प्रथम खण्ड को लिखे। चारो दिशाओं के कोष्ठों में द्वितीय खण्ड को लिखे। मध्य कोष्ठ में श्रीविद्या के तृतीय खण्ड को लिखे। वृत्तों के अन्तराल का सात सम भाग करके उनमें श्रीविद्या के तीसरे खण्ड के व्यस्त रूप सात अक्षरों को लिखे। पूर्व के कोष्ठमध्य में घट का मुख बनावे। उसमें अधोमुख कमल बनावे। घट के नीचे ऊर्ध्वमुख कमल बनावे। कमल के नाल में ॐ जं: लिखे। पत्रों में ॐ ज: ॐ ठ:—इन चार अक्षरों को लिखे। केसर में वं व: और कर्णिका में सं स: लिखे। ऐसा करने से अमृतघट नामक यन्त्र बन जाता है।

तीनों जन्मदिनों में द्वितीय पटल में वर्णित अभिषेक-विधि से अभिषेक करे तो क्रूर दशा, गोचर इत्यादि की शान्ति होती है एवं वात आदि महारोगों की भी शान्ति होती है। तीन वर्षो तक अभिषेक करने से यह फल प्राप्त होता है। जुआ में एवं युद्ध में विजय होती है। सोने-चाँदी-ताम्बे के पत्र पर या सिक्थ लिङ्ग पर इसे बनाकर कलश में रखे। कलश को मधु से पूर्ण करे। कलश पर शरावपुट रखे। उसमें देवी का सावरण पूजन करे। यह पूजा तब तक करे जब तक कि अभीष्ट सिद्ध न हो जाय। इससे सभी प्रकार के अपमृत्यु की शान्ति होती है।

सोने के पत्र पर श्रीविद्या के तृतीय खण्ड को अनुलोम-विलोम क्रम से साध्य नाम कर्म को पुटित करके लिखे। केयूर आदि आभूषण में स्थापित करे। प्राण-प्रतिष्ठा करके पूजा करे। इसे धारण करने से उक्त फल प्राप्त होते है। इस यन्त्र को तालाब या नदी में स्थापित करने से उसमें स्नान करने वाले मनुष्य सुखी होते हैं।

सिद्धवज्रयन्त्रनिर्माणादि

प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्च सूत्रैरष्टभिराहितैः। कोष्ठान्येकोनपञ्चाशत् तेषु कोणेषु मार्जयेत् ॥४२॥
चतुर्विंशति कोष्ठानि शेषेषु विलिखेत् क्रमात्। दिक्ष्वेकतस्त्रिकोणानि प्रागारम्भात् प्रवेशतः ॥४३॥
तार्तीयस्य च भेदोत्थचतुर्विंशतिमालिखेत्। विलोमेनाथ मध्यस्थे तत् ससाध्यं समालिखेत् ॥४४॥
सिद्धवज्राभिधं यन्त्रमशेषशुभदायकम्। विनाशनमरिष्टानां जयसौभाग्यदायकम् ॥४५॥
समरे विजयप्राप्त्यै बिभृयात् तद्विवादजे। समस्ते धारयेत् क्लेशे विजयं सुखमाप्नुयात् ॥४६॥
प्रतिमासं च पूर्णायामभिषिञ्चेच्च तत्र वै। स्थापयित्वा घटं प्राग्वत् समस्ताभ्युदयाय वै ॥४७॥
पुत्राप्त्यै कन्यकावाप्त्यै वराप्त्यै कन्यका तथा। दाराधनपशुप्राप्त्यै नरनारीनृपादिनाम् ॥४८॥
वश्यायाविघ्नसंसिद्ध्यै वाक्सिद्ध्यै गेहसिद्धये। धारयेत् सिद्धवज्रं तु समस्तेषु प्रसिद्धये ॥४९॥
ललिताविद्यया विद्यामन्यां यन्त्रेण चामुना। यन्त्रमन्यत् समं वेत्ति योऽसौ स्यान्मूढचेतनः ॥५०॥

सिद्धवज्र यन्त्र—पूरब से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर समान दूरी पर आठ रेखाओं को खींचने से उनचास कोष्ठ बनते हैं। प्रत्येक कोण में छः छः कोष्ठों को मिटा देने से चौबीस कोष्ठ मिट जाते हैं और पच्चीस कोष्ठ शेष बचते हैं। इससे वज्र का आकार बनता है। इन पच्चीस कोष्ठों में पूर्वादि क्रम से श्रीविद्या के तृतीय खण्ड से निर्मित चौबीस अक्षरों को लिखे। मध्य में बचे एक कोष्ठ में शेष अक्षर को साध्य नाम के साथ लिखे। इससे जो सिद्ध यन्त्र बनता हैं, वह सभी शुभ फलों को देने वाला होता है। इससे अनिष्टों का नाश होता है एवं जय-सौभाग्य की प्राप्ति होती है। इससे विवाद में जीत होती हैं। इसके धारण करने से सभी क्लेशों का नाश होता है और सुख प्राप्त होते हैं। प्रत्येक माह की पूर्णिमा में घट में इसे स्थापित करके उसे जलपूर्ण करके उससे स्नान करने से सभी प्रकार का अभ्युदय होता है। इससे पुत्र-पुत्री की प्राप्ति, कन्या को वर की प्राप्ति, भूमि-धन-पशु की प्राप्ति सभी नर-नारी-नृपों को होती है। वश्य-सिद्धि, अविघ्न-सिद्धि, वाक्सिद्धि, गृहसिद्धि के लिये इस सिद्ध वज्रयन्त्र को धारण करना चाहिये। सभी सिद्धियों के लिये श्रींविद्या ललिता के इस यन्त्र के समान दूसरा कोई यन्त्र नहीं है। जो इसे अन्य यन्त्रों के समान जानता है, वह मूढ़ चेतना वाला होता है।

प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्च सूत्राण्यष्टादश क्षिपेत्। तैस्तत्र कोष्ठानि तथा नवशीतिशतद्वयम् ॥५१॥
तेषु कोणेषु कोष्ठानि मार्जयेत् पूर्ववत् प्रिये। षट्त्रिंशच्छिष्टवज्रे तु चतुर्भिर्दिक्त्रिकोणकम् ॥५२॥
विधाय, प्राग्बहिर्मध्यात् प्रादक्षिण्यप्रवेशतः। विलिखेत्तद् द्वितीयोत्थभेदांस्तु विलिखेत्ततः ॥५३॥
त्रिकोणेष्वथ तार्तीयं ससाध्यं मध्यतस्तथा। नवस्वपि लिखेद्विद्याकूटत्रयमथ त्रिशः ॥५४॥
दक्षत्रये त्वाद्यकूटं मध्ये तार्तीयकं तथा। वामत्रये द्वितीयं च लिखेत् साध्ये तृतीयकम् ॥५५॥
एतत्तु कोष्ठवज्राख्यं यन्त्रमिष्टार्थदायकम्।

कोष्ठवज्र यन्त्र—पूरब से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर समान दूरी पर अट्ठारह-अट्ठारह रेखाएँ खींचे। इससे दो सौ नवासी कोष्ठ बनते हैं। इनमें से चारों कोणों पर छत्तीस-छत्तीस कोष्ठों को मिटा दे। तब एक सौ पैंतालीस कोष्ठ शेष बचते हैं जो वज्राकर होते हैं। चारो दिशाओं में चार-चार कोष्ठों से त्रिकोण बनावे। तब शेष एक सौ उन्तीस कोष्ठों में पूर्व के पाँच कोष्ठों में से मध्य कोष्ठ से प्रारम्भ करके श्रीविद्या के तीसरे खण्ड के एक सौ बीस अक्षरों को प्रादक्षिण्य प्रवेश गति से लिखे। शेष नव कोष्ठों में से नव को लिखे। दक्षिण पंक्ति के तीन कोष्ठों में श्रीविद्या के प्रथम खण्ड, वाम पंक्ति के तीन कोष्ठों में मध्य खण्ड को लिखे। चारो दिशाओं के त्रिकोणों में तृतीय खण्ड के साथ साध्य नाम के साथ लिखे। तब यह यन्त्र पूर्ण होता है। इस प्रकार का कोष्ठ वज्र यन्त्र अभीष्टदायक होता है।

फलानि सर्वयन्त्राणां पटलेऽस्मिन् शृणु प्रिये ॥५६॥
तन्त्रेऽस्मिन्नन्यतन्त्रेषु यत्र यन्त्रास्ति यत्फलम्। प्रोक्तं तदेवमेकैकं योजयेत् सर्वमेव च ॥५७॥
तेनात्र यन्त्रनिर्माणमात्रमेवोच्यते मया। फलानि वाञ्छयावाप्नोत्ययत्नान्नामयोजनैः ॥५८॥
अतः फलानि यन्त्राणामिह नोक्तानि कृत्स्नशः। सर्वं च सर्वदा सर्वसमीहितफलाप्तिकृत् ॥५९॥

हे प्रिये! अब इस पटल में कथित यन्त्रों के फलों को सुनो। यहाँ वर्णित यन्त्र के अन्य तन्त्रों में जो फल बताये गये हैं, उन फलों को इस पटल के एक-एक यन्त्र में समाहित करे। इसीलिये मैंने यन्त्रनिर्माण-मात्र को ही कहा है। उनके नामों को इनमें जोड़ने से ही सभी फल प्राप्त होते हैं। इसलिये इन यन्त्रों के फल का वर्णन यहाँ नहीं किया गया है। ये सभी यन्त्र सर्वदा सभी समीहित फल देने वाले होते है।

वज्रलिङ्गयन्त्रनिर्माणविधिः

प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्च षड्विंशत्या समाहितैः। सूत्रैः कोष्ठानि जायन्ते षट्शतं पञ्चविंशतिः ॥६०॥
तेषु कोष्ठेषु परितो मार्जयेदष्टसप्ततिम्। शिष्टे चतुर्भिस्त्र्यस्त्रं च विदध्याद् दिक्षु पूर्ववत् ॥६१॥
तेषु तार्तीयविद्यां च ससाध्यां प्राग्वदालिखेत्। शिष्टेषु सप्तनवतिद्विशते मध्यतस्तथा ॥६२॥
सर्वमध्यस्थकोष्ठस्य पार्श्वयोरुभयोरपि। कोष्ठानि त्रीणि तिर्यक्च समीकृत्य तयोस्तथा ॥६३॥
उपर्यधश्च द्वे द्वे तु समीकुर्यात् ततस्तथा। तयोरधोर्ध्वं च तथा द्वे द्वे कुर्यादथैकधा ॥६४॥
तदधश्चोपरि तथा त्वेकैकं च द्वयं द्वयम्। एकीकृत्य पुनश्चोर्ध्वे द्वे द्वे तन्मार्जयेत् तथा ॥६५॥
ततो मालावदुपरि पार्श्वयोश्च प्रमार्जयेत्। दशखण्डानि शिष्टैस्तु मध्ये लिङ्गं भवेत् तथा ॥६६॥
एवं लिङ्गं समाख्यातश्चत्वारिंशद्भिरेव च। शिष्टानि कोष्ठवज्राणिं द्विशतं दशपञ्च च ॥६७॥
लिङ्गस्य पार्श्वयोर्मृष्टान्येकविंशतियुग्मकम्। तस्य लिङ्गस्य मध्यस्थपंक्त्यां तार्तीयमालिखेत् ॥६८॥
ऊर्ध्वादि मायामध्यस्थं सर्वमध्ये ससाध्यकम्। सर्वत्र तार्तीयाविद्यालेखनं समुदीरितम् ॥६९॥
लिङ्गरूपेषु नवसु पार्श्वषट्केषु पूर्ववत्। विद्याशेषं समालिख्य प्राग्वदारम्भतस्तथा ॥७०॥
विद्याद्वितीयभेदोत्थं तद्विंशशतमालिखेत्। द्विशस्तत्र यजेद् देवीमावाह्य परिवारकैः ॥७१॥
स्थापयेद्विनियोगेषु प्रोक्तेषु परमेश्वरि। नासाध्यमस्ति भुवने यन्त्रैरेतैर्मयोदितैः ॥७२॥

वज्रलिङ्ग यन्त्र—पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर समान दूरी पर छब्बीस-छब्बीस रेखाओं को खींचने से छः सौ पच्चीस कोष्ठ बनते हैं। चारों कोणों से अट्ठत्तर-अट्ठत्तर कोष्ठ—इस प्रकार कुल तीन सौ बारह कोष्ठ मिटा देने पर तीन सौ तेरह कोष्ठ से वज्र का आकार बनता है। पूर्वादि चारो दिशाओं में चार-चार कोष्ठों से एक-एक त्रिकोण बनावे। उनमें श्रीविद्या के तृतीय खण्ड के साथ साधक नाम-कर्म लिखे। शेष दो सौ सत्तानबे कोष्ठों में पश्चिम से एकादश एवं मध्य पंक्ति के मध्य कोष्ठ के दक्षिण-वाम पार्श्व में तिर्यक् रूप में तीन कोष्ठ यन्त्र के ऊर्ध्व-अधोगत पश्चिमादि द्वादश पंक्ति रूप में उनके मध्य कोष्ठ के दोनों पार्श्वों के दो-दो कोष्ठ छोड़कर तिर्यक् रूप में पूर्ववत् दो-दो पश्चिम से अष्टम चतुर्दश पञ्चदश तीन पंक्तियों के मध्य कोष्ठ के पार्श्वों के तीन-तीन कोष्ठ छोड़कर उन्हें एकीकृत करे। एकीकृत कोष्ठ-पंक्तियों में पन्द्रहवी पंक्ति के दोनों पार्श्वों में तिर्यक् रूप में दो-दो कोष्ठ को मालाक्रम से लिङ्ग रूप नव कोष्ठ के दोनों पार्श्वों में दश रेखा मार्जन करे। नव कोष्ठ की अट्ठारहवीं पंक्ति के कोष्ठों में मध्य कोष्ठ पञ्चक-पञ्चक से एकतालीस कोष्ठ मध्य में चालीस कोष्ठ से अधिष्ठान लिङ्ग बनता है। बाहर वज्र में शेष दो सौ सोलह कोष्ठों को यथा-तथा मिटा दे। इससे चालीस कोष्ठों के मध्य में लिङ्ग ऊपर-नीचे दश कोष्ठों के रूप में बन जाता है। श्रीविद्या के तीसरे खण्ड को उक्त प्रकार से लिखे। उसके बीच वाले कोष्ठ में हल्लेखा के उदर में विद्या के तीसरे खण्ड के साथ साध्यनाम लिखे। पिण्ड के ऊपर वाले नव कोष्ठों के दक्षिण पार्श्व के तीन कोष्ठों में श्रीविद्या के प्रथम कूट को लिखे। वाम पार्श्व के तीनों कोष्ठों में दूसरे कूट को लिखे। लिङ्गगत शेष दो सौ चौवालीस कोष्ठों में पूर्व वाले त्रिकोणगत पंक्ति के मध्य कोष्ठ से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से प्रवेश गति से तार्तीय भेद के तीन सौ बीस अक्षरों को लिखे।

मेरुलिङ्गयन्त्रनिर्माणविधिः

एकादिद्वयसंवृद्ध्या पार्श्वयोः कोष्ठवर्धनम् । एकोनविंशकोष्ठान्तं कृत्वा लिङ्गं तथोपरि ॥७३॥
कृत्वा प्राङ्मध्यतः प्राग्वच्चत्वारिंशद्भिरेव हि । तेषु मूलाहि परितो मध्यान्तं विन्यसेत् तथा ॥७४॥
विद्याद्वितीयभेदोत्था विद्या विंशशतं प्रिये । लिङ्गस्य मध्यकोष्ठान्तं शिष्टं कोणेषु संलिखेत् ॥७५॥
विधाय चतुरस्रं तु सूत्रद्वयनिपातनात् । सर्वबाह्ये तदाबद्धं तस्योपरि समालिखेत् ॥७६॥
पंक्तिशः सप्तकोष्ठेषु पर्यायादींस्तथार्णकान् । नित्यापर्यायजनिते पार्श्वयोर्दक्षवामयोः ॥७७॥
मध्ये युगोदयार्णौ तु लिखेत् प्रोक्तक्रमेण वै । लिङ्गाग्रमध्यादभितः पिण्डिकायां च संलिखेत् ॥७८॥
विद्याः प्रथमभेदोत्थाश्चतुर्विंशतिकास्तथा । कृत्वैवं मेरुलिङ्गं तु यन्त्रं तत्रैव तां लिखेत् ॥७९॥
समस्तवाञ्छितप्राप्त्यै जयारोग्यायुराप्तये । पटादौ तत् समालिख्य पूजयेन्नित्यशश्च ताम् ॥८०॥

मेरुलिङ्ग—पहले एक कोष्ठ बनाकर उसके दोनों ओर एक-एक कोष्ठ बढ़ाकर उन्नीस कोष्ठ बनाये। उसके ऊपर मध्य में चालीस कोष्ठों से लिङ्ग बनावे। उसके मूल से मध्य तक क्रमशः श्रीविद्या के द्वितीय भेद उत्पन्न सात सौ बीस का न्यास करे। लिङ्ग के मध्य कोष्ठ से शेष कोणों तक न्यास करे। उसके बाहर चार सूत्रों के निपात से चतुरस्र बनावे। उसके बाहर ऊपरी पंक्तियों में सात कोष्ठों में पर्याय वर्णों को लिखे। नित्या पर्याय जनित वर्णों को बाँयें-दाँयें पार्श्वों से लिखे। मध्य में युगोदय वर्णों को लिखे। लिङ्गाग्र मध्य से सामने पिण्डिका में विद्या के प्रथम भेदोत्थ चौबीस वर्णों को लिखे। इस प्रकार मेरु यन्त्र बन जाता है। इसमें श्री ललिता के नित्य पूजन से सभी वांछित फल की प्राप्ति होती है। जय-आयु-आरोग्य की प्राप्ति होती है। वटादि में लिखकर पूजन से भी ये फल प्राप्त होते हैं।

महालिङ्गयन्त्रविधानम्

(प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्च सैकविंशतिसूत्रतः । चतुःशतानि कोष्ठानि भवन्ति सुसमानि वै ॥८१॥)
तस्यैकपार्श्वधोभागे पञ्च कोष्ठानि मार्जयेत् । ततश्चोपरि षट् सप्तेत्येवमेकादशावधि ॥८२॥
मार्जयेदुपरिष्टाच्च तस्यैव प्रतिलोमकम् । तथा कुर्यात् पार्श्वयोश्च तेनाधिष्ठानपिण्डके ॥८३॥
भवतश्चोपरिष्टात्तु पञ्चविंशतिकोष्ठकैः । लिङ्गमन्यानि पार्श्वस्थमार्जनाद् भवति प्रिये ॥८४॥
अधिष्ठाने पिण्डिकायां तद् द्वितीयविभेदतः । लिङ्गे प्रथमभेदोत्थास्तन्मध्यस्थे स्ववाञ्छितम् ॥८५॥
मध्ये तद् दिनजां विद्यामिति प्रोक्तं तवानघे । महालिङ्गाभिधं यन्त्रं तत्र पूजाखिलेष्टदा ॥८६॥

महालिङ्ग-निर्माण—पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर की ओर समान दूरी पर इक्कीस-इक्कीस रेखाओं को खींचने पर चार सौ कोष्ठ बनते हैं। इसकी निचली पंक्ति के पार्श्वों में पाँच कोष्ठों को मिटा दे। उसके ऊपर ६,७,८, ९,१०,११ कोष्ठों को मिटा दे। तब उसके ऊपर अधिष्ठान पिण्डी लिङ्ग पच्चीस कोष्ठों से बन जाता है। पिण्डिका के अधिष्ठान में श्रीविद्या के द्वितीय भेदोत्पन्न वर्णों को लिखे। लिङ्ग में प्रथम भेदोत्थ वर्णों को लिखे। उसके मध्य में अपना अभीष्ट लिखे। मध्य में उस दिन की नित्या विद्या को लिखे। इस प्रकार से निर्मित महालिङ्ग यन्त्र की पूजा से सभी इच्छायें पूरी होती हैं।

योनिचक्रनिर्माणादिकम्

समत्रिरेखां निष्पाद्य योनिं तस्यास्तु मध्यतः । तत्तत्सूत्रवशात् कुर्याद् दश त्रिषु तथा समम् ॥८७॥
एवं कृतेऽत्र परितो लिखेत्तां विंशतिं शतम् । शिष्टमध्यत्रिकोणे तु लिखेद्वाञ्छितमात्मनः ॥८८॥
तत्र तामर्चयेत् प्राग्वत् स्थापयेच्च तथा तथा । (तत्र स्वेष्टमवाप्नोति योनिचक्रानुभावतः ॥८९॥

योनिचक्र—योनिचक्र के निर्माण-हेतु अपने सामने तीन रेखाओं से सम त्रिभुज बनावे। प्रत्येक रेखा में बराबर दूरी पर दश-दश चिह्न लगावे। चिह्न से चिह्न तक मर्म बनाते हुए दश-दश रेखा खींचे। इससे एक सौ बीस त्रिकोण बनते हैं। उन १२० त्रिकोणों में श्रीविद्या के १२० वर्णों को लिखे। शेष मध्य त्रिकोण में अपना वांछित लिखे। पूर्ववत् इसकी स्थापना करके देवी की पूजा करे। इस योनिचक्र के प्रभाव से अभीष्ट की प्राप्ति होती है।

वज्रयन्त्रनिर्माणादि

समत्रिरेखं निष्पाद्य त्र्यस्रं योनिं च सङ्गतम्। तत्र तिर्यक् चतुःसूत्रपातनादन्यतस्तथा ॥९०॥)
तिर्यक् सूत्रं मार्जयित्वा पूर्वशृङ्गात् तथाभितः। प्रवेशगत्या विलिखेत् ताश्चतुर्विंशतिं क्रमात् ॥९१॥
विलिख्य शिष्टवज्रस्थं विलिखेन्निजवाञ्छितम्। तत्र तां पूजयेद् देवीं पूर्णास्विष्टार्थसिद्धये ॥९२॥

वज्रयन्त्र-निर्माण विधि—एक ऊर्ध्वमुख समत्रिभुज से सटे एक अधोमुख समत्रिभुज त्रिकोण बनावे। ऊर्ध्वमुख त्रिभुज की वाम रेखा में और अधोमुख त्रिभुज की दक्षिण रेखा में चार चिह्न लगाकर पाँच-पाँच भाग करे। अब ऊर्ध्वमुख त्रिभुज को बाँयीं रेखाचिह्न से अधोमुख त्रिभुज की दायीं रेखा के चिह्नों से मिलावे। इससे पच्चीस कोष्ठों का वज्रयन्त्र बनता है। पूर्व शृंग से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण प्रवेश गति से श्रीविद्या के तार्तीय खण्ड के प्रथम भेद के वर्णों को लिखे। शेष कोष्ठों में अपना वांछित लिखे। उसमें देवी की पूजा पूर्णा तिथियों पञ्चमी दशमी पञ्चदशी में करे तो अभीष्ट की सिद्धि होती है।

महावज्रयन्त्रनिर्माणादि

तथा विधाय दशभिर्दशभिः सूत्रपातनैः। द्वितीयभेदान् विलिखेत् तथा साध्यसमन्वितान् ॥९३॥
तत्रापि पूजनाद्यैस्तु सिद्धयो निजवाञ्छिताः। एवमूह्यं तृतीयोत्थविद्याभिरभिकल्पयेत् ॥९४॥
तेऽपि वाञ्छितसंसिद्धिं कुर्युरेव सुनिश्चितम्।

महावज्र यन्त्र विधान—महावज्र यन्त्र के निर्माण हेतु पूर्ववत् ऊर्ध्व मुख सम त्रिभुज और उसके नीचे सटे अधोमुख समत्रिभुज बनावे। उनकी रेखाओं में दश-दश चिह्न लगावे। चिह्नों से चिह्नों को मिलाने पर एक सौ इक्कीस कोष्ठ बनते हैं। ऊर्ध्वमुख त्रिकोण के ऊपर से प्रारम्भ करके विद्या के द्वितीय भेद के वर्णों को लिखे। शेष कोष्ठों में साध्य नाम अपना अभीष्ट लिखे। इस यन्त्र में पूजा करने से वांछित फल प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार श्रीविद्या के तृतीयोत्थ वर्णों से भी यन्त्र कल्पित करके पूजा करे तो उक्त फल प्राप्त होते हैं।

विषमसमादिकोष्ठेषु यथेष्टाङ्कलेखनेन यन्त्राणामानन्त्यम्

कोष्ठयन्त्रविभेदानि शृणु वक्ष्ये यथाविधि ॥९५॥
नवषोडशकोष्ठादि संवर्ध्य विषमं समम्। तेष्वङ्कानि समं कृत्वा पंक्तौ तेषु समालिखेत् ॥९६॥
विद्यातृतीयभेदोत्थांस्तत्तदङ्कानुगुण्यतः। मनीषितं च संलिख्य तेषां मध्यस्थकोष्ठतः ॥९७॥
विदध्याद्वाञ्छितं सर्वं तैर्यन्त्रैः कल्पितैस्तथा। वश्याकर्षणविद्वेषस्तम्भनोच्चाटनादिकम् ॥९८॥
आयुरारोग्यविजयविभूत्याद्यं च सिध्यति। स्थापनाद्धारणाच्चान्यैरुपायैः साधकोऽनिशम् ॥९९॥
इति देव्या यन्त्रभेदास्तवोक्ताः सर्वसिद्धिदाः। अशेषं देवि ते प्रोक्तं यन्त्रसिध्यभिधागमे ॥१००॥ इति। अत्र प्रोक्तयन्त्रक्रमस्तु गुरुमुखादवगन्तव्यः।

विषम-सम कोष्ठ चतुरस्र चक्र—अब कोष्ठ यन्त्रों के भेदों का वर्णन यथाविधि करता हूँ। नव कोष्ठों और सोलह कोष्ठों का विषम-सम मण्डल बनाकर उनकी पंक्तियों में विद्या के तृतीय भेदोत्थ वर्णों को कोष्ठों की संख्या के अनुसार लिखे। उनके मध्य कोष्ठों में अपनी वाञ्छा लिखे। इस प्रकार के यन्त्र से वांछित वश्य, आकर्षण, विद्वेषण, स्तम्भन, उच्चाटनादि कार्य सिद्ध होते हैं। आयु-आरोग्य-विजय-विभूति आदि की प्राप्ति होती है। इसे स्थापित करने से या धारण करने से ये सभी फल मिलते हैं। इस प्रकार देवी के सर्वसिद्धिदायक यन्त्रों का वर्णन किया गया। यन्त्र सिद्धि अभिधागम में देवी ने इन सबका वर्णन किया है।

नित्यास्वरूपपरिवारन्यासजपतर्पणहोमाभिषेकोपचारादीनां वासनां

अथ वासनामाह श्रीतन्त्रराजे (३५ प०)—

अथ षोडशनित्यानां स्वात्मत्वे वासनां शृणु। यया तन्मयतासिद्धिः प्रत्यक्षा भवति ध्रुवम् ॥१॥
गुरुराद्या भवेच्छक्तिः सा विमर्शमयी मता। नवत्वं तस्य देहस्य रन्ध्रत्वेनावभासते ॥२॥

गुरुमन्त्रात्मनामैक्यत्वबुद्धिर्विमर्शः। त्रैलोक्यमोहनादिसर्वानन्दमयान्तचक्राणां नवत्वमित्यर्थः।

बलिदेव्यः स्वमायाः स्युः पञ्चमी जनकात्मिका। कुरुकुल्ला भवेन्माता पुरुषार्थास्तु सागराः ॥३॥

अथ मायायास्त्रैविध्यं सात्त्विकी-राजसी-तामसी चेति, एतास्तिस्रः कुरुकुल्लाबलित्रयरूपाः। जनकात्मिका मूलभूता इत्यर्थः।

रत्नद्वीपो भवेद्देहो नवत्वं धातुरोमभिः। सकल्पाः कल्पतरवः स्वाधारा ऋतवः स्मृताः ॥४॥

त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रप्राणजीवाख्या नव धातवो नवखण्डरूपा इत्यर्थः। रोमाण्येव कल्पवृक्षाः, षडाधाराः षड् ऋतवः।

ग्रहर्क्षराशिचक्रेण कालात्मा पश्चिमामुखः। तेन पूर्वाभिमुख्यं स्यादन्यत्ते कथितं मिथः ॥५॥
ज्ञाता स्वात्मा भवेज्ज्ञानमर्घ्यं ज्ञेयं बहिःस्थितम्। श्रीचक्रं पूजनं तेषामेकीकरणमीरितम् ॥६॥

तेषां ज्ञातृज्ञानज्ञेयानाम्।

श्रीचक्रे सिद्धयः प्रोक्ता रसा नियतिसंयुताः। ऊर्मयः पुण्यपापे च ब्राह्म्याद्याः मातरः स्मृता ॥७॥

रसाः षट्। नियतिश्चतुर्विधा नियतिपुरुषप्रकृत्यहङ्काराः। षडूर्मयः क्षुत्पिपासाशोकमोहजरामृत्यवः, पुण्यपापे च एते अष्टौ ब्राह्म्यादिमातृका इत्यर्थः।

भूतेन्द्रियमनांस्येवं क्रमान्नित्यकलाः पुनः। कर्मेन्द्रियार्था दोषाश्च ज्ञेयाः स्युः शक्तयोऽष्ट वै ॥८॥

पञ्चभूतानि पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि पञ्चकर्मेन्द्रियाणि मनश्च। कर्मेन्द्रियार्था वचनादानविहरणविसर्गानन्दाः। दोषा वातादयः।

नाड्यश्चतुर्दश प्रोक्ताः क्षोभिण्याद्यास्तु शक्तयः। वायवो दश संप्रोक्ताः सर्वसिद्ध्यादिशक्तयः ॥९॥

नाड्यश्चतुर्दश प्रागुक्ताः प्रसिद्धाः।

वह्नयो दश संप्रोक्ताः सर्वज्ञाद्यास्तु शक्तयः। शीतोष्णसुखदुःखेच्छा गुणाः प्रोक्ताः क्रमेण वै ॥१०॥
वशिन्याद्याः शक्तयः स्युस्तन्मात्राः पुष्पसायकाः। मनो भवेदिक्षुधनुः पाशो राग उदीरितः ॥११॥
द्वेषः स्यादङ्कुशः प्रोक्तः क्रमेण वरवर्णिनि। अव्यक्ताहंकृतिमहदाकाराः प्रतिलोमतः ॥१२॥
कामेश्वर्यादिदेव्यः स्युः संवित्कामेश्वरः स्मृतः। स्वात्मैव देवता प्रोक्ता ललिता विश्वविग्रहा ॥१३॥
लौहित्यं तद्विमर्शः स्यादुपास्तिरिति भावना। सिद्धिस्त्वनन्यचित्तत्वं मुद्रा वैभवभावना ॥१४॥
उपचाराश्चलत्वेऽपि तन्मयत्वाप्रमत्तता। प्रयोगास्तु विकल्पानां हेतोः स्वात्मनि नाशनम् ॥१५॥
यन्त्राणि मन्त्राः सर्वत्र स्वात्मत्वे स्थैर्यसाधनम्। सन्ध्यासु भजनं देव्या आदिमध्यान्तमज्जनम् ॥१६॥
अन्यास्तु शक्तयश्चक्रगामिन्योः याः समन्ततः। तास्तु विश्वविकल्पानां हेतवः समुदीरिताः ॥१७॥
न्यासस्तु देवतात्वेन स्वात्मनो देहकल्पनम्। जपस्तन्मयतारूपभावनं सम्यगीरितम् ॥१८॥
होमो विश्वविकल्पानामात्मन्यस्तमयो मतः। तेषामन्योन्यसंभेदभावनं तर्पणं स्मृतम् ॥१९॥
मोहाज्ञानादिदुःखानामात्मन्यस्तमयो दृढम्। अभिषेकस्तु विद्या स्यादात्मा सर्वाश्रयो महान् ॥२०॥
उपाधीनां तु राहित्यमुपदेश इतीरितः। दक्षिणा भेदशून्यत्वं शुश्रूषा स्थैर्यमुच्यते ॥२१॥
तिथिरूपेण कालेन परिणामावलोकनम्। नित्यापञ्चदशैताः स्युरिति प्रोक्तास्तु वासनाः ॥२२॥
पृथिव्यादीनि भूतानि कनिष्ठाद्याः क्रमान्मताः। तेषामन्योन्यसंभेदप्रकारैस्तत्प्रपञ्चता ॥२३॥
ललितायास्त्रिभिर्वर्णैः सकलार्थोऽभिधीयते। शेषेण देवीरूपं तु तेन स्यादिदमीरितम् ॥२४॥
अशेषतो जगत्कृत्स्नं हृल्लेखात्मकमीरितम्। तस्याश्चार्थस्तु कथितः सर्वतन्त्रेषु गोपितः ॥२५॥
व्योम्ना प्रकाशमानत्वं ग्रसमानत्वमग्निना। तयोर्विमर्श ईकारो बिन्दुना तन्निफालनम् ॥२६॥

वासना—तन्त्रराज में कहा है कि अब सोलह नित्याओं की वासना स्वात्मत्व रूप में सुनो। इस वासना से तन्मयता की सिद्धि प्रत्यक्ष होती है। गुरु मन्त्र एवं आत्मा में ऐक्य बुद्धि ही विमर्श शक्ति है। त्रैलोक्यमोहन से लेकर आनन्दमय तक के नव चक्र ही देह में नवरन्ध्र रूप में भासित होते हैं। बलिदेवियाँ सात्विकी राजसी तामसी मायास्वरूपा हैं। ये तीनों ही कुरुकुल्ला आदि बलित्रयरूपा मूलभूता जनकात्मिका हैं। कुरुकुल्ला माता हैं। पुरुषार्थ सागर हैं। देह नव रत्नद्वीप है। इसमें त्वक्, असृक्, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, प्राण, जीव—ये नव रत्न हैं। रोम कल्पवृक्ष हैं। छः आधार छः ऋतुएँ हैं। ग्रह, नक्षत्र, राशि, चक्र, कालात्मा पश्चिमामुख हैं। उन्हें जो पूर्वमुख कहते हैं, उनका कथन मिथ्या है। ज्ञाता आत्मा है। ज्ञान अर्घ्य है। ज्ञेय बाहर स्थित रहता है। श्रीचक्रपूजन ज्ञाता का ज्ञान और ज्ञेय का एकीकरण है। श्रीचक्र में दस सिद्धियाँ रहती हैं। जो षट् रस एवं चार प्रकार के नियतिरूप हैं। क्षुधा पिपासा शोक मोह जरा मृत्यु पुण्य पाप—ये आठ ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाएँ हैं। पाँच भूत क्षिति जल पावक गगन समीर; पाँच कमेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और मन—ये सोलह नित्याएँ हैं। वचन, आदान, विहरण, विसर्ग, आनन्द, वात, पित्त, कफ—ये आठ शक्तियाँ हैं।

चौदह नाड़ियाँ ही क्षोभिणी आदि चौदह शक्तियाँ हैं। दश प्राण ही सर्वसिद्धिप्रदा आदि दश शक्तियाँ हैं। दश वह्नि ही सर्वज्ञादि दश शक्तियाँ हैं। शीत, उष्ण, सुख, दुःख, इच्छा और तीन गुण—ये आठ वशिनी आदि शक्तियाँ हैं। पाँच तन्मात्राएँ पुष्प बाण हैं। मन ईख का धनुष है। राग पाश है। द्वेष अंकुश है। अव्यक्त अहंकार महान् ही प्रतिलोमतः कामेश्वरी आदि तीन देवियाँ हैं। संवित् कामेश्वर हैं। अपनी आत्मा ही विश्वविग्रहा ललिता है।

लौहित्य विमर्श है। भावना उपासना है। अनन्यचित्तत्व सिद्धि है। मुद्रा वैभव भावना है। उपचार चलत्व होने पर भी तन्मयत्व और अप्रमत्ततादायक है। प्रयोग-विकल्प आत्मनाश के कारण हैं। यन्त्र-मन्त्र सर्वत्र स्वात्मत्व की स्थिरता के साधन हैं। सन्ध्या में आदि मध्यान्त स्नान देवी के भजन हैं। चक्रगामिनी जो अन्य शक्तियाँ हैं, वे विश्वविकल्प के हेतु हैं। न्यास से देह में देवत्व की कल्पना होती है। जप तन्मयतारूप भावन है। हवन विश्वविकल्प का आत्मा में न्यस्तीकरण है। उसमें अन्योन्य सम्भेद भावन तर्पण है। मोह अज्ञानादि दुःख आत्मन्यस्तमय है। अभिषेक विद्या का सर्वाश्रय महान् है। उपाधिराहित्य उपदेश है। भेदशून्यत्व दक्षिणा है। शुश्रूषा स्थैर्य है। तिथिरूप में काल के परिणाम का अवलोकन पन्द्रह नित्याएँ हैं। यही वासना है।

पृथिवी आदि भूत का कनिष्ठा आदि क्रम से अन्योन्य सम्भेद प्रकार ही प्रपञ्चता है। ललिता नाम के तीन अक्षरों में सभी अर्थ निहित हैं, शेष सभी देवीरूप हैं। सारे संसार को बनाकर ह्रील्लेखा रूप में रहती है। सभी तन्त्रों में इसका अर्थ गोपित कहा गया है। आकाश में प्रकाशमानत्व है। अग्नि में ग्रासमानत्व है। इनका विमर्श-बिन्दुसहित 'ई' है।

मन्त्रनिर्माणविधानम्

अथ मन्त्रविनिर्माणविधानमभिधीयते। मन्त्रवीर्यसुसिद्धानामितरेषां विशेषकृत् ॥२७॥
प्रागुक्तरश्मिक्रमज्ञानामित्यर्थः। (मन्त्रवीर्यज्ञानसुसिद्धानाम्। इतरेषां तज्ज्ञानसिद्धिरहितानाम्)।

मन्त्राः एकाक्षराः पिण्डाः कर्तर्यो द्व्यक्षरा मताः। वर्णत्रयं समारभ्य नवार्णावधि बीजकाः ॥२८॥
ततो दशार्णमारभ्य यावद्विंशति मन्त्रकाः। अत ऊर्ध्वं गता मालास्तासु भेदो न विद्यते ॥२९॥
तथैव पिण्डकर्तर्योर्भेदो बीजेषु वर्णतः। पदैर्मन्त्रेषु भेदः स्यात्तेषां संख्याः शृणु क्रमात् ॥३०॥
षट्चतुर्विंशति तथा शतं विंशतिसंयुतम् (१२०)। सविंशति सप्तशतं(७२०)चत्वारिंशद्भिरन्वितम् ॥३१॥
सहस्रपञ्चकं (५०४०) पश्चाच्चत्वारिंशत्सहस्रकम्। त्रिशतं विंशति (४०३२०) ततस्त्रिलक्षेण समन्वितम् ॥३२॥
द्विषष्टिश्च सहस्राणां साशीत्यष्टशतं त्विति (३६२८८०)।
भेदसंख्यास्तु सप्तानां ताभिरन्याः समुन्नयेत् ॥३३॥

मन्त्रनिर्माण विधान—अब मन्त्र निर्माण का विधान कहता हूँ। सुसिद्धों में मन्त्र वीर्य और अन्य मन्त्रों में विशेष कर इसे जानना आवश्यक होता है। उसके लिये पूर्वोक्त रश्मिज्ञान आवश्यक है। मन्त्र में एक अक्षर होता है। पिण्ड और कर्तरी में दो अक्षर होते हैं। बीज में तीन वर्ण से लेकर नव वर्ण तक होते हैं। तब दश अक्षरों से बीस अक्षरों तक के मन्त्र होते

हैं। इसके ऊपर अर्थात् बीस अक्षर से ऊपर मालामन्त्र में होते हैं। इनके कोई भेद नहीं होते। उसी प्रकार पिण्ड कर्तरी बीजों में वर्णभेद होता है। मन्त्र में पदभेद होते हैं। क्रमश: उनकी संख्या सुनो। इनके छः, चौबीस, एक सौ बीस, सात सौ बीस, पाँच हजार चालीस, चालीस हजार तीन सौ बीस, तीन लाख बासठ हजार आठ सौ अस्सी भेद हैं। इन सातों संख्याओं में अन्य भेद भी होते हैं। अब इनका प्रस्तारभेद यथाक्रम सुनो। इनके मन्त्रपद भेद अनुक्रम से होते हैं।

मन्त्राणां प्रस्तारक्रमः

प्रस्तारक्रममेतेषां शृणु देवि यथाक्रमम्। एतैरेवोन्नयेन्मन्त्रपदभेदाननुक्रमात् ॥३४॥
तिर्यग्रेखाद्वयं कृत्वा तत्राधोर्ध्वं लिखेत् क्रमात्। रेखाश्चतस्रः पञ्चैवमृज्वाकारा दशावधि ॥३५॥
तदधो वर्धयेद्रेखास्तत्तत्संख्याङ्गुलावधि। तिर्यग्रेखास्तावतीश्च कृत्वा तेष्वङ्कमालिखेत् ॥३६॥
सव्यदक्षस्थितेष्वेषु कोष्ठपंक्तिष्वनुक्रमात्। आद्ये द्विद्विक्रमादङ्कान् पूरयेत् तन्त्रचोदितान् ॥३७॥
एतेनान्यत्र सर्वत्र देयानङ्काननुक्रमात्। द्वितीयपंक्तौ प्रथमे खण्डे शेषांस्तु पूरयेत् ॥३८॥
द्वितीयादिष्वपि तथा शेषान् खण्डेषु पूरयेत्। ततस्तृतीयपंक्तौ तु खण्डान् शेषैस्तु पूरयेत् ॥३९॥
चतुर्थादिष्वपि तथा नवमान्तं समालिखेत्। तिर्यक् पंक्तिष्वनभ्यस्तक्रममङ्कांस्तु सर्वतः ॥४०॥
एवं कृते भवेद्विद्या सर्वोर्ध्वा वीरवन्दिते। सर्वाधस्ताद्विलोमा सा मध्यस्था व्याकुलक्रमात् ॥४१॥
ताभिः सर्वाभिरप्याशु सिध्यत्येवाभिवाञ्छितम्। इति।

मन्त्रप्रस्तार—पहले दो तिर्यक् रेखा खींचे। इनके ऊपर-नीचे चार-चार, पाँच-पाँच दश-दश तक सीधी रेखा खींचे। उनके नीचे संख्या के बराबर अंगुल मान से बढ़ाये। उतनी ही संख्या में तिर्यक् रेखा खींचे। उनमें वाम-दक्षिण भेद से कोष्ठ पंक्ति अनुक्रम से दो अंकों को लिखे। सर्वत्र अनुक्रम से अंकलेखन करे। प्रथम खण्ड की द्वितीय पंक्ति में शेष को लिखे। द्वितीय खण्ड में भी शेष को लिखे। तीसरी पंक्ति में शेष को लिखे। इसी प्रकार चौथी से नवमी पंक्ति तक लिखे। तिर्यक् पंक्ति में अनभ्यस्त क्रम से अंकों को लिखे। ऐसा करने से विद्या सर्वश्रेष्ठ होती है। सबके नीचे विलोम क्रम से, मध्य में व्याकुल क्रम से लिखे। इनसे सभी इच्छाएँ शीघ्र पूरी होती हैं। ललित भेदजात भेदों को यन्त्र में कहा गया है। नित्यानित्या के भेद भी उनके पटलों में कहा गया हैं। अन्यों के भेद भी वहीं पर देखे जा सकते हैं।

मन्त्राणां साधनास्थानानि

तथा (३५ प० ५८ श्लो०)—

अनुष्णाशीते विजने सुसमे रम्यविग्रहे। गृहे वा मण्डपे स्थित्वा पीठं धवलितोदरम् ॥१॥
विन्यस्य तस्मिन् पूर्णायां शुभर्क्षे वा शुभोदये। कुचन्दनैः कुङ्कुमैर्वा दरदैर्वोपदेशतः ॥२॥
कृत्वोक्तं मण्डलं सार्णं तत्रावाह्य यजेच्छिवाम्। नित्यशो मातृकां जप्यात् संप्रदायानुसारतः ॥३॥
एवमब्दे तु संपूर्णेऽभीष्टदेवाय मन्त्रवित्। कुर्यान्मन्त्रमभीष्टार्थगमकं प्रोक्तयोगतः ॥४॥

अत्र प्रागुक्तरश्मिक्रमं ज्ञात्वा यद्यद्भूतरश्मिबाहुल्यं यस्मिन्मन्त्रे दृश्यते तत्तद्भूतार्णयुक्ततत्तन्मण्डलं विलिख्य, तन्मध्ये तद्भूतरश्मिकदम्बप्राचुर्यविशिष्टस्वेष्टदेवतापूजायन्त्रं विलिख्य, तत्तदुपचारैः संपूजयन् तत्तद्भूतार्णमालया स्वेष्टदेवतामन्त्रं जपन् प्रोक्तसिद्धिर्भवतीत्यर्थः, मन्त्रसिद्धिरपि भवतीति।

तथा—

नभोऽग्निवायुप्रायार्णाः क्रूराः क्षोभकराः मताः। भूतोयप्रचुराः सौम्याः सेव्याः सिद्धिकराः मताः ॥५॥

अत्र येषु येषु मन्त्रेषु आकाशाग्निवायुवर्णप्राचुर्य्यं दृश्यते तैस्तैर्मन्त्रैस्तत्तन्मण्डले क्रूरप्रयोगाः कर्तव्याः। येषु येषु मन्त्रेषु सौम्यभूतरश्मिप्रचुरता दृश्यते तैर्मन्त्रैस्तत्तत्सौम्यभूतमण्डले सौम्यप्रयोगाः सिध्यन्तीत्यर्थः।

एषामन्योन्यसंभेदबाहुल्याद्बहवोऽणवः । तैस्तथा भजनात् सिद्धाः फलन्ति स्वैक्ययोगतः ॥६॥

द्वित्रिचतुष्टयपञ्चभूतरश्मिसाङ्कर्यमन्त्रा बहवो जायन्ते, तादृशमन्त्राणां तत्तद्भूतसाङ्कर्यमण्डलेषु भजनं कुर्यात्तत्तत्सिद्धिर्भवतीति। अत्र क्रमस्त्वेवं बोद्धव्य:—मन्त्राक्षराणि स्वरव्यञ्जनरूपेण पृथक्पृथग्विलिख्य, तत्तद्वर्णस्य प्रागुक्तषड्विधरश्मिक्रमं पृथक्पृथग्विलिख्य, तत्तद्भूतरश्मीनां पृथक्पृथगैक्यमेलनेन भूताधिक्यतां विज्ञाय, यस्य भूतस्याधिक्यता संपद्यते तत्तन्मण्डलगर्भं पूजायन्त्रं विलिखेत्। पूजायन्त्रमपि प्रचुरभूतमण्डलमध्ये तस्मादूनं तद्बहिस्तस्मादूनं तद्बहिरेवमुत्तरोत्तरं न्यूनाधिकभावेन विलिख्य, तादृशकल्पितोपचारैस्तत्तदावरणदेवतानां तत्तद्भूतार्णसंधानेन संपूजयन् तथैव भूतार्थघटितमालया जपेत्तत्तत्सिद्धिर्भवतीत्यर्थ:। इदं सर्वं गुरुत: शास्त्रतश्च सम्यग् विज्ञाय भजनं कुर्यात्।

तथा—

मन्त्रार्थस्त्रिविधा ज्ञेया ज्ञातव्या: सिद्धिकाङ्क्षिभि: । पूजापटलसंप्रोक्तास्त्रिविधा: स्युरुपासका: ।।७।।
वर्णस्योदयविश्रान्तिपदे बुद्धिनिवेशनम् । एकोऽन्य: सर्वत: सिद्धव्युत्पत्त्यर्थाभिवीक्षणम् ।।८।।
वाच्यवाचकसंभेदभावनादिभिरीरिता: । एषां पञ्चप्रकाराणामशेषेणेष्टसिद्धिदा: ।।९।।

अत्र मन्त्रार्थचिन्तने त्रैविध्यं लक्ष्यते, तत्र वर्णकदम्बकं पदं, पदकदम्बकं वाक्यमिति, प्रतिवर्णे उदयो विश्रान्तिश्च पदे पदे ज्ञातव्या। तादृशपदेषु बुद्धिनिवेशनं कृत्वा तादृशबुद्धिपूर्वकं जपेदित्येक:। द्वितीयस्तु प्राचीनैर्व्याख्यातसिद्धव्युत्पत्त्यार्थाभिवीक्षणपूर्वजापक:। तृतीयस्तु मन्त्रतद्गतवर्णपदवाक्यतत्प्रतिपादकदेवतानां वाच्यवाचकभावनादिभिरुपासक:। प्रोक्तपञ्चभूतार्णतद्रश्मितत्तद्भूतसाङ्कर्यरश्मिप्रकाराणां प्रोक्तोपासनाक्रमेणाशेषसिद्धयो भवतीत्यर्थ:।

साधना स्थान—गर्मी, सर्दी-रहित निर्जन समतल भूमि में अपना मनोहर वेश बनाकर घर में या मण्डप में बैठे। अपने सामने स्वच्छ पीठ बनाकर पूर्णिमा, शुभ नक्षत्र या शुभोदय में लाल चन्दन कुङ्कुम या दरद से उक्त मण्डल बनावे। पचास कोष्ठों का मण्डल बनाकर उसमें मातृकाओं को लिखे। उसमें देवी का आवाहन करके पूजन करे। नित्य अक्षमाला पर सम्प्रदाय के अनुसार जप करे। एक वर्ष तक ऐसा करने से सभी अभीष्ट की प्राप्ति होती है। सभी अभीष्टों की प्राप्ति के लिये आगमोक्त योग से साधना करे। पूर्वोक्त रश्मि क्रम को जानकर रश्मिबाहुल्य वाले मन्त्र के भूतार्ण युक्त मण्डल बनावे। उसके मध्य में रश्मि कदम्ब प्राचुर्य विशिष्ट इष्टदेवता का यन्त्र बनाकर उन उपचारों से पूजन करे। उसके भूतवर्णों की माला से जप करे। इससे मन्त्र और यन्त्र दोनों की सिद्धि होती है। जिन मन्त्रों में आकाश अग्नि वायु वर्णों की प्रचुरता होती है, उन मन्त्रों से उनके मण्डलों में क्रूर प्रयोग करना चाहिये। जिन-जिन मन्त्रों में सौम्य भूत रश्मि की प्रचुरता हो, उन मन्त्रों से उनके भूत मण्डल में सौम्य प्रयोग करने से सिद्ध होते हैं।

दो-तीन-चार-पाँच भूतरश्मियों के साङ्कर्य से बहुत मन्त्र होते हैं। उन मन्त्रों का उनके भूतसाङ्कर्य मण्डलों में जप करने से सिद्धि मिलती है। इसका क्रम इस प्रकार होता है—स्वर-व्यञ्जन रूप में मन्त्राक्षरों को अलग-अलग लिखकर उन वर्णों के पूर्वोक्त रश्मिक्रम को अलग-अलग लिखकर उन भूतरश्मियों को अलग एकीकृत करके भूताधिक्यता जानकर जिस भूत का आधिक्य हो, उनके मण्डलगर्भ में पूजा यन्त्र लिखे। पूजा यन्त्र भी प्रचुर भूतमण्डल के मध्य में कम, उसके बाहर भी कम, उत्तरोत्तर न्यूनाधिक्य भाव से लिखे। उसी के समान उपचारों से उसके आवरण देवताओं का तद्भूत वर्णसंधान से पूजन करे। उसी प्रकार भूतार्थ घटित माला से जप करने पर सिद्धि होती है। इन सबों को गुरु से और शास्त्रों से जानकर साधना करे।

सिद्धिकामियों को मन्त्रों के तीन अर्थ जानना चाहिये। पूजापटल में उपासकों की तीन श्रेणियों का कथन है। वर्णों के उदय-अस्त के समय बुद्धि निवेश एक या अन्य में सर्वत: करके व्युत्पत्ति अर्थ को जानना चाहिये। वाच्य वाचक सम्भेद भावना करनी चाहिये। इन पाँच प्रकारों से इष्टसिद्धि होती है। यहाँ पर मन्त्रार्थ चिन्तन तीन प्रकार का कथित है। वहाँ पदकदम्बक पद, पदकदम्बक वाक्य, प्रत्येक वर्ण के उदय-अस्त पद पर जानना चाहियें। उसी के समान पदों में बुद्धि-निवेश करना चाहिये। उसी के समान बुद्धि से जप करना चाहिये। दूसरा यह है कि प्राचीन व्याख्या से सिद्ध व्युत्पत्ति अर्थ देखते हुए जप करे। तीसरा मन्त्र उसके वर्ण पद वाक्य तत्प्रतिपादक देवता वाच्य-वाचक-भावनादि की उपासना करना है। प्रोक्त पाँच भूत वर्ण उनकी रश्मियाँ, उनका साङ्कर्य रश्मि प्रकार से प्रोक्त क्रम से उपासना करने से सिद्धि मिलती है।

मन्त्र-तद्देवतानामुपासकदोषैर्वैरीकरणादि

तथा (३५ प० ८० श्लो०)—

सिद्धमन्त्रेण कर्तव्याः प्रयोगाः नान्यथा प्रिये। नराणामिव मन्त्राणां देवतानां च पार्वति ॥१॥
अन्योन्यं वैरमस्त्येव गुणभूतसमन्वयात्। आग्नेयानां च भौमानामाप्या मन्त्रास्तु वैरिणः ॥२॥
वायव्यानां जलानां च भौमानां स्यात् परस्परम्। स्त्रीदैवत्या वैरिणः स्युः पुंदैवत्यस्य भूयसा ॥३॥
स्त्रीदैवत्येषु सौम्यानां क्रूराणां स्यात् परस्परम्। तथैव पुंदैवतानां त्वरितानरसिंहयोः ॥४॥
शास्त्रा तु यक्षिणीनां स्यादघोरास्त्रस्य चक्रतः। मन्त्राणां देवतानां च वैरीकरणमीश्वरि ॥५॥
कथयामि शृणु प्राज्ञे येन लोकोऽवसीदति। वैषम्यभजनं पुंसामज्ञानादाशयात्तथा ॥६॥
तेन मन्त्रा देवताश्च क्रुद्धा हन्युरुपासकम्। तस्मात् सर्वस्य लोकस्य मन्त्रवीर्यं हि जीवितम् ॥७॥
यन्निष्ठानाममी दोषा न स्पृशन्ति कदाचन।

प्रयोग—सिद्ध मन्त्र से प्रयोग करे; अन्यथा न करे। मनुष्यों के समान देवताओं में भी अन्योन्य वैर गुण भूत समन्वय से होता है। आग्नेय भौम मन्त्रों के वैरी जल मन्त्र होते हैं। वायव्य, जलीय और भौम मन्त्रों में परस्पर वैर होता है। स्त्री देवता पुरुष देवता के वैरी होते हैं। स्त्री दैवत्व में भी सौम्य-क्रूर में भी परस्पर वैर होता है। उसी प्रकार पुरुष दैवत्व और त्वरिता नरसिंह मन्त्रों में वैर होता है। शस्त्र यक्षिणियों का वैर अघोरास्त्र और चक्रमन्त्रों के देवताओं से होता है। लोक में वैषम्य भजन जो साधक अज्ञान आशय से करता है, उससे मन्त्र और देवता क्रुद्ध होकर उपासकों को मार देते हैं। इसलिये सभी लोकों में मन्त्र वीर्य से जीवित रहता है। मन्त्र वीर्य के ज्ञानियों को अनिष्ट नामक दोष कभी स्पर्श नहीं करता।

गुरुमन्त्रदेवतानां सम्यक् भजनक्रमः

गुरोः शुश्रूषया काले दीक्षया लब्धमादरात् ॥८॥
तदाज्ञया भवेदेकरूपं मन्त्रं स्वसिद्धये। अन्यथा साधकं हन्याच्छस्त्रेण रिपुतो भयात् ॥९॥
दारिद्र्याद् दीर्घरोगाद्वा व्यसनेष्वतिसर्जनात्। यो यो मन्त्रस्तस्य तस्य वर्णौषधिविनिर्मिता ॥१०॥
तत्तद्वर्णोत्थसंख्याभिर्गुलिका मन्त्रसिद्धिदा। तयाभिषेकस्तद्धरणं तत् खादस्तद्विलेपनम् ॥११॥
तत्पूजा च तथा सिद्धिलाभाय स्यान्न चान्यथा।

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे एकत्रिंशः श्वासः॥३१॥

●

गुरु की सेवा, काल, दीक्षा आदर से प्राप्त करके उसकी आज्ञा से एकरूप होने से मन्त्र सिद्ध होते हैं, अन्यथा साधक शत्रुओं के शस्त्राघात से या भय से मर जाता है। दरिद्रता या दीर्घ रोगों में एवं व्यसन से छुटकारे के लिये मन्त्र वर्णौषधि का दवा सेवन करे। मन्त्रवर्णोत्थ संख्या के बराबर मनकों की माला से जप करने पर मन्त्र सिद्ध होता है। मन्त्र वर्णौषधि से स्नान करने से उसके धारण करने से, उसे खाने से, उसके लेप लगाने से या पूजा करने से सिद्धि मिलती है; अन्यथा नहीं मिलती है।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र की कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में एकत्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ द्वात्रिंशः श्वासः

महागणपतेरेकाक्षरमन्त्रः

अथ महागणपतिमन्त्राः प्रदर्श्यन्ते—

अथ वक्ष्ये महादेवि मन्त्रमेकाक्षरं परम्। शार्ङ्गी प्रीतियुतः प्रोक्तो गणेशस्यैकवर्णकः ॥१॥ इति।

शार्ङ्गी गकारः। प्रीतिरनुस्वारः। नारायणीये त्वस्य मन्त्रस्य पञ्च भेदा उक्ताः। यथा—'ख्यातं सान्तविषं सबिन्दुसकलं बिद्वौयुतं केवलं पञ्चैतानि पृथक्फलं विदधते बीजानि विघ्नेशितुः' इति। अन्तो विसर्गः, विषं मकारः ताभ्यां सह वर्तमानः खान्तो गकारः, तेन गं गः इति सिद्धम्। कला विसर्गः तद्युक्तोऽन्यस्तेन गंः। बिन्दुश्च औ च ताभ्यां युत इत्यपरः। केवलं बिन्द्वादिरहितः। तथा—'गणकः स्यादृषिश्छन्दो निचृद्विघ्नोऽस्य देवता' इति।

महागणपति का एकाक्षर मन्त्र—हे महादेवि! अब मैं गणेश के एकाक्षर परम मन्त्र को कहता हूँ। यह शार्ङ्गी 'ग' एवं प्रीति अनुस्वार युक्त 'गं' है। नारायणीय के अनुसार यह एकाक्षर मन्त्र पाँच प्रकार का होता है; जैसे—गं गः गंः गौं गः।

तदर्चाविधिः

प्रयोगसारे—

आदौ गणञ्जयायोक्त्वा स्वाहा हृदयमुच्यते। एकदंष्ट्राय चाभाष्य हुंफट् विद्याशिरस्तथा ॥१॥
शिखाप्यचलशब्दादिकर्णिने हृत्ततो नमः। कवचं गजवक्त्राय नमो नमः इतीरितम् ॥२॥
महोदराय चण्डाय हुंफडित्यस्त्रमिष्यते। एतान्यङ्गानि विन्यसेत् पञ्चाङ्गानि मनीषिभिः ॥३॥ इति।

पञ्चाङ्गानि उक्तानि। सारसंग्रहे तु—'षड्दीर्घेण निजेनैव बीजेनाङ्गानि योजयेत्' इत्युक्तम्। तदेतयोर्विकल्पः। 'सप्रांशुना वा बीजेन षडङ्गानि नियोजयेत्' इति प्रयोगसारवचनात्। एवं सप्रांशुना सदीर्घेण षड्दीर्घयुक्तेनेति यावत्। अत्र यथागुरूपदेशं कार्यमिति। प्रयोगसारे—

रक्तो रक्ताङ्गरागांशुककुसुमयुतस्तुन्दिलश्चन्द्रमौलि-
र्नेत्रैर्युक्तस्त्रिभिर्वामनकरचरणो बीजपूरात्तनासः।
हस्ताग्रक्लृप्तपाशाङ्कुशरदवरदो नागवक्त्रोऽहिभूषो
देवः पद्मासनो वो भवतु नतसुरो भूतये विघ्नराजः ॥१॥

वामाद्यूर्ध्वयोराद्ये तदाद्यधस्तनयोरन्ये, इत्यायुधध्यानम्। सारसंग्रहे—

रक्ताभः शशिमौलिरङ्कुशगुणौ दन्तं वरं धारयन्
हस्ताब्जैर्द्विरदाननस्त्रिनयनो रक्ताङ्गरागावृतः।
बीजापूरबृहत्करोरुजठरो दानार्द्रगण्डस्थलो
विघ्नेशः फणिभूषणो गणपतिर्भूयाद्भवद्भूतये ॥१॥

अत्र दक्षोर्ध्वादि तदधोन्तमायुधध्यानम्। बृहत्करः शुण्डादण्डः (इति ध्वात्वा गणेशानं मानसैरुपचारकैः। पूजयित्वेति शेषः। तीव्रादिशक्तिसंयुक्ते पीठे त्वावाह्य पूजयेत्।)

इस मन्त्र के ऋषि गणक, छन्द निचृद् एवं देवता विघ्नेश्वर कहे गये हैं। प्रयोगसार के अनुसार इसका पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—गणञ्जयाय स्वाहा हृदय नमः, एकदंष्ट्राय हुं फट् शिरसे स्वाहा, अचलकर्णिने हृन्नमः शिखायै वषट्, गज-वक्त्राय नमो नमः कवचाय हुम्, महोदराय चण्डाय हुं फट् अस्त्राय फट्। सारसंग्रह के अनुसार गां गीं गूं गैं गौं गः से

षडङ्ग न्यास करे। प्रयोगसार के अनुसार भी यही न्यास है। अत: गुरु के उपदेशानुसार न्यास करना चाहिये। प्रयोगसार के अनुसार इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

रक्तो रक्ताङ्गरागांशुककुसुमयुतस्तुन्दिलश्चन्द्रमौलिर्नेत्रैर्युक्तस्त्रिभिर्वामनकरचरणो बीजपूरात्तनास:।
हस्ताग्रक्लृप्तपाशाङ्कुशरदवरदो नागवक्त्रोऽहिभूषो देव: पद्मासनो वो भवतु नतसुरो भूतये विघ्नराज:।।

सारसंग्रह के अनुसार इनके ध्यान का स्वरूप इस प्रकार है—

रक्ताभ: शशिमौलिरङ्कुशगुणौ दन्तं वरं धारयन् हस्ताब्जैर्द्विरदाननस्त्रिनयनो रक्ताङ्गरागावृत:।
बीजापूरबृहत्करोरुजठरो दानार्द्रगण्डस्थलो विघ्नेश: फणिभूषणो गणपतिर्भूयाद्भवद्भूतये।।

अर्चापीठनिरूपणम्

प्रपञ्चसारे—

तीव्रा ज्वालिनीनन्दे सभोगदा कामरूपिणी चोग्रा
तेजोवती च सत्या संप्रोक्ता विघ्ननाशिनी नवमी ।।१।।
बीजान्ते सर्वशक्ति-प्रोक्त्वा कमलासनाय नम इति
च आसनमन्त्र: प्रोक्तो नवशक्त्यन्ते समर्चयेदमुना ।।२।। इति।

अत्र मण्डूकादिपरतत्त्वान्ता योगपीठदेवतानां पूजा प्रागेव पूजाप्रकरणे लिखितत्वाद् ग्रन्थगौरवभयाच्चात्र न लिखिता। सारसंग्रहे—

अष्टपत्रं सरोजं तु चतुरस्त्रत्रयावृतम्। चतुर्द्वारसमायुक्तमर्चापीठं विधाय च ।।१।।
तत्रावाह्य गणेशानमर्चयेदुपचारकै:। कर्णिकायां तु पूर्वादिचतुर्दिक्षु गणाधिपम् ।।२।।
पीतं गौरं गणेशानं रक्तं च गणनायकम्। गणक्रीडं नीलवर्णं केसरेषु ततो यजेत् ।।३।।
अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु यथाक्रमम्। षडङ्गानि मनोरस्य ध्यातव्याश्चाङ्गदेवता: ।।४।।
तुषारस्फटिकश्यामनीलकृष्णारुणार्चिष: । वरदाभयधारिण्य: प्रधानतनव: स्त्रिय: ।।५।।

पूजन—मण्डूक से परतत्त्व तक योगपीठ देवता का पूजन पूजा प्रकरण में उक्त रीति से किया जाता है। प्रपञ्चसार के अनुसार इनकी नव पीठशक्तियाँ इस प्रकार हैं—तीव्रा, ज्वालिनी, नन्दा, भोगदा, कामरूपिणी, उग्रा, तेजोवती, सत्या और विघ्न-नाशिनी। योगपीठ की पूजा और पीठशक्तियों की पूजा के बाद 'गं सर्वशक्तिकमलासनाय नम:' से आसन की पूजा करनी चाहिये।

पूजन यन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार अष्टदल कमल के बाहर चार द्वारों से युक्त तीन भूपुर रेखा से युक्त होता है। उसमें गणेश का आवाहन करके पूजा करे। कर्णिका की पूर्वादि चारो दिशाओं में पीत गणाधिप, गौर गणेश, रक्त गणनायक एवं नीलवर्ण गणक्रीड़ की पूजा करे। केसर में आग्नेय, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य, मध्य और दिशाओं में षडङ्ग मन्त्रों से षडङ्ग पूजा करे। तुषार, स्फटिक, श्याम, नील, कृष्ण, अरुण, आभा वाली वर-अभय मुद्राधारिणी इनकी अंग-शक्तियाँ होती हैं।

अष्टमातृध्यानानि

वक्रतुण्डादिकानष्टौ वक्ष्यमाणान् दले यजेत्। वक्रतुण्डैकदंष्ट्रौ च महोदरगजाननौ ।।६।।
लम्बोदराख्यविकटौ विघ्नराड्धूम्रवर्णकौ। दलाग्रेषु तत: पूज्या ब्राह्म्याद्यास्त्वष्ट मातर: ।।७।।
ब्राह्मी स्वर्णसमा ध्येया मृगचर्मविभूषिता। अक्षमालाभये दण्डकुण्डिके दधती करै: ।।८।।
त्रिशिखं परशुं हस्तैर्डमरुं नृकपालकम्। बिभ्राणां चन्द्रगौराङ्गीं माहेशीं भावयेच्छुभाम् ।।९।।
गुणखट्वाङ्गदण्डाङ्कुशान् वहन्तीं कराम्बुजै:। इन्द्रगोपारुणां ध्यायेत् कौमारीं करुणालयाम् ।।१०।।
अरिशङ्खकपालानि घण्टां च करपङ्कजै:। बिभ्राणां वैष्णवीं ध्यायेन्नीलमेघसमप्रभाम् ।।११।।
हलं च मुसलं दोर्भिर्दधानां खड्गखेटकौ। वाराहीं भावयेच्छक्तिमञ्जनाद्रिसमप्रभाम् ।।१२।।

तोमराङ्कुशवज्राह्वविद्युद्युक्तकराम्बुजाम् । इन्द्राणीं भावयेन्मन्त्री नीलवर्णां सुभूषणाम् ।।१३।।
धारयन्तीं शूलखड्गौ कपालं नृशिरः करैः । चामुण्डां शोणवर्णां च मुण्डमालायुतां स्मरेत् ।।१४।।
स्वर्णाभामक्षमालां च बीजपूरकपालके । पद्मं च दधतीं हस्तैर्महालक्ष्मीं स्मरेत् सुधीः ।।१५।।

दक्षाधःकरमारभ्य तदूर्ध्वकरपर्यन्तमायुधध्यानं ब्राह्म्याः। दक्षाद्यधःस्थयोराद्ये तदाद्यूर्ध्वस्थयोरन्ये माहेश्याः। कौमार्यास्तु वामोर्ध्वकरमारभ्य दक्षोर्ध्वकरपर्यन्तरम्। वैष्णव्यास्तु दक्षोर्ध्वकरमारभ्य दक्षाधःकरपर्यन्तम्। अरिश्चक्रम्। वाराह्यास्तु दक्षाद्यूर्ध्वयोराद्ये तदाद्यधःस्थयोरन्ये। इन्द्राण्यास्तु वामोर्ध्वकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तम्। चामुण्डायास्तु दक्षोर्ध्वाधःकरयोराद्ये वामोर्ध्वाधःकरयोरन्ये। महालक्ष्म्यास्तु दक्षाधःकरमारभ्य दक्षोर्ध्वकरपर्यन्तमायुधध्यानम्।

आठ दलों में वक्रतुण्ड, एकदंष्ट्र, महोदर, गजानन, लम्बोदर, विकट, विघ्नराट्, धूम्रवर्ण—इन आठ की पूजा करे। दलों के अग्रभाग में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। इन आठों देवियों के ध्यान इस प्रकार कहे गये हैं—

ब्राह्मी का ध्यान—ब्राह्मी स्वर्णसमा ध्येया मृगचर्मविभूषिता। अक्षमालाभये दण्डकुण्डिके दधती करैः।।
माहेश्वरी का ध्यान—त्रिशिखं परशुं हस्तैर्डमरुं नृकपालकम्। बिभ्राणां चन्द्रगौराङ्गीं माहेशीं भावयेच्छुभाम्।।
कौमारी का ध्यान—गुणखट्वाङ्गदण्डाङ्कुशान् वहन्तीं कराम्बुजैः। इन्द्रगोपारुणां ध्यायेत् कौमारीं करुणालयाम्।।
वैष्णवी का ध्यान—अरिशङ्खकपालानि घण्टां च करपङ्कजैः। बिभ्राणां वैष्णवीं ध्यायेन्नीलमेघसमप्रभाम्।।
वाराही का ध्यान—हलं च मुसलं दोर्भिर्दधानां खड्गखेटकौ। वाराहीं भावयेच्छक्तिमञ्जनाद्रिसमप्रभाम्।।
इन्द्राणी का ध्यान—तोमराङ्कुशवज्राह्वविद्युद्युक्तकराम्बुजाम्। इन्द्राणीं भावयेन्मन्त्री नीलवर्णां सुभूषणाम्।।
चामुण्डा का ध्यान—धारयन्तीं शूलखड्गौ कपालं नृशिरः करैः। चामुण्डां शोणवर्णां च मुण्डमालायुतां स्मरेत्।।
महा लक्ष्मी का ध्यान—स्वर्णाभामक्षमालां च बीजपूरकपालके। पद्मं च दधतीं हस्तैर्महालक्ष्मीं स्मरेत् सुधीः।।

आयुध ध्यान—ब्राह्मी के निचले दाहिने हाथ से ऊपर वाले हाथ तक क्रमशः उनके आयुधों का ध्यान करे। इसी प्रकार माहेश्वरी के भी आयुधों का ध्यान करे। कौमारी के आयुध का ध्यान ऊपर वाले बाँयें हाथ से नीचे वाले दाहिने हाथ तक क्रमशः किया जाता है। वैष्णवी के आयुध का ध्यान भी इसी प्रकार किया जाता है। वाराही का ध्यान ऊपरी दाहिना हाथ से आरम्भ कर निचले बाँयें हाथ तक किया जाता है। इन्द्राणी के आयुधों का ध्यान ऊपर वाले बाँयें हाथ से आरम्भ करके निचले बाँयें हाथ तक करे। चामुण्डा के आयुधों को ध्यान ऊपरी दाहिने हाथ से बाँयें निचले हाथ तक करे। महालक्ष्मी के आयुधों का ध्यान निचले दाँयें हाथ से ऊपरी दाँयें हाथ तक करे।

दिक्पालानां ध्यानानि

तथा—

चतुरस्रत्रयेऽन्तःस्थवीथीद्वन्द्वे समर्चयेत् । दिक्पालांश्च तदस्त्राणि गणेशार्चनमीरितम् ।।१६।।
इन्द्रं सुराधिपं पीतं वज्रहस्तं सवाहनम् । अग्निं तेजोधिपं रक्तं शक्तिहस्तं सुभूषितम् ।।१७।।
यमं प्रेताधिपं कृष्णं दण्डहस्तं समर्चयेत् । रक्षोधिपं च निर्ऋतिं खड्गहस्तं सुधूम्रकम् ।।१८।।
पाशहस्तं सुशुभ्राङ्गं वरुणं यादसां पतिम् । वायुं प्राणाधिपं धूम्रमङ्कुशाढ्यकरं यजेत् ।।१९।।
यक्षाधिपं कुबेरं च मुक्तावर्णं गदाकरम् । विद्याधिपं तथैशानं स्वच्छं शूलकरं यजेत् ।।२०।।
नागाधिपं तथा रक्तं गौरं चक्रकरं यजेत् । लोकाधिपं विधातारं रक्तं पद्मकरं यजेत् ।।२१।।
ऐरावतं तथा मेषं महिषं मृतपूरुषम् । मकरं मृगमत्स्यौ च वृषं च विपहंसकौ ।।२२।।
इन्द्रादिलोकपालानां वाहनानि विदुर्बुधाः । ततो बहिस्तदस्त्राणि तत्पार्श्वे च समर्चयेत् ।।२३।।
वज्रं पीतं सितां शक्तिं दण्डं कृष्णं समर्चयेत् । खड्गमाकाशसङ्काशं पाशं विद्युन्निभं यजेत् ।।२४।।
अङ्कुशं रक्तवर्णं च शुक्लवर्णां गदां यजेत् । त्रिशूलं नीलवर्णं च यजेत् साधकसत्तमः ।।२५।।
रथाङ्गं कुरुबिन्दाभं पद्मं रक्तं समर्चयेत् । लोकपालायुधान्येव कथितानि मनीषिभिः ।।२६।।
य एवं पूजयेद्देवं गणेशं भक्तिसंयुतः । इह भुक्त्वाखिलान् भोगानन्ते शिवपदं व्रजेत् ।।२७।। इति।

दिक्पालों का ध्यान—तीनों चतुरस्र की दो वीथियों में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके आयुधों की पूजा करे। वाहनसहित हाथ में वज्र धारण किये पीत वर्ण देवराज इन्द्र की पूजा करे। तेज:पुञ्जस्वरूप रक्तवर्ण हाथ में शक्ति लिये अग्नि की पूजा करे। हाथ में दण्ड धारण किये कृष्ण वर्ण प्रेताधिप यम की पूजा करे। धूम्र वर्ण हाथ में खड्‌ग धारण किये राक्षसाधिप निर्ऋति की पूजा करे। शुभ्र वर्ण हाथ में पाश धारण किये अपाम्पति वरुण की पूजा करे। धूम्र वर्ण, हाथ में अंकुश धारण किये प्राणाधिप वायु की पूजा करे। मुक्तासदृश वर्ण वाले, हाथ में गदा धारण किये यक्षस्वामी कुबेर की पूजा करे। स्वच्छ वर्ण शूलधारी विद्याधिपति ईशान की पूजा करे। रक्त गौर वर्ण चक्रधारी नागाधिपति की पूजा करे। रक्त वर्ण पद्मधारी लोकाधिपति विधाता की पूजा करे। इन सभी के वाहन क्रमश: इस प्रकार कहे गये हैं—इन्द्र का ऐरावत, अग्नि का भेंड़ा, यम का भैंसा, निर्ऋति का मृत पुरुष, वरुण का मगर, वायु का मृग, कुबेर का मत्स्य, ईशान का वृषभ, अनन्त का विष एवं ब्रह्मा का हंस। इनकी पूजा के बाद दूसरे अन्तराल में उनके आयुधों की पूजा करे। आयुधों का वर्ण इस प्रकार है—वज्र का वर्ण पीला, शक्ति का उजला, दण्ड का काला, खड्‌ग का आकाश के समान, पाश का बिजली की आभा के समान, अंकुश का लाल, गदा का श्वेत, त्रिशूल का नीला, चक्र का लाल कमल के समान और पद्म का वर्ण लाल है। मनीषियों ने लोकपालों के आयुधों का वर्णन ऐसा ही किया है। इस प्रकार से जो गणेश की भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह संसार में सभी भोगों को भोगकर अन्त में शिवलोक को प्राप्त करता है।

पूजाप्रयोग:

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते गणेशमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गणकाय ऋषये नम:। मुखे निचृच्छन्दसे नम:। हृदये श्रीविघ्नेश्वराय देवतायै नम:। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोग:। इति कृताञ्जलिरुक्त्वा मूलमन्त्रेण करशुद्धिं कृत्वा, अङ्गुष्ठयो: गणञ्जयाय स्वाहा, हृदयाय नम:। तर्जन्यो: एकदंष्ट्राय हुं फट्, शिरसे स्वाहा। मध्यमयो: अचलकर्णिने नमोनम:, शिखायै वषट्। अनामिकयो: गजवक्त्राय नमोनम:, कवचाय हुं। कनिष्ठिकयो: महोदराय चण्डाय हुं फट्, अस्त्राय फट्। इति मन्त्रानङ्गुष्ठादि-कनिष्ठान्तं करयोर्विन्यस्य, नेत्रवर्जं हृदयादिपञ्चाङ्गेष्वपि न्यसेत्। अथवा गांगीं इत्यादिना करषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यानाद्यात्मपूजान्तं प्रोक्तविधिना कृत्वा, एकदंष्ट्राय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो विघ्न: प्रचोदयात्। इति गणेशगायत्र्या गणेशपूजाद्रव्याणि पूजास्थानं च प्रोक्ष्य, देवताग्रं पूर्वं परिकल्प्य तदनुसारेण प्राप्तनिर्ऋतिकोणे श्रीपर्ण्यादिपीठे कुङ्कुमादिना चतुर्द्वारयुक्तचतुरस्रत्रयवेष्टितमष्टदलकमलं पूजायन्त्रं निर्माय, तत्र प्रागुक्तविधिना मण्डूकादिपृथिव्यन्तं संपूज्य, सुधार्णवस्थाने इक्षुरससमुद्रं संपूज्य रत्नद्वीपादिपरतत्त्वार्चान्तेऽष्टदलकेसरेषु स्वाग्रान्मध्यान्तं—ॐ तीव्रायै नम:। ज्वालिन्यै नम:। नन्दायै नम:। भोगदायै नम:। कामरूपिण्यै नम:। उग्रायै नम:। तेजोवत्यै नम:। सत्यायै नम:। विघ्ननाशिन्यै नम:। इति संपूज्य, गं सर्वशक्तिकमलासनाय नम:, इति समस्तं पीठमभ्यर्च्य, तत्र मूल-मन्त्रमुच्चार्य श्रीगणेशमूर्तिं परिकल्पयामि नम: इति चक्रमध्ये मूर्तिं परिकल्प्य, मूर्त्यभावे पुष्पादिकं निक्षिप्य ध्यानोक्तां मूर्तिं भावयन् मूलमुच्चार्य 'श्रीगणपतिमूर्तये नम:' इति मूर्तिं संपूज्य, तस्यां प्रागुक्तविधिना गणेशमावाह्यावाहनादिमुद्रा: प्रदर्श्य, प्राणप्रतिष्ठान्ते दन्तपाशाङ्कुशविघ्नपरशुलड्डुकबीजापूराख्या: सप्त मुद्रा: प्रदर्श्य, आसनादिपुष्पान्तानुपचारानुपचर्य्य, कर्णिकायां देवाग्रादिचतुर्दिक्षु—ॐगणाधिपाय नम:। गणेशानाय नम:। गणनायकाय नम:। गणक्रीडाय नम:। इति संपूज्य, अष्टदलकेसरेषु—आग्नेये ॐगणञ्जयाय स्वाहा हृदयाय नम:। ईशाने ॐएकदंष्ट्राय हुं फट् शिरसे स्वाहा०। नैर्ऋते ॐअचलकर्णिने नमोनम: शिखायै वषट्०। वायव्ये गजवक्त्राय नमोनम: कवचाय हुं०। ततो देवाग्रादि चतुर्दिक्षु—ॐमहोदराय चण्डाय हुं फट् अस्त्राय फट् नम:। यद्वा, पूर्वोक्तस्थानेष्वेव—गां हृदयाय नम:। गीं शिरसे स्वाहा इत्यादिषडङ्गानि पूजयेत्। अत्र षडङ्गपक्षे तु देवस्याग्रे गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। इति नेत्रं संपूज्य पश्चादस्त्रं पूजयेदिति शेष:। ततोऽष्टदलेषु देवाग्रदलमारभ्य—ॐ वक्रतुण्डाय नम:। एकदंष्ट्राय नम:। महोदराय नम:। गजाननाय नम:। लम्बोदराय नम:। विकटाय नम:। विघ्नराजाय नम:। धूम्रवर्णाय नम:। इति प्रादक्षिण्येन संपूज्य, दलाग्रेषु—आं

ब्राह्म्यै नमः। ईं मोहश्वर्य्यै नमः। ऊं कौमार्य्यै नमः। ॠं वैष्णव्यै नमः। लृं वाराह्यै नमः। ऐं इन्द्राण्यै नमः। औं चामुण्डायै नमः। अः महालक्ष्म्यै नमः। इति संपूज्य, बहिश्चतुरस्रे प्रथमवीथ्यां देवाग्रमारभ्य—ॐ लं इन्द्राय सुराधिपतये पीतवर्णाय वज्रहस्ताय ऐरावतवाहनाय नमः। ॐ रं अग्नये तेजोधिपतये रक्तवर्णाय शक्तिहस्ताय मेषवाहनाय नमः। ॐ टं यमाय प्रेताधिपतये कृष्णवर्णाय दण्डहस्ताय महिषवाहनाय नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये धूम्रवर्णाय खड्गहस्ताय प्रेतवाहनाय नमः। ॐ वं वरुणाय जलाधिपतये शुक्लवर्णाय पाशहस्ताय मकरवाहनाय नमः। ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये कृष्णवर्णायाङ्कुशहस्ताय मृगवाहनाय नमः। ॐ सं कुबेराय यक्षाधिपतये मौक्तिकवर्णाय गदाहस्ताय नरवाहनाय नमः। ॐ हौं ईशानाय विद्याधिपतये स्फटिकवर्णाय शूलहस्ताय वृषवाहनाय नमः। इति संपूज्य, इन्द्रेशानयोर्मध्ये ॐ आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये रक्तवर्णाय पद्महस्ताय हंसवाहनाय नमः। निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये गौरवर्णाय चक्रहस्ताय गरुडवाहनाय नमः। इति संपूज्य, द्वितीयवीथ्यां—ॐ वज्राय नमः। शक्तये नमः। दण्डाय नमः। खड्गाय नमः। पाशाय नमः। अङ्कुशाय नमः। गदायै नमः। त्रिशूलाय नमः। पद्माय नमः। चक्राय नमः। इति लोकपालायुधानि देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन संपूज्य, मूलमुच्चार्य साङ्गाय सपरिवाराय श्रीगणपतये नमः, इति त्रिःपुष्पाञ्जलिना संपूज्य धूपदीपादि पूर्वोक्तविधिना सर्वं कुर्यादिति। सारसंग्रहे—

एकलक्षं मनुं जप्त्वा जुहुयात् तद्दशांशतः। अष्टद्रव्यैर्महेशानि तर्पणादि ततश्चरेत् ॥१॥
मोदकैः पृथुकैर्लाजैः सक्तुभिः सेक्षुपर्वभिः। नारिकेलैस्तिलैः शुद्धैः सुपक्वैः कदलीफलैः ॥२॥ इति।

अत्रैकैकद्रव्येण सार्धद्वादशशतं जुहुयात्। उक्त च गणेश्वरपरामर्शिन्याम्—'अष्टद्रव्यैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयाच्च पृथक्पृथक्' इति। अत्र जपः कृतयुगपरः। कलावेतच्चतुर्गुणं जपहोमादिकं कार्यमिति।

पूजा प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद गणेश मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गणकाय ऋषये नमः, मुखे निचृच्छन्दसे नमः, हृदये श्रीविघ्नेश्वराय देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास करके अपनी समस्त अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर मूलमन्त्र से करशुद्धि करके समस्त अंगुलियों में इस प्रकार न्यास करे—अङ्गुष्ठयोः गणञ्जयाय स्वाहा, हृदयाय नमः। तर्जन्योः एकदंष्ट्राय हुं फट्, शिरसे स्वाहा। मध्यमयोः अचलकर्णिने नमोनमः, शिखायै वषट्। अनामिकयोः गजवक्त्राय नमोनमः, कवचाय हुं। कनिष्ठिकयोः महोदराय चण्डाय हुं फट्, अस्त्राय फट्। इस प्रकार उपर्युक्त मन्त्रों से करन्यास एवं नेत्ररहित हृदयादि न्यास करे अथवा गां-गीं इत्यादि से कर-षडङ्ग न्यास करके ध्यान से आत्मपूजा तक विहित रीति से सम्पन्न कर एकदंष्ट्राय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो विघ्नः प्रचोदयात्—इस गणेश गायत्री से गणेशपूजा के द्रव्य तथा पूजास्थान का प्रोक्षण करके देवता के आगे पूर्व दिशा की कल्पना करके नैर्ऋत्य कोण में श्रीपर्ण्यादि पीठ में कुङ्कुमादि से चार द्वारयुक्त तीन चतुरस्र से वेष्टित अष्टदल कमल पर पूजा यन्त्र बनाकर उसी पर पूर्वोक्त विधि से मण्डूक आदि से पृथिवी तक पूजा करके अमृत सागर में इक्षुरस समुद्र की पूजा करके अष्टदल के केसरों में अपने आगे से ॐ तीव्रायै नमः, ज्वालिन्यै नमः, नन्दायै नमः, भोगदायै नमः, कामरूपिण्यै नमः, उग्रायै नमः, तेजोवत्यै नमः, सत्यायै नमः, विघ्ननाशिन्यै नमः से पूजन करके गं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः से समस्त पीठ की पूजा करके मूल मन्त्र का उच्चारण कर चक्र के मध्य में गणेश की मूर्त्ति कल्पित कर अथवा पुष्प रखकर मूर्त्ति की पूजा करके उसमें पूर्वोक्त विधि से आवाहन आदि मुद्रा प्रदर्शित करके प्राणप्रतिष्ठा के बाद दन्त-पाश-अङ्कुश-विघ्न-परशु-लडुक-बीजापूर ये सात मुद्रायें प्रदर्शित कर आसन आदि उपचार प्रदान कर कमल कर्णिका में देवता के आगे चारों दिशाओं में ॐगणाधिपाय नमः, गणेशानाय नमः, गणनायकाय नमः, गणक्रीडाय नमः से पूजन करे। अष्टदल केसरों में आग्नेय कोण में ॐगणञ्जयाय स्वाहा हृदयाय नमः, ईशान कोण में ॐ एकदंष्ट्राय हुं फट् शिरसे स्वाहा, नैर्ऋत्य कोण में ॐअचलकर्णिने नमोनमः शिखायै वषट्, वायव्य में गजवक्त्राय नमोनमः कवचाय हुं से पूजन करे। तदनन्तर देवता के आगे चारों दिशाओं में ॐमहोदराय चण्डाय हुं फट् अस्त्राय फट् नमः अथवा पूर्वोक्त स्थानों में ही गां हृदयाय नमः, गीं शिरसे स्वाहा इत्यादि मन्त्रों से षडङ्ग पूजन करे। यहाँ पर षडङ्ग पूजन के क्रम में देवता के आगे गौं नेत्रत्रयाय वौषट् मन्त्र से नेत्र का पूजन करने के उपरान्त अस्त्र का पूजन करना चाहिये।

तदनन्तर अष्टदल कमल के आठों दलों में देवता के आगे से आरम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से इन मन्त्रों से पूजन करे—ॐ वक्रतुण्डाय नमः, ॐ एकदंष्ट्राय नमः, ॐ महोदराय नमः, ॐ गजाननाय नमः, ॐ लम्बोदराय नमः, ॐ विकटाय नमः, ॐ विघ्नराजाय नमः, ॐ धूम्रवर्णाय नमः। आठों दलों के आगे आं ब्राह्म्यै नमः, ईं मोहश्वर्य्यै नमः, ऊं कौमार्य्यै नमः, ॠं वैष्णव्यै नमः, लृं वाराह्यै नमः, ऐं इन्द्राण्यै नमः, औं चामुण्डायै नमः, अः महालक्ष्म्यै नमः मन्त्रों से पूजन करके उसके बाहर चतुरस्र की प्रथम पंक्ति में इनसे पूजन करे—ॐ लं इन्द्राय सुराधिपतये पीतवर्णाय वज्रहस्ताय ऐरावतवाहनाय नमः, ॐ रं अग्नये तेजोधिपतये रक्तवर्णाय शक्तिहस्ताय मेषवाहनाय नमः, ॐ टं यमाय प्रेताधिपतये कृष्णवर्णाय दण्डहस्ताय महिषवाहनाय नमः, ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये धूम्रवर्णाय खड्गहस्ताय प्रेतवाहनाय नमः, ॐ वं वरुणाय जलाधिपतये शुक्लवर्णाय पाशहस्ताय मकरवाहनाय नमः, ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये कृष्णवर्णायाङ्कुशहस्ताय मृगवाहनाय नमः, ॐ सं कुबेराय यक्षाधिपतये मौक्तिकवर्णाय गदाहस्ताय नरवाहनाय नमः, ॐ हौं ईशानाय विद्याधिपतये स्फटिकवर्णाय शूलहस्ताय वृषवाहनाय नमः। तदनन्तर पूर्व एवं ईशान कोण के मध्य में ॐ आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये रक्तवर्णाय पद्महस्ताय हंसवाहनाय नमः से पूजन करके नैर्ऋत्य कोण तथा पश्चिम दिशा के मध्य में ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये गौरवर्णाय चक्रहस्ताय गरुडवाहनाय नमः से पूजन करे। द्वितीय पंक्ति में प्रदक्षिण क्रम से लोकपालों का पूजन करने के बाद उनके आयुधों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्तये नमः, ॐ दण्डाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अङ्कुशाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ त्रिशूलाय नमः, ॐ पद्माय नमः, ॐ चक्राय नमः। तदनन्तर मूल मन्त्र का उच्चारण कर साङ्गाय सपरिवाराय श्रीगणपतये नमः मन्त्र से तीन पुष्पाञ्जलि समर्पित करने के पश्चात् धूप-दीप आदि प्रदान करके पूजा का समापन करे।

सारसंग्रह में कहा गया है कि एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन प्रत्येक द्रव्य से बारह-बारह सौ करे। ये आठ द्रव्य हैं—लड्डू, चूड़ा, लावा, सत्तू, ईखपोर, नारियल खण्ड, तिल और पके केले।

काम्यहोमविधानम्

तथा सारसंग्रहे—

दौग्धान्नेन घृताक्तेन होमोऽभीष्टफलप्रदः। लक्ष्मीकामो नारिकेलैश्चतुर्थ्यां जुहुयाच्छिवे ॥३॥
तिललाजान्वितैः सक्तुनारिकेलैश्चतुःशतम्। सितपक्षादिमारभ्य प्रत्यहं च हुनेत् क्रमात् ॥४॥
चतुर्थ्यन्तं ततः सर्वे प्राणिनो वशगा नृणाम्। तिलैस्तण्डुलसंसिक्तै(र्होमः श्रीवश्यकीर्तिदः ॥५॥
स्वादुत्रययुतैर्लाजैर्हुनेत् सप्तदिनावधि। कन्यार्थी लभते कन्यां वरं कान्तं वरार्थिनी ॥६॥
दधिसंसिक्तलवणै)र्जुहुयाच्च चतुर्दिनम्। निशीथिन्यां च सर्वेषां भवेद्वश्यं तथेप्सितम् ॥७॥ इति।

अत्र सर्वत्र काम्यहोमेषु संख्यानुक्तौ कार्यस्य गुरुलाघवं ज्ञात्वा च सहस्रादिनियुतपर्यन्तं कार्यानुसारेण जुहुयात्। उक्तं च कुलार्णवे—

एकेन वाथ सर्वैर्वा तत्कार्यगुरुलाघवम्। ज्ञात्वा देवि सहस्रं वा त्रिसहस्रं तु पञ्च वा ॥१॥
अयुतं नियुतं वापि प्रयुतं वा कुलेश्वरि। तत्तत्कर्मोदिते कुण्डे संस्कृते हव्यवाहने ॥२॥
सितार्कद्रुममूलेन कुचन्दनसुदारुभिः। गजत्रोटितनिम्बेन विषाणेनैव दन्तिनाम् ॥३॥
विधाय विघ्नं संपूज्य तं स्पृष्ट्वा प्रजपेन्मनुम्। उपोषितः शुचिश्चन्द्रग्रहे तं च समुद्धरेत् ॥४॥
शिखायां व्यवहारादौ समरे विजयो भवेत्। रोचना समदानेन सञ्जप्त्वा मनुना ततः ॥५॥

समदा गजमदसहिता।

तिलकात् सर्वराजानो लोकाः स्युर्वशगाः प्रिये। नवनीते नवे साध्यनामालिख्यानुलोमगे ॥६॥
विलोमे विघ्नबीजे च तद्धृतं स्थापितानिलम्। अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तूष्णीं तद्भक्षयेत् ततः ॥७॥
सप्ताहाद्वशगः साध्यः साधकस्य भवेद् ध्रुवम्। गणेशं तर्पयेत् तोयैः संख्यया वक्ष्यमाणया ॥८॥
एकोनपञ्चाशता च दिनैरिष्टमवाप्नुयात्। प्रणवादिममुं मन्त्रं केचिदिच्छन्ति सूरयः ॥९॥
पूजायां च हृदन्तोऽयं होमे स्वाहान्त ईरितः। इति।

इसके बाद तर्पण करे। दूध या घी से अक्त अन्न के हवन से अभीष्ट फल मिलता है। लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये चतुर्थी तिथि में नारियलखण्डों से हवन करे। तिल, लावा, सत्तू, नारियल खण्डों—प्रत्येक से एक-एक सौ हवन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से चतुर्थी तक प्रतिदिन करे तो सभी प्राणी वश में होते हैं। इसका नियम यह है कि शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से चतुर्थी तक चार दिनों में प्रतिदिन पहले तिल से एक सौ, तदनन्तर लाजा से एक सौ, तदनन्तर सत्तू से एक सौ और अन्त में त्रिमधु समन्वित नारियल खण्ड से एक सौ—इस प्रकार कुल चार सौ हवन करना चाहिये। त्रिमधुराक्त तिल चावल के हवन से धन-वश्य और कीर्ति प्राप्त होती है। त्रिमधुराक्त लावा से सात दिनों तक हवन करने से कन्या को वर और वर को कन्या की प्राप्ति होती है अर्थात् दोनों का विवाह होता है। दही-संसिक्त नमक से चार रातों में चार-चार सौ हवन करने से सभी इच्छित वशीभूत होते हैं। इन सभी कार्यों में कार्य की लघुता-गुरुता के अनुसार एक हजार से दश हजार तक हवन करना चाहिये।

कुलार्णव में कहा गया है कि एक ही द्रव्य से या सबों से कार्य की गुरुता-लघुता के अनुसार एक हजार या तीन हजार या पाँच हजार या दश हजार या एक लाख या दश लाख हवन कर्मानुसार कुण्ड में संस्कृत अग्नि में करना चाहिये। उजले फूलों वाले अकवन की जड़ से, लाल चन्दन से, हाथी के द्वारा तोड़े हुए नीम की लकड़ी से या हाथी दाँत से निर्मित गणेश की पूजा करे। उसे स्पर्श करके चन्द्रग्रहण में उपवास रहकर जप करे। उसे शिखा में धारण करने से धारक व्यवहार में या युद्ध में विजयी होता है। गोरोचन और हाथी के मद को मन्त्र से मन्त्रित करके तिलक करे तो राजा और सारा संसार वश में होता है। ताजा मक्खन में साध्य नामाक्षरों को अनुलोम विलोम से गणेशबीज के साथ लिखकर उसे अग्नि पर रखकर मन्त्र का एक सौ आठ जप मौन होकर करे। तदनन्तर उसे खा जाये तो एक सप्ताह में साध्य साधक के वश में हो जाता है। आशय यह है कि नूतन मक्खन में परस्पर विमुख दो गणेशबीज के मध्य में दोनों बीजों के बिन्दुस्थान में 'मम', बीज के नीचे 'अमुकं', दोनों के मध्य में 'वशं कुरु कुरु' इस प्रकार साध्य-साधक कर्मो को लिखकर सबों को गणेशबीजों से आवेष्टित कर उसमें साध्य के प्राण को स्थापित करके एक सौ आठ मूल मन्त्र का स्पर्श करते हुये जप करे, तत्पश्चात् उस मक्खन का भक्षण करे। इस प्रकार एक सप्ताह तक करने से साध्य का वशीकरण होता है। वक्ष्यमाण संख्या में गणेश का तर्पण जल से करे। उनचास दिनों तक ऐसा तर्पण करने से अभीष्ट प्राप्त होता है। किसी के अनुसार ॐ 'गं' मन्त्र का जप करे। पूजा में ॐ गं नम: और हवन में 'ॐ गं स्वाहा' का उच्चारण करें।

एकार्णमन्त्रान्तरविधि:

तथा सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

स्मृतिर्भूमनुयुग्बिन्दुनादालङ्कृतमस्तकः ।एकाक्षरो गणेशस्य मन्त्र एष उदाहृतः ॥१॥ इति।

स्मृतिर्गकारः, भूर्लकारः, मनुरौकारः, बिन्दुनादेन युतस्तेन ग्लौं इति। तथा—

शार्ङ्गी चतुर्दशार्णाद्यस्वरयुग् बिन्दुभूषितः। अयमेको गणपतेरेकार्णो मन्त्र उत्तमः ॥१॥

शार्ङ्गी गकारः, चतुर्दशाद्यस्वर ओकारः, बिन्दुरनुस्वारस्तेन गों इति। तथा—

गणको मुनिरुक्तः स्यान्निचृच्छन्दश्च देवता। बालो गणपतिः सर्वसुरासुरनमस्कृतः ॥२॥
स्वेन षड्दीर्घयुक्तेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत्।

अत्राद्ये ग्लांग्लीं इत्यादि, द्वितीये गांगीं इत्यादि करषडङ्गन्यासो ज्ञेयः। तथा—

ध्यानपूजाजपाद्यं स्यादस्य पूर्ववदेव तु। ततः सिद्धे मनौ सम्यक् पूर्वमन्त्रोदितान् प्रिये ॥३॥
प्रयोगान् विधिवत् कुर्यात् साधकोऽभीष्टसिद्धये। इति।

इत्थमेकाक्षरः सप्तविधः। काम्यहोममाह—दौग्धान्नेनेति, तिललाजेत्यादि श्लोकस्यायमर्थः—शुक्लप्रति-पदमारभ्य तच्चतुर्थ्यन्तेषु चतुर्षु दिनेषु प्रत्यहं प्रथमतस्तिलैरेकशतं, तदनु लाजैस्तदनु सक्तुभिस्तदनु नारिकेलैस्त्रिमध्वक्तैः क्रमाच्चतुःशतं जुहुयात् इति। नवनीत इत्यादि, नवे नवनीते परस्परविमुखगणेशबीजद्वयस्य मध्ये तद्बीजद्वयबिन्दुस्थाने

मम, बीजाधः अमुकं, तयोर्मध्ये वशं कुरु कुरु, इति साध्यसा धककर्माणि विलिख्य, तत्सर्वं गणेशबीजैरावेष्ट्य, तत्र साध्यप्रमाणस्थापनं विधायाष्टोत्तरशतं मूलमन्त्रं नवनीतं स्पृशञ्जपित्वा पश्चात् तद्भक्षयेत्। इत्थं सप्ताहप्रयोगेन साध्यो वश्यो भवति।

सारसंग्रह के अनुसार गणेश का अन्य मन्त्र 'ग्लौं' एवं 'गों' है।

इन दोनों मन्त्रों के ऋषि गणक, छन्द निचृद् एवं देवता सुरासुर नमस्कृत बाला गणेश है। षडङ्ग न्यास ग्लां ग्लीं या गां गीं इत्यादि से किया जाता है। इनके भी ध्यान पूजा जप आदि पूर्ववत् हैं। इस प्रकार से सम्यक् सिद्ध मन्त्र से अभीष्ट-सिद्धि के लिये साधक पूर्वोक्त प्रयोगों को करे। इस प्रकार गणेश का एकाक्षर मन्त्र सात प्रकार का होता है।

विरिगणेशमन्त्रस्तदर्श्चाविधिस्तत्प्रयोगश्च

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

विरिशब्दद्वयं प्रोच्य वदेद्गणपतिं ततः। वरेति च समुच्चार्य वरदेति वदेत् पुनः ॥१॥
सर्वलोकद्वितीयान्तमन्ते वशमथोच्चरेत्। आनयाग्निवधूरन्ते मायाद्यं च समुद्धरेत् ॥२॥
विरिविघ्नेशमन्त्रोऽयं षड्विंशत्यक्षरो भवेत्। इति।

विरिशब्दद्वयं विरिविरि इति। गणपतिमिति लेखनं कर्मणि द्वितीया तेन गणपतिमिति। द्वितीयान्तेन सर्वलोकमिति। अग्निवधूः स्वाहा। मायाद्यं भुवनेश्वरीबीजाद्यम्। केचित्त्वेनं मन्त्रमेकोनविंशत्यक्षरात्मकं वदन्ति। तन्मते 'वरवरद' इति पञ्चवर्णा लोकमिति वर्णद्वयं इति सप्तवर्णा न भवति। उक्तं च गणेश्वरपरामर्शिन्याम्—

वकाररेफावपि लोचनाढ्यौ पुनस्तथोद्धृत्य गणात्पतीति।
सर्वं समुच्चार्य च मे वशं स्यान्माकारतश्चापि तथानयेति ॥१॥
शब्दः शिरः स्यात्……………………………………। इति।

अस्यार्थः—वकाररेफौ लोचनाढ्यौ प्रत्येकमिकारयुक्तौ, पुनरेतौ वर्णावुद्धृत्य तेन विरिविरि इति। गणात्पति गणपति सर्वं मे वशमानय, शिरः स्वाहाकारः। मायाद्यश्च पूर्वोद्धृतमन्त्रस्यैव मन्त्रान्तरत्वेनोक्तत्वात्। अन्ये तु— वैपरीत्येनादौ महागणपतिमन्त्रस्य बीजषट्कं योजयित्वा षड्विंशत्यक्षरस्य द्वात्रिंशदक्षरत्वं वदन्ति। बीजषट्कं तन्मन्त्रोद्धारप्रकरणे वक्ष्यते, वैपरीत्यं तु तत्रोक्तक्रमस्य। तथा—

मुनिर्गणक आख्यातश्छन्दो गायत्रमुच्यते। देवता विरिविघ्नेशो दृष्टादृष्टफलप्रदः ॥२॥
द्वितीयमन्त्रस्य निचृच्छन्दः।

वेदवेदेषुपञ्चार्णैः शरलोचनसंख्यकैः। विभक्तैर्मूलमन्त्रार्णैः षडङ्गानि मनोरथ ॥३॥
मायाद्यानि विधेयानि जातियुक्तानि मन्त्रिणा।

वेदाश्चत्वारः। इषवः पञ्च। शराः पञ्च। लोचनं द्वयम्। मायाद्यानीति प्रत्येकं मायाबीजयुक्तानि। जातयो नमःस्वाहावषट् इत्यादयः। एतल्लक्षणमुक्तं प्रागेव। द्वितीयमन्त्रस्य तु मन्त्रपदैः षड्भिः षडङ्गानि।

सिन्दूराभमिभाननं त्रिनयनं हस्तेषु पाशाङ्कुशौ बिभ्राणं मधुमत्कपालमनिशं सार्धेन्दुमौलिं भजे।
पुष्ट्या श्लिष्टतनुं ध्वजाग्रकरया पद्मोल्लसद्धस्तया तद्योन्याहितपाणिमात्तवसुमत्पात्रोल्लसत्पुष्करम् ॥४॥

वामदक्षोर्ध्वकरयोर्वामाधःकरे च पाशादित्रयं, दक्षाधःकरं देव्या वराङ्गे, वामाङ्गनिविष्टया देव्या दक्षिणकरेण प्रियाश्लेषः। वामाधःकरेण ध्वजाग्रं स्पृशन्त्या, वामदक्षिणयोः पद्ममित्यायुधध्यानम्। पुष्करं शुण्डादण्डः। द्वितीयेऽपि मन्त्रे इदमेव ध्यानम्। तृतीये तु—

बीजापूरगदे शरासनमरिं मालां च वामैः करैर्दक्षैरुत्पलपाशमार्गणरदान् रत्नाढ्यकुम्भं दधत्।
सिन्दूरारुणाविग्रहस्त्रिनयनो योन्यात्तशुण्डो गणस्तल्लिङ्गाहितपाणिमम्बुजकरां पुष्टिं वहन् वोऽवतात् ॥५॥

अत्र वामाध:करादिदक्षाध:करादिषु चायुधध्यानम्। कुम्भस्य सर्वोर्ध्वकरे युक्तत्वात्। तथा—

यजेत् पीठे पुरा प्रोक्ते नवशक्तिसमन्विते। मूलमन्त्रेण क्लृप्तायां मूर्तावावाह्य पूजयेत्॥६॥
मिथुनानि यजेदादावामोदादीन् दिगम्बरान्। अङ्गानि पूजयेत् पश्चान्मातृश्चैव ततः सुधीः॥७॥
अर्चयेल्लोकपालांश्च तदस्त्राणि ततो बहिः। षडावरणसंयुक्तं विरिविघ्नेश्वरं यजेत्॥८॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गणकाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि विरिविघ्नेश्वराय देवतायै नमः। इति विन्यस्येष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, चतुर्भिर्हृदयं, चतुर्भिः शिरः, पञ्चभिः शिखा, पञ्चभिः कवचं, पञ्चभिर्नेत्रं, द्वाभ्यामस्त्रमिति विभक्तैर्मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि विन्यस्य, ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते ततस्त्रिकोणे वक्ष्यमाणमहागणपतिपूजोक्तमिथुनत्रयं षट्कोणेष्वामोदादिषट्कं अष्टदलकेसरेष्वङ्गषट्कं दलेषु लोकेशांस्तदस्त्राणि चतुरस्रवीथीद्वये संपूज्य प्राग्वत् शेषं समापयेदिति। तथा—

वेदलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः। मधुरत्रयसंयुक्तैर्द्रव्यैरष्टभिरीरितैः॥९॥
एवं साधितमन्त्रस्तु प्रयोगान् कर्तुमर्हति। विकचोत्पलहोमेन वशयेत् सकलं जगत्॥१०॥
तिलतण्डुलहोमेन श्रियमाप्नोत्यनिन्दिताम्। मोदकानाज्यसंयुक्तान् हुत्वा विजयमाप्नुयात्॥११॥
मधुरत्रयहोमेन राजानं वशमाप्नुयात्। अभीष्टसाधनो होमो भक्ष्यभोज्यादिभिः कृतः॥१२॥ इति।

विरिगणेश मन्त्र—सार संग्रह के मूलोक्त श्लोक का उद्धार करने पर छब्बीस अक्षरों का एक अन्य गणेशमन्त्र इस प्रकार स्पष्ट होता है—ह्रीं विरि विरि गणपतिं वरवरद सर्वलोकं मे वशमानय स्वाहा। किसी के मत से उन्तीस अक्षरों का यही मन्त्र इस प्रकार है—ह्रीं विरि विरि गणपतिं सर्वं मे वशमानय स्वाहा। गणेश्वरपरामर्शिनी में भी इसी मन्त्र को स्पष्ट किया गया है।

अन्य मन्त्र—ॐ ह्रीं विरि विरि गणपतिं सर्वं मे वशमानय स्वाहा। अन्य मत से इसमें गणेश के छ: बीजों के योग से छब्बीस अक्षरों का मन्त्र होता है—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं ह्रीं विरि विरि गणपतये सर्वं मे वशमानय स्वाहा। इन बीजषट्कों के वैपरीत्य क्रम के योग से यही मन्त्र बत्तीस अक्षरों का हो जाता है।

इस मन्त्र के ऋषि गणक, छन्द गायत्री एवं देवता विरि विघ्नेश हैं। दूसरे मन्त्र का छन्द निचृद् है। इसका पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ ह्रीं विरि हृदयाय नमः। ह्रीं विरिगण शिरसे स्वाहा ह्रीं पति सर्वं मे शिखायै वषट्। ह्रीं वशमानय कवचाय हुम्, ह्रीं स्वाहा अस्त्राय फट्। न्यास के बाद प्रथम और द्वितीय मन्त्रों के अनुष्ठान में इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

सिन्दूराभमिभाननं त्रिनयनं हस्तेषु पाशाङ्कुशौ बिभ्राणं मधुमत्कपालमनिशं सार्धेन्दुमौलिं भजे।
पुष्ट्या श्लिष्टतनुं ध्वजाग्रकरया पद्मोल्लसद्धस्तया तद्योन्याहितपाणिमात्तवसुमत्पात्रोल्लसत्पुष्करम्॥

तृतीय मन्त्र का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

बीजापूरगदे शरासनमरिं मालां च वामैः करैर्दक्षैरुत्पलपाशमार्गणरदान् रत्नाढ्यकुम्भं दधत्।
सिन्दूरारुणाविग्रहस्त्रिनयनो योन्यात्तशुण्डो गणस्तल्लिङ्गाहितपाणिमम्बुजकरां पुष्टिं वहन् वोऽवतात्॥

तदनन्तर नवशक्ति-समन्वित पीठपूजा करे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके आवाहन करके पूजन करे। प्रयोग में पूर्ववत् योगपीठ न्यास करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गणकाय ऋषये नमः, हृदि विरि विघ्नेश्वराय देवतायै नमः, गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। इष्टसिद्धि के लिये मन्त्र के चार वर्णों से हृदय, चार से शिर, पाँच से शिखा, पाँच से कवच पाँच से नेत्र, दो से अस्त्र में षडङ्ग न्यास करे। ध्यान करके पुष्पोपचार तक पूजन करे। त्रिकोण मे वक्ष्यमाण महागणपति मिथुनत्रय की पूजा करे। षट्कोण में आमोदादि षट्क की पूजा करे। अष्टदल केसर में षडङ्ग पूजा करे। दलों में ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओं की पूजा करे। तीन चतुरस्रों से निर्मित दोनों वीथियों में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि उनके आयुधों की पूजा करे। पूर्ववत् शेष पूजन करके पूजा का समापन करे।

तदनन्तर चार लाख मन्त्र जप करे। उसका दशांश हवन मधुरत्रय संयुक्त अपेक्षित द्रव्यों से करे। इस प्रकार मन्त्र को साधित करने पर प्रयोगों की योग्यता प्राप्त होती है। विकसित उत्पल के हवन से सारा संसार वश में होता है। तिल चावल के हवन से अनिन्दित श्री प्राप्त होती है। गोघृत-मिश्रित लड्डू के हवन से जीत होती है। मधुरत्रय के हवन से राजा वशीभूत होते हैं। भक्ष्य भोज्य के हवन से अभीष्ट सिद्ध होता है।

लक्ष्मीगणेशमन्त्रस्तदर्चाविधिस्तत्प्रयोगश्च

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

वदेत् सौम्यं चतुर्थ्यन्तं महागणपतिं तथा। वरान्ते वरदं प्रोक्त्वा वदेत् सर्वजनं ततः ॥१॥
मे वशं च समाभाष्य वदेदानय ठद्वयम्। लक्ष्मीगणेशबीजाढ्य एकोनत्रिंशदक्षरः ॥२॥
लक्ष्मीगणेशमन्त्रोऽयं सर्वसंपत्प्रदायकः।

चतुर्थ्यन्तं महागणपतिं महागणपतये इति। ठद्वयं स्वाहाकारः। लक्ष्मीबीजं श्रीं। गणेशबीजं गं। एतदाढ्यः। तथा—

अन्तर्यामी मुनिः प्रोक्तो गायत्री निचृदन्विता। छन्दो लक्ष्मीगणेशोऽत्र देवता समुदाहृतः ॥३॥
षड्दीर्घयुक्तेनाद्येन द्वितीयेन च तद्वता। षडङ्गानि विधेयानि जातियुक्तानि मन्त्रिणा ॥४॥

हेमाभः पीतवस्त्रः करतलकमलैः संदधच्चक्रशङ्खौ
दन्ताभीती च नासाधृतकनकघटः पद्मसंस्थस्त्रिनेत्रः।
वामाङ्गाविष्टलक्ष्म्या विधृतकमलया प्रोल्लसद्दक्षदोष्णा
श्लिष्टः सौवर्णकान्त्या गणप इह महाश्रीकरो वः श्रियेऽस्तु ॥५॥

दक्षोर्ध्वकरमारभ्य दक्षाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। नासा शुण्डादण्डः। तथा—

प्राक्प्रोक्ते पूजयेत् पीठे तीव्रादिनवशक्तिके। अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वे कर्णिकाकेसरोज्ज्वले ॥६॥
चतुर्द्वारसमायुक्तचतुरस्त्रत्रयावृते। मूलेन मूर्तिं सङ्कल्प्य तस्यामावाह्य पूजयेत् ॥७॥
प्रथमावृतिरङ्गैः स्याद् वक्रतुण्डादिभिः परा। अणिमा महिमा चैव लघिमा गरिमा तथा ॥८॥
ईशित्वं च वशित्वं च प्राकाम्यं प्राप्तिरेव च। एताः समर्चयेत् सम्यक् तृतीयावरणे क्रमात् ॥९॥
ततस्तु मातरः पूज्या लोकेशास्तदनन्तरम्। तदायुधानि तद्वच्च भक्तियुक्तः समर्चयेत् ॥१०॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि अन्तर्यामिऋषये नमः। मुखे निचृद्गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीलक्ष्मीगणेशाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, श्रांगां हृदयाय नमः। श्रींगीं शिरसे स्वाहा। श्रूंगूं शिखायै वषट्। श्रैंगैं कवचाय हुं। श्रौंगौं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रःगः अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यानादिमानसपूजान्ते प्रोक्तमर्चापीठमुद्धृत्यार्घ्यस्थापनादिपुष्पोपचारान्ते प्रथमाष्टदलकेसरेषु प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, दलाष्टके एकाक्षरपूजोक्तान् वक्रतुण्डादिकान् संपूज्य, द्वितीयाष्टदलेषु देवाग्रदलमारभ्य ॐ अणिमासिद्ध्यै नमः। एवं महिमासिद्ध्यै नमः। लघिमासिद्ध्यै नमः। गरिमासिद्ध्यै नमः। ईशित्वसिद्ध्यै नमः। वशित्वसिद्ध्यै नमः। प्राकाम्यसिद्ध्यै नमः। प्राप्तिसिद्ध्यै नमः। इति प्रादक्षिण्येन संपूज्य, दलाग्रेषु ब्राह्म्यादिकाः प्राग्वत् संपूज्य, चतुरस्त्रवीथीद्वये लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य धूपदीपादि सर्वं पूर्ववत् समापयेत् इति। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः। दशांशं जुहुयाद्बिल्वसमिधो मधुरप्लुताः ॥११॥
(तर्पणादि ततः कुर्यात् पूर्वोक्तविधिना प्रिये। एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेदिष्टमात्मनः ॥१२॥
हुनेच्चतुःसहस्राणि श्रीफलैर्मधुरप्लुतैः)। महालक्ष्मीकरो होमः पुत्रमित्रकलत्रदः ॥१३॥
शुद्धतोयेन सन्तर्प्य चत्वारिंशच्चतुःशतम्। चत्वारिंशद्दिनान्मन्त्री वाञ्छितां लभते श्रियम् ॥१४॥ इति।

लक्ष्मीगणेश मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार उन्तीस अक्षरों का एक अन्य गणेश मन्त्र इस प्रकार है—श्रीं गं सौम्या॰. महागणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। यह लक्ष्मी-गणेश मन्त्र सर्वसम्पत्प्रदायक कहा गया है। इस मन्त्र के ऋषि अन्तर्यामी, छन्द निचृद् गायत्री एवं देवता लक्ष्मी-गणेश कहे गये हैं।

प्रात: उठकर नित्य कृत्य करने के बाद योगपीठ न्यास तक की क्रिया करके मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अन्तर्यामि ऋषये नम:, मुखे निचृद्गायत्रीछन्दसे नम:, हृदये श्रीलक्ष्मीगणेशाय देवतायै नम:। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—श्रां गां हृदयाय नम:, श्री ग्गीं शिरसे स्वाहा, श्रूं गूं शिखायै वषट्, श्रैं गैं कवचाय हुम्, श्रौं गौं नेत्रत्रयाय वौषट्, श्र: ग: अस्त्राय फट्। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

हेमाभ: पीतवस्त्र: करतलकमलै: संदधच्चक्रशङ्खौ दन्ताभीती च नासाधृतकनकघट: पद्मसंस्थस्त्रिनेत्र: ।
वामाङ्गाविष्टलक्ष्म्या विधृतकमलया प्रोल्लसद्दक्षदोष्णा श्लिष्ट: सौवर्णकान्त्या गणप इह महाश्रीकरो व: श्रियेऽस्तु ।।

तदनन्तर मानस पूजन कर प्रोक्त अर्चा पीठ बनाकर अर्घ्य-स्थापनादि के बाद पुष्पोपचार तक पूजा करे। पीठ में तीव्रादि नव शक्तियों की पूजा करे। चार द्वारों एवं तीन भूपुरों से युक्त कर्णिका-केसस-समन्वित दो अष्टदल कमल में मूर्ति कल्पित कर आवाहन कर पूजन करे। प्रथम आवरण में अंगों की पूजा करे। दूसरे आवरण में प्रथम अष्टदल में वक्रतुण्डादि की पूजा करे। तृतीय आवरण में द्वितीय अष्टदल में अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, ईशित्व, वशित्व, प्राक्राम्य, प्राप्तिसिद्धि की पूजा करे। चौथे आवारण में दलाग्रों में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। पञ्चम आवरण में चतुरस्र की वीथि में इन्द्रादि दश लोकपालों की पूजा करे। छठे आवरण में उनके आयुधों की पूजा करे। तदनन्तर धूप-दीपादि समर्पित कर पूर्ववत् पूजा का समापन करे।

दीक्षा लेकर जितेन्द्रिय रहकर एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन मधुरमिश्रित बेल की समिधाओं से करे। पूर्वोक्त विधि से तर्पणादि करे। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र से अपनी इच्छानुसार प्रयोग करे। मधुर-मिश्रित विल्व फल से चार हजार हवन करने पर महालक्ष्मी, पुत्र, मित्र, कलत्र की प्राप्ति होती है। शुद्ध जल से चार सौ चौवालीस तर्पण करे। चालीस दिनों तक ऐसा करने से वांछित श्री की प्राप्ति होती है।

त्र्यक्षरशक्तिगणेशमन्त्रस्तदर्चाविधिश्च

सारसंग्रहे, मन्त्रान्तरम्—

बिन्दुवामाक्ष्यग्नियुता स्मृतिर्मायासुमध्यगा। त्र्यक्षर: शक्तिगणप: सर्वसिद्धिप्रदायक: ।।१।।

स्मृतिर्गकार:। अग्नी रेफ:। वामाक्षि ईकार:। बिन्दुरनुस्वार:। एतै: पिण्डितं बीजं मायासुमध्यगा मायाबीजद्वयस्य मध्ये कुर्यात्। तथा—

भार्गवोऽस्य मुनिश्छन्दो विराड् देव: समीरित:। शक्त्यादिगणपस्तत्र देवदानववन्दित: ।।२।।
षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत्। गजेन्द्रवदनं साक्षाच्चलत्कर्णसुचामरम् ।।३।।
हेमवर्णं चतुर्बाहुं पाशाङ्कुशधरं विभुम्। स्वदन्तं दक्षिणे हस्ते बीजापूरं च वामके ।।४।।
पुष्करे मोदकांश्चैव धारयन्तमनुस्मरेत्।

वामोर्ध्वकरमारभ्य वामाध:करपर्यन्तमायुधध्यानम्।

पूर्वोक्ते पूजयेत् पीठे तीव्रादिनवशक्तिके। अष्टपत्राम्बुजे देवं चतुरस्रत्रयावृते ।।५।।
प्रथमाङ्गावृति: प्रोक्ता द्वितीया मातृभि: स्मृता। तृतीया लोकपालै: स्याद्वज्राद्यैश्च चतुर्थ्यपि ।।६।। इति।

(अथ प्रयोग:—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि भार्गवाय ऋषये नम:। मुखे विराट्छन्दसे नम:। हृदये श्रीशक्तिगणपतये देवतायै नम:। इति विन्यस्य, ग्रांग्रीमित्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय, ध्यानादिमानसपूजान्ते पूजाचक्रमुद्धृत्याघ्यादिपुष्पोपचारान्ते केसरेषु षडङ्गानि दलेषु मातृ: चतुरश्रे लोकेशान्

तदायुधानि च प्राग्वत् संपूज्य शेषं प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः। तद्दशांशं प्रजुहुयादपूपैर्घृतसंप्लुतैः ॥७॥
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत्।

अत्रापि कलौ चतुर्गुणजपादिकं कार्यमिति।

शक्तिगणेश मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार एक अन्य त्र्यक्षर मन्त्र है—ह्रीं ग्रीं ह्रीं। यह त्र्यक्षर शक्तिगणेश मन्त्र सर्वसिद्धिदायक कहा गया है। इस मन्त्र के ऋषि भार्गव, छन्द विराट् एवं देवता शक्ति गणपति कहे गये हैं। इसका प्रयोग इस प्रकार किया जाता है—पूर्ववत् योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि भार्गवाय ऋषये नमः, मुखे विराट् छन्दसे नमः, हृदये श्रीशक्तिगणपतये देवतायै नमः। तदनन्तर अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर ग्रां ग्रीं ग्रूं ग्रैं ग्रौं ग्रः से षडङ्ग और करन्यास करे। तब इस प्रकार ध्यान करे—

गजेन्द्रवदनं साक्षाच्चलत्कर्णसुचामरम्। हेमवर्णं चतुर्बाहुं पाशाङ्कुशधरं विभुम्।।
स्वदन्तं दक्षिणे हस्ते बीजापूरं च वामके। पुष्करे मोदकांश्चैव धारयन्तमनुस्मरेत्।।

ध्यान के बाद मानस पूजा करे। पूर्वोक्त पूजा चक्र बनाकर अर्घ्यादि स्थापन के बाद देव का पूजन पुष्पोपचार से करे। केसर में षडङ्ग पूजन करे। अष्टदल के दलों में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करे। शेष पूजा पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

जितेन्द्रिय रहकर हविष्य भक्षण कर एक लाख (कलियुग में चार लाख) मन्त्र जप करे और उसका दशांश घृतप्लुत अपूप से हवन करे। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध करके उससे काम्य कर्मों का साधन करे।

त्र्यक्षरशक्तिगणेशमन्त्रस्य काम्यप्रयोगः

शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु पूजयित्वा विनायकम्। अपूपैर्गुडसंमिश्रैः पक्वान्नैर्घृतसंप्लुतैः ॥८॥
मरिचैर्जीरकैश्चैव सैन्धवेन विमिश्रितैः। देवस्य सन्निधौ मन्त्री जुहुयात् त्रिसहस्रकम् ॥९॥
गद्यपद्यमयी वाणी सप्ताहाद्भवति ध्रुवम्। वश्यार्थे मधुहोमेन राजानं वशमानयेत् ॥१०॥
कन्यार्थी जुहुयाल्लाजैस्तन्नामपुटमन्त्रतः। एकां कन्यामथो सप्तधा जपेल्लभते वधूम् ॥११॥
चन्द्रसूर्यग्रहे प्राप्ते पलं तु कपिलाघृतम्। कर्षमात्रं वचाचूर्णं मिश्रीकृत्याभिमन्त्रयेत् ॥१२॥
पिबेत्तदानीं यो भूत्वा देवताध्यानतत्परः। यावत्पानं भवेत्तावत् नाश्नीयात् किमपीह सः ॥१३॥
सप्ताहाज्जायते शीघ्रमपरो वाक्पतिर्यथा। वन्ध्यर्तुस्नानदिवसे पूजयित्वा विनायकम् ॥१४॥
निष्कार्धपादभागेन हरिद्रां सैन्धवं वचाम्। गोमूत्रकुडवे पिष्टं सहस्रमभिमन्त्रितम् ॥१५॥
बध्वा कन्यां भक्ष्यभोज्यैर्भोजयित्वा च तत्क्रमात्। गुरवे दक्षिणां दत्त्वा पिबेन्नारी तदौषधम् ॥१६॥
ततः सा लभते पुत्रं सर्वलक्षणसंयुतम्। आयुष्मन्तं सुरूपं च बुद्धिमन्तं श्रिया युतम् ॥१७॥ इति।

सूर्यचन्द्रग्रहे इत्यादिना एतदुक्तं भवति। चन्द्रग्रहे सूर्यग्रहे वा कर्षमात्रमतिश्लक्ष्णं वचाचूर्णं पलमात्रेण कपिलागोघृतेन मिश्रीकृत्य मूलमन्त्रेणाष्टोत्तरसहस्रवारमभिमन्त्र्य तत्सप्तधा विभज्यैकं भागं देवताध्यानपूर्वकं तदानीं पिबेत्। उर्वरितं भागषट्कं प्रत्यहमेकैकभागं प्रतिप्रातर्देवताध्यानपूर्वकं दिनषट्कं पिबेत्। एवं कृते प्रोक्ता सिद्धिर्भवति। बध्वा इत्यादिना एतदुक्तं भवति। निष्कमात्रं हरिद्रा निष्कार्धं सैन्धवं, निष्कचतुर्थांशं वचाचूर्णमेतत्त्रयं पेषितं श्लक्ष्णेन कुडवमात्रेण गोमूत्रेण प्रोक्तसंख्यया मिश्रीकृत्य प्रोक्तविधिना पीतं प्रोक्तफलदं भवति।

शुक्लपक्ष की चतुर्थी को गणेश की पूजा करके गुड़मिश्रित पूआ, घृतप्लुत मरिच जीरा एवं सेंधा नमक मिश्रित पक्वान्न से देवता के समक्ष तीन हजार हवन किया जाय तो एक सप्ताह के अन्दर साधक गद्य-पद्यमयी वाणी बोलने लगता है। वश्य कर्म में मधु से तीन हजार हवन किया जाता है, इससे राजा को भी वश में किया जा सकता है। कन्या की कामना

वाला यदि वाञ्छित कन्या के नाम को मन्त्र से सम्पुटित करके सात दिन तक उक्त संख्या में लावा से हवन किया जाय तो निश्चित रूप से वधू प्राप्त करता है। चन्द्र अथवा सूर्यग्रहण में एक पल कपिला गाय के घी में एक कर्ष वचाचूर्ण मिलाकर मूल मन्त्र के एक सौ आठ जप से अभिमन्त्रित कर उसे सात भाग कर देवता का ध्यान करते हुये प्रतिदिन एक-एक भाग का जो पान करता है, साथ ही उक्त सात दिनों तक अन्य कुछ भी नहीं खाता, वह एक सप्ताह के अन्दर ही साक्षात् बृहस्पति के समान हो जाता है। वन्ध्या स्त्री ऋतुस्नान के दिन विनायक की पूजा करके एक निष्क हरिद्रा, आधा निष्क सेन्धा नमक, चतुर्थांश वचाचूर्ण तीनों को एक साथ पीसकर एक कुडव गोमूत्र में उसे मिलाकर मूल मन्त्र के एक हजार जप से उसे मन्त्रित कर कुमारी कन्या को भक्ष्य भोज्य पदार्थों का भोजन कराकर गुरु को दक्षिणा प्रदान कर सात दिनों तक लगातार पान करती है तो निश्चित ही वह सर्व लक्षणसम्पन्न, आयुष्मान्, सुरूप, बुद्धिमान् एवं धन-धान्य से युक्त पुत्र प्राप्त करती है।

प्रयोगसहितचतुर्वर्णशक्तिगणेशमन्त्र:

तथा सारसंग्रहे—

ताराद्य: पूर्वमन्त्रोऽसौ चतुर्वर्ण: प्रकीर्तित:। ऋषि: शुक्रो निगदितश्छन्दो गायत्रमुच्यते ॥१॥
देवता शक्तिगणप: सर्वसिद्धिकर: पर:। पूर्ववच्च षडङ्गानि कुर्याद् देशिकसत्तम: ॥२॥

असौ पूर्व: शक्तिगणपतिमन्त्रश्चेत् प्रणवपूर्वस्तदा चतुर्वर्णो मन्त्रो भवति।

हेमाभं दिव्यवस्त्रं बृहदुदरतनुं चारुबाहुं त्रिनेत्रं
दोर्भि: पाशाक्षसूत्रे निजरदनसृणी मोदकं पुष्करेण।
बिभ्राणं हेमभूषं तरुणतरणिरुक्चारुशक्त्या समेतं
विघ्नेशं विश्ववन्द्यं त्रिभुवनशरणं चिन्तये श्रीगणेशम् ॥३॥

दक्षोर्ध्वकरमारभ्य वामोर्ध्वकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। तथा—

तत: पूर्वोदिते पीठे देवमावाह्य पूजयेत्। प्रथमावृतिरङ्गै: स्याद् वक्रतुण्डादिभि: परा ॥४॥
तृतीया मातृभि: प्रोक्ता लोकपालैस्ततो बहि:। तदायुधै: पञ्चमी स्यादेवं संपूजयेत् क्रमात् ॥५॥) इति।

अथ प्रयोग:—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि शुक्राय ऋषये नम:। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नम:। हृदि श्रीशक्तिगणपतये देवतायै नम:। इति विन्यस्य, ग्रांग्रीं इत्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय, ध्यानादिमानसपूजान्ते प्रोक्तत्र्यक्षरमन्त्रवत् पूजाचक्रमुद्धृत्यार्घ्यादिपुष्पोपचारान्ते केसरेषु षडङ्गानि दलेषु वक्रतुण्डादीन् दलाग्रेषु मातृंश्चतुरस्रे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य प्राग्वच्छेषं समापयेदिति। कलावेष एव जपो ज्ञेय:। तथा—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं समाहित:। जुहुयाद् घृतसंयुक्तैस्तिलैर्मन्त्रविदुत्तम: ॥७॥
तर्पणादि तत: कुर्यादेवं सिद्धो भवेन्मनु:। काम्यकर्म तत: कुर्याद् देशिको यतमानस: ॥८॥
आज्याक्तैर्जुहुयान्नित्यमन्नवान् वत्सराद्भवेत्। पायसान्नेन महतीं श्रियमाप्नोति मानव: ॥९॥ इति।

चतुरक्षर मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार शक्तिगणेश का चतुरक्षर मन्त्र है—ॐ ह्रीं ग्रीं ह्रीं। इसके ऋषि शुक्र, छन्द गायत्री एवं देवता समस्त सिद्धियों को देने वाले शक्तिगणपति कहे गये हैं। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

हेमाभं दिव्यवस्त्रं बृहदुदरतनुं चारुबाहुं त्रिनेत्रं दोर्भि: पाशाक्षसूत्रे निजरदनसृणी मोदकं पुष्करेण।
बिभ्राणं हेमभूषं तरुणतरणिरुक्चारुशक्त्या समेतं विघ्नेशं विश्ववन्द्यं त्रिभुवनशरणं चिन्तये श्रीगणेशम्॥

प्रयोग—पूर्ववत् योगपीठन्यास तक करने के पश्चात् मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि शुक्राय ऋषये नम:, मुखे गायत्रीच्छन्द से नम:, हृदि श्री शक्तिगणपतये नम:। इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करके ग्रां, ग्रीं, ग्रं, ग्रैं, ग्रौं ग्र: से करन्यास एवं षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् पूर्वोक्त रूप से ध्यान करके मानस पूजा सम्पन्न कर पूर्वोक्त त्र्यक्षर मन्त्र के सदृश ही पूजाचक्र बनाकर अर्घ्यादि से पुष्पोपचार तक करके केसर में षडङ्ग-पूजन, दलों में वक्रतुण्ड आदि

का, दलाग्रों में अष्ट मातृकाओं का चतुरस्र में लोकपालों का एवं उसके बाहर उनके आयुधों का पूजन करके पूर्ववत् शेष क्रियायें सम्पन्न कर पूजा का समापन करे।

तदनन्तर तीन लाख मन्त्र जप करे। समाहित होकर उसका दशांश हवन घीमिश्रित तिल से करे। तब तर्पण मार्जन करने से मन्त्र सिद्ध होता है। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से यतमानस देशिक काम्य कर्म करे। गोघृत से अक्त अन्न के हवन से साधक अन्नवान होता है। पायसान्न के हवन से विपुल श्री की प्राप्ति होती है।

पूजनविधिसहितक्षिप्रप्रसादनविनायकमन्त्रः

तथा सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

खान्तो बिन्दुसमायुक्तः क्षकारोऽक्षिसमन्वितः। लोहितो रेफसंयुक्तः पार्श्वो वह्निसमन्वितः ॥१॥
सादनाय हृदन्तोऽयं मन्त्रः पंक्त्यक्षरो मतः ।

खान्तो ग, बिन्दुरनुस्वारस्तद्युक्तः। क्ष स्वरूपं, अक्षि इकारस्तद्युक्तः। लोहितः पकारः, रेफः रकारस्तद्युक्तः। पार्श्वः पकारः, वह्नी रेफस्तद्युक्तः। सादनाय स्वरूपं, हृन्नमः। तथा—

ऋषिर्गणक आख्यातश्छन्दः प्रोक्तं विराडिति। देवता गदितः क्षिप्रप्रसादनविनायकः ॥२॥
दीर्घभाजा स्वबीजेन कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ।
पाशाङ्कुशौ कल्पलतां विषाणं दधत् स्वशुण्डाहितबीजपूरः ।
रक्तस्त्रिनेत्रस्तरुणेन्दुमौलिर्हारोज्ज्वलो हस्तिमुखोऽवतान्नः ॥३॥

वामोर्ध्वकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्।

पूर्वोक्तं पूजयेत् पीठे नवशक्तिसमन्विते। मूर्तिं मूलेन संकल्प्य तस्यां विघ्नेश्वरं यजेत् ॥४॥
प्रथमावृतिरङ्गैः स्याद् द्वितीया चाष्टभिर्गणैः। विघ्नो विनायकाख्योऽन्यः शूराख्यो वीरसंज्ञकः ॥५॥
वरदश्चेभवक्त्रोऽन्य एकदन्ताह्वयोऽपरः। लम्बोदरोऽष्टमः प्रोक्तो दलाग्रे मातृपूजनम् ॥६॥
बाह्ये लोकेश्वराः पूज्यास्तदस्त्राणि ततो बहिः । इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गणकाय ऋषये नमः। मुखे विराट्छन्दसे नमः। हृदये क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये देवतायै नमः। इति विन्यस्य गांगीं इत्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यानादिमानसपूजान्ते चतुर्द्वारयुक्तचतुरस्रत्रयान्वितमष्टदलकमलमर्चापीठं निर्माय, अर्घ्यादिपुष्पोपचारान्ते केसरेषु षडङ्गानि संपूज्य, अष्टदलेषु देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन—ॐ विघ्नाय नमः। विघ्ननायकाय नमः। शूराय नमः। वीराय नमः। वरदाय नमः। इभवक्त्राय नमः। एकदन्ताय नमः। लम्बोदराय नमः। इति संपूज्य, दलाग्रेषु मातृः, चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च संपूज्य प्राग्वच्छेषं समापयेदिति। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तदन्ते तद्दशांशतः। त्रिस्वाद्वक्तैस्तिलैर्होमं कुर्यात् पूर्वोदिताष्टभिः ॥७॥
द्रव्यैर्वा तर्पणादीनि ततः पूर्वदाचरेत्। एवं सिद्धे मनौ मन्त्री कुर्यात् काम्यान्यशेषतः ॥८॥
कलावेतच्चतुर्गुणजपः।

क्षिप्रप्रसादन विनायक मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार गणेश का एक अन्य दशाक्षर मन्त्र है—गं क्षिप्रप्रसादनाय नमः। इसके ऋषि गणक, छन्द विराट् एवं देवता क्षिपप्रसादन विनायक कहे गये हैं।

पूजा—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गणकाय ऋषये नमः, मुखे विराट् छन्दसे नमः, हृदये क्षिप्रप्रसादनाय गणपतये देवतायै नमः। गां गीं गूं गैं गौ गः से कर-षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

पाशाङ्कुशौ कल्पलतां विषाणं दधत् स्वशुण्डाहितबीजपूरः। रक्तस्त्रिनेत्रस्तरुणेन्दुमौलिर्हारोज्ज्वलो हस्तिमुखोऽवतान्नः।।

इस प्रकार ध्यान के बाद मानस पूजा करे। तब चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र के अन्दर अष्टदल कमल बनाकर नवशक्ति-समन्वित अर्चापीठ का निर्माण करे। अर्घ्यादि से पुष्पोपचार तक करके केसर में षडङ्ग पूजा करे। अष्टदल में देवता के आगे से आरम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से अष्ट गणेशों की पूजा इस प्रकार करे—ॐ विघ्नाय नमः, विघ्ननायकाय नमः, शूराय नमः, वीराय नमः, वरदाय नमः, इभ वक्त्राय नमः, एकदन्ताय नमः, लम्बोदराय नमः। दलों के अग्रभाग में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। पूर्ववत् पूजन पूरा करके समाप्त करे।

एक लाख मन्त्र जप करे। उसका दशांश हवन त्रिमधुराक्त तिल और पूर्वोक्त आठ द्रव्यों—लड्डू, चूड़ा, लावा, सत्तू, ईखपोर, नारियल, तिल, पका केला से करे। पूर्ववत् तर्पणादि करे। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र से सभी काम्य कर्मों को करे। कलियुग में इसका जप चार लाख होता है।

काम्यहोमविधानम्

शर्कराघृतयुक्तेन हविषा जुहुयात् सुधीः। लक्ष्मीवान् केवलाज्येन होमो लोकवशंकरः ॥९॥
घृताक्तान्नं प्रजुहुयादन्नवान् साधको भवेत्। चत्वारिंशद्दिनं मन्त्री नारिकेलं हुनेत् ततः ॥१०॥
सचर्म लोष्टपक्वं च प्रत्यहं साधकोत्तमः। स वाञ्छितार्थमभ्येति नात्र कार्या विचारणा ॥११॥
सलाजकैः सक्तुभिश्च पृथुकैर्वाञ्छिताप्तये। होमो भवेदष्टभिश्च द्रव्यैस्त्रिमधुरान्वितैः ॥१२॥
(हुनेत्ततश्च वशयेद्राज्ञस्तत्प्रमदा अपि।) चतुश्चत्वारिंशदाढ्यं चतुःशतमतन्द्रितः ॥१३॥
प्रातः प्रातस्तु सलिलैर्विघ्नेशस्य च मस्तके। तर्पयेच्छ्रीः समृद्धिश्च भवेत् तस्य न संशयः ॥१४॥
पूर्वोदितं गणेशानमायान्तं रविबिम्बतः। सोपानेनाब्जसंस्थं तं चिन्तयित्वा तु तर्पयेत् ॥१५॥
पूर्वमन्त्रप्रयोगांश्च कुर्यादत्रापि साधकः। इति।

पूर्वमन्त्रोक्तान् त्र्यक्षरमन्त्रोक्तान्।

शक्कर-घी-युक्त हविष्य से हवन करने पर साधक लक्ष्मीवान होता है। केवल गोघृत से हवन करने पर संसार वश में होता है। घृताक्त अन्न के हवन से साधक का अन्न भण्डार भरा रहता है। चालीस दिनों तक प्रतिदिन नारियल खण्डों से हवन करे तो उसे निस्सन्देह रूप से वांछित सिद्धि मिलती है। वांछित पूर्ति के लिये लावा और सत्तू से हवन करे। त्रिमधुराक्त आठ द्रव्यों के हवन से राजा और रानियों का वश्य होता है। चार सौ चौवालीस तर्पण प्रातःकाल में जल से विघ्नेश के मस्तक पर करे तो श्री की समृद्धि प्राप्त होती है। सूर्यविम्ब से सीढ़ियों द्वारा उतरते हुये गणेश कमल पर आसीन हैं—इस प्रकार का चिन्तन करते हुये तर्पण किया जाता है। इस मन्त्र से त्र्यक्षर मन्त्र में कथित प्रयोग भी किये जाते हैं।

चतुर्वर्णहेरम्बमन्त्रस्तत्प्रयोगश्च

तथा सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

बिन्द्वर्घीशयुतः शार्ङ्गी ताराद्यो नमसा युतः। चतुर्वर्णो मनुः प्रोक्तो हेरम्बस्य महात्मनः ॥१॥

शार्ङ्गी गकारः, बिन्दुरनुस्वारः, अर्घीशः षष्ठस्वरस्ताभ्यां युक्तः। ताराद्यो, नमोऽन्तः। तथा—

मुनिर्गणक आख्यातो गायत्रं छन्द ईरितम्। पञ्चवक्त्रोऽस्य हेरम्बो देवता सिंहवाहनः ॥२॥
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः।

मुक्ताविद्युत्पयोदामृतघुसृणनिभैः पञ्चभिर्नागवक्त्रैर्हेरम्बो भावनीयः शशधरमुकुटो दृप्तसिंहाधिरूढः।
हस्तैर्बिभ्रत् त्रिशूलाङ्कुशकजपवटीमुद्गरान् पुंस्कपालं टङ्काङ्को मोदकं स्याद्रदलसदभये दानमर्कौघदीप्तिः ॥३॥

अधःस्थदक्षवामयोर्वराभये, तदुपरि मोदकरदौ, तदुपरि परशुकपाले, तदुपर्यक्षमालामुद्गरौ, तदुपर्यंकुशत्रिशूले। तथा—

पूर्वोक्त एव पीठे तु यजेद्धेरम्बमन्वहम्। पद्ममष्टदलं कृत्वा चतुरस्रत्रयावृतम् ॥४॥
चतुर्द्वारसमायुक्तं तत्रादावासनं यजेत्। ध्रुवान्ते हुंद्वयं प्रोक्त्वा महासिंहं च ङेयुतम् ॥५॥
गां च हेरम्बशब्दः स्यादासनाय नमोन्ततः। आसनाख्यो मनुः प्रोक्तो दत्त्वा तेनासनं विभोः॥६॥
ध्रुवयुक्तेन बीजेन कुर्यान्मूर्तिप्रकल्पनम्। तस्यामावाह्य विघ्नेशं यजेदावरणान्वितम् ॥७॥
आदावङ्गानि संपूज्य लोकपालान् यजेद् बुधः। तेषामस्त्राणि तद्बाह्ये हेरम्बार्चा समीरिता ॥८॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गणकाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीहेरम्बाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, गांगीं इत्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय, ध्यानादिमानसपूजान्ते प्रोक्तमष्टदलकमलं विलिख्य, प्रोक्तयोगपीठनवशक्तिपूजान्ते 'ॐहुंहुं महासिंहाय गां हेरम्बासनाय नमः' इत्यासनं संपूज्य, ॐगं गणपतिमूर्तिं कल्पयामि, इति तत्र मूर्तिं परिकल्प्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते केसरेषु षडङ्गानि संपूज्य लोकेशार्चादि प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

लक्षत्रयं जपित्वान्ते तिलैर्हुत्वा दशांशतः। मधुरत्रयसंयुक्तैस्तर्पणादि समाचरेत् ॥९॥
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत् ततः। चतुर्दश्यष्टमीषष्ठीष्वेकैकं जुहुयाद् बुधः ॥१०॥
अत्रायमेव कलियुगजपः।

अपूपैः कृसरैर्मन्त्री मोदकैश्चेष्टसिद्धये। पूर्वोक्तैर्जुहुयाद् द्रव्यैः पर्वस्वपि च मन्त्रवित् ॥११॥
यद्यदिच्छति तत् सर्वं साधकस्तेन साधयेत्।

हेरम्ब गणेश मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार चार अक्षरों का हेरम्ब गणेश का मन्त्र इस प्रकार है—ॐ गूं नमः। इसके ऋषि गणक, छन्द गायत्री एवं देवता सिंहरूपी वाहन वाले हेरम्ब हैं।

पूजन—पूर्ववत् योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गणकाय ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये हेरम्बाय देवतायै नमः। गां गीं गूं गैं गौं गः से इसका करषडङ्ग न्यास किया जाता है। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

मुक्ताविद्युत्पयोदामृतघुसृणनिभैः पञ्चभिर्नागवक्त्रैर्हेरम्बो भावनीयः शशधरमुकुटो दृप्तसिंहाधिरूढः।
हस्तैर्बिभ्रत् त्रिशूलाङ्कुशकजपवटीमुद्गरान् पुंस्कपालं टङ्काङ्को मोदकं स्याद्वरदलसदभये दानमर्कौघदीप्तिः।।

ध्यान के पश्चात् मानस पूजा करे। तब पूर्वोक्त अष्टदल कमल बनाकर पूर्वोक्त योगपीठ में नव शक्तियों की पूजा करे। 'ॐ हुं हुं महासिंहाय गां हेरम्बासनाय नमः' से आसन की पूजा करे। 'ॐ गं गणपतिमूर्तिं कल्पयामि' से मूर्ति की कल्पना करे। आवाहन से पुष्पोपचार तक की पूजा देव की करे। केसर में षडङ्ग पूजन करे। चतुरस्र में पूर्ववत् लोकेशों और आयुधों की पूजा करे।

तीन लाख मन्त्र जप करे। त्रिमधुराक्त तिल से दशांश हवन करे। तर्पण-मार्जन आदि करे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से प्रयोगों को करे। चतुर्दशी अष्टमी षष्ठी में क्रमशः पूआ खिचड़ी और लड्डू से हवन करे तो इष्टसिद्धि होती है। पर्वों में पूर्वोक्त द्रव्यों से हवन करे तो साधक जो-जो इच्छा करता है, उसे प्राप्त करता है।

हेरम्बयन्त्रोद्धारः

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि हेरम्बस्य गणेशितुः ॥१२॥
भूर्जे पद्मं लिखेत् तद्गजमदघुसृणैर्मध्यबीजाढ्यसाध्यं किञ्जल्केष्वङ्गमन्त्रान् वसुदलविवरे सप्तधा संविभज्य।
मालाणुं शिष्टपत्रे विलिखतु षडपि प्रोक्तगाणेशवर्णान् शक्त्या बीजं सकारावृतमपि तदनु श्वेतसूत्रावृतं स्यात् ॥
लोहैः संवेष्ट्य यन्त्रं त्रिभिरपि विधृतं बाहुनाभीष्टदं स्यात् ॥१३॥ इति।

अयमर्थः—भूर्जपत्रे गजमदसहितकुङ्कुमेन अष्टदलकमलं विलिख्य तन्मध्ये हेरम्बबीजं विलिख्य, तस्य

बिन्दुस्थाने अमुकस्य हुंकारस्थाने अमुकं, मध्ये वशं कुरु कुरु इत्यादि स्वेष्टं कर्मपदं विलिखेदित्येवं साध्यसाधककर्मण्यालिख्य, तत्केसरेषु षडङ्गमन्त्रान् यथास्थानमालिख्याष्टसु पत्रेषु पूर्वादिप्रादक्षिण्येन ह्रींक्रोॐगं नम: स, द्वितीयदले—र्वं विघ्नाधिपाय स, तृतीयदले—र्वार्थसिद्धिदाय स, चतुर्थदले—र्वदु:खप्रशमना, पञ्चमदले—य एह्येहि भगवन्, षष्ठदले—सर्वान् खादय स्तम्भ, सप्तमदले—य स्तम्भय ह्रींगंगां, अष्टमदले—नम: स्वाहा क्रोंह्रीं, इति विलिख्य, पद्माद्बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा वीथीद्वयं निष्पाद्य तत्र प्रथमवीथ्यां स्वाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन निरन्तरं शक्तिबीजैरावेष्ट्य, द्वितीयवीथ्यां तथैव सबिन्दुसकारेणावेष्ट्य गुलिकीकृत्य श्वेतसूत्रेण संवेष्ट्य, पुन: स्वर्णरजतताम्रैरग्निसम्बन्धमकुर्वन्नावेष्ट्य यथाविधि धृतमुक्तफलदं भवति। अत्र यन्त्रलिखितमालामन्त्रस्य पूजाजपादिकं सर्वं हेरम्बमन्त्रवत् कार्यम्। अमितं छन्द इति विशेष:।

हेरम्ब यन्त्र—हेरम्ब का यन्त्र इस प्रकार बनता है—भोजपत्र पर गजमद और कुङ्कुम के घोल से अष्टदल कमल बनावे। उसमें हेरम्बबीज लिखे। उसके बिन्दुस्थान में 'अमुकस्य हुं अमुकं वशं कुरु कुरु' लिखे। अपने इष्ट कर्म के साथ साध्य साधक कर्म लिखे। उसके केसर में यथा-स्थान षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। अष्टपत्रों में पूर्वादि से प्रदक्षिण क्रम से प्रथम दल में ह्रीं क्रों ॐ गं नम: स, द्वितीय दल में र्वं विघ्नाधिपाय स, तृतीय दल में र्वार्थसिद्धिदाय स, चतुर्थ दल में र्वदु:खप्रशमना, पञ्चम दल में य एह्येहि भगवन्, षष्ठ दल में सर्वान् खादय स्तम्भ, सप्तम दल में य स्तम्भय ह्रीं गं गां एवं अष्टम दल में नम: स्वाहा क्रों ह्रीं लिखे। अष्टदल कमल के बाहर तीन वृत्तों से दो वीथि बनावे। प्रथम वीथि में अपने सामने से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से निरन्तर शक्ति बीज लिखकर वेष्टित करे। द्वितीय वीथि में 'सं'-सं' लिखकर वेष्टित करे। इसकी गोली बनाकर श्वेत सूत्रों से लपेटे। उसे सोने-चाँदी या ताम्बे के ताबीज में भरकर बाँह में धारण करे तो अभीष्ट सिद्धि होती है। यन्त्र लिखित मालामन्त्र का पूजा- जप आदि हेरम्ब मन्त्र के समान करना चाहिये।

सपूजाप्रयोग: सुब्रह्मण्यगणेशमन्त्र:

तथा सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

प्रणव: पतृतीयं च ततो वामबाहुमूलकम्। स्वरहीनस्तवर्गादिर्भुवे हृद् धातुवर्णक: ॥१॥
सुब्रह्मण्यमनु: प्रोक्तो भजतां सर्वकामद:। इति।

पतृतीयो बकार:। वामबाहुमूलं चकार:। तवर्गादिस्तकार: स च स्वररहित:। भुवे स्वरूपं। हृन्नम:। धातुवर्ण: सप्ताक्षर:। शारदातिलके तु—अन्त:स्थो वकार उक्त:। प्रयोगसारे तु—प्रशस्तप्रणवा यत्र वाऽप्यशक्तिपूर्वं जपेद्गुरुरिति। अयमर्थ:—प्रणवान्तश्चेदयं मन्त्रस्तदाष्टाक्षरो भवतीति। प्रणवादौ शक्तिबीजं चेद्दीयते तदान्योऽयमष्टाक्षरो भवति। एवं त्रिविधोऽयं मन्तव्य इति। तथा—

ऋषिरग्नि: समाख्यातो गायत्री च्छन्द उच्यते। सुब्रह्मण्योऽस्य मन्त्रस्य देवता परिकीर्तित: ॥२॥
दीर्घभाजाग्निबीजेन षडङ्गानि समाचरेत्।
पायाद्वोऽरुणविग्रह: शशिमुख: सम्यग् दधानो भुजै:
पद्मं भीतिहरं रिपुक्षयकरीं शक्तिं शुभं कुक्कुटम्।
रक्तालेपनवस्त्रदामरुचिरो नानाविभूषान्वित:
सुब्रह्मण्यगणाधिप: शुभकरो भक्तौघविध्वंसक: ॥३॥

दक्षाद्यध:करयोराद्ये, तदाद्यूर्ध्वयोरन्ये, इत्यायुधध्यानम्। तथा—

वह्न्यन्ते पूजिते पीठे पूर्वोक्ते पूजयेद्विभुम्। उक्तोपचारसहितं विधिना भक्तवत्सलम् ॥४॥

वह्न्यन्ते इत्यनेन सत्त्वादिपूजानिषेध: प्रतीयते अन्यथोक्तिवैयर्थ्यप्रसङ्गात्।

(पूर्वोदिते यजेत् पीठे सुब्रह्मण्यं गणाधिपम्। केसरेषु षडङ्गानि पूर्वादिषु दलेषु च ॥५॥

जयन्तो ह्यग्निवेषश्च कृत्तिकापुत्र एव च।) ततो भूतपतिसेनान्यौ गुहाख्यो हेमशूलकः ॥६॥
विशालाक्षश्च संप्रोक्ताः शूलशक्तिकरा इमे। दलाग्रेषु च पूर्वादि यजेदेताननन्तरम् ॥७॥
देवसेनापतिं शक्तिं विद्यां कुक्कुटमेव च। मेधां मयूरं वज्रं च द्विपं लोकेश्वरांस्ततः ॥८॥
वज्रादीनि ततो बाह्ये देवमित्थं प्रपूजयेत्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्ते, शिरसि अग्नये ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि सुब्रह्मण्याय देवतायै नमः। इति विन्यस्य विनियोगमुक्त्वा, रांरीं इत्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय, ध्यानादिमानसपूजान्ते प्रागुक्तमर्चापीठमुद्धृत्यार्घ्यादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वत् केसरेषु षडङ्गानि संपूज्याष्टदलेषु देवाग्रमारभ्य—ॐजयन्ताय नमः। एवं अग्निवेषाय नमः। कृत्तिकापुत्राय नमः। भूतपतये नमः। सेनान्ये नमः। गुहाय नमः। हेमशूलाय नमः। विशालाक्षाय नमः। ततोऽष्टदलेषु देवाग्रमारभ्य—देवसेनापतये नमः। एवं शक्तये नमः। विद्यायै नमः। कुक्कुटाय नमः। मेधायै नमः। मयूराय नमः। वज्राय नमः। द्विपाय नमः। इति संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं सर्पिषा वा पयोन्धसा। अयुतं जुहुयान्मन्त्री तर्पयेद् द्विजपुङ्गवान् ॥९॥
अयं जपः कृतयुगपरः, कलावेतच्चतुर्गुणमिति।

एवं सिद्धे मनौ मन्त्री कुर्यात् कामान्यथेप्सितान्। षष्ठीदिने सुमधुरैर्भक्ष्यभोज्यैः प्रतोषयेत् ॥१०॥
देवं देवधिया सम्यगर्चयेद् ब्रह्मचारिणः। सुब्रह्मण्यमनोः सम्यगुपास्तिं ये प्रकुर्वते ॥११॥
लक्ष्मीमायुश्च तेजश्च पुत्रपौत्रान्यशः पशून्। ऐहिकामुष्मिकाँल्लोकान् लभन्ते नात्र संशयः ॥१२॥ इति।

सुब्रह्मण्य गणेश मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार सप्ताक्षर सुब्रह्मण्य मन्त्र इस प्रकार है—ॐ बचतभुवे नमः। यह मन्त्र सर्वकामप्रदायक है। शारदातिलक 'ब' के बदले 'व' कहा गया है। प्रयोगसार में प्रणवान्त होने से इसे अष्टाक्षर कहा गया हैं। ह्रीं लगाने से भी यह अष्टाक्षर होता है। इस प्रकार तीन मन्त्र कहे गये हैं। इसके ऋषि अग्नि, छन्द गायत्री एवं देवता सुब्रह्मण्य कहे गये हैं।

प्रातः उठकर योगपीठ न्यास तक करने के बाद तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अग्नये ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदि सुब्रह्मण्याय देवतायै नमः। तदनन्तर अपनी अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करके रां रीं इत्यादि से कर षडङ्ग-न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

पायाद्वोऽरुणविग्रहः शशिमुखः सम्यग् दधानो भुजैः पद्मं भीतिहरं रिपुक्षयकरीं शक्तिं शुभं कुक्कुटम्।
रक्तालेपनवस्त्रदामरुचिरो नानाविभूषान्वितः सुब्रह्मण्यगणाधिपः शुभकरो भक्तौघविध्वंसकः।।

ध्यान के बाद मानस पूजन करके पूर्वोक्त अर्चा पीठ बनाकर अर्घ्यादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। पूर्ववत् केसर में षडङ्ग पूजा करे। अष्टदल में देव के आगे से आरम्भ करके इनकी पूजा करे—ॐ जयन्ताय नमः, अग्निवेषाय नमः, कृत्तिकापुत्राय नमः, भूतपतये नमः, सेनान्यै नमः, गुहाय नमः, हेमशूलाय नमः, विशालाक्षाय नमः। दलाग्रों में देवाग्र से प्रारम्भ करके—देवसेनापतये नमः, शक्तये नमः, विद्यायै नमः, कुक्कुराय नमः, मेधायै नमः, मयूराय नमः, वज्राय नमः, द्विपाय नमः से पूजन करे। इसके बाद भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि दश आयुधों की पूजा करे। शेष पूजा करके पूजन का समापन करे।

एक लाख मन्त्र जप करे। दश हजार हवन दूध या गाय के घी से करे। तर्पण-मार्जन करे। कलियुग में चार लाख जप अपेक्षित है। इस सिद्ध मन्त्र से अपनी इच्छानुसार प्रयोग करे। षष्ठी तिथि में मधुर भक्ष्य भोज्य से पूजा करे। ब्रह्मचारी को देव मानकर सम्यक् रूप से पूजन करे। सुब्रह्मण्य मन्त्र की उपासना जो सम्यक् रूप से करता है, उसे लक्ष्मी, आयु, तेज, पुत्र-पौत्र, यश, पशु-लौकिक, पारलौकिक पदार्थों की प्राप्ति संसार में होती है, इसमें शंका नहीं है।

महागणेशमन्त्रः

सारसंग्रहे—

अथ प्रवक्ष्ये मनुवर्य्यमेनं महागणेशस्य समासतोऽत्र ।
उपास्य संमूढधियोऽपि सिद्धिं प्रापुः सुरैरप्यभिवाञ्छितां ताम् ॥१॥
सिद्धर्षिसङ्घैर्द्विविधैरुपास्यं सुरासुरैः किन्नरयक्षनागैः ।
गन्धर्वसिद्धव्रजचारणाद्यैः संसेवितं चापि गणैः समस्तैः ॥२॥
नारीनराणां वशकारकं तद् भूपालसङ्घातवशे प्रशस्तम् ।
तत्सुन्दरीवश्यकरं ह्यमात्यभृत्यौघवश्यप्रदमाशु लोके ॥३॥
व्याघ्रद्विपव्यालसमूहचोरवेतालभूतादिकदुष्टजन्तून् ।
वशे विधातुं प्रथितः पृथिव्यां लोकैकजन्तुव्रजमोहकं च ॥४॥
तथा जनाकृष्टिकरं प्रसिद्धं पुष्टिप्रदं भक्तजनस्य नित्यम् ।
उच्चाटकर्मण्यपि शस्तमाद्यं लोके तथा मारणकर्मशक्तम् ॥५॥
कृशानुसंस्तभनकारकं च विद्वेषिवाणीगतिरोधकं च ।
कृपाणधाराशरसञ्चयानां संस्तम्भकं विद्युदपस्ततीनाम् ॥६॥
संस्तम्भकं वातसमूहवृष्टेः शुक्रादिसंस्तम्भकरं परं च ।
पातललोकेषु गतिप्रदं च रसायनाद्यञ्जनसिद्धिदं च ॥७॥
सुपादुकापारदबन्धसिद्धिखड्गादिसिद्धिप्रदमुत्तमं च ।
सुयक्षिणीसाधनशक्तमुच्चैः सम्यग्जनावेशकरं प्रसिद्धम् ॥८॥
वेदादि पद्मनिलया भुवनेश्वरी सकामा क्षमा गणपमन्त्रवरानिहोक्त्वा ।
कान्तान्ततादि पतये वरनीरवह्नीनुक्त्वा दसर्वजनमर्कशिवौ वशं च ॥९॥
प्रोक्त्वानयेति दहनस्य वधूं समुक्त्वा सङ्कीर्तितो मनुरयं मनुयुग्मवर्णः ।
प्रोक्तोऽथ चिन्तितमनोरथकल्पशाखी भूतिप्रदश्च यततां वरसाधकानाम् ॥१०॥ इति।

वेदादि प्रणवः। पद्मनिलया श्रीबीजं। भुवनेशी तद्बीजं। सकामा कामबीजसहिता, भुवनेशीबीजानन्तरं कामबीजमित्यर्थः। क्षमा भूबीजं ग्लौं इति। गणपमन्त्रो गं। कान्तान्तो गकारः, तादिर्णकारः। पतये स्वरूपं। वर स्वरूपं। नीरं वकारः। वह्नि रेफः। द सर्वजनं स्वरूपं। अर्को मकारः, शिव ऐकारस्तेन मे। वशं स्वरूपं। आनय स्वरूपं। अत्र सन्धिर्ज्ञेयः। दहनस्य वधूः स्वाहाकारः। मनुयुग्मवर्णोऽष्टाविंशत्यक्षरः। तथा—

ऋषिः समुक्तो गणको निचृच्च च्छन्दोऽस्य गायत्रमुदीरितं हि ।
महागणेशो गदितोऽस्य देवः सुरासुरैः सेवितपादपद्मः ॥११॥

गं बीजं ह्रीं शक्तिरिति पद्मपादाचार्याः।

महागणेश मन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब मैं महागणेश के श्रेष्ठ मन्त्र को समासतः कहता हूँ, जिसकी उपासना से मूढ बुद्धि भी देवताओं द्वारा वांछित सिद्धि को प्राप्त करता है। यह मन्त्र सिद्धों, ऋषिगणों, संघ-सुर-असुर-किन्नर-यक्ष-नाग-गन्धर्व-सिद्ध चारण सभी लोगों से सेवित है। यह नर-नारी का वश्यकारक, राजाओं को वश में करने में प्रशस्त, सुन्दरी-वश्यकर, अमात्यों एवं भृत्यों तथा प्रमदाओं को वश में करने वाला है। व्याघ्र, हाथी, सर्पसमूह, चोर, बेताल, भूत आदि दुष्ट जन्तुओं आदि को इस मन्त्र से वशीभूत किया जा सकता है। संसार में यह समस्त जानवरों का मोहक है। यह लोगों को आकर्षित करने वाला एवं भक्तों को नित्य पुष्टिकारक है। यह उच्चाटन और मारण कर्मों में भी सक्षम है। यह अग्नि-स्तम्भनकारक, विरोधी की वाणी को स्तम्भित करने वाला, कृपाण की धारा एवं बाणसमूह का स्तम्भनकारक, बिजली का

स्तम्भक एवं वर्षा, तेज हवा और वीर्य का स्तम्भन करने वाला है। यह पाताल लोक में गति-प्रदायक, रसायन आदि अंजन का सिद्धिदायक, पादुका-सिद्धिदायक, पारदबन्धसिद्धि-प्रदायक एवं खड्ग-सिद्धिदायक है। यह यक्षिणियों की सिद्धि प्रदान करने वाला एवं लोगों में आवेश उत्पन्न करने वाला है।

अट्ठाईस अक्षरों का यह मन्त्र इस प्रकार कहा गया है—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। यह चिन्तित मनोरथों के लिये कल्पवृक्ष के समान एवं प्रयत्नपूर्वक साधना करने वालों के लिये भूति प्रदान करने वाला है। इसके ऋषि गणक, छन्द गायत्री एवं देवता सुरासुर द्वारा सेवित चरणकमलों वाले महागणेश कहे गये हैं।

सप्रयोग: महागणेशपूजाविधानम्

तारादिषड्बीजसमन्वितेन षड्दीर्घभाजा निजबीजकेन।
कुर्यात् षडङ्गानि मनोर्यथावत् स्वजातियुक्तान्यथ मन्त्रविज्ञ: ॥१२॥
सद्वादशान्तश्रुतिनेत्रनासाद्वन्द्वास्यदोष्पद्द्वयसन्धिदेशे।
अनाहतेऽथो मणिपूरके स्वाधिष्ठान आधारपदेऽणुवर्णान् ॥१३॥
विन्यस्य शीर्षाननहृत्सु गुह्यपद्धृत्सु बीजानि परिन्यसेच्च।
ततोऽवशिष्टै: खलु मन्त्रवर्णै: स व्यापयेत् स्वे सकले शरीरे ॥१४॥
कवक्त्रहृद्गुह्यपदेषु पश्चान्न्यसेत् स्वनाम्ना मिथुनानि मन्त्री।
तेष्वेव हृज्जानुयुतेषु भूयो न्यसेच्च षट् शक्तियुतान् गणेशान् ॥१५॥
इत्थं प्रविन्यस्य निजे शरीरे ध्यायेद् गणेशं निजहृत्सरोजे।
ऐक्षवे जलधौ द्वीपे नवरत्नमये शुभे। तत्तरङ्गोल्लसत्तोयैर्धौते शीततलेऽमले ॥१६॥
तत्तोयकणसंपृक्तगन्धवाहनिषेविते। कल्पपादपसंशोभिभूभागसमलङ्कृते ॥१७॥
नानाकुसुमसङ्कीर्णे नानापक्षिविराजिते। अनेकफलसंकीर्णे सेविते चाप्सरोगणै: ॥१८॥
उद्यद्बालातपोद्द्योतिचन्द्रज्योत्स्नासमाकुले। विलसत्पद्मरागौघकुट्टिमारुणभूतले ॥१९॥
कल्पपादपपुष्पस्थषट्पदस्वनमञ्जुले। पारिजातं कल्पतरुं तस्य मध्ये विचिन्तयेत् ॥२०॥
युगपदृतुषट्केन सेवितं पुष्पशोभितम्। नवरत्नमयं तस्याधस्तात् सिंहासनं स्मरेत् ॥२१॥
तन्मध्ये लिपिपद्मं च षडरं तस्य मध्यत:। कर्णिकायां त्रिकोणं च तत्संस्थं च महागणम् ॥२२॥
नानारत्नविभूषाढ्यमेकदन्तं गजाननम्।
चक्राब्जत्रिशिखान् गुणैक्षवधनू रक्तोत्पलं सद्गदां व्रीह्यग्रान्वितबीजपूररदनं कुम्भं करैर्बिभ्रतम्।
पद्मोद्यत्करया निजप्रमदया श्लिष्टं जपासन्निभं सार्धेन्दुं प्रभजे महागणपतिं नेत्रत्रयोद्भासितम् ॥२३॥
पुष्करोद्धृतरत्नौघमयकुम्भमुखस्रुतान्। मणिमुक्ताप्रवालादीन् वर्षन्तं धारया मुहु: ॥२४॥
सर्वत: साधकस्याग्रे स्वदानजललोलुपाम्। षट्पदालीं कर्णतालैर्वारयन्तं मुहुर्मुहु: ॥२५॥
अमरासुरसंसेव्यं सद्रत्नमुकुटोज्ज्वलम्। उरूदरं गजमुखं नानाभरणभूषितम् ॥२६॥
इति ध्यात्वा गणपतिं यजेत् सर्वोपचारकै:।

ऊर्ध्ववामदक्षयोश्चक्राब्जे, तदध: शूलपाशौ, तदधो धनुरुत्पले, तदधो गदाव्रीह्यग्रे, तदधो बीजपूररदनौ, शुण्डाग्रे रत्नकुम्भ:। इत्यायुधध्यानम्। अपरे तु वामोर्ध्वादिक्रमेण दक्षोर्ध्वान्तं वदन्ति। तदुक्तं प्रयोगसारे—'चक्रप्रासरसालकार्मुकगदासद्बीजपूरद्विजव्रीह्यग्रोत्पलपाशपङ्कजकरं शुण्डाग्रजाग्रद्घटम्' इति। प्रासस्त्रिशूलम्। रसालकार्मुक इक्षुकार्मुक:। द्विजो दन्त:। गणेश्वरपरामर्शिन्यां तु—'दक्षाध:करमारभ्य वामाध:स्थकरावधि। गदाशूलाब्जकह्लारविषाणं दक्षिणै: करै:। शाल्यग्रपाशचक्रेक्षुचापसद्बीजपूरकान्। वामैर्दधान'मित्युक्तमत्र यथागुरूपदेशं कार्यमिति। तथा—

धर्मादिक्लृप्ते पूर्वोक्ते तीव्रादिनवशक्तिके। पीठे विघ्नेशमभ्यर्च्य सम्यक् सर्वोपचारकै: ॥२७॥
त्रिकोणाग्रस्थं बिल्वाधो विष्णुं लक्ष्म्यान्वितं यजेत्। पद्मद्वयकरा पद्मा शङ्खचक्रधरो हरि: ॥२८॥
दक्षकोणे बहिस्तद्वद्गौरीं गौरीपतिं यजेत्। (संस्थितौ च वटाधस्तात् सुवर्णरजतप्रभौ ॥२९॥
पाशाङ्कुशधरा गौरी टङ्कशूलधरो हर:। पृष्ठस्थपिप्पलाधस्ताद्रतिकामौ समर्चयेत्)॥३०॥
उत्पलद्वन्द्वकोदण्डपुष्पेषुसमलङ्कृतौ। (देवपृष्ठे बहिस्तद्वद्रतिं रतिपतिं यजेत्) ॥३१॥
उत्तरेऽथ प्रियङ्गोस्तु महीकोलौ यजेत् तत:। शुक्लव्रीह्यग्रकगदाचक्रालङ्कृतसद्भुजौ ॥३२॥
देवस्याग्रे यजेल्लक्ष्म्या सहितं गणनायकम्। षट्कोणेषु यजेत् पश्चादामोदादींश्च षट् क्रमात् ॥३३॥
आमोदं सिद्धिसहितमग्रकोणे समर्चयेत्। समृद्ध्या युतमभ्यर्चेत् प्रमोदं वह्निकोणत: ॥३४॥
सुमुखं कान्तिसंयुक्तमीशकोणे समर्चयेत्। दुर्मुखं मदनावत्या यजेद् वरुणकोणके ॥३५॥
विघ्नं मदद्रवायुक्तं कोणे नैशाचरे यजेत्। वायव्ये विघ्नकर्तारं द्राविण्या सहितं यजेत् ॥३६॥
पाशाङ्कुशधरा विघ्ना: शक्तयश्चाभयेष्टदा:। रक्ता रक्ताम्बरालेपभूषणा मदविह्वला: ॥३७॥
(षट्कोणस्य बहिर्देवं दक्षिणे तु समर्चयेत्)। तस्य सव्ये शङ्खनिधिं वसुधारान्वितं यजेत् ॥३८॥
तस्य महागणेशस्य।

अपसव्ये पद्मनिधिं वसुमत्या सहार्चयेत्। तत्राद्यो मौक्तिकाभोऽन्यो माणिक्याभस्तु धारया ॥३९॥
वर्षन्तौ धनसंपत्तिं लोकानां स्वेच्छया सदा। केसरेष्वङ्गपूजा स्याद् ब्राह्म्याद्या: पत्रमध्यगा: ॥४०॥
चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च पूर्ववत्। षडावरणसंयुक्तमित्थं देवं प्रपूजयेत् ॥४१॥ इति।

अथ प्रयोग:—तत्र प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गणकाय ऋषये नम:। मुखे निचृद्गायत्रीच्छन्दसे नम:। हृदये श्रीमहागणपतये देवतायै नम:। गुह्ये गं बीजाय नम:। पादयो: ह्रीं शक्तये नम:। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोग:, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐगां हृदयाय नम:। श्रींगीं शिरसे स्वाहा। ह्रींगूं शिखायै वषट्। क्लींगैं कवचाय हुं। ग्लौंगौं नेत्रत्रयाय वौषट्। गंग: अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। ततो ब्रह्मरन्ध्रे गं नम:। दक्षनेत्रे णं नम:। वामे पं नम:। दक्षश्रोत्रे तं नम:। वामे यें नम:। दक्षनासायां वं नम:। वामे रं नम:। मुखे वं नम:। दक्षबाहुमूले रं नम:। मध्ये दं नम:। मणिबन्धे सं नम:। अङ्गुलिमूले र्वं नम:। अङ्गुल्यग्रे जं नम:। वामबाहुमूले नं नम:। मध्ये में नम:। मणिबन्धे वं नम:। अङ्गुलिमूले शं नम:। अङ्गुल्यग्रे मां नम:। अनाहते नं नम:। मणिपूरके यं नम:। स्वाधिष्ठाने स्वां नम:। मूलाधारे हां नम:। शिरसि ॐ नम:। मुखे श्रीं नम:। हृदये ह्रीं नम:। गुह्ये क्लीं नम:। पादयो: ग्लैं नम:। हृदये गं नम:। इति विन्यस्य, गणपतये इत्यादिद्वाविंशतिवर्णैर्मूर्धादिपादान्तं व्यापकं विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते प्रागुक्तं मातृकापद्मं चतुर्द्वारयुक्तचतुरस्रत्रयवेष्टितं कृत्वा तत्कर्णिकायां षट्कोणं तदन्तस्त्रिकोणं च कुर्यादिति पूजाचक्रमुद्धृत्य, अर्घ्यस्थापनादिपुष्पोपचारान्ते प्रोक्तविधिना त्रिकोणं विधाय त्रिकोणाद्बहिर्देवस्याग्रे ॐश्रीं लक्ष्मीनारायणाभ्यां नम:। देवस्य दक्षिणे ॐह्रीं गौरीहराभ्यां नम:। देवस्य पृष्ठे ॐक्लीं रतिकामाभ्यां नम:। देवस्य वामे ॐ ग्लौं महीवराहाभ्यां नम:। ततस्त्रिकोणान्तर्देवाग्रे ॐगं लक्ष्मीगणनायकाभ्यां नम:। इति प्रोक्तमिथुनानि तत्तद्वृक्षाधस्तत्तद्ध्यानोक्तरूपाणि सम्यग् ध्यात्वा गन्धादिभि: संपूज्य, तत: षट्कोणेषु देवाग्रमारभ्य—ॐगं आमोदसिद्धिभ्यां नम:। ॐ गं प्रमोदसमृद्धिभ्यां नम:। सुमुखकान्तिभ्यां नम:। दुर्मुखमदनावतीभ्यां नम:। विघ्नमदद्रवाभ्यां नम:। विघ्नकर्तृद्राविणीभ्यां नम:। इति संपूज्य, षट्कोणाद्बहिर्देवस्य दक्षिणे शं शङ्खनिधिवसुधाराभ्यां नम:। वामे पं पद्मनिधिवसुमतीभ्यां नम:। इति संपूज्य अष्टदलकेसरेषु प्राग्वत् षडङ्गानि दलेषु ब्राह्म्याद्याश्चतुरस्रे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य धूपदीपादि सर्वं प्राग्वत् समापयेत्। तथा—

एकादशायुतं जप्त्वा सहस्रोत्तरमादरात्। दशांशं जुहुयादष्टद्रव्यैरेकाक्षरोदितै: ॥४२॥

तर्पयित्वा दशांशेन चाभिषिक्तोऽणुना ततः। ब्राह्मणान् भोजयेत् सम्यक् षड्रसैर्भूरिदक्षिणाम् ॥४३॥
दत्त्वा प्रणम्य विसृजेदेवं सिद्धो भवेन्मनुः। ततः प्रणम्य विधिवद्गुरुं सन्तोषयेत् ततः ॥४४॥
काम्यकर्माणि कुर्वीत सिद्धये स्युर्न चान्यथा।

अयं पुरश्चरणजपः कृतयुगपरः। कलावेतच्चतुर्गुण इति।

महागणेश पूजन-विधान—प्रातःकृत्य से योगपीठ न्यास तक के कर्मों को करके मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गणकाय ऋषये नमः, मुखे निचृद् गायत्री छन्दसे नमः, हृदये महागणपतये देवतायै नमः, गुह्ये गं बीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। तदनन्तर अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करे।

षडङ्ग न्यास—ॐ गां हृदयाय नमः, श्रीं गीं शिरसे स्वाहा, ह्रीं गूं शिखायै वषट्, क्लीं गैं कवचाय हुं, ग्लौं गौं नेत्रत्रयाय वौषट्, गं गः अस्त्राय फट्। इन्हीं बीजों से अंगूठों से करतल तक में न्यास करे। पुनः हृदयादि षडङ्गों में न्यास करे।

मन्त्रवर्ण न्यास—ब्रह्मरन्ध्रे गं नमः, दक्षनेत्रे णं नमः, वामे पं नमः, दक्षश्रोत्रे तं नमः, वामे यें नमः, दक्षनासायां वं नमः, वामे रं नमः, मुखे वं नमः, दक्षबाहुमूले रं नमः, मध्ये दं नमः, मणिबन्धे सं नमः, अंगुलिमूले वँ नमः, अंजुल्यग्रे जं नमः, वामबाहुमूले नं नमः, मध्ये में नमः, मणिबन्धे वं नमः, अंगुलिमूले शं नमः, अंगुल्यग्रे मां नमः, अनाहते नं नमः, मणिपूरके यं नमः, स्वाधिष्ठाने स्वां नमः, मूलाधारे तां नमः, शिरसि ॐ नमः, मुखे श्रीं नमः, हृदये ह्रीं नमः, गुह्ये क्लीं नमः, पादयोः ग्लौं नमः, हृदये गं नमः—इस प्रकार न्यास कर गणपतये इत्यादि बाईस वर्णों से मूर्धा से पैरों तक व्यापक न्यास करे। तदनन्तर अपने हृदयकमल में इक्षुसमुद्र में नवरत्न मणिमय द्वीप पर समुद्रजल से प्रक्षालित शीतल भूमि पर, उसके जल से समन्वित हवा का सेवन करते कल्पवृक्ष से अलंकृत भूभाग पर; अनेकों पुष्पवृक्षों पर बैठे अनेक पक्षियों वाले, अनेक फलों से समन्वित एवं अप्सराओं से सुशोभित, बाल चन्द्रमा की किरणों से व्याप्त, पद्मरागों की उपस्थिति से रक्तवर्ण भूतल पर: कल्पवृक्ष के पुष्पों पर गुञ्जायमान भ्रमरों वाले भाग में, पारिजात एवं कल्पवृक्ष के मध्य में एक साथ छः ऋतुओं के पुष्पों से सुशोभित नवरत्नों से परिपूर्ण सिंहासन के मध्य में, कमल के षट्कोणों में कर्णिकाओं में एवं त्रिकोण में महागणों से घिरे नाना रत्नों से अलंकृत एकदन्त गणेश का इस प्रकार चिन्तन करे—

नानारत्नविभूषाढ्यमेकदन्तं गजाननम्। चक्राब्जत्रिशिखान् गुणैक्षवधनू रक्तोत्पलं सद्गदां।।
व्रीह्यग्रान्वितबीजपूररदनं कुम्भं करैर्बिभ्रतम्। पद्मोद्यत्करया निजप्रमदया श्लिष्टं जपासन्निभं।।
सार्धेन्दुं प्रभजे महागणपतिं नेत्रत्रयोद्भासितम्। पुष्करोद्धृतरत्नौघमयकुम्भमुखस्रुतान्।।
मणिमुक्ताप्रवालादीन् वर्षन्तं धारया मुहुः। सर्वतः साधकस्याग्रे स्वदानजललोलुपाम्।।
षट्पदालीं कर्णतालैर्वारयन्तं मुहुर्मुहुः। अमरासुरसंसेव्यं सद्रत्नमुकुटोज्ज्वलम्।।
उरूदरं गजमुखं नानाभरणभूषितम्।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद समस्त उपचारों से मानस पूजन करे। अष्टदल बनाकर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र अष्टदल से बाहर बनावे। अष्टदल की कर्णिका में षट्कोण बनाकर उसमें त्रिकोण बनावे। ऐसा पूजाचक्र बनावे। उसमें अर्घ्य स्थापना से पुष्पोपचार तक गणपति की पूजा त्रिकोण-मध्य में करे। त्रिकोण के बाहर देव के आगे ॐ श्रीं लक्ष्मीनारायणभ्यां नमः, देव के दाँयें भाग में ॐ ह्रीं गौरीहराभ्यां नमः, देव के पीछे ॐ क्लीं रतिकामाभ्यां नमः एवं देव के वाम भाग में ॐ ग्लौं महीवराहाभ्यां नमः से पूजन करे। तदनन्तर त्रिकोण के भीतर देव के आगे ॐ गं लक्ष्मीगणनायकाभ्यां नमः से पूजा करे। इस प्रकार इन युगलों का वृक्ष के नीचे ध्यानोक्त रूप में सम्यक् ध्यान करके गन्धादि से पूजा करे।

तदनन्तर षट्कोण में देव के आगे से प्रारम्भ करके इनकी पूजा करे—ॐ गं आमोदसिद्धिभ्यां नमः, ॐ गं प्रमोद-समृद्धिभ्यां नमः, सुमुखकान्तिभ्यां नमः, दुर्मुखमदनावतीभ्यां नमः, विघ्नमदद्रवाभ्यां नमः, विघ्नकर्तृद्राविणीभ्यां नमः। षट्कोण के बाहर देव के दाँयें भाग में शं शङ्खनिधिवसुधाराभ्यां नमः एवं बाँयें पं पद्मनिधिवसुमतीभ्यां नमः से पूजन करे। अष्टदल के केसरों में पूर्ववत षडङ्ग पूजन करे। दलों में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। चतुरस्र में लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करे। तब धूप-दीपादि सभी उपचारों से पूर्ववत् पूजा करे। इस प्रकार छः आवरणों में देव की पूजा सम्पन्न करे।

तदनन्तर एक लाख दस हजार मन्त्र जप करे। बारह हजार हवन एकाक्षर मन्त्र में वर्णित आठ द्रव्यों से करे। हवन का दशांश तर्पण करे। तर्पण का दशांश मार्जन करे। मार्जन का दशांश ब्राह्मणों को षड्‌रस भोजन कराकर प्रचुर दक्षिणा दे। प्रणाम करके देव का विसर्जन करे। तब गुरु को प्रणाम करके विधिवत् सन्तुष्ट करे। सिद्ध मन्त्र से काम्य कर्म करे; अन्यथा न करे। कलियुग में उपर्युक्त का चौगुना जप कहा गया है।

महागणेशमन्त्रस्य काम्यकर्मप्रयोगः

तथा—

वक्ष्ये प्रयोगानधुना समासान्महागणेशाणुवरस्य सर्वान्।
रक्तप्रसूनैर्गणपं समर्च्य जपेन्मनुं चाष्टसहस्रमन्ते ॥१॥
दशांशतो लोहितवाजिवैरिपुष्पैर्हुनेत् स्वादुपरिप्लुतैश्च।

अष्टसहस्रमष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः। वाजिवैरी करवीरः। स्वादूनि मधुराणि, तानि तु घृतमधुशर्कराः। घृतमधुदुग्धानि वा।

राजा वशे तिष्ठति मन्त्रिणोऽस्य सामात्यभृत्यादिकसैन्ययुक्तः ॥२॥
ब्रह्मद्रुसूनैस्त्रिमधुप्लुतैश्च हुत्वा द्विजातीन् वशयेदवश्यान्।
ते चात्र मन्त्रिप्रवरस्य नित्यमुक्तं हि कुर्वन्ति न संशयोऽत्र ॥३॥

ब्रह्मद्रुसूनैः पलाशकुसुमैः।

सर्पिर्हुनेन्मन्त्रिवरो हि तावत् जितेन्द्रियः संस्तदनन्यचेताः।
चराचरेऽस्मिञ्जगति प्रसिद्धां कीर्तिं विशालाममलां लभेत् सः ॥४॥
मन्त्री हुनेदाज्यपरिप्लुतं यो धनं स धान्यं विपुलं लभेत।
मधुप्लुतैर्लोहितपङ्कजैर्यो हुनेदथाष्टोत्तरकं सहस्रम् ॥५॥
पृथ्वीपतींस्तत्प्रमदाश्च नित्यं वशे करोत्येव तदात्मजांश्च।
हयारिवृक्षोत्थसमिद्भिरष्टाधिकं सहस्रं जुहुयान्मनुज्ञः ॥६॥
(भूदेववर्यान् ससुतान् सबन्धून् सपत्निकांश्च वशयेदवश्यम्।)
अष्टाधिकं मन्त्रिवरः सहस्रं जप्त्वा दशांशेन हुनेन्मनुज्ञः ॥७॥
विशुद्धया राजिकया च लोणैस्तद्भस्म संशोध्य करे गृहीत्वा।

साज्ययेति सांप्रदायिकाः।

योषां निजेष्टां खलु ताडयेत् सा कन्दर्पतीक्ष्णेषुनिपीडिताङ्गी ॥८॥
स्वजीवितं यावदमुष्य वश्या भवेदवश्या किल किङ्करीव।
शिवालये लक्षमितं मनुं यो जपेद् दशांशेन हुनेच्च मन्त्री ॥९॥
पयोन्धसा साधुमधुप्लुतेन सोऽर्थानवश्यं विविधांल्लभेत।

पयोन्धसा पायसेन।

काम्य कर्म-प्रयोग—अब मैं महागणेश के श्रेष्ठ मन्त्र के प्रयोगों को कहता हूँ। लाल फूलों से गणेश की पूजा करे। एक हजार आठ मन्त्र जप करे। जप का दशांश हवन लाल कनैल के फूलों को घी-मधु-शक्कर या घी-मधु-दूध-मधुरत्रय से सिक्त करके करे। ऐसा करने से अमात्य-भृत्य-सेनासहित राजा मन्त्रज्ञ के वश में होते हैं। त्रिमधुराक्त पलाश के फूलों के हवन से द्विज वश में होते हैं और ये सभी साधक की इच्छानुसार कार्य करते हैं। पूर्वोक्त संख्या में गोघृत से जब तक हवन करे तब तक जितेन्द्रिय अनन्यचेता रहे तो इस संसार के चराचरों में प्रसिद्ध कीर्ति से प्राप्त होती है। गोघृत से परिप्लुत जिस

अन्न से साधक हवन करता है उसे वह अन्न बहुत मात्रा में मिलता है। मधुप्लुत लाल कमल से जो एक हजार आठ हवन करता है उसके वश में रानी एवं पुत्र के सहित राजा नित्य रहता है। कनैल वृक्ष की समिधा से जो एक हजार आठ हवन करता है, उसके वश में अपने पुत्र-बन्धु-पत्नीसहित ब्राह्मणश्रेष्ठ रहते हैं। मन्त्रज्ञ एक हजार आठ जप के बाद दशांश हवन राई और नमक से करे और उसके भस्म को शोधित करके हाथ में लेकर अपनी इच्छित स्त्री पर छींटे तो वह तीव्र काम से पीड़ित होकर उसके वश में किंकरी के समान रहती है। शिवालय में इस मन्त्र का जो जप एक लाख जप करता है और दशांश हवन दूध और भोज्य पदार्थों में मधु मिलाकर करता है, उसे बहुत प्रकार के धन की प्राप्ति होती है।

जातीप्रसूनैर्विधिवत् तथाष्टाधिकं सहस्रं जुहुयान्मनुज्ञः ॥१०॥
मेधायुतो वेदसदर्थवेत्ता भवेदथासावचिरादवश्यम्।
दूर्वात्रिकैर्यो जुहुयान्मनुज्ञोऽयुतत्रयं तेन भवेदवश्यम् ॥११॥
मृत्युञ्जयः सर्वगदान् विजित्य लोके स धीमानिह दीर्घजीवी।
समाहितो मन्त्रिवरोऽयुतं यो हुनेद्विधानेन सुपीतपुष्पैः ॥१२॥
संस्तम्भयेद्वैरिनृपस्य सेनां सभृत्यनागाश्वरथामवश्यम्।
लोहादिकैः संघटितानि यानि दिव्यानि शस्त्राणि सितानि तेषाम् ॥१३॥
धारां ध्रुवं स्तम्भयतीह शत्रोर्नागाश्वसंस्तम्भनमत्र कुर्यात्।
विभीतकद्रूत्थसमिद्भिरत्रायुतत्रयं यो जुहुयाद्विधिज्ञः ॥१४॥
उच्चाटयेदाशु च वैरिसङ्घान् स्वस्थानतो मन्दरसन्निभांश्च।
ग्रामं पुरं वा नगरं च देशं ध्यायंश्च यं यं जुहुयात् क्रमेण ॥१५॥
तं तं तदोच्चाटयतीह मन्त्री तथा च कामं प्रतिमानवानाम्।
मन्त्री त्वपामार्गसमिद्भिरष्टाधिकं सहस्रं विधिवज्जुहोतु ॥१६॥
स्वजीवितावध्यथ पण्ययोषा वश्या भवेयुर्न विचार्य्यमत्र।
एरण्डवृक्षोत्थसमिद्भिरष्टोत्तरं सहस्रं जुहुयाद्विधानात् ॥१७॥
रण्डाः स्वजीवावधि तस्य वश्या अर्थप्रदाः कामदुघा भवन्ति।
आनीय निम्बद्रुदलानि तेषु स्वसाध्यनामानि विलिख्य मन्त्री ॥१८॥
रक्तैश्च सम्यग् महिषाश्वजातैर्हुनेत् कटुस्नेहयुतै रहस्तैः।
विंशत्सहस्रं भवतीह तेन मर्त्यो हि विप्लुष्टतरः सदैव ॥१९॥

अमुकममुकेन द्वेषयेति साध्यनामानि। रह इति परिच्छेदः।

मर्त्यास्थिसंभूतमयं हि कीलमष्टाङ्गुलं शावशिरोरुहैस्तम्।
संवेष्ट्य सम्यग् वसुयुक् सहस्रं संजप्तमेनं कुलिकोदये च ॥२०॥

वसुयुक्सहस्रमष्टोत्तरसहस्रम्। कुलिकोदयस्तु ज्योतिःशास्त्रे।

शत्रोर्गृहे द्वारि खनेद्यथावत् सप्ताहतोऽसौ मृतिमेति मर्त्यः।

जातीपुष्पों से विधिवत् जो एक हजार आठ हवन करता है, वह मेधायुक्त एवं वेद के सम्यक् अर्थों का थोड़े ही समय में ज्ञाता हो जाता है। जो मन्त्रज्ञ दूर्वात्रिकों से तीस हजार हवन करता है, वह सभी रोगों से मुक्त होकर मृत्युञ्जय होता है और संसार में दीर्घ काल तक जीवित रहता है। जो मन्त्रज्ञोत्तम समाहित होकर विधान से पीले फूलों से एक हजार हवन करता है, वह राजा के वैरी की सेना को नौकरों के सहित एवं हाथी घोड़े रथ को स्तम्भित कर देता है एवं लौहनिर्मित शस्त्र या दिव्य अस्त्र की धार को भी स्तम्भित कर देता है। शत्रु के हाथी-घोड़ों को स्तम्भित कर देता है। जो विधिज्ञ लिसोड़े की समिधाओं से तीस हजार हवन करता है, वह पहाड़ के समान बली वैरीसमूहों को भी अपने स्थान से उच्चाटित कर देता है।

जिस ग्राम, पुरी या नगर या देश का ध्यान क्रमशः करके जो इस प्रकार हवन करता है तो उनमें रहने वाले मनुष्यों का उच्चाटन हो जाता है। जो साधक अपामार्ग की समिधाओं से विधिवत् एक हजार हवन करता है, उसके वश में योषिता आजीवन रहती है। इसमें विचार की जरूरत नहीं है। जो विधानसहित एरण्ड की समिधाओं से एक हजार आठ हवन करता है, उसके वश में वेश्यायें आजीवन रहकर उसके लिये कामधेनु के समान हो जाती हैं। नीम के पत्तों को लाकर उन पर भैंसा और घोड़ा के रक्त से साध्य का नाम लिखकर उनमें कड़ुआ तेल मिलाकर बीस हजार हवन करे तो वैरियों का आपस में ही वैर हो जाता है।

मृतक की हड्डी के आठ अंगुल लम्बे कील को मृतक के शिर के बालों से सम्यक् रूप से वेष्टित करके कुलिक योग में एक हजार आठ जप से मन्त्रित करके शत्रु के घर के दरवाजों पर गाड़ दे तो सात दिनों में ही शत्रु की मृत्यु हो जाती है।

कुलिकोदयस्तु—

मन्वर्कदिग्वस्वृतुवेदपक्षैरर्कान्मुहूर्तैः कुलिका भवेयुः ।
दिवा निरेकैरथ यामिनीषु ते गर्हिता कर्मसु शोभनेषु ॥ इति।

अर्कादर्कवारात्। मनु १४ अर्क १२ दिक् १० वसु ८ ऋतु ६ वेद ४ पक्षाः २ इति दिवा। रात्रौ तु निरेकैरेकहीनैरेभिर्मुहूर्तैः कुलिककालो ज्ञेयः। अयमर्थः—रात्रौ तु त्रयोदशैकादशनवसप्तपञ्चतृतीयप्रथममुहूर्ताः अर्कादिवारेषु यथाक्रमं कुलिककालो ज्ञेयः।

कुलिक योग—रविवार से चौदह, बारह, दस, आठ, छः, चार एवं दो मुहूर्त तथा रात्रि में तेरह, ग्यारह, नव, सात, पाँच, तीन तथा एक मुहूर्त तक कुलिक काल कहलाता है।

मन्त्री बिलद्वारसमीपवर्ती जपेन्मनुं लक्षमितं यथा च ॥२१॥
तस्याग्रतश्चाभिपतन्ति नागकन्या विलज्जाः खलु सत्त्वहीनाः ।
दिव्यानि सिद्धानि रसायनानि नानाप्रकारांश्च मणीन् प्रसिद्धान् ॥२२॥
इष्टान्यनर्घ्याणि बहूनि सर्वास्ताः संप्रयच्छन्ति न चान्यथात्र ।
जपेद्गिरेर्मूर्धनि लक्षमेकं दृढव्रतश्चैकमना नितान्तम् ॥२३॥
भवेद् ध्रुवं तस्य कृपाणसिद्धिः सुरासुरैरप्यभिकांक्षिता या ।
लज्जालुकासद्घनसारनन्द्यावर्तानि शुक्लां गिरिकर्णिकां च ॥२४॥
अधःप्रसूनामथ मेलयित्वा संपिष्य जप्त्वा नियुतद्वयेन ।
एभिः शुभैरञ्जितलोचनो यो मर्त्यो निधानानि स पश्यतीह ॥२५॥

लज्जालुका प्रसिद्धा। तस्या लक्षणं तु—'स्पर्शसंकुचत्पत्रत्वम्।' घनसारः कर्पूरः। शुक्ला गिरिकर्णिका श्वेतापराजिता। अधःप्रसूना शङ्खपुष्पी, अधोमुखपुष्पवती।

भवेद्व्रणेशाणुशताष्टजप्तश्रीखण्डलेपात् खलु दुःखनाशः ।

शताष्टजप्तेत्यष्टोत्तरशतमित्यर्थः एवं सर्वत्र।

लूतासविस्फोटकभूतकृत्याप्रेतोद्भवान् घोरतराञ्ज्वरांश्च ॥२६॥
मनोरथाद्यष्टसहस्रजापाद् विनाशयेन्मन्त्रवरस्त्ववश्यम् ।
विषद्वयं स्थावरजङ्गमं च ज्वरानथाष्टाविह शूलरोगान् ॥२७॥
सुदारुणान्तान् गृहिणीं च रोगान् वातप्रभूतान् कफपित्तजातान् ।
गलग्रहादीनपि रोगसङ्घान् शताष्टजापेन विनाशयीत ॥२८॥
लक्षैकजापेन मनोरथानां सिद्धिर्भवेदस्य हि पादुकायाः ।
मन्त्री ततो गच्छति दूरवर्त्म शतत्रयं योजनसंज्ञकानाम् ॥२९॥

गुप्तप्रदेशे विजने मनोज्ञे विलेपिते गोमयतो विशुद्धे।
स्नातः शुचिर्मन्त्रिवरो जितात्मा कुम्भं नवं चर्चितचन्दनार्द्रम् ॥३०॥
संस्थाप्य नीरेण सुगन्धिना तं प्रपूरयेत् तत्र शरावमेकम्।
कुम्भोपरिष्टात् कपिलाज्यपूर्णं विन्यस्य प्रज्वाल्य च दीपमेकम् ॥३१॥
प्रपूजयेच्चन्दनपुष्पधूपैः कुमारिकां चाथ कुमारकं च।
आनीय संस्पृश्य जपेदिमं च मनुं तथाष्टाढ्यशतं मनुज्ञः ॥३२॥
भूतं भविष्यं किल वर्तमानं शुभाशुभं वा कथयेदवश्यम्।
महागणेशं गदितस्वरूपं ध्यात्वा जपेद्रात्रिषु मन्त्रिवर्य्यः ॥३३॥
स्वप्ने गणेशः कथयत्यवश्यं शुभाशुभं नात्र विचारणीयम्।
चन्द्रग्रहे वाथ रविग्रहे वा मन्त्रं जपेत् साधुजलाशयस्थः ॥३४॥
आकृष्टिरस्यात्र भवेत् सुसिद्धा धान्यादिकानां पशुयोषितां च।
न्यग्रोधमूले ह्युपविश्य मन्त्री मन्त्रं जपेल्लक्षमिमं विधानात् ॥३४॥
सा यक्षिणी तस्य भवेत्सुसिद्धा अर्थादि कृष्ट्वा च ददाति नित्यम्।
उपोष्य रात्रौ विधिवद्वचां समानीय यत्नात् प्रयतो नितान्तम् ॥३६॥
स्नात्वार्चयेदत्र महागणेशं स्पृष्ट्वायुतं तां प्रजपेच्च मन्त्रम्।
कृत्वातिसूक्ष्मं किल चूर्णमस्याः कर्षोन्मितं तत्कपिलाज्ययुक्तम् ॥३७॥
संप्राशयेत् प्रातरतीव शुद्धः कविर्भवत्येव हि सप्तरात्रात्।

अत्रापि प्राग्वत् सप्तधा विभज्यैकैकं भागं प्रातःप्रातः सघृतं भक्षयेदिति।

साँप के बिल के समीप साधक इस मन्त्र का एक लाख जप करे तो नागकन्याएँ निर्लज्ज एवं सत्त्वहीन होकर साधक को आगे-पीछे से प्रणाम करने लगती हैं। वे साधक को दिव्य सिद्ध रसायन, विविध प्रकार के मणि एवं अन्य प्रकार की बहुत सी इच्छित वस्तुएँ प्रदान करती हैं। पर्वतशिखर पर दृढ़व्रत होकर एकाग्र मन से साधक एक लाख मन्त्र जप करे तो देव-दैत्यों से भी कांक्षित कृपाण सिद्धि होती है। लाजवन्ती कपूर नन्द्यावर्त श्वेत अपराजिता शङ्खपुष्पी को एक साथ पीसकर उसे दो लाख मन्त्रजप से मन्त्रित करके आँखों में अंजन के रूप में लगाने से मनुष्य को निधि का दर्शन होता है अर्थात् गड़ा खजाना दिखायी देता है। श्रीखण्ड चन्दन के लेप को एक सौ आठ जप से मन्त्रित करके लेप लगाने से सभी दुःखों का नाश होता है। लूता, विस्फोट, भूत, कृत्या, प्रेत, भयंकर बुखार का नाश एक हजार आठ जप से होता है। स्थावर-जंगम दोनों प्रकार के विष, आठ प्रकार के ज्वर, शूल रोग, वात-कफ-पित्त से उत्पन्न गृहिणी के दारुण रोग गलग्रहादि रोगसमूह का नाश एक सौ आठ जप से होता है।

एक लाख जप से पादुकासिद्धि का मनोरथ पूरा होता है, जिसे पहन कर साधक तीन सौ योजन दूर तक जा सकता है। तीन सौ योजन बराबर तीन हजार छः सौ किलोमीटर होता है। निर्जन, मनोरथ, गुप्त प्रदेश में गोबर से भूमि लीपकर जितात्मा साधक स्नान से पवित्र होकर चन्दनचर्चित नव कुम्भ स्थापित करके सुगन्धित जल से भरे। सभी घटों के ऊपर एक-एक शराब रखे। प्रत्येक पर कपिला गाय के घी से पूर्ण दीपक जलावे। कुमारी कन्या या कुमार बालक की पूजा गन्ध-पुष्प-धूपादि से करे। उसे स्पर्श करके एक सौ आठ मन्त्रजप करे तो वह भूत भविष्य वर्तमान के शुभ-अशुभ बतलाने लगता है।

महागणेश का उपरोक्त रूप में ध्यान करके यदि रात में साधक जप करे तो गणेश स्वप्न में शुभ-शुभ बतला देते हैं। चन्द्र ग्रहण या सूर्यग्रहण में जलाशय में खड़े होकर साधक मन्त्रजप करे तो आकृष्टि की सिद्धि होती है और धान्य-पशु-योषिता की प्राप्ति होती है। वटवृक्ष की जड़ के पास बैठकर विधिवत् एक लाख मन्त्र जप करे तो वटयक्षिणी सिद्ध होती है और वह साधक को नित्य धन प्रदान करती है। रात में उपवास करके सावधानीपूर्वक वचा को ले आये; स्नान करके उस

वचा को स्पर्श करके महागणेश मन्त्र का जप दश हजार करे। तदनन्तर उसका महीन चूर्ण बनावे। उसके एक कर्ष = १२ ग्राम चूर्ण का सात भाग करके एक भाग को कपिला गाय के घी के साथ प्रात:काल में खाये। सात रातों तक इस क्रिया को करने से साधक कवि हो जाता है।

रसं समादाय च कामचारी रसेन संशोध्य च याममेकम् ।।३८।।
कार्पासपत्रोत्थरसेन तावत् प्रमर्द्य सम्यक् खलु मर्दयेच्च।
कुमारिकापत्ररसेन तावत् ततो भवेद्रूप्यसमानवर्णः ।।४९।।
भागा मताः षोडश पारदस्य शुल्वस्य भागत्रितयं तथैव।
भागत्रयं स्याद्गगनस्य चैकं हेम्नस्तथैकं किल लोहजातेः ।।४०।।
एकत्र कृत्वा बहुधा प्रमर्द्य संस्थापयेत् सम्यगथारनाले।
शिवालये शुद्धमनाश्च गत्वा मनुं जपेल्लक्षमिमं मनुज्ञः ।।४१।।
महागणेशस्य ततः प्रसादात् सिद्धा हि नूनं गुटिका भवेत् सा।

रसं पारदम्। कामचारी आकाशवल्लीति प्रसिद्धा। शुल्वस्ताम्रम्। गगनं स्वगापाक्षिकमभ्रकमिति केचित्। आरनालं काञ्जिकः। अत्र ताम्रादिकं चूर्णीकृत्य मेलयितव्यम्।

तां धारयेदानन एव मन्त्री सुदुर्जयः स्यात् सुरदानवाद्यैः ।।४२।।
समग्रभूतैश्च भवेदवध्यः शस्त्रास्त्रवृन्दैरपि भिद्यते न।
न दह्यते वह्निशतैश्च मर्त्यो विषद्वयेन म्रियते न वापि ।।४३।।
तस्याः प्रभावात् किल वज्रदेहो भवेद्गतिस्तस्य च खेचरी स्यात्।
धरामदृश्यः सकलां च नष्टच्छायो हि भूत्वा विचरेदवश्यम् ।।४४।।
सदा च सा तिष्ठति यस्य गेहे लक्ष्मीः स्थिरा तस्य गृहे भवेच्च।
सा दृष्टिबन्धं जगतः करोति महागणेशाणुवरप्रसादात् ।।४५।।

पारद लाकर एक पहर तक अमरबेल रस से शोधन करे। कपास के पत्तों के रस में मिलाकर उसका मर्दन करे। तब घृतकुमारी के रस में मर्दन करे तो वह चाँदी के समान उजला हो जाता है। उस पारद को सोलह भाग ताम्बा-तीन भाग अभ्रक एवं एक भाग सोना एवं एक भाग लोहा मिलाकर कूटे। मट्ठा में उसे स्थापित करे। उसे लेकर शिवालय में एक लाख मन्त्र जप करे तो महागणेश की कृपा से गुटिका सिद्ध होती है। इस गुटिका को धारण करने से साधक देव-दानवों से भी दुर्जय हो जाता है। वह सभी भूतों से अवध्य होता है। शस्त्रास्त्रों का समूह उसका भेदन नहीं कर सकते। वह अग्नि में नहीं जलता। दोनों प्रकार के विष से नहीं मरता। इस गुटिका के प्रभाव से वह वज्रदेह हो जाता है। उसे आकाशगमन की शक्ति प्राप्त होती है और पृथ्वी पर अदृश्य एवं नष्टछाया होकर वह विचरण करता है। उसके घर में लक्ष्मी का चिरस्थायी वास होता है। महागणेश मन्त्र के प्रभाव से संसार का वह दृष्टिबन्ध कर सकता है।

सब्रह्मदण्डीं वशिनीं गृहीत्वा पुष्यार्कवारेण ततोऽभियोज्य।
वज्राभ्रकेणाथ पुनस्त्रिलोहैः संवेष्ट्य सम्यग् गुलिकां च कुर्यात् ।।४६।।
महागणेशं परिपूज्य मन्त्रजप्तां गणेशस्य कराच्च लब्धाम्।
इत्थं विचिन्त्य स्वकरे नयेत्तां सिद्धां गणेशस्य मनुप्रभावात् ।।४७।।
वक्त्रे शिखायां च करेऽथ कण्ठे तां धारयेन्मन्त्रिवरः सदैव।
तस्याः प्रभावान्न भवेत् समीपे व्याघ्रादिचौरोरगविघ्नवृन्दः ।।४८।।
क्षोणीभुजः स्युर्वशगास्तथास्य लोके भवेदेव हि कामचारी।

स्त्रीणां प्रियोऽसौ मदनातुराणां भवेदवश्यं गुटिकाप्रसादात् ॥४९॥

ब्रह्मदण्डी भारङ्गी। वशिनी लज्जालुका। वज्राभ्रकोऽभ्रकविशेषः। त्रिलोहैः स्वर्णरजतताम्रैः।

गोरोचनोन्मत्तसुशङ्खपुष्पे देवी सिता स्यादपराजिताह्वा।
सब्रह्मदण्डी मलयोद्भवं च कृष्णागुरुः स्युः समभागकानि ॥५०॥
संपिष्य सम्यक् च रवौ सपुष्ये कुर्याद् विधानाद् गुटिकां मनुज्ञः।
कृत्वा च तामर्कसहस्रजप्तां विशेषकोऽस्या जनमोहकः स्यात् ॥५१॥

देवी सहदेवी। विशेषकस्तिलकः।

भारंगी, लाजवन्ती को रविवारीय पुष्य नक्षत्र में लेकर उसमें अभ्रक मिलावे। सोना-चाँदी-ताम्बा—इस त्रिलौह के ताबीज में उसे भरे। महागणेश की पूजा करके मन्त्रजप से मन्त्रित करे। उसे गणेश से प्राप्त समझकर अपने बाँह में धारण करे तो मन्त्रप्रभाव से सिद्धियाँ उसके पास आती हैं। उसे साधक मुख में, शिखा में, बाँह में या कण्ठ में नित्य धारण करे तो इसके प्रभाव से साधक के समीप बाघ, चोर, सर्प या विघ्न किसी भी प्रकार के नहीं आते। राजा उसके वश में होते हैं। वह संसार में कामचारी होता है। वह स्त्रियों का प्रिय होता है। स्त्रियाँ मदनातुर होकर उसके वश में होती हैं। गोरोचन, धत्तूर, शङ्खपुष्पी, सहदेई, उजला अपराजिता फूल, ब्रह्मदण्डी, श्वेत चन्दन, काला अगर को बराबर लेकर पीसकर पुष्यार्क योग में विधिवत् गोली बनावे। बारह हजार जप से उसे मन्त्रित करे एवं इसका तिलक लगावे तो वह जनमोहक हो जाता है।

ग्राह्यामृता मन्त्रिवरेण दीर्घतुण्डा ततस्तां किल पेषयित्वा।
तच्चूर्णमालिप्य करद्वयेन जपेन्मनुं ह्यष्टयुतं सहस्रम् ॥५२॥
प्रदर्शयेत्तौ गजसंमुखं च दृष्ट्वा दिशस्ते दश विद्रवन्ति।
मदोत्कटा दानजलार्द्रगण्डा ऐरावतस्यापि कुले प्रसूताः ॥५३॥
सुदीर्घदन्तद्वयरोचमाना गच्छन्ति दूरं विवशा भयार्ताः।
वश्या भवेयुर्मनुवित्तमस्य ह्युक्तं च कुर्वन्ति न संशयोऽस्मिन् ॥५४॥

गिलोय और दीर्घतुण्डा को मिलाकर पीसे। उस लेप को दोनों हाथों में लगाकर एक हजार आठ मन्त्र जप करे। तदनन्तर हाथी के सामने अपने दोनों हाथों को दिखावे तो उसे देखकर हाथी भाग जाते हैं। महोत्कट मदमत्त ऐरावत-कुलोत्पन्न लम्बे दाँतों वाले हाथी भी भयार्त होकर दूर भाग जाते हैं। मन्त्रज्ञ के वश में सभी हो जाते हैं, इस उक्ति में संशय नहीं करना चाहिये।

गजान् गृहीतुकामो वै राजा गत्वा वनेषु सः। ततश्च कारयेद्दृढां सम्यक् च गजबन्धनीम् ॥५५॥
चतुरस्रां विशालां च शालां तां निकटे ततः। दृढावरणसंवीतां चतुर्द्वारां सुतोरणाम् ॥५६॥
कुर्यात्तत्र स्थलीं सम्यक् चतुरस्रां समुन्नताम्। तस्यामुत्तरदिग्भागे विदध्यात् कुण्डमुत्तमम् ॥५७॥
सर्वलक्षणसंयुक्तं मेखलाद्यैरलंकृतम्। पूर्वादितः स्थलीमध्ये प्रोक्तलक्षणलक्षितम् ॥५८॥
मण्डलं कारयेत् तत्र समावाह्य गणेश्वरम्। संपूज्य च निवेद्यान्तैरुपचारैः सुशोभनैः ॥५९॥

मण्डलं सर्वतोभद्रम्।

आधायाग्निं ततः कुण्डे स्वमन्त्रैः पूजयेच्च तम्। पुरोक्तैरेव जुहुयादाज्यैर्वारत्रयं ततः ॥६०॥
हुनेत् समृद्धिमन्त्रेण नव मूलाणुनाहुतीः।

पुरोक्तैरेवेति दीक्षाप्रकरणोक्ताग्निमुखमन्त्रैः। समृद्धिमन्त्रः भूर्भुवःस्वरग्निर्जातवेदा इत्यादिको वक्ष्यमाणः।

प्रणवः श्रीशक्तिमारभूविनायकबीजकैः। अनुबद्धैः क्रमादेभिस्त्रिविभक्तेन संहुनेत् ॥६१॥

पुरोक्तैः श्रीशक्तिमारविनायकबीजकैः। प्रणवेत्यादिना प्राग्दीक्षाप्रकरणे अग्निमुखीकरणहोमे महागणपतिमन्त्रस्य यो दशधा विभाग उक्तस्तत्रान्तिमपदद्वयमेकीकृत्य जुहुयात्, तेन नवधा होमो भवति इत्यर्थः। उक्तं तदाचार्य्यचरणैः (प्र०सा०)—

तारेण लक्ष्म्यद्रिसुतास्मरक्ष्माविघ्नेशबीजैः क्रमशोऽनुबद्धैः।
पदत्रयेणापि च मन्त्रराजं विभज्य मन्त्री नवधा जुहोतु॥ इति।

मूलाणुना समस्तेन हुनेन्मन्त्रार्णसंख्यया। आज्येनैव ततश्चाष्टद्रव्यैः स्वादुविलोलितैः॥६२॥
चत्वारिंशत्सहस्राणि चतुर्भिरधिकानि च। चतुश्शतं चतुश्चत्वारिंशद्भिः सहितं हुनेत्॥६३॥
प्रत्यहं भोजयेद्विप्रांस्तदाशीर्भिर्विवर्धितः। गुरवे दक्षिणां दद्यात् पञ्चाशद्दन्तिनोऽथवा॥६४॥
तन्मूल्यं तद्दशांशं वा दत्त्वा सन्तोष्य सद्गुरुम्। चतुर्णां मिथुनानां षड्गणेशनिधियुग्मयोः॥६५॥
अङ्गमातृदिगीशानां तन्मन्त्रैः सर्पिषा हुनेत्। एवं होमं समाप्याथ नैवेद्यं च समुद्धरेत्॥६६॥
पुनरभ्यर्च्य विघ्नेशं साङ्गं सावरणं ततः। निजे हृदि समुद्वास्य विहरेत् स यथासुखम्॥६७॥
ततो दिनैश्चतुश्चत्वारिंशता निपतन्ति हि। विनायकप्रभावेन कलभाः करिणस्तथा॥६८॥
करिणीनां समूहाश्च पात्यन्ते ह्यवटे ततः। प्रोक्तरूपं प्रोक्तकुण्डे गणेशं सम्यगर्चयेत्॥६९॥
अवटे गर्ते।

तत्र वह्निं समाधाय लक्षमेकं पृथग् हुनेत्। पयोघृताभ्यामुन्मत्तपुष्पैः शर्करयापि च॥७०॥
क्षौद्रेणान्नेन च ततो कुण्डमध्यात् समुज्ज्वला। वेतालसंज्ञा गुटिका प्राप्यते मन्त्रिणा ततः॥७१॥
अणिमाद्यष्टसिद्धीनां जायते भाजनं सुधीः।

अत्राप्येकैकद्रव्ये सप्तषष्ट्युत्तरषट्शताधिकषोडशसहस्रसंख्यो जपः कार्यः। अन्तिमद्रव्ये त्वाहुतिद्वयं न्यूनमिति।

हाथियों को पकड़ने के लिये राजा विकट जंगल में जाकर गूढ़ गजबन्धनी करे। चतुरस्र विशाल शाला जंगल के निकट बनवाये, जो कि चार द्वारों से युक्त एवं तोरण से सुशोभित हो। उस शाला में समुन्नत चतुरस्र स्थल बनावे। उसके उत्तर भाग में सुन्दर कुण्ड बनावे समस्त लक्षणों से युक्त एवं मेखलादि से अलंकृत हो। निर्मित स्थल में पूर्वोक्त लक्षणों से लक्षित सर्वतोभद्र मण्डल बनावे। उसमें गणेश्वर का आवाहन कर गन्धादि नैवेद्यान्त उपचारों से पूजा करे। कुण्ड में अग्नि स्थापित करके दीक्षाप्रकरणोक्त अग्नि मुख मन्त्र से पूजा करे एवं उसी से तीन आहुति डाले। समृद्धि मन्त्र से नव आहुति देकर मूल मन्त्र ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं बीजों से अनुबद्ध मन्त्र को तीन भाग करके हवन करे। आचार्य के अनुसार ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं के साथ मन्त्र के तीन पदों से नव आहुती डाले। मूल मन्त्र के तीन भाग गणपतये वरवरद, सर्वजनं मे, वशमानय स्वाहा हैं। प्रत्येक के साथ छः बीजों को लगाकर नव आहुती डाले। मूल मन्त्र में अट्ठाईस अक्षर हैं। इसलिये अट्ठाईस आहुतियाँ गोघृत से लोलित पूर्वोक्त आठ द्रव्यों से डाले। तब चार हजार चार सौ चौवालीस हवन करे। प्रतिदिन विप्रों को वृद्धिक्रम से भोजन कराये। अथवा गुरु को पचास हाथी दक्षिणा में देवे या पचास हाथियों के मूल्य या उसका दशांश दक्षिणा देवे। चार गणेशमिथुनों, छः गणेश, दो निधियों, अंगमातृकाओं, दिक्पालों के मन्त्रों से घी से हवन करे। इस प्रकार हवन के बाद नैवेद्य अर्पण करे। पुनः विघ्नेश का साङ्ग-सावरण पूजन करे। सबों को अपने हृदय में विसर्जित करके यथासुख विहार करे। तब चौवालीस दिनों में विनायक के प्रभाव से हाथी अपने बच्चों सहित पकड़ में आते हैं। हाथियों का समूह गर्त में गिर पड़ता है। प्रोक्त रूप में प्रोक्त कुण्ड में गणेश का अर्चन सम्यक् रूप से करे, तदनन्तर अग्नि स्थापित करके अलग से एक लाख हवन दूध, घी, धत्तूर के फूल, शक्कर, मधु, अन्न से करे। तब कुण्डल से समुज्ज्वल वेताल नामक गुटिका प्राप्त होती है। इससे साधक को अणिमादि सिद्धियाँ मिलती हैं। यहाँ पर १६६७६ हवन प्रत्येक द्रव्य से करना चाहिये। अन्तिम द्रव्य से दो आहुति कम डालनी चाहिये।

ब्राह्मे काले समुत्थाय क्षीणचन्द्रेऽथ पर्वणि। पद्मपत्रे कापिलं खे गोमयं प्रतिगृह्य च॥७२॥
अयुतं मन्त्रसंजप्तं निखातं द्वारि वारयेत्। व्याघ्रक्रोडाहिचोरारीन् नात्र कार्या विचारणा॥७३॥

क्षीणचन्द्रे पर्वणि अमावस्यायां। खे अन्तरिक्षे।

जाती सरक्ता च महादिमोहा सदण्डिना स्यात् करयुग्ममेव।
तथाद्रिकर्णी सशिखा च कन्या गोरोचनैतानि समानभागैः॥७४॥

रक्ता मञ्जिष्ठा, महामोहा धत्तूरः, अद्रिकर्णी अपराजिता, शिखा मयूरशिखा, कन्या कुमारी, करयुग्ममञ्जलिनी।

संपिष्य पञ्चाङ्गमलानि तानि कुर्यादथैकत्र ततो जपेच्च।
स्पृष्ट्वैतदेनं मनुवर्य्यमष्टाधिकं सहस्रं भवतीह सिद्धम्॥७५॥

पञ्चाङ्गमलानीति श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणोत्थानि।

गजे प्रदेयं बदरप्रमाणं यवप्रमाणं च तुरङ्गमे तत्।
यवार्धमात्रं मनुजे प्रदेयं ततश्च तद्योषिति सर्षपार्धम्॥७६॥
प्रभक्षितं पीतमथो हिं वश्यकरं प्रशस्तं हि तथावशानाम्।
जितेन्द्रियः शुद्धतनुर्मनुज्ञो जपेन्मनुं त्वष्टयुतं सहस्रम्॥७७॥
हुनेद् दशांशं करवीरलाजान् कन्यां लभेदुत्तमवंशजां सः।
पूर्वोक्तरूपं गणपं विचिन्त्य गन्धादिनाभ्यर्च्य जपेत मन्त्री॥७८॥
मन्त्रं हि लक्षप्रमितं विमुक्तो भवेदकस्मान्निगडादिबन्धात्।
बिल्वस्य पुष्पं तगरं प्रियङ्गुं सदेवदारुं हरिचन्दनं च॥७९॥
तथागुरुं नागसुकेसरं च समानि कृत्वा मधुसाधितानि।
स्पृष्ट्वा जपेत् तानि मनुं सहस्रमष्टाधिकं तैः खलु सिद्धधूपः॥८०॥
भवेदनेनाशु सुधूपितो ना विजित्य रोगान् किल दीर्घजीवी।
प्राप्नोति चार्थं जुहुयाच्च कोऽपि भवेन्नरः सर्वजनप्रियश्च॥८१॥
अनेन धूपेन च धूपिता स्त्री सुदुर्भगाऽथो सुभगा भवेच्च।
कुमारिका धूपसुधूपिता च वरं लभेताशु कुलीनमग्र्यम्।
जलाशये लक्षमिताऽणुजापः सप्ताहतो वृष्टिकरः प्रशस्तः॥८२॥

स्वर्णाप्तौ मधुना च गव्यपयसा गोसिद्धये सर्पिषा लक्ष्म्यै शर्करया जुहोतु यशसे दध्ना च संवृद्धये।
अन्नैरन्नसमृद्धये च सतिलैर्द्रव्याप्तये तण्डुलैर्लाजाभिर्यशसे कुसुम्भकुसुमैरश्वारिजैर्वाससे॥८३॥
पद्मैर्भूपतिमुत्पलैर्नृपवधूं तन्मन्त्रिणः कैरवैरश्वत्थादिसमिद्भिरास्यजमुखान् वर्णान् वधूः पिष्टजैः।
पुत्तल्यादिभिरन्वहं स वशयेज् जुह्वन्ननावृष्टये लोणैर्वृष्टिसमृद्धये च जुहुयान्मन्त्री पुनर्वेतसैः॥८४॥ इति।

अश्वत्थादीत्यादिशब्दैरुदुम्बरप्लक्षवटा गृह्यन्ते। पुत्तल्यादीत्यादिशब्देन पिष्टरचितवृक्षादयो गृह्यन्ते।

अमावस्या पर्व में ब्राह्म मुहूर्त में उठकर कमल के पत्ते पर कपिला गाय का गोबर जमीन पर गिरने से पहले ही ग्रहण कर ले आये। इसे दश हजार मन्त्रजप से मन्त्रित करके अपने दरवाजे पर गाड़ दे तो बाघ, सूअर, सर्प, चोर का भय घर में नहीं रहता है। जाती, मञ्जिष्ठ, धत्तूर—ये सभी डंठल-सहित, हाथाजोड़ी, अपराजिता, मोरपंख, घृतकुमारी, गोरोचन बराबर-बराबर भाग में लेकर पीसे। उसमें कान, देह का मल, आँखों का मल, जीभ का मैल और नाक का मैल मिला दे। उसे स्पर्श करके एक हजार आठ मन्त्र जप करे, तब यह लेप सिद्ध हो जाता है। इस पिष्टी को हाथी को वैर के बराबर यव के बराबर घोड़ों को, मनुष्य को आधा यव के बराबर और स्त्रियों को आधा सरसों के बराबर खिला दे या पिला दे तो ये सभी वश में हो जाते हैं और आजीवन वश में बने रहते हैं।

पवित्र देह वाला जितेन्द्रिय मन्त्रज्ञ एक हजार आठ मन्त्र-जप करे। दशांश हवन कनैल फूल और लावा से करे तो उत्तम कुल की कन्या से उसका विवाह होता है। पूर्वोक्त रूप के गणेश का ध्यान करके गन्धादि से पूजा करके साधक एक लाख मन्त्र जप करे तो निगड़बद्ध मनुष्य भी अकस्मात् मुक्त हो जाता है। बेल का फूल, तगर, प्रियंगु, देवदारु, हरिचन्दन, अगर, नागकेसर बराबर-बराबर भाग में लेकर मधु मिलाकर उसे स्पर्श करके एक हजार आठ जप करे तो सिद्ध धूप बनता है। इस धूप से धूपित करने पर मनुष्य सभी रोगों से मुक्त होकर दीर्घ काल तक जीवित रहता है। इससे हवन करने पर धन प्राप्त होता है और मनुष्य सभी लोगों का प्रिय होता है। इस धूप से धूपित करने पर दुर्भगा स्त्री भी सुभगा हो जाती है। कुमारी को धूपित करने पर श्रेष्ठ कुल के वर से उसका विवाह होता है। जलाशय में खड़े होकर एक लाख मन्त्र जप करे तो एक सप्ताह में भारी वर्षा होती है।

सोना-प्राप्ति के लिये मधु से, गाय-प्राप्ति के लिये गाय के दूध से, लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये गोघृत से, यश के लिये शक्कर से, अन्नवृद्धि के लिये दही से, द्रव्यप्राप्ति के लिये तिल से, चावल और लावा से यश के लिये, वस्त्र के लिये कुसुम्भकुसुम और कनैल फूलों से हवन करे। कमल के हवन से राजा, उत्पल से रानी, कैरव से मन्त्री, पीपल वट एवं गूलर की समिधा से आस्यज मुखों को एवं पिष्टज पुत्तलियों से वधू को वश में किया जाता है। वर्षा के लिये अन्न से हवन करे। नमक के हवन से वर्षा होती है। समृद्धि के लिये वेत से हवन करे।

भूमिबीजोद्धार:

तथा सारसंग्रहे—

शाार्ङ्गी शचीवल्लभसोत्तमाङ्गं सद्यान्तयुक्तं खलु भूमिबीजम्।

इति पूर्वमूलयन्त्रोद्धारप्रकरणेऽनुद्धृतं भूमिबीजं समुद्धरति। शार्ङ्ग: गकार:। शचिवल्लभो लकार:। उत्तमाङ्गो बिन्दु:। सद्यान्त औकार:।

भूमिबीज—सारसंग्रह के अनुसार भूमिबीज 'ग्लौं' है।

महागणपतेर्यन्त्रवर्णनम्

तथा—

षट्कोणे कमलापुटं प्रविलिखेत् तारं ससाध्यं तत:
कोणेष्वङ्गमनून् स्वरान् वसुदले(द्विद्विक्रमात् संलिखेत्।
कामं द्वादशपन्नगं स्वरदले)ष्वालिख्य भूमेर्मनुं
पद्मे तत्त्वदले महागणमनोर्वर्णांश्च शिष्टांल्लिखेत्॥८५॥
द्वात्रिंशद्दलपङ्कजे कखमुखान् वर्णान् लिखेत्सान्तगान्
भूबिम्बं बहिरष्टवज्रविलसत्कोणस्थशक्रं लिखेत्।
बाह्ये वारुणमण्डले परिवृतं तेनैव शक्त्यावृतं
रुद्धं तत्सृणिना महागणपतेर्यन्त्रं समुक्तं महत्॥८६॥

षट्कोणेत्यादिमहदित्यन्तस्यायमर्थ:—षट्कोणमध्ये श्रीबीजसंपुटितं प्रणवं विलिख्य, तन्मध्ये साध्यनामालिख्य, षट्कोणेषु षडङ्गमन्त्रानालिख्य, बहिरष्टदलकमलं कृत्वा तद्दलेषु प्रागादिक्रमेण षोडश स्वरान् द्वन्द्वशो विलिख्य, तद्बहिर्द्वादशदलकमलं कृत्वा तद्दलेषु प्राग्वत् कामबीजं विलिख्य, तद्बहि: षोडशपत्रेषु भूबीजमालिख्य, तद्बहिश्चतुर्विंशतिदलेषु प्रणवश्रीकामभूबीजातिरिक्तानि मूलमन्त्राक्षराण्येकैकशो विन्यस्य, तद्बहिर्द्वात्रिंशद्दलेषु कादिसान्तान् मातृकावर्णान् सबिन्दुकानालिख्य, तद्बहिरष्टवज्रोपेतं चतुरस्रं कृत्वा तत्कोणेषु लमिति विलिख्य, तद्बहिरर्धचन्द्राकारं वारुणं मण्डलं विलिख्य वंबीजेन संवेष्ट्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा, वृत्तयोरन्तराले ह्रींबीजैरावेष्ट्याङ्कुशबीजाभ्यां निरोधयेत्, निरोधनं त्वाद्यन्तयोर्लेखनम्। तथा—

भूर्जे धरायां वसने लिखेत् तत् गोरोचनाकुङ्कुमगोमयाद्भिः ।
कस्तूरिकाभिः सुधया च हेमरूप्योद्भवा स्यादिह लेखनी च ॥८७॥
यन्त्रं धृतं येन स दुर्जयः स्याल्लोकैरशेषैर्गणपप्रसादात् ।
न दह्यतेऽसौ दहनेन तस्य भीतिर्न च स्यान्नृपतस्करेभ्यः ॥८८॥
द्यूते रणे राजकुले च वादे सदा मनुज्ञो विजयी भवेच्च ।
अनामिकारक्तविमिश्रितैस्तत् शोणैर्लिखेद् द्रव्यवरैर्यथावत् ॥८९॥
कुचन्दनाद्यैररुणैश्च पुष्पैः संपूज्य तन्मन्त्रिवरो निवेद्यैः ।
कृत्वा मनोज्ञाङ्गवतीं च मूर्तिं विन्यस्य तस्या उदरे च यन्त्रम् ॥९०॥
प्रतापयेद् दीपशिखाकृशानौ सप्ताहतो योषितमानयेत् सः ।
जप्त्वा मनुं चाष्टशतं प्रताप्य वह्नौ धृतं तद्वशयेन्मृगाक्षीम् ॥९१॥
स्वभावविद्वेषवतां हि रक्तैः श्मशानकाङ्गारयुतैर्लिखेत् तत् ।
शावांशुके लेखनिकात्र काकपक्षोत्थिता सम्यगथाभिपूज्य ॥९२॥
उच्चाटयेद्बद्धमिदं ध्वजाग्रे विद्वेषयत्येव हि वैरिसङ्घम् ।
द्रव्यैः सुपीतैर्विलिखेच्छिलायां पीतप्रसूनै रुचिरार्कपुष्पैः ॥९३॥
संपूज्य संवेष्ट्य च पीतसूत्रैः साध्यानिलस्थापनमाचरेच्च ।
तद्देहलीदेश इदं निखातं करोन्मिते स्तम्भनकारि यन्त्रम् ॥९४॥
दुष्टस्य वाक्स्तम्भमरिव्रजस्य गतेस्तु संस्तम्भनमाशु कुर्यात् ।
सेनां परेषां गजवाजियुक्तां संस्तम्भयेन्नात्र विचारणीयम् ॥९५॥
श्मशानकाङ्गारवरोत्थमष्या श्मशानवस्त्रे कुपितेन मन्त्री ।
चित्तेन संलिख्य नरास्थिजात्र सल्लेखनी चन्दनपुष्पधूपैः ॥९६॥
संपूज्य तच्छावधरानिखातं स मारयेद्वैरिणमाशु नूनम् ।
उत्खातमेतत् पयसा च धौतं यन्त्रं हि शान्तिं तनुते नराणाम् ॥९७॥ इति।

भूर्जेत्यादि, सुधया चूर्णेन। मूर्तिर्दिवस्य। साध्यानिलस्थापनं साध्यप्राणप्रतिष्ठा। करोन्मिते हस्तमात्राधस्तात्। शावधरा श्मशानभूमिः।

महागणपति का यन्त्र—षट्कोण में श्री ॐ श्रीं लिखे। उसके मध्य में साध्य नाम लिखे। छः कोणों में षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। उसके बाहर अष्टदल बनाकर दलों में पूर्वादि क्रम से दो-दो स्वरों को लिखे। उसके बाहर द्वादशदल कमल बनाकर दलों में 'क्लीं' लिखे। उसके बाहर षोडश दल पद्म बनाकर दलों में 'ग्लौं' लिखे। उसके बाहर चौबीस दल कमल बनाकर दलों में ॐ श्रीं क्लीं ग्लौं को छोड़कर शेष चौबीस अक्षरों को एक-एक करके लिखे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल बनाकर दलों में क से स तक सानुस्वार बत्तीस अक्षरों को एक-एक करके लिखे। उसके बाहर अष्ट वज्रों से युक्त चतुरस्र बनाकर उसके कोणों में लं लिखे। उसके बाहर अर्द्धचन्द्राकार मण्डल बनाकर उसे 'वं' से वेष्टित करे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर वृत्तों के अन्तराल में 'ह्रीं' लिखे। अंकुश बीज क्रों' से उसका निरोधन करे। निरोधन में उसके आदि और अन्त में 'क्रों' लिखे। इस यन्त्र को भोजपत्र पर या जमीन पर या वस्त्र पर गोरोचन, कुङ्कुम, गोबर, कस्तूरी आदि के घोल से सोने या चाँदी की लेखनी से लिखे। इस यन्त्र को जो धारण करता है, वह गणेश की कृपा से संसार में दुर्जय हो जाता है। वह आग से नहीं जलता; राजा का भय उसे नहीं होता; जुआ में युद्ध में, राजदरबार में और वाद-विवाद में वह सदा विजयी होता है।

उपरोक्त द्रव्यों में अनामिका अंगुली का रक्त मिलाकर यथावत् लिखे। लाल चन्दन लाल फूलों से उसकी पूजा करे। नैवेद्य से मनोज्ञ अंगों वाली मूर्ति बनाकर उसके उदर में यन्त्र को स्थापित करे। उस मूर्ति को दीपक की शिखा पर या अग्नि

के ऊपर तपावे तो एक सप्ताह में योषिता आ जाती है। एक सौ आठ जप करते हुए अग्नि पर तपावे तो मृगाक्षी रमणी वश में होती है।

स्वभाव से वैरी मूषक, विलार, सर्प, नेवला के रक्त में श्मशान का कोयला मिलाकर घोल बनावे। शवांशुक या काक पक्ष की लेखनी से यन्त्र लिखे और विधिवत् पूजन करे। इसे ध्वजाग्र में लगावे तो वैरियों में उच्चाटन और विद्वेष होता है। शिला पर पीले द्रव्य से यन्त्र को लिखे, पीले फूलों और अकवन के फूलों से उसकी पूजा करे। उसे पीले धागों से लपेटे। साध्य की प्राण प्रतिष्ठा करे। इसे साध्य के दरवाजे पर गाड़ दे तो उसका स्तम्भन होता है। इसके धारण करने से दुष्टों की बोली का स्तम्भन होता है। शत्रुओं के बीच में जाने पर उनका स्तम्भन तुरन्त होता है। हाथी, घोड़ों से युक्त शत्रु की सेना का स्तम्भन होता है। श्मशान के कोयला की वनस्पति से श्मशान के वस्त्र पर साधक क्रुद्ध होकर मनुष्य के हड्डी की लेखनी से इस यन्त्र को लिखे। चन्दन-पुष्प-धूप से उसकी पूजा करे और वैरी की भूमि में गाड़ दे तो वैरी की मृत्यु तुरन्त हो जाती है। इस यन्त्र को वहाँ से निकालकर दूध से धोने पर शान्ति होती है।

गणेशयन्त्रान्तराणि

तथा—

आलिख्याग्निपुरे सतारविवरे बीजं बहिर्दिक्ष्वथ श्रीमायामदनं भुवं गृहयुगे बीजानि वह्नेस्ततः ।
सन्धिष्वङ्गमनूनथाष्टदलके वर्णान् मनोरालिखेत् त्रींस्त्रीनन्त्यदले क्रमेण विधिवच्छिष्टं तथैकं कृती ॥९८॥
वेष्टितं मातृकावर्णैः क्रमोत्क्रमगतैरपि । पाशाङ्कुशावृतं बाह्ये भूगेहद्वितयेन च ॥९९॥
महागणपतेर्यन्त्रं कृतं हेमशलाकया । अलक्तकं च काश्मीरं कस्तूरीरोचनान्वितम् ॥१००॥
मेलयित्वा विभागेन पिष्ट्वा चन्दनवारिणा । स्वर्णपट्टेऽथ भूर्जे वा लिखितं विधिपूर्वकम् ॥१०१॥
कृतप्राणप्रतिष्ठं तद् दोर्धृतं भुक्तिमुक्तिदम् । आयुरारोग्यसंपत्तिकीर्तिदं प्रीतिवर्धनम् ॥१०२॥ इति।

अयमर्थः—षट्कोणमध्ये त्रिकोणमालिख्य त्रिकोणमध्ये प्रणवमध्यगतं ससाध्यं गंबीजमालिख्य, त्रिकोण-षट्कोणयोरन्तराले पूर्वादिचतुर्दिक्षु श्रींह्रींक्लींग्लौं इति बीजचतुष्टयमेकैकशो विलिख्य, षट्कोणेषु पूर्वादिक्रमेण प्रणवादिषड्बीजान्यालिख्याष्टदलेषु गणपतये इत्याद्यवशिष्टमन्त्रगतद्वाविंशतिवर्णेषु त्रींस्त्रीन् वर्णान् सप्तदलेषु विलिख्यावशिष्टमेकमक्षरमष्टमदले विलिख्य, बहिर्वृत्तपञ्चकं विधाय तदन्तर्गतवीथीचतुष्टये सर्वाभ्यन्तरवीथ्यां सबिन्दूनकारादिक्षकारान्तान् वर्णानालिख्य, द्वितीयवीथ्यां क्षकाराद्यकारान्तान् वर्णान् विलिख्य, तृतीयवीथ्यां आं इति पाशबीजैरावेष्ट्य, सर्ववाह्यवीथ्यां क्रों इत्यङ्कुशबीजैरावेष्ट्य, तद्बहिश्चतुरस्रद्वयं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। अत्र चतुरस्रद्वयवेष्टनं बाह्याभ्यन्तरभेदेनेति केचित्। अष्टकोणरूपेणेत्यन्ये। यथागुरूपदेशं कार्यमिति।

गणेश के अन्य यन्त्र—षट्कोण बनाकर उसके मध्य में त्रिकोण बनावे। त्रिकोण में प्रणव मध्यगत साध्य के साथ 'गं' बीज लिखे। त्रिकोण-षट्कोण के अन्तराल की पूर्वादि चारो दिशाओं में श्री ह्रीं क्लीं ग्लौं को एक-एक करके लिखे। छः कोणों में ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्लौं गं को एक-एक करके पूर्वादि क्रम से लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर दलों में मन्त्र के शेष बाईस अक्षरों को तीन-तीन करके सात दलों में लिखे। शेष एक अक्षर को आठवें दल में लिखे। इसके बाहर पाँच वृत्त बनावे। उनसे बनी चार वीथियों में से आभ्यन्तर वीथि में सानुस्वार अ से क्ष तक के वर्णों को लिखे। द्वितीय वीथि में क्ष से अ तक के वर्णों को लिखे। तृतीय वीथि में पाशबीज 'आं' लिखे। सबसे अन्तिम चतुर्थ वीथि में अंकुश बीज को लिखे। उसके बाहर दो चतुरस्र बनावे। इस महागणपति यन्त्र को सोने की शलाका से आलता, केसर, कस्तूरी को चन्दनजल में घोलकर सोने के पत्र पर या भोजपत्र पर विधिवत् लिखकर विधिवत् प्राण-प्रतिष्ठित करके धारण करे तो भोग-मोक्ष-आयु-आरोग्य-सम्पति-कीर्ति के साथ-साथ प्रीति की भी वृद्धि होती है।

केरलीये यन्त्रसारे—

आलिख्य कर्णिकामध्ये शक्तिं कोणेषु षट्स्वपि । तारश्रीशक्तिकामेलाविघ्नबीजानि तद्बहिः ॥१॥

आलिख्य चाष्टपत्रस्य पद्मस्य प्रथमे दले। कएइत्यादि वाग्बीजं द्वितीये च दले ततः ॥२॥
यदद्येत्याद्यृचो वर्णानिष्टौ पत्रे तृतीयके। कामबीजं हसेत्यादि पत्रे भूयश्चतुर्थके ॥३॥
उदगा इत्यष्टवर्णानालिख्याथ च पञ्चमे। सकलेत्यादि शाक्तं च बीजं षष्ठे दले पुनः ॥४॥
सर्वं तदिन्द्र तेत्यादिवर्णानष्टौ च सप्तमे। पत्रे गणपतेत्यादिनववर्णान् दलेऽष्टमे ॥५॥
सर्वेत्यादिद्वादशार्णास्तद्बाह्ये मातृकाक्षरैः। संवेष्ट्य कुगृहाश्लिष्टैः श्रींह्रींक्लींग्लौमिति क्रमात् ॥६॥
आलिखेद्धेमपट्टादौ हेमसूच्यातिरञ्जनम्। इति।

रञ्जनं वश्यकरम्। अस्यार्थः—अष्टदलकमलकर्णिकायां षट्कोणमध्ये ससाध्यं शक्तिबीजं विलिख्य, षट्स्वपि कोणेषु ॐश्रींह्रींक्लींग्लौंगं इत्येकैकशो विलिख्य अष्टदलेषु प्रथमदले श्रीविद्यायाः प्रथमकूटं, द्वितीयदले 'यदद्यकं च वृत्रहन्' इति विलिख्य, तृतीयदले श्रीविद्याया द्वितीयकूटं, चतुर्थदले 'उदगा अभिसूर्य' इति विलिख्य, पञ्चमे दले श्रीविद्यायास्तार्तीय कूटं, षष्ठे दले 'सर्वं तदिन्द्र ते वशे' इति, सप्तमे दले 'गणपतये वरवरदेति' अष्टमे 'सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा' इति विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तयोरन्तराले मातृकाक्षरैरावेष्ट्य चतुरस्रचतुष्कोणेषु च महागणपतिमन्त्रस्य द्वितीयबीजादिबीजचतुष्टयं विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। इदं यदद्येत्यादिऋचा श्रीविद्यया च सहितं महागणपतियन्त्रम्। श्रीविद्या तु ज्ञानार्णवे—

सकला भुवनेशानी कामेशीबीजमुत्तमम्। अनेन सकला विद्याः कथयामि तवानघे ॥१॥
शक्त्यन्तस्तुर्यवर्णोऽयं कलमध्ये सुलोचने। वाग्भवं पञ्चवर्णं तु कामराजमथोच्यते ॥२॥
मादनं शिवचन्द्राद्यं शिवान्तं मीनलोचने। कामराजमिदं भद्रे षड्वर्णं सर्वमोहनम् ॥३॥
शक्तिबीजं वरारोहे चन्द्राद्यं सर्वसिद्धिदम्। इति।

शक्तिः एकारस्तस्यान्ते अधः तुर्य्यवर्ण ई, सकला भुवनेशानीत्यस्य कलाभ्यां सह वर्तमाना भुवनेशानीत्यर्थत्वात्तयोर्मध्ये एईइति वर्णद्वये दत्ते कामराजविद्यायाः प्रथमकूटं भवति। मादनं सकलेत्येतत्सम्बन्धात्ककारः, शिवचन्द्रौ हसौ आद्यौ यस्य तत्। शिवो हकारोऽन्ते यस्य तत्, चन्द्रः सकार आद्यो यस्य तत्। एतत्सपर्या यथायोग्या प्रागुक्तविधिनावगन्तव्या।

केरलीय यन्त्रसार के अनुसार पहले अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में षट्कोण बनावे। षट्कोण के मध्य में साध्य नाम के साथ 'ह्रीं' लिखे। छः कोणों में ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं को एक-एक करके लिखे। अष्टदल कमल के दलों में से प्रथम दल में श्रीविद्या के प्रथम कूट को लिखे। द्वितीय दल 'पदघकं च वृत्रहन्' इत्यादि मन्त्र को लिखे। तृतीय दल में श्रीविद्या के द्वितीय कूट को लिखे। चतुर्थ दल में 'उदगा अभिसूर्य' मन्त्र को लिखे। पञ्चम दल में श्रीविद्या के तृतीय कूट को लिखे। छठें दल में 'सर्वं तदिन्द्र ते वशे' लिखे। सप्तम दल में 'गणपतये वरवरद' लिखे एवं अष्टम दल में 'सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा' लिखे। उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में अं से क्षं तक की मातृकाओं को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र के चारों कोणों में दूसरे से चार बीज—श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं को एक-एक करके लिखे। इसे स्वर्णपट्ट पर सोने की शलाका से लिखने पर वांछित फल प्राप्त होता है। यह यन्त्र उत्तम वश्यकर कहा गया है।

ज्ञानार्णव के अनुसार श्रीविद्या के तीन कूट इस प्रकार होते हैं—पाँच अक्षरों का वाग्भव कूट कएईलह्रीं, छः अक्षर का कामराज कूट हसकहलह्रीं और चार अक्षरों का शक्तिकूट सकलह्रीं है।

श्रीयन्त्रसारे—

कर्णिकायां साध्यगर्भं तारं पत्रेषु चाष्टसु। अग्न्यक्ष्यग्न्यग्निजलधित्रीणि त्रिद्व्यक्षराणि च ॥१॥
आलिख्य मातृकावर्णैर्भूपुरेण च वेष्टयेत्। यदद्यकेत्यृचो यन्त्रं वश्यसौभाग्यकान्तिदम् ॥२॥
सुवर्णरत्नधान्यादिसर्वसंपत्करं परम्। इति।

अस्यार्थः—अष्टदलकर्णिकामध्ये ससाध्यं तारं विलिख्य, तद्दलेषु त्रिद्वित्रित्रिचतुस्त्रित्रिद्विक्रमेण 'यदद्यकं चे'त्यृचो वर्णान् विभज्य विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तयोरन्तराले मातृकार्णैरावेष्ट्य बहिश्चतुरस्रेण वेष्टयेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। ऋक् तु महागणपतेर्यन्त्रे लिखिता, ऋच ऋष्यादयः सकक्ष इन्द्रो गायत्रीति।

श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि अष्टदल-कर्णिका के मध्य में साध्य के साथ ॐ लिखे। दलों में 'यदद्यकञ्च वृत्रहन्नुदगाऽभिसूर्य सर्वं तदिन्द्र ते वशे' के अक्षरो को ३,२,३,३,४,३,३,२ के क्रम से लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर वेष्टित करे। यदद्यकच्च ऋचा से युक्त यह यन्त्र वश्य-सौभाग्य एवं कान्तिप्रद है। सोना-रत्न-धान्यादि सभी सम्पत्तियों को यह देने वाला है।

गणेशयन्त्रान्तरं संवादसूक्तञ्च

श्रीयन्त्रसारे—

षट्कोणकर्णिकामध्ये तारं कोणेषु षट्स्वपि। ॐश्रीह्रींक्लींग्लौंगमिति गणपतये च तद्बहिः ॥१॥
शिष्टांश्चतुष्पञ्चसप्तवर्णांश्चापि चतुर्दले। बाह्ये संवादसूक्तस्याप्यर्धमर्धमृचां क्रमात् ॥२॥
आलिख्य चाष्टपत्रेषु त्रिष्टुभावेष्ट्य तद्बहिः। मातृकार्णैश्च भूबिम्बकोणेषु च यथाक्रमम् ॥३॥
आलिखेद्भद्र इत्यादि पादमन्त्रचतुष्टयम्। एतत्संवादसूक्तस्य यन्त्रं लोकेषु दुर्लभम् ॥४॥
सङ्गतभेदेऽमात्यानां मैत्रीकरणमुत्तमम्। जगत्संमोहनं वश्यं कान्तिसौभाग्यपुष्टिदम् ॥५॥ इति।

अस्यार्थः—चतुर्दलकमलकर्णिकायां षट्कोणमध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, तत्कोणेषु प्रोक्तबीजषट्कमालिख्य, चतुर्दलेषु प्रथमे 'गणपतये' इति, द्वितीये 'वरवरद' इति, तृतीये 'सर्वजनं मे' इति, चतुर्थे 'वशमानय स्वाहा' इति विलिख्य, तद्बहिरष्टदलेषु वक्ष्यमाणसंवादसूक्तस्य ऋचामर्धमर्धं विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तत्रयान्तःस्थान्तरालद्वयस्याभ्यन्तरान्तराले वक्ष्यमाणत्रिष्टुभावेष्ट्य, बहिःस्थान्तराले मातृकार्णैरावेष्ट्य, तद्बहिश्चतुरस्रकोणेषु 'भद्रं नो अभिवातय मनः, मरुतामोजसे स्वाहा, इन्द्रो विश्वस्य राजति, शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे' इति पादमन्त्रचतुष्टयं लिखेत्। एतदुक्तफलदं भवति।

सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ। इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर ॥१॥
सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥२॥
समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषां।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥३॥
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥४॥

इति ऋग्वेदोक्तं (१०.१९१.१) संवादसूक्तम्। ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः। इति त्रिष्टुब्मन्त्रः। संसमिदित्यस्य संवनन ऋषिः, संज्ञानं देवता, तिस्रोऽनुष्टुभः तृतीया त्रिष्टुप्, आद्या आग्नेयी।

श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि चतुर्दल कमल की कर्णिका में षट्कोण बनावे। उसके मध्य में साध्य के साथ 'ॐ' लिखे। छः कोनों में ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं को एक-एक करके लिखे। चारो दलों में से पहले में 'गणपतये' दूसरे में 'वरवरद' तीसरे में 'सर्वजनं मे' चौथे में 'वशमानय स्वाहा' लिखे। उसके बाहर अष्टदल बनाकर ऋग्वेदोक्त संवाद सूक्त की आधी-आधी ऋचाओं को इस प्रकार लिखे—

प्रथम दल में—सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
द्वितीय दल में—इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।
तृतीय दल में—सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानतां।
चतुर्थ दल में—देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।

पञ्चम दल में—समानो मन्त्र: समिति: समानी समानं मन: सह चित्तमेषां।
षष्ठ दल में—समानं मन्त्रमभि मन्त्रये व: समानेन वो हविषा जुहोमि।
सप्तम दल में—समानी व आकूति: समाना हृदयानि व:।
अष्टम दल में—समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति।।

अष्टदल के बाहर तीन वृत्त बनावे। तीनों वृत्तों से बने दो अन्तरालों में से आभ्यन्तर अन्तराल में—ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेद:। स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि:—इस त्रिष्टुप् मन्त्र को लिखे। इसके बाद वाले अन्तराल में अं से क्षं तक की मातृकाओं को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसके चारो कोणों में 'भद्रं नो अभिवातय मन:' 'मरुतामोजसे स्वाहा', 'इन्द्रो विश्वस्य राजति', 'शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे' लिखे। संवाद सूक्त का यह यन्त्र लोकों में दुर्लभ है। अमात्यों में संघभेद को दूर करके मैत्री करने वाला है। जगत्संमोहन, वश्य, कान्ति, सौभाग्य, पुष्टिप्रदायक हैं। त्रिष्टुप् मन्त्र 'संसमिद्युवसे:' के ऋषि संवनन, देवता संज्ञान, छन्द अनुष्टुप् त्रिष्टुप् एवं आग्नेयी है।

कामनाभेदेन ध्यानभेद:

सारसंग्रहे—

ध्यानं प्रवक्ष्ये ह्यथ कामनाया भेदेन भिन्नं बहुधातिरम्यम्।
भिन्नाञ्जनाद्रिप्रभदेहकान्तिं सुमेरुसन्मन्दरतुल्यसारम्।।१।।
नानामणिव्रातविभूषिताङ्गं रत्नोल्लसद्दिव्यकिरीटयुक्तम्।
भीमं महान्तं नयनत्रयाढ्यं कर्णद्वयोल्लासिसुचामरं च।।२।।
लम्बोष्ठमुद्यद्वरनागयज्ञोपवीतिनं चैकरदं गजास्यम्।
सत्काञ्चनोद्यत्कटिसूत्रयुक्तं रक्तांशुकं लोहितपुष्पभूषम्।।३।।
पद्माङ्कुशौ पाशरदे च शक्तिं गदां वरं चाब्जमथेक्षुदण्डम्।
शालेस्तथाग्रं दधतं कराग्रे पद्मासनस्थं हृदि भावयेत्तम्।।४।।
बाणं तथैवाक्षयबाणधन्वकमण्डलून् मोदकपात्रशक्ती।
सत्तोमरं पाशमथेक्षुदण्डं सृणिं कराब्जैर्दधतं भजेत् तम्।।५।।
सदाखिलोपद्रवनाशकारि ध्यानं गणेशस्य समीरितं हि।
पीतं स्मरेत् स्तम्भनकार्य एनं वश्याय मन्त्री ह्यरुणं स्मरेत् तम्।।६।।
कृष्णं स्मरेन्मारणकर्मणीशमुच्चाटने धूम्रनिभं स्मरेत् तम्।
बन्धूकसूनाभनिभं च कृष्टौ स्मरेद्बलार्थं किल पुष्टिकार्ये।।७।।
स्मरेद्धनार्थी च हरिन्निभं तं मुक्त्यै च शुक्लं मनुवित् स्मरेत् तम्।
एवं प्रकारेण गणं त्रिकालं ध्यायञ्जपन् सिद्धियुतो भवेत् स: ।।८।। इति।

सारसंग्रह में कामनाभेद से अलग-अलग अतिशय रम्य, भिन्न-भिन्न अञ्जनों की कान्ति के समान कान्ति वाले, सुमेरु पर्वत के सदृश सत्त्व वाले, सदा समस्त उपद्रवों का नाश करने वाले गणेश का ध्यान इस प्रकार कहा गया है—

नानामणिव्रातविभूषिताङ्गं रत्नोल्लसद्दिव्यकिरीटयुक्तम्। भीमं महान्तं नयनत्रयाढ्यं कर्णद्वयोल्लासिसुचामरं च।।
लम्बोष्ठमुद्यद्वरनागयज्ञोपवीतिनं चैकरदं गजास्यम्। सत्काञ्चनोद्यत्कटिसूत्रयुक्तं रक्तांशुकं लोहितपुष्पभूषम्।।
पद्माङ्कुशौ पाशरदे च शक्तिं गदां वरं चाब्जमथेक्षुदण्डम्। शालेस्तथाग्रं दधतं कराग्रे पद्मासनस्थं हृदि भावयेत्तम्।।
बाणं तथैवाक्षयबाणधन्वकमण्डलून् मोदकपात्रशक्ती। सत्तोमरं पाशमथेक्षुदण्डं सृणिं कराब्जैर्दधतं भजेत् तम्।।

स्तम्भन कार्यों में पीत वर्ण एवं वशीकरण हेतु अरुण वर्ण गणेश का ध्यान करना चाहिये। मारण कर्म में कृष्ण वर्ण एवं उच्चाटन हेतु धूम्रवर्ण गणेश का ध्यान करना चाहिये। बन्धूकपुष्प के सदृश आभा वाले गणेश का ध्यान आकर्षण,

पुष्टि एवं बल प्राप्ति हेतु करना चाहिये। धन की कामना से हरित वर्ण एवं मुक्ति की कामना से शुक्ल वर्ण गणेश का ध्यान मन्त्रज्ञों को करना चाहिये। इस प्रकार तीनों कालों में तत्तत् कामनाओं की पूर्ति हेतु नियत ध्यान को करना हुआ जो विघ्नराज के मन्त्र का जप करता है, वह सिद्धि से युक्त होता है।

काम्यतर्पणविधिस्तर्पणप्रयोगश्च

अथ काम्यतर्पणविधिस्तत्रैव—

पूर्वं मनुं विंशतिधा गणेशं प्रतर्प्य वर्णानिह ठद्वयान्तान्।
प्रतर्पयेद्वारचतुष्टयं च प्रत्येकशो मूलमनुं च तद्वत् ॥१॥
युग्मानि विघ्नान् निधिसंयुतान् षट् प्रतर्पयेच्छक्तियुतान् पृथक् च।
पुरोक्तवन्मूलमनुं चतुर्धा प्रतर्पयेन्मन्त्रिवरो यथावत् ॥२॥

यथावदित्यनेन मिथुनचतुष्टयषड्गणेशनिधिद्वयानां स्वस्वबीजादित्वं सूचितम्। तदुक्तं गणेश्वरपरामर्शिन्याम्—
मिथुनानि च षड् विघ्नाञ् शङ्खपद्मनिधी अपि। स्वस्वबीजादिकैर्मन्त्री स्वाहान्तैश्च चतुर्विधैः ॥१॥ इति।

तथा—
सचतुश्चत्वारिंशच्चतुःशतानि तर्पणानि चैवं स्युः। अथवा प्रकारभेदात् तर्पणमेतत् प्रवक्ष्येऽहम् ॥२॥
मूलाणुना च दशधा विभक्तेनाथ तर्पयेत्। प्रत्येकं मूलमन्त्रेण चतुरावृत्ति तर्पयेत् ॥३॥
तत्र तारमामायामारभूविघ्नबीजकैः। शरेषुदशयुग्मैश्च मन्त्रार्णैस्तर्पयेत् क्रमात् ॥४॥
शराः पञ्च, इषव, पञ्च, युग्मं द्वयम्।

अशीतिप्रमितान्येव तर्पणानि भवन्ति च। एकादशभिरप्यत्र बीजपूरादिभिः क्रमात् ॥५॥
कलशान्तैश्चतुर्धा च मूलेनापि तथा सुधीः। विघ्नभूमारमायाश्रीबीजानि व्युत्क्रमाणि च ॥६॥
समस्तान्येतदन्तैश्च बीजपूरैः प्रतर्पयेत्। अष्टाशीतिमितान्येवं जायन्ते तर्पणान्यथ ॥७॥

अत्र बीजपूरादिमन्त्रेषु विशेषमाह गणेश्वरपरामर्शिन्यां—
बीजपुरं गदा चेक्षुकार्मुकं च त्रिशूलयुक्। चक्राब्जपाशोत्पलानि कलमाग्रविषाणयुक् ॥१॥
डेन्ताश्च रत्नकलशो हृदन्ताः प्रणवादिकाः। गंबीजाद्यादिकाः पञ्च श्रीबीजाद्यादिकाः पुनः ॥२॥
षड्बीजाद्योऽन्तिमश्चैते वक्ष्यमाणपदादिकाः। यथाक्रमं महाविघ्नायुधानां मनवः स्मृताः ॥३॥
मन्त्रफलं स्याच्छक्तिः सप्राणत्रिगुणकालचक्रमिति। व्याप्तिरक्ते भूस्वरूपं विद्या त्रैलोक्यमात्मने युक्तम् ॥४॥
गंॐमन्त्रफलात्मने बीजपूराय नमः इत्याद्याः प्रयोगे प्रदर्शयितव्याः।

षड्बीजाद्यैर्गणपतेत्यादिमन्त्रादिकैः क्रमात्। दशविघ्नैश्चतुर्वारं मूलेनापि च तर्पयेत् ॥५॥
विघ्नो विनायको वीरः शूरो वरद एव च। इभवक्त्रश्चैकदन्तो लम्बोदरगणस्तथा ॥६॥
क्षिप्रप्रसादनश्चैव महागणपतिस्तथा। तर्पणानि तथाशीतिमितान्येव भवन्ति हि ॥७॥
चत्वारि मिथुनान्यत्र तानि शक्त्यादिकानि च। स्वविनायकबीजादिकानि सन्तर्प्य मन्त्रवित् ॥८॥
मूलाणुना चतुर्वारं मध्ये सन्तर्पयेत् क्रमात्। चतुष्षष्टिमितान्येवं जायन्ते तर्पणान्यथ ॥९॥
आमोदादीन् स्वशक्त्यन्तान् शक्त्याद्यांश्च प्रतर्पयेत्। विघ्नेशबीजप्रथमं चतुर्मूलाणुना चतुः ॥१०॥
तर्पयेत् षण्णवत्येवं तर्पणानि भवन्त्यथ। शक्त्यादिकान् स्वशक्त्यन्तनिधिद्वयमथो चतुः ॥११॥
तर्पयेच्च चतुर्मूलं द्वात्रिंशत्प्रमितानि च। तर्पणानि भवन्त्येवं ततो मूलाणुना चतुः ॥१२॥
तर्पयेत् सचतुश्चत्वारिंशच्चाथ चतुःशतम्। तर्पणानि भवन्त्येभिः सर्वान् कामान् प्रसाधयेत् ॥१३॥ इति।

अथ तर्पणप्रयोगः—तत्र प्रथमं श्रीगणेश्वरपरामर्शिन्युक्तपरिपाट्या तर्पणस्थाने तत्र देवं च ध्यात्वा तर्पणारम्भं कुर्यात्। तद्यथा—

सर्वाभीष्टप्रदं वक्ष्ये चतुरावृत्ति तर्पणम्। एकान्ते विजने रम्ये सर्वोपद्रववर्जिते ॥१॥
कृतस्नानादिको मन्त्री पूर्ववन्न्याससंयुतः। तडागमध्ये सञ्चिन्त्य पुष्पितं नलिनीवनम् ॥२॥
तस्य मध्ये महापद्मं तरुणादित्यसन्निभम्। समुन्नतं सुगन्धाढ्यं रमणीयं मनोहरम् ॥३॥
सद्यो विकसितं ध्यायेन्मन्त्री पूर्वोक्तमन्त्रवित्। शुद्धं रजतसोपानपंक्त्या तं रविमण्डलात् ॥४॥
विनिर्गत्यावरुह्याथ कर्णिकामध्यसंस्थितम्। इति ध्यात्वा सावरणं महागणपतिं सुधीः ॥५॥
प्रवरैर्गन्धिकुसुमैः समभ्यर्च्याथ पूर्ववत्। निधाय पुष्करमुखं साधकेन्द्रस्य मूर्धनि ॥६॥
वर्षन्तं रत्नधाराभिर्ध्यात्वा देवस्य मूर्धनि। चन्द्रचन्दनकाश्मीरकस्तूरीलोलितैर्जलैः ॥७॥
तर्पयेत् परया भक्त्या देवदेवं प्रसन्नधीः।

इत्येवं ध्यायन् मूलमन्त्रमुच्चार्य्य 'श्रीमहागणपतिं तर्पयामि' इति देवस्य मूर्ध्नि विंशतिवारं सन्तर्प्य, ४ मू० ४ ॐ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं तर्पयामि स्वाहा।४ मू० ४ क्लीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ णं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ पं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ तं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ यें तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ दं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ सं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वँ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ जं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ में तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा।४ मू० ४ शं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ मां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ यं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ स्वां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ हां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं नारायणसहितां लक्ष्मीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं लक्ष्मीसहितं नारायणं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं हरसहितां गौरीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं गौरीसहितं हरं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लीं कामदेवसहितां रतिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लीं रतिसहितं कामदेवं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं वराहसहितां महीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं महीसहितं वराहं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं आमोदसहितां सिद्धिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं सिद्धिसहितं आमोदं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं प्रमोदसहितां समृद्धिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं समृद्धिसहितं प्रमोदं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं सुमुखसहितां कान्तिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं कान्तिसहितं सुमुखं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं दुर्मुखसहितां मदनावतीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं मदनावतीसहितं दुर्मुखं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं विघ्नसहितां मदद्रवां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं मदद्रवासहितं विघ्नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं विघ्नकर्तृसहितां द्राविणीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं द्राविणीसहितं विघ्नकर्तारं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ शं शङ्खनिधिसहितां वसुधारां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ शं वसुधारासहितं शङ्खनिधिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ पं पद्मनिधिसहितां वसुमतीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ पं वसुमतीसहितं पद्मनिधिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ॐ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं तर्पयामि स्वाहा।४ मू० ४ क्लीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४णं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ पं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ तं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ यें तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ दं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ सं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वँ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ जं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ में तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ शं तर्पयामि

स्वाहा। ४ मू० ४ मां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ यं तर्पयामि स्वाहा।४ मू० ४ स्वां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ हां तर्पयामि स्वाहा। एवं ८०। ४ मू० ४ गंॐ मन्त्रफलात्मने बीजपूराय नमः बीजपूरं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौंॐ शक्त्यात्मने गदायै नमो गदां तर्पयामि स्वाहा।४ मू० ४ क्लींॐ प्राणत्मने इक्षुकार्मुकाय नमः इक्षुकार्मुकं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं ॐ त्रिगुणात्मने त्रिशूलाय नमः त्रिशूलं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रींॐ कालात्मने चक्राय नमः चक्रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रींॐ चक्रात्मने अब्जाय नमः अब्जं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं ॐ व्याप्त्यात्मने पाशाय नमः पाशं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लीं ॐ रक्तात्मने उत्पलाय नमः उत्पलं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं ॐ भुवनात्मने कलमाग्राय नमः कलमाग्रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं ॐ विद्यात्मने विषाणाय नमः विषाणं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ॐश्रींह्रींक्लींग्लौंगं ॐ त्रैलोक्यात्मने रत्नकलशाय नमो रत्नकलशं तर्पयामि स्वाहा। एवं ८८। ४ मू० ४ ॐश्रींह्रींक्लींग्लौंगं विघ्नगणपतये वरवरद इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ विनायकगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ वीरगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ शूरगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ वरदगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ इभवक्त्रगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ एकदन्तगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ लम्बोदरगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ क्षिप्रप्रसादगणपतये इत्यादि०। ४ मू० ४ ६ँ महागणपतिगणपतये इत्यादि०। एवं ८०। ४ मू० ४ श्रींगं लक्ष्मीसहितं नारायणं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं श्रीं नारायणसहितां लक्ष्मीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं गं गौरीसहितं हरं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंह्रीं हरसहितां गौरीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लींगं रतिसहितं कामं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंक्लीं कामसहितां रतिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं गं महीसहितं वराहं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंक्लीं वराहसहितां महीं तर्पयामि स्वाहा। एवं ६४। ४ मू० ४ श्रींगं सिद्धिसहितमामोदं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंश्रीं आमोदसहितां सिद्धिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं गं समृद्धिसहितं प्रमोदं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंश्रीं प्रमोदसहितां समृद्धिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रींगं कान्तिसहितं सुमुखं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंश्रीं सुमुखसहितां कान्तिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लीं गं मदनावतीसहितं दुर्मुखं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंक्लीं दुर्मुखसहितां मदनावतीं तर्पयामि स्वाहा।४ मू० ४ क्लीं गं मदद्रवासहितं विघ्नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंक्लीं विघ्नसहितां मदद्रवां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लीं गं द्राविणीसहितं विघ्नकर्तारं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं क्लीं विघ्नकर्तृसहितां द्राविणीं तर्पयामि स्वाहा। एवं ९६। ४ मू० ४ ह्रींगं वसुधारासहितं शङ्खनिधिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंह्रीं शङ्खनिधिसहितां वसुधारां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं गं वसुमतीसहितं पद्मनिधिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गंग्लौं पद्मनिधिसहितां वसुमतीं तर्पयामि स्वाहा। एवं ३२। ततः ४ मू० ४। एवं सम्भूय ४४४।

काम्य तर्पण विधि—मूलोक्त सारसंग्रह गणेश्वरपरामर्शिनी के अनुसार चार सौ चौवालीस तर्पण से मनोरथ पूर्ण होते हैं। तर्पण निम्नांकित रूप में करे। श्रीगणेश्वरपरामर्शिनी में उक्त परिपाटी से तर्पण स्थान में श्री गणेश का ध्यान करके तर्पण प्रारम्भ करने का निर्देश दिया गया है।

सर्वाभीष्टप्रद चतुरावृत्ति तर्पण को बतलाता हूँ। एकान्त, निर्जन, रम्य, सभी उपद्रवों से रहित स्थान पर जाकर स्नान करके मन्त्री पूर्वोक्त न्यासों को करे। सरोवर में पुष्पित नलिनी वन का चिन्तन करे। उसके मध्य में तरुण सूर्य के वर्ण के बड़े कमल का चिन्तन करे एवं यह चिन्तन करे कि वह कमल उन्नत, सुगन्धित, सुन्दर, मनोहर एवं तुरन्त का खिला हुआ है। साधक ध्यान करे कि शुद्ध चाँदी की सीढ़ी से श्री गणेश सूर्यमण्डल से निकलकर उस कमल की कर्णिका में बैठ गये। इस प्रकार का ध्यान करके आवरणसहित गणपति की पूजा गन्ध, पुष्प से करे। पुष्करमुख साधकेन्द्र के मूर्धा पर भगवान् गणेश रत्नधारा की वर्षा कर रहे हैं—ऐसा चिन्तन करके कपूर, चन्दन, केसर, कस्तूरी, मिश्रित जल से पराभक्ति से प्रसन्न मन से साधक तर्पण करे।

'ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा श्रीमहागणपतिं तर्पयामि' से गणेश के मूर्धा पर बीस बार तर्पण करके मूलोक्त मन्त्रों से सविधि तर्पण करे।

तर्पणे प्रकारान्तरम्

प्रकारान्तरं तु गणेश्वरपरामर्शिन्याम्—

प्रथमं मूलमन्त्रेण चतुर्वारं प्रतर्प्य च। मिथुनानि च षड् विघ्नान् शङ्खपद्मनिधी अपि ॥१॥
स्वस्वबीजादिकैर्मन्त्री स्वाहान्तैश्च चतुश्चतुः। मूलमन्त्रं चतुर्वारं पूर्ववत् तर्पयेत् पृथक् ॥२॥
संभूयाष्टोत्तरशतं कनिष्ठः स्यादयं क्रमः। अथवा मूलमन्त्राद्यैस्तैस्तैरेतैश्च पूर्ववत् ॥३॥
मन्त्रैर्वा तर्पयेद्विद्वानर्चनोक्तविधानतः। मध्यक्रमोऽयं सम्भूय द्विशतं षोडशोत्तरम् ॥४॥
अथवा मूलमन्त्रेण चतुर्वारं प्रतर्प्य च। पूर्वमन्त्राक्षरैर्मन्त्रैः स्वाहान्तैश्च चतुश्चतुः ॥५॥
मूलमन्त्रचतुर्वारपूर्वकं संप्रतर्प्य च। मिथुनादींस्ततः पश्चात् पूर्ववत् संप्रतर्पयेत् ॥६॥
भवेत् संभूय सचतुश्चत्वारिंशच्चतुश्शतम्। एवं ज्येष्ठक्रमः प्रोक्तो बुधैरागमपारगैः ॥७॥
एवं सन्तोष्य तत्पश्चात् पूर्ववत् सोपचारकैः। सर्वाभीष्टं च संप्रार्थ्य प्रणम्योद्वासयेत् सुधीः ॥८॥
य एवं तर्पयेन्नित्यं मण्डलात् स फलं लभेत्। अनावृष्ट्यां भये घोरे राजचोराद्युपद्रवे ॥९॥
महत्तरे विवादे च महादारिद्र्यसंकटे। विवाहादिषु कार्येषु सर्वेषु च विशेषतः ॥१०॥
एवं वै तर्पणं कुर्यात् मानवेन्द्रः प्रसन्नधीः। महागणेश्वरः प्रीतो महासंपत्करो भवेत् ॥११॥ इति।

अथ प्रयोगः—४ मू० ४ महागणपतिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ पुष्टिं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं लक्ष्मीनारायणौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं गौरीहरौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लीं रतिकन्दर्पौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं महीवराहौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं लक्ष्मीगणनायकौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं आमोदसिद्धी तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं प्रमोदसमृद्धी तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० गं सुमुखकान्ती तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं दुर्मुखमदनावत्यौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं विघ्नमदद्रवे तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं विघ्नकर्तृद्राविण्यौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ शं शङ्खनिधिवसुधारे तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ पं पद्मनिधिवसुमत्यौ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४। एवं १२४। इत्ययं कनिष्ठक्रमः। ४ मू० ४ श्रीं नारायणसहितां लक्ष्मीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं लक्ष्मीसहितं नारायणं तर्पयामि स्वाहा। एवं मिथुनानि पञ्च, आमोदादिषट्, निधिद्वयं, तेषां त्रयोदशमिथुनान्तानां तर्पणसंख्याष्टोत्तरशतद्वयम्। आद्यन्तयोर्मूलेन चतुश्चतुः। एवं सम्भूय षोडशाधिकद्विशतमिति मध्यमप्रकारः। आदौ मूलेन। ४ मू० ४ ॐ तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ श्रीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ह्रीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ क्लीं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ ग्लौं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ गं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ णं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ पं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ तं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ यें तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ रं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ दं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ सं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ र्वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ जं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ में तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ वं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ शं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ तां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ नं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ यं तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ स्वां तर्पयामि स्वाहा। ४ मू० ४ हां तर्पयामि स्वाहा। एवं संभूयाष्टाविंशत्यधिकशतद्वयसंख्यं तर्पयित्वा पुनर्मध्यप्रकारोक्तषोडशोत्तरशतद्वयं तर्पयेत्। तेन संभूय चतुश्चत्वारिंशदधिकचतुःशतं तर्पणानि भवन्ति, इत्युत्तमप्रकारः। इति काम्यतर्पणविधिः।

तर्पण का प्रकारान्तर—गणेश्वरपरामर्शिनी में कहा गया है कि पहले मूल मन्त्र से चार बार तर्पण करे। तब छः विघ्न मिथुनों और शङ्खनिधि-पद्मनिधि को पहले स्वबीज और अन्त में स्वाहा लगाकर चार बार तर्पण करे। इस प्रकार एक

सौ आठ तर्पण होता है। यह कनिष्ठ क्रम है। अथवा मूल मन्त्र से या उनके मन्त्रों से पूर्ववत् तर्पण करे तो दो सौ सोलह तर्पण होता है। यह मध्यम क्रम का तर्पण है। अथवा मूल मन्त्र से चार बार तर्पण करके अट्ठाईस मन्त्राक्षरों से स्वाहान्त तर्पण चार-चार बार करे। मूल मन्त्र से चार बार तर्पण करे। इसके बाद पूर्ववत् मिथुनों का तर्पण करे। इस प्रकार कुल चार सौ चौवालीस तर्पण हो जाता है। इसे आगमज्ञ विद्वान् ज्येष्ठ क्रम कहते है। इस प्रकार तर्पण के बाद पूर्ववत् उपचारों से पूजा करे तो सभी अभीष्टों को प्राप्त करके साधक प्रणम्य हो जाता है। जो इस प्रकार का तर्पण चालीस दिनों तक करता है, उसे अभीष्ट फल प्राप्त होता है। घोर अकाल में, राजा-चोर आदि के उपद्रवों का भय होने पर, महत्तर विवाद में, महा दरिद्रता का संकट होने पर, विवाहादि सभी कार्यों में इस प्रकार का तर्पण मानवेन्द्र को करना चाहिये। तब महागणेश्वर की प्रसन्नता से उसे महासमृद्धि प्राप्त होती है। मूलोक्त विधि से तत्तत् मन्त्रों से तर्पण करना चाहिये।

द्रव्यविशेषैस्तर्पणे फलविशेष:

अथ श्रीमहागणपतेरङ्गविशेषे तु द्रव्यविशेषैस्तर्पणात् फलविशेषानाह सारसंग्रहे—

शुण्डाकराग्रे गणपं जलेन प्रतर्पयेन्मुक्तिफलाय मन्त्री।
तथेन्दिराकामनया गणेशं प्रतर्पयेन्मूर्ध्नि पयोभिरत्र ॥१॥
गुह्यप्रदेशे मधुना गणेशं प्रतर्पयेत् कामफलाय विद्वान्।
आकृष्टिवश्यादिनिमित्तमत्र प्रतर्पयेत्तं मधुभिश्च नेत्रे ॥२॥
भूपालवश्याय महागणेशं प्रतर्पयेच्चारु घृतेन पृष्ठे।
ऊरुस्थले तैलसुतर्पणं च महागणेशप्रियमेतदुक्तम् ॥३॥
एरण्डतैलेन तथास्य रण्डावश्याय नाभौ किल तर्पणं स्यात्।
स्कन्धप्रदेशेऽस्य पय:पयोभि: प्रतर्पणं प्रीतिविवर्धनाय ॥४॥
क्षीरेण दध्ना मधुनास्य तुण्डे प्रतर्पणं धर्मविवृद्धिकृत् स्यात्।
एवं परिज्ञाय समस्तमेतत् कुर्यात् प्रयोगान् विधिना मनुज्ञ: ॥५॥
एवं मन्त्री य एवं गणपमनुवरं ह्यर्चनातर्पणाद्यै-
र्होमैर्जपैश्च सम्यक् प्रभजति विधिना प्राप्नुयात् सोऽत्र लोके।
नानार्थानस्य भूपो भवति च वशगो मोहयेत् सर्वलोकान्
भुक्त्वा भोगान् यथेष्टं व्रजति स विमलां मुक्तिमन्ते दुरापाम् ॥६॥ इति।

श्रीमहागणपति के अंगविशेष में द्रव्यविशेष से तर्पण का फल—सारसंग्रह में कहा गया है कि मोक्षप्राप्ति के लिये शुण्डाकार कराग्रों पर जल से तर्पण करे। लक्ष्मीप्राप्ति के लिये गणेशमूर्धा पर दूध से तर्पण करे। मनोरथसिद्धि के लिये गणेश का तर्पण मधु से गुह्य प्रदेश में करे। आकर्षण-वशीकरण के लिये मधु से तर्पण गणेश के नेत्रों में करे। राजाओं को वश में करने के लिये महागणेश की पीठ पर घी से तर्पण करे। ऊरुस्थलों में तेल से तर्पण महागणेश को बहुत प्रिय हैं। वेश्या को वश में करने के लिये रेंड़ी के तेल से नाभि में तर्पण करे। स्नेहवृद्धि के लिये गणेश के कन्धों पर दूध से तर्पण करे। धर्म की वृद्धि के लिये गणेश के शुण्ड में दूध, दधी, मधु से तर्पण करे। इन सब बातों को जानकर सभी प्रयोगों को विधिवत् करे। इस प्रकार जो गणेश का श्रेष्ठ मन्त्र से अर्चन तर्पण हवन जप एवं सम्यक् रूप से भजन करता है, उसे इस संसार में विविध धन मिलता है और वह राजा हो जाता है, सारे संसार को मोहित करता है एवं संसार में यथेष्ट भोगों को भोगकर अन्त में विमल मोक्ष प्राप्त करता है।

त्रैलोक्यमोहनगणपतिमन्त्र:

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

वक्रेत्युक्त्वा च तुण्डैकदंष्ट्राय तदनन्तरम्। कामशक्तीन्दिराविघ्नबीजानि प्रवदेत् तत: ॥१॥

वदेद् गणपतिं पश्चाद्वरान्ते वरदं पदम्। ततः सर्वजनं मेऽन्ते वशमानय ठद्वयम् ॥२॥
त्रैलोक्यमोहनो मन्त्रो गणेशस्येष्टदः शुभः। इति।

वक्र स्वरूपं। तुण्डैकदंष्ट्राय स्वरूपं। मे स्वरूपं। वशमानय स्वरूपं। ठद्वयं स्वाहा। त्रयस्त्रिंशदक्षरोऽयं मन्त्रः। तथा—

ऋषिस्तु गणकः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम्। त्रैलोक्यमोहनो विघ्नो देवता परिकीर्तितः ॥३॥
हृदेकादशभिः प्रोक्तं पञ्चभिः शिर ईरितम्। भूतार्णैश्च शिखा प्रोक्ता चतुर्भिः कवचं मतम् ॥४॥
नेत्रं षड्भिः समाख्यातं द्वाभ्यामस्त्रमुदीरितम्। ध्यानपूजादिकं सर्वं महाविघ्नेशवद्भवेत् ॥५॥

वर्णैरिति शेषः। ध्यानम्—

त्रैलोक्यमोहनगणेशमिमं यथावदभ्यर्चनाजपहुतिस्तुतितर्पणाद्यैः।
संपूजयेद्य इह साधकसत्तमोऽसौ लोकेऽखिले भवति पूज्यतमोऽमराणाम् ॥६॥ इति।

अथ प्रयोगः—योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गणकाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये त्रैलोक्यमोहनाय गणपतये देवतायै नमः। इति ऋष्यादिकं विन्यस्य ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, वक्रतुण्डैकदंष्ट्राय क्लींह्रींश्रीं हृदयाय नमः। गं गणपतये शिरसे०। वरवरद शिखायै०। सर्वजनं कवचाय०। मे वशमानय नेत्रेभ्यो०। स्वाहा अस्त्राय०। इति मन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य, हृदयादिषडङ्गेष्वपि विन्यस्य ध्यानपूजादिकं सर्वं महागणपतिवत् कुर्यादिति।

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार वक्रतुण्ड का तैंतीस अक्षरों का मन्त्र इस प्रकार है—वक्रतुण्डैकदंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं गणपतिं वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। त्रैलोक्य को मोहित करने वाला गणेश का यह मन्त्र समस्त अभीष्ट को देने वाला एवं कल्याणकारक है। इस मन्त्र के ऋषि गणक, छन्द गायत्री एवं देवता त्रैलोक्य मोहन गणेश कहे गये हैं।

योगपीठन्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। तदनन्तर इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गणकाय ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये त्रैलोक्यमोहनाय गणपतये देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—वक्रतुण्डैकदंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः, गं गणपतये शिरसे स्वाहा, वरवरद शिखायै वषट्, सर्वजनं कवचाय हुं, मे वशमानय नेत्रेभ्यो वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। फिर षडङ्ग न्यास करे। इसके बाद पूर्वोक्त रूप से ध्यान-पूजादि सब कुछ महागणपति मन्त्र के समान ही करे।

इन त्रैलोक्यमोहन गणेश का यथावत् अर्चन जप हवन तर्पण से जो साधना करता है, वह साधकसत्तम सभी लोकों में पूज्यतम होता है।

शक्तिगणेशमन्त्रः

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

शक्तिरुद्धा स्मृतिः प्रोक्ता चन्द्रखण्डेन संयुता। महागणान्ते पतये स्वाहान्तो द्वादशाक्षरः ॥१॥

स्मृतिर्गकारः। चन्द्रखण्डेन संयुता बिन्दुयुक्ता। शक्तिरुद्धा भुवनेशीबीजसंपुटिता। अन्यत्सुगमम्। तथा—

ऋषिर्गणक आख्यातो गायत्री निचृदन्विता। छन्दः शक्तिगणेशोऽत्र देवता सर्वकामदः ॥२॥
एकेनैकेन चैकेन सप्तभिर्द्वितयेन च। समस्तेन च मन्त्रार्णैरङ्गक्लृप्तिरिहोदिता ॥३॥

मुक्ताचन्द्रोत्थदीप्तिं शशिशकलधरं भालनेत्रं मनोज्ञं
हस्ताम्भोजैर्दधानं सरसिरुहसृणी रत्नपात्रं विशालम्।
स्वीयक्रीडस्थिताया ध्वजनिहितलसच्चारुपाणेः प्रियाया
योनौ विन्यस्तहस्तं मणिगणमुकुटं संश्रयेन्नागवक्त्रम् ॥४॥

दक्षाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तं सरसिजादिकध्यानम्।

एवं सञ्चिन्त्य विधिवत् साधकः सर्वसिद्धये। यजेत् पूर्वोदिते पीठे विरिविघ्नेशवर्त्मना ॥५॥ इति।

अथ प्रयोगः—मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गणकाय ऋषये नमः। मुखे निचृद्गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीशक्तिगणेशाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, आद्यवर्णेन हृदयं, द्वितीयेन शिरः, तृतीयेन शिखा, सप्तभिः कवचं, द्वाभ्यां नेत्रं, समस्तमन्त्रेणास्त्रमिति मूलमन्त्रार्णैः करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यानादिसर्वं विरिविघ्नेशवत् कुर्यादिति। तथा—

दशायुतं जपेन्मन्त्रमयुतं जुहुयात् ततः। अपूपैर्घृतसंयुक्तैर्विधिवत् पूजितेऽनले ॥६॥
तर्पण मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत् ततः। एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् विधिवच्चरेत् ॥७॥

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार द्वादशाक्षर महागणपति मन्त्र है—ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि गणक, छन्द निचृद् गायत्री एवं देवता समस्त कामनाओं को देने वाले शक्तिगणेश कहे गये हैं।

मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करने के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गणकाय ऋषये नमः, मुखे निचृद् गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्रीशक्तिगणेशाय देवतायै नमः। अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ह्रीं हृदयाय नमः, गं शिरसे स्वाहा, ह्रीं शिखायै वषट्, महागणपतये कवचाय हुं, स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा अस्त्राय फट्। पुनः इन्हीं मन्त्रों से करन्यास करके फिर हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। तब इस प्रकार ध्यान करे—

मुक्ताचन्द्रोत्थदीप्तिं शशिशकलधरं भालनेत्रं मनोज्ञं हस्ताम्भोजैर्दधानं सरसिरुहसृणी रत्नपात्रं विशालम्।
स्वीयक्रीडस्थिताया ध्वजनिहितलसच्चारुपाणेः प्रियाया योनौ विन्यस्तहस्तं मणिगणमुकुटं संश्रयेन्नागवक्त्रम्॥

इस प्रकार का ध्यान करे साधक सभी सिद्धियों के लिये पूर्वोक्त पीठ पर विरिगणेश के समान पूजा करे। एक लाख मन्त्र जप करे। दश हजार हवन घी-संयुक्त पूओं से विधिवत् पूजित अग्नि में करे। तर्पण-मार्जन के बाद ब्राह्मणों को भोजन करावे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से साधक विधिवत् प्रयोगों को करे।

काम्यहोमविधिः

इक्षुदण्डैः कृतो होमो राज्यलक्ष्मीं प्रयच्छति। कदलैर्नारिकेलैश्च होमो लोकवशङ्करः ॥८॥
ससितैः पृथुकैर्होमो राजानं वशमानयेत्। सक्तुभिश्च कृतो होमो ब्राह्मणानां वशङ्करः ॥९॥
सर्पिषा जुहुयात् सम्यग् धनधान्यादिसंपदः। इति।

ईखखण्डों से हवन करने पर राज्यलक्ष्मी प्राप्त होती है। केला और नारियल से हवन करने पर लोक वश में होते हैं। शक्कर और चूड़ा से हवन करने पर राजा वश में होते हैं। सत्तू से हवन करने पर ब्राह्मण वश में होते हैं। गाय के घी से हवन करने पर धन-धान्य आदि सम्पदा प्राप्त होती है।

भोगगणेशमन्त्रस्तदर्चाविधिश्च

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

प्रणवो मायया रुद्धबीजं च वशमानय। ठद्वयान्तो मनुः प्रोक्तः सम्यगेकादशाक्षरः ॥१॥

मायया रुद्धबीजं भुवनेशीबीजद्वयमध्यस्थं गणेशबीजं। ठद्वयं स्वाहाकारः। तथा—

पूर्वोदितास्तु मुन्याद्या मन्त्रार्णैरङ्गकल्पनम्। हृदयं प्रणवेनाथ शिरो मायापुटेन च ॥२॥
स्वबीजेन शिखा प्रोक्ता वशंशब्देन चानय। अनेन कवचं नेत्रं स्वाहाशब्देन मन्त्रिभिः ॥३॥
समग्रेणास्त्रमाख्यातं सर्वागमविशारदैः।
बन्धूकाभं त्रिनेत्रं शशधरमुकुटं भोगलोलं गणेशं
नागास्यं धारयन्तं गुणसृणिवरदानिक्षुदण्डं कराग्रैः।

शुण्डासंस्पृष्टयोषामदनगृहममुं श्यामलाङ्ग्या तयापि
श्लिष्टं लिङ्गस्पृशा तं विधृतकमलया भावयेद् देववन्द्यम् ॥४॥

(वामोर्ध्वकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। पूर्वोक्ते पीठे पूर्वोक्ता पूजा कार्या)। अत्र प्रयोगः सुगमः। मुन्यादयस्तु द्वादशाक्षरोक्ताः। तथा—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रमपूपैस्तद्दशांशतः। घृताप्लुतैस्तु जुहुयात् तर्पणादि ततश्चरेत् ॥४॥
ततो निजगुरुं नत्वा धनधान्यैश्च तोषयेत्। ततः काम्यप्रयोगांश्च तत्कल्पोक्तान् प्रसाधयेत् ॥५॥
स्वादुत्रयप्लुतापूपैर्होमो राजवशङ्करः। नारिकेलफलैर्होमो राज्यश्रीवृद्धिदः परः ॥६॥
त्रिस्वादुसंयुतैर्लोणैर्होमः कान्तावशङ्करः। इति।

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार एकादशाक्षर गणेश मन्त्र है—ॐ ह्रीं गं ह्रीं वशमानय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि आदि पूर्ववत् ही हैं। मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करने के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे, शिरसि गणकाय ऋषये नमः, मुखे निचृद् गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्रीशक्तिगणेशाय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ हृदयाय नमः, ह्रीं शिरसे स्वाहा, गं शिखायै वषट्, ह्रीं कवचाय हुं, वशमानय नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इन्हीं मन्त्रों से करन्यास करके फिर षडङ्ग न्यास करे। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

बन्धूकाभं त्रिनेत्रं शशधरमुकुटं भोगलोलं गणेशं नागास्यं धारयन्तं गुणसृणिवरदानिक्षुदण्डं कराग्रैः।
शुण्डासंस्पृष्टयोषामदनगृहममुं श्यामलाङ्ग्या तयापि श्लिष्टं लिङ्गस्पृशा तं विधृतकमलया भावयेद् देववन्द्यम्॥

पूर्वोक्त पीठ पर पूर्ववत् पूजन करके तीन लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन घृतसिक्त पूओं से करे। तब अपने गुरु को प्रणाम करके धन-धान्य से सन्तुष्ट करे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से काम्य प्रयोग उसके कल्प में उक्त विधि से करे, त्रिमधुराक्त पूओं के हवन से राजा वश में होते हैं। नारियल फल के हवन से राज्यश्री की वृद्धि होती है। त्रिमधुराक्त नमक के हवन से कान्ता वश में होती है।

हरिद्रागणेशमन्त्रप्रभावः

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

अथो वच्मि महामन्त्रं हरिद्रागणपस्य तु। जगत्त्रयहितं भोगमोक्षदं कविताकरम् ॥१॥
नानामन्त्रगणस्याशु सिद्धिदं भुवि दुर्लभम्। गरिष्ठं सफलं चाथ कार्यमात्रप्रसाधने ॥२॥
गोपनीयं प्रयत्नेन वाञ्छितार्थसुरद्रुमम्। सौभाग्यपुष्टिलक्ष्मीदं दीर्घजीवित्वदं नृणाम् ॥३॥
नरनारीनरेन्द्राणां परं वश्यफलप्रदम्। विघ्नौघध्वंसने दक्षं कृत्याद्रोहनिवारणम् ॥४॥
दैत्यगीर्वाणसङ्घानां नागगन्धर्वरक्षसाम्। दन्तिनामश्वमुख्यानां श्वापदानां च पक्षिणाम् ॥५॥
स्वान्तसंमोहनं सम्यक् प्राणाकृष्टिकरं क्षणात्। रोधकं राजसैन्यस्य वायुवर्षणविद्युताम् ॥६॥
कृशानुजलशस्त्राणां स्तम्भकं परमं मतम्। वादिनां जन्तुजातानां वाचां संस्तम्भनं द्विषाम् ॥७॥
सिंहेहामृगनागानां गमनस्तम्भकारकम्। भूपस्य मन्त्रिणः शत्रोः क्रोधस्तम्भकरं हठात् ॥८॥
तरुणीनां कुमारीणां हृदयस्तम्भनं महत्। स्निग्धानामपि शत्रूणां विद्वेषकरणक्षमम् ॥९॥
उन्मादोच्चाटने शत्रोर्मारणे च्छेदने क्षमम्। बहुप्रयोगसंयुक्तं यन्त्रभेदसमन्वितम् ॥१०॥

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार हरिद्रा गणपति का संसार में दुर्लभ मन्त्र तीनों लोकों का हितकर, भोग-मोक्षप्रद, कवित्व शक्तिदायक, नाना मन्त्रों की सिद्धि देने वाला है। कार्यप्रसाधन में सफलता देने वाला है। इसे यत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिये। यह कामनाओं के लिये कल्पवृक्ष के समान है। इससे सौभाग्य, पुष्टि, लक्ष्मी, दीर्घायु की प्राप्ति होती है। नर-नारी नृपों का यह परम वश्यकर है। विघ्नसमूहों का विनाशक एवं कृत्या द्रोह का निवारक है। दैत्य, सुरवृन्द, नाग, गन्धर्व, राक्षस,

हाथी, घोड़ों, वाद्य, पक्षियों का मोहक, प्राण आकृष्टिकारक, राजा के सेना, वायु, वर्षा, विद्युत् का रोधक है। आग, पानी, शस्त्रों का स्तम्भन करने वाला है। वादियों एवं वैरियों की बोली को स्तम्भित करने वाला है। सिंह, व्याघ्र एवं नागों की गति को स्तम्भित करने वाला है। राजा मन्त्री शत्रु के क्रोधों का हठात् स्तम्भकारक है। युवतियों, कुमारियों के हृदय को स्तम्भित करने वाला है। परस्पर प्रेमी शत्रुओं में भी द्वेष उत्पन्न करने वाला है। शत्रुओं का उन्मादन, उच्चाटन और मारण करने में सक्षम है। असंख्य प्रयोग से संयुक्त यन्त्रों से समन्वित है।

हरिद्रागणेशमन्त्रः

तारः क्रोधसमन्वितं च खपरं चन्द्रार्धचूडं धरा-
सद्बीजं हरि दाग्निविष्णुशयनान्याभाष्य पश्चाद्गणम् ।
संब्रूयात् पतये वरश्च वरदं सर्वाञ्जनान्ते हृद-
यं च स्तम्भययुग्ममग्निगृहिणी द्वात्रिंशदर्णो मनुः ॥१॥

तारः प्रणवः। क्रोधो हूं। खपरं ग, चन्द्रार्धचूडं बिन्दुयुक्तं। धरा ग्लौं। हरि स्वरूपं, दाग्निविष्णुशयनानि द्रा इति। गणपतये स्वरूपं। वरवरद स्वरूपं। सर्वजन स्वरूपं। हृदयं स्वरूपं। स्तम्भययुग्मं स्तम्भय स्तम्भय इति। अग्निगृहिणी स्वाहा। तथा—

सेवितो मनुसङ्घातैरुद्धृतः सर्वकामदः । मुनिर्मदन आख्यातश्छन्दोऽनुष्टुप् समीरितम् ॥२॥
हरिद्रागणपो देवो देवता मुनिभिः स्मृतः । षड्दीर्घयुक्स्वबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥३॥ इति।

विनायकसंहितायां संमोहनपञ्चरात्रे च—'षड्दीर्घयुक्स्वबीजेन भूमियुक्तेन बुद्धिमान्। षडङ्गमाचरे'दित्युक्तं तत्र यथोपदेशं कार्यमिति। स्वबीजेन महागणपतिबीजेन।

हरिद्रा गणेश मन्त्र—उद्धार करने पर हरिद्रागणपति के बत्तीस अक्षरों का मन्त्र होता है—ॐ ह्रीं गं ग्लौं हरिद्रागणपतये वरवरद सर्वजनहृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा। मुनिवृन्दों ने इस मन्त्र को सर्वकामद कहा है। इसके ऋषि मदन, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता हरिद्रा गणेश कहे गये हैं।

इसका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—शिरसि मदनाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये हरिद्रागणपतये देवतायै नमः। अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग कर इसका षडङ्ग न्यास गां गीं गूं गैं गौं गः से करके इन्हीं से करन्यास भी किया जाता है।

हरिद्रागणेशमन्त्रग्रहणप्रकारः

तथा—

विधिना येन मन्त्रोऽयं गृह्यते तदहं ब्रुवे । चतुर्थीदिवसे प्राप्ते शुक्लपक्षस्य मन्त्रवित् ॥४॥
शुद्धां हरिद्रामानीय कन्यया पेषितां शुभाम् । सर्वाङ्गे तां समालिप्य स्नायाच्छुद्धजलैस्ततः ॥५॥
भक्त्या परमयोपेतः प्रसन्नेनान्तरात्मना । प्रणम्य गुरुपादाब्जमर्चयित्वा विधानतः ॥६॥
स्वर्णाङ्गुलीयहाराद्यैर्भूषणैश्च शुभाम्बरैः । पूर्वोक्तविधिना तस्मादधीयीत मनुं त्विमम् ॥७॥
सुगन्धैः सुमनोभिस्तं यजेद् देवधिया पुनः ।

इस मन्त्र की दीक्षाग्रहण की विधि कहता हूँ। शुक्ल पक्ष की चतुर्थी तिथि में शुद्ध हल्दी लाकर कन्या से पिसवावे। सारे शरीर में इसे लगाकर शुद्ध जल से स्नान करे। परम भक्ति में प्रसन्न अन्तरात्मा से गुरुचरणकमलों में प्रणाम करके विधान से पूजा करे। गुरु को सोने की अंगूठी, हारादि आभूषण, वस्त्र देकर सन्तुष्ट करे। पूर्वोक्त दीक्षाविधि से गुरु से मन्त्र प्राप्त करे। गुरु की देवता के रूप में सुगन्धित फूलों से पूजा करे।

हरिद्रागणेशमन्त्रस्य ध्यानार्चनादि

स्थाने पूर्वसमीरिते मणिमये सिंहासने संस्थितं पीतं पीतविभूषणाम्बरलसन्माल्यादिसंशोभितम्।
विघ्नं दन्तिमुखं त्रिनेत्रलसितं हस्तैर्वहन्तं भजेत् पाशं सत्परशुं वरं सृणियुतं क्रोधाख्यमुद्राभये ॥८॥

वामोर्ध्वादिकरत्रये आद्यत्रयं दक्षोर्ध्वादित्रयेऽन्यत्त्रयमित्यायुधध्यानम्। क्रोधमुद्रा मुष्टिः।

एवं सञ्चिन्त्य देवेशं गजाननमनन्यधीः। एकाक्षरोदितेनात्र वर्त्मना देवमर्चयेत् ॥९॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि मदनाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये हरिद्रागणपतये देवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, गांगींगूमित्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यात्वा, मानसपूजादिसर्वं प्रागुक्तैकाक्षरविधिना कृत्वा समापयेदिति। तथा—

साग्रं सहस्रं सञ्जप्य दशांशं हव्यवाहने। सर्पिर्गुडयुतैः सम्यगपूपैर्जुहुयाद् हविः ॥१०॥
हरिद्रागणपं तावत् तर्पयेद्भक्तितत्परः। कुमारीर्भोजयेत्तावद् ब्रह्मचारिण एव च ॥११॥
काम्यकर्म ततः कुर्याद्यदिष्टं विष्टपत्रये।

साग्रं सहस्रमष्टोत्तरं सहस्रमित्यर्थः। तावत् होमसंख्यासमसंख्यमित्यर्थः। एतेन तर्पणसंख्ययैव कुमार्य्यो ब्रह्मचारिणश्च भोजयितव्याः। ब्रह्मचारिणस्तु नैष्ठिकाः। 'स्वाश्रमस्थांस्त्वपेक्षन्ते' इति सांप्रदायिकाः।

तदनन्तर देवता का ध्यान इस प्रकार करे—

स्थाने पूर्वसमीरिते मणिमये सिंहासने संस्थितं पीतं पीतविभूषणाम्बरलसन्माल्यादिसंशोभितम्।
विघ्नं दन्तिमुखं त्रिनेत्रलसितं हस्तैर्वहन्तं भजेत् पाशं सत्परशुं वरं सृणियुतं क्रोधाख्यमुद्राभये।।

देवेश गजानन का अनन्य बुद्धि से चिन्तन करके एकाक्षर मन्त्र में कथित विधि से पूजा करे। पूजा के बाद देवता के आगे बैठकर एक हजार आठ जप करे। सम्यक् पूजित अग्नि में गोघृतमिश्रित गुड़ से दशांश एक सौ हवन करे। भक्तितत्पर होकर हरिद्रागणपति का तर्पण भी उतना ही करे। कुमारी और ब्रह्मचारियों को भोजन करावे। इन कुमारियों एवं ब्रह्मचारियों की संख्या भी एक सौ आठ ही होनी चाहिये।

स्तम्भनयन्त्रन्तद्विनियोगश्च

तथा—

पद्मे नागदले सुधाकरगृहे साध्याख्यकर्मावृते वेदादौ वसुधाविनायकगतं वर्मालिखेन्मध्यतः।
दिक्पत्रेषु वसुन्धरामनुगतं क्रोधं विदिक्पत्रगं भूबीजं बहिरष्टकोणवसुधाबीजस्थितं वारुणम् ॥१२॥
वसुकोणाग्रगानि स्युर्हस्तिनो मस्तकानि च। मस्तकेषु लिखेत् पश्चाद्गणान्तं बीजमुत्तमम् ॥१३॥
चतुरस्रेण संवेष्ट्य दिक्षु वर्मान्तमालिखेत्। विदिग्गतं च भूबीजमेवं यन्त्रमनुत्तमम् ॥१४॥

अस्यार्थः—तत्र यथोक्ताधिकरणे यथोक्तद्रव्यैरष्टदलकमलं कृत्वा, तत्कर्णिकामध्ये वृत्तं कृत्वा, तन्मध्ये साध्यनामवेष्टितं प्रणवं विलिख्य, तस्योदरे भूबीजमालिख्य भूबीजस्योदरे गणेशबीजमालिख्य, तस्यान्तः हुंकारमालिख्य, अष्टदलकमलस्य पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरदलेषु भूबीजोदरगतं हूंकारमालिख्याग्नेयादिकोणदलेषु केवलं भूबीजं विलिख्य, कमलाद्बहिश्चतुरस्रद्वयसंपुटरूपमष्टकोणं कृत्वा तत्कोणेषु भूबीजोदरे वकारं सबिन्दुं विलिख्य, अष्टकोणाग्रेषु गजमस्तकानि कृत्वा तेषु सबिन्दुं गकारं विलिख्य, तद्बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तत्कोणेषु भूबीजं, तद्दिक्षु हुंकारं च विलिखेदिति। तथा—

आदित्यबुधशुक्राणामेकस्य दिवसे वशी। निशीथे विजने देशे सुलिप्ते गोमयाम्भसा ॥१५॥
प्रदीपैर्दीपिते तत्र दृषदं विन्यसेच्छुभाम्। उपलं च समानीय हरिद्रां क्षालितां जलैः ॥१६॥
तस्यां दृषदि संस्थाप्य कन्यया पेषयेत्ततः। हरिद्रायाश्चतुर्थांशं वसुविघ्नगृहान्मृदम् ॥१७॥

समाहृत्य च संपिष्य मिश्रयित्वाथ शोधयेत्। मन्त्रेणानेन मन्त्रज्ञः पञ्चविंशतिसंख्यया ॥१८॥
तत्पश्चाल्लेपयेन्मन्त्री शुभे सूक्ष्मे नवाम्बरे। अस्मिन् पट्टे लिखेद्यन्त्रमेतत् संस्तम्भनाह्वयम् ॥१९॥
अत्र प्राणान् प्रतिष्ठाप्य पूजितं गुलिकीकृतम्। गणेशप्रतिमां पश्चादङ्गप्रत्यङ्गशोभिताम् ॥२०॥
विनिर्माय त्रिभिर्भागैर्निशायास्तद्धृदि क्षिपेत्। प्राणसंस्थापनं भूयः कुर्यान्मूर्तेर्विचक्षणः ॥२१॥
गन्धपुष्पादिनैवेद्यै(रभ्यर्च्य गणनायकम्। शरावे क्षालितं न्यस्य सहस्रं साष्टकं मनुम् ॥२२॥
संजप्य पूजयेद्भक्त्या पीतवर्णैश्च पुष्पकैः। सिद्धौदनेन नैवेद्यं) निवेद्यात्र बलिं हरेत् ॥२३॥
तण्डुलान् शालिसंभूतान् प्रस्थमानमिताञ्शुभान्। द्विदलीकृतमुद्गान्नं तदर्धेन च मेलयेत् ॥२४॥
गुडं वेदपलं भूयो नारिकेलं च तत्समम्। मरिचं मुष्टिमानं च सैन्धवं च तदर्धकम् ॥२५॥
तदर्धं जीरकं चाज्यं कुडवार्धसमं भवेत्। एतत्सर्वं चतुष्प्रस्थं गोदुग्धे मन्दवह्निना ॥२६॥
पचेत् सिद्धौदनं ह्येतद् गणेशस्य महत्प्रियम्। अमुना पायसेनाथ लडुकापूपकादिभिः ॥२७॥
कर्पूरवासितैः पूगताम्बूलैश्चन्दनादिभिः। तोषयित्वा विधानेन हरिद्रागणपं विभुम् ॥३७॥
बलिं दत्त्वा शरावेण च्छादयेदपरेण तम्। प्रणमेद् दण्डवद्भूमौ स्तुत्वा स्तुतिभिरादरात् ॥३८॥
एवं यः कुरुते नित्यं पञ्चभिः सप्तभिर्दिनैः। विघ्नेश्वरप्रभावेण त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥३९॥
स्तम्भयेत् साधकेन्द्रस्तु सत्यमेतन्न चान्यथा। युद्धभूमौ तमिस्रायां यद्येनं स्थापयेद् बुधः ॥४०॥
वैरिणो वाहिनीं वीरैर्व्याकुलां स्तम्भयेत् तदा। देशे ग्रामे पुरे गेहे सभायां स्थापितं यदि ॥४१॥
तत्तत्स्थानगतान् सर्वान् विविधान् स्तम्भयेज्जनान्। शाखिशाखाग्रगं सम्यक् स्तम्भयेद्वर्षणं महत् ॥४२॥
चत्वरे नगरान्तःस्थान् जलान्तःस्थापितं जलम्। निवासे पथि वा दस्यून् सर्पादीन् वा समीरणान् ॥४३॥
हस्तिघोटकशालासु क्षणात् सर्वानुपद्रवान्। आखून् शाल्यालये सर्पान् वल्मीके श्वापदान् वने ॥४४॥
क्षेत्रेषु शलभान् हेतीः पाषाणे स्तम्भयेत् स्थितम्। स्मृतिं वाणीं च गानं च विद्यां शत्रोर्विभावसोः ॥४५॥
रेतसः स्तम्भनं कुर्यात् शय्यास्थाननिवेशितम्। सम्यङ्निवेश्य चैतेषु स्थानेषु बलिमाहरेत् ॥४६॥
स्तम्भयेदखिलं विश्वं किं पुनर्वाञ्छितं जनम्। सफलं सर्वथा ह्येतद्विधानं गोपयेत् सदा ॥४७॥

स्तम्भन यन्त्र—यथोक्त अधिकरण में यथोक्त द्रव्यों से अष्टदल कमल बनावे। उसके मध्य में साध्य नामाक्षरों से वेष्टित 'ॐ' लिखे। ॐ के उदर में 'गं' लिखे। उसके साथ 'हुं' लिखे। अष्टदल कमल के पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर दलों में 'ग्लौं' के उदर में 'हुं' लिखे। आग्नेयादि कोण दलों में केवल 'ग्लौं' लिखे। कमल के बाहर दो चतुरस्र से वेष्टित अष्टकोण बनावे। उसके आठ कोणों में ग्लौं के उदर में 'वं' लिखे। आठ कोणों के अग्रभाग में गजमस्तक बनावे। उनमें 'मं' लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर आग्नेयादि कोणों में 'ग्लौं' लिखे। पूर्वादि दिशाओं में 'हुं' लिखे।

रविवार या बुधवार या शुक्रवार की रात में निर्जन स्थान में भूमि को गोबर पानी से लीपकर दीपक जलावे। वहाँ पर एक सील-वट्टा रखे। हल्दी को जल से धोकर शिलवट पर रखे। उसे कुमारी कन्या पीसे। हल्दी का चतुर्थांश मिट्टी आठ विघ्नेशों के नाम से लेकर उसे पीसकर हल्दी पिष्ट में मिलाकर शोधन करे। इसे मन्त्र के पच्चीस जप से मन्त्रित करे। महीन नये कपड़े पर इसका लेप चढ़ावे। उस कपड़े पर यन्त्र को लिखे। इससे स्तम्भन होता है। इसमें प्राणप्रतिष्ठा करके इसकी गोली बनावे। तीन भाग हल्दी में एक भाग मिट्टी मिलाकर अंग-प्रत्यङ्ग सुन्दर प्रतिमा बनाकर गोली को प्रतिमा के हृदय में छिपा दे। तब मूर्ति में प्राणप्रतिष्ठा करे। गन्ध, पुष्प, नैवेद्य से गणेश की पूजा शराव में रखकर करे। एक हजार आठ मन्त्रजप करे। भक्तिपूर्वक पीले फूलों से पूजा करे। भात से बलि प्रदान करे। एक किलो शालि चावल, आधा किलो मूँग दाल, पचास ग्राम गुड, पचास ग्राम नारियल गिरी, एक मुट्ठी मरिच, सेन्धा नमक आधी मुट्ठी, चौथाई मुट्ठी जीरा, एक सौ साठ ग्राम गोघृत—इन सबों को चार किलो दूध में मद्धिम आँच पर पकावे। यह भात गणेश को बहुत प्रिय है। इस पायस के साथ लड्डू, पूआ आदि अर्पण करे। कर्पूरवासित पान, चन्दन आदि से विधिपूर्वक हरिद्रागणेश को तृप्त करे। मिट्टी की कपटी में बलि रखकर

उसे दूसरी कपटी से ढककर बलि प्रदान करे। दण्डवत् लेटकर प्रणाम करे। स्तोत्रों से स्तुति करे। इस प्रकार जो पाँच या सात दिनों तक करता है, वह विघ्नेश्वर के प्रभाव से सचराचर तीनों लोकों का स्तम्भन कर सकता है, यह कथन अन्यथा नहीं है। रात में युद्धभूमि में जो इसे स्थापित करता है, उसके शत्रु की सेना के वीर स्तम्भित हो जाते हैं। यदि देश ग्राम नगर घर सभा में इसे स्थापित किया जाय तो उन सभी स्थानों में रहने वालों का स्तम्भन होता है। वृक्ष की शाखा के अग्रभाग में लगाने से घोर वर्षा का स्तम्भन होता है। नगर के चौराहे पर, जलाशय के जल में, घर में, रास्ते में लुटेरों, सर्पों, तेज अन्धड़, हाथी, घोड़ा के शाला में स्थापित करने से सभी उपद्रव शान्त होते हैं। घर में चूहों, बिल में सर्पों, वन में बाघ, खेत में शलभ, शस्त्र, पत्थर का स्तम्भन होता है। स्मरण, बोली, गान, विद्या विभावसु, शत्रुवीर्य का स्तम्भन इसे निदेशित स्थान में स्थापित करने से होता है। इतने स्थानों में स्थापित करके बलि प्रदान करे तो सारा संसार स्तम्भित होता है। तब वांछित जन के बारे में क्या कहा जाय। यह विधान सर्वथा सफल होता है। इसे गुप्त रखना चाहिये।

सविनियोगमाकर्षणयन्त्रम्

अथाकृष्टिकरं यन्त्रं विघ्नेशस्य वदाम्यहम्। हरिद्रां शोधयेद्वेश्ममृदा प्रोक्तेन वर्त्मना ॥४८॥
उदितं यन्त्रमालिख्य मायां गं मध्यतो लिखेत्। अवशिष्टैर्मन्त्रवर्णैर्मायया च प्रवेष्टयेत् ॥४९॥
लिखेत् पाशाङ्कुशावष्टपत्रेषु तदनन्तरम्। वारुणं दिग्दलाग्रेषु टपरं कोणपत्रगम् ॥५०॥
धरामण्डलयुग्मस्य कोणेष्वाशाविदिक्क्रमात्। बाणबीजानि विलिखेद् वक्ष्यमाणानि मन्त्रवित् ॥५१॥
तदग्रवसुशूलेषु कवचं साधु संलिखेत्। जलगेहद्वयेनापि मायाकोणेन वेष्टितम् ॥५२॥
यन्त्रमाकर्षणं ह्येतल्लिखितं पूर्ववर्त्मना। कृतप्राणप्रतिष्ठं च निशाविघ्नेशकुक्षिगम् ॥५३॥
मुहुः संपूज्य यत्नेन समीरं स्थापयेद् बुधः। चक्रिहस्तमृदायोज्य गणेशागारमृत्तिकाः ॥५४॥
शरावयुगलं रम्यं निर्मायान्यत्र चोभयोः। विन्यस्य तं गणेशानं कुसुमैररुणैर्यजेत् ॥५५॥
सिद्धौदनादिनैवेद्यैर्बलिभिश्चोक्तवर्त्मना । मनोः सर्वजनस्थाने दत्त्वा साध्याभिधां बुधः ॥५६॥
स्तम्भय-द्वितयं यत्र तत्राकर्षय-युग्मकम्। साध्याशाभिमुखो भूत्वा सहस्रं साष्टकं जपेत् ॥५७॥
बलिं दत्त्वाथ संपूज्य विघ्नेशं चन्दनादिभिः। द्वितीयेन शरावेण पिदधीत सुसाधकः ॥५८॥
प्रत्यहं कुर्वतस्त्वेवं सप्तभिर्दिवसैर्भुवि। साधकस्य समायाति सन्निधौ वाञ्छितो जनः ॥५९॥
भूपालस्तत्सुतो वापि महिषी वा वराङ्गना। अमात्यः पण्ययोषा वा सुरकन्यापि वा द्रुतम् ॥६०॥
आगच्छति न सन्देहो मन्त्रिसक्तेन चेतसा। यन्त्रमेतल्लिखित्वा तु तालपत्रे गुडाम्भसा ॥६१॥
पूजितं स्थापितप्राणमजादुग्धे निवेश्य तत्। साध्याशाभिमुखो भूत्वा क्वाथयेत्प्रजपन् मनुम् ॥६२॥
तदानीमानयेत् कामविह्वलां सुरसुन्दरीम्। सामुद्रं रामठं न्यस्य तस्यागारे हरिद्रया ॥६३॥
सिक्थेन मर्दयित्वा तु कृत्वा साध्याकृतिं शुभाम्। श्वेतार्कच्छदयुग्मान्तः सप्राणां सन्निवेश्य ताम् ॥६४॥
दीप्ताग्नौ तापयन् मन्त्रं जपेदष्टसहस्रकम्। क्षणादायाति कामार्ता वाञ्छिता वरवर्णिनी ॥६५॥
नागवल्लीदले क्षौद्रलिप्ते यन्त्रमिदं लिखेत्। साध्यं संस्मृत्य संपूज्य सेरं जप्तं प्रभक्षयेत् ॥६६॥
सीमन्तिनी समायाति शीघ्रं यौवनगर्विता। पत्रे पुष्पे सुवस्त्रादौ क्षौमे वालिख्य सेरणम् ॥६७॥
यन्त्रमेतत् प्रदातव्यं क्षणादाकृष्टिकारकम्। प्रवाहाभिमुखो वापि सरित्सङ्गमतीरगः ॥६८॥
तर्पयेत् तज्जलैः शुद्धैरष्टोत्तरसहस्रकम्। शतयोजनदूरस्थं साध्यमाकर्षयेद् ध्रुवम् ॥६९॥
बहूदितेन किं वात्र स्मृत्वा यं प्राणिनं जपेत्। मन्त्रमेनं विधानेन हठादाकर्षयेद्धि तम् ॥७०॥ इति।

अथाकृष्टिकरं यन्त्रमित्यादिपूर्ववर्त्मनेत्यन्तस्यायमर्थः—तत्र पूर्वोक्तं यन्त्रमालिख्य तन्मध्यस्थं भूबीजं हित्वा तत्स्थाने मायाबीजं विलिख्य तन्मध्ये प्राग्वद्गणपतिबीजमालिख्य हुंकारादिगंबीजरहितैरवशिष्टवर्णैः प्रागुक्तसाध्य-नामवेष्टनस्थाने संवेष्ट्य मायाबीजैश्च वेष्टयेत्। अत्र मायाबीजवेष्टनं वृत्तान्तराले ज्ञेयं, तेन कर्णिकाभ्यन्तरे वृत्तद्वये

ज्ञेयम्। ततोऽष्टदलेषु प्रतिदलं आंक्रों इति पाशाङ्कुशबीजे विलिख्य, दिग्दलाग्रेषु (वमिति, कोणपत्रेषु) ठमिति च विलिख्य, प्राग्वदष्टकोणं कृत्वा तस्य पूर्वदिग्गतकोणे द्रां, दक्षिणे द्रीं, पश्चिमे क्लीं, उत्तरे ब्लूं, इति। विदिग्गतकोणेषु चतुर्ष्वपि सः इति विलिख्याष्टकोणाग्रेषु त्रिशूलानि कृत्वा तेषु शूलेषु हुंकारमालिख्य, तद्बहिरर्धचन्द्रद्वयेन संपुटितेन संवेष्ट्य तत्कोणेषु मायाबीजं विलिखेत्। अत्र कोणशब्देनार्धचन्द्रद्वयस्याग्रचतुष्टयं गृह्यते, तस्याग्नेयादिकोण-चतुष्टयस्थितत्वात्। तत्र प्राग्वद् गुलिकीकृत्य हरिद्रारचितगणेशकुक्षिगतं समीरं स्थापयेत् प्राणप्रतिष्ठां कुर्यान्मूर्तेरिति शेषः। चक्रिहस्तमृदा कुलालहस्तमृत्तिकया। अन्यत्रान्यतमे। सामुद्रं लवणं। रामठं हिङ्गुः। तस्यागारे गणेशागारे। सिक्थेन मधूच्छिष्टेन। सेरं सप्राणं कृतप्राणप्रतिष्ठमित्यर्थः। जप्तमभिमन्त्रितम्।

गणेश का आकर्षण यन्त्र—उपर्युक्त आधार पर यथोक्त द्रव्य से अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका के मध्य में दो वृत्त बनाने मध्य में ह्रीं लिखे। उसके मध्य में 'गं' लिखे। हुं गं को छोड़कर शेष वर्णों में वेष्टित करे। उसे 'ह्रीं' से वृत्तों के अन्तराल में वेष्टित करे। तब अष्टदल के दलों में से प्रत्येक दल में 'आं क्रों' लिखे। पूर्वादि दलों के अग्रभाग में वं लिखे। कोणपत्रों में रं लिखे। इसके बाहर पूर्ववत् अष्टकोण बनाकर उसके पूर्व दिशा के कोण में द्रां, दक्षिण में द्रीं, पश्चिम में क्लीं, उत्तर में ब्लूं लिखे। आग्नेयादि कोणदलों में सः लिखे। अष्टकोण के कोणाग्रों में त्रिशूल बनावे। उन त्रिशूलों में हुं लिखे। उसके बाहर दो अर्द्धचन्द्रों से वेष्टित ह्रीं लिखे। इसे पूर्ववत् गोली बनाकर हल्दी से निर्मित गणेश की कुक्षि में स्थापित करे। मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा करे। जप से अभिमन्त्रित करे, पूजा करे। कुम्हार के हाथ की मिट्टी और गणेश मन्दिर की मिट्टी से निर्मित दो कसोरों को यन्त्र के दोनों तरफ रखकर उसमें गणेश का पूजन लाल फूलों से करे। पूर्वोक्त प्रकार की बलि पूर्वोक्त विधि से प्रदान करे। मन्त्र के 'सर्वजन' के स्थान में साध्य नाम जोड़कर जप करे। उसके साथ 'स्तम्भय स्तम्भय' और 'आकर्षय आकर्षय' लगाकर जप करे। साध्य की ओर मुख करके एक हजार आठ जप करे। बलि देकर गणेश की पूजा चन्दनादि से करे। दूसरे कसोरे से उसे ढक दे। सात दिनों तक इसी प्रकार करे तो साधक के समीप वांछित साध्य आ जाता है।

राजा, राजकुमार, रानी, वारांगना, अमात्य, वेश्या के साथ-साथ देवकन्या भी साधक के समीप चली आती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। इस यन्त्र को गुड़ के घोल से ताडपत्र पर लिखकर प्राण-प्रतिष्ठा करके बकरी के दूध में रख दे। साध्य की ओर मुख करके मन्त्रजप करते हुये इसका क्वाथ बनाने। इससे उसी समय देवसुन्दरी कामविह्वल होकर आ जाती है। समुद्री नमक एवं हिंग को गणेश मन्दिर में हल्दी और मोम में मिलाकर मर्दन करके साध्य की मूर्ति बनाने। श्वेतार्क के दो डण्ठल को उसमें प्रविष्ट कराकर दीप्त अग्नि में तपाते हुये एक हजार आठ जप करे। ऐसा करने से क्षण भर में वाञ्छित वरवर्णिनी कामविह्वल होकर साधक के पास आ जाती है।

पान के पत्ते पर मधु का लेप लगाकर यह यन्त्र अंकित करे। साध्य का स्मरण करके उसकी प्राण-प्रतिष्ठा कर पूजा करके अभिमन्त्रित कर खा जाय। इससे यौवनगर्विता सीमन्तिनी शीघ्रता से साधक पास आ जाती है। पत्र, पुष्प, रेशमी वस्त्र पर यन्त्र लिखकर प्राण-प्रतिष्ठा करके यह यन्त्र जिसे दिया जाता है, वह क्षणमात्र में आकर्षित हो जाता है। नदी जल के प्रवाह की ओर मुख करके या दो नदियों के संगम में शुद्ध जल से एक हजार आठ तर्पण करे तो सौ योजन = १२०० किलोमीटर दूर रहने वाला साध्य भी आकर्षित होकर साधक के पास चला आता है। बहुत क्या कहा जाय, जिसका स्मरण करके इस मन्त्र का विधिवत् जप किया जाता है उसका अचानक आकर्षण होता है।

वश्ययन्त्रसाधनादि

तथा—

अथो वदामि वश्यार्थे यन्त्रसाधनमुत्तमम्। यन्त्रं संलिख्य पूर्वोक्तं स्मरमध्ये गणाधिपम्॥१॥
बहिः शिष्टैर्मन्त्रवर्णैः कामेनापि प्रवेष्टयेत्। शेषमाकर्ष्ययन्त्रेण समानं परिकल्पयेत्॥२॥
निशाशोधनमप्यत्र कुर्यादीरितवर्त्मना। हरिद्रायाश्चतुर्थांशमितेनेक्षुरसेन हि॥३॥
सामुद्रं रोचनां क्षौद्रं पिष्ट्वा संलिप्य सत्पटे। लिखेद्वश्याभिधं यन्त्रं सम्यक् कृत्वा निवेशयेत्॥४॥

अस्यार्थः—पूर्वोक्तं यन्त्रं विलिख्य तन्मध्यस्थं मायाबीजमपास्य तत्स्थाने कामबीजं तदुदरे गणपतिबीजं विलिख्य, तत् प्राग्वदवशिष्टैर्मन्त्रवर्णैः कामबीजेन चावेष्ट्य शेषमाकर्षयन्त्रवत् कुर्यादिति। तथा—

पूर्ववत् कृतविघ्नेशकुक्षिमध्ये निवेश्य तत्। विधिना स्थापितप्राणं शरावे न्यस्य तं यजेत् ॥५॥
रक्तमाल्यानुलेपाद्यैर्नैवेद्यैः पूर्ववत् कृतैः। मनौ साध्याभिधां दत्त्वा स्थाने पूर्वसमीरिते ॥६॥
वशमानययुग्मं च जपेदष्टसहस्रकम्। साध्यदिक्संमुखो भूत्वा मन्त्रं मन्त्री समाहितः ॥७॥

अष्टसहस्रमष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः।

विघ्नेशाय बलिं दत्त्वा च्छादयेत्तं च पूर्ववत्। एवं प्रतिदिनं कुर्वन् सप्तभिर्दिवसैर्बुधः ॥८॥
रक्षोभूतपिशाचाद्यान् देवदानवपन्नगान्। राजानं मन्त्रिणं राज्ञां स्त्रीगणं चेष्टमानुषम् ॥९॥
वशयेत् साधकः शीघ्रं यावज्जीवं न संशयः। निशांशेनावशिष्टेन निजदेहं विलिम्पयेत् ॥१०॥
अचलां कमलां लब्ध्वा वशयेद्विश्वमञ्जसा। हरिद्रांशसमं चूर्णं शालितण्डुलसम्भवम् ॥११॥
तत्समेन गुडेनापि मधुना सैन्धवेन च। संमिश्र्य मर्दयित्वा च पिण्डाकारं पचेद् घृते ॥१२॥
निर्माय गणपं तेन यन्त्रं तद्धृदि निःक्षिपेत्। समीरं च प्रतिष्ठाप्य गन्धाद्यैः पूर्ववद्यजेत् ॥१३॥
त्रिदिनं पूजयित्वेत्थं यन्त्रं मध्यात् पृथङ् नयेत्। प्रतिमां भक्षयेत् पश्चात् साध्यो वश्यो भवेद् ध्रुवम् ॥१४॥
शालिपिष्टादिपिण्डेन कृत्वा साध्याकृतिं शुभाम्। अष्टाधिकं शतं जप्त्वा पूजितां स्थापितानिलाम् ॥१५॥
निवेद्य विघ्नराजाय साध्यं संस्मृत्य भक्षयेत्। वशयेद्वाञ्छितं साध्यं सदा सर्वस्वदायिनम् ॥१६॥
वश्ययन्त्रं लिखेन्मन्त्री खानपानादिवस्तुषु। सेरं कृत्वा जपेन्मन्त्री सहस्रं साष्टकं बुधः ॥१७॥
भक्षणाद्वशयेत् साध्यवस्तुमात्रस्य साधकः। चन्दनागरुकर्पूरनिशाकुङ्कुमरोचनाः ॥१८॥
मृगेभमदसंयुक्ता अष्टाङ्गं विघ्ननाशनम्। संपिष्य तद्वशीकारयन्त्रमालिख्य पूर्ववत् ॥१९॥
प्रतिमां पूर्ववत् कृत्वा जप्त्वा चाष्टोत्तरं शतम्। लिम्पेदनेन गात्रं स्वं कुर्वीतास्य विशेषकम् ॥२०॥
ईक्षणात् स्पर्शनादेव त्रिलोकीं वशमानयेत्। एवं कृते नरं नारी वशयेद्योषितं पुमान् ॥२१॥
चन्दनेनैव वा कुर्याद्विधिमेनं फलाप्तये। द्विरेफश्च सदाभद्रा मुसली चेन्द्रवारुणी ॥२२॥
भूपद्मं श्रीफलं विष्णुक्रान्ता हस्ती च वन्दिनी। वाराही शतवीर्य्या च मायूरी चन्द्ररोचने ॥२३॥
सर्वमिक्षुरसेनैव निशाभागार्धसंयुतम्। पिष्ट्वा वश्याभिधं यन्त्रं निर्माय प्रतिमामपि ॥२४॥
प्राणसंस्थापनं कृत्वा जपेदष्टसहस्रकम्। शिष्टद्रव्येण तिलकं कुर्यात् प्रातस्तु यो नरः ॥२५॥
त्रैलोक्यं संपदा लक्ष्म्या तिरस्कुर्याद्धनाधिपम्। कपिलागोमयं व्योम्नि पद्मिनीदलसंपुटे ॥२६॥
आदाय ब्रह्मचर्येण भेषजैरुदितैः समम्। पञ्चगव्येन संमर्द्य पिण्डाकारं प्रकल्पयेत् ॥२७॥
शुष्कं दहेच्छतं हुत्वा बिल्वकाष्ठैधितेऽनले। समुद्धृत्य च तद्भस्म तन्मध्ये यन्त्रमालिखेत् ॥२८॥
समीरणं प्रतिष्ठाप्य गणपं तत्र पूजयेत्। अष्टाधिकं शतं मन्त्रं जपित्वा श्रीफलान्तरे ॥२९॥
काञ्चने रूप्यरचिते पत्रे कांस्यमयेऽथवा। निधाय धारयेद्भस्म ललाटादिषु साधकः ॥३०॥
कान्तिपुष्टिधनारोग्यपुत्रपौत्रयशःपशून्। लब्ध्वा लोकप्रियो भूत्वा दीर्घजीवी भवेद् ध्रुवम् ॥३१॥
पुरोधा नृपतेः रक्षां भस्मना प्रातरन्वहम्। कुर्यादायुष्यवृद्ध्यर्थं यशोविजयसंपदे ॥३२॥
तस्मै निष्कत्रयं नित्यं नृपो दद्यात् पुरोधसे। रक्ताम्बरः सुवर्त्यन्तः प्रोक्तभेषजचूर्णकम् ॥३३॥
निधाय कपिलाज्येन तद्वर्त्या नृकपालके। दीपं प्रज्वाल्य तेनैव जपेन्मन्त्रं सुसंयतः ॥३४॥
गृहीत्वा कज्जलं जप्तमष्टोत्तरशतं शुभम्। नेत्रयोरन्वहं दद्याद् युवा वा युवती च या ॥३५॥
दृष्टिमात्रेण वशयेन्निखिलं विश्वमञ्जसा। उक्तौषधीनां गुटिकां पिष्ट्वा चन्दनवारिणा ॥३६॥
अभिमन्त्र्य तु या योषा तिलकं प्रकरोति सा। सर्वलोकप्रिया भूयादङ्गस्पर्शान्निजं पतिम् ॥३७॥

आज्ञानुवर्तिनं कुर्याद्यावज्जीवं न संशयः। शुद्धया निशया कृत्वा विघ्नेशं प्रोक्तलक्षणम् ॥३८॥
चन्द्रोपरागसमये सेरं जप्त्वा सहस्रकम्। अष्टाधिकं समभ्यर्च्य चन्दनादिभिरादरात् ॥३९॥
शिखायां प्रोद्वहेन्नित्यं सर्वतो जयमाप्नुयात्। संग्रामे विपिने दुष्टश्वापदोत्थभये परे ॥४०॥
आपणे व्यवहारे च द्यूते वादे महार्णवे। पाटच्चरसमूहेषु सभायां शत्रुसङ्कटे ॥४१॥
विजयी जायते धीरः कृतकृत्यो निवर्तते। वराङ्गनावृन्दमध्ये शोभते मन्मथो यथा ॥४२॥
नागवल्लीदले यन्त्रं लिखित्वा रात्रिवारिणा। सप्राणमर्चितं जप्तमष्टोत्तरसहस्रतः ॥४३॥
अशितं वाञ्छितं साध्यं वश्यं नयति तत्क्षणात्। गोदुग्धे ससिते मन्त्री क्वथिते सुदृढीकृते ॥४४॥
यन्त्रं विलिख्य तेनैव निर्माय गणनायकम्। अभिमन्त्र्य शतं साग्रं भक्षयेद् वशयेज्जगत् ॥४५॥
नारिकेलगुडोपेतं चूर्णितं त्रिफलं हुनेत्। अन्वहं कृतसंपातमष्टाधिकशतं बुधः ॥४६॥
संपातं भक्षयेद्यस्तु वशमायाति सोऽचिरात्। किं बहूक्तेन मन्त्रज्ञः साध्यं सञ्चिन्तयन् मनुम् ॥४७॥
जपेत् स दासतां याति यावदायुर्न संशयः। इति।

अत्र विषमपदव्याख्या—पूर्वसमीरिते स्थाने सर्वजनमिति स्थाने। मनौ सर्वजनपदस्थाने साध्याभिधा। स्तम्भयेति पदस्थाने वशमानययुग्मं च दत्त्वा जपेदित्यर्थः। तद्धृदि गणेशहृदि। स्थापितानिलं कृतसाध्यप्राणप्रतिष्ठं। साध्यप्राणप्रतिष्ठाप्रकारस्तु प्रागेवोक्तः। अस्य द्रव्याष्टकस्य, विशेषकस्तिलकम्। द्विरेफो भृङ्गराजः। सदाभद्रा मुस्ता। मुसली तालमूलिका। वन्दिनी लज्जालुका। शतवीर्या दूर्वा। मायूरी अपामार्गः। चन्द्रः कर्पूरं। उदितैर्भेष-जैर्द्विरेफादिभिः। रात्रिवारिणा हरिद्रोदकेनेति।

वश्य यन्त्र-साधन—अब मैं उत्तम वशीकरण यन्त्र को कहता हूँ। पूर्वोक्त यन्त्र बनाकर उसके मध्य में 'क्लीं' के गर्भ में 'गं' लिखे। उसे मन्त्र के शेष अक्षरों के साथ 'क्लीं' से वेष्टित करे। उपरोक्त यन्त्र के शेष भागों को पूर्व आकर्षण यन्त्र के समान बनावे। पूर्वोक्त विधि से हल्दी-शोधन करे। हल्दी का चतुर्थांश ईखरस मिलावे। समुद्री नमक गोरोचन मधु को पीस कर वस्त्र पर लेप करे। उस वस्त्र पर सम्यक् रूप से यन्त्र बनावे। इसे पूर्ववत् निर्मित हरिद्रागणेश की कुक्षि में निवेशित करे। प्राण-प्रतिष्ठा करके पूर्वोक्त प्रकार से निर्मित शराव रखकर पूजा करे। लाल माला, अनुलेपादि एवं पूर्वोक्त नैवेद्य अर्पण करे। मन्त्र के मध्य में 'सर्वजन' के स्थान पर साध्य नाम जोड़कर 'वशमानय वशमानय' लगाकर एक हजार आठ जप साध्य की ओर मुख करके करे। विघ्नेश को बलि देकर पूर्ववत् उसे ढक दे। साधक सात दिनों तक ऐसा करे। इससे राक्षस, भूत, पिशाच, देव, दानव, सर्प, राजा, मन्त्री, रानियाँ, वांछित मनुष्य साधक के वश में आजीवन रहते हैं। मूर्ति-निर्माण से बचे हल्दी से अपने शरीर में लेप लगावे। ऐसा करने से साधक को स्थिर लक्ष्मी प्राप्त होती है और संसार को वह वश में कर लेता है।

हल्दी के बराबर शालि चावल का चूर्ण, उतने ही गुड़, मधु, सेन्धा नमक को मिलाकर मर्दन करे। पिण्ड बनाकर घी में पकावे। उससे गणेश की मूर्ति बनाकर उसके हृदय में यन्त्र को निवेशित करे। प्राण-प्रतिष्ठा करके पूर्ववत् पूजा करे। तीन दिनों तक पूजन करे। इसके बाद मूर्ति में से यन्त्र को बाहर निकाल कर अलग रख दे और उस प्रतिमा का भक्षण करे तो साध्य अवश्य वशीभूत होता है।

शालिपिष्ट पिण्ड से साध्य की प्रतिमा बनाकर एक सौ आठ जप से मन्त्रित करे। स्थापित करके पूजा करे। इसे श्री गणेश को नैवेद्य रूप में अर्पित करे। तदनन्तर साध्य का स्मरण करके उसे खा जाय तो वांछित साध्य साधक के वश में होकर अपना सर्वस्व दे देता है। खाने-पीने के पदार्थों में यन्त्र बनाकर प्राण-प्रतिष्ठा करे। एक हजार आठ मन्त्र जप करे और उसे खा जाय तो साध्य वश में होता है। चन्दन, अगर, कपूर, हल्दी, गोरोचन, कस्तूरी, कुङ्कुम, हाथीमद—इन आठ विघ्न-नाशक वस्तुओं को पीसकर इससे उपर्युक्त वशीकरण यन्त्र पूर्ववत् लिखे। पूर्ववत् प्रतिमा बनाकर एक सौ आठ जप से मन्त्रित करे। इसे सम्पूर्ण शरीर में और विशेष कर अपने मुख में लगाकर जिसकी इच्छा करे या स्पर्श करे तो वह और तीनों लोक वश में होते हैं। ऐसा करने से नर-नारी और योषिताएँ वश में होती हैं। अथवा चन्दन से ऐसा करने पर भी उक्त दोनों प्रकार के फल प्राप्त होते हैं।

भृंगराज, मुस्ता, तालमूली, इन्द्रवारुणी, भूमिकमल, बेल, विष्णुकान्ता, हस्ती, लज्जालु, वाराही, दूर्वा, मायूरी, अपामार्ग, कपूर, गोरोचन में आधा भाग हल्दी मिलाकर ईख के रस में पीसे। इससे वश्य यन्त्र और प्रतिमा बनावे। प्राण-प्रतिष्ठा करके एक हजार आठ जप करे। बचे हुए द्रव्य से जो मनुष्य टीका लगाता है, उसे तीनों लोकों की सम्पदा एवं लक्ष्मी प्राप्त होती है और वह कुबेर से भी बढ़कर धनी हो जाता है।

कपिला गाय का गोबर जमीन पर गिरने के पहले कमल के सम्पुट में लेकर उसी के बराबर उपरोक्त औषधों को पञ्चगव्य में मलकर पिण्ड बनावे। उसे सुखाकर बेल की लकड़ी से ज्वलित आग में जलावे। उस भस्म को लेकर उसके मध्य में उक्त यन्त्र बनावे। उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करके गणेश की पूजा करे। एक सौ आठ मन्त्र जप करे। उस यन्त्र को बेल के अन्दर, सोना-चाँदी या कांस्य पात्र में रखकर साधक अपने ललाटादि में लगावे। इससे कान्ति, पुष्टि, धन, आरोग्य, पुत्र-पौत्र, यश, पशु प्राप्त करके लोकप्रिय होकर साधक दीर्घजीवी होता है। राजपुरोहित राजा की रक्षा के लिये प्रतिदिन प्रातःकाल में इस भस्म का तिलक लगावे। इससे राजा को आयुवृद्धि, यश, विजय, सम्पदा की प्राप्ति होती है। राजा प्रति दिन तीन निष्क अपने पुरोहित को देकर लाल कपड़े की बत्ती में प्रोक्त भेषज चूर्ण रखकर कपिला गाय के घी को नरकपाल में भरकर उसमें बत्ती रखकर दीपक जलावे और एक सौ आठ मन्त्र जपते हुए काजल पारे। उस काजल को रखकर प्रतिदिन अपनी आँखों में लगावे तो उसकी दृष्टिमात्र से युवक-युवती या सारा संसार उसके वश में होता है।

उपरोक्त औषधों की गुटिका को चन्दन जल में घिसकर अभिमन्त्रित करके जो स्त्री तिलक लगाती है, वह सारे संसार की प्रिया होती है। अपने पति को स्पर्श करे तो पति की प्रिया होती है और उसका पति आजीवन उसकी आज्ञा के अनुसार कार्य करता है।

शुद्ध हल्दी से प्रोक्त लक्षण की गणेश मूर्ति बनाकर चन्द्रग्रहण के समय प्राणप्रनिष्ठा करके एक हजार आठ जप से मन्त्रित करे। गन्ध-पुष्पादि से पूजा करके शिखा में धारण करे तो साधक सर्वत्र विजयी होता है। युद्ध में, जंगल में, बाघ के होने पर, व्यापार-व्यवहार में, जूआ में, महासागर में, चोर-लुटेरों के समूह में, सभा में, शत्रुसंकट में उसकी जीत होती है और वह कृत-कृत्य होता है। सुन्दरियों के झुण्ड में कामदेव के समान होता है।

पान के पत्ते पर हल्दी के घोल से यन्त्र लिखकर प्राण-प्रतिष्ठा करके पूजा करे। एक हजार आठ मन्त्रजप से अभिमन्त्रित करे तो तत्क्षण साध्य वशीभूत होता है। गाय के दूध में शक्कर मिलाकर उसमें उपरोक्त औषधियों से क्वाथ बनाकर उसे सुदृढ़ करे। उसमें यन्त्र लिखे और उसी से गणेश की प्रतिमा बनावे। एक सौ आठ जप से मन्त्रित करे और उसे खा जाय तो सारे संसार को वश में कर लेता है।

नारियलखण्डों में गुड़ और त्रिफलाचूर्ण मिलाकर प्रतिदिन एक सौ आठ हवन के साथ घृत सम्पात करे। उस सम्पतित घी का भक्षण करे तो थोड़े ही समय में साध्य वश में हो जाता है। बहुत क्या कहा जाय, मन्त्रज्ञ साध्य का चिन्तन करते हुए मन्त्र जप करे तो साध्य आजीवन वश में रहता है, इसमें संशय नहीं है।

उच्चाटनयन्त्रसाधनादि

तथा—

उच्चाटनं ततो यन्त्रं कथयामि समासतः। उक्तरीत्या लिखेद्यन्त्रं ससाध्यं वर्ममध्यगम्॥१॥
तदन्तर्मारुतं बीजं गाणपत्यं तदन्तरे। प्राणबीजं च पत्रेषु वामकर्णं तदग्रतः॥२॥
तद्बहिर्वसुकोणाग्रशूलेषु कवचं लिखेत्। वायुना वेष्टितं पश्चात् षड्बिन्दुगतवायुना॥३॥
प्रेतवस्त्रे तदालिख्य निशालेपनपूर्वकम्। श्मशानाङ्गारसारेण ध्वाङ्क्षपक्षशलाकया॥४॥
यन्त्रमेतत् समालिख्य स्थापयेदीरणं ततः। पिचुमन्दस्थितं ध्वाङ्क्षगृहकाष्ठद्वयं ततः॥५॥
श्मशानवह्नौ संदह्य भस्मादाय तदुद्भवम्। विघ्नाधीशगृहद्वाःस्थशर्करारजसा युतम्॥६॥
यन्त्रमध्ये प्रविन्यस्य सेरं तद्गुलिकीकृतम्। शवालिप्तनिशाभागं चिताभस्मास्थिनी सदा॥७॥

सर्षपं च चिताङ्गारं कपिकच्छूं च वानरीम्। संपिष्योन्मत्तसारेण निर्माय गणपाकृतिम् ॥८॥
तत्तुन्दमध्यगं कृत्वा पुनः प्राणान् प्रतिष्ठयेत्। चक्रिहस्तमृदा चैव साध्यपादोत्थपांसुना ॥९॥
शरावयुगलं मन्त्री निर्मायान्यत्र चोभयोः। आम्बिकेयं प्रविन्यस्य कृष्णपुष्पैः समर्चयेत् ॥१०॥
मनावुच्चाटय-द्वन्द्वं संयोज्य प्रजपेन्मनुम्। अष्टोत्तरसहस्रं हि च्छादयित्वाऽपरेण तम् ॥११॥
निखन्य वैरिणो द्वारि मासेनोच्चाटयेद्धि तम्। सप्तिपस्यालये वैरिसदनेऽपि रणाङ्गणे ॥१२॥
स्थापिते गणपे मासादुच्चाटो जायते ध्रुवम्। म्रियन्ते वा ज्वरार्तास्ते प्राणिनो भयविह्वलाः ॥१३॥
चतुष्पथेऽथ वल्मीके चत्वरे द्रुमकोटरे। स्थापनाद्विघ्नराजस्य शत्रुरुच्चाटितो भवेत् ॥१४॥
विघ्नेशतुन्दगं भस्म विन्यसेद्यस्य मस्तके। भ्रमते काकवत् सोऽपि गतो देशेष्वनिश्चलः ॥१५॥
आसने शयने याने पथि शत्रोर्गजालये। भस्मक्षेपान्मृतिस्तत्र भवत्येव च नान्यथा ॥१६॥ इति।

अयमर्थः—पूर्वोक्तं यन्त्रमालिख्य तन्मध्ये हुंबीजं विलिख्य, तदन्तर्यमिति वायुबीजमालिख्य, तदन्तर्गमिति गणपतिबीजमालिख्य, तन्मध्ये साध्यनाम लिखित्वा, पत्रेषु यमित्यालिख्य, दलाग्रेषु ईमिति विलिख्य, तद्बहिरष्टकोणाग्रगतशूलेषु हुमित्यालिख्य, बहिः षड्बिन्दुलाञ्छितवृत्ताकारेण वायुमण्डलेन संवेष्ट्य तस्य षड्बिन्दुस्थानेषु यमिति वायुबीजं लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। प्रेतवस्त्रे प्रेतत्यक्तवस्त्रे। अङ्गारसारः कोइला इति प्रसिद्धः। ध्वाङ्क्षः काकः। ईरणं प्राणं। पिचुमन्दो निम्बवृक्षः। शर्करा कर्करः। शवालिप्तनिशाभागं शवस्य चर्चितं हरिद्रांशं। सर्षपं 'श्वेतसर्षपमेव चे'ति तन्त्रान्तरात्। उन्मत्तसारो धत्तूररसः। वानरी लताविशेषः। तुन्दः कुक्षिः। आम्बिकेयं गणेशं। उच्चाटयद्वन्द्वं स्तम्भयपदमपास्येति शेषः। सप्तिरश्वः इति।

उच्चाटन यन्त्र-साधन—अब समासत: उच्चाटन यन्त्र को बतलाता हूँ। उपरोक्त रीति से अष्टदल यन्त्र बनाकर उसके मध्य में 'हुं' के साथ साध्य नाम लिखे। उसके अन्तर में 'आं' लिखे तब 'गं' लिखे। पत्रों में प्राणबीज और पत्राग्रों में 'ईं' लिखे। उसके बाहर अष्टकोण बनाकर कोणाग्रों में त्रिशूल बनावे। त्रिशूलों में 'हुं' लिखे। उसके बाहर छ: बिन्दुओं से युक्त वृत्त बनाकर वायुमण्डल वर्णों से वेष्टित करे। छ: बिन्दु स्थान में यं लिखे। यह यन्त्र श्मशान से प्राप्त वस्त्र पर हल्दी का लेप लगाकर श्मशान के कोयला की स्याही से कौए के पंख की कलम से लिखे। उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करे। नीम के पेड़ पर बने कौए के घोसले से दो लकड़ी लेकर श्मशान की अग्नि में जलावे। उसका भस्म लेकर रखे। गणेश मन्दिर के बाहर स्थित होकर भस्म में शक्करचूर्ण मिलावे और उसे यन्त्रमध्य में रखे। उसकी गोली बनाकर उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करे। शव में लगे हल्दी, चिताभस्म-हड्डी, सरसों, चिता, कोयला, कपिकच्छू एवं वानरी को धत्तूर के रस में पीसकर गणेश की मूर्ति बनावे। मूर्ति के शुण्ड को उसके मध्य में करे और फिर से प्राणप्रतिष्ठा करे। कुम्हार के हाथ की मिट्टी साध्य के पैर की धूलि से दो शराव बनाकर उनमें से एक में गणेश मूर्ति को रखे। काले फूलों से पूजा करे। मन्त्र में उच्चाटय उच्चाटय जोड़कर एक हजार आठ जप करे। दूसरे शराब से उसे ढक दे और वैरी के दरवाजे पर गाड़ दे तो एक महीने में वैरी का उच्चाटन होता है। वह बुखार से मर जाता है या भय से विह्वल रहता है। चौराहे पर, दीमक के घर में या पेड़ के खोढर में विघ्नराज को स्थापित करने से शत्रु का उच्चाटन होता है। विघ्नेश के शुण्ड पर लगे भस्म को लेकर वैरी के मस्तक पर छिड़क दे तो वह कौए के समान भ्रमण करते हुए देश से बाहर चला जाता है। वैरी के आसन पर, शय्या पर, रास्ते में, हथसार में भस्म को छींट देने से उनकी मृत्यु हो जाती है।

विद्वेषणयन्त्रसाधनादि

तथा—

अथ वक्ष्ये समासेन यन्त्रं विद्वेषणाह्वयम्। यन्त्रे पूर्वोदिते वह्निवायुबीजं प्रविन्यसेत् ॥१॥
वसुपत्रेषु रंवर्णं फट्कारं विलिखेत्ततः। अष्टशूलेषु हुंकारं व्योम्ना बाह्ये प्रवेष्टयेत् ॥२॥
निशातुर्यांशमानेन मरिचं निम्बमेव च। तन्तिडीं द्विगुणां पिष्ट्वा हेमपत्राम्बुना ततः ॥३॥
मृतकर्पटके लिप्त्वा द्वेषयन्त्रमिदं लिखेत्। पञ्चाङ्गं पारिभद्रस्य काकनीडं च तद्गतम् ॥४॥

चिताग्नौ संदहेद्भस्म यन्त्रमध्ये निवेशयेत्। संवृत्य विघ्नराजस्य सेरं कुक्षौ विनिक्षिपेत् ॥५॥
शरावान्तरगं विघ्नं पूजयेत् पूर्ववर्त्मना। पिचुमन्दभवैः पत्रैः कृष्णपुष्पैर्निवेद्यकैः ॥६॥
विद्वेषयद्वयं मन्त्री जपेत् संयोज्य साष्टकम्। सहस्रं च शरावेण निखनेच्छादितं ततः ॥७॥
मित्रयोर्विधिनानेन विद्वेषो भवति ध्रुवम्। आदाय गणपं मन्त्री मित्रयोरन्तरा क्षिपेत् ॥८॥
वैरं च जायते क्षिप्रं देहनाशावधि द्वयोः। एतद्यन्त्रगतं भस्म गृहीत्वा पथि विन्यसेत् ॥९॥
गच्छतां पादसंस्पर्शाद्विवादः सुमहान् भवेत्। देशे ग्रामे पुरे यत्र स्थापितो गणपो भवेत् ॥१०॥
तिष्ठतां प्राणिनां तत्र वैरं भवति सर्वदा। पारिभद्रस्य पञ्चाङ्गमेकभागमितं भवेत् ॥११॥
भागैकं मरिचं रात्रिस्तावती त्रितयं त्विदम्। संदह्य भसितं पूर्ववर्त्मना संस्कृतं पुनः ॥१२॥
विकीर्णं वैरिणो मूर्ध्नि कुर्यादुन्मादमूकते। इति।

अस्यार्थः—तत्र पूर्वोक्तं यन्त्रमालिख्य तन्मध्ये रं यं इति विलिख्याष्टसु दलेषु रकारं फट्कारं च विलिख्य, दलाग्रेषु ईंकारं विलिख्याष्टकोणगतशूलाष्टके हुंकारमालिख्य बहिराकाशमण्डलेन वृत्ताकारेण वेष्टयेदिति। पारिभद्रो निम्बः। हेमपत्राम्बु धत्तूररसः। संवृत्य गुलिकीकृत्य। विद्वेषयद्वयमुच्चाटयस्थाने। रात्रिर्हरिद्रा। पूर्ववर्त्मना चिताग्निा इति।

विद्वेषण यन्त्र-साधन—पूर्वोक्त यन्त्र के मध्य में 'यं-रं' लिखे। अष्टपत्रों में 'रं फट्' लिखे। दलाग्रों में 'ईं' लिखे। अष्टकोण के आठ त्रिशूलों में 'हुं' लिखे। इसके बाहर वृत्त बनावे। उसमें आकाशमण्डल के वर्णों को लिखे। हल्दी का चतुर्थांश मरिच, नीम, इमली लेकर उसे दुगुने धत्तूर के रस में पीसे। मिट्टी की कपटी में उसका लेप लगाकर इस विद्वेषण यन्त्र को लिखे। नीम का पञ्चाङ्ग एवं कौए के घोसले की लकड़ी को चिता की अग्नि में जलाकर भस्म ग्रहण करे। उस भस्म को यन्त्र के मध्य में रखे। उसकी गोली बनाकर प्राणप्रतिष्ठित विघ्नराज की कुक्षि में घुसेड़ दे। उस मूर्ति को कपटी में रखकर उसकी पूजा करे। नीम की पत्ती एवं काले फूल को लेकर मन्त्र में 'विद्वेषय विद्वेषय' जोड़कर एक हजार आठ जप करे। शराव से ढककर उसे गाड़ दे। इससे दो मित्रों में वैर हो जाता है। गणेश को लेकर मित्रों के बीच में रख दे तो दो मित्रों में आजीवन वैर रहता है। इस यन्त्र के भस्म को लेकर मित्रों के रास्ते में छिड़क दे तो उनके पैरों में भस्म लगते ही महान वैर हो जाता है। देश ग्राम नगर जहाँ भी ये गणेश स्थापित होते हैं, वहाँ पर रहने वालों में परस्पर वैर रहता है। नीम के पञ्चाङ्ग का एक भाग, एक भाग मरिच, तीन भाग हल्दी को जलाकर भस्म बनावे एवं उसे पूर्ववत् संस्कृत करे। वैरियों के माथे पर इसे छिड़क देने पर वे उन्मादग्रस्त होकर गूंगे हो जाते हैं।

मारणयन्त्रसाधनादि

तथा—

सांप्रतं मारणं यन्त्रं प्रवदामि यथाक्रमम्। यन्त्रं विरच्य पूर्वोक्तं वर्म मध्ये निवेशयेत् ॥१॥
मायाविघ्नेशबीजे द्वे तन्मध्येऽपि समालिखेत्। तद्बाह्येऽप्युक्तरीत्यैव वर्णानग्निगतांल्लिखेत् ॥२॥
आशुशुक्षणिबीजं च धरासंपुटकोणगम्। मस्तकेष्वस्त्रबीजानि वह्निं शूलेषु वर्मकम् ॥३॥
तद्बहिर्वह्निकोणेषु वह्निबीजं समालिखेत्। निशां शुद्धां समालिप्य मृतकर्पटके शुभे ॥४॥
चिताङ्गारास्थिनिर्यासैः काकपक्षशलाकया। यथोक्तं विलिखेद् यन्त्रमेतन्मारणनामकम् ॥५॥
कणारामठशुण्ठ्याख्यानिशामरिचसद्वचाः । स्नुहीक्षीरेण संपिष्य लिप्त्वा शावपटेऽथवा ॥६॥
कारस्करस्य पञ्चाङ्गै रजनीं जम्बुकासृजा। पिष्ट्वाथ कर्पटे शावे लिप्त्वा शेषं पुरोक्तवत् ॥७॥
समीरं च प्रतिष्ठाप्य कृत्वा गणपतिं ततः। यन्त्रं तद्धृदये न्यस्य पुनः प्राणान् प्रतिष्ठयेत् ॥८॥
मातृसद्मसमुद्भूतां गणेशागारमृत्तिकाम्। निम्बमूलमृदं वापि कर्कन्धूमूलसंभवाम् ॥९॥
श्मशानमृत्तिकां तद्वत् करवीरद्रुमूलजाम्। कुम्भकारकरस्पृष्टामूषरस्थानजां मृदम् ॥१०॥
पिष्ट्वा शरावयुगलं कृत्वा चान्यत्र चोभयोः। यन्त्राढ्यं गणपं न्यस्य कृष्णपुष्पैः समर्चयेत् ॥११॥

कारस्करभवैः पत्रैर्नैवेद्यैश्च यथा पुरा। उक्तमन्त्रपदस्थाने साध्यनाम निवेश्य हि ॥१२॥
मारयद्वयशब्दं च सहस्रं साष्टकं जपेत्। दक्षिणाशामुखो भूत्वा रजन्यां भूतवासरे ॥१३॥
चत्वरे पितृभूमौ वा मातृविघ्नगृहेऽथवा। वल्मीके कोटरे वापि कारस्करतरूद्भवे ॥१४॥
पिधायान्यशरावेण निखन्य बलिमाहरेत्। साध्यो यमपुरं याति सप्ताहाज्ज्वरपीडितः ॥१५॥
अमोघवीर्यमेतद्धि विधानं भुवि दुर्लभम्। भूदेवव्यतिरिक्तेषु राजावैरिषु योजयेत् ॥१६॥
नृपोऽपि कारयेद्यः स कर्तारं तोषयेद्धनैः। कर्तापि तद्दशांशेन प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥१७॥
हरिद्राविघ्नमन्त्रस्य साङ्गोपाङ्गविधानकम्। निरूपितं यथाशास्त्रं गोपनीयं सदा बुधैः ॥१८॥
दातव्यं पुत्रकल्पाय शिष्याय स्थिरचेतसे। चित्तवाक्कायवसुभिर्गुरुशुश्रूषकाय च ॥१९॥
श्रद्धाहीनाय दुष्टाय नैव देयं कदाचन। इति।

अयमर्थः—तत्र पूर्वोक्तप्रकारेण यन्त्रं विलिख्य मध्ये हुंकारं विलिख्य, तस्योदरे शक्तिबीजं गणपतिबीजं च विलिख्य, दलेषु रमित्यालिख्य, बहिरष्टकोणं कृत्वा तत्कोणेषु रमित्यालिख्य, कोणाग्रेषु फट्कारमालिख्य तदग्रगतशूलेषु हुंकारं विलिख्य, तन्मध्ये रमिति वह्निबीजं विलिख्य तद्बहिस्त्रिकोणं विलिख्य तत्कोणेषु रमित्यालिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। चिताङ्गारास्थिनिर्यासश्चितास्थिगलितो द्रवः। कणा पिप्पली। रामठं हिङ्गुः। स्नुही सेहुंड इति कान्यकुब्जभाषया नाम। स्तम्भयपदस्थाने मारयेति च। भूतवासरे चतुर्दश्यां। कोटरे कारस्करस्य। कारस्करोऽपि विषवृक्षो यस्य बीजं कुचिला इति प्रसिद्धम्।

मारण यन्त्र—मारण यन्त्र बनाने का क्रम यह है कि पूर्वोक्त यन्त्र बनाकर उसके मध्य में कवच बीज 'हुं' लिखे। उसके मध्य में ह्रीं गं लिखे। दलों में 'रं' लिखे। इसके बाहर अष्टकोण बनाकर कोणों में 'रं' लिखे। कोणाग्रों में 'फट्' लिखे। कोणाग्रों के त्रिशूलों में 'हुं' लिखे। उसके बाहर त्रिकोण बनाकर उसके कोणों में 'रं' लिखे।

मिट्टी की कपटी में शुद्ध हल्दी का लेप लगावे। चिता की हड्डी से निकले द्रव से काकपक्ष की लेखनी से यथोक्त मारण यन्त्र लिखे। पिप्पली, हिंग, सोंठ, हल्दी, मरिच, वच को सेहुंड के दूध में पीसकर श्मशान वस्त्र पर लेप लगावे। अथवा कारस्कर पञ्चाङ्ग हल्दी सियार के विष्टा को पीसकर श्मशान की कपटी में लेप लगाकर शेष पूर्ववत् करे। इस कपटी में यन्त्र लिखकर उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करे। इस यन्त्र को गणपति के हृदय में रखे। पुनः प्राण-प्रतिष्ठा करे। देवी मन्दिर या गणेश मन्दिर की मिट्टी या नीममूल की मिट्टी या कर्कन्धू मूल की मिट्टी या श्मशान की मिट्टी या कैनेल के जड़ की मिट्टी या कुम्हार के हाथ की मिट्टी को गूँथ कर दो कपटी बनावे। उनमें यन्त्र और गणेश को रखकर काले फूलों और कारस्कर पत्रों से पूजा करे। पूर्वोक्त नैवेद्य चढ़ावे। उक्त मन्त्र में 'अमुकं मारय मारय' जोड़कर एक हजार आठ जप करे। चतुर्दशी तिथि की रात में दक्षिणमुख होकर चौराहे पर श्मशान में, देवी या गणेश मन्दिर में या दीमक के बिल में या कारस्कर वृक्ष के खोढर में कपटी में बलि द्रव्य देकर उसे गाड़ दे। इससे एक सप्ताह में साध्य बुखार से मर जाता है। यह अमोघ वीर्य विधान संरार में दुर्लभ है। ब्राह्मणव्यतिरिक्त राजा के वैरी को जोड़कर जप करे। राजा यदि ब्राह्मण से यह क्रिया करवाता है, तो क्रिया करने वाले को धनादि से सन्तुष्ट करे। कर्ता भी प्राप्त धन का दशांश प्रायश्चित्र में लगावे। हरिद्रा गणपति का साङ्गोपाङ्ग विधान यथाशास्त्र निरूपित किया गया। विद्वान् इसे गुप्त रखे। स्थिर चित्त पुत्र या शिष्य को ही इसे बतलाना चाहिये। जो शिष्य तन-मन धन से गुरुसेवा में लगा रहता है, उसे ही इसे बतलावे। श्रद्धारहित दुष्ट को कदापि न बतलावे।

सप्रयोगः वक्रतुण्डमन्त्रः

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

वक्रतुण्डगणेशस्य मनुं वक्ष्ये यथाविधि। सर्वपापक्षयकरं सर्वसौभाग्यदायकम् ॥१॥
राज्यवश्यकरं पुंसां वन्ध्यानां पुत्रदायकम्। अमृतं चतुरास्याग्निः कामिका श्रोत्रबिन्दुयुक् ॥२॥
टतृतीयोऽनन्तयुक्तः पवनः कवचं तथा। षडक्षरोऽयमादिष्टो भजतां कामदो मणिः ॥३॥

अमृतं व। चतुरास्यः क अग्नी रेफस्तेन क्र। कामिका त श्रोत्र उ बिन्दुरनुस्वारस्तैः तुं। टतृतीयो ड अनन्त आ तेन डा। पवनो य। कवचं हुं। अत्र केचिद्दीर्घकवचं वदन्ति। 'प्रादुर्बभूव मनसि मन्त्रराजः षडक्षरः। तप्तचामीकरप्रख्यो वक्रतुण्डाय हूमिति' इति वक्रतुण्डकल्पवचनात्। 'वक्रतुण्डाय कवचं दीर्घमेव षडक्षरः' इति गणेश्वरपरामर्शिनी-वचनाच्च। तथा—

भार्गवो मुनिराख्यातश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्। देवता वक्रतुण्डोऽस्य सुरासुरनमस्कृतः ॥४॥
विधाय मूलमन्त्रेण करशुद्धिं जितेन्द्रियः। षड्भिर्मन्त्रगतैर्वर्णैः षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥५॥
भ्रूमध्यकण्ठहृदयनाभ्यन्ध्वाधारके क्रमात्। षडक्षराण्यणोर्न्यस्येत् सर्वाङ्गे व्यापकं ततः ॥६॥
विधाय देवं हृदये ध्यायेदेकाग्रचेतसा।
रम्योद्भिन्नारुणतरमणिव्रातसंशोभिकान्तिं संबिभ्राणं करकिसलयैः पाशमप्यङ्कुशाह्वम्।
साभीतीष्टं त्रिनयनयुतं रक्तमाल्यांशुकाढ्यमम्भोजोद्यत्पुटगतममुं संस्मरेद् वक्रतुण्डम् ॥७॥

वामाद्यूर्ध्वयोराद्ये तदाद्यधःस्थयोरन्ये, इत्यायुधध्यानम्। तथा—

पूर्वोक्ते पूजयेत् पीठे वक्रतुण्डं गणेश्वरम्। अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वचतुर्द्वारयुतेन च ॥८॥
चतुरस्रत्रयेणाथ वेष्टितं चक्रमालिखेत्। मध्ये देवं समभ्यर्च्य पुष्पान्तैरुपचारकैः ॥९॥
आदावङ्गानि संपूज्य यथास्थानं विशालधीः। पूर्वादिदलमूलेषु शक्तीरष्टौ क्रमाद्यजेत् ॥१०॥
विद्याख्या विश्वधात्री च भोगदा विघ्नघातिनी। निधिप्रदा च पापघ्नी तथा पुण्या शशिप्रभा ॥११॥
दलेषु च यजेत्तद्वदणिमाद्याः पुरोदिताः। द्वितीयेऽष्टदले तद्वद्वक्रतुण्डादिकान् यजेत् ॥१२॥
चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च पूजयेत्। प्राग्वद् वीथीद्वये सम्यग् वक्रतुण्डार्चनेरिता ॥१३॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वत् प्रातरुत्थानादिषडङ्गपूजान्ते प्रथमाष्टदलेषु ॐ विद्यायै नमः। विश्वधात्र्यै नमः। भोगदायै नमः। विघ्नघातिन्यै नमः। निधिप्रदायै नमः। पापघ्न्यै नमः। पुण्यायै नमः। शशिप्रभायै नमः। ततोऽष्टदल-मध्येषु प्राग्वल्लक्ष्मीगणेशप्रकरणोक्तसिद्ध्यष्टकं संपूज्य, द्वितीयेऽष्टदले प्राग्वदेकाक्षरप्रकरणोक्तवक्रतुण्डादिकान् संपूज्य, लोकपालपूजादि प्राग्वत् सर्वं कुर्यात् इति। तथा—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः। अष्टद्रव्यैः पुरा प्रोक्तैर्मधुराक्तैर्यथाविधि ॥१४॥
तर्पणादि ततः कुर्याद् ब्राह्मणाराधनावधि। एवं सिद्धे मनौ मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत् ॥१५॥
तर्पयेत् पूर्वमार्गेण वक्रतुण्डगणेश्वरम्। चतुरस्रं हस्तमात्रं कुण्डं कुर्यात् तदग्रतः ॥१६॥
आदधीत मथित्वाग्निमनूचानगृहाद् हरेत्। प्राणायामत्रयं कृत्वा मन्त्री कर्म समारभेत् ॥१७॥

पूर्वमार्गेण महागणपतिप्रकरणोक्तप्रकारेण। मथित्वा काष्ठादितः। अनूचानः श्रोत्रियः।

ततः पूर्वोक्तवत् कृत्वा मन्त्रन्यासं षडङ्गकम्। गन्धपुष्पादिकैरग्निं संपूज्य स्थापयेत् ततः ॥१८॥

षडङ्गन्यासं कृत्वा मन्त्रन्यासं कुर्यात्। स्थापयेद् दीक्षोक्तविधिना नित्यहोमविधिना वा। ध्यानम्—

कृशानुमध्ये तत्राथ नागयज्ञोपवीतिनम्। लम्बोदरं भास्वरं तमेकदन्तं त्रिलोचनम् ॥१९॥
पद्मासनसमारूढं चतुर्बाहुं सुवर्णभम्। किरीटहारकेयूराङ्गदालङ्कारभूषितम् ॥२०॥
एवं संचिन्त्य मनसा समावाह्य गणेश्वरम्। गन्धादिभिः समभ्यर्च्य जलेनाग्निं प्रसिच्य च ॥२१॥
षडर्णेन द्विठान्तेन जुहुयाच्च घृताहुतीः। अष्टाधिकं सहस्रं च ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥२२॥

वक्रतुण्ड मन्त्र—अब सर्वपाप-क्षयकर सर्वसौभाग्यदायक वक्रतुण्ड गणेश के मन्त्र को कहता हूँ। यह राजा को वश में करने वाला एवं वन्ध्या को पुत्र देने वाला है। उद्धार करने पर छः अक्षरों का मन्त्र होता है—वक्रतुण्डाय हुं।

इस मन्त्र के ऋषि भार्गव, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता सुरासुरनमस्कृत वक्रतुण्ड हैं। मूल मन्त्र से करशुद्धि करे। मन्त्र के छः वर्णों से षडङ्ग न्यास करे। मन्त्रवर्ण न्यास भ्रूमध्य, कण्ठ, हृदय, नाभि, अध्व, मूलाधार में करे। पूरे मन्त्र से व्यापक न्यास करे तब एकाग्र चित्त से इस प्रकार ध्यान करे—

रम्योद्भिन्नारुणतरमणिव्रातसंशोभिकान्तिं संबिभ्राणं करकिसलयैः पाशमप्यङ्कुशाह्वम्।
साभीतीष्टं त्रिनयनयुतं रक्तमाल्यांशुकाढ्यमम्भोजोद्यत्पुटगतममुं संस्मरेद् वक्रतुण्डम्।।

पूर्वोक्त पीठ पर वक्रतुण्ड गणेश्वर की पूजा करे। दो अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर तीन चतुरस्र बनावे। मध्य में देव का पूजन पुष्पोपचार से करे। तब षडङ्ग पूजा करे। प्रथम अष्टदल मूलों में पूर्वादि क्रम से आठ शक्तियों का पूजन इस प्रकार करे—ॐ विद्यायै नमः, विश्वधात्र्यै नमः, भोगदायै नमः, विघ्नघातिन्यै नमः, निधिप्रदायै नमः, पापघ्न्यै नमः, पुण्यायै नमः, शशिप्रभायै नमः। दलों में पूर्वोक्त अणिमादि अष्ट सिद्धियों की पूजा करे। द्वितीय अष्टदल में उसी प्रकार वक्रतुण्डादि अष्ट गणेशों की पूजा करे। तीन चतुरस्र की दो वीथियों में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि उनके दश आयुधों की पूजा करे।

वर्ण लक्ष अर्थात् छः लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त आठ द्रव्यों से करे। तर्पण-मार्जन-ब्राह्मण भोजन कराये। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध होने पर काम्य कर्मों का साधन करे। पूर्वोक्त विधि से वक्रतुण्ड गणेश्वर का तर्पण करे। उनके आगे हाथ भर का कुण्ड बनावे। अरणिमन्थन से उत्पन्न अग्नि को या श्रोत्रिय वैदिक के गृह की अग्नि को स्थापित करे। तदनन्तर तीन प्राणायाम करके कर्म का प्रारम्भ करे। तब षडङ्ग न्यास करके मन्त्रन्यास करे। गन्ध-पुष्पादि से अग्नि की पूजा करे।

अग्नि के मध्य में नाग का यज्ञोपवीत धारण किये, लम्बी पेट वाले, प्रकाशमान, एक दाँत वाले, तीन नेत्र वाले, किरीट-हार-केयूर एवं अंगद से आभूषित चार भुजाओं वाले, पद्मासन पर आरूढ़ गणेश का चिन्तन करते हुये मनसा आवाहन करे। गन्ध-पुष्पादि से पूजा करे। जल से अग्नि का सेचन करे। 'वक्रतुण्डाय हुं स्वाहा' मन्त्र से एक हजार आठ घृताहुति डाले। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध होता है।

काम्यहोमविधानम्

सहस्राष्टं चतुर्थीषु पक्षयोरुभयोर्जपेत्। शतं हुनेदपूपैश्च वत्सराल्लभते धनम्।।२३।।
सहस्राष्टं साष्टसहस्रमित्यर्थः।

मध्याह्नकाले नित्यं हि तदग्रे प्रजपेन्मनुम्। सहस्रं त्रिशतं वाथ शतं चाष्टोत्तरं सुधीः।।२४।।
अष्टोत्तरमिति स्थानत्रयेऽप्यन्वेति।

अचिरेणैव महतीं लक्ष्मीं प्राप्नोत्ययत्नतः। प्रसन्नतात्र मनसस्तुष्टिरल्पाशिता तथा।।२५।।
स्वापवैमुख्यता चापि स्वप्ने द्विरददर्शनम्। एतानि मन्त्रसिद्धेर्हि चिह्नान्युक्तानि मन्त्रिभिः।।२६।।
पूर्वोक्तसिद्धौदनेन त्रिमासं त्रिशतं हुनेत्। महानिधीनां भवनं भवेद्वैश्रवणोऽपरः।।२७।।
गुडाक्तैः पृथुकैर्नारिकेलैर्मरिचसंयुतैः। अग्नौ सहस्रं जुहुयात् स मन्त्री धनवान् भवेत्।।२८।।
शुभशालीमयैश्चूर्णैः समरीचैः ससैन्धवैः। सजीरकैर्बहुगुडैः शुभैरतिघृतप्लुतैः।।२९।।
शालिमयैः शालितण्डुलचूर्णैः।

अपूपैर्जुहुयान्मन्त्री गणेशस्य हि सन्निधौ। सहस्रमात्रं स लभेन्महतीमचिराद्रमाम्।।३०।।
साध्यनामार्णपुटितमनुना जुहुयात् सुधीः। अपामार्गसमिद्भिर्वा पक्वैः पनसजैः फलैः।।३१।।
सहस्रं कदलैर्वाथ नरं नारीं वशं नयेत्। लाजाभिर्जुहुयादग्नौ सहस्रं कन्यकाप्तये।।३२।।
सहस्रमाज्याहुतीनां हुनेत् क्षीराहुतीरपि। सहस्रं रोगशान्त्यर्थं मन्त्रशास्त्रविशारदः।।३३।।
दूर्वाहुतीनां जुहुयाल्लक्षं मृत्युञ्जयो भवेत्। ब्रह्मवृक्षोत्थसमिधो मधुरत्रयलोलिताः।।३४।।
सहस्रं जुहुयान्मन्त्री मासाच्छत्रूञ्जयेद् ध्रुवम्। विभीतकोत्थसमिधां सहस्रं साष्टकं निशि।।३५।।

लोहितार्क्कं श्मशानाग्नौ जुहुयान्मारयेद्रिपुम्। भूमौ शत्रुस्वरूपं च विलिख्यास्योदरेऽनलम्॥३६॥
प्रज्वाल्य सिद्धार्थवरैः सहस्रं जुहुयात् सुधीः। तं मारयेत् सप्तदिनान्नात्र कार्या विचारणा॥३७॥
कालमेघसमानाभं गणेशं निजशुण्डया। रिपुं गृहीत्वा वडवामुखे वह्नौ महोत्कटे॥३८॥
प्रक्षिपन्तं गणपतिं ध्यात्वामुं प्रजपेन्मनुम्। सहस्रं त्रिदिनेनासौ शत्रुमुच्चाटयेद् ध्रुवम्॥३९॥
समुद्रगां नदीं प्राप्य गृहीत्वाञ्जलिना जलम्। सहस्रकृत्वोऽभिमन्त्र्य चाभिषिञ्चेत् स्वमूर्धनि॥४०॥
अनेन विधिना मन्त्री पापौघं नाशयेद् ध्रुवम्। शनैश्चरदिनेऽश्वत्थमालम्ब्य त्रिसहस्रकम्॥४१॥
जपेन्मनुं गणं ध्यायन् दोषान् ग्रहभवान् हरेत्। वेतसोत्थसमिद्धोमात् सहस्राद् वृष्टिमाप्नुयात्॥४२॥
धान्यार्थी जुहुयाद्धान्यैरन्नार्थ्यन्नैर्हुनेत् सुधीः। कमलैरुत्पलैर्वापि होमो वस्त्रप्रदो मतः॥४३॥
क्षेत्राभिकाङ्क्षी पललैर्गुडाभ्यक्तैर्हुनेत् सुधीः। तमर्चयित्वा गणपं हरिद्रां सैन्धवं वचाम्॥४४॥
निष्कार्धार्धप्रमाणेन संपिंष्यैतानि निक्षिपेत्। प्रसृत्युन्मितगोमूत्रे सहस्रेणाभिमन्त्रयेत्॥४५॥
स्नातामृतुस्नानदिने विशुद्धां शुक्लवाससम्। पाययेत्तां च सा वन्ध्या सूते प्राग्वत्सरात् सुतम्॥४६॥
उपोष्य सोमग्रहणे भास्करग्रहणेऽथवा। कपिलाज्यं पलं चूर्णं वचायाश्च पलार्धकम्॥४७॥
एतत् सहस्रसंजप्तं समस्तं प्रपिबेत् सुधीः। अवाप्य मेधां महतीं कवित्वं लभते ध्रुवम्॥४८॥
गोचर्ममात्रं भूदेशमुपलिप्यांशुकावृतम्। कृत्वात्र स्थापयेत् कुम्भमर्चितं चन्दनादिभिः॥४९॥
तस्योपरिष्टात् कपिलाघृतपूर्णं शरावकम्। घृतं तत्र प्रतिष्ठाप्य ज्वालयेद् दीपमुत्तमम्॥५०॥
तत्र विघ्नेशमावाह्य पूजयेत् कुसुमादिभिः। कुमारीं वा कुमारं वा दीपस्याग्रे निधाय च॥५१॥
जपेत्तु मन्त्रप्रवरमष्टोत्तरसहस्रकम्। ततः पृष्टा कुमारी वा कुमारो वा ब्रवीति तत्॥५२॥
मनोगतं हि सकलं भविष्यं भूतमेव च। वर्तमानं मनोरस्य प्रसादान्नात्र संशयः॥५३॥ इति।

दोनों पक्षों की चतुर्थी तिथि में एक हजार आठ या एक सौ आठ हवन अपूपों से करे। ऐसा करने से एक वर्ष में धन प्राप्त होता है। प्रतिदिन मध्याह्न में गणेश के आगे एक हजार या तीन सौ या एक सौ आठ मन्त्र जप करे। ऐसा करने से थोड़े ही दिनों में महती लक्ष्मी की प्राप्ति बिना यत्न के ही होती है। प्रसन्नता, मनसन्तुष्टि और अल्प भोजन, नींद में कमी, स्वप्न में हाथों का दर्शन होता है। ये सभी मन्त्रसिद्धि के लक्षण हैं।

पूर्वोक्त सिद्ध भात से तीन महीनों तक प्रतिदिन तीन सौ हवन करे तो साधक निधियों का भवन होकर दूसरा कुबेर हो जाता है। गुड़ाक्त चूड़ा, नारियल खण्डों और मरिच से एक हजार आठ हवन करने से मन्त्री धनवान होता है। शुभ शालिचूर्ण, मरिच, सेन्धा नमक, जीरा और गुड़ में घी मिलाकर पूओं के साथ गणेश के निकट एक हजार आठ हवन करे तो थोड़े ही दिनों में महती लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। साध्य नामाक्षरों से पुटित मन्त्र से अपामार्ग की समिधा से या पके कटहल फल या केले से एक हजार आठ हवन करे तो नर-नारी को वश में किया जा सकता है। कन्या से विवाह के लिये एक हजार आठ हवन लावा से करे। मन्त्रशास्त्र विशारद रोगशान्ति के लिये एक हजार आठ हवन गोघृत से या गोदुग्ध से करे। एक लाख हवन दूर्वा से करने पर साधक मृत्युञ्जय होता है। मधुरत्रय-लोलित पलाश की समिधाओं से एक महीने तक एक हजार आठ हवन प्रतिदिन करे तो शत्रु पर विजय प्राप्त करता है। लिसोड़े की समिधा से एक हजार आठ हवन रात में श्मशान की लाल अग्नि में करे तो शत्रु मर जाता है। जमीन पर शत्रु का चित्र बनाकर उसके पेट में अग्नि जला कर एक हजार हवन सरसों से सात दिनों तक करे तो शत्रु की मृत्यु हो जाती है। ध्यान करे कि कालमेघ वर्ण के गणेश अपने शुण्ड से शत्रु को पकड़कर महोत्कट वड़वाग्नि में पटक रहे हैं। ऐसा ध्यान करके तीन दिनों तक एक-एक हजार मन्त्र का जप करे तो शत्रु का उच्चाटन होता है। समुद्रगामिनी नदी से अंजली में जल लेकर उसे एक हजार जप से अभिमन्त्रित करके अपने मूर्धा पर सिंचन करे तो उसके पापसमूहों का नाश होता है। शनिवार को पीपल मूल के पास बैठकर गणेश का ध्यान करके तीन हजार मन्त्रजप करे तो ग्रहदोष का निवारण होता है। वेंत की समिधा से एक हजार आठ हवन करे तो वर्षा होती है। धान्य के लिये

धान्य से एवं अन्न के लिये अन्न से हवन करे। कमल उत्पल से हवन करने पर वस्त्र मिलता है। खेती की जमीन के लिये भूसी में गुड़ मिलाकर हवन करे। हरिद्रा गणेश की पूजा करके आधा निष्क सेन्धा नमक वचपिष्ट में डाल दे। चुल्लू भर गोमूत्र को एक हजार जप से मन्त्रित करे। ऋतुस्नान के बाद स्नान करके श्वेत वस्त्रधारिणी वन्ध्या को उसे पिला दे तो एक वर्ष में वन्ध्या को पुत्र उत्पन्न होता है।

चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण में उपवास रहकर कपिला गाय के ५० ग्राम घी में २५ ग्राम वचाचूर्ण मिलाकर एक हजार जप से मन्त्रित करके साधक पी जाय। इससे उसे मेधा और महान् कवित्व की शक्ति प्राप्त होती है। गोचर्म के बराबर भूमि को लीपकर उसे वस्त्र से घेर करे। चन्दनादि से चर्चित कुम्भ उसमें स्थापित करे। उसके ऊपर कपिला गोघृतपूर्ण शराव रखे। उसमें बत्ती रखकर दीपक जलावे। उसमें विघ्नेश का आवाहन करके पुष्पादि से पूजा करे। कुमारी या कुमार को दीपक के आगे बैठाकर एक हजार आठ मन्त्र का साधक जप करे। तब कुमारी या कुमार से पूछने पर वे सभी मन की बातों को एवं भूत भविष्य वर्तमान बतला देती हैं, इस मन्त्र का ऐसा ही प्रभाव है, इसमें कोई संशय नहीं है।

वक्रतुण्डमन्त्रान्तरम्

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

मन्त्रान्तरमथो वक्ष्ये वक्रतुण्डगणेशितुः। यस्य स्मरणमात्रेण सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः॥१॥
झिण्ठीशेन समायुक्तो यपूर्वः कतुरीयकः। सद्याक्रान्तो धरा ब्रह्मानन्तो वाली भृगुस्तथा॥२॥
खड्गीशो दीर्घसंयुक्तो वियन्नारायणान्वितम्। षडक्षरोऽयमाख्यातः सर्ववश्यफलप्रदः॥३॥ इति।

झिण्ठीश एकारः, तेन युक्तो यपूर्वो म तेन मे इति। कतुरीयो घ, सद्य ओ, तेन घो। धरा ल, ब्रह्मा क, अनन्त आ, तेन ल्का इति। वाली य। भृगुः स, खड्गी व, दीर्घ आ, तेन स्वा। वियत् हकारः, नारायण आ, तेन हा इति। तथा—

भार्गवो मुनिरस्य स्यादनुष्टुप् छन्द ईरितम्। वक्रतुण्डगणेशोऽस्य देवता देववन्दितः॥४॥
मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि षड्भिः कुर्याद्यथा पुरा। ध्यानपूजादिकं सर्वं मन्त्री पूर्ववदाचरेत्॥५॥ इति।
प्रयोगः सुगमः।

वक्रतुण्ड का मन्त्रान्तर—सारसंग्रह में एक अन्य वक्रतुण्ड गणेश का मन्त्र कहा गया है, जिसके स्मरणमात्र से सभी उपद्रवों का नाश हो जाता है। उद्धार करने पर षडक्षर मन्त्र होता है—मेघोल्काय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि भार्गव, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता देववन्दित वक्रतुण्ड गणेश हैं। मन्त्र वर्णों से पूर्ववत् कर-षडङ्ग न्यास करे। ध्यान-पूजादि सभी पूर्व मन्त्र के समान होते हैं।

आथर्वणिकमन्त्रः

तथा मन्त्रान्तरम्—

अथान्यत् संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं द्वात्रिंशदर्णकम्। रायस्पोषपदं प्रोक्त्वा वदेत् स्य दयिता नि च॥१॥
धिदो रत्नपदं चोक्त्वा दोवदं च ततो वदेत्। रक्षोहणो पदान्ते वो वलगेति पदं ततः॥२॥
हनो पदान्ते संप्रोक्तो मन्त्रराजः षडक्षरः। द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रः आथर्वणिक ईरितः॥३॥

रायस्पोष इति स्वरूपं। स्यदयितानि स्वरूपं। धिदोरत्न स्वरूपं। दोवदं स्वरूपं। रक्षोहणो स्वरूपं। वो स्वरूपं। वलगहनो स्वरूपं। षडक्षरः पूर्वोक्तः। तथा—

संख्यादिकं पुरा प्रोक्तं ध्यानपूजादि पूर्ववत्। जपेदर्कसहस्राणि जुहुयात् तद्दशांशतः॥४॥
हविषा घृतसिक्तेन तदन्ते तोषयेद्गुरुम्। एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेदिष्टमात्मनः॥५॥
इष्टं काम्यं, तदपि षडक्षरोक्तवत्।

द्वात्रिंशाक्षर आथर्वणिक मन्त्र—बत्तीस अक्षरों का गणेश का आथर्वर्णिक मन्त्र इस प्रकार है—

रायस्पोषस्य दयिता निधिदो रत्नदो वदं। रक्षोहणो वो वलगहनो मेघोल्काय स्वाहा।।

इसके जप-संख्या, ध्यान-पूजा आदि पूर्ववत् होते हैं। बारह हजार जप करे। उसका दशांश हवन घृतसिक्त हवि से करे। इसके बाद गुरु को सन्तुष्ट करे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से मनोरथ सिद्ध करे।

गणेशगायत्री

तथा—

ङेन्तं तत्पुरुषं प्रोक्त्वा विद्महे पदमुच्चरेत्। वक्रतुण्डं चतुर्थ्यन्तं धीमहीति ततो वदेत्।।६।।
तन्नो दन्ती-पदं भाष्य वदेदन्ते प्रचोदयात्। गायत्रीयं समाख्याता वक्रतुण्डगणेशितुः।।७।।
स्नानकाले सदा जप्या मन्त्रिभिः कर्मसिद्धये।

ङेन्तं तत्पुरुषं तत्पुरुषायेति। सुगममन्यत्।

गणेश गायत्री—उद्धार करने पर गणेश गायत्री इस प्रकार स्पष्ट होती है—तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्। कर्मसिद्धि के लिये स्नान के समय इसका जप सदैव करना चाहिये।

उच्छिष्टगणेशविधानम्

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

उच्छिष्टस्य गणेशस्य विधानमभिधीयते। हस्तिशब्दं समुच्चार्य पिशाचीति ततो वदेत्।।१।।
लिखे-पदं समुच्चार्य वह्निजायान्तमुद्धरेत्। नवाक्षरोऽयमाख्यात उच्छिष्टस्य गणेशितुः।।२।।

वह्निजाया स्वाहा। अन्यत् स्वरूपम्। तथा—

ऋषिः कङ्कोलनामास्य विराट् छन्द उदाहृतम्। उच्छिष्टगणपो देवः सर्वसंपत्प्रदायकः।।३।।
द्वाभ्यां हृदयमाख्यातं त्रिभिः शिर उदाहृतम्। द्वाभ्यां शिखा समाख्याता वर्माक्षिभ्यां समीरितम्।।४।।
समस्तेनास्त्रमाख्यातं पञ्चाङ्गविधिरीरितः। ध्यानार्चनविधानं च मन्त्री पूर्ववदाचरेत्।।५।।

अत्र तु चकारात् पुरश्चरणमपि पूर्वमन्त्रोक्तमेव प्राप्यते तेन वक्रतुण्डषडक्षरप्रकरणे 'वर्णलक्षं जपेन्मन्त्र'-मित्युक्तं तदत्रापि लभ्यते, तेनास्य मन्त्रस्य नवलक्षजपः पुरश्चरणमित्यवगम्यते इति। प्रयोगादिकं सुगमम्।

उच्छिष्ट गणेश मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार उच्छिष्ट गणेश का नवाक्षर मन्त्र है—हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि कंकोल, छन्द विराट् एवं देवता सर्वसम्पत्प्रदायक उच्छिष्ट गणेश हैं। हस्ति, पिशाचि, लिखे, स्वाहा और हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा से पञ्चाग न्यास हृदय शिर शिखा कवच अस्त्र स्थान में करे। ध्यान एवं अर्चन पूर्ववत् करे। षडक्षर मन्त्र में वर्णलक्ष से पुरश्चरण कथित है, अतः इस मन्त्र का पुरश्चरण नव लाख जप समझना चाहिये।

काम्यसाधने वश्यप्रयोगः

तथा—

काम्यकर्माणि वक्ष्यामि स्तम्भे द्वेषे च मोहने। मारणे च वशीकारे तथाकर्षणकर्मणि।।६।।
एतत् सर्वं करोत्येव सुप्रीतो गणनायकः। प्रतिमां कारयेद्धीमान् निम्बकाष्ठमयीं शुभाम्।।७।।
साध्याङ्गुष्ठप्रमाणां च गणेशस्य महात्मनः। स्पृष्ट्वा तां प्रजपेन्मन्त्रं काम्यसिद्धिस्ततो भवेत्।।८।।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां कृष्णपक्षस्य मन्त्रवित्। उच्छिष्टो रात्रिमध्ये तु जपेन्मन्त्रमिमं शुभम्।।९।।
वाञ्छितो वशमायाति साधकस्य न संशयः।

अब काम्य कर्मों में स्तम्भन, विद्वेषण, मोहन, मारण, वशीकरण, आकर्षण को कहता हूँ। इन सभी कर्मों को करने के पूर्व प्रसन्नतापूर्वक नीम की लकड़ी से गणेश की मूर्ति बनावे। यह मूर्ति साध्य के अंगूठे के बराबर बनानी चाहिये। मूर्ति

को स्पर्श करके मन्त्र जप करे तो कार्य सिद्ध होता है। कृष्ण पक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी में मध्यरात्रि में जूठे मुख इस मन्त्र का जप करे तब वांछित व्यक्ति वशीभूत होता है।

काम्यसाधने आकर्षणप्रयोग:

भूर्जपत्रे समालिख्य साध्यनाम यथाविधि ॥१०॥

मन्त्रेणावेष्टितं कृत्वा जपेन्मन्त्रमनन्यधी: । पादेनाक्रम्य तत्पत्रं हठाकृष्टिरियं मता ॥११॥

लिखित्वा पूर्ववत् पत्रं पूजयित्वा विधानत: । साध्यं स्मृत्वा जपेन्मन्त्रं सर्वलोकं वशं नयेत् ॥१२॥

धारयेन्मस्तके यन्त्रं जपेन्मन्त्रमनन्यधी: । राजानं राजपत्नीं वा कर्षयेत् तत्क्षणात् सुधी: ॥१३॥

यन्त्रं मूलमन्त्रवेष्टितं साध्यनामगर्भं भूर्जपत्रम्।

ताम्बूलपत्रपुष्पाणि वस्त्राण्याभरणानि च । फलमूलादिवस्तूनि समादाय जपेन्मनुम् ॥१४॥

एकविंशतिवाराणि दद्यादिष्टाय नान्यथा । सर्वलोके वशकर: प्रयोगोऽयमुदाहृत: ॥१५॥

श्रीखण्डधूपदानेन राजानं वशमानयेत् ।

भोजपत्र पर साध्य नाम लिखकर उसे मन्त्राक्षरों से वेष्टित करे। एकाग्र बुद्धि से मन्त्रजप उस भोजपत्र को पैर के नीचे दबाकर करें। इससे हठात् आकर्षण होता है। पूर्ववत् भोजपत्र पर लिखकर विधान से पूजा करे। साध्य को स्मरण करते हुए मन्त्रजप करे तब साध्य के साथ-साथ सारा संसार भी वश में होता है। यन्त्र को शिर पर धारण करे और एकाग्र बुद्धि से मन्त्र का जप करे तो राजा-रानी का आकर्षण तत्क्षण होता है। पान-पत्र-पुष्प-वस्त्र-अलंकार-फल-मूलादि वस्तुओं को लेकर इक्कीस बार मन्त्र जप करके उक्त सभी वस्तुयें इष्ट व्यक्ति को देवे तो वह वश में हो जाता है। इस प्रयोग को सर्वलोक वश्यकर कहते हैं। श्रीखण्ड चन्दन का धूप देने से राजा वश में होते हैं।

काम्यसाधने उच्चाटनप्रयोग:

समिधो निम्बकाष्ठस्य कटुतैलसमन्विता: ॥१६॥

काकपक्षसमायुक्ता हुत्वा मन्त्री यथाविधि ।

यथाविधि: चिताग्नौ।

रिपुं च परसेनां च समुच्चाटयति क्षणात् । उलूककाकयो: पक्षांस्तद्वसारक्तसंयुतान् ॥१७॥

श्मशानाग्नौ तु जुहुयाद्विद्वेष: स्निग्धयो: क्षणात् ।

कड़ुआ तेल, काक पक्षसमन्वित नीम की समिधा से चिता की अग्नि में हवन करने से शत्रुसेना या परसेना का उच्चाटन क्षण भर में हो जाता है। उल्लू और कौए के पंखों को उनकी वसा और उनके रक्त से संयुक्त करके श्मशान की अग्नि में हवन करे तो दो प्रेमियों में क्षणमात्र में वैर हो जाता है।

काम्यसाधने मारणप्रयोग:

शत्रुपादरजोयुक्तां चक्रिहस्तमृदं बुध: ॥१८॥

श्मशानभस्मसंयुक्तामुद्वर्तनमलान्विताम् । गृहीत्वा पुत्तलीं कुर्यात् सर्वावयवशोभिताम् ॥१९॥

उद्वर्तनमलं शत्रुशरीरस्य।

तस्या हृदि लिखेन्नाम मूलमन्त्रेण वेष्टितम् । कृत्वा प्राणप्रतिष्ठां तु विषरक्ताढ्यपात्रके ॥२०॥

स्थापयित्वा जपेन्मन्त्रं सम्यगेकाग्रमानस: । म्रियतेऽरिर्न संदेहो देवेनापि सुरक्षित: ॥२१॥

चितायां दग्धदम्पत्योर्भस्मादाय यथाविधि । रोचनाकुङ्कुमाभ्यां च भूर्जे नाम समालिखेत् ॥२२॥

वेष्टितं मूलमन्त्रेण प्राणस्थापनमाचरेत् । साध्यं स्मृत्वा जपेन्मन्त्रं सम्यगष्टोत्तरं शतम् ॥२३॥

द्विष्टयोर्जनयो: सम्यक् स्नेहो भवति तत्क्षणात् । इति।

शत्रु के पैरों की धूलि, कुम्हार के हाथ की मिट्टी, श्मशान की राख और शत्रु के उबटन के मैल को मिलाकर सभी अंगों से युक्त पुत्तली बनावे। उसके हृदय में शत्रु का नाम लिखकर उसे मूल मन्त्र से वेष्टित करे। उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करे। विष और रक्तयुक्त पात्र में उसे रखे। तदनन्तर एकाग्र मन से मन्त्र का जप करे तो देवता से रक्षित शत्रु की भी मृत्यु हो जाती है। चिता में दग्ध दम्पति की राख में गोरोचन कुङ्कुम मिलाकर स्याही बनावे। इस स्याही से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखे। मूल मन्त्र से वेष्टित करे। प्राण-प्रतिष्ठा करे। साध्य का स्मरण करते हुए एक सौ आठ मन्त्रजप करे। इससे वैरियों में तत्क्षण स्नेह हो जाता है।

तन्मन्त्रान्तराणि

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

क्रींक्रींपदं समुच्चार्य ह्रींह्रीं च पदमुच्चरेत्। हुंकारं सम्यगुच्चार्य घेघेशब्दमथोच्चरेत् ॥१॥
फट्कारं स्वाहया युक्तः प्रणवाद्योऽयमीरितः। एकादशाक्षरः सम्यग् मूलमन्त्रो गणेशितुः ॥२॥
ऋष्यादिकं पुरः प्रोक्तं ध्यानपूजादिकं तथा। इति।

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार ग्यारह अक्षरों का गणेश का मूल मन्त्र है—ॐ क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हुं घें घें फट् स्वाहा। इसके ऋष्यादि ध्यान पूजादि पूर्ववत् होते हैं।

तथा मन्त्रान्तरम्—

एकदंष्ट्रं चतुर्थ्यन्तं वदेद्धस्तिमुखं ततः। लम्बोदरपदं ङेन्तमुच्छिष्टेति पदं ततः ॥१॥
आत्मनेऽङ्कुशबीजं च ग्लूंकारं भुवनेश्वरीम्। हुंघेघेपदमुच्चार्य स्वाहाकारं समुच्चरेत् ॥२॥
सप्तविंशतिभिर्वर्णैर्मन्त्रः प्रोक्तो गणेशितुः। ऋष्यादि ध्यानपूजादि यथापूर्वं समाचरेत् ॥३॥
तृतीयचतुर्थपदयोर्विसन्धिः। अन्यत्सुगमम्। यथापूर्वं वक्रतुण्डषडक्षरवत्।

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार ही एक अन्य सत्ताईस अक्षरों का मन्त्र है—एकदंष्ट्राय हस्तिमुखं लम्बोदराय उच्छिष्टात्मने क्रो ग्लूं ह्रीं हुं घें घें स्वाहा। इस गणेश मन्त्र के ऋष्यादि ध्यान पूजादि षडक्षर वक्रतुण्ड के समान होते हैं।

तथा मन्त्रान्तरम्—

ॐकारं विलिखेदादौ नमो भगवते पदम्। एकदंष्ट्राय संभाष्य हस्त्यन्ते मुखशब्दतः ॥१॥
लम्बोदरपदं ङेन्तमुच्छिष्टेति पदं ततः। महात्मने पदं प्रोक्त्वा वदेदङ्कुशबीजकम् ॥२॥
ग्लूंकारं मायया युक्तं हुंघेघे च समुच्चरेत्। स्वाहान्तो मनुराख्यातः सम्यक् षट्त्रिंशदक्षरः ॥३॥
उच्छिष्टेत्यत्र विसन्धिः।

ऋष्यादिकं पुरा प्रोक्तं षड्बीजैरङ्गमीरितम्। ध्यानपूजादिकं सर्वं मन्त्री पूर्वोक्तमाचरेत् ॥४॥
मन्त्रोद्धारः सुगमः। षड्बीजैरिति, क्रों हृदयं, ग्लूं शिरः, ह्रीं शिखा, हुं कवचं, घे नेत्रं, घे अस्त्रं। अन्यत् सुगमम्।

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार ही एक अन्य छत्तीस अक्षरों का मन्त्र इस प्रकार है—ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखलम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने क्रों ग्लूं ह्रीं हुं घें घें स्वाहा। इसके ऋष्यादि पूर्ववत् होते हैं। क्रों से हृदय, ग्लूं से शिर, ह्रीं से शिखा, हुं से कवच, घें से नेत्र, घें से अस्त्र—इस प्रकार छः बीजों से षडङ्ग न्यास किया जाता है। ध्यान पूजादि सभी पूर्वोक्त रूप में होते है।

बलिमन्त्रः

तन्त्रान्तरे बलिमन्त्रः—

ॐगंहंक्लौंसमुच्चार्य ग्लौं उच्छिष्टगणे पदम्। ततः शाय महायक्षायायं बलिरिति स्मृतः ॥

बलिमन्त्रस्तथोच्छिष्टगणेशस्य महात्मनः। अनेन मनुना मांसं फलं वापि बलिं हरेत्॥
ॐ गंहंक्लौंग्लौं उच्छिष्टगणेशाय महायक्षायायं बलिः।

बलिमन्त्र—तन्त्रान्तर में उच्छिष्ट गणेश का बलि मन्त्र इस प्रकार कहा गया है—ॐ गं हं क्लौं ग्लौं उच्छिष्टगणेशाय महायक्षायायं बलिः। इस मन्त्र से मांस अथवा फल की बलि गणेश को प्रदान की जाती है।

ध्यानविशेषः

ध्यानविशेषमाह—
चतुर्भुजं त्रिनेत्रं च रक्तवर्णं कराम्बुजैः। पाशाङ्कुशौ मोदकानां पात्रं दन्तं च बिभ्रतम्॥५॥
कमलासनमासीनमुन्मत्तं गणनायकम्। पुरश्चरणसिद्ध्यर्थं लक्षसंख्यं जपेद् बुधः॥६॥
जुहुयात् तद्दशांशेन तिलैराज्यपरिप्लुतैः। यजेत् पूर्वोदिते पीठे उच्छिष्टगणनायकम्॥७॥
आदावङ्गानि संपूज्य मातृका दलसंस्थिताः। दलाग्रेषु च सोर्ध्वाधो दशदिक्षु प्रपूजयेत्॥८॥
वक्रतुण्डैकदंष्ट्रौ च लम्बोदरसमाह्वयः। विकटो धूम्रवर्णश्च विघ्नश्चैव गजाननः॥९॥
विनायको गणपतिर्हस्तिदन्तश्च वै दश। चतुरस्रे लोकपालान् वज्रादीनि ततो बहिः॥१०॥
एवं संपूज्य विघ्नेशं ततः काम्यानि साधयेत्।

गणेश का विशेष ध्यान इस प्रकार कहा गया है—

चतुर्भजं त्रिनेत्रं च रक्तवर्णं कराम्बुजैः। पाशांकुशौ मोदकानां पात्रं दन्तं च बिभ्रतम्॥
कमलासनमासीनमुन्मत्तं गणनायकम्॥

पुरश्चरण की सिद्धि के लिये एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन गोघृत-मिश्रित तिल से करे। पूर्वोक्त पीठ पर उच्छिष्ट गणनायक की पूजा करे। पहले षडङ्गों की पूजा करे। आठ दलों में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। दलाग्रों में तथा ऊपर-नीचे वक्रतुण्ड, एकदंष्ट्र, लम्बोदर, विकट, धूम्रवर्ण, विघ्न, गजानन, विनायक, गणपति, हस्तिदन्त—इन दश की पूजा करे। चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और उनके वज्रादि दश आयुधों की पूजा करे। विघ्नेश की पूजा इस प्रकार करके काम्य कर्म का साधन करे।

काम्यसाधनविधिः

श्वेतार्कमूलतो वापि मर्कटीकाष्ठकेन वा॥११॥
स्वाङ्गुष्ठप्रमितां कुर्याद्गणेशप्रतिमां तथा। प्रोक्तलक्षणसंपन्नां प्रतिष्ठाप्य प्रयत्नतः॥१२॥
मधुना स्नापयेत्तां तु कृष्णप्रतिपदादितः। शुक्ला चतुर्दशी यावत् सगुडं पायसं तथा॥१३॥
निवेद्य प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं नित्यमादरात्। तिलैस्तावच्च जुहुयाद् घृताक्तैरेधितेऽनले॥१४॥
गणेशोऽहमिति ध्यायन्नुच्छिष्टेन दिगम्बरः। पक्षाद्राज्यमवाप्नोति नृपो योऽन्यो नरोऽपि वा॥१५॥
कुलालमृत्स्नाप्रतिमां पूजितां राज्यमाप्नुयात्। वल्मीकमृत्कृता वापि सर्वाभीष्टं प्रयच्छति॥१६॥
सौभाग्यदा गुडमयी लोणजा शत्रुनाशिनी। रणे द्यूते विवादे च जपेन जयमाप्नुयात्॥१७॥
एतन्मन्त्रप्रभावेन कुबेरो धनदोऽभवत्। विभीषणश्च सुग्रीवो लेभाते राज्यमञ्जसा॥१८॥
रक्तवस्त्रधरो रक्तस्ताम्बूलं निश्यदञ्जपेत्। यद्वा नैवेद्यशेषं तु मोदकं भक्षयञ्जपेत्॥१९॥

श्वेतार्क मूल या मर्कटी काष्ठ से एक अंगूठे के बराबर गणेश की प्रतिमा उपर्युक्त लक्षणों से युक्त बनाकर प्राण-प्रतिष्ठा करे। कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी तक मधु से स्नान करावे। गुड़-पायस का नैवेद्य अर्पित करे। प्रतिदिन एक हजार आठ जप करे। प्रज्वलित अग्नि में घृताक्त तिल से एक हजार हवन करे। अपने को गणेश मानकर जूठे मुख दिगम्बर होकर जप करे। पन्द्रह दिनों तक ऐसा करने से राजा या साधारण मनुष्य को राज्य प्राप्त होता है। कुम्हार के

मिट्टी की मूर्ति बनाकर पूजा करने से राज्य मिलता है। दीमक के घर की मिट्टी की मूर्ति की पूजा करने से सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं। गुड़ की गणेशमूर्ति की पूजा से सौभाग्य प्राप्त होता है। नमक की गणेशमूर्ति शत्रुनाशिनी होती है। युद्ध में जूआ में विवाद में मन्त्रजप से जीत होती है। इस मन्त्र के प्रभाव से साधक कुबेर के समान धनवान होता है। विभीषण और सुग्रीव को इसी से राज्य प्राप्त हुआ था। लाल वस्त्र पहनकर पान खाकर रात में पूजा करे। नैवेद्य में लड्डू चढ़ावे और उसे खाकर जूठे मुख जप करे।

तस्य मन्त्रान्तराणि

तथा मन्त्रान्तरम्—

प्रणवो भुवनेशी च स्मृतिर्बिन्दुसमन्विता। ततो नवाक्षरश्चैव संप्रोक्तो द्वादशाक्षरः ॥२०॥

ॐ ह्रीं गं हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा (१२)। तथा—

तारं हृदुच्छिष्टपदं गणेशाय नवाक्षरः। एकोनविंशत्यर्णोऽयं मुन्याद्याः पूर्ववत् स्मृताः ॥२१॥
(त्र्यगद्वित्रिद्विद्विभिश्च मन्त्रार्णैः स्यात् षडङ्गकम्।)

ॐ नमः उच्छिष्टगणेशाय हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा। १९। इति। तथा—

प्रणवं हृद्भगवते एकदंष्ट्राय वै वदेत्। ततो हस्तिमुखं ङेन्तं तथा लम्बोदरं ततः ॥२२॥
वदेदुच्छिष्टशब्दान्ते महात्मानं च ङेन्तगम्। पाशमङ्कुशमाये च विघ्नबीजं च घेद्वयम् ॥२३॥
वह्निजायावधि सप्तत्रिंशदर्णो मनुर्मतः ।

ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आंक्रोंह्रींगंघेघे स्वाहा (३७)।

गणकोऽस्य ऋषिश्छन्दो गायत्री देवता ततः। उच्छिष्टपदपूर्वश्च गणनाथः समीरितः ॥२४॥
गिरिपंक्तिशराद्र्यब्धियुगार्णैरङ्गकल्पना ।
शरचापगुणाङ्कुशान् स्वहस्तैर्दधतं रक्तसरोरुहे निषण्णम्।
विगताम्बरजायया प्रवृत्तं सुरते सन्ततमाश्रये गणेशम् ॥२५॥
लक्षमानं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेद् घृतैः। तर्पणानि दशांशेन कुर्याद् ब्राह्मणभोजनम् ॥२६॥
एवं संसिद्धमन्त्रस्तु प्रयोगानाचरेद् बुधः। धनं धान्यं सुतान् पौत्रान् सौभाग्यमतुलं यशः ॥२७॥
प्राप्नोति साधकश्रेष्ठो गणेशस्य प्रसादतः ।

मन्त्रान्तर—एक अन्य द्वादशाक्षर मन्त्र होता है—ॐ ह्रीं गं हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा। एक अन्य उन्नीस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ नमः उच्छिष्टगणेशाय हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा। सैंतीस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आं क्रों ह्रीं गं घें घें स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि गणक, छन्द गायत्री एवं देवता उच्छिष्ट गणेश हैं। मन्त्र के ७,१०,५, ७,४,४ अक्षरों से षडङ्ग न्यास किया जाता है। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

शरचापगुणाङ्कुशान् स्वहस्तैर्दधतं रक्तसरोरुहे निषण्णम्। विगताम्बरजायया प्रवृत्तं सुरते सन्ततमाश्रये गणेशम् ।।

एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन घी से करे। हवन का दशांश तर्पण-मार्जन-ब्राह्मणभोजन करावे। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध होने पर प्रयोग करे। गणेश की कृपा से साधक धन-धान्य, पुत्र-पौत्र, अतुल सौभाग्य एवं यश प्राप्त करता है।

काम्यप्रयोगः

इभभग्नेन निम्बेन मूर्तिं कुर्याद्गणेशितुः ॥२८॥
प्राणान् संस्थाप्य संपूज्य तदग्रे तु मनुं जपेत्। ध्यात्वा यं दासवत् सोऽपि वश्यो भवति नान्यथा ॥२९॥
नदीजलं समादाय सप्तविंशतिसंख्यया। अभिमन्त्र्य ततस्तेन मुखं प्रक्षालयेद्बुधः ॥३०॥
तं दृष्ट्वा वशमायान्ति नरनारीनृपालकाः। वामपादरजो गृह्य योषायाः प्रजपेन्मनुम् ॥३१॥

गणेशसन्निधाने हि रविसाहस्रकं स्मरन्। सा समायाति नियतं हठादाकर्षणं त्विदम्॥३२॥
इभभग्नेन निम्बेन श्वेतार्केनाथवा सुधीः। गणेशप्रतिमां कृत्वा चतुर्थ्यां निशि पूजयेत्॥३३॥
सर्वरक्तोपचारैश्च सहस्रं प्रजपेन्मनुम्। सरित्तटे क्षिपेत्तां तु प्रतिमां निशि साधकः॥३४॥
यत्कार्यमारभेत् तस्य स्वप्ने वक्ति फलाफलम्। सहस्रनिम्बकाष्ठानां होमादुच्चाटयेदरीन्॥३५॥
समिधां वव्रिणां होमान्मारयेच्छत्रुमात्मनः। मर्कटास्थि सुसंजप्तं क्षिप्रमुच्चाटयेद् गृहे॥३६॥
नरास्थि जप्तं कन्याया गृहे क्षिप्तं तदाप्तिकृत्। स्त्रीणां वामाङ्घ्रिरजसा कुलालस्य मृदा तदा॥३७॥
कुर्यात् पुत्तलिकां तस्या हृदि स्त्रीनाम चालिखेत्। निम्बकाष्ठैः सहैतां तां जप्तां भूमौ विनिक्षिपेत्॥३८॥
उन्मत्ता जायते सा च प्रोद्धृतायां सुखीभवेत्। लशुनेन सहैवारेः शरावद्वयसंपुटे॥३९॥
क्षिप्त्वा तां प्रतिमां सम्यक् पूजितां द्वारि विद्विषः। निखाय पक्षमात्रेण शत्रुमुच्चाटयेद् ध्रुवम्॥४०॥
सङ्कटे समनुप्राप्ते सितार्कारिष्टदारुजम्। पूजितं गणपं सम्यग् रक्तगन्धोपचारकैः॥४१॥
मद्यभाण्डे विनिक्षिप्य पूजास्थाने निखातयेत्। तत्रोपविश्य प्रजपेन्मन्त्रं नक्तन्दिवं बुधः॥४२॥
नश्यन्त्युपद्रवाः सर्वे सप्ताहान्नात्र संशयः। दुष्टनारीवामपादरजोभिर्निजदेहजैः॥४३॥
मलैर्मृत्तिकया कुम्भकारस्य प्रतिमां तथा। गणेशस्य ततो मद्यभाण्डस्थां निखनेद् भुवि॥४४॥
तत्र कुण्डं विधायाशु जुहुयाद्धयमारजैः। कुसुमैः सा भवेद् दासी सहस्रमितहोमतः॥४५॥ इति।

हाथी द्वारा तोड़े गये नीम की लकड़ी से गणेश की मूर्ति बनावे। उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करके पूजा करे। उसके आगे मन्त्र-जप करे। जप के समय साध्य का स्मरण करता रहे तो वह साध्य दास के समान वश में होता है। नदी का जल लेकर उसे सत्ताईस जप से अभिमन्त्रित करे। उस जल से अपने मुख को धोये तो उसे देखकर नर-नारी-राजा उसके वश में होते हैं। इच्छित स्त्री के बाँयें पैर के नीचे की धूलि लेकर गणेश के सामने बारह हजार मन्त्रजप उसका स्मरण करते हुए करे। इससे वह हठात् आकर्षित होकर साधक के निकट आ जाती है। हाथी द्वारा तोड़े गये काष्ठ या श्वेतार्क मूल की गणेशमूर्ति बनाकर चतुर्थी की रात में सभी लाल उपचारों से पूजा करे। एक हजार आठ जप करे। नदी के किनारे रात में उस मूर्ति को गाड़ दे। इसके बाद साधक जो कार्य करना चाहे, उसका फलाफल सपने से ज्ञात हो जाता है। नील की समिधा से एक हजार हवन करने से शत्रुओं का उच्चाटन होता है। वव्रि की समिधा से हवन करने पर शत्रुओं की मृत्यु होती है। बन्दर की हड्डी को मन्त्रित करके जिसके घर में गाड़ दिया जाय उसका उच्चाटन होता है। मनुष्य की हड्डी को मन्त्रित करके कन्या के घर में फेंक दे तो वह प्राप्त हो जाती है। स्त्री के बाँयें पैर की धूलि एवं कुम्हार की मिट्टी को मिलाकर मूर्ति बनावे। उसके हृदय में वांछित स्त्री का नाम लिखे। जप करके नीमकाष्ठ के साथ इसे भूमि में गाड़ दे तो वह स्त्री पागल हो जाती है। उस मूर्ति को जमीन में से निकाल लेने पर वह सुखी होती है। लहसुन के साथ इस मूर्ति को कपटी में रखकर पूजा करे। दूसरी कपटी से ढककर वैरी के द्वार पर उसे गाड़ दे तो पन्द्रह दिनों में शत्रु का उच्चाटन हो जाता है। संकट आने पर श्वेतार्क या नीम की लकड़ी से बने गणेश की पूजा लाल गन्धोपचारों से करे। मदिरा के भाण्ड में रखकर पूजास्थान में उसे गाड़ दे। उस पर बैठकर रात-दिन जप करे। ऐसा एक सप्ताह तक करने से सभी उपद्रवों का नाश हो जाता है। दुष्ट स्त्री के बाँयें पैर की धूलि, अपने देह का मैल, कुम्हार की मिट्टी को मिलाकर गणेश की मूर्ति बनावे। उसे शराब के बर्तन में रखकर जमीन में गाड़ दे। वहाँ कुण्ड बनाकर उसमें कनैल के फूलों से एक हजार हवन करे तो वह दुष्ट स्त्री दासी हो जाती है।

तन्मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

तारो हस्तिमुखं ङेन्तं लम्बोदरपदं ततः। तथोच्छिष्टमहात्मानं पाशाङ्कुशत्रपास्ततः॥१॥
कामत्रपावर्म घेघे उच्छिष्टायाग्निवल्लभा। द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो गणेशस्य महात्मनः॥२॥
रसेषुसप्ताष्टयुगनेत्रार्णैरङ्गकल्पना।

ॐहस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आंक्रोंह्रींक्लींह्रींहुंघेघे उच्छिष्टाय स्वाहा (३२)।

मन्त्रान्तर—भगवान् गणेश का एक अन्य बत्तीस अक्षरों का मन्त्र इस प्रकार है—ॐ हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आं क्रों ह्रीं क्लीं ह्रीं हुं घे घे उच्छिष्टाय स्वाहा। मन्त्र के ६,५,७,६,६,२ अक्षरों से षडङ्ग न्यास किया जाता है।

मञ्जुघोषमन्त्राः

अथ मञ्जुघोषप्रकरणम्—

जाड्यौघतिमिरध्वंसः संसारार्णवतारकः। श्रीमञ्जुघोषो जयतां साधकानां सुखावहः ॥१॥

आगमोत्तरे—

मातृकादिं समुद्धृत्य वह्निबीजं समुद्धरेत्। वामांसं कूर्मसंज्ञं च ततो मेषेशमुद्धरेत् ॥१॥
मीनेशं च ततः कुर्याद्वामनेत्रेन्दुसंयुतम्। षडक्षरो मनुः प्रोक्तो मञ्जुघोषस्य शम्भुना ॥२॥

मातृकादिरकारः। वामांसोऽन्तःस्थचतुर्थः। कूर्मश्चकारः। मेषेशो लकारः। मीनेशो धकारः।

इयं तु दीपनी प्रोक्ता मूलमन्त्रस्तु कथ्यते। अङ्कुशं शक्तिबीजं च रमाबीजं ततः प्रिये ॥३॥
बीजत्रयात्मको मन्त्रो जाड्यौघध्वान्तनाशनः। ततः शक्तिरमाबीजं कामबीजं तथा प्रिये ॥४॥
विद्या श्रुतिधरी प्रोक्ता एषा वर्णत्रयात्मिका। हकारो वह्निमारूढो वामनेत्रेन्दुभूषितः ॥५॥
प्रोक्ता सार्वज्ञविद्येयमेकवर्णात्मिका प्रिये। सिद्धः साध्यः सुसिद्धो वा साधकस्य रिपुः सदा ॥६॥
तदा मन्त्रो भवेद्भक्त्या शुभदो बुद्धिदो भवेत्। मध्याह्ने सलिले चैव भोजने भाजने तथा ॥७॥
गोमये तु बहिर्देशे मैथुने रमणीकुचे। गोष्ठे च निशि गोमुण्डे यन्त्रं डमरुसन्निभम् ॥८॥
विलिख्य मन्त्रवर्णांश्च त्रिश ऊर्ध्वमधस्तथा। लिखेच्चन्दनलेखिन्या प्रयत्नात् साधकोत्तमः ॥९॥
उच्चाटने लिखेद्यन्त्रं गोचर्मणि विशेषतः। सलिले विजयो नित्यं भाजने च महेश्वरः ॥१०॥
गोमये वावदूकः स्याद्गोष्ठे सर्वज्ञतां व्रजेत्। कुचे श्रुतिधरो नित्यं गोमुण्डे च महाकविः ॥११॥
गोमूत्रं बदरीमूलं चन्दनं पांसुमेव च। एकीकृत्याष्टधा जप्त्वा तिलकं धारयेत् सदा ॥१२॥
नमस्कृत्य वरं श्रेष्ठं प्रार्थयेद् भक्तितत्परः। वरं प्राप्य च तस्माद्वै विहरेत्तु यथासुखम् ॥१३॥
नान्यदेवार्चनं स्नानं प्रणवोच्चारणं न तु। वस्त्राञ्चलेन दन्तानां शोधनं लवणेन वा ॥१३॥
रात्रिवासो न मुञ्चेत न शुचिः स्यात् कदाचन। एवं कृते प्रयत्नेन ज्ञात्वा गुरुमुखात् सुधीः ॥१५॥
मासैकेन कवीन्द्रः स्याद् द्विमासेनैव ईश्वरः। त्रिभिर्मासैर्भवेन्मर्त्यः सर्वशास्त्रविशारदः ॥१६॥
पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम्। आयुरारोग्यकामस्तु सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥१७॥

मञ्जुघोष—जड़तासमूहरूपी तिमिर के विनाशक, भवसागर से तारक श्री मञ्जुघोष साधकों को जय और सुख देने वाले हैं। आगमोत्तर के अनुसार मञ्जुघोष का षडक्षर मन्त्र इस प्रकार है—अ र व च ल धीं। इस मन्त्र को शम्भु ने कहा है। यह दीपन मन्त्र है। मूल मन्त्र है—क्रों ह्रीं श्रीं। इसमें तीन अक्षर हैं। यह मन्त्र जड़ता के समूह का नाशक है। दूसरा त्र्यक्षर मन्त्र है—ह्रीं श्रीं क्लीं। यह त्रयात्मिका विद्या श्रुतिधरी है। सर्वज्ञता-दायिनी एकाक्षरी विद्या 'ह्रीं' है। सिद्ध साध्य सुसिद्ध अरि का विचार करके साधक साधना करे तो यह विद्या शुभद और बुद्धिप्रद होती है। मध्याह्न में पानी में, भोजन में, भाजन में, गोबर में, बाहर देश में, मैथुन में, रमणी के स्तन में, गोशाला में, रात में गोमुण्ड में डमरू के समान यन्त्र बनाकर मन्त्रवर्णों को ऊपर-नीचे तीन-तीन करके चन्दन की लेखनी से यत्नपूर्वक लिखे। उच्चाटन के लिये गोचर्म पर लिखे। जल में लिखने से और भाजन में लिखने से विजय होती है। गोबर पर लिखने से वाक्पटु वक्ता होता है। गोशाला में लिखने से सर्वज्ञता प्राप्त होती है। स्तन पर लिखने से श्रुतिधर (एक ही बार सुनकर याद रखने वाला) होता है। गोमुण्ड में नित्य लिखने से महाकवि होता है। गोमूत्र, बेर की जड़, चन्दन के चूर्ण को मिलाकर आठ जप से मन्त्रित करके तिलक लगाकर नमस्कार करे और भक्तितत्पर होकर वर माँगे तो वर प्राप्त होता है। वर प्राप्त होने पर इच्छानुसार विहार करे। दूसरे देवता की पूजा न करे। न स्नान करे, न प्रणव का उच्चारण करे। वस्त्राञ्चल से दन्तशोधन करे या नमक से शोधन करे। रात्रिवास न छोड़े

और न कभी पवित्र रहे। गुरु के मुख से ज्ञात करके इस प्रकार करे। ऐसा करने से एक महीने में साधक कर्वान्द्र हो जाता है एवं दो महीनों में ईश्वर हो जाता है। तीन महीनों में मनुष्य सर्वशास्त्रविशारद होता है। पुत्रार्थी को पुत्र प्राप्त होता है। धनार्थी को धन मिलता है। आयु एवं आरोग्य को चाहने वाला सभी कामनाओं को प्राप्त करता है।

तन्त्रान्तरे—

संवर्तको बकेशश्च द्वौ वर्णौ कथितौ प्रिये। षड्दीर्घभाग्भ्यामेताभ्यां षडङ्गानि समाचरेत्॥१८॥

संवर्तः क्ष। बकेशः श। इति। अथ ध्यानम्—

शशिधरमिव शुभ्रं खड्गपुस्ताङ्कपाणिं सुरुचिरमतिशान्तं पञ्चचूडं कुमारम्।
पृथुतरवरमुख्यं पद्मपत्रायताक्षं कुमतिदहनदक्षं मञ्जुघोषं नमामि॥१९॥

पीठपूजां ततः कुर्यादाधाराद्यादिशक्तितः। भूतप्रेतादिभिः कुर्यात् पीठासनमनन्तरम्॥२०॥
ज्ञानदात्रे नमः पाद्यं बुद्धिदात्रे तथाचमम्। जाड्यनाशाय गन्धः स्यादर्घ्यं यक्षाधिपाय वै॥२१॥
सर्वसिद्धिप्रदायेति पुष्पं दद्याद्विशेषतः। कुन्दपुष्पं समादाय भैरवान् पूजयेत् ततः॥२२॥
असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्तसंज्ञकः। कपाली भीषणश्चैव संहारश्चाष्टमः स्मृतः॥२३॥
ततो धूपादिकं दत्त्वा प्रसूनानि विसर्जयेत्। तैः पुष्पैः पूजयेदष्टौ यक्षिणीश्च विशेषतः॥२४॥
सुरादिसुन्दरी चैव मनोहारिण्यनन्तरम्। कनकावती तथा कामेश्वरी रतिकर्यथ॥२५॥
पद्मिनी च नटी चैव अनुरागिण्यनन्तरम्। पूज्या एतास्तु योगिन्यो हृल्लेखाबीजपूर्विकाः॥२६॥
एवं संपूज्य देवेशं लक्षषट्कं जपेन्मनुम्। घृताक्तकुन्दपुष्पैश्च एकादश शतानि च॥२७॥
जुहुयादेधिते वह्नौ कान्तारे पितृवेश्मनि। एवं सिद्धमनुर्मन्त्री महावागीश्वरो भवेत्॥२८॥ इति।

तन्त्रान्तर में कहा गया है कि षड् दीर्घ क्ष श से अर्थात् क्षां शां, क्षीं शीं इत्यादि से षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

शशिधरमिव शुभ्रं खड्गपुस्ताङ्कपाणिं सुरुचिरमतिशान्तं पञ्चचूडं कुमारम्।
पृथुतरवरमुख्यं पद्मपत्रायताक्षं कुमतिदहनदक्षं मञ्जुघोषं नमामि॥

ध्यान के बाद 'आधारशक्तये नमः' से पीठपूजा करे। 'भूतप्रेतासनाय नमः' कहकर पीठासन की पूजा करे। मूल मन्त्र के साथ इस प्रकार पूजा करे—मूल एतत्पाद्यं ज्ञानदात्रे नमः। मूल आचमनीयं बुद्धिदात्रे नमः, मूल एष गन्धः जाड्यनाशाय नमः। मूल इदमर्घ्यं यक्षाधिपाय नमः। मूल एतत्पुष्पं सर्वसिद्धिप्रदाय नमः।

कुन्दपुष्प से आठ भैरवों की पूजा करे, जैसे—ॐ असितांगभैरवाय नमः, ॐ रुरुभैरवाय नमः, ॐ चण्ड- भैरवाय नमः, ॐ क्रोधभैरवाय नमः, ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः, ॐ कपालीभैरवाय नमः, ॐ भीषणभैरवाय नमः, ॐ संहारभैरवाय नमः। इसके बाद धूपादि प्रदान करके पुष्प विसर्जन करे। कुन्दपुष्पों से आठ यक्षिणियों की पूजा इन मन्त्रों से करे—ह्रीं सुरसुन्दर्यै नमः, ह्रीं मनोहारिण्यै नमः, ह्रीं कनकावत्यै नमः, ह्रीं कामेश्वर्यै नमः, ह्रीं रति काय्यै नमः, ह्रीं पद्मिन्यै नमः, ह्रीं नट्यै नमः, ह्रीं अनुरागिण्यै नमः।

इस प्रकार पूजन करके छः लाख मन्त्र जप करे। इसके बाद घृतमिश्रित कुन्दपुष्पों से श्मशान में या कान्तार में जलती हुई अग्नि में ग्यारह सौ हवन करे। इस प्रकार की पूजा से और हवन से मन्त्र सिद्ध होने पर साधक महान् वागीश्वर हो जाता है।

मञ्जुघोषमहामन्त्रोद्धारः

कुक्कुटेश्वरतन्त्रे—

मेरुपृष्ठे सुखासीनं देवदेवं जगद्गुरुम्। शङ्करं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम्॥१॥

श्रीपार्वत्युवाच

भगवन् सर्वधर्मज्ञ सर्वशास्त्रागमादिषु। वाञ्छितार्थप्रदं लोके मञ्जुघोषं ब्रवीहि मे ॥२॥
विशेषतोऽपि जप्त्वा किं कवित्वपददं नृणाम्। सर्वकर्मप्रदं साक्षान्मनःसिद्धिप्रदं तथा ॥३॥
भक्तानां कामदं मन्त्रं कल्पवृक्षमिवापरम्।

श्रीशङ्कर उवाच

शृणु देवि महामन्त्रं साधकानां सुखावहम्। यज्जप्त्वा जडधीः प्रायो वाचस्पतिसमो भवेत् ॥४॥
अङ्गन्यासकरन्यासबहिर्न्याससमन्वितम्। जपात् सिद्धिप्रदं मन्त्रं विना होमार्चनादिभिः ॥५॥
जपेद्वा जापयेद्वापि साधको विधिपूर्वकम्। सर्वज्ञत्वमवाप्नोति सत्यं सत्यं हि पार्वति ॥६॥
कार्तिकेयमुखं यावत्तावल्लक्षं जपेन्मनुम्। सर्वशास्त्रेषु सोऽप्युच्चैर्बृहस्पतिसमो भवेत् ॥७॥

कुक्कुटेश्वर तन्त्र में मञ्जुघोष का वर्णन करते हुये कहा गया है कि देवदेव जगदगुरु शङ्कर मेरुपृष्ठ पर सुख से बैठे थे। पार्वती ने परमेश्वर से पूछा कि हे शिवजी! आप सभी को अभीष्टफलदायक हैं। मञ्जुघोष मन्त्र के बारे में मुझे बताइये। शिव जी ने कहा—हे देवि! जिस मन्त्र का ज्ञान हो जाने पर जड़ बुद्धि मनुष्य भी बृहस्पति के समान ज्ञानी हो जाता है। उस मन्त्र का वर्णन मैं तुमसे करता हूँ। सुनो! यह मञ्जुघोष मन्त्र हवन तथ पूजा के विना एवं अंग न्यास करन्यास के विना केवल जप करने से ही सिद्ध हो जाता है। यदि साधक स्वयं विधान के अनुसार जप करे तो सर्वश्रेष्ठ है। यदि स्वयं जप करने में अशक्त हो तो किसी अन्य योग्य व्यक्ति के द्वारा जप कराने से भी उसे सर्वज्ञता की प्राप्ति होती है। मञ्जुघोष मन्त्र का छः लाख जप करने से साधक सभी शास्त्रों का ज्ञाता एवं बृहस्पति के समान हो जाता है।

महामन्त्रसाधनाविधानम्

श्रीपार्वत्युवाच

कोऽप्यत्रापि ऋषिश्छन्दः पूज्यते कोऽत्र देवता। ध्येयश्च को वा तत् सर्वं ब्रूहि मे भक्तवत्सल ॥८॥

श्री ईश्वर उवाच

बृहदारण्यको नाम ऋषिर्विराडुदाहृतम्। छन्दश्च मञ्जुघोषाख्यो भुक्तिदानेन मुक्तिदः ॥९॥
ध्यात्वा भैरवरूपेण जपेन्मन्त्रमनन्यधीः। तदा मुक्तिप्रदो मन्त्रो नात्र कार्या विचारणा ॥१०॥
ध्यानं तत्र प्रवक्ष्यामि भैरवस्य महात्मनः। यथा ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं तन्मे निगदतः शृणु ॥११॥
सात्त्विकं राजसं चैव तामसं तदनन्तरम्। ध्यानं वक्ष्ये महादेवि क्रमेण हितकाम्यया ॥१२॥
सद्यः सिद्धिकरं रूपं ध्यात्वा जपेच्च सात्त्विकम्। सिद्धिप्रदं साधकानां भक्तानां चिन्तितप्रदम् ॥१३॥
मन्त्रोद्धारमिदं देवि त्रैलोक्यस्यातिदुर्लभम्। अप्रकाश्यं परं गोप्यं न देयं यस्य कस्यचित् ॥१४॥
मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि गुह्याद्गुह्यतरं प्रिये।
विष्ण्वग्निवाश्च शशियुक् चलधीषडर्णो मन्त्रः समस्तजगतां सकलेष्टदश्च।
सर्वज्ञतां सदसि वाक्पटुतां प्रसूते वेदान्तवेदनिरतस्य वसुप्रदः स्यात् ॥१५॥
आशु मन्त्रं जपेन्मन्त्री स्वमन्त्रं यदि साधकः। बलिनैवेद्यभुक् साक्षाद् बृहस्पतिरिवापरः ॥१६॥
मासमात्रेण यः कुर्यात् पुरश्चरणवान्नरः। तस्यापि वदनाद्वाणी निःसरेद्वरवर्णिनि ॥१७॥
मासमात्रेण सततं कविरेव न संशयः। गोमुण्डे गवि पृष्ठे च चक्रे वापि च गोमये ॥१८॥
यन्त्रे मन्त्रं लिखित्वादौ पश्चान्मन्त्रं जपेत्पुनः। ध्यानमात्रं विधायादौ भावयित्वा चिरं सुधीः ॥१९॥
निर्जनं स्थानमासाद्य जपेन्मन्त्रमधोमुखः। पौर्णमासीं समासाद्य कुन्दस्य कुसुमैः शतैः ॥२०॥
अष्टाधिकैश्च संपूज्य जपेन्मन्त्रं चतुष्पथे। त्रिमुण्डारोहणं कृत्वा निशीथे मुक्तकुन्तलः ॥२१॥

षण्मासमात्रं जपति यदि मन्त्री विधानवित्। बृहस्पतिसमो वक्ता नात्र कार्या विचारणा ॥२२॥
कुक्कुरस्य च मुण्डैकं मुण्डं क्रोष्टुर्वृषस्य च। त्रिमुण्डमेतद् विख्यातं साधकानां सुखावहम् ॥२३॥
आसने चैव गोमुण्डं वामे कुक्कुरमुण्डकम्। दक्षिणे च शिवामुण्डं कृत्वा पूजां समाचरेत् ॥२४॥
अर्धचन्द्राकृति साक्षाद्बालचन्द्रोपमं स्फुटम्। यन्त्रं लिखेत्तत्र पूजां कुन्दस्य कुसुमेन च ॥२५॥

सव्येन पाणिकमलेन जपादिपूजा शृङ्गारशीलनविधि: खलु दक्षिणेन।
राकासुधाकरमरीचितुषारगौरं ध्यात्वा चतुष्पथतटे वृषमस्तके च ॥२६॥
सञ्चिन्त्य कुक्कुरशिर: शिरसाधिरूढं कुन्देन साधकतमो जपति प्रकामम्।
गोचर्मणा विरचितं रसलक्षमग्रे चक्रं ततोऽपि नवकुङ्कुमरोचनाभि: ॥२७॥
निर्माय सव्यविधिना व्यजने श्मशाने संपूजयेद्वनभवैश्च नवै: पलाशै:।
संपूर्णमण्डलतुषारमरीचिमध्ये बालं विचिन्त्य धवलं वरखड्गहस्तम् ॥२८॥
(उद्दामकङ्कण(केशनि)वहं वरपुस्तकाढ्यं नग्नं जपेत् क्षतजपद्मदलायताक्षम् ॥२९॥
अरिष्टगेहे निशि तैलमेवमादाय यत्नात् करपल्लवेन।
तेनाञ्चितं काञ्चनपुष्पमेव निवेद्य तस्मै जपति प्रकामम्)॥३०॥
अशोकशाकोटतरोश्च मूले विलिप्य पादौ वदनामृतेन।
त्रिमुण्डमात्राश्रित एव रात्रौ जपेद्यथाशक्ति तु पौर्णमास्याम् ॥३१॥
लकुचतरुतलस्थो मुण्डमात्रैकरूढो हिमकरकरगौरं चिन्तयित्वा निशीथे।
यदि जपति जडात्मा मन्त्रमेनं त्रिलक्षं भवति जगति साक्षाद्गीष्पतिर्नात्र चित्रम् ॥३२॥
भुक्त्वान्नमेव कदलीतरुमूलसंस्थ आस्तीर्णपुष्परचितासनसंनिविष्ट: ॥३३॥
राकाविधूद्गममुपेत्य करोति पूजां य: सोऽप्यजेय इति वाक्पतिरीश्वर: स्यात् ॥३४॥
जिह्वां विमृज्य निजपाणिसरोरुहाभ्यां कुन्दप्रसूनशतकै: परिपूज्य गोष्ठे।
यो वै जपेदनुदिनं रसलक्षमात्रं शेषं जयेत् किमुत वाक्पतिमेकवक्त्रम् ॥३५॥
स्थित्वा निशीथसमये रजकस्य काष्ठे खड्गान्वितो जपति यद्यपि पौर्णमास्याम्।
संपूर्णमासमथ वा तरसापि तस्य वक्त्राद् विनि:सरति गीरमृतायमाना ॥३६॥
यो दन्तधावनकृतैश्च करञ्जकाष्ठैस्तस्यापि गीष्पतिवचो नियतं सुलभ्यम्।
तिलतैलेन मतिमान् कुन्दकैरवपुष्पकै:। यत्नतो जुहुयान्मन्त्री सर्वसिद्धिमुपालभेत् ॥३७॥
मञ्जिष्ठतोयसुवचासितभानुपुष्पै: स्वीयाङ्गशोणितयुतै: समकुष्ठकैश्च।
कृत्वा ललाटफलके तिलकं जपस्थो विद्यार्थबोधविषये नवगीष्पति: स्यात् ॥३८॥ इति।

जप-ध्यान की विधि—पार्वती जी ने पूछा कि हे भक्तवत्सल! इस मन्त्र का ऋषि कौन है? कौन-सा छन्द है? किस देवता की पूजा होती है तथा किसका ध्यान किया जाता है? यह कृपया मुझे बतलाइये। शिवजी ने कहा कि हे पार्वति! इस मन्त्र के ऋषि बृहदारण्यक, छन्द विराट् और देवता मञ्जुघोष हैं। इनकी आराधना भक्तिपूर्वक करने से मुक्ति प्राप्त होती है।

साधक एकाग्र चित्त से भैरवरूप में देवता का ध्यान करके मन्त्र जप करे। इनका ध्यान तीन प्रकार का है—१. सात्त्विक, २. राजसिक, ३. तामसिक। सात्त्विक ध्यान करके जप करने से सिद्धि निश्चित रूप से होती है। भक्त साधक के सभी मनोरथ पूरे होते हैं। इस देवता का मन्त्र तीनों लोकों में दुर्लभ है। इस मन्त्र को साधक गुप्त रखे। साधारण मनुष्य को न बतलावे। मन्त्रोद्धार करने पर छ: अक्षरों का इनका मन्त्र होता है—अ र व च ल धीं। इस षडक्षर मन्त्र की उपासना करने से साधक को सर्वज्ञता प्राप्त होती है। इस मन्त्र का आराधक वाक्पटु, वेद-वेदान्तादि शास्त्रों का पारगामी एवं धनवान होता है। यदि साधक बलि और नैवेद्यादि देकर मन्त्र का जप दश हजार करता है तो वह दूसरे बृहस्पति के समान पूजनीय हो जाता है।

जो मनुष्य केवल एक महीने तक इसका पुरश्चरण करता है, उसके मुख से गद्य-पद्यमयी वाणी अनवरत निकलती रहती है। तीन महीनों तक पुरश्चरण करने वाला साधक असाधारण कवित्व से सम्पन्न होता है।

साधन विधियाँ—गोमुण्ड पर, गोपृष्ठ पर, चक्र पर या गोबर पर यन्त्र बनाकर उसमें मन्त्र को लिखकर निम्नलिखित विधियों में से किसी एक के अनुसार जप करे—१. मञ्जु घोष का ध्यान करके चिन्तन करता हुआ किसी शून्य स्थान में नीचे की ओर मुख किए हुए पूर्णिमा तिथि से जप प्रारम्भ करे। २. एक सौ आठ कुन्दपुष्पों से चौराहे पर पूजा करके जप करे। ३. कुत्ते का मुण्ड, बकरे का मुण्ड और बैल का मुण्ड—इस त्रिमुण्ड पर बैठकर बाल खोले हुए आधी रात में जप करे। छः महीनों तक जप से साधक बृहस्पति के समान वक्ता होता है। ४. गोमुण्ड पर बैठकर बाँयें भाग में कुत्ते का मुण्ड और दाँयें भाग में गीदड़ का मुण्ड रखकर पूजा करे। अर्द्ध चन्द्र की आकृति के समान बाल चन्द्र जैसा उज्ज्वल मन्त्र लिखकर उसकी कुन्दपुष्पों से पूजा करे। पूजा बाँयें हाथ से करे। शृंगार रस से युक्त होकर कार्य समापन पूर्वक दाँयें हाथ से करे। ५. पूर्ण चन्द्र और तुषार के समान धवल वर्ण मञ्जुघोष का ध्यान करके चौराहे पर वृषभमुण्ड पर बैठकर कुत्ते के मुण्ड का चिन्तन करता हुआ कुन्द के फूलों से पूजा के बाद जप करने से अभिलषित कार्य सिद्ध होता है। ६. गोचर्म पर षट्कोण मण्डल कुङ्कुम रोली से बनाकर निर्जन श्मशान में बैठकर कुन्दपुष्पों तथा वनोत्पन्न पलाश फूलों से बाँयें हाथ से पूजा करे एवं इस प्रकार ध्यान करे—

सम्पूर्णमण्डलतुषारमरीचिमध्ये बालं विचिन्त्य धवलं वरखड्गहस्तम्।
उद्दामकेशनिवहं वरपुस्तकाढ्यं नग्नं जपेत्क्षतजपद्मदलायताक्षम्।।

७. रात्रिकाल में सूतिका गृह का तेल दोनों हाथों में मलकर उसी हाथ से कांचन पुष्प चढ़ाकर कामना-सहित जप करे। ८. पलाश वृक्ष की जड़ या अशोक वृक्ष की जड़ में बैठकर थूक से पैरों में लेप लगाकर त्रिमुण्ड पर बैठकर पूर्णिमा की रात में यथाशक्ति जप करे। ९. आधी रात में लकुच वृक्ष के नीचे पूर्वोक्त त्रिमुण्ड में से किसी भी एक मुण्ड पर बैठकर चन्द्रमा के समान गौर वर्ण मञ्जुघोष का चिन्तन करते हुए उक्त मन्त्र का तीन लाख जप करे। उपर्युक्त नव विधियों में से किसी भी एक विधि से मन्त्र जप करने वाला साधक बृहस्पति के समान वाग्मी होता है। १०. भोजन के बाद केले की जड़ में पुष्पासन पर बैठकर चन्द्रोदय के समय जो व्यक्ति मञ्जुघोष का पूजन करता है, वह संसार में शास्त्रार्थ में बृहस्पति के समान अजेय होता है। ११. अपने दोनों हाथों से जीभ को साफ करके गोशाला में बैठकर एक सौ आठ रास्ना पुष्पों से प्रतिदिन पूजा करके मञ्जुघोष के मन्त्र का एक लाख जप जो करता है वह ईश्वर पर भी विजय प्राप्त कर सकता है तथा उससे वृहस्पति भी पराजित होते हैं। १२. पूर्णिमा की आधी रात में धोबी के पट्टे या बैठकर हाथों में तलवार लेकर एक महीने तक मञ्जुघोष मन्त्र का जो जप करता है, उसके मुख से अनायास ही अमृतोपम मधुर गद्य-पद्यमयी वाणी निकलने लगती है। १३. जो साधक दतुवन करते हुए करञ्ज काष्ठ पर बैठकर उक्त मन्त्र का जप करता है, वह सहज ही बृहस्पति के समान वाक्यरचना करने में समर्थ होता है। १४. कुन्दकलिका और कुन्दपुष्पों में तेल मिलाकर हवन करके उक्त मन्त्र का जप करने वाला साधक सभी सिद्धियों को प्राप्त करता है। १५. मजीठ, मोथा, वच, सफेद अकवन की जड़, अपना खून और कूठ को मिलाकर पीसकर उसके लेप से जो अपने मस्तक पर तिलक लगता है और मञ्जुघोष की आराधना करता है, वह दूसरे वृहस्पति के समान हो जाता है।

ससाधनं मञ्जुघोषमन्त्रान्तरम्

भैरवतन्त्रे मञ्जुघोषमन्त्रः—

मञ्जुघोषाख्यममलं मन्त्रमाकर्णय प्रिये। धनवंशप्रदं रम्यं सार्वज्ञवाग्मिताप्रदम्॥१॥
अदोषकवितामूलममलं प्रतिभाप्रदम्।

श्रीदेव्युवाच

भगवन् गिरिजानाथ कथयस्व यथोदितम्। मञ्जुघोषः स कः कीदृक् तस्यानुष्ठानमेव हि॥२॥

श्रीईश्वर उवाच

श्रूयतां देवि मे वाक्यं (नात्र कार्या विचारणा। मञ्जुघोषस्तु यो देवः सोऽहं देवि न संशयः ॥३॥
एकोऽहं शङ्करो देवि नानारूपधरः स्वयम्। तस्यानुष्ठानमधुना) श्रूयतां मम तत्त्वतः ॥४॥
मन्त्रः षडक्षरः सारः सद्यः कुमतिनाशकः। रसलक्षावधिस्तस्य जाप्य एव सुरेप्सितः ॥५॥
(मञ्झलरींलरीमिति मन्त्रः)

त्रिपक्षजपनाद् देवि वाग्मी भवति मानवः। सुकवित्वं भवेत् तस्य प्रतिमा विश्वजित्वरी ॥६॥
मासत्रयं जपेद्यस्तु पण्डितोऽपण्डितो यदि। षण्मासं यस्तु जपति स सर्वज्ञः कुशाग्रधीः ॥७॥
अब्देन सिद्धयः सर्वा भवन्ति सत्यमीश्वरि। आहारोऽस्य नृणां वर्चो नैवेद्यं चक्षुषोर्मलम् ॥८॥
मूत्रैः पाद्यं ददेत् तस्य गन्धो विट्खदिरोद्भवः। अरण्यस्य च पत्राणि पुष्पाण्येव सुनिश्चितम् ॥९॥
एरण्डमूलैः कार्पासबीजमर्घ्यं प्रचक्षते। तुण्डकीलालदानेन भवेदाचमनीयकम् ॥१०॥
ध्यानं वक्ष्ये महादेवि सर्वसिद्धिप्रदायकम्।

शशिधरमिव शुभ्रमित्यादि प्रागुक्तं ध्यानम्।

मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि नमस्कारोपदेशतः। शृणु देवि महाभागे कलौ सद्यः फलप्रदम् ॥११॥
मन्त्रं सर्वार्थदं सारं वशीकरणमुत्तमम्। अमलं निर्गुणं सारं गुणितं सर्वकामदम् ॥१२॥
तं नमामि हितं नाथं मञ्जुघोषं नमाम्यहम्। वरेण्यं परमं सारं स्तुतं ब्रह्मादिभिः सुरैः ॥१३॥
रक्तं रजोगुणैर्युक्तं मञ्जुघोषं नमाम्यहम्। वचनेन न जानन्ति कायेन न च कोविदाः ॥१४॥
तं शान्तं तमसा युक्तं पीतवस्त्रं नमाम्यहम्। चरणे पतिता यस्य दैत्यानां जयहेतवे ॥१५॥
चरणे पतितो जीवो वृद्धये तं नमाम्यम्। न जानन्ति सुरा यस्य तत्त्वं सत्त्वगुणेन वै ॥१६॥
कृष्णं समस्तसारं च मञ्जुघोषं नमाम्यहम्। धीशं विश्वेश्वरं चैव प्रतिपत्त्यादिहेतुकम् ॥१७॥
सकलं निष्कलं चैव तं नमामि हितप्रदम्। (ऋषिः कण्वो भवेत् पंक्तिश्छन्दोऽङ्गानि षडक्षरैः)॥१८॥
दक्षिणां च ततो दद्याद् गुरुतुष्टिर्यथा भवेत्। गुरुसन्तोषमात्रेण सिद्धिर्भवति निश्चितम् ॥१९॥
(पिता गुरुर्न कार्यो वै दीक्षाकर्मणि पार्वति। यावत्कालं सुतो दुःखी पिता तु नरकं व्रजेत् ।)॥२०॥

इति मञ्जुघोषप्रकरणम्।

मञ्जुघोष मन्त्र—भैरवतन्त्र में ईश्वर ने कहा है कि हे प्रिये! अब मञ्जुघोष के निर्मल मन्त्र को सुनो। यह मन्त्र धन एवं वंशप्रदायक, रम्य, सर्वज्ञतादायक एवं वाग्मितादायक है। निर्दोष कविता से युक्त निर्मल प्रतिभा-प्रदायक है। श्री देवी ने कहा कि हे भगवन्! मञ्जुघोष कैसे देवता हैं और उनकी आराधना या अनुष्ठान किस प्रकार किया जाता है? इसका वर्णन कृपया कीजिये। शिवजी ने कहा कि हे पार्वति! मञ्जुघोष का मन्त्र धन, वंश, सर्वज्ञता और वाक्शक्ति-प्रदायक है। इस मन्त्र से आराधना करने पर कविता करने की शक्ति तथा सभी शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त होता है। मञ्जुघोष और कोई नहीं हैं, स्वयं मैं ही हूँ। मैं ही अनेक प्रकार के रूप धारण करके भक्तों के मनोरथों को पूरा करता हूँ। अब तुम मञ्जुघोष मन्त्र की उपासना-पद्धति को सुनो—

१. मञ्जुघोष मन्त्र छः अक्षरों का है। इसकी आराधना करने पर कुमति का नाश तुरन्त होता है। छः लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। पैंतालीस दिनों तक जप करने पर साधक वाक्शक्ति से युक्त होता है। उसकी कवित्व शक्ति असाधारण होती है। बुद्धि से वह विश्वविजयी होता है।

२. तीन महीनों तक इसका जप करने पर मूर्ख भी पण्डित हो जाता है।

३. छः महीनों तक जप करने से कुशाग्र बुद्धि वाला एवं सर्वज्ञ होता है।

४. एक वर्ष तक जप करने से सर्वसिद्धिसम्पन्न होता है। इस देवता का भोजन मानव मल, नैवेद्य आँखों का कीचड़, पाद्य मानव मूत्र और गन्ध कत्था है। जङ्गली वृक्षों के पत्ते फूलों से इनकी पूजा होती है। रेंडी के तेल के साथ विनौले से अर्घ्य

देना चाहिये। अपने थूक से आचमनीय प्रदान करना चाहिये। इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

शशिधरमिव शुभ्रं खड्गपुस्ताङ्कपाणिं सुरुचिरमतिशान्तं पञ्चचूडं कुमारम्।
पृथुतरवरमुख्यं पद्मपत्रायताक्षं कुमतिदहनदक्षं मञ्जुघोषं नमामि।।

मन्त्रोद्धार—प्रदायक, सर्वार्थप्रद मन्त्रों में सर्वश्रेष्ठ एवं उत्तम वशीकरणकारक मञ्जुघोष कर षडक्षर मन्त्र है— अरवचलधीं। आराधना करने पर कलियुग में इससे शीघ्र फल मिलता है।

नमस्काररूप में इसका उपदेश इस प्रकार किया गया है—अतीव निर्मल, निर्गुण, अकारस्वरूप समस्त कामनाओं का देने वाले मञ्जुघोष को मैं नमस्कार करता हूँ। वरण करने योग्य, ब्रह्मादि देवताओं द्वारा स्तुत, रकारस्वरूप, रक्तवर्ण, रजोगुणयुक्त मञ्जुघोष को मैं प्रणाम करता हूँ। विद्वान् लोग जिसे वचन एवं शरीर से नहीं जानते, उस शान्त, तमोगुणयुक्त, वकारस्वरूप, पीत वस्त्रधारी मञ्जुघोष को मैं नमस्कार करता हैं। दैत्यों की विजय के कारण जिसके चरण का देवलोग अवलम्बन करते हैं एवं जीवगण जिसके चरणों का आश्रय ग्रहण करते हैं, उस वकारस्वरूप मञ्जुघोष को नमस्कार हैं। देवगण भी जिसके सत्त्वगुणस्वरूप तत्त्व को नहीं जाते, उस समस्त जगत् के सारभूत कृष्णवर्ण, बुद्धि के अधिष्ठाता, विश्वेश्वर, प्रतिपत्ति आदि के कारण स्वरूप मञ्जुघोष को नमस्कार है। इस मन्त्र के ऋषि कण्व, छन्द पंक्ति एवं देवता मञ्जुघोष हैं। 'अरवचलधी' मन्त्र के छः अक्षरों से षडङ्ग न्यास और करन्यास करे। गुरुमुख से दीक्षा लेकर गुरु को दक्षिण से सन्तुष्ट करे। गुरु के सन्तुष्ट होने पर सिद्धि मिलती है। पिता को गुरु मान कर मन्त्र-ग्रहण न करे। पिता से मन्त्र ग्रहण करने पर पुत्र जीवन भर दुःख प्राप्त करता है और पिता नरक में जाता है।

सप्रयोगश्चरणायुधमन्त्रः

(अथ चरणायुधमन्त्रः—)

पाशबीजं ततस्तीक्ष्णं वामकर्णेन्दुसंयुतः। सद्योजातयुतः क्रोधी पिनाकी सूक्ष्मसंयुतः ।।१।।
पुनरेतत् त्रयं प्रोक्त्वा खड्गीशोऽनन्तसंयुतः। मायाबीजं द्वितीयादित्रयं प्रोक्त्वा द्विधा ततः ।।२।।
कूर्मः कर्णयुतः खड्गी युतोऽनन्तेन चाङ्कुशम्। अष्टादशाक्षरो मन्त्रश्चरणायुधसंज्ञकः ।।३।।

आंपूंकोलिपूंक्रोलिवाह्रींपूंकोलिपूंकोलिचुवाक्रों।१८।

महारुद्रो मुनिः प्रोक्तो जगती च्छन्द उच्यते। मायाबीजं सृणिः शक्तिः पाशबीजं तु कीलकम् ।।४।।
देवता कथितः सद्भिश्चरणायुधसंज्ञकः। चतुर्भिश्च त्रिभिर्नेत्रैस्त्रिस्त्रिर्यर्णैः षडङ्गकम् ।।५।।
मूर्ध्नि भाले भ्रुवोरक्ष्णोः कर्णयोर्घ्राणयोर्मुखे। कण्ठे कुक्षौ च नाभौ च लिङ्गे चैव गुदे तथा ।।६।।
जानुनोः पादयोर्न्यस्येन्मन्त्रवर्णान् यथाविधि। सर्वालङ्कारसन्दीप्तकण्ठपादद्वयान्वितम् ।।७।।
गलत्सुवर्णवर्णाभं चलत्पक्षद्वयान्वितम्। गौरीकरसरोजस्थं सर्वामरसुपूजितम् ।।८।।
रक्तवर्णशिखायुक्तं रक्तचञ्चुपुटद्वयम्। चलत्पादं समस्तार्तिनाशनं सर्वसिद्धिदम् ।।९।।
एवं ध्यायन् महादेवं कुक्कुटेश्वरसंज्ञितम्। एवं ध्यात्वा यजेत् पीठे शैवे वै ताम्रशेखरम् ।।१०।।
अङ्गावृतिं यजेदादौ दलेष्वष्टसु वै यजेत्। प्रादक्षिण्यक्रमाच्छंभुं गौरीं गणपतिं तथा ।।११।।
कार्तिकेयं च मन्दारं पारिजातं ततः परम्। महाकालं बर्हिणं च चतुरस्रे दिगीश्वरान् ।।१२।।
तदायुधान्यपि बहिः पूजान्ते बलिमाहरेत्। द्वितीयबीजं संवर्तं सबिन्दुं भुवनेश्वरीम् ।।१३।।
कुक्कुटेति द्विरुच्चार्य एह्येति च द्विधा वदेत्। इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापययुगं ततः ।।१४।।
सर्वान् कामांश्च देहि द्वे यं कूं ह्रीं पूं नमः पदम्। कुक्कुटायेति मन्त्रोऽयं जिनयुग्मार्णकः परः ।।१५।।

मधुरत्रययुक्तैश्च लाजैर्दद्याद्बलिं निशि।

पूंक्षंह्रीं कुक्कुट कुक्कुट एहि एहि इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय सर्वान् कामांश्च देहि देहि यं कूं ह्रीं पूं नमः कुक्कुटाय (४८)।

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि महारुद्राय ऋषये नम:। मुखे अतिजगतीच्छन्दसे नम:। हृदये श्रीकुक्कुटेश्वराय देवतायै नम:। गुह्ये ह्रीं बीजाय नम:। पादयो: क्रों शक्तये नम:। नाभौ पूं कीलकाय नम:। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोग: इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, आंपूंकोलि हृदयाय नम:। पूंकोलि शिरसे स्वाहा। वाह्रीं शिखायै वषट्। पूंकोलि कवचाय हुम्। पूंकोलि नेत्रत्रयाय वौषट्। चुवाक्रों अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, मूर्ध्नि आं नम:। भाले पूं नम:। दक्षभ्रूप्रदेशे कों नम:। वामे लिं नम:। दक्षनेत्रे पूं नम:। वामे कों नम:। दक्षकर्णे लिं नम:। वामे वां नम:। दक्षनासिकायां ह्रीं नम:। वामे पूं नम:। वक्त्रे कों नम:। कण्ठे लिं नम:। कुक्षौ पूं नम:। नाभौ कों नम:। लिङ्गे लिं नम:। गुदे चुं नम:। जान्वो: वां नम:। पादयो: क्रों नम:। इति विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्तेऽस्य पुरत: कुङ्कुमचन्दनादिनाष्टदलकमलं विलिख्य तद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रं कुर्यात्, इति पूजायन्त्रं विलिख्य, पुरत: संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते शैवं पीठं समभ्यर्च्य, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते कर्णिकायामग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, दलेषु देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन शम्भवे नम:। गौर्य्यै नम:। गणपतये नम:। कार्तिकेयाय नम:। मन्दाराय नम:। पारिजाताय नम:। महाकालाय नम:। बर्हिणे नम:। इति संपूज्य, लोकपालार्चादि सर्वं प्राग्वत् समाप्य प्रोक्तमन्त्रेण प्रोक्तद्रव्यैर्बलिं दद्यादिति। तथा—

जपेल्लक्षं दशांशेन त्रिमध्वक्तैस्तिलैर्हुनेत्। तर्पणादि तत: कुर्याद् ब्राह्मणाराधनं तत:॥१६॥
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री सर्वाभीष्टं च साधयेत्।

चरणायुध मन्त्र—अट्ठारह अक्षरों का चरणायुध मन्त्र इस प्रकार कहा गया है—आं पूं कोलि पूं कोलि वा ह्रीं पूं कोलि पूं कोलि चुवा क्रों। इस मन्त्र के ऋषि महारुद्र, छन्द जगती, क्रों शक्ति, ह्रीं बीज, पूं कीलक एवं देवता चरणायुध कहे गये हैं। इसका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—महारुद्र ऋषये नम:, मुखे अतिजगतिछन्दसे नम:, हृदये श्री कुक्कुटेश्वराय देवतायै नम:, गुह्ये ह्रीं बीजाय नम:, पादयो: क्रों शक्तये नम:, नाभौ पूं कीलकाय नम:। ऋष्यादि न्यास के प ात् अभीष्ट-सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है।

हृदयादि न्यास—आं पूं कोलि हृदयाय नम:, पूं कोलि शिरसे स्वाहा, वा ह्रीं शिखायै वषट्, पूं कोलि कवचाय हुं, पूं कोलि नेत्रत्रयाय वौषट्, चुवा क्रों अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास करके मन्त्रवर्ण न्यास इस प्रकार करे—मूर्धा में आं नम:, ललाट में पूं नम:, दाहिने भ्रूप्रदेश में कों नम:, बाँयें भ्रूप्रदेश में लिं नम:, दाहिने नेत्र में पू नम:, बाँयें नेत्र में कों नम:, दाहिने कान में लिं नम:, बाँयें कान में वां नम:, दाहिनी नासिका में ह्रीं नम:, बाँयीं नासिका में पूं नम:, मुख में कों नम:, कण्ठ में लिं नम:, कुक्षि में पूं नम:, नाभि में कों नम:, लिङ्ग में लिं नम:, गुदा में चुं नम:, जानुओं में वां नम:, पैरों में क्रों नम:। इस प्रकार न्यास कर निम्नवत् ध्यान करे—

सर्वालंकारसन्दीप्तकण्ठपादद्वयान्वितम्। गलत्सुवर्णवर्णाभं चलत्पक्षद्वयान्वितम्।।
गौरीकरसरोजस्थं सर्वामरसुपूजितम्। रक्तवर्णशिखायुक्तं रक्तचंचुपुटद्वयम्।।
चलत्पादं समस्तार्तिनाशनं सर्वसिद्धिदम्।

इस प्रकार ध्यान के बाद मानस जप करके अपने सामने कुङ्कुम चन्दनादि से अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र से पूजा यन्त्र बनावे। उसे अपने सामने स्थापित करके अर्घ्यादि स्थापन करके आत्मपूजा करे। शैव पीठ के समान पूजा करे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके आवाहनादि से पुष्पोपचार तक की पूजा करे। कर्णिका-मध्य में अग्नि ईशान नैर्ऋत्य वायव्य बीच में और चारो दिशाओं में छ: अंगों की पूजा करे। दलों में देवाग्र से आरम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से इस प्रकार पूजा करे—शम्भवे नम:, गौर्यै नम:, गणपतये नम:, कार्तिकेयाय नम:, मन्दाराय नम:, पारिजाताय नम:, महाकालाय नम:, बर्हिणे नम:। इनकी पूजा के बाद इन्द्रादि दश लोकपालों और उनके आयुधों को पूजा चतुरस्र में करे। पूजा के बाद विहित मन्त्र से मधुरत्रय से युक्त लाजा से बलि प्रदान करे। अड़तालीस अक्षरों का बलिमन्त्र इस प्रकार है—पूं क्षं ह्रीं कुक्कुट कुक्कुट एहि एहि इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय सर्वान् कामांश्च देहि देहि यं कूं ह्रीं पूं नम: कुक्कुटाय।

तदनन्तर एक लाख जप करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त तिल से करे। तर्पण करके ब्राह्मण भोजन करावे। तदनन्तर इस सिद्ध मन्त्र से सभी अभीष्टों का साधन करे।

चरणायुधमन्त्रस्य काम्यप्रयोगसाधनम्

अयुतं द्विशताधिक्यात् प्रयोगादौ जपेन्मनुम् ॥१७॥
दधिक्षीरसिताक्षौद्रसताम्बूलेन्दुपायसैः । बलिं दद्यात् प्रयत्नेन भोजनादौ तदन्तके ॥१८॥
अनेन बलिदानेन कुबेरो धननायकः । बभूव शान्तिके पुष्टौ बलिं दद्यात् प्रयत्नतः ॥१९॥
बलिदानेन सन्तुष्टः कुक्कुटोऽभीष्टदायकः । निश्योदनैर्बलिं दत्त्वा त्रिदिनैर्वशयेज्जगत् ॥२०॥
गोधूमपिष्टघटितैरपूपैर्दुग्धमिश्रितैः । साज्यकर्पूरकैर्दद्याद् बलिं निशि विशेषतः ॥२१॥
त्रिदिनैर्वशमायाति सत्यं जगदशेषतः । यमुद्दिश्य जपेन्मन्त्रं सहस्रं नियतो निशि ॥२२॥
पीतैः पुष्पैर्बिल्वपत्रैः करवीरैः सहस्रशः । पूजयन्नेव सप्ताहात् स नरो दासतां व्रजेत् ॥२३॥
छाग-लावकमांसेन बलिं दत्त्वा निरन्तरम् । समस्ताभीष्टसिद्धिः स्यात् सङ्कटान्मुच्यते ध्रुवम् ॥२४॥
जपेद्रविसहस्रं तु मुक्तकेश उदङ्मुखः । निशीथेऽष्टदिनं यावमुद्दिश्य स्मरन् धिया ॥२५॥
तमाकर्षयति क्षिप्रं योजनानां शतैरपि । जातिफलेऽथ संचूर्णकर्पूरं मध्यतः क्षिपेत् ॥२६॥
स्पृष्ट्वा द्वादशसाहस्रमभिमन्त्र्य तु साधकः । सिन्दूरं तत्र निःक्षिप्य जले तु क्वाथयेत्ततः ॥२७॥
लोहपात्रे तु संस्थाप्य तत् स्पृष्टं स्तम्भितं भवेत् । लोहकारगृहाद्वह्निमानीयायसपात्रके ॥२८॥
हयारिकाष्ठैः प्रज्वाल्य जुहुयात् तत्र धूर्तजैः । शतसंख्यैश्च विषजचूर्णैः सिद्धार्थतैलकैः ॥२९॥
उच्चाटयेद्रिपून् सत्यं सप्ताहान्नात्र संशयः । श्मशानाग्नौ प्रजुहुयात् त्रिदिनान्मारयेदरीन् ॥३०॥
साध्यर्क्षवृक्षजां कृत्वा पुत्तलीं स्थापितेरणाम् । स्पृष्ट्वा सहस्रं प्रजपेन्मूलमन्त्रं हि साधकः ॥३१॥
चिताकाष्ठस्य कीलेन श्मशाने निशि संयुतः । यदङ्गं छेद्यते तस्यास्तदङ्गं तस्य नश्यति ॥३२॥

प्राक्प्रयोगप्रकरणे ये ये पुत्तलीप्रयोगास्ते ते सर्वेऽत्रापि ज्ञेयाः। इति ताम्रचूडप्रकरणम्।

प्रयोगों के आरम्भ में इस मन्त्र का जप दश हजार दो सौ करे। दही, दूध, चीनी, मधु, ताम्बूल, कपूर, पायस से यत्नपूर्वक बलि प्रदान करे। यह बलि नैवेद्य के पहले और बाद में प्रदान करे। इस प्रकार की बलि देने से साधक कुबेर के समान धनवान होता है। शान्ति और पुष्टि कर्म में भी बलि प्रदान करे। बलिदान से सन्तुष्ट होकर कुक्कुट अभीष्टदायक होता है। रात में भात की बलि तीन दिनों तक देने से साधक संसार को वश में कर लेता है। रात में बलि विशेषतः गेहूँ के आँटे में दूध मिश्रित करके पूआ बनाकर गोघृत और कपूर के साथ प्रदान करे। तीनों दिनों तक ऐसा करने से सारा संसार वश में हो जाता है। जिस व्यक्ति को स्मरण करते हुए रात में एक हजार मन्त्रजप किया जाता है और एक हजार पीले फूलों तथा बेल पत्र से पूजा किया जाता है वह एक सप्ताह में दास हो जाता है। बकरे के मांस और लावा पक्षी के मांस की बलि जो निरन्तर देता है, उसके सभी मनोरथ पूरे होते हैं। उसके सभी संकटों का नाश होता है। केश खोल कर उत्तरमुख बैठकर रात में आठ दिनों तक यदि एक हजार जप साध्य का स्मरण करते हुए किया जाता है तो साध्य सौ योजन दूर रहने पर भी शीघ्र आ जाता है। जातीफल चूर्ण और कपूर जल में डालकर उसे स्पर्श किए हुए एक हजार मन्त्र जप करे, उसमें सिन्दूर डालकर लोहे के पात्र में क्वाथ बनावे उसे और स्पर्श करके जप करे तो साध्य स्तम्भित होता है। लोहार के घर से लोहे के पात्र में आग लाकर कनैल की लकड़ी से उसे प्रज्वलित करे। धत्तूर, विष, चूर्ण, कडुआ तेल मिलाकर उस अग्नि में एक सौ हवन करे तो एक सप्ताह में शत्रु का उच्चाटन होता है। श्मशान की अग्नि से तीन दिनों तक हवन करे तो शत्रु मर जाते हैं। साध्य नाम के नक्षत्र वृक्षों से पुत्तली बनाकर स्थापित करे, उसे स्पर्श करके एक हजार मन्त्र जप करे। तदनन्तर चिताकाष्ठ के कील से श्मशान में रात में उस पुत्तली के जिस अंग में छेद किया जाता है, साध्य का वह अंग नष्ट हो जाता है। पूर्वोक्त प्रयोग प्रकरण में जिन पुत्तली प्रयोगों को कहा गया है, वे सभी यहाँ भी प्रयोज्य हैं।

शास्तृमन्त्र: सप्रयोग:

अथ शास्तृप्रकरणम्—

अथ वक्ष्ये मनुं शास्तुः सर्वाभीष्टप्रदायकम्। शास्तारं मृगयाश्रान्तमश्वारूढं गणावृतम्॥१॥
पानीयार्थं विना शास्त्रे ते नतो रैवते नमः। द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो रैवत ऋषिरुच्यते॥२॥
पंक्तिश्छन्दो महाशास्ता देवता सकलेष्टदः। पादैश्चतुर्भिः सर्वेण पञ्चाङ्गन्यासमाचरेत्॥३॥
अश्वारूढं त्रिनेत्रं च शास्तारं पाशकेन च। बद्ध्वा साध्यं साधकाग्रे पातयन्तं भजाम्यहम्॥४॥
ध्यात्वैवं पूजयेत् पीठे शैवे प्राग्वत् सुसाधकः। आदावङ्गानि संपूज्य प्रादक्षिण्याद् दलेष्वथ॥५॥
गोप्तारं पिङ्गलाक्षं च वीरसेनं च शाम्भवम्। त्रिनेत्रं शूलिनं दक्षं भीमरूपं च पूजयेत्॥६॥
चतुरस्त्रे लोकपालान् वज्राद्यायुधसंयुतान्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि रैवताय ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीमहाशास्त्रे देवतायै नमः। इति विन्यस्य, ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, शास्तारं मृगयाश्रान्तं हृदयाय०। अश्वारुढं गणावृतं शिरसे०। पानीयार्थं विना शास्त्रे शिखायै०। ते नतो रैवते नमः कवचाय०। समस्तेनास्त्रं०। इति कराङ्गन्यासं विधाय, ध्यानमानसपूजान्ते स्वपुरतः कुङ्कुमादिना चन्दनादिपीठे चतुर्द्वारयुक्तचतुरस्त्रावृतमष्टदलकमलं कृत्वा, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते शैवं पीठं समभ्यर्च्य, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गपूजां विधायाष्टदलेषु देवाग्रे प्रादक्षिण्येन, गोप्त्रे नमः। पिङ्गलाक्षाय नमः। वीरसेनाय नमः। शाम्भवाय नमः। त्रिनेत्राय नमः। शूलिने नमः। दक्षाय नमः। भीमरूपाय नमः। इति संपूज्य, चतुरस्त्रे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य, धूपदीपादिकं सर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

तथा लक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत्तिलैः। तर्पणादि ततः कुर्यदेवं सिद्धो भवेन्मनुः॥७॥
तस्मै जलार्थिने दद्याद् मध्याह्ने तु जलाञ्जलिम्। गणेभ्योऽपि तथा दद्याञ्जलमञ्जलिना सुधीः॥८॥
तेन सन्तर्पितः शास्ता स्वाभीष्टफलदो भवेत्। अर्धरात्रे बलिं दद्याद्गायत्र्या चाभिमन्त्रितम्॥९॥
अष्टोत्तरशतं जप्यान्मूलमन्त्रमनन्यधीः।

शास्तृ मन्त्र—अब मैं सभी अभीष्टों को देने वाले शास्ता के मन्त्र को कहता हूँ। बत्तीस अक्षरों का शास्ता मन्त्र इस प्रकार है—

शास्तारं मृगयाश्रान्तमश्वारूढं गणावृतम्। पानीयार्थं विना शास्त्रे ते नतो रैवते नमः।।

इस मन्त्र के ऋषि रैवत, छन्द पंक्ति एवं देवता समस्त अभीष्टों को देने वाले महाशाखा कहे गये हैं। इसका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—शिरसि रैवताय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिछन्दसे नमः हृदये श्री महाशास्त्रे देवतायै नमः। बोलकर इस प्रकार पञ्चाङ्ग न्यास करे—शास्तारं मृगयाश्रान्तं हृदयाय नमः, अश्वारूढं गणावृतम् शिरसे स्वाहा, पानीयार्थं विना शास्त्रे शिखायै वषट्। ते नतो रैवते नमः। कवचाय हुम्। तदनन्तर सम्पूर्ण मन्त्र से अस्त्राय नमः। इसी प्रकार करन्यास भी करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

अश्वारूढं त्रिनेत्रं च शास्तारं पाशकेन च। बद्ध्वा साध्यं साधकाग्रे पातयन्तं भजाम्यहम्।।

इस प्रकार ध्यान कर मानस पूजा करे। तब अपने आगे कुङ्कुम चन्दनादि से चार द्वारों से युक्त चतुरस्त्र में अष्टदल कमल पीठ बनाकर उस पर पीठपूजा करे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके आवाहनादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। कर्णिका में पूर्ववत् अंगों की पूजा करे। अष्टदल में देव के आगे से प्रादक्षिण्य क्रम से इन मन्त्रों से पूजा करे—गोप्त्रे नमः, पिङ्गलाक्षाय नमः, वीरसेनाय नमः, शाम्भवाय नमः, त्रिनेत्राय नमः, शूलिने नमः, दक्षाय नमः, भीमरूपाय नमः। इसके बाद चतुरस्त्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि उनके आयुधों की पूजा करे। शेष धूप-दीपादि पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

तदनन्तर एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन तिल से करके तर्पणादि करने से मन्त्र सिद्ध होता है। जलाकांक्षी शास्ता को दोपहर दिन में जलाञ्जलि प्रदान करे। साथ ही गणों को भी जलाञ्जलि देवे। इससे सन्तुष्ट होकर शास्ता अभीष्ट फल प्रदान करते हैं। आधी रात में गायत्री से अभिमन्त्रित बलि प्रदान करे। मूल मन्त्र का एक सौ आठ जप करे।

शास्तृगायत्री

भूताधिपाय चाभाष्य विद्महे पदमीरयेत् ॥१०॥
महादेवाय शब्दान्ते धीमहीति-पदं ततः। तन्नः शास्ता-पदं प्रोक्त्वा ततश्चैवं प्रचोदयात् ॥११॥
गायत्र्येषा समाख्याता सर्वाभीष्टप्रदा नृणाम्।

इति शास्तृप्रकरणम्।

शास्ता का गायत्री मन्त्र है—भूताधिपाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नः शास्ता प्रचोदयात्। शास्ता का यह गायत्री मन्त्र सभी मनोरथों को पूरा करता है।

सध्यानः वैवस्वतमन्त्रः

अथ वैवस्वतमन्त्रः—

अथ वक्ष्ये समासेन वैवस्वतमहामनुम्। यस्य विज्ञानमात्रेण नरकं नैव पश्यति ॥१॥
प्रणवं चाङ्कुशं मायां पाशं वरुणबीजकम्। ङेन्तं वैवस्वतपदं धर्मराजं तथा वदेत् ॥२॥
भक्तानुग्रहकृत् ङेन्तं हृदन्तो जिनवर्णकः।

ओंक्रोंह्रींआंवं वैवस्वताय धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमः ॥२४॥

वह्निनेत्रेषुबाणाद्रिनेत्रार्णैरङ्गकल्पना। नीलजीमूतसङ्काशं नृणां पुण्यवतां शुभम् ॥३॥
अशुभं पापकर्तृणां नानाभरणभूषितम्। दण्डहस्तं च महिषारूढं पितृगणैर्वृतम् ॥४॥
दक्षिणाशाधिपं वीरं सूर्यपुत्रं सदा स्मरेत्। एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं सुधीः ॥५॥
प्रत्यहं सर्वदुःखार्तिनाशनं नरकापहम्। सर्वसंपत्करं शत्रुनाशनं श्रीसुखावहम् ॥६॥
सिद्धमन्त्रत्वादृष्यादिकं नास्ति।

वैवस्वत धर्मराज मन्त्र—जिसके ज्ञानमात्र से व्यक्ति को नरक का दर्शन नहीं होता, उस वैवस्वत धर्मराज का तेईस अक्षरों का महामन्त्र इस प्रकार है—ॐ क्रों ह्रीं आं वं वैवस्वताय धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमः। मन्त्र के ३,२,५,४,७,२ वर्णों से अंग न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

नीलजीमूतसङ्काशं नृणां पुण्यवतां शुभम्। अशुभं पापकर्तृणां नानाभरणभूषितम्।।
दण्डहस्तं च महिषारूढं पितृगणैर्वृतम्। दक्षिणाशाधिपं वीरं सूर्यपुत्रं सदा स्मरेत्।।

इस प्रकार का ध्यान करके एक सौ आठ मन्त्र-जप प्रतिदिन करे। इससे सभी दुःखों का नाश होता है और मनुष्य नरकगामी नहीं होता। यह सभी सम्पत्तियों का दायक, शत्रुविनाशक एवं श्री तथा सुखप्रदायक है। यह सिद्ध मन्त्र है; अतः इसके ऋष्यादि नहीं होते।

सध्यानादिकश्चित्रगुप्तमन्त्रः

अथ चित्रगुप्तमन्त्रः—

प्रणवो हृदयं चैव विचित्रं ङेन्तमेव च। धर्मान्ते लेखकं ङेन्तं यमवान्ते हिकाधि च ॥१॥
कारिणे यमलान्ते च वरयूं जन्म चेति च। संपदन्ते च प्रलयं कथय द्वेऽग्निवल्लभा ॥२॥
अष्टात्रिंशार्णको मन्त्रश्चित्रगुप्तस्य दुःखहा। सप्ताङ्गनवनागाङ्गनेत्रार्णैरङ्गकल्पना ॥३॥

ॐ नमो विचित्राय धर्मलेखकाय यमवाहिकाधिकारिणे यमलवरयूं जन्मसंपत्प्रलयं कथय कथय स्वाहा। (३८)।

किरीटिनं चित्रवस्त्रं चित्राभरणभूषितम्। विचित्रासनमासीनं पूर्णेन्दुसदृशाननम्॥४॥
पापपुण्यानि जीवानां लिखन्तं पितृराट्सखम्।

ध्यायेदिति शेषः।

सिद्धमन्त्रं जपेन्मर्त्यः प्रत्यहं नियतः शुचिः। चित्रगुप्तः प्रसन्नः सन् पुण्यमेव लिखेत् परम्॥५॥
पापं न गणयेत्तस्य शुभं वितनुतेऽन्वहम्। इति।

चित्रगुप्त मन्त्र--समस्त दुःखों को हरण करने वाला अड़तीस अक्षरों का चित्रगुप्त का मन्त्र है—ॐ नमो विचित्राय धर्मलेखकाय यमवाहिकाधिकारिणे यमलवरयूं जन्मसम्पत्प्रलयं कथय कथय स्वाहा। यह मन्त्र दुःखों का नाशक है। मन्त्र के ७,६,९,८,६,२ वर्णों से अंगन्यास किया जाता है।

षडङ्ग न्यास—ॐ नमो विचित्राय हृदयाय नमः, धर्मलेखकाय शिरसे स्वाहा, यमवाहिकाधिकारिणे शिखायै वषट्, यमलवरयूं जन्मसम्पत्प्रलंयं कवचाय हुं। कथय कथय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

किरीटिनं चित्रवस्त्रं चित्राभरणभूषितम्। विचित्रासनमासीनं पूर्णेन्दुसदृशाननम्।।
पापपुण्यानि जीवानां लिखन्तं पितृराट्सखम्।

प्रतिदिन पवित्र होकर निश्चित संख्या में इस सिद्ध मन्त्र का जप करे। इससे चित्रगुप्त प्रसन्न होकर साधक के पुण्यों को ही लिखते हैं, पापों को नहीं लिखते। साथ ही नित्य उसका कल्याण करते हैं।

सविधिरासुरीमन्त्रः

अथ आसुरीमन्त्रः—

प्रणवं कटुके कट्वन्ते कपत्रे सुभान्तगे। आसुर्य्यन्ते तु रक्ते च ततो वै रक्तवाससे॥१॥
अथर्वणस्य दुहिते अघोरेऽघोरकर्म च। कारिकेऽमुकशब्दान्ते स्यगतिं दहयुग्मकम्॥२॥
उपविष्टस्य तु गुदं दहयुग्मं च सुप्त च। स्यमनो दहयुग्मं च प्रबुद्धस्य हृदान्तके॥३॥
यं दह द्वे हन द्वन्द्वं पच द्वे तावदन्तके। दह तावत्पचान्ते च यावन्मे वशमा-पदम्॥४॥
याति वर्मास्त्रयुग्वह्नेर्वल्लभान्तो मनुर्मतः। दशोत्तरशतार्णोऽयमासुर्य्या मन्त्रनायकः॥५॥

ॐ कटुके कटुकपत्रे सुभगे आसुरि रक्ते रक्तवाससे अथर्वणस्य दुहिते अघोरे अघोरकर्मकारिके अमुकस्य गतिं दहदह उपविष्टस्य गुदं दहदह सुप्तस्य मनो दहदह प्रबुद्धस्य हृदयं दहदह हनहन पचपच तावद्दह तावत्पच यावन्मे वशमायाति हुंफट् स्वाहा।११०।

अङ्गिरा मुनिराख्यातो विराट् छन्द उदाहृतम्। देवता चासुरी दुर्गा प्रणवो बीजमुच्यते॥६॥
स्वाहा शक्तिः समुद्दिष्टा दहयुग्मं तु कीलकम्। नवार्णैर्हृदयं प्रोक्तं षड्वर्णैः शिर ईरितम्॥७॥
सप्तवर्णैः शिखा वर्म वसुवर्णैस्ततः परम्। रुद्रार्णैर्नेत्रमाख्यातं पञ्चषष्ठ्या तथास्त्रकम्॥८॥
वर्मास्त्रस्वाहयान्ते स्युरङ्गमन्त्राः षडेव हि। सरोजनिलयां देवीं शरच्चन्द्रप्रभां शिवाम्॥९॥
वरदं चाभयं शूलमङ्कुशं दधतीं करैः। नागयज्ञोपवीतां च सर्वाभरणभूषिताम्॥१०॥
अथर्वणसुतां घोरामासुरीं चिन्तयेद्बुधः। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः॥११॥
राजिकाभिर्घृताक्ताभिस्ततः सिद्धो भवेन्मनुः। आसुर्य्याश्चैव पञ्चाङ्गं शतवाराभिमन्त्रितम्॥१२॥
तेन प्रधूपयेन्मन्त्री स्वात्मानं नियतो निशि। तद्गन्धाघ्राणतः सर्वे लोका वश्या भवन्ति हि॥१३॥
मधुरत्रयसंयुक्तामासुरीं जुहुयान्निशि। सहस्रसंख्यया सत्यं वशयेदखिलं जगत्॥१४॥

लवणदुर्गाप्रकरणे यावन्तः प्रयोगाः प्रोक्तास्तेऽत्रापि ज्ञेयाः।

राजिका निम्बपत्राणि कटुतैलसमन्वितम्। नाम संयोज्य मन्त्रे तु जुहुयादेधितेऽनले॥१५॥

ज्वराक्रान्तो रिपुः सद्यो म्रियते नात्र संशयः। राजीं लवणसंयुक्तां हुत्वा स्फोटो भवेदरेः ॥१६॥
अर्कदुग्धयुतां राजीं हुत्वान्धत्वं रिपोर्भवेत्। पलाशेन्धनदीप्ताग्नौ घृताक्तां राजिकां हुनेत् ॥१७॥
ब्राह्मणा वशमायान्ति क्षत्रिया गुडयोगतः। दधियोगेन वैश्याः स्युः शूद्रा लवणयोगतः ॥१८॥
आसुर्युपासकानां च नासाध्यं भुवनत्रये।

इत्यासुरीप्रयोगः।

आसुरी मन्त्र—मूलोक्त श्लोकों का उद्धार करने पर एक सौ दस अक्षरों का आसुरी मन्त्र इस प्रकार स्पष्ट होता है— ॐ कटुके कटुकपत्रे सुभगे आसुरि रक्ते रक्तवाससे अथर्वणस्य दुहिते अघोरे अघोरकर्मकारिके अमुकस्य गतिं दह दह उपविष्टस्य गुदं दह दह सुप्तस्य मनो दह दह प्रबुद्धस्य हृदयं दह दह हन हन पच पच तावद्दह तावत्पच यावन्मे वशमायाति हुं फट् स्वाहा।

इस आसुरी मन्त्र के ऋषि अंगिरा, छन्द विराट्, देवता आसुरी दुर्गा, बीज ॐकार, शक्ति वाहा एवं दह दह कीलक कहा गया है। अभीष्ट सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है। इसका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है— ॐ आंगिरसे ऋषये नमः शिरसि, ॐ विराट् छन्दसे नमः मुखे, ॐ आसुरी दुर्गा देवतायै नमः, हृदि, ॐ ॐ बीजाय नमः गुह्ये, ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः।

षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—ॐ कटुके कटुकपत्रे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः। सुभगे आसुरि हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा, रक्ते रक्तवाससे हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट्, अथर्वणस्य दुहिते हुं फट् स्वाहा कवचाय हुं, अघोर अघोरकर्मकारिके हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, अमुकस्य गतिं दह दह उपविष्टस्य गुदं दह दह सुप्तस्य मनो दह दह प्रबुद्धस्य हृदयं दह हन हन पच पच तावद्दह तावत्पच यावन्मे वशमायाति हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्। षडङ्ग न्यास के बाद निम्नवत् ध्यान करे—

सरोजनिलयां देवीं शरच्चन्द्रप्रभां शिवाम्। वरदं चाभयं शूलमंकुशं दधतीं करैः।।
नागयज्ञोपवीतां च सर्वाभरणभूषिताम्। अथर्वणसुतां घोरामासुरीं चिन्तयेद्बुधः।।

तदनन्तर दश हजार मन्त्र जप करे। दशांश हवन घृताक्त राई से करे तो मन्त्र सिद्ध होता है। राई का पञ्चाग (जड़, शाखा, पत्र, पुष्प, फल) लेकर मूल मन्त्र के एक सौ जप से अभिमन्त्रित करे। उससे रात में स्वयं को धूपित करे। ऐसा करने पर जो उसके शरीर का गन्ध सूँघता है, वह उसके वश में हो जाता है। रात में मधुयुक्त राई की एक हजार आहुतियाँ देकर साधक संसार को वश में कर लेता है। राई नीम पत्ती में कडुआ तेल मिलाकर नाम के साथ मन्त्र जोड़कर प्रज्वलित अग्नि में हवन करे तो शत्रु बुखार से तुरन्त मर जाता है। राई-नमक मिलाकर हवन करने से शत्रु को चेचक हो जाता है। अकवन के दूध में राई मिलाकर हवन करने पर शत्रु अन्धा हो जाता है। पलाश की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में घृताक्त राई के हवन से ब्राह्मण वश में होते हैं। गुड़-राई मिलाकर हवन से क्षत्रिय वश में होते हैं। दही राई के हवन से वैश्य और राई लवण मिश्रण के हवन से शूद्र वश में होता है। आसुरी के उपासकों के लिये तीनों लोकों में कुछ भी असाध्य नहीं होता है।

कुबेरमन्त्रः

अथ कुबेरमन्त्रः—

कुबेरस्य मनुं वक्ष्ये सर्वसंपत्प्रदायकम्। यक्षं ङेन्तं कुबेरं च तथा वैश्रवणाय च ॥१॥
धनधान्याधिपतये धनधान्यपदं ततः। समृद्धिं मे देहि-पदं दापयाग्निवधूर्मतः ॥२॥
पञ्चत्रिंशार्णको मन्त्रः कुबेरस्य महात्मनः।

'यक्षाय कुबेराय वैश्रवणाय धनधान्याधिपतये धनधान्यसमृद्धिं मे देहि दापय स्वाहा'(३५)।

विश्रवा मुनिराख्यातो बृहती च्छन्द एव च। कुबेरो देवता प्रोक्तो वह्न्यब्धिशरदन्तिभिः ॥३॥
नागाद्रिवर्णैर्मनुजैः षडङ्गविधिरीरितः। गारुत्मतशिलाकूटसन्निभं निधिनायकम् ॥४॥
किरीटहारकेयूरवलयाङ्गदभूषणम्। वरं गदां च दधतं नरवाहनसंपदम् ॥५॥

अलकानगराधीशं शिवमित्रं विचिन्तयेत्। जपेल्लक्षं दशांशेन तिलैराज्यपरिप्लुतैः ॥६॥
जुहुयात् पीठके शैवे पूजयेद्धननायकम्। आदावङ्गानि संपूज्य दिगीशांश्च तदायुधैः ॥७॥
अयुतं धनवृद्ध्यर्थं प्रजपेच्छिवसन्निधौ। तथा बिल्वतरोर्मूले जपेद् धनसमृद्धये ॥८॥ इति।

कुबेर मन्त्र—समस्त सम्पत्तियों को देने वाला पैंतीस अक्षरों का कुबेर का मन्त्र इस प्रकार है—यक्षाय कुबेराय वैश्रवणाय धनधान्याधिपतये धन-धान्यसमृद्धिं मे देहि दापय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि विश्रवा, छन्द बृहती एवं देवता कुबेर हैं। अभीष्ट-सिद्धि के लिये इसका विनियोग होता है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—यक्षाय हृदयाय नमः, कुबेराय शिरसे स्वाहा, वैश्रवणाय शिखायै वषट्, धनधान्याधिपतये कवचाय हुम्, धन-धान्यसमृद्धिं में नेत्रत्रयाय वौषट्, देहि दापय स्वाहा अस्त्राय फट्। ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

गारुत्मतशिलाकूटसन्निभं निधिनायकम्। किरीटहारकेयूरवलयांगदभूषणम्।।
वरं गदां च दधतं नरवाहनसंपदम्। अलकानगराधीशं शिवमित्रं विचिन्तयेत्।।

ध्यान के पश्चात् एक लाख जप करे। गोघृत-मिश्रित तिल से दशांश हवन करे। कुबेर की पूजा शैवपीठ पर करे। पहले अंगों की पूजा करे, तब दश दिक्पालों और उनके दश आयुधों की पूजा करे। शिवालय में धन-वृद्धि के लिये दश हजार जप करे। धनसमृद्धि के लिये बेलवृक्ष के मूल में जप करे।

कुबेरस्य मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

तारसंपुटिता लक्ष्मीः मायया पुटिता रमा। कामेन पुटिता लक्ष्मीर्ङेन्तं वित्तेश्वरं नतिः ॥१॥
महादारिद्र्यसंहर्ता षोडशार्णो मनुर्मतः। वह्निद्वियुगलद्वीषुयुग्मार्णैरङ्गकल्पना ॥२॥
ध्यानपूजादिकं सर्वं प्राक्प्रोक्तविधिना चरेत्। इति।

मन्त्रान्तर—कुबेर का एक अन्य षोडशाक्षर मन्त्र है—ॐ श्रीं ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीं क्लीं वित्तेश्वराय नमः। यह मन्त्र महादरिद्रता का विनाशक है। इसका षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ श्री ॐ हृदयाय नमः, ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा, ह्रीं क्लीं शिखायै वषट्, श्री क्लीं कवचाय हुं, वित्तेश्वराय नेत्रत्रयाय वौषट्, नमः अस्त्राय फट्। इसके ध्यान-पूजादि सब कुछ पूर्वोक्त मन्त्र के समान होते है।

पूजनविधिसहितः विश्वावसुमन्त्रः

सारसंग्रहे विश्वावसुमन्त्रः—

अथ गन्धर्वराजस्य मन्त्रं विश्वावसोरहम्। प्रवक्ष्यामि समासेन कन्याप्राप्तिकरं शुभम् ॥१॥
तारं विश्वावसुपदं नाम गन्धर्व उच्चरेत्। कन्यानामधिशब्दान्ते पतिर्यत इतीरयेत् ॥२॥
लभामि ते देव कन्यां सुवर्णालङ्कृतां ततः। अमुकनाम्नीं देहि शब्दं मे विश्वावसवे द्विठः ॥३॥
कन्याप्राप्तिकरो मन्त्रो गन्धर्वस्य त्विहेरितः। दशभिर्हृदयं प्रोक्तं नवभिश्च शिरो मतम् ॥४॥
अष्टभिश्च शिखा प्रोक्ता षड्भिः कवचमीरितम्। पञ्चभिर्नेत्रमाख्यातं दशभिश्चास्त्रमीरितम् ॥५॥
एभिर्विभक्तैर्मन्त्राणैर्जातियुक्तैः षडङ्गकम्। कराङ्गयोस्तु विन्यस्य ध्यायेद्गन्धर्वनायकम् ॥६॥
हस्ताब्जं विनिधाय पाणिकमले स्वीये तदीयं वरं कन्यां प्रार्थयते वराय ददतं सद्वस्त्रभूषोज्ज्वलम्।
कन्याभिः परितो वृतं नतमुखाम्भोजाभिरानन्दितं नानाकल्पकलाकलापकलितं विश्वावसुं चिन्तयेत् ॥७॥
नाभिमात्रेऽम्भसि स्थित्वा जपेन्मन्त्रं समाहितः। चत्वारिंशत्सहस्राणि तद्दशांशं हुनेत् ततः ॥८॥
इक्षुखण्डयुतैर्लाजैर्घृताक्तैरेधितेऽनले । तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत् ततः ॥९॥
एवं कृते मन्त्रसिद्धिर्भवत्येव न संशयः। पश्चिमाभिमुखो मन्त्री जपेन्मन्त्रमिमं नरः ॥१०॥
यामुद्दिश्य जपेत् कन्यां तां प्राप्नोति न संशयः। इति।

विश्वावसु मन्त्र—मूलोक्त सारसंग्रह के श्लोकों का उद्धार करने पर अड़तालीस अक्षरों का गन्धर्वराज विश्वावसु का मन्त्र इस प्रकार होता है—ॐ त्रिश्वावसु नाम गन्धर्व कन्यानामधिपतिर्यत लभामिते देव कन्यां सुवर्णालंकृतां अमुकनाम्नीं देहि मे विश्वावसवे स्वाहा। यह विश्वावसु मन्त्र कन्या प्राप्त कराने वाला है। मन्त्र के १०,९,८,६,५,१० वर्णों से षडङ्ग न्यास किया जाता है। इसी प्रकार करन्यास भी करके निम्नवत् ध्यानक्रिया जाता है—

हस्ताब्जं विनिधाय पाणिकमले स्वीये तदीयं वरं कन्यां प्रार्थयते वराय ददतं सद्वस्त्रभूषोज्ज्वलम्।
कन्याभिः परितो वृतं नतमुखाम्भोजाभिरानन्दितं नानाकल्पकलाकलापकलितं विश्वावसुं चिन्तयेत्।।

नाभि तक जल में खड़े होकर चालीस हजार मन्त्रजप करे। दशांश हवन घृतसिक्त ईखखण्डों में लावा मिलाकर प्रज्वलित अग्नि में करे। तर्पण-मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन करावे। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। पश्चिम तरफ मुख करके जिस कन्या के उद्देश्य से साधक इस सिद्ध मन्त्र का जप करता है वह उसे प्राप्त हो जाती है।

सप्रयोगः शताक्षरमन्त्रः

शारदातिलके शताक्षरमन्त्रः (२३.३४)—

गायत्रीत्रिष्टुबनुष्टुव्वर्णैः प्रोक्तः शताक्षरः। पूर्वोक्ता एव मुन्याद्याः परं तेजोऽत्र देवता ॥१॥
हृत् त्रयोदशभिः प्रोक्तं रुद्रार्णैः शिर ईरितम्। द्वाविंशत्या शिखा प्रोक्ता तावद्भिः कवचं मतम् ॥२॥
स्यात् पञ्चदशभिर्नेत्रमस्त्रं सप्तदशाक्षरैः। वर्णन्यासादिकं सर्वं कुर्यात् पूर्वोक्तवर्त्मना ॥३॥
सत्यं मानवविवर्जितं श्रुतिगिरामाद्यं जगत्कारणं व्याप्तं स्थावरजङ्गमं मुनिवरैर्ध्यातं निरुद्धेन्द्रियैः।
अर्काग्नीन्दुमयं शताक्षरवपुस्तारात्मकं सन्ततं नित्यानन्दगुणालयं परतरं वन्दामहे तन्महः ॥४॥
सौरे पीठे यजेत् सम्यग् वक्ष्यमाणविधानतः। आद्यामावृतिमभ्यर्चेत् षडङ्गैर्देशिकोत्तमः ॥५॥
गायत्रीशक्तिभिस्तिस्रः पूजयेदावृतीः क्रमात्। आवृत्तिः पञ्चमी प्रोक्ता त्रिष्टुबुद्भूतशक्तिभिः ॥६॥
अनुष्टुप्शक्तिभिः प्रोक्तमावृतीनां चतुष्टयम्। इन्द्राद्यैर्दशमी प्रोक्ता वज्राद्यैस्तत्परा मता ॥७॥

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि विश्वामित्रकाश्यपवसिष्ठेभ्य ऋषिभ्यो नमः। मुखे गायत्रीत्रिष्टुबनुष्टुप्छन्देभ्यो नमः। हृदये परतेजसे देवतायै नमः। इति ऋष्यादिकं विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य हृदयाय नमः। धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् शिरसे०। जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः शिखायै०। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः कवचाय०। त्रियम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं नेत्राभ्यां०। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् अस्त्राय फट्, इति मन्त्रैर्यथाविधि करषडङ्गन्यासं कृत्वा, वामपादाङ्गुलिमूलयोः तत् नमः। गुल्फयोः सं०। जानुनोः विं०। ऊरुमूलयोः तुं०। लिङ्गे र्वं०। नाभौ रें०। हृदि णिं०। कण्ठे यं०। कराङ्गुलिमूलयोः भं०। मणिबन्धयोः र्गों०। कूर्परयोः दें०। भुजमूलयोः वं०। मुखे स्यं०। नसोः धीं०। कपोलयोः मं०। नेत्रयोः हिं०। कर्णयोः धिं०। भ्रुवोः यों०। मस्तके यों०। चूडाधः पश्चिमवक्त्रे नः०। वामकर्णे उत्तरवक्त्रे प्रं०। दक्षकर्णे दक्षवक्त्रे चों०। मुखे पूर्ववक्त्रे दं०। शिरसि ऊर्ध्ववक्त्रे यात् नमः। दक्षपादाङ्गुष्ठे जां नमः। वामे तं०। दक्षगुल्फे वें०। वामे दं०। दक्षजङ्घायां सें०। वामे सुं०। दक्षजानुनि नं०। वामे वां०। दक्षोरौ मं०। वामे सों०। दक्षकट्यां मं०। वामे मं०। लिङ्गे रां०। नाभौ तीं०। हृदि यं०। दक्षस्तने तों०। वामे निं०। दक्षपार्श्वे दं०। वामे हां०। पृष्ठे तिं०। दक्षस्कन्धे वें०। वामे दः०। दक्षबाहुमूले सं०। वामे नः०। दक्षबाहुमध्ये पं०। वामे रं०। दक्षकूर्परे षं०। वामे दं०। दक्षप्रकोष्ठे तिं०। वामे दुं०। दक्षमणिबन्धे र्गां०। वामे णिं०। दक्षकरतले विं०। वामे श्वां०। मुखे नां०। दक्षनसि वें०। वामे वं०। दक्षनेत्रे सिं०। वामे न्धुं०। दक्षकर्णे दुं०। वामे रिं०। ललाटे तां०। ललाटोपरि त्यं०। मूर्ध्नि ग्निंः नमः। मुखे त्र्यं०। चूडाधः बं०। दक्षकर्णे कं०। वामे यं०। उरसि जां०। गले मं०। मुखे हें०। नाभौ सुं०। हृदि गं०। पृष्ठे धिं०। कुक्षौ पुं०। लिङ्गे ष्टिं०। पायौ वं०। दक्षोरुमूले र्धं०। वामे नं०। दक्षोरौ उं०। वामे र्वां०। दक्षजानुनि रुं०। वामे कं०।

दक्षजानुनि वृत्ते मिं०। वामे वं०। दक्षस्तने बं०। वामे न्धं०। दक्षपार्श्वे नां०। वामे न्मृं०। दक्षपादे त्यों०। वामे मुं०। दक्षपाणितले क्षीं०। वामे यं०। दक्षनसि मां०। वामे मृं०। शिरसि तात् नमः। इत्यक्षरन्यासः।

अथ पदन्यासः। शिरसि तत् नमः। भ्रूमध्ये सवितु०। नेत्रयोः वरेण्यं०। मुखे भर्गो०। कण्ठे देवस्य०। हृदि धीमहि०। नाभौ धियो०। गुह्ये यो०। जानुनोः नः०। पादयोः प्रचोदयात्०। शिखायां जातवेदसे नमः। ललाटे सुनवाम०। दत्तनेत्रे सोमं०। वामे अरातीयतः०। दक्षकर्णे नि०। वामे दहाति०। ओष्ठे वेदः०। अधरे स०। रसनायां नः०। कण्ठे पर्षत्०। बाह्वोः अति०। हृदि दुर्गाणि०। कुक्षौ विश्वा०। कटौ नावा०। गुह्ये इव०। ऊरुद्वये सिन्धुं०। जानुद्वये दुरिता। जङ्घयोः अति०। पादयोः अग्निः०। शिरसि त्र्यम्बकं नमः। भ्रूयुगे यजामहे०। नेत्रयोः सुगन्धिं०। मुखे पुष्टिवर्धनं०। गण्डयोः उर्वारुकं०। हृदि इव०। उदरे बन्धनात्०। गुह्ये मृत्योः०। ऊरुद्वये मुक्षीय०। जानुनोः मा०। पादयोः अमृतात् नमः। इति विन्यस्य, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते प्रागुक्तं सौरपीठमभ्यर्च्य मूर्तिकल्पनाद्यङ्गपूजान्ते गायत्रीप्रकरणोक्ताः प्रह्लादिन्याद्याश्चतुर्विंशतिशक्तीरावरणत्रयस्थितास्तत्रोक्तप्रकारेणैवावरणत्रये तद्बहिश्चतुश्चत्वारिंशद्दलेषु प्रागुक्तजागराद्याः शक्तीस्त्रिष्टुप्प्रकरणोक्ताः संपूज्य तद्बहिरष्टदलद्वये प्रागुक्तानुष्टुभमन्त्रप्रकरणोक्ता रमाद्या द्वात्रिंशच्छक्तीः प्रतिकमलमावरणद्वयक्रमेण दलमध्यदलाग्रेषु संपूज्य तद्बहिर्लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् कल्पयेदिति। तथा—

लक्षमात्रं जपेदेनमयुतं पायसान्धसा। जुहुयाद् घृतसिक्तेन तर्पणादि ततश्चरेत्॥८॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री भवेद्भास्करसन्निधः।

शताक्षर मन्त्र—शारदातिलक के अनुसार शताक्षर मन्त्र इस प्रकार है—ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः त्रियम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।

पूजा—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद तीन प्राणायाम करके ऋष्यादि न्यास करके इस प्रकार शिरसि विश्वामित्रकाश्यपवसिष्ठेभ्य ऋषिभ्यो नमः, मुखे गायत्रीत्रिष्टुबनुष्टुप् छन्देभ्यो नम, हृदये परतेजसे देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करने के पश्चात् इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य हृदयाय नमः, धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् शिरसे स्वाहा, जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः शिखायै वषट्, स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः कवचाय हुं, त्रियम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् नेत्राभ्यां वौषट्, उर्वारुकनिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्ण न्यास—बाँयें पैर के अंगुलिमूल में तत् नमः, गुल्फों में सं नमः, जानु में वि नमः, उरुमूलों में तुं नमः, लिंग में र्वं नमः, नाभि में रें नमः, हृदय में णिं नमः, कण्ठ में यं नमः, हाथ के अंगुलिमूल में भं नमः, मणिबन्धों में र्गो नमः, कूर्परों में दें नमः, भुजाओं के मूल में वं नमः, मुख में स्यं नमः, नासिका में धीं नमः, गालों में मं नमः, नेत्रों में हिं नमः, कानों में धिं नमः, भौहों में यों नमः, शिखा के नीचे पश्चिम मुख में नं नमः, बाँयें कान के पास उत्तर मुख में प्रं नमः, दाहिने कान के पास दक्षिण मुख में चों नमः, मुखरूपी पूर्व मुख में दं नमः, शिर स्थित ऊपरी मुख में यात् नमः। दाहिने पैर के अंगुठे में जां नमः, बाँयें पैर के अंगुठे में तं नमः, दाहिने गुल्फ में वें नमः, बाँयें गुल्फ में दं नमः, दाहिनी जंघा में से नमः, बाँयीं जंघा में सुं नमः, दाहिने जानु में नं नमः, बाँयें जानु में वां नमः, दाहिने ऊरु में नमः, बाँयें ऊरु में सो नमः, दाहिनी कमर में मं नमः, बाँयीं कमर में मं नमः, लिंग में रां नमः, नाभि में तीं नमः, हृदय में यं नमः, दाहिने स्तन पर तों नमः, बाँयें स्तन पर निं नमः, दाहिने पार्श्व में दं नमः, बाँयें पार्श्व में हां नमः, पृष्ठ में तिं नमः, दाहिने कन्धें पर वें नमः, बाँयें कन्धें पर दः नमः, दाहिने बाहुमूल में सं नमः, बाँयें बाहुमूल में नः नमः, दाहिने बाहुमध्य में यं नमः, बाँयें बाहुमध्य में रं नमः, दाहिने कूर्पर में पं नमः, बाँयें कूर्पर में दं नमः, दाहिनी कुक्षि में तिं नमः, बाँयीं कुक्षि में दुं नमः, दाहिने मणिबन्ध में गों नमः, बाँयें मणिबन्ध में णिं नमः, दाहिने हाथ में विं नमः, बाँयें हाथ में श्वां नमः, मुख में नां नमः, दाहिनी नासिका में वैं नमः, बाँयी नासिका में वं नमः, दाहिनी आँख में सिं नमः, बाँयीं आँख में न्धुं नमः, दाहिने कान में दुं नमः, बाँयें कान में रिं नमः, ललाट में तां

नमः, ललाट से ऊपर त्यं नमः, मूर्धा में गिनं नमः, मुख में त्र्यं नमः, शिखा के नीचे वं नमः, दाहिने कान में कं नमः, बाँयें कान में यं नमः, हृदय में जां नमः, गले में मं नमः, मुख में हें नमः, नाभि में सुं नमः, हृदय में गं नमः, पृष्ठ पर धिं नमः, कुक्षि में पुं नमः, लिङ्ग में ष्टिं नमः, पायु में वं नमः, दाहिने ऊरुमूल में र्धं नमः, बाँयें ऊरुमूल में नं नमः, दाहिने ऊरु में उं नमः, बाँयें ऊरु में र्वां नमः, दाहिने जानु में रुं नमः, बाँयें जानु में कं नमः, दाहिने जानुवृत्त में मिं नमः, बाँयें जानुवृत्त में वं नमः, दाहिने स्तन पर वं नमः, बाँयें स्तन पर न्धं नमः, दाहिने पार्श्व में नां नमः, बाँयें पार्श्व में न्मृं नमः, दाहिने पैर में व्यों नमः, बाँयें पैर में मुं नमः, दाहिने हाथ में क्षीं नमः, बाँयें हाथ में पं नमः, दाहिनी नासिका में मां नमः, बाँयीं नासिका में मृं नमः, शिर पर तात् नमः।

मन्त्रपद न्यास—शिर पर तत् नमः, भ्रूमध्य में सवितु नमः, नेत्रों में वरेण्यं नमः, मुख में भर्गो नमः, कण्ठ में देवस्य नमः, हृदय में धीमहि नमः, नाभि में धियो नमः, गुह्य में यो नमः, जानुओं में नः नमः, पैरों में प्रचोदयात् नमः, शिखा में जातवेदसे नमः, ललाट पर सुनवाम नमः, दाहिनी आँख में सोमं नमः, बाँयीं हाथ में अरातीयतः नमः, दाहिने कान पर नि नमः, बाँयें कान पर दहति नमः, ऊपरी ओष्ठ पर वेदः नमः, नीचले ओष्ठ पर प्र नमः, जिह्वा में नः नमः, कण्ठ में पर्षत् नमः, बाहुओं में आते नमः, हृदय में दुर्गाणि नमः, कुक्षि में विश्वा नमः, कमर में नावा नमः, गुह्य में इव नमः, दोनों ऊरुओं में सिन्धु नमः, दोनों जानुओं में दुरिता नमः, दोनों जांघों पर अति नमः, दोनों पैरों पर अग्नि शिरसि त्र्यम्बकं नमः, दोनों भौहों पर यजामहे नमः, नेत्रों में नमः सुगन्धिं नमः, मुख में पुष्टिवर्धनं नमः, गालों पर उर्वारुकं नमः, हृदय में इव नमः, पेट में बन्धनात् नमः, गुह्य में मृत्योः नमः, दोनों ऊरुओं में मुक्षीय नमः, दोनों जानुओं में मा नमः, दोनों पैरों में अमृतात् नमः। इस प्रकार के न्यास करने के बाद निम्नवत् ध्यान करे—

सत्यं मानवविवर्जितं श्रुतिगिरामाद्यं जगत्कारणं व्याप्तं स्थावरजङ्गमं मुनिवरैर्ध्यातं निरुद्धेन्द्रियैः।
अर्काग्नीन्दुमयं शताक्षरवपुस्तारात्मकं सन्ततं नित्यानन्दगुणालयं परतरं वन्दामहे तन्महः।।

ध्यान के बाद आत्मपूजा करे। सौरपीठ की पूजा करे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके पूजा करे। षडङ्ग पूजन करे। तब गायत्री प्रकरण में उक्त प्रह्लादि चौबीस शक्तियों की पूजा तीन आवरणों में करे। उसके बाहर चौवालीस दलों में पूर्वोक्त जागरा आदि त्रिष्टुप् प्रकरणोक्त शक्तियों की पूजा करे। उसके बाहर दो अष्टदलों में पूर्वोक्त अनुष्टुप् मन्त्र प्रोक्त रमा आदि बत्तीस शक्तियों की पूजा प्रतिकमल दो आवरण के क्रम से करे। दलमध्य और दलाग्रों में यह पूजा करे। उसके बाहर चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा पूर्ववत् करे।

सुधालतोद्भवैः खण्डैर्जुहुयात् क्षीरसंयुतैः ।।९।।

दीर्घमायुरवाप्नोति निराधिर्व्याधिवर्जितः। दूर्वाभिर्घृतसिक्ताभिस्तदेव फलमाप्नुयात् ।।१०।।
मधुरत्रयसंयुक्तैर्जुहुयादरुणाम्बुजैः। महालक्ष्मीमवाप्नोति षड्भिर्मासैर्विधानवित् ।।११।।
रक्तोत्पलैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयात् सर्वसंपदे। श्रीप्रसूनैः प्रजुहुयाद्रमाया वसतिर्भवेत् ।।१२।।
सहस्रं जुहुयान्नित्यं मासमेकं तिलैः शुभैः। भानुसंख्यान् द्विजान् नित्यं भोजयेन्मधुरान्वितैः ।।१३।।
सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वरोगविवर्जितः। कृत्याद्रोहग्रहान् रोगान् जित्वा दीर्घं स जीवति ।।१४।।
प्रातः स्नानरतो मन्त्री जपेन्नित्यं शतं शतम्। भानुमालोकयन् सम्यक् स जीवेच्छरदां शतम् ।।१५।।
नित्यमष्टोत्तरशतं निःश्रेयसफलाप्तये। गायत्र्याद्यं जपेन्मन्त्रं सर्वपापविमुक्तये ।।१६।।
सर्वशत्रुविनाशाय त्रिष्टुबाद्यं जपेदमुम्। अनुष्टुबाद्यं प्रजपेदायुरारोग्यसिद्धये ।।१७।।
शताक्षरो मनुः प्रोक्तः समस्तपुरुषार्थदः ।

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे द्वात्रिंशः श्वासः।।३२।।

●

एक लाख मन्त्र जप करे। पायस भोज्य को घृतसिक्त करके दश हजार हवन करे। तर्पण करे। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होने पर साधक सूर्य के समान हो जाता हैं। दूधयुक्त गिलोय खण्डों से हवन करने पर आधि-व्याधिरहित दीर्घ आयु प्राप्त होती है। घृतसिक्त दूर्वा के हवन से भी आधि-व्याधिरहित दीर्घायु प्राप्त होती है। छ: महीनों तक त्रिमधुराक्त लाल कमलों से हवन करने पर महालक्ष्मी प्राप्त होती हैं। त्रिमधुराक्त लाल उत्पल के हवन से सभी सम्पत्ति प्राप्त होती है। श्रीप्रसूनों के हवन से लक्ष्मी का आवास होता है। एक महीने तक प्रतिदिन एक हजार हवन तिल से करे और बारह ब्राह्मणों को मधुर भोजन करावे तो साधक सभी पापों से मुक्त होकर सभी रोगों से रहित हो जाता है। कृत्याद्रोह, ग्रहपीड़ा, रोगों को जीतकर दीर्घ काल तक जीवित रहता है। प्रात: स्नान करके प्रतिदिन एक सौ जप सूर्य को देखते हुए करे तो वह सौ वर्षों तक जीवित रहता है। श्रेयस फलप्राप्ति के लिये प्रतिदिन एक सौ आठ गायत्री मन्त्र का जप करने से सभी पापों से मुक्त हो जाता है। सभी शत्रुओं के विनाश के लिये पहले त्रिष्टुप् मन्त्र का जप करे। आयु-आरोग्य के लिये पहले अनुष्टुप् का जप करे। यह शताक्षर गायत्री मन्त्र समस्त पुरुषार्थों को देने वाला है।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र की कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में द्वात्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ त्रयस्त्रिंशः श्वासः

शताक्षरमन्त्रोद्धारस्तद्यन्त्रश्च

श्रीयन्त्रसारे (शताक्षरमनुयन्त्रम्)—

कर्णिकायां लिखेत्तारं व्याहृतीभिः समावृतम्। कोणेषु षट्सु पञ्चार्णान् प्रणवाद्यं दलेष्वथ॥१॥
पूर्वार्धमाद्ये गायत्र्यास्त्रैष्टुभार्धं द्वितीयके। अनुष्टुबस्याद्यमर्धं तृतीये च चतुर्थके॥२॥
ॐह्रींठंवंकंसंहंसः जूंसः सोहं वंठं नमः। शिवाय मां पालय संकंवंठंह्रींध्रुवाक्षरान्॥३॥
आलिख्य पञ्चमेऽनुष्टुबपरार्धं च षष्ठके। त्रिष्टुभश्चापरार्धं च गायत्र्या अपरार्धकम्॥४॥
सप्तमे च दले तारमापो ज्योतीरसोऽमृतम्। ब्रह्म भूर्भुवरित्यन्ते स्वरोमिति दलेऽष्टमे॥५॥
आलिख्य मातृकार्णोद्यद्वृत्तेनावेष्ट्य तद्बहिः। चिन्तामणिलसत्कोणं भूपुरं च समालिखेत्॥६॥

शताक्षर मन्त्र का यन्त्र—श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि अष्टदल कमल में षट्कोण इसके बाहर अष्टदल, इसके बाहर दो वृत्त, इसके बाहर चतुरस्र बनावे। षट्कोण के मध्य में साध्य नाम के साथ 'ॐ' लिखे। उसे सात व्याहृतियों—भूः भुवः स्वः जन महः तपः जनः सत्यं से वेष्टित करे। षट्कोण के कोणों में 'ॐ नमः शिवाय' के छः अक्षरों में से एक-एक को लिखे। अष्टदल के प्रथम दल में गायत्री का पूर्वार्ध, द्वितीय दल में त्रिष्टुप् का प्रथमार्ध, तृतीय दल में अनुष्टुप् का प्रथमार्ध एवं चतुर्थ दल में ॐ ह्रीं ठं वं कं सं हंसः जूं सः सोहं वं ठं शिवाय मां पालय सं कं वं ठं ह्रीं ॐ लिखे। पञ्चम दल में अनुष्टप् मन्त्र का उत्तरार्ध लिखे। षष्ठ दल में त्रिष्टुप् मन्त्र का उत्तरार्ध लिखे। सप्तम में गायत्री मन्त्र का उत्तरार्ध लिखे। अष्टम दल में आपो ज्योति रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् लिखे। इसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र के कोणों में चिन्तामणि मन्त्र 'रक्ष मरय औ ॐ' लिखे।

शताक्षरयन्त्रधारणविधिः

शताक्षरमनोर्यन्त्रमेतद्यो धारयेन्नरः। पुत्रारोग्यधराधान्यधनकोशौघशालिनीम्॥७॥
लब्ध्वातिबहुलां लक्ष्मीं स जीवेच्छरदः शतम्। ताम्रादिपट्टेष्वालिख्य जप्त्वा चाष्टोत्तरं शतम्॥८॥
हुत्वा घृतेन तावत्तु सिक्थसंपातमेव च। भूयोऽपि तावज्जप्त्वा च पुरग्रामाकरादिषु॥९॥
स्थापितं यन्त्रमेतत्तु गोसस्यारोग्यपुष्टिदम्। कुर्याच्च रक्षां तेनारिव्याघ्रादिभयतः सदा॥१०॥

अस्यार्थः—तत्राष्टदलकमलमध्यगतषट्कोणमध्ये ससाध्यं तारं विलिख्य तत् सप्तव्याहृतिभिरावेष्ट्य, षट्कोणेषु प्रणवादिशिवपञ्चाक्षरस्यैकैकमक्षरमालिख्याष्टदलेषु प्रथमदले गायत्र्याः पूर्वार्धं, द्वितीयदले त्रिष्टुभः प्रथमार्धं, तृतीयेऽनुष्टुप्प्रथमार्धं, चतुर्थे ॐह्रींठंवंकंसंहंसः जूंस सोहं वंठं नमः शिवाय मां पालय संकंवंठंह्रींॐ इति मन्त्रं विलिख्य, पञ्चमेऽनुष्टुब्मन्त्रस्योत्तरार्धं विलिख्य, षष्ठे त्रिष्टुब्मन्त्रस्योत्तरार्धं, सप्तमे गायत्र्युत्तरार्धं, अष्टमे आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवःस्वरोमिति विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले मातृकावर्णैरावेष्ट्य, तद्बहिश्चतुरस्रकोणेषु पूर्वोक्तचिन्तामणिं विलिख्योक्तविधिना धारणादुक्तफलसिद्धिर्भवति इति।

शताक्षर यन्त्र धारण विधि—इस शताक्षर मन्त्र के यन्त्र को जो मनुष्य धारण करता है, उसे पुत्र, आरोग्य, भूमि, धान्य, धन का भण्डार मिलता है। अतुल लक्ष्मी प्राप्त करके वह सौ वर्षों तक जीवित रहता है, ताम्र आदि के पत्र पर लिखकर एक सौ आठ जप करे। घी से एक सौ आठ हवन करने के समय मोम पर हुतशेष बून्द टपकावे। उसे मन्त्रित कर नगर ग्राम जलाशय में स्थापित करने से गाय धान आरोग्य पुष्टि की प्राप्ति होती है! इससे शत्रु, व्याघ्र आदि के भय से रक्षा होती है।

वरुणऋङ्मन्त्रविधानम्

तथा शारदातिलके (२३-५२) वरुणऋग्विधानम्—

ऋचो विधानं वारुण्या यथावदभिधीयते। ऋग्वेदे सा समुद्दिष्टा ध्रुवास्वाद्या मनीषिभिः ॥१॥

ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु क्षियन्तो व्यस्मत्पाशं वरुणो मुमोचत्।
अवो वन्वाना अदितेरुपस्थाद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ (७.८८.७)

वसिष्ठोऽस्य मुनिः प्रोक्तश्छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम्। वरुणो देवता प्रोक्तस्तद्वर्णैरङ्गकल्पना ॥२॥
अष्टभिर्हृदयं प्रोक्तं सप्तभिः शिर ईरितम्। शिखा षड्वर्णकैः प्रोक्ता वस्वर्णैः कवचं मतम् ॥३॥
सप्तभिः नेत्रमाख्यातमस्त्रं षड्भिरुदाहृतम्। साग्रेषु सन्धिषु पदोर्गुदान्ध्वाधारनाभिषु ॥४॥
कुक्षौ पृष्ठे हृदि कुचे गले बाह्वग्रसन्धिषु। वक्त्रे कपोलनासाक्षिकर्णभ्रूमध्यमस्तके ॥५॥
शिरःसर्वाङ्गयोर्न्यस्येन्मन्त्रवर्णान् यथाविधि।
चन्द्रप्रभं पङ्कजसन्निषण्णं पाशाङ्कुशाभीतिवरं दधानम्।
मुक्ताविभूषाञ्चितसर्वगात्रं ध्यायेत् प्रसन्नं वरुणं विभूत्यै ॥६॥

धर्मादिकल्पिते पीठे वरुणं सम्यगर्चयेत्। कृत्वाङ्गपूजनं शेषं वासुकिं तक्षकं पुनः ॥७॥
कर्कोटकं तथा पद्मं महापद्मं ततः परम्। शङ्खपालाख्यकुलिकौ सम्यक् पत्रेषु पूजयेत् ॥८॥
इन्द्राद्यानायुधान्येषामर्चयेत् तदनन्तरम्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि वसिष्ठाय ऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि वरुणाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य सर्वाभीष्टप्राप्तये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु हृदयाय०। क्षियन्तो व्यस्मत्पाशं शिरसे०। वरुणो मुमोचत् शिखायै०। अवो वन्वाना अदितेः कवचाय०। उपस्थाद्यूयं पात नेत्रत्रयाय०। स्वस्तिभिः सदा नः अस्त्राय०। इति मन्त्रैः करषडङ्गन्यासं विधाय, दक्षपादाग्रे ध्रुं नमः। वामे वां०। दक्षपादाङ्गुलिमूले सुं०। वामे त्वां०। दक्षगुल्फे सुं०। वामे क्षिं०। दक्षजानुनि तिं०। वामे षुं०। दक्षोरुमूले क्षिं०। वामे यं०। गुदे तों०। लिङ्गे व्यं०। मूलाधारे स्मत्०। नाभौ पां०। कुक्षौ शं०। पृष्ठे वं०। हृदि रुं०। कुचयोः णों०। गले मुं०। दक्षकराग्रे मों०। वामे चत्०। दक्षकराङ्गुलिमूले अं०। वामे वों०। दक्षमणिबन्धे वं०। वामे न्वां०। दक्षबाहुमूले नां०। वामे अं०। दक्षकूर्परे दिं०। वामे तें०। मुखे रुं०। दक्षकपोले पं०। वामे स्थां०। दक्षनासायां द्यूं०। वामायां यं०। दक्षनेत्रे पां०। वामे तं०। दक्षकर्णे स्वं०। वामे स्तिं०। भ्रूमध्ये भिः०। ललाटे सं०। शिरसि दां०। सर्वाङ्गे नः नमः। इति विन्यस्य, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिपरतत्त्वान्तं पीठं संपूज्य, वं वरुणपीठाय नमः इति समस्तं पीठं संपूज्य पीठशक्तिरहिते तस्मिन् पीठे च वरुणमावाह्य, प्राणप्रतिष्ठान्ते पाशाङ्कुशवराभीतिमुद्राः प्रदर्श्य, आसनाद्यङ्गपूजान्तेऽष्टदलेषु देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन ॐ शेषाय नमः। एवं वासुकये०। तक्षकाय०। कर्कोटकाय०। पद्माय०। महापद्माय०। शङ्खपालाय०। कुलिकाय०। इति संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं कुर्यादिति। तथा—

लक्षमेकं जपेन् मन्त्रं पायसेन दशांशतः। सर्पिःसिक्तेन जुहुयात् तर्पणादि ततश्चरेत् ॥९॥

वरुण ऋग्विधान—शारदा तिलक में कहा गया है कि अब वरुण ऋचा का विधान यथावत् कहता हूँ। ऋग्वेद में मनीषियों ने इसे 'ध्रुवासु०' ऋचा में कहा है। यह बयालीस अक्षरों की ऋचा इस प्रकार है—

ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु क्षियन्तो व्यस्मत्पाशं वरुणो मुमोचत्।
अवो वन्वाना अदितेरुपस्थाद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥

इसके ऋषि वशिष्ठ, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता वरुण कहे गये हैं। इसका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—शिरसि

वसिष्ठाय ऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप् छन्दसे नमः, हृदि वरुणाय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग होता है।

षडङ्ग न्यास—ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु हृदयाय नमः, क्षियन्तो व्यस्मत् पाशं शिरसे स्वाहा, वरुणो मुमोचत् शिखायै वषट्। अवो वन्वाना अदिते कवचाय हुं, उपस्थाद्यूयं पात नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वस्तिभिः सदा नः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार का न्यास भी करे।

मन्त्रवर्ण न्यास—दाहिने पैर के आगे ध्रुं नमः, बाँयें पैर के आगे वां नमः, दाहिने पैर के अंगुलिमूल में सुं० नमः, बाँयें पैर के अंगुलिमूल में त्वां नमः, दाहिने गुल्फ में सुं नमः, बाँयें गुल्फ में क्षि नमः, दाहिने जानु में तिं नमः, बाँयें जानु में षुं नमः, दाहिने ऊरुमूल में क्षिं नमः, बाँयें ऊरुमूल में यं नमः, गुदा में तीं नमः, लिङ्ग में व्यं नमः, मूलाधार में स्मत् नमः, नाभि में पां नमः, कुक्षि में शं नमः, पृष्ठ पर वं नमः, हृदय में रुं नमः, स्तनों पर णों नमः, गले में मुं नमः, दाहिने हाथ के आगे मों नमः, बाँयें हाथ के आगे चत् नमः, दाहिने हाथ के अंगुलिमूल में अं नमः, बाँयें हाथ के अंगुलिमूल में वों नमः, दाहिने मणिबन्ध में वं नमः, बाँयें मणिबन्ध में न्वां नमः, दाहिने बाहुमूल में नां नमः, बाँयें बाहुमूल में अं नमः, दाहिने कूर्पर में दिं नमः, बाँयें कूर्पर में तें नमः, मुख में रुं नमः, दाहिनी गाल पर पं नमः, बाँयीं गाल पर स्थां नमः, दाहिनी नाक में द्यूं नमः, बाँयीं नाक में यं नमः, दाहिनी आँख में पां नमः, बाँयीं आँख में तं नमः, दाहिने कान पर स्वं नमः, बाँयें कान पर स्तिं नमः, भ्रूमध्य में भिः नमः, ललाट पर सं नमः, शिर पर दां नमः, सर्वांग में नंः नमः। इसके बाद चन्द्रमा-सदृश कान्ति वाले, कमल पर आसीन, पाश-अंकुश-अभय एवं वर हाथों में धारण करने वाले एवं विविध आभूषणों को सम्पूर्ण शरीर पर धारण किये प्रसन्नानन वरुण का समृद्धि के लिये ध्यान करे। तदनन्तर आत्मपूजा करे। पीठ में मण्डूकादि परतत्त्व तक पूजा करे। 'वं वरुणपीठाय नमः' से पूरे पीठ की पूजा करे। इसमें पीठ शक्तियों की पूजा नहीं होती। उस पीठ में वरुण का आवाहन करके प्राण-प्रतिष्ठा करे। पाश अंकुश वर अभय चार मुद्राओं को दिखावे। आसनादि अंग पूजा करे। अष्टदल में देवाग्र से प्रादक्षिण्य क्रम से इस प्रकार पूजा करे—ॐ शेषाय नमः। वासुकये नमः, तक्षकाय नमः, कर्कोटकाय नमः, पद्माय नमः, महापद्माय नमः, शङ्खपालाय नमः, कुलिकाय नमः। चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकेशों और वज्रादि उनके आयुधों की पूजा करे। तदनन्तर एक लाख मन्त्र जप करे। गोघृत-सिक्त पायस से दशांश हवन करे। तब तर्पण करे।

काम्यसाधनविधिः

ऋणमुक्त्यै जपेन्मन्त्रं प्रत्यहं साष्टकं शतम्। जपेनानेन लभते महतीमव्ययां श्रियम् ॥१०॥
सितेक्षुशकलैर्मन्त्री जुहुयाद् घृतसंप्लुतैः। चतुर्दिनं दशशतं ऋणमुक्त्यै महाश्रिये ॥११॥
समिद्भिर्वेतसोत्थाभिः क्षीराक्ताभिर्दिनत्रयम्। जुहुयाद् वृष्टिसंसिद्ध्यै मन्त्रविद् विजितेन्द्रियः ॥१२॥
अनेन विधिना मन्त्री सूर्ये शतभिषं गते। चतुःशतं घृतयुतं पायसं जुहुयाद्वशी ॥१३॥
ऋणनाशाय संपत्त्यै वश्यारोग्याभिवृद्धये। भृगुवारे कृतो होमः पायसेन ससर्पिषा ॥१४॥
महतीं संपदं कुर्यान्नाशयेत् सकलापदः। शालिभिर्घृतसंसिक्तैः सरिदन्तरितः सुधीः ॥१५॥
त्र्यहं चतुःशतं हुत्वा स्तम्भयेत् परसैन्यकम्। सायं प्रत्यङ्मुखो वह्निमाराध्य प्रजपेन्मनुम् ॥१६॥
चतुःशतं विमुच्येत मन्त्री सर्वैरुपद्रवैः। मन्त्री प्रत्यङ्मुखो भूत्वा तर्पयेद्विमलैर्जलैः ॥१७॥
सर्वोपद्रवनाशाय समस्ताभ्युदयाप्तये। बहुना किमिहोक्तेन मन्त्रेणानेन साधकः ॥१८॥
साधयेत् सकलान् कामाञ्जपहोमादितत्परः। ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु जपन् बन्धात् प्रमुच्यते ॥१९॥
तिष्ठन् रात्रौ जपेदेतां विकासः संप्रपद्यते। अहोरात्रं स्थितश्चैवमनश्नन् स्याद् दिवोत्थितः ॥२०॥
अयःपाशाः स्फुटन्त्यस्य दारुपाशास्तथैव च।

ऋणमुक्ति के लिये प्रतिदिन एक सौ आठ जप करे। इस जप से कभी भी क्षीण न होने वाली लक्ष्मी प्राप्त होती है। ऋणमुक्ति और महती लक्ष्मी की प्राप्ति के लिये चार दिनों तक एक सौ दश हवन घृतसंप्लुत सितेक्षु खण्डों से करे। मन्त्रज्ञ जितेन्द्रिय रहकर तीन दिनों तक क्षीराक्त वेत की समिधा से हवन करे तो वर्षा होती है। सूर्य जब शतभिषा नक्षत्र में हो तब पायस में घी मिलाकर चार सौ हवन करे। इससे ऋण का नाश होकर सम्पत्ति, वश्य एवं आरोग्य की वृद्धि होती है। शुक्रवार

को पायस में गोघृत मिलाकर हवन करे तो अतुल सम्पत्ति मिलती है और सभी आपदाओं का नाश होता है। घृतसंसिक्त शालि का हवन तीन दिनों तक प्रतिदिन चार सौ करने पर शत्रुसेना का स्तम्भन होता है। शाम को पश्चिममुख बैठकर अग्नि का पूजन कर चार सौ मन्त्र जप करे तो सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं। पश्चिम की ओर मुख करके साधक विमल जल से तर्पण करे तो सभी उपद्रवों का नाश होता है और सभी प्रकार से अभ्युदय होता है। बहुत क्या कहा जाय; इस मन्त्र से जप-होमादि में तत्पर रहकर साधक सभी मनोरथों को प्राप्त कर सकता है। 'ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु' मन्त्र के जप से बन्धन से मुक्त होता है। रात में बैठकर जप करने से विकास होता है। उपवास रहकर दिन रात जप करे तो सूर्योदय में बन्धन टूट जाता है। दिन-रात बिना भोजन किये बैठकर जप करने से प्रात: होते ही लोहे एवं लकड़ी के पाश भी टूट जाते हैं।

ऋणमोचनयन्त्ररचनाप्रकार:

श्रीयन्त्रसारे—

षट्कोणकर्णिकामध्ये तारं कोणेषु षट्स्वपि। षडर्णमष्टपत्रे च केसरेषु स्वरांल्लिखेत् ॥१॥
पञ्चषड्वेदषट्पञ्चषट्चतु:षट्क्रमान्मनो: । ध्रुवास्वाद्यस्याक्षराणि बहि: पर ऋणेत्यृचा ॥२॥
हल्भिश्चावेष्ट्य भूगेहे कोणे वंबीजमालिखेत्। ऋणमोचनमेतत्तु यन्त्रं सर्वसमृद्धिदम् ॥३॥
सर्वरक्षाकरं वश्यं सर्वचोरविनाशनम्। किमत्र बहुनोक्तेन वाञ्छितार्थप्रदं नृणाम् ॥४॥ इति।

अस्यार्थ:—तत्राष्टदलस्थषट्कोणमध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, षट्कोणेषु वरुणाय नम: इति मन्त्रस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, केसरेषु द्वन्द्वश: स्वरान् विलिख्याष्टदलेषु ध्रुवास्वाद्यस्य मन्त्रस्य वर्णान् पञ्चषड्वेदेति क्रमेण विभज्य विलिख्य, बहिर्वृत्तयोरन्तराले परऋणेत्यृचा वेष्टयित्वा तद्बहिर्वृत्तवीथ्यां ककारादिक्षकारान्तैरावेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्रकोणेषु वंबीजं विलिखेत्। एतद्यन्त्रं साधितं धृतमुक्तफलदं भवति।

परं ऋण सावीरध मत्कृतानि माहं राजन्नन्यकृतेन भोजं।
अव्युष्टा इन्नु भूयसी रुषास आ नो जीवान् वरुण तासु शाधि ॥ (२.२८.९)

अस्या ऋष्यादिकं कूर्मो वरुणस्त्रिष्टुप्।

ऋणमोचन यन्त्र—श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि अष्टदल कमल में षट्कोण बनावे। मध्य में 'ॐ' लिखे। छ: कोणों में 'वरुणाय नम:' के एक-एक अक्षर को लिखे। केसर में दो-दो स्वरों को लिखे। अष्टदलों में 'ध्रुवासु' ऋचा के वर्णों को ५,६,४,६,५,६,४,६ में विभाजित करके लिखे। उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में यह ऋचा लिखे—

पर ऋण सावीरध मत्कृतानि माहं राजन्नन्यकृतेन भोजं। अव्युष्टा इन्नु भूयसी रुषास आ नो जीवान् वरुण तासु शाधि।।

उसके बाहरी की वृत्त से वीथि में कं से क्षं तक की मातृकाओं को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र के कोणों में 'वं' बीज लिखे। यह ऋणमोचन यन्त्र सर्व समृद्धि-प्रदायक, सर्वरक्षाकर, वश्यकर एवं सर्व चोरविनाशक होता है। अधिक क्या कहा जाय; यह मनुष्यों को वांछित फल देने वाला होता है।

ज्वरोन्मादादिनाशनयन्त्रम्

श्रीयन्त्रसारे—

कर्णिकायां लिखेत्तारं क्रमात् पत्रेषु चाष्टसु। पिशङ्गभृष्टि-मन्त्रस्य त्रीणि त्रीण्यक्षराणि च ॥५॥
रक्षोहणं वाजिनमित्यृचा मातृकयापि च। अया त इत्यृचा चैव भूपुरेण च वेष्टयेत् ॥६॥
एतद्यन्त्रं ज्वरोन्मादग्रहपीडादिनाशनम्। इदमेव समालिख्य वसने गैरिकादिभि: ॥७॥
तेन प्रावृतदेहं च ज्वर: सद्यो विमुञ्चति।

अयमर्थ:—अष्टदलकमलकर्णिकायां ससाध्यं तारं विलिख्याष्टसु दलेषु वक्ष्माण'पिशङ्गभृष्टि'मन्त्रस्य त्रीणि त्रीण्यक्षराणि विभज्य विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तचतुष्टयान्तरालस्य वीथीत्रये प्रथमवीथ्यां रक्षोहणं वाजिनमित्यृचा तद्बहिर्वीथ्यां मातृकार्णैस्तद्बहिर्वीथ्यां अयाते अग्ने—इत्यृचा च संवेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। ऋचस्तु—

पिशङ्गं भृष्टिमंभृणं पिशाचिमिन्द्र संमृण। सर्वं रक्षो नि बर्हय॥ (१-१३३-५)
रक्षोहणं वाजिनमा जिघर्मि मित्रं प्रथिष्ठमुप यामि शर्म।
शिशानो अग्निः क्रतुभिः समिद्धः स नो दिवा स रिषः पातु नक्तम्॥ (१०-८७-१)
अया ते अग्ने समिधा विधेम प्रति स्तोमं शस्यमानं गृभाय।
दहाशसो रक्षसः पाह्यस्मान् द्रुहो निदो मित्रमहो अवद्यात्॥ (४-४-१५)

पिशङ्गभृष्टिमन्त्रस्य परुच्छेप ऋषिः गायत्री च्छन्दः इन्द्रो देवता। रक्षोहणमित्यस्य पायुर्भरद्वाज ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः अग्निर्देवता, रक्षोघ्नं हि। अया ते मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः रक्षोहाग्निर्देवता।

ज्वरहर यन्त्र—श्रीयन्त्रसार के अनुसार अष्टदल कमल की कर्णिका में साध्य नाम के साथ 'ॐ' लिखे। आठ दलों में—'पिशंग भृष्टिमंभृणं पिशाचिमिन्द्र संमृण। सर्वं रक्षो नि बर्हय' मन्त्र के चौबीस अक्षरों में से तीन-तीन के क्रम से लिखे। अष्टदल के बाहर चार वृत्त बनावे। उनसे निर्मित तीन वीथियों में से अन्दर से प्रथम वीथि में निम्न ऋचा की मातृकाओं को लिखे—

रक्षोहणं वजिनमा जिघर्मि मित्रं प्रथिष्ठमुप यामि शर्म। शिशानो अग्निः क्रतुभिः समिद्धः स नो दिवा स रिषुः पातु नक्तम्।।

उसके बाद वाली वीथि में मातृकाओं को लिखे। तदनन्तर तृतीय वीथि में निम्न ऋचा के वर्णों को लिखे—

अया ते अग्ने समिधा विधेम प्रति स्तोमं शस्यमानं गृभाय। दहाशसो रक्षसः पाह्यस्मान् द्रुहो निदो मित्रमहो अवद्यात्।।

उसके बाहर चतुरस्र बनावे। यह यन्त्र ज्वर-उन्माद-ग्रह-पीड़ादि का विनाशक है। इसे वस्त्र पर गेरु से लिखकर ज्वराक्रान्त को ओढ़ा दे तो बुखार तुरन्त छूट जाता है। पिशंगभृष्टि मन्त्र के ऋषि परुच्छेप, छन्द गायत्री एवं देवता इन्द्र हैं। रक्षोहण मन्त्र के ऋषि पायु भरद्वाज, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता अग्नि हैं। अयाते मन्त्र के ऋषि वामदेव, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता रक्षोहाग्नि हैं।

कृत्याभिभवयन्त्रम्

तथा—

अष्टपत्रस्य पद्मस्य कर्णिकायां विलिख्य च। तारं पत्रेषु मन्त्रार्णांश्चतुरश्चतुरः क्रमात्॥८॥
मातृकार्णैः समावेष्ट्य क्ष्रौंबीजं कुगृहाश्रिषु। आलिख्य यन्त्रमेतत्तु धारयेद् यो यथाविधि॥९॥
कृत्याभिभवनिर्मुक्तः स जीवेच्छरदः शतम्।

अयमर्थः—अष्टदलकमलकर्णिकायां ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, अष्टदलेषु वक्ष्यमाणाया 'यां कल्पयन्ती'त्यृचो वर्णान् प्रतिदलं चतुरश्चतुरो विभज्य विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले मातृकार्णैः संवेष्ट्य बहिश्चतुरस्रकोणेषु क्ष्रौं इति नृसिंहबीजं विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। मन्त्रस्तु—

यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव। तां ब्रह्मणापनिर्णुद्मः प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु॥१॥
अस्य मन्त्रस्य प्रत्यङ्गिरा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, प्रत्यङ्गिरा देवता।

कृत्यादोष निवारक यन्त्र—अष्टदल कमल की कर्णिका में साध्य के साथ 'ॐ' लिखे। दलों में निम्न ऋचा के चार-चार अक्षरों को लिखे—

यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव। तां ब्रह्मणापनिर्णुद्मः प्रत्यक्कर्तारमृच्छुतु।।

उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में मातृकाओं को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनाकर कोणों में नृसिंह बीज 'क्ष्रौं' लिखे। इस यन्त्र को जो विधिवत् धारण करता है, वह कृत्या दोष से मुक्त होकर सौ वर्षों तक जीवित रहता है। यां कल्पयन्ति मन्त्र के ऋषि प्रत्यङ्गिरा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता प्रत्यङ्गिरा हैं।

ग्रहोन्मादादिनाशनयन्त्रम्

तथा—

कर्णिकायां साध्यगर्भं तारं पत्रेषु षट्स्वपि। कृणुष्वेत्याद्यमर्धं च दधर्षीदन्तमालिखेत् ॥१०॥
तद्बाह्येऽष्टसु पत्रेषु ह्युदग्नेत्याद्यृचां क्रमात्। अर्धमर्धं सासदिष्टिरित्यन्तं षोडशस्वथ ॥११॥
पत्रेष्वर्चाम्याद्यवद्यादन्तं चर्चां यथाक्रमम्। अर्धमर्धं समालिख्य बाह्ये रक्षोहणाद्यया ॥१२॥
वि ज्योतिषेत्यृचा भूयस्तद्वदेव च वेष्टयेत्। मातृकार्णैः समावेष्ट्य भूपुरेण च वेष्टयेत् ॥१३॥
रुचकादिषु भूषासु सम्यक् संयोज्य धारणात्। यन्त्रमेतद् ग्रहोन्मादज्वरकृत्याद्युपद्रवान् ॥१४॥
नाशयेदथवा वस्त्रे कुङ्कुमाद्यैर्विलिख्य च। जप्त्वा तत्प्रावृतो यस्तु ज्वरः सद्यो विनश्यति ॥१५॥ इति।

अस्यार्थः—षड्दलकमलकर्णिकायां ससाध्यं तारं विलिख्य, षड्दलेषु कृणुष्व पाज इत्यारभ्य व्यथिरा-दधर्षीदित्यन्तस्य ऋक्त्रयस्यार्धषट्कं विलिख्य, तद्बाह्येऽष्टदलेषु उदग्ने तिष्ठेत्यादि सुदिना सासदिष्टिरित्यन्तस्य ऋक्चतुष्टयस्यार्धमर्धं विलिख्य, तद्बहिः षोडशदलेषु अर्चामि ते इत्यादि मित्रमहो अवद्यादित्यन्तस्य ऋगष्टकस्यार्धमर्धं विलिख्य, तद्बाह्ये वृत्तचतुष्टयान्तर्गतान्तरालत्रये प्रथमे रक्षोहणं वाजिनमित्यृचा पूर्वोक्तया, द्वितीये विज्योतिषा बृहतेत्याद्यया ऋचा, तृतीये मातृकया च संवेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्। एतदुक्तफलदं भवतीति। ऋचस्तु (४.१.१)—

कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ इभेन।
तृष्वीमनु प्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्य रक्षसस्तपिष्ठैः ॥१॥
तव भ्रमास आशुया पतन्त्यनु स्पृश धृषता शोशुचानः।
तपूंष्यग्ने जुह्वा पतङ्गानसंदितो वि सृज विष्वगुल्काः ॥२॥
प्रति स्पशो वि सृज तूर्णितमो भवा पायुर्विशो अस्या अदब्धः।
यो नो दूरे अघशंसो यो अन्त्यग्ने माकिष्टे व्यथिरा दधर्षीत् ॥३॥
उदग्ने तिष्ठ प्रत्या तनुष्व न्यमित्राँ ओषतात् तिग्महेते।
यो नो अरातिं समिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कं ॥४॥
ऊर्ध्वो भव प्रति विध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने।
अव स्थिरा तनुहि यातुजूनां जामिमजामिं प्र मृणीहि शत्रून् ॥५॥
स ते जानाति सुमतिं यविष्ठ ईवते ब्रह्मणे गातुमैरत्।
विश्वान्यस्मै सुदिनानि रायो द्युम्नान्यर्यो वि दुरो अभि द्यौत् ॥६॥
सेदग्ने अस्तु सुभगः सुदानुर्यस्त्वा नित्येन हविषा य उक्थैः।
पिप्रीषति स्व आयुषि दुरोणे विश्वेदस्मै सुदिना सासदिष्टिः ॥७॥
अर्चामि ते सुमतिं घोष्यर्वाक्सं ते वावाता जरतामियं गीः।
स्वश्वास्त्वा सुरथा मर्जयेमास्मे क्षत्राणि धारयेरनु द्यून् ॥८॥
इह त्वा भूर्या चरेदुप त्मन् दोषावस्तर्दीदिवांसमनु द्यून्।
क्रीळन्तस्त्वा सुमनसः सपेमाभि द्युम्ना तस्थिवांसो जनानाम् ॥९॥
यस्त्वा स्वश्वः सुहिरण्यो अग्न उपयाति वसुमता रथेन।
तस्य त्राता भवसि तस्य सखा यस्त आतिथ्यमानुषग् जुजोषत् ॥१०॥

महो रुजामि बन्धुता वचोभिस्तन्मा पितुर्गोतमादन्वियाय।
त्वं नो अस्य वचसश्चिकिद्धि होतर्यविष्ठ सुक्रतो दमूनाः ॥११॥
अस्वप्नजस्तरणयः सुशेवा अतन्द्रासोऽवृका अश्रमिष्ठाः।
ते पायवः सध्र्यञ्चो निषद्याग्ने तव नः पान्त्वमूर ॥१२॥
ये पायवो मामतेयं ते अग्ने पश्यन्तो अन्धं दुरितादरक्षन्।
ररक्ष तान् सुकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इद्रिपवो नाह देभुः ॥१३॥
त्वया वयं सधन्यस्त्वोतास्तव प्रणीत्यश्याम वाजान्।
उभा शंसा सूदय सत्यतातेऽनुष्ठुया कृणुह्यहयाण ॥१४॥
अया ते अग्ने समिधा विधेम प्रति स्तोमं शस्यमानं गृभाय।
दहाशसो रक्षसः पाह्यस्मान् द्रुहो निदो मित्रमहो अवद्यात् ॥१५॥ इति।
रक्षोहणं वाजिनमा जिघर्मि मित्रं प्रथिष्ठमुप यामि शर्म।
शिशानो अग्निः क्रतुभिः समिद्धः स नो दिवा स रिषः पातु नक्तम् ॥ (१०-८७-१)
वि ज्योतिषा बृहता भात्यग्निराविर्विश्वानि कृणुते महित्वा।
प्रादेवीर्मायाः सहते दुरेवाः शिशीते शृङ्गे रक्षसे विनिक्षे ॥ (५.२.९) इति।

कृष्णुष्व पाज इत्यस्य पञ्चदशर्चस्य रक्षोघ्नस्य वामदेव ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, रक्षोहाग्निर्देवता। वि ज्योतिषेत्यस्य कुमार ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः, अग्निर्देवता।

ग्रह-उन्मादादि-नाशक यन्त्र—षड्दल कमल बनाकर कर्णिका में साध्यसहित 'ॐ' लिखे। छः दलों में आगे मूलोक्त 'कृणुष्व पाजः' से व्यथिरा दधर्षीत्' ऋचा के आधा-आधा भाग को लिखे। उसके बाहर अष्टदल बनाकर मूलोक्त 'उदग्ने तिष्ठ' से 'सुदिना सासदिष्टिः' ऋचाओं के आधा-आधा भाग को लिखे। उसके बाहर षोडशदल कमल बनाकर मूलोक्त शेष 'अर्चामि ते' से 'मित्रमहो अवद्यात्' तक की आठ ऋचाओं के आधा-आधा भाग को लिखे। उसके बाहर चार वृत्त बनाकर उनके तीन अन्तरालों में मूलोक्त से अन्दर से प्रथम अन्तराल में मूलोक्त 'रक्षोहणं वाजिनं' ऋचा के वर्णों को लिखे। द्वितीय अन्तराल में मूलोक्त 'वि ज्योतिषा बृहता' ऋचा के वर्णों को लिखे। तृतीय अन्तराल में अं से क्षं तक की मातृकाओं को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। इस यन्त्र को रुचक आदि आभूषणों में जोड़कर धारण करने से ग्रहोन्माद-ज्वर-कृत्यादि उपद्रवों का नाश होता है अथवा वस्त्र पर कुङ्कुमादि से लिखकर जप कर धारण करने से बुखार तुरन्त उत्तर जाता है।

कृणुष्व पाज इत्यादि पन्द्रह ऋचाओं के ऋषि वामदेव, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता रक्षोहाग्नि हैं। विज्योतिषा के ऋषि कुमार, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता अग्नि है।

सर्वसमृद्धिप्रदयन्त्रम्

तथा—
कर्णिकायां लिखेत् तारं मनोः पत्रेषु चाष्टसु। पञ्चषट्पञ्चषट्पञ्चरसभूतषडर्णकान् ॥१॥
(इन्द्र श्रेष्ठेत्यृचो वर्णान् विभज्य तु विलिख्य च)। वयं त एभिर्मातृकया भूपुरेण च वेष्टयेत् ॥२॥
इन्द्र श्रेष्ठानि मन्त्रस्य यन्त्रं सर्वसमृद्धिदम्। आयुरारोग्यसौभाग्यधनधान्यसुतप्रदम् ॥३॥
सर्वरक्षाकरं वश्यं सुदिनत्वयशस्करम्। किमत्र बहुनोक्तेन वाञ्छितार्थप्रदं परम् ॥४॥
अयमर्थः—अष्टदलमध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्याष्टसु पत्रेषु पञ्च षट् पञ्च षट् पञ्च षट् पञ्च षट् इति

क्रमेण इन्द्र श्रेष्ठानीत्यृचो वर्णान् विभज्य विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तन्तरालयोः प्रथमे 'वयं त एभि'रित्यृचा वक्ष्यमाणया द्वितीये मातृकया च संवेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्त्रं कुर्यात्। एतदुक्तफलदं भवति। ऋक् तु (२.२१.६)—

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।

पोषं रयीणामीरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम् ॥१॥

इन्द्र श्रेष्ठानि मन्त्रस्य गृत्समद ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः इन्द्रो देवता।

समृद्धिप्रद यन्त्र—अष्टदल कमल के मध्य में साध्य के साथ 'ॐ' लिखे। 'इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणाम रिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्' ऋचा के ५,६,५,६,५,६,५,६ वर्णों को आठो दलों में लिखे। उसके बाहर वृतों के अन्तरालों में से प्रथम अन्तराल में—'वयं त एभिः पुरुहूत सख्यैः शत्रोः शत्रोरुत्तर इत्स्याम। घ्नन्तो वृत्राण्युभयानि शूर राया मदेम बृहता त्वोताः' मन्त्र के अक्षरों को लिखे। द्वितीय अन्तराल में मातृकाओं को लिखकर वेष्टित करे। उसके बाहर चतुरस्त्र बनावे। यह श्रेष्ठ यन्त्र सभी समृद्धियों को देने वाला है। आयु, आरोग्य, सौभाग्य, धन-धान्य एवं पुत्रप्रदायक है। सभी प्रकार से रक्षक, वश्यकर, सुदिनत्वप्रद एवं यशस्कर है। बहुत क्या कहा जाय, यह सभी वांछितार्थ-प्रदायक है। इन्द्र श्रेष्ठानि मन्त्र के ऋषि गृत्समद, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता इन्द्र हैं।

बलनिषूदनयन्त्रम्

एतस्यैव यन्त्रान्तरमाह—

प्रणवभास्वरमध्यमथो बहिर्वसुदले स्वरसंयुतकेसरे।
अयुजि पञ्चगुहाननशो युजि प्रविलिखेच्च मनोः क्रमशोऽर्णकान् ॥५॥
अभिवृतं खलु कादिभिरक्षरैर्धरणिगेहयुगाश्रिगमन्मथम्।
धनधरासुभगत्वमनोज्ञतां मधुरवाग्वररत्नयशःश्रियम् ॥६॥
सुदिनतां च तनोति परं नृणां बलनिषूदनयन्त्रमिदं धृतम्।

गुहाननशः षट्षट्संख्यया। अस्यार्थः—प्रागुक्त एव यन्त्रे केसरेषु युगशः स्वरान् विलिखेत्, कादिक्षान्तैरावेष्टयेत्। अत्र पूर्वयन्त्रोक्तऋग्वेष्टनं नास्ति, अष्टकोणेषु कामबीजं विलिखेत्। वासोऽलङ्कारभूषणमिष्टभोजन-स्वेष्टजनदर्शनप्राप्तिः सुदिनत्वम्।

बलनिषूदन यन्त्र—पूर्वोक्त यन्त्र के केसरमध्य में 'ॐ' लिखे। अष्टदल के दलों में दो-दो स्वरों को लिखे। दलाग्रों में कामबीज 'क्लीं' लिखे। क से क्ष तक की मातृकाओं से उसे वेष्टित करे। उसके बाहर चतुरस्त्र बनावे। इस बलनिषूदन यन्त्र को धारण करने से मनुष्य को धन, भूमि, सुभगत्व, मनोज्ञता, मधुर वाणी, रत्न, यश, सुदिनता की प्राप्ति होती है।

बलनिषूदनयन्त्रान्तरम्

तथा—

विलिख्य कर्णिकान्तरे ध्रुवं दलाष्टके मनोः। षडर्तुवेदषट्शरत्रयीस्वरेन्द्रियाक्षरान् ॥७॥
लिखेच्च मातृकाक्षरैर्धरापुरेण चावृतम्। वयं त एभिरित्यृचः सुयन्त्रमेतदिष्टदम् ॥८॥
विशिष्टरत्नगोधरासुवर्णधान्यशालिनीम्। वितीर्य संपदं परां रिपुक्षयं च यच्छति ॥९॥

अस्यार्थः—अष्टदलकमलकर्णिकायां ससाध्यं प्रणवं विलिख्य तद्दलेषु वयं त एभिरित्यृचो वर्णान् षट् षट् चतुः षट् पञ्च चतुः सप्त पञ्च-क्रमेण विभज्य विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले मातृकार्णैरावेष्ट्य तद्बहिश्च-तुरस्त्रं कुर्यात्। एतदुक्तफलदं भवति। मन्त्रस्तु (६.१९.१३)—

वयं त एभिः पुरुहूत सख्यैः शत्रोः शत्रोरुत्तर इत्स्याम।

घ्नन्तो वृत्राण्युभयानि शूर राया मदेम बृहता त्वोताः ॥१॥

वयं त एभिरिति मन्त्रस्य भरद्वाज ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः इन्द्रो देवता।

यन्त्रान्तर—अष्टदल की कर्णिका में 'ॐ' लिखे। आठ दलों में 'वयं त एभिः पुरुहूत सख्यैः शत्रोः शत्रोरुत्तर इत्स्याम। घ्नन्तो वृत्राण्युभयानि शूर राया मदेम बृहता त्वोताः' मन्त्र के वर्णों को लिखे। इसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनावे। इस यन्त्र के प्रभाव से विशिष्ट रत्न, गाय, भूमि, सोना, धान्य, सम्पदा की प्राप्ति होती है। शत्रुओं का नाश होता है। वयं त एभि मन्त्र के ऋषि भरद्वाज, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता इन्द्र हैं।

सप्रयोगः यन्त्रधारणक्रमः

श्रीयन्त्रसारे—

आलिख्य वीप्सितं यन्त्रं बीजं तत्कर्णिकान्तरे। तस्योदरे समिति च बीजं साध्यार्णवेष्टितम् ॥१॥
बीजस्य पार्श्वयोर्दृष्टी ईईं इति च तत्पुरः। जिह्वां स्त्र्यूमिति दिक्ष्वेतान् सोऽहं हंसार्णकान्बहिः ॥२॥
प्राणप्रतिष्ठामन्त्रं च गायत्रीं मन्त्रयन्त्रयोः। यथावकाशं विलिखेत् स्वगुरूक्तेन वर्त्मना ॥३॥ इति।

सारसंग्रहे—

गुलिकीकृत्य यन्त्रं च लाक्षालोहत्रयावृतम्। कृत्वा प्रतिष्ठितप्राणं सिक्तं सम्पातसर्पिषा ॥१॥
विन्यस्य कलशे यन्त्रस्थापिते विधिवद्गुरुः। तत्रावाह्य यजेत् सम्यक् तत्र यन्त्रस्य देवताम् ॥२॥
तत्कुम्भोदकसिक्ताय वितरेद् यन्त्रमादरात्। गृहीत्वा गुरुणा दत्तं यन्त्रं भव्यः प्रसन्नधीः ॥३॥
बिभृयादुक्तविधिना विश्वस्तः सर्वसिद्धये। चन्दनागुरुकर्पूरकस्तूरीरोचनान्वितः ॥४॥
मदः करिभवो लाक्षारसकुङ्कुमसंयुतम्। यन्त्रलेखनद्रव्याणि क्रूरेष्वष्टविषाणि च ॥५॥
लवणोषणमेहाम्बुगृहधूमाग्निसंयुतः। श्मशानाङ्गारनिम्बोत्थनिर्यासो विषमीरितम् ॥६॥

उषणमूषरं, मेहाम्बु प्रस्रवः, अग्निश्चित्रकम्।

त्रिलोहभूर्जपत्राणि क्षौमतालदलानि च। तत्तत्कल्पोदितानि स्युर्यन्त्राधिकरणानि च ॥७॥ इति।

अथैतत्प्रयोगः—तत्र सुदिने शुभे मुहूर्ते चन्द्रताराद्यनुकूले साधकः कृतनित्यक्रियः श्रीगुरुं प्रणम्य विघ्नेश्वरं समभ्यर्च्य, पूर्वोक्तवारेशद्वयतिथीशनक्षत्रेशान् संपूज्य, स्वाभिमतं यन्त्रं वर्णविन्यासमन्तरेण विरच्य, तन्मध्ये लेख्यं बीजं विपुलतरोदरं विलिख्य, समिति जीवबीजं विलिख्य तद्बीजं साध्यनामाक्षरैः संवेष्ट्य, पूर्वलिखितबीजाद्बहिस्तद्दक्षवामपार्श्वयोः ईईं इति दृष्टिद्वयं विलिख्य, तत्पुरतः स्त्र्यूमिति जिह्वाबीजं विलिख्य, तस्य प्रागादिदिक्षु सोहंहंस इति प्रादक्षिण्येनैकैकमक्षरं विलिख्य, तदनु यथास्थानं साधककर्मादि तत्तत्कल्पोक्तं सर्वं विलिख्य सर्वान्ते प्राणप्रतिष्ठामन्त्रं मन्त्रगायत्रीं यन्त्रगायत्रीं च यथावकाशं लिखेत्। तत्र प्राणप्रतिष्ठामन्त्रः प्रागेवोक्तः। मन्त्रगायत्री तत्तत्कल्पोक्ता द्रष्टव्या। यन्त्रगायत्री तु—ॐयन्त्रराजाय विद्महे देवगृहाय धीमहि तन्नो यन्त्रं प्रचोदयात्। इतीत्थं यन्त्रं विलिख्य लाक्षालोहत्रयवेष्टितं क्वचित् संस्थाप्य, स्वासनपूजादिन्यासजालं विधाय, यन्त्रस्य यन्त्रलिखितमन्त्रगणस्य साध्यस्य च पृथक्पृथक् प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा, तत्र तद्योगपीठपूजापूर्वकं यन्त्राधिदेवतामावाह्य साङ्गां सावरणां संपूज्य, तद्यन्त्रं स्पृशन् मूलविद्यां देवताध्यानपूर्वकं लक्षाद्ययुतावधि कार्यस्य गौरवलाघवं विज्ञाय जपित्वा, कुण्डादावग्निं संस्कृत्य गोघृतेनायुतादिसहस्रान्तं यन्त्रे हुतशेषं स्रुवलग्नं संपातयन् हुत्वा, तत्तद्यन्त्रे सर्वतोभद्रमण्डले वा दीक्षोक्तविधिना कुम्भं संस्थाप्य, यन्त्रदेवतां साङ्गां सावरणां संपूज्य तेन जलेनाभिषिक्ताय यन्त्रं दद्यात्। सोऽपि प्रणामपूर्वकं यन्त्रमादायाचार्यतोषणं कृत्वा सुसंहृष्टो विश्वासपूर्वकं धारयेत्। तेन सर्वाभीष्टसिद्धयो भवन्तीति।

श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि शुभ दिन, शुभ, मुहूर्त एवं चन्द्र-तारा के अनुकूल होने पर साधक नित्य कृत्य के बाद श्रीगुरु को प्रणाम करके गणेश की पूजा करके पूर्वोक्त वारेश, तिथीश, नक्षत्रेश की पूजा करे। स्वाभिमत यन्त्र वर्ण विन्यास के क्रम से लिखे। उसके मध्य में बृहदाकार बीज लिखकर उसमें जीवबीज लिखे। उस बीज को साध्य नाम के अक्षरों से वेष्टित

करे। पूर्वलिखित बीज के दाँयें-बाँयें 'इं ईं' लिखे। उसके आगे 'स्र्यूं' लिखे। उसके पूर्वादि चारो दिशाओं में 'सोहं हंस:' इन चार अक्षरों को एक-एक करके लिखे। तब यथास्थान साधक कल्पोक्त कर्मादि लिखे। सबके अन्त में अपने गुरु द्वारा उपदिष्ट क्रम से प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र, मन्त्र गायत्री एवं यन्त्र गायत्री को यथावकाश लिखे। सारसंग्रह में कहा गया है कि इस प्रकार से यन्त्र लिखकर लाक्षा-त्रिलोह से वेष्टित करके कहीं पर भी स्थापित करके अपने आसन की पूजा एवं न्यासों को करके यन्त्र का, यन्त्र में लिखित मन्त्रगण एवं साध्य तीनों का पृथक्-पृथक् प्राण-प्रतिष्ठा करे। तब योगपीठ की पूजा करे। यन्त्र के अधिदेवता का आवाहन करके अंगों-आवरणों सहित उसकी पूजा करे। उस यन्त्र को स्पर्श करके देवता का ध्यान करते हुये कार्य की गुरुता-लघुता के अनुसार मूल विद्या का एक लाख या दश हजार जप करे। कुण्ड में अग्नि का संस्कार करके गोघृत से दश हजार या एक हजार हवन करे। हुतशेष बून्दों को यन्त्र पर टपकावे। उस यन्त्र को सर्वतोभद्र मण्डल में या दीक्षोक्त विधि से कलश में स्थापित करके यन्त्रदेवता का सांग-सपरिवार पूजन करे। उस जल से अभिषिक्त व्यक्ति को यन्त्र प्रदान करे। साधक प्रणामपूर्वक आचार्य को सन्तुष्ट करके प्रसन्नता से विश्वासपूर्वक उस यन्त्र को धारण करे। इससे सर्वाभीष्ट की सिद्धि होती है। यन्त्र-लेखन द्रव्य चन्दन, अगर, कपूर, कस्तूरी, गोरोचन, हाथी का मद, लाक्षा रस एवं कुङ्कुम हैं। ये सभी शुभ कर्म में यन्त्रलेखन द्रव्य हैं। क्रूर कर्म में आठ विषों (नमक, ऊपर वर्षाजल, गृह का धूआँ, चित्रक, श्मशान का अंगार, निम्ब निर्यास) से यन्त्रलेखन किया जाता है। त्रिलोह भोजपत्र क्षौम तालदल उसके कल्प में उक्त द्रव्यों से यन्त्र लिखना चाहिये।

ग्रहपीड़ाप्रशमनयन्त्रम्

तथा—

आ कृष्णेनेत्यृचा तारं कर्णिकामध्यसंस्थितम्। साध्यगर्भं समावेष्ट्य प्राग्दले विलिखेत् पुन: ॥१॥
आप्यायस्वेत्यृचा याम्ये उद्बुध्यस्वेति पश्चिमे। बृहस्पतेत्यृचा सौम्ये प्र व: शुक्राय इत्यपि ॥२॥
आग्नेयकोणगे पत्रे अग्निर्मूर्धेति नैर्ऋते। शन्नोदेवीत्यृचं पत्रे पत्रे वायव्यकोणगे ॥३॥
कया नेति तथैशाने केतुं कृण्वेत्यृचं दले। तद्बाह्ये मातृकावर्णै: संवेष्ट्य कुगृहास्त्रिषु ॥४॥
ॐह्रींहंसाक्षरान् दिक्षु सोहंहंसाक्षरांल्लिखेत्। स्वर्णादिपट्टेष्वालिख्य यन्त्रमेतद् यथाविधि ॥५॥
अभिषिक्त: शुभैस्तोयै: कृतपुण्याहमङ्गल:। कर्णिकायां क्रमादर्च्या: प्रागाद्यष्टदलेषु च ॥६॥
सूर्यचन्द्रारसौम्यार्किजीवाहिभृगुकेतव:। सुजप्तं सिक्तसंपातं स्वमन्त्रैश्च यथाविधि ॥७॥
ग्रहपीडाप्रशमनं कृत्याज्वरविनाशनम्। सर्वामयहरं दिव्यं समरे विजयप्रदम् ॥८॥
आयुष्करं पुत्रदं च परचक्रविनाशनम्। किमत्र बहुनोक्तेन वाञ्छितार्थप्रदं नृणाम् ॥९॥

एतस्यायमर्थ:—अष्टदलकमलकर्णिकायां ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, आ कृष्णेनेत्यृचा संवेष्ट्य, पूर्वदले आप्यायस्वेति, याम्ये उद्बुध्यस्वेति, पश्चिमे बृहस्पते अतीति, उत्तरदले प्र व: शुक्रायेति, आग्नेयदले अग्निर्मूर्धेति, नैर्ऋत्ये शन्नो देवीरिति, वायव्ये कया नश्चित्र इति, ईशानदले केतुं कृण्वन्निति मन्त्रान् विलिख्य, तद्बाह्ये वृत्तद्वयान्तराले अकारादिक्षकारान्तमातृकावर्णैरावेष्ट्य, तद्बहिर्भूपुरे आग्नेयादिकोणेषु ॐह्रींहंस: इति प्रतिकोणं विलिख्य पूर्वादिचतुर्दिक्षु सोहंहंस: इति प्रतिदिशं विलिखेत्। एतद्यन्त्रं प्रोक्तविधिना धारयेत् प्रोक्तफलदं भवतीति।

ग्रहपीड़ा-निवारक यन्त्र—अष्टदल कमल की कर्णिका में साध्य के साथ 'ॐ' लिखकर उसे निम्नांकित सौर ऋचा से वेष्टित करे—

आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च। हिरण्मयेन सरिता रथेन देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

अष्टदल के पूर्वदल में 'आप्यायस्व' दक्षिणदल में 'उद्बुध्यस्व' पश्चिमदल में 'बृहस्पते' उत्तर दल में 'प्र व: शुक्राय' आग्नेय दल में 'अग्निर्मर्धा' नैर्ऋत्य दल में 'शन्नो देवी' वायव्य दल में 'कया नश्चित्र' ईशानदल में 'केतुं कृण्वन्' इन मन्त्रों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर अन्तराल में 'अं' से 'क्षं' तक की मातृकाओं को लिखे। उसके बाहर भूपुर में आग्नेयादि कोणों में 'ॐ ह्रीं हंस:' लिखे। पूर्वादि चारो दिशाओं में 'सोहं हंस:' के एक-एक अक्षर को लिखे। इस यन्त्र को स्वर्णादि

पट्ट पर विधिवत् लिखकर शुभ जल से अभिषिक्त करके पुण्याहवाचन करे। कर्णिका में क्रम से पूजा करे। पूर्वादि आठ दलों में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु की पूजा करे। मन्त्रित करके यन्त्र पर हुतशेष टपकावे। इस यन्त्र को धारण करने से ग्रहपीड़ा का प्रशमन हाता है, कृत्या ज्वर का नाश होता है, सभी रोगों का विनाश और युद्ध में विजय प्राप्त होती है। यह यन्त्र आयुष्कर, पुत्रदायक एवं परचक्र-विनाशक होता है। बहुत क्या कहा जाय; इस यन्त्र को धारण करने मनुष्यों को वाञ्छित अर्थ प्राप्त होता है।

ग्रहाणां वेदोक्ता मन्त्राः

अथ वेदोक्तनवग्रहविधानम्। तत्र स्मृतिसंग्रहे—

विधानं ग्रहमन्त्राणां वक्ष्ये सर्वसमृद्धिदम्। आ कृष्णेन सहस्रांशोरिमं देवा तथेन्दवे ॥१॥
अग्निर्मूर्धेति भौमाय उद्बुध्यस्व बुधाय च। बृहस्पतेति च गुरोः शुक्रायान्नात्परिस्रुतः ॥२॥
शनैश्चरस्य मन्त्रोऽयं शन्नो देवीरुदाहृतः। कया न इति राहोश्च केतुं कृण्वंस्तु केतवे ॥३॥
आप्यायस्वेति चेन्दोश्च शुक्रन्त इति वा भृगोः। नव मन्त्राः समुद्दिष्टाः सर्वे व्याहृतिपूर्वकाः ॥४॥

वेदोक्त नवग्रह विधान—स्मृतिसंग्रह के अनुसार सर्वसमृद्धिप्रद ग्रहमन्त्रों का विधान इस प्रकार है— 'आकृष्णेन' सूर्य का, 'इमे देवा', अथवा 'आप्यायस्व' चन्द्र का, 'अग्निर्मूर्धा' मंगल का, 'उद्बुध्यस्व' बुध का, 'बृहस्पते' गुरु का, 'अन्नात्परिस्रुतः' अथवा 'शुक्रन्त' शुक्र का, 'शन्नो देवी' शनि का, 'कया न' राहु का एवं 'केतुं कृण्वन्' केतु का मन्त्र है। ये सभी मन्त्र व्याहृतिपूर्वक होते हैं।

सूर्यस्यार्चाध्यानादिविधिः

१. आ कृष्णेनेति मन्त्रस्य हिरण्यस्तूपसंज्ञकः। ऋषिः प्रोक्तस्ततस्त्रिष्टुप् छन्दः सूर्यस्तु देवता ॥५॥
इष्टकामार्थसिद्ध्यर्थं विनियोग उदाहृतः। व्याहृतित्रयमादौ स्यादा कृष्णेन हृदीरितम् ॥६॥
तथैव रजसा चेति शिरश्च समुदाहृतम्। शिखायां च समुद्दिष्टं वर्तमानो निवेशयन् ॥७॥
कवचे चामृतं चैव मर्त्यं चेति समीरयेत्। हिरण्ययेन सविता रथेनेति त्रिनेत्रके ॥८॥
शेषमस्त्रे समुद्दिष्टं षडङ्गन्यास ईरितः। हृदयाय नमः प्रोक्तं शिरसे चाग्निवल्लभा ॥९॥
शिखायै वषडित्युक्तं कवचाय हुमीरितम्। नेत्रत्रयाय वौषट् च अस्त्राय फडुदीरितम् ॥१०॥
एवं षडङ्गं विन्यस्य पदन्यासं समाचरेत्। आ कृष्णेनेति शिरसि ललाटे रजसेति च ॥११॥
वर्तमानो निवेशयन् मुखेऽमृतमथो हृदि। मर्त्यं चेति च नाभौ स्यात् कट्यां हिरण्ययेन तु ॥१२॥
जङ्घयोः सवितेत्यूर्वोः रथेनेति च जानुनोः। आ देवो याति पदयोर्भुवनानि ततः परम् ॥१३॥
पश्यन्निति विधायैवं ध्यानं कुर्यात् समाहितः।

पद्मासनः पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिः सप्ततुरङ्गवाहः।
दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः ॥१४॥

ध्यात्वैवं पूजयेत् सूर्यं वृत्तं षट्कोणकं तथा। वृत्तमष्टदलं बाह्ये वृत्तं भूमिपुरं तथा ॥१५॥
चतुर्द्वारसमायुक्तं मण्डलेऽस्मिन् प्रपूजयेत्। मध्ये रविं सुसंपूज्य षट्कोणे तु षडङ्गकम् ॥१६॥
तद्बहिर्वसुपत्रेषु पूर्वाद्यं तु प्रदक्षिणम्। सोमं भौमं तथा सौम्यं गुरुशुक्रौ शनिं तथा ॥१७॥
राहुं केतुं च संपूज्य स्वस्वमन्त्रैर्विशेषतः। भूपुरे लोकपालांश्च पूर्वादिक्रमतो यजेत् ॥१८॥
इन्द्रमग्निं यमं चैव निर्ऋतिं वरुणं तथा। वायुं कुबेरमीशानं ब्रह्माणं शेषमेव च ॥१९॥
वासवेशानयोर्मध्ये ब्रह्माणं पूजयेत् तथा। रक्षोवरुणयोर्मध्ये ह्यनन्तमपि पूजयेत् ॥२०॥
तल्लिङ्गकैश्च मन्त्रैर्वा नाममन्त्रैश्च पूजयेत्। तदस्त्राणि ततो बाह्ये वज्रं शक्तिं च दण्डकम् ॥२१॥

**खड्गं पाशं सृणिं चैव शूलं पद्मं सुदर्शनम्। एवं संपूज्य विधिवदुपचारैर्मनोरमैः ॥२२॥
अष्टोत्तरसहस्रं वा शतमष्टाधिकं तु वा। तदग्रे मन्त्रमावर्त्य स्तुत्वा देवं विसर्जयेत् ॥२३॥
एवं यः पूजयेद्भक्त्या भास्करं ग्रहनायकम्। ग्रहपीड़ां विजित्याशु सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥२४॥
अरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान् धनवान् सुखी। अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवो दिवाकरः ॥२५॥**

सूर्यपूजन—आकृष्णेन मन्त्र के ऋषि हिरण्यस्तूप, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता सूर्य हैं। इष्ट काम की सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—भूर्भुवःस्वः हृदयाय नमः, रजसा शिरसे स्वाहा, वर्तमानो निवेशयन् शिखायै वषट्, अमृतं मर्त्यं च कवचाय हुं, हिरण्मयेन सविता रथेन त्रिनेत्राय वौषट्, देवो याति भुवनानि पश्यन् अस्त्राय फट्।

षडङ्ग न्यास के बाद इस प्रकार पदन्यास किया जाता है—शिर पर आकृष्णेन नमः, ललाट पर रजसे नमः, मुख में वर्तमानो निवेशयन् नमः, हृदय में अमृतं नमः, नाभि में मर्त्यं नमः, कमर में हिरण्मयेन नमः, जाङ्घ पर सविता नमः, ऊरुओं में रथेन नमः, जानुओं में देवो याति नमः, पैरों में भुवनानि पश्यन् नमः। न्यास के बाद इस प्रकार ध्यान करे—

पद्मासनः पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिः सप्ततुरङ्गवाहः। दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः ॥

ध्यान के पश्चात् वृत्त के बाहर षट्कोण वृत्त अष्टदल वृत्त के बाहर चार द्वारों से युक्त भूपुर से मण्डल बनाकर सूर्य की पूजा करे। मध्य के वृत्त में सूर्य की पूजा करे। षट्कोण में षडङ्ग पूजन करे। उसके बाहर अष्टदल में पूर्वादि प्रदक्षिण क्रम से चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु की पूजा करे। पूजा उनके मन्त्रों से करे। भूपुर में लोकपालों की पूजा पूर्वादि क्रम से करे। उनमें इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त आते हैं। पूर्व-ईशान मध्य में ब्रह्मा की और नैर्ऋत्य-पश्चिम मध्य में अनन्त की पूजा करे। उनके बीजमन्त्रों या नाममन्त्रों से यह पूजा करे। उसके बाहर वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, शूल, पद्म और सुदर्शन की पूजा विधिवत् मनोरम उपचारों से करे। उनके आगे एक हजार आठ या एक सौ आठ जप करे। स्तुति करके विसर्जन करे। ग्रहनायक की पूजा इस प्रकार से जो करता है, उसकी ग्रहपीड़ा का नाश होता है, सभी मनोरथ पूरे होते हैं; वह नीरोग, दीर्घजीवी, पुत्रवान, धनवान एवं सुखी रहता है तथा अन्त में सूर्यलोक प्राप्त करता हैं।

चन्द्रस्यार्चाध्यानादिविधिः

**२. इमं देवेति मन्त्रस्य गौतम ऋषिरीरितः। विराट् छन्दो देवतात्र सोमः सर्वार्थसिद्धये ॥२६॥
विनियोगः समाख्यात इमं देवा तथैव च। असपत्नं सुवध्वं च हृदयं महते ततः ॥२७॥
क्षत्राय शिर आख्यातं महते च ततः परम्। ज्यैष्ठ्यायेति शिखा प्रोक्ता महते च पुनर्वदेत् ॥२८॥
जानराज्याय कवचमिममेति च मुष्य च। पुत्रं नेत्रं ततोऽस्यै च विशेऽस्त्रं समुदाहृतम् ॥२९॥
एवं न्यस्य षडङ्गानि पदन्यासं समाचरेत्। इमं देवेति शिरस्यसपत्नमिति भालके ॥३०॥
सुवध्वं मुखदेशे तु महते च ततः परम्। क्षत्राय हृदयं प्रोक्तं महते च ततः परम् ॥३१॥
ज्यैष्ठ्याय ऊर्वोर्महते जानराज्याय जानुनोः। इमममुष्य च पुत्रं गुल्फयोस्तदनन्तरम् ॥३२॥
अस्यै विशे पादयोश्च पदन्यास उदाहृतः।
श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डधरो द्विबाहुः।
चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः ॥३३॥
एवं ध्यात्वा स्वपुरतः पूजामण्डलमालिखेत्। चतुरस्रं च षट्कोणं वसुपत्रं च भूपुरम् ॥३४॥
मध्ये देवं समावाह्य पूजयेदुपचारकैः। षट्कोणे तु षडङ्गानि वसुपत्रे कुजादिकान् ॥३५॥
भूपुरे लोकपालांश्च बहिर्वज्रादिकान् यजेत्। यथापूर्वं जपं कृत्वा समर्प्य विधिपूर्वकम् ॥३६॥
स्तुत्वा नत्वा च संप्रार्थ्य स्वात्मन्युद्वासयेत् सुधीः। एवं यः पूजयेद्भक्त्या सुधांशुं ग्रहनायकम् ॥३७॥**

ग्रहपीडां विजित्याशु सर्वान् कामानवाप्नुयात्। अरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान्धनवान् सुखी॥३८॥
अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवः सुधाकरः।

चन्द्रपूजन—चन्द्र मन्त्र 'इमं देव' के ऋषि गौतम, छन्द विराट् एवं देवता चन्द्र हैं। सर्वार्थ-सिद्धि के इसके लिये विनियोग होता है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—असपत्नं सुवध्वं हृदयाय नमः, महते क्षत्राय शिरसे स्वाहा, महते ज्येष्ठाय शिखायै वषट्, महते जानराज्याय कवचाय हुं, इमममुष्यपुत्रं नेत्रत्रयाय वौषट्, अस्यै विशे अस्त्राय फट्। पदन्यास इस प्रकार होता है—इमं देव (शिर पर), सपत्नं (ललाट पर), सुवध्वं (मुख में), महते क्षत्राय (हृदय में), महते ज्येष्ठाय (ऊरुओं में), महते जानराज्याय (जानुओं में), इमममुष्यपुत्रं (गुल्फों में), अस्यै विशे (पैरों में)। इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डधरो द्विबाहुः। चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः।।

ध्यान के बाद अपने आगे मण्डल बनावे। चतुरस्र मण्डल बनाकर उसके बाहर षट्कोण, उसके बाहर अष्टपत्र भूपुर बनाकर मण्डल बनावे। मध्य में देव का आवाहन करके उपचारों से पूजा करे। षट्कोण में षडङ्ग पूजा करे। अष्टपत्र में मंगल आदि की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि लोकपालों और वज्रादि आयुधों की पूजा करे। पूर्ववत् जप करके विधिवत् समर्पण करे। स्तुति-प्रणाम-प्रार्थना करके अपने हृदय में देवता का विसर्जन करे।

ग्रहनायक चन्द्रमा की पूजा जो इस प्रकार करता है, उसकी ग्रहपीड़ा नष्ट होती है; सभी कामनायें पूर्ण होती हैं, वह निरोग दीर्घजीवी पुत्रवान धनवान एवं सदा सुखी रहता है और अन्त में सद्गति प्राप्त करके चन्द्रलोक में वास करता है।

भौमार्चाध्यानादि विधिः

३. अग्निर्मूर्धेति मन्त्रस्य विरूपाक्ष ऋषिः स्मृतः॥३९॥
गायत्रीच्छन्द आख्यातं देवता स्यान्महीसुतः। इष्टकामार्थसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः॥४०॥
वैदिकेषु च सर्वेषु न्यासे चैव जपे हुते। व्याहृतित्रयसंयुक्तं साधकाभीष्टसिद्धिदम्॥४१॥
व्याहृतित्रयसंयुक्तमग्निर्मूर्धा हृदि स्मृतम्। दिवः ककुत् शिरः प्रोक्तं पतिः पृथिव्या अयं शिखा॥४२॥
अपां वर्मणि रेतांसि नेत्रमस्त्रं च जिन्वति। षडङ्गमेवं विन्यस्य पदन्यासं समाचरेत्॥४३॥
अग्निर्मूर्धेति शिरसि ललाटे दिव इत्यपि। मुखे ककुदिति पतिर्नाभौ कट्यां ततः परम्॥४४॥
पृथिव्या अयमपामूर्वोर्जानुनोः पदद्वयम्। रेतांसि गुल्फयोर्न्यसेत् पादयोश्चैव जिन्वति॥४५॥
एवं विन्यस्य विधिवत् ततो ध्यायेदनन्यधीः।
रक्ताम्बरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगमो गदाधरः।
धरासुतः शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्वरदः प्रशान्तः॥४६॥
एवं भौमं चिरं ध्यात्वा पूजामण्डलमालिखेत्। त्रिकोणं चैव षट्कोणं वसुपत्रं च भूपुरम्॥४७॥
मध्ये देवं समावाह्य पूजयेदुपचारकैः। षट्कोणेषु षडङ्गानि वसुपत्रे बुधादिकान्॥४८॥
चतुरस्रे लोकपालान् वज्रादींश्च ततो बहिः। संपूज्यैवं यथापूर्वं जप्त्वा स्तुत्वा विसर्जयेत्॥४९॥
एवं यः पूजयेद्भक्त्या भूमिपुत्रं दृढव्रतः। ग्रहपीडां विजित्याशु सर्वान् कामानवाप्नुयात्॥५०॥
अरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान् धनवान् सुखी। अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवः सनातनः॥५१॥

मंगल पूजन—मंगल के 'अग्निर्मूर्धा' मन्त्र के ऋषि विरूपाक्ष, छन्द गायत्री एवं देवता भौम हैं। इष्ट कामनाओं की सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है। सभी वैदिक न्यास जप हवन में व्याहृतित्रय को संयुक्त करने से साधक को अभीष्ट की सिद्धि होती है।

षडङ्ग न्यास—भूर्भुवःस्वः अग्निर्मूर्धा हृदयाय नमः, दिवाः ककुत् शिरसे स्वाहा। पतिः पृथिव्या अयं शिखायै वषट्। अपां कवचाय हुं, रेतांसि नेत्रात्रयाय वौषट्, जिन्वति अस्त्राय फट्।

पद न्यास—अग्निर्मूर्धा (शिर पर), दिव: (ललाट पर), ककुत् (मुख में), पति (नाभि में), पृथिव्या अयं (कमर में), अपां (ऊरुओं में), रेतांसि (जानुओं में), जिन्वति (गुल्फों तथा पैरों में)। इसके बाद इस प्रकार ध्यान करे—

रक्ताम्बरो रक्तवपु: किरीटी चतुर्भुजो मेषगमो गदाधर: । धरासुत: शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्वरद: प्रशान्त:।।

इस प्रकार मंगल का ध्यान करके पूजामण्डल बनावे। त्रिकोण के बाहर षट्कोण, इसके बाहर अष्टपत्र, इसके बाहर भूपुर बनावे। मण्डल के मध्य में देव का आवाहन करके उपचारों से पूजा करे। षट्कोण में छ: अंगों की पूजा करे। अष्टपत्र में बुधादि की पूजा करे। चतुरस्र में लोकपालों की एवं उसके बाहर वज्रादि आयुधों की पूजा करे। पूर्ववत् पूजा करके जप करे। स्तुति करके विसर्जित करे। इस प्रकार जो मंगल की पूजा करता है, उसकी ग्रहपीड़ा शान्त होती है, सभी मनोकामनायें पूरी होती हैं, वह निरोग दीर्घजीवी, पुत्रवान, धनवान एवं सुखी रहता है और अन्त में सद्गति प्राप्त करके सनातन देवलोक को जाता है।

बुधार्चाध्यानादिविधि:

४. उद्बुध्यस्वेति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषि: स्मृत: । त्रिष्टुप् छन्दो देवतात्र बुधोऽभीष्टार्थसिद्धये ।।५२।।
विनियोग: समाख्यात उद्बुध्यस्व तत: परम् । अग्ने प्रतीति तत्पश्चाज्जागृहि त्वं हृदि स्मृतम् ।।५३।।
इष्टापूर्ते शिर: प्रोक्तं संसृजेथामयं च तु । शिखा अस्मिन् सधस्थे तु कवचाय हुमीरयेत् ।।५४।।
अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा नेत्रमन्त्र उदाहृत: । ततोऽस्त्रे च प्रविन्यस्येद् यजमानश्च सीदत ।।५५।।
एवं षडङ्गं विन्यस्य पदन्यासं समाचरेत् । उद्बुध्यस्वेति शिरसि अग्ने प्रति ललाटके ।।५६।।
जागृहि त्वं मुखे चैवमिष्टापूर्ते हृदि स्मृतम् । संसृजेथामयं चेति नाभावस्मिंस्तत: परम् ।।५७।।
सधस्थे इति कट्यां वै अध्युत्तेति तत: परम् । रस्मिन् ऊर्वोस्ततो विश्वे देवा इति च जानुनो: ।।५८।।
गुल्फयोर्यजमानश्च पादयो: सीदतेति च । एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेद् देवमनन्यधी: ।।५९।।

पीताम्बर: पीतवपु: किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्च सौम्य: ।
सिंहस्थितश्चन्द्रसुतो हरिप्रिय: सदा मम स्याद्वरदस्तु सौम्य: ।।६०।।

एवं ध्यात्वा स्वपुरत: पूजामण्डलमालिखेत् । बाणाकारं लिखेन्मध्ये बहि: षट्कोणमालिखेत् ।।६१।।
बहिरष्टदलं पद्मं तद्बहिर्भूपुरं लिखेत् । मध्ये बुधं समावाह्य पूजयेदुपचारकै: ।।६२।।
षट्कोणे तु षडङ्गानि पद्मे गुर्वादिकान् यजेत् । भूपुरे लोकपालांश्च बहिर्वज्रादिकान् यजेत् ।।६३।।
एवं य: पूजयेद्भक्त्या बुधं सोमसुतं बुध: । ग्रहपीडां विजित्याशु सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।।६४।।
अरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान् धनवान् सुखी । अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवो महेश्वर: ।।६५।।

बुध पूजन—उद्बुध्यस्व मन्त्र के ऋषि परमेष्ठी, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता बुध हैं। अभीष्ट-सिद्ध्यर्थ इसका विनियोग होता है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वं हृदयाय नम:, इष्टापूर्ते शिरसे स्वाहा, संसृजेथामयं शिखायै वषट्, अस्मिन् सधस्थे कवचाय हुं, अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा नेत्राय वौषट् यजमानश्च सीदत अस्त्राय फट्। पद न्यास इस प्रकार होता है—उद्बुध्यस्व (शिर), अग्ने प्रति (ललाट), जागृहि त्वं (मुख), इष्टापूर्ते (हृदय), संसृजेथामयं च (नाभि), अस्मिन् सधस्थे (कमर), अध्युत्तरस्मिन् (दोनों ऊरु), विश्वेदेवा (दोनों जानु), यजमानश्च (दोनों गुल्फ), सीदत (दोनों पैर)। इस प्रकार न्यास करने के बाद एकाग्रता से निम्नवत् देव का ध्यान करे—

पीताम्बर: पीतवपु: किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्च सौम्य:। सिंहस्थितश्चन्द्रसुतो हरिप्रिय: सदा मम स्याद्वरदस्तु सौम्य:।।

इस प्रकार ध्यान करके अपने आगे पूजामण्डल बनावे। उसके लिये पहले बाण की आकृति बनावे। उसके बाहर षट्कोण बनावे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर चतुरस्र भूपुर बनावे। मण्डल के मध्य में बुध का आवाहन करके उपचारों से पूजा करे। षट्कोण के कोणों में षडङ्ग पूजा करे। अष्टदल में गुरु आदि आठ की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि

दश लोकपालों और उसके बाहर वज्रादि उनके आयुधों की पूजा करे। सोमसुत बुध की पूजा जो इस प्रकार करता है, उसकी ग्रह-पीड़ा शान्त होती है, सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं। वह निरोग दीर्घजीवी पुत्रवान धनवान एवं सुखी रहता है और अन्त में सद्गति के रूप में शिवलोक प्राप्त होता है।

गुर्वर्चाध्यानादिविधिः

५. बृहस्पते अतीत्यस्य ऋषिर्गृत्समदः स्मृतः। त्रिष्टुप् छन्दो देवता च बृहस्पतिरुदाहृतः ॥६६॥
इष्टकामार्थसिद्ध्यर्थे विनियोगः प्रकीर्तितः। बृहस्पते अति यदर्य्यो हृदि प्रतिविन्यसेत् ॥६७॥
ततश्चार्हाद् द्युमदिति शिरः प्रोक्तं विभाति च। ऋतुमच्च शिखा प्रोक्ता जनेषु कवचं मतम् ॥६८॥
यद्दीदयच्छवसर्तप्रजात इति नेत्रके। तदस्मासु द्रविणमिति धेहि चित्रं तदस्त्रकम् ॥६९॥
षडङ्गमेवं विन्यस्य पदन्यासमथाचरेत्। बृहस्पते इति शिरसि अति यदर्य्यो ललाटे ॥७०॥
अर्हाद्द्युमदिति मुखे विभाति क्रतुमद् हृदि। जनेषु नाभौ यद्दीदयत् कट्यां शवसर्त च ॥७१॥
प्रजात तदिति चोर्वोः अस्मासु द्रविणं तथा। जान्वोर्धेहि तथा गुल्फे चित्रं चेति च पादयोः ॥७२॥
एवं न्यासविधिं कृत्वा ध्यायेद् देवमनन्यधीः।
पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः।
तथाक्षसूत्रं च कमण्डलुं चाभीष्टं च बिभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम् ॥७३॥
एवं ध्यात्वा स्वपुरतो मण्डलं विलिखेत् सुधीः। चतुरस्रं तथा दीर्घं बहिः षट्कोणमालिखेत् ॥७४॥
तद्बहिर्वसुपत्राढ्यं बहिर्भूबिम्बमालिखेत्। मध्ये देवं समावाह्य पूजयेदुपचारकैः ॥७५॥
षट्कोणे तु षडङ्गानि शुक्रादीन् वसुपत्रके। भूपुरे लोकपालांश्च वज्रादींस्तद्बहिर्यजेत् ॥७६॥
पूर्ववन्मन्त्रमाजप्य स्तुत्वा नुत्वा विसर्जयेत्। एवं यः पूजयेद्भक्त्या सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥७७॥
अरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान् धनवान् सुखी। अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवः सनातनः ॥७८॥

बृहस्पति पूजन—वृहस्पते अति मन्त्र के ऋषि गृत्समद, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता बृहस्पति हैं। इष्टकाम का सिद्धि के लिये विनियोग होता है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—बृहस्पते अति यदर्य्यो हृदयाय नमः, अर्हाद्युमद शिरसे स्वाहा विभाति क्रतुमच्च शिखायै वषट्, जनेषु कवचाय हुं, यद्दीदयच्छवस ऋत प्रजात नेत्राय वौषट्, तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रं अस्त्राय फट्। षडङ्ग न्यास के बाद इस प्रकार पद न्यास किया जाता है—बृहस्पते (शिर), अति यदर्य्यो (ललाट), अर्हाद्द्युमद (मुख), विभाति क्रतुमत् (हृदय), जनेषु (नाभि), यद्दीदयत् (कमर), शवसर्त प्रजात (दोनों ऊरु), अस्मासु द्रविणं (दोनों जानु), धेहि (दोनों गुल्फ), चित्रम् (दोनों पैर)। न्यास के बाद देव का ध्यान एकाग्रता से इस प्रकार किया जाता है—

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः। तथाक्षसूत्रं च कमण्डलुं चाभीष्टं च बिभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम्।।

ध्यान करके अपने आगे पूजा मण्डल बनावे। पहले चतुरस्र बनाकर उसके बाहर षट्कोण, उसके बाहर अष्टपत्र, उसके बाहर चतुरस्र भूपुर बनावे। मण्डल के मध्य में देव का आवाहन करके उपचारों से पूजा करे। षट्कोण में षडङ्गों की पूजा करे। अष्टपत्र में शुक्रादि आठ ग्रहों की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों की और उसके बाहर वज्रादि आयुधों की पूजा करे। पूर्ववत् मन्त्रजप करे। स्तुति-प्रणाम करके विसर्जन करे। इस प्रकार भक्ति से जो पूजा करता है, उसकी सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। वह निरोग दीर्घजीवी पुत्रवान धनवान एवं सुखी रहता है तथा अन्त में सद्गति प्राप्त करके सनातन देवलोक को जाता है।

शुक्रार्चाध्यानादिविधिः

६. अन्नात्परिस्रुत इति मन्त्रस्य ऋषयः स्मृताः। प्रजापत्यश्विनौ चैव सरस्वती तथैव च ॥७९॥
इन्द्रश्चातिजगती च च्छन्दः शुक्रोऽत्र देवता। इष्टकामार्थसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः ॥८०॥

अन्नात्परिस्रुतो हृदि रसं ब्रह्म तथैव च। णा व्यपिबच्छिरश्चैव क्षत्रं पयस्तथा शिखा ॥८१॥
सोमं प्रजापतिर्वर्म ऋतेन सत्यमिन्द्रियम्। नेत्रं विपानं शुक्रं चाप्यन्धसेत्यस्त्रमीरितम् ॥८२॥
इन्द्रस्येति च तत्पश्चात् पदन्यासमथाचरेत्। अन्नात्परिस्रुतः शिरो रसं ब्रह्मणेति ललाटके ॥८३॥
व्यपिबत् क्षत्रं मुखं चैव पयः सोमं हृदि स्मृतम्। प्रजापतिर्नाभिदेशे ऋतेन सत्यमित्यपि ॥८४॥
इन्द्रियं कटिदेशे विपानं गुह्यप्रदेशके। शुक्रं वृषणयोरन्धस इत्यूर्वोस्तथैव च ॥८५॥
इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पय इत्येव जानुनोः। ततोऽमृतं मधु पदोः पदन्यास उदाहृतः ॥८६॥

श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तः।
तथाक्षसूत्रं च कमण्डलुं च दण्डं च बिभ्रद् वरदोऽस्तु मह्यम् ॥८७॥

एवं शुक्रं चिरं ध्यात्वा पूजामण्डलमालिखेत्। पञ्चकोणं लिखेदादौ षट्कोणं वसुपत्रकम् ॥८८॥
भूपुरं तद्बहिर्लेख्यं चतुर्द्वारोपशोभितम्। मध्ये देवं समावाह्य पूजयेदुपचारकैः ॥८९॥
षट्कोणे तु षडङ्गानि शन्यादीन् वसुपत्रके। भूपुरे लोकपालांश्च वज्रादींस्तद्बहिर्यजेत् ॥९०॥
प्राग्वन्मन्त्रं जपित्वा तु स्तुत्वा नत्वा विसर्जयेत्। एवं यः पूजयेद्भक्त्या सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥९१॥
आरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान् धनवान् सुखी। अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवः सनातनः ॥९२॥

शुक्र पूजन—अन्नात्परिस्रुत मन्त्र के ऋषि प्रजापति, अश्विनी, सरस्वती एवं इन्द्र; छन्द जगती एवं देवता शुक्र हैं। इष्ट-कामार्थ सिद्धि के लिये इसका विनियोग होता है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार जाता है—अन्नात्परिस्रुत हृदयाय नमः, रसं ब्रह्मणा व्यपिवत् शिरसे स्वाहा, क्षत्रं पयः शिखायै वषट्, सोमं प्रजापति कवचाय हुं, ऋतेन सत्यमिन्द्रियम् नेत्राय वषट्, विपानं शुक्र मन्धसा अस्त्राय फट्।

पदन्यास—अन्नात्परिस्रुतः (शिर), रसं ब्रह्मणा (ललाट), व्यप्बित् क्षत्रं (मुख), पयः सोमं (हृदय), प्रजापति (नाभि), ऋतेन सत्यमिन्द्रियं (कमर), विपानं (गुह्य), शुक्रं (अण्डकोष), अन्धस (दोनों ऊरु), इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयः (दोनों जानु) अमृतं मधु (दोनों पैर)। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तः। तथाक्षसूत्रं च कमण्डलुं च दण्डं च बिभ्रद् वरदोऽस्तु मह्यम्।।

इस प्रकार शुक्र का ध्यान करके शुक्र के लिये पूजामण्डल बनावे। पहले पञ्चकोण बनाकर उसके बाहर षट्कोण अष्टपत्र बनावे। उसके बाहर चार द्वारों से युक्त भूपुर बनावे। मण्डल के मध्य में देव का आवाहन करके उपचारों से पूजा करे। षट्कोण के कोणों में छः अंगों की पूजा करे। अष्टपत्र में शनि आठ आदि ग्रहों की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों की और उसके बाहर वज्रादि आयुधों की पूजा करे। पूर्ववत् जप-स्तुति-प्रणाम करके विसर्जन करे। इस प्रकार भक्ति से शुक्र की जो पूजा करता है, उसकी सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। वह निरोग दीर्घजीवी पुत्रवान धनवान एवं सुखी होता है और अन्त में सद्गति प्राप्त करके सनातन देवलोक को जाता है।

शनैश्चरार्चाध्यानादिविधिः

७. शन्नो देवीति मन्त्रस्य दध्याङाथर्वण ऋषिः। गायत्री च्छन्द आख्यातं देवता शनिरीरितः ॥९३॥
इष्टकामार्थसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः। शन्नो देवीति हृदयं रभिष्टये शिरः स्मृतम् ॥९४॥
आपो भवन्त्विति शिखा पीतये कवचं मतम्। शं योरभि च नेत्रं स्यादपि स्रवन्तु नस्तथा ॥९५॥
अस्त्रमिति षडङ्गानि पदन्यासं समाचरेत्। शन्नः शिरसि देवीश्च ललाटेऽभिष्ठये मुखे ॥९६॥
आपो भवन्त्विति नाभौ पीतये कटिदेशके। शं योरूर्वोरभि जान्वोः स्रवन्तु न इति पदोः ॥९७॥

नीलाम्बरः शूलधरः किरीटी गृध्रस्थितस्त्रासकरो धनुष्मान्।
चतुर्भुजः सूर्यसुतोऽप्रशान्तः सदास्तु मह्यं वरदोऽल्पगामी ॥९८॥

एवं ध्यात्वा स्वपुरतः पूजामण्डलमालिखेत्। लिखेद्वै धनुराकारं षट्कोणं तद्बहिर्न्यसेत् ॥९९॥
बहिरष्टदलं पद्मं तद्बहिर्भूपुरं न्यसेत्। मध्ये देवं समावाह्य पूजयेदुपचारकैः ॥१००॥
षट्कोणेषु षडङ्गानि मध्ये राह्वादिकान्यजेत्। भूपुरे लोकपालांश्च तद्बहिर्हेतिपूजनम् ॥१०१॥
एवं यः पूजयेद्भक्त्या सर्वान् कामानवाप्नुयात्। अरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान् धनवान् सुखी ॥१०२॥
ग्रहपीडां विजित्याशु सर्वसौख्यसमन्वितः। अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवः सनातनः ॥१०३॥

शनि-पूजन—शन्नो देवी मन्त्र के ऋषि दध्याङाथर्वण, छन्द गायत्री एवं देवता शनि है। इष्ट-कामार्थ-सिद्धि के लिये इसका विनियोग होता है, षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—शन्नो देवी हृदयाय नमः, अभिष्टये शिरसे स्वाहा, आपो भवन्तु शिखायै वषट्, पीतये कवचाय हुं, शं योरभिः नेत्राय वौषट् स्रवन्तु नः अस्त्राय फट्। इसके बाद पद न्यास इस प्रकार होता है—शन्नः (शिर), देवी (ललाट), रभिष्टये (मुख), आपो भवन्तु (नाभि), पीतये (कमर), शं यो (दोनों ऊरु), अभि (दोनों जानु), स्रवन्तु नः (दोनों पैर)। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

नीलाम्बरः शूलधरः किरीटी गृध्रस्थितस्त्रासकरो धनुष्मान्। चतुर्भुजः सूर्यसुतोऽप्रशान्तः सदास्तु मह्यं वरदोऽल्पगामी।।

ऐसा ध्यान करके अपने आगे पूजामण्डल बनावे। धनुष की आकृति बनाकर, उसके बाहर षट्कोण बनावे। इसके बाहर अष्टपत्र और इसके बाहर भूपुर बनावे। मण्डल के मध्य में देव का आवाहन करके उपचारों से पूजा करे। षट्कोणों में षडङ्ग पूजा करके अष्टपत्र में राहु आदि की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों और बाहर में उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार शनि की पूजा जो करता है, उसकी सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं। वह निरोग, दीर्घजीवी, पुत्र-धन से युक्त होकर सुखी रहता है। साथ ही सभी सौभाग्ययुक्त एवं ग्रहपीड़ा से रहित होता है। अन्त में सद्गति प्राप्त करके सनातन देवलोक में जाता है।

राह्वर्चाध्यानादिविधिः

८. कया न इति मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः स्मृतः। गायत्री च्छन्द आख्यातं देवता राहुरीरितः ॥१०४॥
कया नो हृदयं चित्र आभुवद् शिर ईरितम्। ऊती सदावृधः शिखा सखा कवचमीरितम् ॥१०५॥
कया नेत्रं तथास्त्रं च ततः शचिष्ठया वृता। षडङ्गमेवं विन्यस्य पदन्यासमथाचरेत् ॥१०६॥
कया शिरसि नो भाले चित्र इत्यास्यदेशके। आभुवद् हृदये ऊती नाभौ कट्यां सदावृधः ॥१०७॥
सखा ऊर्वोः कया जान्वोर्गुल्फयोश्च शचिष्ठया। वृतेति पादयोर्न्यस्य ध्यानं कुर्यात् समाहितः ॥१०८॥

नीलाम्बरो नीलवपुः किरीटी करालवक्त्रः करवालशूली।
चतुर्भुजश्चक्रधरश्च राहुः सिंहासनस्थो वरदोऽस्तु मह्यम् ॥१०९॥

एवं ध्यात्वा स्वपुरतो मण्डलं तु समालिखेत्। शूर्पाकारं लिखेन्मध्ये बहिः षट्कोणमालिखेत् ॥११०॥
तद्बहिर्वसुपत्राब्जं तद्बहिर्भूपुरं लिखेत्। मध्ये देवं समावाह्य पूजयेदुपचारकैः ॥१११॥
षट्कोणेषु षडङ्गानि पद्मे केत्वादिकान् ग्रहान्। भूपुरे लोकपालांश्च वज्रादीनि ततो बहिः ॥११२॥
एवं यः पूजयेद्भक्त्या सर्वान् कामानवाप्नुयात्। ग्रहपीडां विजित्याशु दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥११३॥
अरोगी दीर्घजीवी च पुत्रवान् धनवान् सुखी। अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवः सनातनः ॥११४॥

राहु-पूजन—कया न मन्त्र के ऋषि वामदेव, छन्द गायत्री एवं देवता राहु है। सर्वाभीष्ट सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है।

षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—कयानः हृदयाय नमः, चित्र आभुवद् शिरसे स्वाहा, ऊती सदावृधः शिखायै वषट्, सखा कवचाय हुम्, कया नेत्राय वौषट्, शचिष्ठया अस्त्राय फट्। पद न्यास इस प्रकार होता है—कया (शिर), नः (ललाट), चित्र (मुख), आभुवद् (हृदय), ऊती (नाभि), सदा वृधः (कमर), सखा (दोनों ऊरु), कया (दोनों जानु), शचिष्ठया (दोनों गुल्फ), वृता (दोनों पैर)। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

नीलाम्बरो नीलवपुः किरीटी करालवक्त्रः करवालशूली। चतुर्भुजश्चक्रधरश्च राहुः सिंहासनस्थो वरदोऽस्तु मह्यम्।।

ऐसा ध्यान करके अपने आगे मण्डल बनावे। सूप की आकृति बनाकर इसके बाहर षट्कोण बनावे। इसके बाहर अष्टपत्र और इसके बाहर भूपुर बनावे। मण्डल के मध्य में देव का आवाहन करके उपचारों से पूजा करे। षट्कोण में अंगों की पूजा करे। अष्टपत्र में केतु आदि ग्रहों की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश लोकेशों की और इसके बाहर वज्रादि दश आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार भक्ति से जो पूजा करता है, उसकी सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। उसके ग्रहपीड़ा का नाश होता है और वह दीर्घ काल तक जीवित रहता है। निरोग रहते हुये वह धन-पुत्र से युक्त हो सुखी रहता है। अन्त में सद्गति प्राप्त करके सनातन देवलोक में वास करता है।

केत्वर्चाध्यानादिविधिः

९. केतुं कृण्वन्निति मनोर्मधुच्छन्दा इति स्मृतः। गायत्री च्छन्द आख्यातं देवता केतुरीरितः ।।११५।।
सर्वाभीष्टार्थसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः। केतुं कृण्वन्निति हृद्यऽकेतवे शिर ईरितम् ।।११६।।
पेशो मर्या शिखा प्रोक्ता वर्म प्रोक्तमपेशसे। समुषद्भिरिति नेत्रमजायथा इत्यस्त्रकम् ।।११७।।
षडङ्गमेवं विन्यस्य पदन्यासं समाचरेत्। केतुं शिरसि कृण्वंश्च ललाटेऽकेतवे मुखे ।।११८।।
पेशो हृदि च मर्य्या चापेशसे कटिदेशके। समूर्वोश्च उषद्भिश्च जान्वोश्चाजायथाः पदोः ।।११९।।

धूम्रो द्विबाहुर्वरदो गदाधरो गृध्रासनस्थो विकृताननश्च।
किरीटकेयूरविभूषितो यः स चास्तु मे केतुगणः प्रशान्त्यै ।।१२०।।

इति ध्यात्वा स्वपुरतो मण्डलं विलिखेत् सुधीः। प्राग्वन्मण्डलमालिख्य ध्वजं मध्ये समालिखेत् ।।१२१।।
पूजनादिविसर्गान्तं पूर्ववच्च समापयेत्। आदित्याद्या दले पूज्या अन्यत्सर्वं च पूर्ववत् ।।१२२।।
यो भक्त्या पूजयेद् देवं सर्वान् कामानवाप्नुयात्। ग्रहपीडां विजित्याशु नीरोगी सुखमेधते ।।१२३।।
पुत्रवान् धनवांश्चैव जायते भुवि मानवः। अन्ते सद्गतिमाप्नोति यत्र देवो महेश्वरः ।।१२४।। इति।

केतु-पूजन—केतुं कृण्वन् मन्त्र के ऋषि मधुच्छन्दा, छन्द गायत्री एवं देवता केतु हैं। समस्त अभीष्ट की सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—केतुं कृण्वन् हृदयाय नमः, अकेतवे शिरसे स्वाहा, पेशो मर्या शिखायै वषट्, अपेशसे कवचाय हुम्, समुषद्भिः नेत्राय वौषट्, अगायथा अस्त्राय फट्। पदन्यास इस प्रकार होता है—केतुं (शिर), कृण्वन् (ललाट), केतवे (मुख), पेशो (हृदय), मर्या अपेशसे (कमर), समु (दोनों ऊरु), उषद्भिः (दोनों जानु), अजायथा (दोनों पैर)। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

धूम्रो द्विबाहुर्वरदो गदाधरो गृध्रासनस्थो विकृताननश्च। किरीटकेयूरविभूषितो यः स चास्तु मे केतुगणः प्रशान्त्यै।।

ऐसा ध्यान करके अपने आगे पूजा मण्डल बनावे। पूर्ववत् मण्डल बनाकर मध्य में ध्वज बनावे। पूजनादि से विसर्जन तक की विधि पूर्ववत् सम्पन्न करे। दलों में सूर्यादि की पूजा करे। शेष सब कुछ पूर्ववत् करे। जो भक्ति से देव की पूजा करता है, उसकी सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं, ग्रहपीड़ा नष्ट होती है, निरोगी सुखी रहता है एवं संसार में पुत्र-धन से युक्त होता है और अन्त में सद्गति प्राप्त करके सनातन देवलोक में वास करता है।

स्तोत्रसहितसूर्यमन्त्रप्रयोगः

अथैतेषामाकृष्णेनेत्यादिसूर्यादिनवग्रहमन्त्राणां प्रयोगविधिर्लिख्यते—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि हिरण्यस्तूपऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीसूर्याय देवतायै नमः। इति विन्यस्य ममेष्टकाम्यार्थे विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐभूर्भुवःस्वः आकृष्णेन हृदयाय नमः। एवं रजसा शिरसे स्वाहा। वर्तमानो निवेशयन् शिखा०। अमृतं मर्त्यं च कवचाय०। हिरण्ययेन सविता रथेन नेत्रत्र०। आदेवो याति भुवनानि पश्यन् अस्त्राय०। एवमङ्गुष्ठादिकरतलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गे-ष्वपि न्यसेत्। तत आकृष्णेन

शिरसि। रजसा ललाटे। वर्तमानो निवेशयन्मुखे। अमृतं हृदये। मर्त्यं च नाभौ। हिरण्ययेन कट्यां। सविता जङ्घयोः। रथेन ऊर्वोः। आदेवो याति जान्वोः। भुवनानि पश्यन् पादयोः। इति विन्यस्य ध्यानमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना वृत्तगर्भं षट्कोणं तदुपरि वृत्तं तदुपर्य्यष्टदलं तदुपरि वृत्तं तदुपरि भूपुरं चतुर्द्वारोपशोभितमिति पूजायन्त्रं विलिख्य, स्वपुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिपरतत्त्वान्तं पीठमभ्यर्च्य जयादिपीठशक्तीः समभ्यर्च्य, ह्रींसर्वशक्तिकमलासनाय नमः, इति समस्तं पीठं संपूज्य मूलेन मूर्तिं परिकल्प्य मध्ये सूर्यमावाहयेत्। यथा—किरीटिनं पद्मासनं पद्मकरं पद्मगर्भसमाकृतिं सप्ताश्वं द्विभुजं कलिङ्गदेशजं काश्यपसगोत्रं विश्वामित्रार्षं त्रिष्टुप्छंन्दसं रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणभूषितं रक्तगन्धानुलेपिनं रक्तध्वजच्छत्रपताकिनं मुकुटकेयूरमणिभूषितमारुह्य रथं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताग्निसहितं प्रत्यधिदेवतेश्वरसहितं रक्तवृत्तमण्डले पूर्वमुखमावाहयामि, इत्यावाह्यावाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, ॐभूर्भुवःस्वः श्रीसूर्याय नमः इति मन्त्रेण षोडशोपचारपूजां कुर्यात्। तत्रासनादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणे षडङ्गानि प्राग्वत् संपूज्य, अष्टपत्रेषु देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन—सोमाय नमः। भौमाय नमः। बुधाय नमः। बृहस्पतये नमः। शुक्राय नमः। शनैश्चराय नमः। राहवे नमः। केतुगणेभ्यो नमः। इति संपूज्य, चतुरस्रे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य पुनर्धूपदीपादिकं निवेद्य, मूलमन्त्रं यथाशक्ति जपित्वा जपं समर्प्य स्तोत्रं पठेत्।
श्रीसूर्य उवाच—

साधु साम्ब महाबाहो शृणु जाम्बवतीसुत। जपन्नामसहस्रेण पठस्वेमं स्तवं शुभम्॥१॥
यानि नामानि गुह्यानि पवित्राणि शुभानि च। तानि ते कथयिष्यामि प्रयत्नादवधारय॥२॥
विकर्तनो विवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः। लोकप्रकाशकः श्रीमान् लोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः॥३॥
लोकसाक्षी त्रिलोकेशः कर्ता हर्ता रविग्रहः। तपनः पवनश्चैव शुचिः सप्ताश्ववाहनः॥४॥
शुभदः कामदः पुण्यो वरेण्यो लोकपावनः। सुभ्गो निर्भगो भानुः शुभाशुभनिदर्शनः॥५॥
गभस्तिहस्तो ब्रह्मण्यः सर्वदेवनमस्कृतः। एवं त्रिंशन्नामधेयः स्तव इष्टः सदा मम॥६॥
आरोग्यश्रीकरश्चैव कुलवृद्धियशस्करः। य एतेन महाबाहो मध्याह्नास्तमयोदिते॥७॥
स्तौति मां प्रयतो भूत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते। मानसं वाचिकं वापि कर्मजं वापि दुष्कृतम्॥८॥
एष जाप्यश्च होम्यश्च सन्ध्योपासनयोस्तथा। धूपमन्त्रोऽर्घ्यमन्त्रश्च बलिमन्त्रस्तथैव च॥९॥
अन्नप्रदाने स्नाने च प्रणिपाते प्रदक्षिणे। पूजितोऽयं महामन्त्रः सर्वकर्मणि साधकैः॥१०॥
एवमुक्त्वा तु भगवान् भास्करो जगदीश्वरः। आमन्त्र्य कृष्णतनयं तत्रैवान्तरधीयत॥११॥
साम्बोऽपि स्तवराजं च श्रुत्वा सप्ताश्ववाहनात्। प्रीतात्मा विजयी श्रीमान् तस्माद्रोगात् प्रमुक्तवान्॥१२॥
पुत्रान् पौत्रान् धनं कामांल्लभते नात्र संशयः। सर्वशत्रून् निहन्त्याशु नीहारमिव भास्करः॥१३॥
इति हरिसुतरोगध्वंसनं स्तोत्रमेतत् पठति यदि हि भक्त्या प्रातरुत्थाय नित्यम्।
स भवति गतरोगः सर्वसंपत्तिवापस्तपनसदृशतेजाः सूर्यलोकं प्रयाति॥१४॥

इति सूर्यस्तोत्रम्।

सूर्य मन्त्र-प्रयोग—प्रातःकालीन कृत्य से लेकर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि हिरण्यस्तूपऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः, हृदये श्रीसूर्याय देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास करके अपनी अभिष्ट सिद्धि के लिये हाथ जोड़कर विनियोग बोल करके इस प्रकार हृदयादि न्यास करे—ॐ भूर्भुवःस्वः आकृष्णेन हृदयाय नमः, रजसा शिरसे स्वाहा, वर्तमानो निवेशयन् शिखायै वषट्, अमृतं मर्त्यं च कवचाय हुं, हिरण्मयेन सविता रथेन नेत्रत्रयाय वौषट्, आदेवो याति भुवनानि पश्यन् अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी सम्पन्न करे। तदनन्तर आकृष्णेन से शिर में, रजसा से ललाट में, वर्तमानो निवेशयन् से मुख में, अमृतं से हृदय में, मर्त्यं च से नाभि

में, हिरण्मयेन से कमर में, सविता से जङ्घा में, रथेन से ऊरुओं में, आदेवो याति से जानुओं में, भुवनानि पश्यन् से पैरों में न्यास करने के बाद ध्यान एवं मानस पूजा सम्पन्न कर स्वर्ण पट्ट पर कुङ्कुम आदि से वृत्त, षट्कोण, पुनः वृत्त, उसके ऊपर अष्टदल, उसके ऊपर वृत्त, उसके ऊपर चार द्वारों से सुशोभित भूपुर से पूजा यन्त्र बनाकर अपने आगे स्थापित करके उसका पूजन करे। फिर अर्घ्य आदि स्थापित करके आत्मपूजा करने के बाद पीठपूजा करके जया आदि पीठशक्तियों की पूजा करे। तदनन्तर ह्रींसर्वशक्तिकमलासनाय नमः से समस्त पीठ का पूजन करके मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर इस मन्त्र से सूर्य का आवाहन करे—किरीटिनं पद्मासनं पद्मकरं पद्मगर्भसमाकृतिं सप्ताश्वं द्विभुजं कलिङ्गदेशजं काश्यपसगोत्रं विश्वामित्रार्षं त्रिष्टुप्-छन्दसं रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणभूषितं रक्तगन्धानुलेपिनं रक्तध्वजच्छत्रपताकिनं मुकुटकेयूरमणिभूषितमारुह्य रथं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताग्निसहितं प्रत्यधिदेवतेश्वरसहितं रक्तवृत्तमण्डले पूर्वमुखमावाहयामि। तदनन्तर आवाहन आदि मुद्रा प्रदर्शित करके ॐभूर्भुवःस्वः श्रीसूर्याय नमः इस मन्त्र से षोडशोपचार पूजा करे। तदनन्तर आसन प्रदान से लेकर पुष्पोपचार तक करने के बाद षट्कोण में पूर्ववत् षडङ्ग पूजन करके अष्टदल के आठों दलों में देवता के आगे से प्रदक्षिण क्रम से इन मन्त्रों से पूजन करे—सोमाय नमः, भौमाय नमः, बुधाय नमः, बृहस्पतये नमः, शुक्राय नमः, शनैश्चराय नमः, राहवे नमः, केतु-गणेभ्यो नमः। इस प्रकार पूजन करके चतुरस्र में लोकपालों तथा उनके आयुधों का पूजन करके पुनः धुप-दीप आदि निवेदित करके मूलमन्त्र का यथाशक्ति जप करके जप का समर्पण करके एवं स्तोत्रपाठ करे।

श्री सूर्य ने कहा—महाबाहु जाम्बवतीसुत साम्ब! तुम्हें साधुवाद देता हूँ। एक हजार आठ नाम के पाठ के पश्चात् इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। इनमें जो अत्यन्त पवित्र एवं गोपनीय एवं कल्याण कारक नाम हैं, उन्हें कहा गया है; ध्यानपूर्वक सुनो। जो नाम हैं, उन्हें कहता हूँ। विकर्तन, विवस्वान्, मार्तण्ड, भास्कर, रवि, लोकत्रकाशक, शीमान्, लोकचक्षु, ग्रहेश्वर, लोकसाक्षी, त्रिलोकेश, त्रिलोककर्ता, त्रिलोकहर्ता, रविग्रह, तपन, पवन, शुनि, सप्ताश्ववाहन, शुभद, कामद, पुण्य, वरेण्य, लोकपावन, सुभग, निर्भग, भानु, शुभाशुभनिदर्शन, गभस्तिहस्त, ब्रह्मण्य, सर्वदेवनमस्कृत—इन तीस नामों वाला स्तोत्र मुझे बहुत प्रिय है। तीस नामों का यह स्तोत्र आरोग्यप्रद, श्रीकर एवं कुल के यश का वृद्धिकारक है। इस स्तोत्र का पाठ जो सूर्योदय मध्याह्न और सूर्यास्त काल में करता है, वह सभी पापों से मुक्त हो जाता है। मन वचन कर्म से उसके द्वारा किये गये पापों का नाश होता है। इसके जप हवन संध्योपासन से दुष्कर्मों का नाश होता है। यह धूपमन्त्र- अर्घ्य मन्त्र और बलिमन्त्र भी है। अन्नदान, स्नान, प्रणाम, प्रदक्षिणा पूजा आदि सभी कर्म इस महामन्त्र से करना चाहिये। कृष्ण तनय से यह कहकर मन्त्र देकर जगदीश्वर भगवान् भास्कर वहीं पर अन्तर्ध्यान हो गये। सप्ताश्ववाहन से इस स्तवराज को सुनकर साम्ब भी भक्ति से इसका पाठ करके विजयी, श्रीमान् एवं रोग से मुक्त हो गये। इसके पाठ से पुत्र-पौत्र-धन का लाभ होता है; कामनाओं की पूर्ति होती हैं एवं अन्धकार के समान उसके सभी शत्रुओं का नाश भास्कर करते हैं।

इस हरिसुत रोगध्वंसन स्तोत्र का पाठ प्रातः उठकर भक्ति से जो नित्य करता है, वह सभी रोगों से मुक्त होकर सभी सम्पत्तियों से युक्त और सूर्य के समान तेजस्वी होता है एवं अन्त में सूर्यलोक में वास करता है।

स्तोत्रसहितचन्द्रमन्त्रप्रयोगः

अथ चन्द्रमन्त्रप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गौतमाय ऋषये नमः। मुखे विराट्छन्दसे नमः। हृदये श्रीसोमाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, व्याहृतित्रयपूर्वकं सर्वत्र इमं देवा असपत्नं सुवध्वं हृदयाय नमः। महते क्षत्राय शिरसे०। महते जैष्ठ्याय शिखायै०। महते जानराज्याय कवचाय०। इमममुष्य पुत्रं नेत्रत्र०। अस्यै विशे अस्त्रा०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, इमं देवा शिरसि। असपत्नं ललाटे। सुवध्वं मुखे। महते क्षत्राय हृदये। महते ज्यैष्ठ्याय ऊर्वोः। महते जानराज्याय जान्वोः। इमममुष्य पुत्रं गुल्फयोः। अस्यै विशे पादयोः। इति विन्यस्य, ध्यानमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना चतुरस्रगर्भं षट्कोणं तदुपरि वृत्तं तल्लग्नमष्टदलं तदुपरि वृत्तं तदुपरि भूपुरं चतुर्द्वारोपशोभितं पूजामण्डलं विलिख्य, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते प्राग्वत् पीठं संपूज्य, मध्ये मूलेन मूर्तिं परिकल्प्य तत्र सोममावाहयेत्।

यथा—किरीटिनं श्वेताम्बरधरं दशाश्वं श्वेतभूषणं पाशपाणिं द्विबाहुं वनायुदेशजमत्रिगोत्रमात्रेयार्षमनुष्टुप्छन्दसं श्वेताभरण-भूषितं श्वेतगन्धानुलेपनं श्वेतध्वजच्छत्रपताकिनं मुकुटकेयूरमणिभूषितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवता(वरुण)सहितं प्रत्यधिदेवतोमासहितं चतुरस्रमण्डले प्रत्यङ्मुखं सोममावाहयामि, इत्यावाह्यावाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, प्राग्वत् षोडशोपचारपूजां कुर्यात्। तत्रासनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वत् षट्कोणे षडङ्गानि पत्रेषु पूर्वादिभौमाद्यष्टौ ग्रहान्, चतुरस्रे लोकपालांस्तद्बाह्ये वज्राद्यायुधानि च प्राग्वत् संपूज्य धूपदीपादिजपान्तं कर्म समाप्य स्तोत्रं पठेत्।

सोमो हिमांशुः सर्वात्मा सर्वज्ञोऽथ दयानिधिः। श्रीभ्राताऽत्र्यक्षिसम्भूत ओषधीशो निशाकरः ॥१॥
दुग्धाब्धिनन्दनश्चन्द्रः कुमुदाप्तः कलानिधिः। इन्दुर्जैवात्रिको नक्षत्रेशश्च मृगलाञ्छनः ॥२॥
द्विजराजो विभुः श्रीमान् महादेवप्रियङ्करः। अमृतात्मा मनोजातश्चन्द्रमाश्च सुधाकरः ॥३॥
पञ्चविंशतिनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्। आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं लभते नात्र संशयः ॥४॥
विपरीतोऽपि शुभ्रांशुः प्रीतस्तस्य सदा भवेत्। महादेव जातिमल्लीपुष्पगोक्षीरसन्निभ ॥५॥
सोम सौम्यो भवास्माकं सर्वदा ते नमो नमः।

इति चन्द्रस्तोत्रम्।

२. चन्द्रमन्त्र प्रयोग—प्रातःकृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के पश्चात् मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गौतमाय ऋषये नमः, मुखे विराट्छन्दसे नमः, हृदये श्रीसोमाय देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास करके पूर्ववत् विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ भूर्भुवः स्वः इमं देवा असपत्नं सुवध्वं हृदयाय नमः, ॐ भूर्भुवः स्वः महते क्षत्राय शिरसे स्वाहा, ॐ भूर्भुवः स्वः महते जैष्ठ्याय शिखायै वषट्, ॐ भूर्भुवः स्वः महते जानराज्याय कवचाय हुं, ॐ भूर्भुवः स्वः इमममुष्य पुत्रं नेत्रत्रयाय, ॐ भूर्भुवः स्वः अस्यै विशे अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करके इमं देवा से शिर पर, असपत्नं से ललाट में, सुवध्वं से मुख में, महते क्षत्राय से हृदय में, महते ज्यैष्ठ्याय से ऊरुओं में, महते जानराज्याय से जानुओं में, इमममुष्य पुत्रं से गुल्फों में, अस्यै विशे से पैरों में न्यास करके ध्यान एवं मानस पूजा करने के पश्चात् स्वर्ण पट्ट पर कुङ्कुम आदि से चतुरस्रगर्भित षट्कोण, उसके ऊपर वृत्त, उससे संलग्न अष्टदल कमल, उसके ऊपर वृत्त, उसके ऊपर चार द्वारों से सुशोभित भूपुर वाले पूजा मण्डल बनाकर अपने आगे स्थापित कर उसका अर्चन करे। फिर अर्घ्य आदि स्थापन कर आत्मपूजा करके पूर्ववत् पीठपूजा करके मध्य में मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर इस मन्त्र से सोम का आवाहन करे—किरीटिनं श्वेताम्बरधरं दशाश्वं श्वेतभूषणं पाशपाणिं द्विबाहुं वनायुदेशजमत्रिगोत्रमात्रेयार्षमनुष्टुप्छन्दसं श्वेताभरणभूषितं श्वेतगन्धानुलेपनं श्वेतध्वजच्छत्रपताकिनं मुकुटकेयूरमणिभूषितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवता(वरुण)सहितं प्रत्यधिदेवतोमासहितं चतुरस्रमण्डले प्रत्यङ्मुखं सोममावाहयामि। तदनन्तर आवाहन मुद्रा दिखाकर पूर्ववत् षोडशोपचार पूजा करे। फिर आसनादि से पुष्पोपचार तक करके पूर्ववत् षट्कोण में षडङ्ग पूजन, अष्टदल के पत्रों में पूर्व से आरम्भ कर भौम आदि आठ ग्रहों का पूजन करके चतुरस्र में लोकपालों का एवं उसके बाहर उनके वज्र आदि आयुधो का पूर्ववत् पूजन करके धूप-दीप-जप आदि कर्म करके मूलोक्त स्तोत्र का पाठ करे। सोम, हिमांशु, सर्वज्ञ, दयानिधि, श्रीभ्राता, त्र्यक्षिसम्भूत, ओषधीश, निशाकर, दुग्धाब्धिनन्दन, चन्द्र, कुमुदाप्त, कलानिधि, इन्दु, जैवात्रिक, नक्षत्रेश, मृगलाञ्छन, द्विजराज, विभु, श्रीमान्, महादेवप्रियंकर, अमृतात्मा, मनोजात, चन्द्रमा, सुधाकर—इन पच्चीस नामों का प्रातःकाल उठकर जो पाठ करता है, वह आयु-आरोग्य एवं ईश्वरी प्राप्त करता है।

स्तोत्रसहितभौममन्त्रप्रयोगः

अथ भौममन्त्रप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि विरूपाक्षाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीभौमाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, अग्निर्मूर्धा हृदयाय नमः। दिवः ककुत् शिरसे स्वाहा। पतिः पृथिव्या अयं शिखायै वषट्। अपां कवचाय हुं। रेतांसि नेत्रत्रयाय वौषट्। जिन्वति अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, अग्निः शिरसि। मूर्धा ललाटे। दिवः मुखे।

ककुत् हृदये। पतिर्नाभौ। पृथिव्या: कट्यां। अयं ऊर्वो:। अपां जान्वो:। रेतांसि गुल्फयो:। जिन्वति पादयो:। इति विन्यस्य, ध्यानमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना त्रिकोणषट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं पूजायन्त्रं विलिख्य, पुरत: संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिपरतत्त्वान्तं पीठं संपूज्य, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्य तत्र भौममावाहयेत्। यथा—किरीटिनं रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तशूलगदाधरं चतुर्भुजं भेषगमनमवन्तिदेशोद्भवं वसिष्ठगोत्रजं जमदग्न्यार्षं जगतीच्छन्दसं रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणभूषितं रक्तमाल्यानुलेपनं रक्तच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमषिभूशितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताभूमिसहितं प्रत्यधिदेवतास्कन्दसहितं त्रिकोणरक्तमण्डले दक्षिणमुखमङ्गारकमावाहयामि, इत्यावाह्यावाहनादिमुद्रा: प्रदर्श्य, प्रागवदासनादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणे षडङ्गानि, पत्रेषु पूर्वादिबुधाद्यष्टौ ग्रहांश्चतुरस्रे लोकपालांस्तथायुधदानि च संपूज्य, धूपदीपादिजपान्तं कर्म समाप्य स्तोत्रं पठेत्।

मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रद:। स्थिरासनो महाकाय: सर्वकर्मावबोधक: ॥१॥
लोहितो लोहिताङ्गश्च सामगानां कृपाकर:। धरात्मज: कुजो भौमो भूतिदो भूतिदायक: ॥२॥
अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारक:। सृष्टिकर्तापहर्ता च सर्वकामफलप्रद: ॥३॥
एतानि कुजनामानि प्रातरुत्थाय य: पठेत्। आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं लभते नात्र संशय: ॥४॥
य: शृणोति कुजस्तोत्रं चिरं जीयात् स मानव:। गोसहस्रफलं तस्य विष्णुर्वचनमब्रवीत् ॥५॥
भौमपीडां विजित्याशु ग्रहपीडाश्च दारुणा:। भौमप्रसादादिष्टं स्यात् सत्यं सत्यं न संशय: ॥६॥
कुज कुप्रभवो नित्यं मङ्गल्य: परिपठ्यसे। अमङ्गलं निहत्याशु सर्वदा यच्छ मङ्गलम् ॥७॥

इति भौमस्तोत्रम्।

३. भौम मन्त्र प्रयोग—प्रात:कृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि विरूपाक्षाय ऋषये नम:, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नम:, हृदये श्रीभौमाय देवतायै नम:। इस प्रकार न्यास करने के पश्चात् पूर्ववत् विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—अग्निर्मूर्धा हृदयाय नम:, दिव: ककुत् शिरसे स्वाहा, पति: पृथिव्या अयं शिखायै वषट्, अपां कवचाय हुं, रेतांसि नेत्रत्रयाय वौषट्, जिन्वति अस्त्राय फट्। इस प्रकार कर-षडङ्ग न्यास करके अग्नि: का शिर पर, मूर्धा का ललाट में, दिव: का मुख में, ककुत् का हृदय में, पति: का नाभि में, पृथिव्या: का कमर में, अयं का ऊरुओं में, अपां का जानुओं में, रेतांसि का गुल्फों में, जिन्वति का पैरों में न्यास करके ध्यान मानस पूजा करने के पश्चात् स्वर्ण आदि के पत्र पर कुङ्कुम आदि से त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल, भूपुरात्मक पूजा यन्त्र बनाकर उसे अपने आगे स्थापित करके अर्चन करे। तदनन्तर अर्घ्य आदि स्थापित करने के बाद आत्म पूजा करके पीठपूजन कर मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके इस मन्त्र से भौम देवता का आवाहन करे—किरीटिनं रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तशूलगदाधरं चतुर्भुजं मेषगमनमवन्तिदेशोद्भवं वसिष्ठगोत्रजं जमदग्न्यार्षं जगतीच्छन्दसं रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणभूषितं रक्तमाल्यानुलेपनं रक्तच्छत्रध्वज-पताकिनं मुकुटकेयूरमषिभूशितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताभूमिसहितं प्रत्यधिदेवतास्कन्दसहितं त्रिकोणरक्तमण्डले दक्षिणमुखमङ्गारकमावाहयामि। आवाहनादि मुद्रा प्रदर्शित करते हुये पूर्ववत् आसनादि प्रदान करते हुये पुष्पोपचार से उनका पूजन कर षट्कोण में षडङ्ग पूजन एवं अष्टदल में बुध आदि आठ ग्रहों की पूजा करे। तत्पश्चात् चतुरस्र में लोकपालों एवं उनके आयुधो का पूजन करके धूप-दीप-जप आदि करके मूलोक्त स्तोत्र का पाठ करे। मंगल, भूमिपुत्र, ऋणहर्ता, धनप्रद, स्थिरासन, महाकाय, सर्वकर्मावबोधक, लोहित, लोहिताङ्ग, सामगानां कृपाकर, धरात्मज, कुज, भौम, भूतिद, भूतिदायक, अंगारक, यम, सर्वरोगापहारक, सृष्टिकर्त्ता, सृष्टिहर्ता, सर्वकामफलप्रद—इन नामों का प्रात: उठकर जो पाठ करता है, उसे आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। जो इस स्तोत्र को जो सुनता है, वह दीर्घजीवी होता है और हजार गोदान का फल उसे मिलता है—यह विष्णु का वचन है। भौम पीड़ा के निवारण के साथ दारुण ग्रहपीड़ा का भी इससे निवारण होता है। मंगल की कृपा से मनोरथ पूरे होते हैं। मंगल का कुप्रभाव इसके पाठ से समाप्त होता है। सदा अमंगल का नाश होता है एवं सर्वदा मंगल होता है।

स्तोत्रसहितबुधमन्त्रप्रयोगः

अथ बुधमन्त्रप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि परमेष्ठिने ऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीबुधाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वं हृदयाय नमः। इष्टापूते शिरसे०। संसृजेथामयं च शिखा०। अस्मिन्सधस्थे कवचाय०। अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा नेत्रत्र०। यजमानश्च सीदत अस्त्राय०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, उद्बुध्यस्व शिरसि। अग्ने प्रति ललाटे। जागृहि त्वं मुखे। इष्टापूते हृदये। संसृजेथामयं च नाभौ। अस्मिन्सधस्थे कट्यां। अध्युत्तरस्मिन् ऊर्वोः। विश्वेदेवा जान्वोः। यजमानश्च गुल्फयोः। सीदत पादयोः। इति विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना बाणाकारमण्डलगर्भषट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं मण्डलं विलिख्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते प्राग्वत् पीठपूजां विधाय, मध्ये मूलेन मूर्त्तिं परिकल्प्य बुधमावाहयेत्। यथा—किरीटिनं पीतमाल्याम्बरधरं पीतवर्णकर्णिकारसमद्युतिं खड्गचर्मगदापाणिं सिंहस्थं वरदं मगधदेशजं अत्रिगोत्रं भरद्वाजार्षं बृहतीच्छन्दसं पीताम्बरधरं पीताभरणभूषितं पीतगन्धानुलेपनं पीतच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिशोभितमारुह्य रथं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताविष्णुसहितं प्रत्यधिदेवताविष्णुसहितं बाणाकारमण्डले दक्षिणामुखं बुधमावाहयामि, इत्यावाह्य, आवाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, प्राग्वदासनपूजादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणे तु षडङ्गानि, अष्टदलेषु प्राग्वद् बृहस्पत्याद्यष्टौ ग्रहान्, चतुरस्रे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य, धूपदीपादिजपान्तं कर्म समाप्य स्तोत्रं पठेत्।

प्रियङ्गुकलिकाश्यामः पीतवर्णमहाद्युतिः। बोधनः शशिपुत्रश्च सौम्यः सौम्यग्रहो बुधः ॥१॥
परतन्त्रः स्वतन्त्रश्च भगवान् भक्तवत्सलः। हरिप्रियश्च सिंहस्थो बुद्धिमान् बुद्धिवर्धनः ॥२॥
खड्गचर्मगदापाणिः पीतभूषणभूषितः। विद्यावान् सात्त्विकः शुद्धो निर्मलज्ञानदायकः ॥३॥
विश्वात्मा विश्वयोनिश्च विश्वो विश्वैकवन्दितः। पञ्चविंशतिनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥४॥
आयुरारोग्यमैश्वर्यं ज्ञानं वित्तं महद्यशः। लभते नात्र सन्देहो ग्रहपीडाविवर्जितः ॥५॥

इति बुधस्तोत्रम्।

४. बुधमन्त्र प्रयोग—प्रातःकृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि परमेष्ठिने ऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः, हृदये श्रीबुधाय देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास करके पूर्ववत् विनियोग बोलकर अग्रांकित रीति से षडङ्ग न्यास करे—उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वं हृदयाय नमः, इष्टापूते शिरसे स्वाहा, संसृजेथामयं च शिखायै वषट्, अस्मिन्सधस्थे कवचाय हुं, अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा नेत्रत्रयाय वौषट्, यजमानश्च सीदत अस्त्राय फट्। तदनन्तर उद्बुध्यस्व का शिर पर, अग्ने प्रति का ललाट में, जागृहि त्वं का मुख में, इष्टापूते का हृदय में, संसृजेथामयं च का नाभि में, अस्मिन्सधस्थे का कमर में, अध्युत्तरस्मिन् का ऊरुओं में, विश्वेदेवा का जानुओं में, यजमानश्च का गुल्फों में, सीदत का पैरों में न्यास करके ध्यान-मानस पूजा करके स्वर्ण आदि के पट्ट पर कुङ्कुम आदि से बाण आकृति वाले मण्डल से गर्भित षट्कोण बनाकर उसके बाहर अष्टदल एवं भूपुर वाले मण्डल बनाकर उसमें अर्चन करके अर्घ्य आदि स्थापित कर आत्म पूजा करके पूर्ववत् पीठपूजा करने के उपरान्त मध्य में मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर इस मन्त्र से बुध का आवाहन करे—किरीटिनं पीतमाल्याम्बरधरं पीतवर्णकर्णिकारसमद्युतिं खड्गचर्मगदापाणिं सिंहस्थं वरदं मगधदेशजं अत्रिगोत्रं भरद्वाजार्षं बृहतीच्छन्दसं पीताम्बरधरं पीताभरणभूषितं पीतगन्धानुलेपनं पीतच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिशोभित-मारुह्य रथं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताविष्णुसहितं प्रत्यधिदेवताविष्णुसहितं बाणाकारमण्डले दक्षिणामुखं बुध-मावाहयामि। तदनन्तर आवाहन आदि मुद्रा प्रदर्शित करके पूर्ववत् आसन पूजन से लेकर पुष्पोपचार तक समर्पित कर षट्कोण में षडङ्ग पूजन करे। तदनन्तर अष्टदल के आठों दलों में पूर्ववत् वृहस्पति आदि आठ ग्रहों का पूजन कर चतुरस्र में लोकपालों एवं उनके आयुधों का पूजन कर धूप-दीप-जप आदि करके पूजा समाप्त कर स्तोत्र पाठ करे।

प्रियङ्गुकलिकाश्याम, पीतवर्णमहाद्युति, बोधन, शशिपुत्र, सौम्य, सौम्यग्रह, बुध, परतन्त्र, स्वतन्त्र, भगवान्, भक्तवत्सल, हरिप्रिय, सिंहस्थ, बुद्धिमान्, बुद्धिवर्धन, खड्गचर्मगदापाणि, पीतभूषणभूषित, विद्यावान्, सात्त्विक, शुद्ध, निर्मलज्ञानदायक, विश्वात्मा, विश्वयोनि, विश्व, विश्वैकवन्दित—बुध के इन पच्चीस नामों का पाठ जो प्रातः उठकर नित्य करता है, उसे आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, ज्ञान, धन एवं महान् यश की प्राप्ति होती है और उसे ग्रहपीड़ा नहीं होती है।

स्तोत्रसहितबृहस्पतिमन्त्रप्रयोगः

अथ बृहस्पतिमन्त्रप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गृत्समदाय ऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीबृहस्पतये देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, बृहस्पते अति यदर्यो हृदयाय नमः। अर्हाद् द्युमत् शिरसे०। विभाति क्रतुमत् शिखायै०। जनेषु कवचाय०। यद् दीदयच्छवसर्तप्रजात नेत्रत्र०। तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रं अस्त्रा०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, बृहस्पते शिरसि। अतियदर्यो ललाटे। अर्हाद्द्युमत् मुखे। विभाति क्रतुमद् हृदि। जनेषु नाभौ। यद्दीदयत् कट्यां। शवसर्तप्रजात तत् ऊर्वोः। अस्मासु जान्वोः। द्रविणं गुल्फयोः। धेहि चित्रं पादयोः। इति विन्यस्य, ध्यानमानसपू-जान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना दीर्घचतुरस्र-गर्भषट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं यन्त्रं विलिख्य, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्य अर्घ्यादिस्थापनध्यानमानसपूजान्ते प्राग्वत् पीठपूजां विधाय, मूर्तिं मूलेन परिकल्प्यावाहयेत्। यथा—किरीटिनं पीतमाल्याम्बरधरं दण्डवरदसाक्षसूत्रकमण्डलुधरं सिन्धुदेशोद्भवं आङ्गिरसगोत्रं वसिष्ठार्षमनुष्टुप्छन्दसं पीताम्बरधरं पीताभरणभूषितं पीतगन्धानुलेपनं पीतच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिभूषितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवतेन्द्रसहितं प्रत्यधिदेवताब्रह्मसहितं पीतदीर्घचतुरस्रमण्डले उदङ्मुखं गुरुमावाहयामि, इत्यावाह्यावाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, आसनादिषडङ्गपूजान्ते अष्टदलेषु पूर्वादिशुक्राद्यष्टौ ग्रहान्, भूपुरे लोकपालान् बहिर्वज्राद्यायुधानि च संपूज्य, धूपदीपादिकं प्राग्वत् समाप्य स्तोत्रं पठेत्।

बृहस्पतिः सुराचार्यो दयावान् शुभलक्षणः। लोकप्रियो गुरुः श्रीमान् सर्वज्ञः सर्वगो विभुः ॥१॥
सर्वेशः सर्वदा तुष्टः सर्वदः सर्वतोमुखः। अक्रोधनो मुनिश्रेष्ठो नीतिकर्ता जगत्पतिः ॥२॥
विश्वात्मा विश्वकर्ता च विश्वयोनिरयोनिजः। भूर्भुवःस्वःपिता चैव भर्ता जीवो महाबलः ॥३॥
पञ्चविंशतिनामानि पुण्यानि शुभदानि च। प्रातरुत्थाय यो नित्यं कीर्तयेत् सुसमाहितः ॥४॥
अभीष्टफलदः श्रीमाञ्छुभग्रह नमोऽस्तु ते। यः शृणोति गुरोः स्तोत्रं चिरं जीवेन्न संशयः ॥५॥
गोसहस्रफलं तस्य विष्णुर्वचनमब्रवीत्।

इति गुरुस्तोत्रम्।

५. बृहस्पति मन्त्र प्रयोग—प्रातःकृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि गृत्समदाय ऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः, हृदये श्रीबृहस्पतये देवतायै नमः। तदनन्तर पूर्ववत् विनियोग बोल करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—बृहस्पते अति यदर्यो हृदयाय नमः, अर्हाद् द्युमत् शिरसे स्वाहा, विभाति क्रतुमत् शिखायै वषट्, जनेषु कवचाय हुं, यद् दीदयच्छवसर्तप्रजात नेत्रत्रयाय वौषट्, तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रं अस्त्राय फट्। तदनन्तर बृहस्पते का शिर पर, अतियदर्यो का ललाट में, अर्हाद्द्युमत् का मुख में, विभाति क्रतुमद् का हृदय में, जनेषु का नाभि में, यद्दीदयत् का कमर में, शवसर्तप्रजात तत् का ऊरुओं में, अस्मासु का जानुओं में, द्रविणं का गुल्फों में, धेहि चित्रं का पैरों में न्यास करके ध्यान मानस पूजा करने के उपरान्त स्वर्ण आदि के पत्र पर कुङ्कुम आदि से दीर्घ चतुरस्र गर्भित षट्कोण, अष्टदल एवं भूपुर वाले यन्त्र को बनाकर उसे अपने सामने स्थापित करके अर्चन कर अर्घ्य आदि स्थापन कर ध्यान मानस पूजा के उपरान्त पूर्ववत् पीठपूजा करके मूलमन्त्र से मूर्ति कल्पित कर इस मन्त्र से वृहस्पति का आवाहन करे—किरीटिनं पीतमाल्याम्बरधरं दण्डवरदसाक्षसूत्रकमण्डलुधरं सिन्धुदेशोद्भवं आङ्गिरसगोत्रं वसिष्ठार्षमनुष्टुप्छन्दसं पीताम्बरधरं पीताभरणभूषितं पीतगन्धानुलेपनं पीतच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिभूषितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रह-मण्डले प्रविष्टमधिदेवतेन्द्रसहितं प्रत्यधिदेवताब्रह्मसहितं पीतदीर्घचतुरस्रमण्डले उदङ्मुखं गुरुमावाहयामि। तदनन्तर आवाहन

आदि मुद्रा प्रदर्शित करके आसन पूजा से लेकर पुष्पोपचार तक समर्पित कर षट्कोण में षडङ्ग पूजन करके अष्टदल कमल के आठों दलों में शुक्र आदि आठ ग्रहों का पूजन करे। तदनन्तर भूपुर में लोकपालों का पूजन कर उसके बाहर उनके आयुधों का पूजन सम्पन्न करके धूप-दीप-जप आदि समर्पित कर स्तोत्र का पाठ करे।

बृहस्पति, सुराचार्य, दयावान्, शुभलक्षण, गुरु, श्रीमान्, सर्वज्ञ, सर्वग, विभु, सर्वेश, सर्वदा तुष्ट, सर्वद, सर्वतोमुख, अक्रोधन, मुनिश्रेष्ठ, नीतिकर्ता, जगत्पति, विश्वात्मा, विश्वकर्ता, विश्वयोनि, अयोनिज, भूर्भुव:स्व: पिता, भूर्भुव:स्व: भर्ता, जीव, महाबल—ये पच्चीस पुनीत नाम पुण्य-शुभदायक हैं। प्रात: उठकर सुसमाहित होकर जो इनका पाठ करता है, उसे अभीष्ट की प्राप्ति होती है। गुरु के इस स्तोत्र को जो सुनता है, वह निस्सन्देह रूप से चिरकाल तक जीवित रहता है। विष्णु ने कहा है कि उसे हजार गोदान का फल प्राप्त होता है।

स्तोत्रसहितशुक्रमन्त्रप्रयोगः

अथ शुक्रमन्त्रप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि प्रजापत्यश्विनसरस्वतीन्द्रेभ्य ऋषिभ्यो नमः। मुखे अतिजगतीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीशुक्राय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, अन्नात्परिस्रुतः हृदयाय नमः। रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् शिरसे०। क्षत्रं पयः शिखा०। सोमं प्रजापतिः कवचाय०। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं नेत्रत्र०। विपानं शुक्रमन्धस अस्त्रा०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, अन्नात्परिस्रुतः शिरसि। रसं ब्रह्मणा ललाटे। व्यपिबत्क्षेत्रं मुखे। पयः सोमं हृदये। प्रजापतिः नाभौ। ऋतेन सत्यं कट्यां। इन्द्रियं विपानं गुह्ये। शुक्रं वृषणयोः। अन्धस ऊर्वोः। इन्द्रस्येन्द्रियं जान्वोः। इदं पयः गुल्फयोः। अमृतं मधु पादयोः। इति विन्यस्य, ध्यानमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना पञ्चकोणगर्भषट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं पूजायन्त्रं विलिख्य, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिपीठमन्वन्तं संपूज्य, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्य शुक्रमावाहयेत्। यथा—किरीटिनं श्वेतवर्णं चतुर्भुजं दण्डिनं वरदं काव्यं साक्षसूत्रकमण्डलुं कीकटदेशजं भार्गवसगोत्रं शौनकार्षं पङ्क्तिच्छन्दसं श्वेताम्बरधरं श्वेताभरणभूषितं श्वेतगन्धानुलेपनं श्वेतच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिशोभितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवतेन्द्राणीसहितं प्रत्यधिदेवतेन्द्रसहितं पञ्चकोणमण्डले प्राङ्मुखं भगवन्तं शुक्रमावाहयामीत्यावाह्य आवाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, आसनादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणे षडङ्गानि, दलेषु प्रागादिशन्याद्यष्टौ ग्रहान्, भूपुरे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य, धूपदीपादिकं प्राग्वत् समाप्य स्तोत्रं पठेत्।

दैत्यमन्त्री दीर्घदर्शी उशना भार्गवः कविः। शुक्रो भृगुर्भृगुसुतश्चान्यजिद् दैत्यपूजितः ॥१॥
श्वेतोऽर्धमण्डली काव्यो निधिमान्नैगमस्तथा। सर्वज्ञः सर्वदः श्रीमान् नीतिज्ञो रक्षसां विभुः ॥२॥
विश्वकर्ता च विश्वात्मा दैत्याचार्यः प्रतापवान्। चतुर्विंशतिनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥३॥
आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं लभते नात्र संशयः। प्रतिशुक्रो न तस्यास्ति सर्वसौभाग्यभाग्भवेत् ॥४॥
दैत्यमन्त्रिन् महाप्राज्ञ सर्वासुरनमस्कृत। अभीष्टफलद श्रीमन् दैत्यग्रह नमोऽस्तु ते ॥५॥
इति शुंक्रस्तोत्रम्।

६. शुक्रमन्त्र प्रयोग—प्रात:कृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि प्रजापत्यश्विनसरस्वतीन्द्रेभ्य ऋषिभ्यो नमः, मुखे अतिजगतीच्छन्दसे नमः, हृदये श्रीशुक्राय देवतायै नमः। तदनन्तर पूर्ववत् विनियोग बोल करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—अन्नात्परिस्रुतः हृदयाय नमः, रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् शिरसे स्वाहा, क्षत्रं पय: शिखायै वषट्, सोमं प्रजापति: कवचाय हुं, ऋतेन सत्यमिन्द्रियं नेत्रत्रयाय वौषट्, विपानं शुक्रमन्धस अस्त्राय फट्। तत्पश्चात् अन्नात्परिस्रुतः का शिर पर, रसं ब्रह्मणा का ललाट में, व्यपिबत्क्षेत्रं का मुख में, पय: सोमं का हृदय में, प्रजापति: का नाभि में, ऋतेन सत्यं का कमर में, इन्द्रियं विपानं का गुह्य में, शुक्रं का अण्डकोष में, अन्धस का ऊरुओं में, इन्द्रस्येन्द्रियं का जानुओं में, इदं पय: का गुल्फों में, अमृतं मधु का पैरों में न्यास करके ध्यान मानस

पूजा करने के उपरान्त स्वर्ण आदि के पत्र पर कुङ्कुम आदि से पञ्चकोण, षट्कोण, अष्टदल, भूपुर वाले पूजा यन्त्र बनाकर उसे अपने सामने स्थापित करके उसका अर्चन कर अर्घ्य आदि स्थापन एवं आत्म पूजा करने के बाद पीठपूजन करके मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर इस मन्त्र शुक्र का आवाहन करे—किरीटिनं श्वेतवर्णं चतुर्भुजं दण्डिनं वरदं काव्यं साक्षसूत्रकमण्डलुं कीकटदेशजं भार्गवसगोत्रं शौनकार्षं पङ्क्तिच्छन्दसं श्वेताम्बरधरं श्वेताभरणभूषितं श्वेतगन्धानुलेपनं श्वेतच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूर-मणिशोभितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवतेन्द्राणीसहितं प्रत्यधिदेवतेन्द्रसहितं पञ्चकोणमण्डले प्राङ्मुखं भगवन्तं शुक्रमावाहयामि। तदनन्तर आवाहन आदि मुद्रा दिखाकर आसन से पुष्पोपचार तक पूजन करके षट्कोण में षडङ्ग पूजन कर अष्टदलों में शनि आदि आठ ग्रहों का पूजन करे। तत्पश्चात् उसके बाहर भूपुर में लोकपालों एवं उनके आयुधों का पूजन करके धूप-दीप-जप आदि कर पूजा समाप्त करते हुये स्तोत्र का पाठ करे।

दैत्यमन्त्री, दीर्घदर्शी, उशना, भार्गव, कवि, शुक्र, भृगु, भृगुसुत, अन्यजित्, दैत्यपूजित, श्वेत, अर्धमण्डली, काव्य, निधिमान्, नैगम, सर्वज्ञ, सर्वद, श्रीमान्, नीतिज्ञ, रक्षसांविभु, विश्वकर्ता, विश्वात्मा, दैत्याचार्य, प्रतापवान्—शुक्र के इन चौबीस नामों प्रात:काल उठकर जो नित्य पाठ करता है, उसे आयु, आरोग्य एवं ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। शुक्र ग्रह की पीड़ा उसे नहीं होती और सभी सौभाग्यों से वह युक्त होता है। अन्त में शुक्र को इस मन्त्र से नमस्कार करना चाहिये—

दैत्यमन्त्रिन् महाप्राज्ञ सर्वासुरनमस्कृतन्। अभीष्टफलद श्रीमन् दैत्यग्रह नमोस्तु ते।।

स्तोत्रसहितशनिमन्त्रप्रयोग:

अथ शनिमन्त्रप्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि दध्यङाथर्वणाय ऋषये नम:। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नम:। हृदये शनैश्चराय देवतायै नम:। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोग-मुक्त्वा, शन्नो देवी: हृदयाय नम:। अभीष्टये शिरसे०। आपो भवन्तु शिखा०। पीतये कवचाय०। शंयोरभि नेत्रत्र०। स्रवन्तु न: अस्त्रा०। एवं करषडङ्गन्यासं विधाय, शन्न: शिरसि। देवी: ललाटे। अभिष्टये मुखे। आपो भवन्तु नाभौ। पीतये कट्यां। शंयो ऊर्वो: ०। अभि जान्वो:। स्रवन्तु न: पादयो:। इति विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना धनुराकारगर्भं षट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं पूजायन्त्रं विलिख्य, पुरत: संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिपीठमन्वन्तं संपूज्य, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्यावाहयेत्। यथा—किरीटिनमिन्द्रनीलसमद्युतिं शूलधरं वरदं गृध्रवाहनं सबाणबाणासनधरं सौराष्ट्रदेशजं काश्यपसगोत्रं भृग्वार्षं गायत्रीच्छन्दसं कृष्णाम्बरधरं कृष्णाभरणभूषितं कृष्णगन्धानुलेपनं कृष्णाच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिशोभितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताप्रजापतिसहितं प्रत्यधिदेवतायमसहितं कृष्णधनुर्मण्डले प्राङ्मुखं शनैश्चरमावाहयामीत्यावाह्य, आवाहनादिमुद्रा: प्रदर्श्य, आसनादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणे षडङ्गानि अष्टदले पूर्वादितो राह्वाद्यष्टौ ग्रहान् भूपुरे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य, धूपदीपादिसर्वं प्राग्वत् समाप्य स्तोत्रं पठेत्—

क्रूरावलोकनवशाद्भवनं नाप्नोति यो ग्रहो रुष्ट:। तुष्टो धनकनकसुखं ददाति सोऽस्माच्छनैश्चर: पातु ।।१।।
य: पुनर्नष्टराज्याय नराय परितोषित:। स्वप्ने ददौ निजं राज्यं स मे सौरि: प्रसीदतु ।।२।।
कोणं नीलाञ्जनप्रख्यं मन्दचेष्टाप्रसारिणम्। छायामार्तण्डसम्भूतं नमस्यामि शनैश्चरम् ।।३।।
नमोऽर्कपुत्राय शनैश्चराय खञ्जाय नीलोत्पलमेचकाय।
श्रुत्वा रहस्यं भव कामदस्त्वं फलप्रदो मे भव सूर्यपुत्र ।।४।।
नमोऽस्तु प्रेतराजाय कृष्णदेहाय वै नम:। शनैश्चराय क्रूराय शुद्धबुद्धिप्रदायिने ।।५।।
य एभिर्नामभि: स्तौति तस्य तुष्टिं ददात्यसौ। तदीयं तु भयं तस्य स्वप्नेऽपि न भविष्यति ।।६।।
श्रावणे मासि सञ्जाते शोभने शनिवासरे। लोहरूपं शनिं कृत्वा स्नाप्यं पञ्चामृतैर्नवै: ।।७।।
पुष्पैरष्टविधैर्धूपै: फलैश्चैव विशेषत:। नामभि: पूजयेदेतै: क्रमेण ग्रहसत्तमम् ।।८।।

कोणस्थः पिङ्गलो बभ्रुः कृष्णो रौद्रोऽन्तको यमः । सौरिः शनैश्चरो मन्दः पिप्पलादेन संस्तुतः ॥९॥
एतानि शनिनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । शनैश्चरकृता पीडा न भवेत्तु कदाचन ॥१०॥
इति शनैश्चरस्तोत्रम्।

७. शनि मन्त्र प्रयोग—प्रात:कृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि दध्यङाथर्वणाय ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदये शनैश्चराय देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास करके पूर्ववत् विनियोग करने के उपरान्त इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—शन्नो देवीः हृदयाय नमः, अभीष्टये शिरसे स्वाहा, आपो भवन्तु शिखायै वषट्, पीतये कवचाय हुं, शंयोरभि नेत्रत्रयाय वौषट्, स्रवन्तु नः अस्त्राय फट्, तदनन्तर शन्नः से शिर पर, देवीः से ललाट में, अभिष्टये से मुख में, आपो भवन्तु से नाभि में, पीतये से कमर में, शंयो से ऊरुओं में, अभि से जानुओं पर, स्रवन्तु नः से पैरों में न्यास करके ध्यान मानस पूजन करने के उपरान्त स्वर्ण आदि के पत्र पर कुङ्कुम आदि से धनुष की आकृतियुक्त षट्कोण अष्टदल एवं भूपुर वाले पूजा यन्त्र का निर्माण कर उसे अपने सामने स्थापित कर उसका अर्चन, अर्घ्यस्थापन, आत्मपूजा, पीठपूजा करने के उपरान्त मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर अग्रांकित मन्त्र से शनिदेव का आवाहन करे—किरीटिनमिन्द्रनीलसमद्युतिं शूलधरं वरदं गृध्रवाहनं सबाणबाणासनधरं सौराष्ट्रदेशजं काश्यपसगोत्रं भृग्वार्षं गायत्रीच्छन्दसं कृष्णाम्बरधरं कृष्णाभरणभूषितं कृष्णगन्धानुलेपनं कृष्णाच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिशोभितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवताप्रजापतिसहितं प्रत्यधिदेवतायमसहितं कृष्णधनुर्मण्डले प्राङ्मुखं शनैश्चरमावाहयामि। तदनन्तर आवाहन आदि मुद्रा प्रदर्शित कर आसन पूजन से लेकर पुष्पोपचार तक समर्पित कर षट्कोण में षडङ्ग पूजन करने के बाद अष्टदल में राहु आदि आठ ग्रहों का पूजन करे। उसके बाद भूपुर में लोकपालों एवं उनके आयुधों का पूजन करके धूप-दीप-जप आदि पूर्ववत् करके स्तोत्र का पाठ करे—

क्रूरावलोकनवशाद्भवनं नाप्नोति यो ग्रहो रुष्टः। तुष्टो धनकनकसुखं ददाति सोऽस्माञ्छनैश्चरः पातु।।
यः पुनर्नष्टराज्याय नराय परितोषितः। स्वप्ने ददौ निजं राज्यं स मे सौरिः प्रसीदतु ।।
कोणं नीलाञ्जनप्रख्यं मन्दचेष्टाप्रसारिणम् ।

श्लोकोक्त नामों से जो इनकी स्तुति करता है, उसे शनि तुष्टि प्रदान करते हैं। शनि का भय उसे स्वप्न में भी नहीं होता सावन महीने के शनिवार को लोहे की शनि की प्रतिमा को पञ्चामृत से स्नान करावे। फूल और अष्टाङ्ग धूप, फल से प्रत्येक नाम से पूजा करे। ये नाम हैं—कोणस्थ, पिङ्गल, बभ्रु, कृष्ण, रौद्र, अन्तक, यम, सौरि, शनैश्चर, मन्द, पिप्पलाद, संस्तुत। इन नामों का पाठ जो प्रातः उठकर करता है, उसे शनि की पीड़ा कदापि नहीं होती।

सस्तोत्रराहुमन्त्रप्रयोगः

अथ राहुमन्त्रप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं विधाय, शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीराहवे देवतायै नमः। इति विन्यस्य विनियोगमुक्त्वा, कया नः हृदयाय नमः। चित्र आभुवत् शिरसे स्वाहा। ऊती सदावृधः शिखायै०। सखा कवचाय०। कया नेत्रत्र०। शचिष्ठया वृता अस्त्राय०। एवं करषडङ्गन्यासं विधाय, कया शिरसि। नो भाले। चित्र मुखे। आभुवत् हृदये। ऊती नाभौ। सदावृधः कट्यां। सखा ऊर्वोः। कया जान्वोः। शचिष्ठया गुल्फयोः। वृता पादयोः। इति विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना शूर्पाकारगर्भं षट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं मण्डलं विलिख्य, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यस्थाप-नाद्यात्मपूजान्ते प्राग्वत् पीठपूजां विधाय, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्य तत्र राहुं ध्यायेत्। यथा किरीटिनं करालवक्त्रं खड्गचर्मशूलधरं सिंहासनस्थं पूर्वदेशजं पाटलीगोत्रमाङ्गिरसार्षमनुष्टुप्छन्दसं कृष्णाम्बरधरं कृष्णाभरणभूषितं कृष्णगन्धानुलेपनं कृष्णाच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिशोभितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवतासर्पसहितं प्रत्यधिदेवताकालसहितं कृष्णशूर्पमण्डले दक्षिणामुखं राहुमावाहयामीति आवाह्य, आवाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, आसनादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणे षडङ्गानि, अष्टदले केत्वाद्यष्टौ ग्रहान्, भूपुरे लोकपालां-

स्तदायुधानि च संपूज्य, धूपदीपादिकं प्राग्वन्निवेद्य स्तोत्रं पठेत्—

ॐनमो राहवे महाग्रहाय ॐ नमः सत्त्वाय महाग्रहाय।

ॐ नमो रजसे महाग्रहाय ॐ नमस्तमसे महाग्रहाय।

ॐ नमो जैमिनये महाग्रहाय ॐ भूर्भुव:स्व:पालयित्रे महाग्रहाय।

ॐ नमः क्षणदृष्टाय महाग्रहाय ॐ नमः कुटिलभ्रुकुटये महाग्रहाय।

ॐनमो विकटदंष्ट्राय महाग्रहाय ॐनमश्चन्द्रादित्यभयप्रदाय महाग्रहाय।

सैंहिकेयः सुरारिश्च यमदंष्ट्रो महाबलः। सुर्भानुर्भानुमर्दी च चन्द्रमर्द्यमृतप्रियः ॥१॥
तमोग्रहः शिरस्कं च तमोऽगुश्चैव दुर्जयः। विधुन्तुदो विधुग्रासी पौर्णमासीकुहूप्रियः ॥२॥
पातः पातयिता विश्वं पाताङ्गश्चाष्टमो ग्रहः। एकविंशतिनामानि राहोर्नित्यं पठेन्नरः ॥३॥
अष्टमे द्वादशे रन्ध्रे (रिफ्फे) द्विचतुष्के च सप्तमे। पञ्चमे वाञ्छितं तस्य दद्यादेकादशात् फलम् ॥४॥
राहोः प्रसादात्कूष्माण्डा डाकिन्यो घातका ग्रहाः। पीडां तस्य न कुर्वन्ति वाञ्छितार्थस्य सिद्धिदाः ॥५॥
धनापत्यकलत्राणां वृद्धिं प्राप्नोति मानवः। इन्द्रियाणां पटुत्वं च वाञ्छितार्थस्य चागमः ॥६॥
बलिदानं जपं होमं कृत्वा तर्पणभोजनम्। दानं दद्याद् गृहस्थाय रत्नं गोमेदकादिकम् ॥७॥
विषमस्थे नृणां राहावपि राज्ञां जयप्रदः। एतत् स्तोत्रं तु राजानो जपन्तो जयकाङ्क्षिणः ॥८॥
रणे शत्रून् क्षणाज्जित्वा प्राप्नुवन्ति वसुन्धराम्। प्रातः पठेन्नरो नित्यं पक्षं पक्षार्धमेव वा ॥९॥
त्यक्तः सर्वभयेभ्योऽपि सर्वान् कामानवाप्नुयात्।

इति राहुस्तोत्रम्।

८. राहु मन्त्र प्रयोग—प्रात:कृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदये श्रीराहवे देवतायै नमः। तत्पश्चात् विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—कया नः हृदयाय नमः, चित्र आभुवत् शिरसे स्वाहा, ऊती सदावृधः शिखायै वषट्, सखा कवचाय हुं, कया नेत्रत्रयाय वौषट्, शचिष्ठया वृता अस्त्राय फट्। तदनन्तर कया से शिर पर, नो से ललाट में, चित्र से मुख में, आभुवत् से हृदय में, ऊती से नाभि में, सदावृधः से कमर में, सखा से ऊरुओं में, कया से जानुओं में, शचिष्ठया से गुल्फों में, वृता से पैरों में न्यास करके ध्यान मानस पूजन करने के उपरान्त स्वर्ण आदि के पत्र पर कुङ्कुम आदि से बीच में शूर्प की आकृति वाले षट्कोण अष्टदल एवं भूपुर से युक्त पूजा मण्डल बनाकर उसके अपने सामने स्थापित करके उसका अर्चन, अर्घ्यस्थापन, आत्मपूजा के बाद पूर्ववत् पीठपूजा करके मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित कर राहु का इस मन्त्र से आवाहन करे—किरीटिनं करालवक्त्रं खड्गचर्मशूलधरं सिंहासनस्थं पूर्वदेशजं पाटलीगोत्रमाङ्गिरसार्षमनुष्टुप्छन्दसं कृष्णाम्बरधरं कृष्णाभरणभूषितं कृष्णगन्धानुलेपनं कृष्णच्छत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरमणिशोभितमारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणं ग्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवतासर्पसहितं प्रत्यधिदेवताकालसहितं कृष्णशूर्पमण्डले दक्षिणामुखं राहुमावाहयामि। तदनन्तर आवाहन आदि मुद्रा प्रदर्शित कर आसन से पुष्पोपचार तक करने के उपरान्त षट्कोण में षडङ्गपूजन करके अष्टदल में केतु आदि ग्रहों का पूजन करे। तत्पश्चात् भूपुर में लोकपालों एवं उनके आयुधों का पूजन करके पूर्ववत् धूप-दीप-जप आदि निवेदित कर इस स्तोत्र का पाठ करे—

ॐ नमो राहवे महाग्रहाय ॐ नमः सत्त्वाय महाग्रहाय।

ॐ नमो रजसे महाग्रहाय ॐ नमस्तमसे महाग्रहाय।।

ॐ नमो जैमिनये महाग्रहाय ॐ भूर्भुव:स्व:पालयित्रे महाग्रहाय।

ॐ नमः क्षणदृष्टाय महाग्रहाय ॐ नमः कुटिलभ्रुकुटये महाग्रहाय।।

ॐ नमो विकटदंष्ट्राय महाग्रहाय ॐ नमश्चन्द्रादित्यभयप्रदाय महाग्रहाय।

सैंहिकेय, सुरारि, यमदंष्ट्र, महाबल, सुः, भानुः, भानुमर्दी, चन्द्रमर्दी, अमृतप्रिय, तमोग्रह, शिरस्क, तमोऽगुः, दुर्जय, विधुन्तुद, विधुग्रासी, पौर्णमासीप्रिय, कुहूप्रिय, विश्वपात, विश्वपातयिता, विश्वपाताङ्ग, अष्टमग्रह—इन इक्कीस नामों से युक्त राहुस्तोत्र का पाठ नित्य करना चाहिये। जिसकी जन्मकुण्डली में लग्न से अष्टम, द्वादश, षष्ठ, द्वितीय, चतुर्थ, सप्तम, पञ्चम भाव में राहु हो, उसे एकादश भाव का राहु वाञ्छित फल देता है। राहु की कृपा से मनुष्य को कूष्माण्डा डाकिनी आदि घातक ग्रह पीड़ा नहीं पहुँचाते और वांछितार्थ सिद्धि मिलती है। उसके धन-सन्तान-कलत्र की वृद्धि होती है। वागादि इन्द्रियों से पटु होता है और कांक्षित अर्थ का आगम होता है। बलिदान जप होम तर्पण ब्राह्मण भोजन कराकर गृहस्थ को गोमदादि रत्न दान विषम स्थिति में करना चाहिये। राजा के लिये राहु जयप्रद होते हैं। युद्ध में जीत को इच्छुक राजा को भी इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। इससे राजा युद्ध में शत्रु को तुरन्त जीतकर भूमि प्राप्त करता है। एक पक्ष या एक सप्ताह तक जो मनुष्य नित्य इन नामों का पाठ करता है, उसके सभी भय समाप्त हो जाते हैं और सभी कामनाओं की पूर्ति होती है।

सस्तोत्रकेतुमन्त्रप्रयोगः

अथ केतुमन्त्रप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि मधुच्छन्दसे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीकेतवे देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ॐ केतुं कृण्वन् हृदयाय नमः। अकेतवे शिरसे०। पेशोमर्या शिखायै०। अपेशसे कवचाय०। समुषद्भिः नेत्रत्र०। अजायथा अस्त्राय०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, केतुं शिरसि। कृण्वन् ललाटे। अकेतवे मुखे। पेशः हृदये। मर्या नाभौ। अपेशसे कट्यां। सं ऊर्वोः। उषद्भिः जान्वोः। अजायथाः पादयोः। इति विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना ध्वजाकारगर्भषट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं पूजायन्त्रं विलिख्य, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते प्राग्वत् पीठपूजां विधाय, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्यावाहयेत्। यथा—धूम्रान् द्विबाहून् पाशधरान् गृध्रवाहनान् किरीटिनो मध्यदेशजाञ्जैमिनिगोत्रजान् गौतमार्षान् नानाच्छन्दसश्चित्राम्बरधरांश्चित्राभरणभूषितान् चित्रगन्धानुलेपनान् कृष्णपिङ्गलध्वजपताकिनो मुकुटकेयूरमणिभूषितानारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणान् ग्रहमण्डले प्रविष्टान् अधिदेवताब्रह्मसहितान् प्रत्यधिदेवताचित्रगुप्तसहितान् कृष्णपिङ्गलध्वजमण्डले दक्षिणमुखान् केतून् आवाहयामीत्यावाह्य, आवाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, आसनादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणे षडङ्गानि, अष्टदलेषु पूर्वादितो रव्याद्यष्टौ ग्रहान्, भूपुरे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य, धूपदीपादिकं दत्त्वा समाप्य स्तोत्रं पठेत्—

मृत्युपुत्रः शिखी केतुश्चानलोत्पातरूपधृक्। बहुपुत्रोऽथ धूम्राभः श्वेतः कृष्णश्च पीतदृक् ॥१।
छायारूपो ध्वजः पुच्छो जगत्प्रलयकृत् सदा। अदृष्टरूपो दृश्यश्च जन्तूनां भयकारकः ॥२॥
नामान्येतानि केतोश्च नित्यं यः प्रयतः पठेत्। केतुपीडा न तस्यास्ति सर्पचौराग्निभिर्भयम् ॥३॥
दानं दद्याद् गृहस्थाय वैडूर्यं केतवे सदा। यः पठेत् प्रयतो नित्यं पक्षं पक्षार्धमेव वा ॥४॥
त्यक्तः सर्वभयेभ्यो हि सर्वान् कामानवाप्नुयात्।

इति केतुस्तोत्रम्।

९. केतु मन्त्र-प्रयोग—प्रातःकृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन बार प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि मधुच्छन्दसे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदये श्रीकेतवे देवतायै नमः। तदनन्तर पूर्ववत् विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ केतुं कृण्वन् हृदयाय नमः, अकेतवे शिरसे स्वाहा, पेशोमर्या शिखायै वषट्, अपेशसे कवचाय हुं, समुषद्भिः नेत्रत्रयाय वौषट्, अजायथा अस्त्राय फट्। तत्पश्चात् केतुं से शिर पर, कृण्वन् से ललाट में, अकेतवे से मुख में, पेशः से हृदय में, मर्या से नाभि में, अपेशसे से कमर में, सं से ऊरुओं में, उषद्भिः से जानुओं में, अजायथाः से पैरों में न्यास करके ध्यान मानस पूजा करने के उपरान्त स्वर्ण आदि के पत्र पर कुङ्कुम आदि से गर्भ में ध्वजा की आकृति वाले षट्कोण अष्टदल एवं भूपुर से युक्त पूजन यन्त्र बनाकर अपने सामने स्थापित करके उसका अर्चन कर अर्घ्यस्थापन एवं आत्मपूजा करके पूर्ववत् पीठपूजन करके मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर आवाहन आदि मुद्रा

दिखाते हुए इस मन्त्र से केतु का आवाहन करे—धूम्रान् द्विबाहून् पाशधरान् गृध्रवाहनान् किरीटिनो मध्यदेशजाञ्जैमिनिगोत्रजान् गौतमार्षान् नानाच्छन्दसश्चित्राम्बरधरांश्चित्राभरणभूषितान् चित्रगन्धानुलेपनान् कृष्णपिङ्गलध्वजपताकिनो मुकुटकेयूरमणिभूषितानारुह्य रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वाणान् ग्रहमण्डले प्रविष्टान् अधिदेवताब्रह्मसहितान् प्रत्यधिदेवताचित्रगुप्तसहितान् कृष्णपिङ्गलध्वजमण्डले दक्षिणमुखान् केतून् आवाहयामि। तदनन्तर आसन पूजन करके पुष्पोपचार तक समर्पित कर षट्कोण में षडङ्गों का पूजन करके अष्टदल के आठ दलों में सूर्य आदि आठ ग्रहों का पूजन करे। उसके बाद भूपुर में लोकपालों एवं उनके आयुधों का पूजन कर धूप-दीप-जप आदि समर्पित करके पूजा का समापन कर मूलोक्त स्तोत्र का पाठ करे।

मृत्युपुत्र, शिखी, केतु, अनलोत्पातरूपधृक्, बहुपुत्र, धूम्राभ, श्वेत, कृष्ण, पीतदृक्, छायारूप, ध्वज, पुच्छ, सदा जगत्प्रलयकृत्, अदृष्टरूप, दृश्यरूप, जन्तुभयकारक—केतु के इन नामों का जो नित्य सावधानीपूर्वक पाठ करता है, उसे केतु की पीड़ा नहीं होती। उसे चोर, अग्नि एवं सर्पों का भय भी नहीं होता। केतु की प्रसन्नता के लिये गृहस्थ ब्राह्मण को वैडूर्य रत्न का दान करना चाहिये। एक पक्ष तक या एक सप्ताह तक इसका पाठ जो नित्य करता है, वह सभी भयों से भुक्त होकर सभी कामनाओं को प्राप्त करता है।

नवग्रहाणां साधारणस्तोत्रम्

अथ नवग्रहसाधारणं स्तोत्रम्।

जपाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम्। तमोरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥१॥
दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्। नमामि सततं सोमं शाम्भोर्मुकुटभूषणम्॥२॥
धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम्॥३॥
प्रियङ्गुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम्। सौम्यं सौम्यगुणोपेतं नमामि शशिनः सुतम्॥४॥
देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसन्निभम्। बन्धुभूतं त्रिलोकज्ञं प्रणमामि बृहस्पतिम्॥५॥
हिमकुन्दतुषाराभं दैत्यानां परमं गुरुम्। सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम्॥६॥
नीलाञ्जनसमाभासं रविपुत्रं महाग्रहम्। छायामार्तण्डसम्भूतं प्रणमामि शनैश्चरम्॥७॥
अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्। सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम्॥८॥
तमालनालसङ्काशं तारकाग्रहमस्तकम्। रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम्॥९॥
इदं व्यासमुखोत्पन्नं ये पठन्ति समाहिताः। दिवा वा यदि वा रात्रौ शान्तिस्तेषां भविष्यति॥१०॥
ऐश्वर्यमतुलं चैवमारोग्यं बुद्धिवर्धनम्। नरनारीनृपाणां च भवेद् दुःस्वप्ननाशनम्॥११॥
ग्रहनक्षत्रपीडाश्च राक्षसाग्निसमुद्भवाः। ते सर्वे प्रशमं यान्ति सत्यं सत्यं न संशयः॥१२॥
नमः सूर्याय सोमाय मङ्गलाय बुधाय च। गुरुशुक्रशनिभ्यश्च राहवे केतवे नमः॥१३॥

इति नवग्रहस्तोत्रम्।

नवग्रह साधारण स्तोत्र—जपापुष्प के समान, कश्यपपुत्र, अत्यन्त कान्तिमान, अन्धकारनाशक एवं समस्त पापों के विनाशक दिवाकर को मैं प्रणाम करता हूँ। दधि-शंख एवं शीत के समान कान्ति वाले, शीरसमुद्र से उत्पन्न एवं शम्भु के मुकुट के आभूषण स्वरूप सोम को सदा प्रणाम करता हूँ। पृथिवी के गर्भ से उत्पन्न, विद्युत् के सदृश कान्ति वाले कुमार एवं हाथ में शक्ति धारण करने वाले मंगल के प्रणाम करता हूँ। प्रियंगु कलिका के समान श्याम वर्ण, अप्रतिम रूप वाले, सौम्भ स्वभाव वाले, सौम्य गुणों से सम्पन्न चन्द्रपुत्र बुध को प्रणाम करता हूँ। देवताओं एवं ऋषियों के गुरु, पीत वर्ण, बन्धुस्वरूप, त्रिलोक के ज्ञाता बृहस्पति को प्रणाम करता हूँ। हिमसदृश श्वेत वर्ण, दैत्यगुरु, समस्त शास्त्रों के प्रवक्ता शुक्र को प्रणाम करता हूँ। नीलाञ्जन-सदृश वर्ण वाले, सूर्य पुत्र, महा ग्रह मार्तण्ड की छाया से उत्पन्न शनैश्चर को प्रणाम करता हूँ। आधे शरीर वाले, अत्यधिक बलशाली, चन्द्र-सूर्य को ग्रसित करने वाले, सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न राहु को प्रणाम करता हूँ। तमालनाल-सदृश वर्ण वाले, ताराग्रहों के शिरोभूषण, क्रूर, रौद्रस्वरूप वाले, भयंकर केतु को प्रणाम करता हूँ।

व्यास के द्वारा कथित इन नवग्रह स्तोत्र का पाठ जो एकाग्रता से दिन या रात में करता है, उसकी शान्ति होती है। अतुल्य ऐश्वर्य और आरोग्य प्राप्ति के साथ उसके बुद्धि की भी वृद्धि होती है। नर-नारी-नृपों के बुरे स्वनों का नाश होता है; ग्रह-नक्षत्रपीड़ा-राक्षस, अग्निसम्भूत पीड़ा का प्रशमन होता है। सूर्य, सोम, मंगल, बुध, गुद, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु को नमस्कार है।

अथ रुद्रयामले मङ्गलकल्पः—

अथातः संप्रवक्ष्यामि कल्पं भौमस्य सुव्रते। यज्ज्ञात्वा तु वरारोहे ऋणान्मुच्येत साधकः ॥१॥
मन्त्रोद्धारं शृणु प्राज्ञे सर्वसिद्धिप्रदायकम्। श्रीबीजं कामराजं तु भुवनेशीं समालिखेत् ॥२॥
नमो भौमाय च ततो वह्निजायां च चोच्चरेत्। दशाक्षरो महामन्त्रो भौमस्य कथितः प्रिये ॥३॥
श्रीमन्मङ्गलमन्त्रस्य विरूपाक्ष ऋषिः स्मृतः। गायत्री च्छन्द आख्यातं देवता भूमिनन्दनः ॥४॥
श्रीबीजं च भवेच्छक्तिः कामबीजं च कीलकम्। बीजं च मायाबीजं स्यात् सर्वकामार्थसिद्धये ॥५॥
विनियोगः समाख्यातो ह्यङ्गषट्कं च कथ्यते। दीर्घषट्स्वरयोगेन स्वबीजेनाङ्गकं न्यसेत् ॥६॥
त्रिबीजाद्यं न्यसेद् देहे चाङ्गुलीषु तथा न्यसेत्। दशरन्ध्रेषु देवेशि दशवर्णान् प्रविन्यसेत् ॥७॥
मूलेन व्यापकं न्यसेत् कुर्याच्च धनवृद्धये। अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि मङ्गलस्य सुलोचने ॥८॥
रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तगन्धानुलेपनम्। कुमारं शक्तिहस्तं च भौमं वन्दे सदानघम् ॥९॥

मंगल कल्प—रुद्रयामल में कहा गया है कि हे सुव्रते! अब में भौमकल्प को कहता हूँ, जिसे जानकर मनुष्य ऋण से मुक्त होता है। भौम का सर्वसिद्धिदायक दश अक्षरों का मन्त्र है—श्रीं क्लीं ह्रीं नमो भौमाय स्वाहा। इस मंगल मन्त्र के ऋषि विरूपाक्ष, छन्द गायत्री एवं देवता भूमिनन्दन मंगल हैं। श्री शक्ति, क्लीं कीलक एवं ह्रीं बीज है तथा समस्त काम एवं अर्थ की सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है।

षडङ्ग न्यास ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः से करे। आद्य तीन बीज श्रीं क्लीं ह्रीं से देहन्यास करे। अंगुलि में भी इन्हीं से न्यास करे। दश रन्ध्रों में दश वर्णों का न्यास करे। मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। तब धन की वृद्धि के लिये इस प्रकार ध्यान करे—

रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तगन्धानुलेपनम्। कुमारं शक्तिहस्तं च भौमं वन्दे सदानघम्।।

मङ्गलयन्त्ररचनाप्रकारः

अथ यन्त्रं शृणु प्राज्ञे सर्वसंपत्तिदायकम्। वह्नीशवारुणाशाग्रं त्रिकोणं विलिखेत् सुधीः ॥१०॥
प्रतिरेखं पञ्चचिह्नं षडंशेन प्रकल्पयेत्। मध्ये त्रिपञ्च वह्नेस्तु रेखाः संपातयेत् सुधीः ॥११॥
त्रिपञ्चसूत्रैर्देवेशि सम्यग्वै चिह्नयोगतः। षट्त्रिंशत्कोणता साम्यात् कृतेयं वीरवन्दिते ॥१२॥
वारुणाग्रेषु कोणेषु सैकविंशतिषु त्रिधा। भौमनामानि विलिखेदग्निकोणादितः क्रमात् ॥१३॥
ॐकारादिनमोन्तास्तु विलिखेत् सर्वदेवताः। प्रादक्षिण्यक्रमेणैव तद्बहिर्वृत्तमुत्तमम् ॥१४॥
नागपत्रं ततः पद्मं बहिर्वृत्तं मनोहरम्। तद्बहिर्भूपुरं देवि चतुर्द्वारसमन्वितम् ॥१५॥
न प्रकाश्यं सदा यन्त्रमृणघ्नं धनदायकम्। तव स्नेहेन कथितं साधकानां हिताय च ॥१६॥
गोपनीयं प्रयत्नेन निधानमिव चोरतः।

मङ्गल यन्त्र—इनका पूजन यन्त्र सर्व सम्पत्तिदायक है। पूजन यन्त्र-निर्माण हेतु अग्नि ईशान पश्चिमाग्र त्रिकोण बनावे। प्रत्येक रेखा में छः-छः अंशों पर पाँच-पाँच बिन्दु अंकित करे। बिन्दुओं को रेखाओं से मिलावे। इससे छत्तीस त्रिकोण बनते हैं। पश्चिमाग्र कोण से इक्कीस त्रिकोणों में तीन-तीन मंगल नाम लिखे। अग्निकोण से प्रारम्भ करके पहले ॐ और अन्त में नमः लगाकर सभी देवताओं को प्रदक्षिण क्रम से लिखे। इसके बाहर वृत्त बनावे। उसके बाहर अष्टपत्र बनावे। उसके बाहर

चार द्वारों से युक्त भूपुर बनावे। इस धनदायक ऋणघ्न यन्त्र को सदा प्रकाशित न करे। तुम्हारे स्नेहवश साधकों को हित के लिये इसे मैंने कहा है। जैसे धन को चोरों से छिपाकर रखा जाता है, वैसे ही इसे भी यत्न से गुप्त रखना चाहिये।

मङ्गलयन्त्रार्चाविधानम्

अथ पूजां प्रवक्ष्यामि मन्त्रराजस्य तत्त्वत: ।।१७।।

रक्तालङ्कारसुभगो रक्तगन्धानुलेपन: । रक्तवस्त्रपरीधानो गृहे रक्तारुणे स्थित: ।।१८।।
गुरुं संस्थाप्य शिरसि भूतान् संत्रासयेत् सुधी: । भूतशुद्धिं विधायादौ प्राणानायम्य देशिक: ।।१९।।
विनियोगं पुरा कृत्वा करन्यासं षडङ्गकम् । मन्त्रेण व्यापकं चैव ध्यानं पूर्वोदितं कुरु ।।२०।।
अर्घ्यं च वह्निमन्त्रेण पूजयेत् तदनन्तरम् । शङ्खं तत्र तु संस्थाप्य पूजयेद्रक्तपुष्पकै: ।।२१।।
सूर्यमन्त्रेण देवेशि जलैरापूरयेत् तत: । चन्द्रमन्त्रेण देवेशि पूजयेत् तदनन्तरम् ।।२२।।
मूलेन सप्तधा जप्त्वा धेनुमुद्रां प्रदर्शयेत् । तेनोदकेन संसिच्य यन्त्रे पुष्पैस्तथात्मनि ।।२३।।
पलत्रयसमग्राहि पात्रं ताम्रमयं कुरु । त्रिकोणाकाररूपं च देवतापात्रमुत्तमम् ।।२४।।
पूर्ववत् स्थापयेद्विप्र: प्रजपेदुपदेशत: । तत: पुष्पैस्तथा गन्धैरक्षतैर्लोहितैस्तथा ।।२५।।
दक्षभागे निधायाथ पूजयेत् सर्वदेवता: । यन्त्रस्य दक्षवामस्थं गणपं यक्षनायकम् ।।२६।।
आवाहयेद्विभुं भौमं ध्यानोक्तं सर्वसिद्धिदम् । आवाहनादिमुद्रास्तु क्रमेणैवात्र दर्शयेत् ।।२७।।
ऊर्ध्वाञ्जलिमध: कुर्यादियमावाहनी भवेत् । इयं तु विपरीता स्यात्तदा संस्थापनी मता ।।२८।।
ऊर्ध्वाङ्गुष्ठं मुष्टियुगं तदेयं सन्निधापनी । अन्तराङ्गुष्ठमुष्टिभ्यां तदेयं सन्निरोधनी ।।२९।।
तर्जनीभ्यां परिभ्राम्य सकलीकरणं भवेत् । परिवृत्तकरो मन्त्री तर्जनिके कनिष्ठिके ।।३०।।
मध्यमेऽनामिकायुग्मे श्लेषयेच्च परस्परम् । अमृतीकरणं देवि मुद्रेयं धेनुरूपिणी ।।३१।।
एता: सामान्यमुद्रास्तु दर्शयित्वा यजेत् प्रिये ।

यन्त्र-पूजन—सुन्दर लाल अलंकार धारण करके लाल गन्ध अनुलेप लगाकर लाल वस्त्र पहन कर लाल घर में बैठकर शिर पर गुरु को स्थापित करके भूतोत्सारण करे। भूतशुद्धि करके प्राणायाम करे। विनियोग करके करन्यास और षडङ्ग न्यास करे। मन्त्र से व्यापक न्यास करे और पूर्वोक्त रूप में ध्यान करे। अर्घ्य देकर वह्नि मन्त्र से पूजा करे। शङ्ख स्थापित करके लाल फूलों से पूजा करे। सूर्य मन्त्र से उसमें जल भरे। चन्द्र मन्त्र से जल की पूजा करे। मूल मन्त्र का सात जप करके धेनु मुद्रा दिखावे। उस जल से यन्त्र, पूजन सामग्री और स्वयं का प्रोक्षण करे। तीन पल अर्थात् १५० ग्राम जल अँटने लायक त्रिकोणाकार ताम्र पात्र देवता का उत्तम पात्र होता है, उसे स्थापित करे। उपदेशानुसार जप करे। तब लाल फूल अक्षत गन्ध से दक्षिण भाग में सभी देवों का पूजन करे। यन्त्र के दाँयें-बाँयें भाग में क्रमश: गणेश और यक्षनायक की पूजा करे। ध्यानोक्त भौम का आवाहन करके आवाहनादि मुद्रा दिखावे। अधोमुख अंजलि आवाहनी मुद्रा होती है। मुट्ठी के ऊपर अंगूठा रखने से संनिरोधनी मुद्रा होती है। तर्जनी को घुमाने से सकलीकरण होता है। बाँयें हाथ के ऊपर दाँयें हाथ को रखकर तर्जनी कनिष्ठा मध्यमा अनामिका को जोड़ने से अमृतीकरण धेनुमुद्रा होती है। इन सामान्य मुद्राओं को दिखाकर पूजन करे।

अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्ष्वङ्गपूजनम् ।।३२।।

केसरेषु प्रकर्तव्यं तथा वर्णैश्च देशिक: । प्रथमावरणं देवि कथितं वीरवन्दिते ।।३३।।
मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रद: । स्थिरासनो महाकाय: सर्वकर्मावबोधक: ।।३४।।
लोहितो लोहिताङ्गश्च सामगानां कृपाकर: । धरात्मज: कुजो भौमो भूमिदो भूमिनन्दन: ।।३५।।
अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारक: । वृष्टिकर्तापहर्ता च सर्वकामफलप्रद: ।।३६।।
एकविंशतिकोष्ठेषु प्रादक्षिण्येन तत्त्वत: । अग्रत्रिकोणमारभ्य पूजयेत् सर्वदेवता: ।।३७।।
द्वितीयावरणे देवा: पूर्वोक्तास्त्वेकविंशति: । आदित्यादिग्रहानष्टौ पूजयेदष्टपत्रके ।।३८।।

तृतीयावरणे देवि पूजयेद् भौममर्चयेत्। ब्राह्म्यादिभिश्चतुर्थी स्यादसिताङ्गादिभैरवैः ॥३९॥
पञ्चमी तु भवेद् देवि पत्राग्रेषु प्रपूजयेत्। वामावर्तक्रमेणैव षष्ठी स्याल्लोकनायकैः ॥४०॥
भूबिम्बे पूजयेद् देवि इन्द्रादीन् सर्वसिद्धये। तदायुधैः सप्तमी स्याद् भूबिम्बे च बहिर्यजेत् ॥४१॥
मूलेन पूजयेन्मध्ये रक्तपुष्पाञ्जलित्रयैः। उपचारैः षोडशभिः पूजयेत् परमेश्वरम् ॥४२॥
रक्तगन्धैश्च पुष्पैश्च धूपैर्दीपादिभिस्तथा। मङ्गलं पूजयेद् भक्त्या मङ्गलेऽहनि सर्वदा ॥४३॥
ऋणरेखाः प्रकर्तव्या अङ्गारेण तदग्रतः। तास्तु प्रमार्जयेत् पश्चाद् वामपादेन बुद्धिमान् ॥४४॥
पूजयेन्मूलमन्त्रेण शतमष्टोत्तरं प्रिये। दशांशं तर्पयेद् देवि होमं तस्य दशांशतः ॥४५॥
मार्जनं तद्दशांशेन मन्त्री मन्त्रस्य सिद्धये। पूजादिमार्जनान्तं तु भौमाय तु निवेदयेत् ॥४६॥
स्तुत्वा स्तोत्रेण देवेशि साधकस्तु स्थिरासनः। स्थिरासनाय नम इति वाचा मन्त्रं समुच्चरेत् ॥४७॥
शङ्खोदकैः परिभ्राम्य परिभ्रम्य स्वयं ततः। नमस्कारं प्रकुर्वीत पञ्चाङ्गं प्रणवेन तु ॥४८॥
यन्त्रात् पुष्पं समाघ्राय शुचौ देशे च निःक्षिपेत्। संहारमुद्रया देवि विसृजेत् परमेश्वरम् ॥४९॥
पूर्वक्रमात्र सन्देहः ऋणं हन्याद् धनं लभेत्। नित्यार्चको जपेल्लक्षं दशांशं तर्पयेत् ततः ॥५०॥
होमयेत् तद्दशांशेन जपापुष्पैश्च सुव्रते। रक्ताश्वमारपुष्पैर्वा घृताक्तैर्वापि गुग्गुलैः ॥५१॥
त्रिमध्वक्तैर्हुनेद् देवि पुरश्चरणसिद्धये। गुरवे दक्षिणां दद्यात् सालङ्कारां पयस्विनीम् ॥५२॥
आरक्तवस्त्रयुग्मेन धेनुं दद्याद् विधानतः।

इति रुद्रयामलोक्तमङ्गलपूजाविधानम्।

अग्नि ईशान नैर्ऋत्य वायव्य मध्य और चारो दिशाओं में षडङ्ग पूजा करे। केसर में मन्त्रवर्णों की पूजा करे। यह प्रथम आवरण का पूजन होता है। द्वितीय आवरण में मंगल की पूजा इक्कीस नामों से करे। ये नाम हैं—मंगल, भूमिपुत्र, ऋणहर्ता, धनप्रद, स्थिरासन, महाकाय, सर्वकर्मावबोधक, लोहित, लोहिताङ्ग, सामगानां कृपाकर, धरात्मज, कुज, भौम, भूमिद, भूमि-नन्दन, अंगारक, यम, सर्वरोगापहारक, वृष्टिकर्ता, अपहर्ता, सर्वकामफलप्रद।

इनकी पूजा इक्कीस कोष्ठों में प्रदक्षिण क्रम से अग्र त्रिकोण से प्रारम्भ करके करे। यह द्वितीय आवरण का पूजन होता है। तृतीय आवरण में अष्टपत्र में सूर्यादि आठ ग्रहों की पूजा करे और मंगल की भी पूजा करे। चतुर्थ आवरण में ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओं की पूजा दलों में करे। पञ्चम आवरण में असिताङ्गादि आठ भैरवों की पूजा पत्राग्रों में करे। वामावर्त क्रम से भूपुर में इन्द्रादि लोकेशों की पूजा छठे आवरण में करे सप्तम आवरण में वज्रादि आयुधों की पूजा करे। मध्य में मूल मन्त्र से लाल फूलों की तीन पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। तब देव का पूजन षोडशोपचार से करे। लाल चन्दन, लाल फूल, धूप-दीपादि से मंगल की पूजा प्रत्येक मंगलवार को करे।

मंगल के आगे ऋण रेखा खींचकर उसे अपने बाँयें पैर से मिटा दे। मूल मन्त्र से एक सौ आठ पूजा करे। दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण और उसका दशांश मार्जन करे तब मन्त्र सिद्ध होता है। मार्जन के बाद पूजा मंगल को समर्पित करे। स्तोत्र से स्तुति करे। 'स्थिरासनाय नमः' कहकर आसन की पूजा करे। शङ्ख जल लेकर यन्त्र पर घुमाकर स्वयं भी उसकी परिक्रमा करे। पञ्चाङ्ग प्रणाम करे। ॐ से यन्त्र पर से फूल लेकर सूँघे और उसे पवित्र स्थान में फेंक दे। संहार मुद्रा से देव का विसर्जन करे।

इस क्रम से पूजा करने पर कर्जमुक्त होकर साधक धनलाभ करता है। इसके बाद साधक नित्य पूजा करके एक लाख जप करे। दशांश तर्पण करे। उसका दशांश हवन अड़हुल के फूलों से करे या लाल कनैल के फूलों को घृताक्त करके हवन करे। अथवा त्रिमधुराक्त गुग्गुल से हवन करे तो पुरश्चरण सिद्ध होता है। दक्षिणा में गुरु को दूध देने वाली गाय प्रदान करे। उस गाय को दो लाल वस्त्रों से विधिवत् अलंकृत करना चाहिये।

मङ्गलयन्त्रान्तरन्तदर्चाप्रयोगश्च

अथ भविष्योत्तरपुराणोक्तयन्त्रम्—

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि येन संपद्यते धनम्। येन विज्ञानमात्रेण ऋणत्रयं विमुञ्चति ॥१॥

पूर्वेद्युः कर्ता हविष्यं भुक्त्वा ब्रह्मचारी अधःशयीत, नियमेन तिष्ठेत्, भौमवासरेऽरुणोदयसमये समुत्थायापामार्गेण दन्तधावनं विधायाचम्य पश्चात्तिलामलककल्केन नद्यादौ गृहे वा स्नात्वा धौतरक्तवाससी परिधाय प्रवालरक्तपुष्पादिकं बिभृयात्। रक्तचन्दनमूर्तिं विधाय ताम्रे त्रिकोणमण्डलं च, ततः शुचौ देशे लोहितानुड्डहे त्रिकोणमण्डले धनार्थी पुत्रार्थी वा सह पत्न्या पूजामारभेत्। ॐनमो मङ्गलाय नमः। अनेन मन्त्रेण द्वादश प्राणायामान् कृत्वा, अस्य मङ्गलमन्त्रस्य व्यास ऋषिरनुष्टुप् छन्दः मङ्गलो देवता मं बीजं नमः शक्तिः ऋणापनुत्त्यर्थे जपे विनियोगः। ततो व्याहृतिद्विरावृत्त्या करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यायेत्—

रक्तमाल्याम्बरं देवं खड्गशूलगदाधरम्। चतुर्भुजं मेषवाहं वरदं च धरासुतम् ॥

ध्यायेदिति शेषः। इति ध्यात्वा यथाविधि जपं पूजां समारभेत्। अद्येत्यादि० अमुकोऽहं धनार्थी पुत्रार्थी वा भौमपूजनं करिष्ये, इति सङ्कल्प्य प्रार्थनां कुर्यात्।

अथ देवेश ते भक्त्या करिष्ये व्रतमुत्तमम्। दुःखव्याधिविनाशार्थमृणनाशाय भूमिज ॥

पुत्रसन्तानहेतवे यथाकामं वा इति। ततस्ताम्रपात्रे त्रिकोणे भौमं संस्थाप्य ताम्रमयार्घ्यपात्रे रक्तचन्दन-रक्ताक्षतरक्तपुष्पादि निःक्षिप्य 'अग्निर्मूर्धे'ति मन्त्रेणाष्टोत्तरशतार्घ्याणि दध्यात्। ततोऽङ्गन्यासः ॐह्रां हृदयाय नमः। ॐ शिरसे०। ॐ ह्रौं शिखायै०। ॐ ह्रांह्रीं कवचाय०। ॐहंसः नेत्रत्र०। ॐखंखः अस्त्राय०। एवं करषडङ्गन्यासं विधाय पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा तमावाहयेत्।

सर्वग्रहेष्वतिबलं तीक्ष्णाङ्गारसमप्रभम्। नित्यं मन्दारुणाभासं भौममावाहयाम्यहम् ॥

इत्यावाह्यावाहनमुद्राः प्रदर्श्य, ॐह्रां इति मन्त्रेण पात्रं प्रक्षाल्योदकेनापूर्य कवचेनावगुण्ठ्यास्त्रेण संरक्ष्य धेनुमुद्रया वमित्यमृतीकृत्य, तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणानि च संप्रोक्ष्य, ॐह्रींहंहुंखंखः इति मन्त्रेन षोडशोपचारैः संपूज्यारात्रिकादर्शचामरादिकं प्रदर्श्य सफलार्घ्यं दद्यात्।

ॐभूमिपुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः। धनार्थी त्वां प्रपन्नोऽस्मि गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥
रक्तप्रवालसङ्काश जपाकुसुमसन्निभ। महीसुत महाबाहो गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥

ततो मूलमन्त्रेण पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा एकविंशतिनामभिर्गायत्रीसहितैरेकविंशतिकोष्ठेषु पूजयेत्। अङ्गारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात्। मङ्गलाय नमः। एवं भूमिपुत्राय०। ऋणहर्त्रे०। धनप्रदाय०। स्थिरासनाय०। महाकायाय०। सर्वकर्मावबोधकाय०। लोहिताय०। लोहिताङ्गाय०। सामगानां कृपाकराय०। धरात्मजाय०। कुजाय०। भौमाय०। भूतिदाय०। भूमिनन्दनाय०। अङ्गारकाय०। यमाय०। सर्वशोकापहारकाय०। वृष्टिकर्त्रे०। वृष्ट्यपहर्त्रे०। सर्वकामफलप्रदाय०। एतैर्नामभिर्गायत्रीसहितैः पूजयेत्। ततस्ताम्बूलं दत्त्वा प्रदक्षिणनमस्कारान् कुर्यात्। 'धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्तेजःसमप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम्। खादिराङ्गारेण रेखात्रयं कृत्वा 'दुःखदौर्भाग्यनाशाय पुत्रसन्तानहेतवे। कृतं रेखात्रयं वामपादेन मार्जयाम्यहम्'। अथ प्रार्थनम्—

ऋणहर्त्रे नमस्तेऽस्तु दुःखदारिद्र्यनाशन। सौभाग्यसुखभाङ् नित्यं भवामि धरणीसुत् ॥
तप्तकाञ्चनसङ्काश तरुणार्कसमप्रभ। सुखसौभाग्यधनद ऋणदारिद्र्यनाशक ॥
ग्रहराज नमस्तुभ्यं सर्वकल्याणकारक। प्रसादात्तव देवेश सदा कल्याणभाजनम् ॥
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः। प्राप्नुवन्ति शिवं सर्वं सदा पूर्णमनोरथाः ॥

प्रसादं कुरु मे देव प्रसादं मङ्गलप्रद। बालः कुमारको यस्तु स भौमः प्रार्थितो मया॥
एवं संप्रार्थ्य नामानि शरीरे तानि विन्यसेत्।

पादयोः मङ्गलाय नमः। जान्वोः भूमिपुत्राय नमः। ऊर्वोः ऋणहर्त्रे नमः। कट्यां धनप्रदाय नमः। गुह्ये स्थिरासनाय नमः। हृदये महाकायाय नमः। वामबाहौ सर्वकर्मावबोधकाय नमः। दक्षबाहौ लोहिताय नमः। कण्ठे लोहिताङ्गाय नमः। आस्ये सामगानां कृपाकराय नमः। नासिकयोः धरात्मजाय नमः। नयनयोः कुजाय नमः। ललाटे भौमाय नमः। भ्रुवोः भूतिदाय नमः। मूर्ध्नि भूमिनन्दनाय नमः। शिखायां अङ्गारकाय नमः। कवचे यमाय नमः। अस्त्रं सर्वरोगापहारकाय नमः। ऊर्ध्वे वृष्टिकर्त्रे नमः। अधः वृष्ट्यपहर्त्रे नमः। सर्वाङ्गेषु सर्वकामफलप्रदाय नमः। ततो भौमपूजनविधेः पूर्णतां कृत्वा स्तोत्रं पठेत्।

भविष्योत्तर पुराणोक्त यन्त्र—अब उस यन्त्र को कहता हूँ, जिसे जानने मात्र से ही धन मिलता है और साधक तीनों ऋणों से मुक्त हो जाता है। सोमवार में साधक हविष्यान्न का भोजन करके जमीन पर शयन करे। नियम से रहे। मंगलवार को अरुणोदय काल में उठकर अड़हुल के दतुवन से मुँह धोये। आचमन करके तिल एवं आमला का कल्क देह में लगाकर नदी में या घर में स्नान करे। लाल धोती पहने। मूँगे की माला और लाल फूलों की माला पहने। लाल चन्दन की मूर्ति को ताम्रपात्र में लाल चन्दन के त्रिकोण में स्थापित करे।

पवित्र स्थान में लाल त्रिकोण मण्डल में धनार्थी या पुत्रार्थी पत्नी के साथ बैठकर पूजा प्रारम्भ करे। 'ॐ नमो मंगलाय नमः' मन्त्र से बारह प्राणायाम करे। इस मंगलमन्त्र के ऋषि न्यास, छन्द अनुष्टुप् देवता मंगल, बीज में एवं शक्ति नमः हैं। ऋण की समाप्ति हेतु इसका विनियोग किया जाता है। तदनन्तर व्याहृतियों की दो आवृत्ति से षडङ्ग न्यास करके कर न्यास करे। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

रक्तमाल्याम्बरं देवं खड्गशूलगदाधरम्। चतुर्भुजं मेषवाहं वरदं च धरासुतम्।।

इस प्रकार ध्यान करके विधानानुसार जप-पूजा प्रारम्भ करे। धन अथवा पुत्र की कामना से या अन्य कामना से भौम पूजन का सङ्कल्प करे तदनन्तर इस प्रकार प्रार्थना करे—अथ देवेश ते भक्त्या करिष्ये व्रतमुत्तमम्। दुःखव्याधि- विनाशार्थमृणनाशाय भूमिज।।

तब ताम्रपात्र के त्रिकोण में मंगल को स्थापित करे। ताम्बे के अर्घ्य पात्र में लाल चन्दन अक्षत लाल फूल डालकर अग्निर्मूर्धा मन्त्र से एक सौ आठ अर्घ्य प्रदान करे, तब अंगन्यास करे।

षडङ्ग न्यास—ॐ ह्रां हृदयाय नमः, ॐ शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रौं शिखायै वषट्, ॐ ह्रां ह्रीं कवचाय हुं, ॐ हंसः नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ खं खः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। तदनन्तर पुष्पाञ्जलि लेकर देव का आवाहन करे। आवाहन मन्त्र है—

सर्वग्रहेष्वतिबलं तीक्ष्णांगारसमप्रभम्। नित्यं मन्दारुणाभासं भौममावाहयाम्यहम्।।

तदनन्तर आवाहन मुद्रा दिखावे। ॐ ह्रां से पात्र को धोकर उसमें जल भरे। कवच हुं से अवगुण्ठन करे। फट् से संरक्षण करे। धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करे। उस जल से अपना और पूजन सामग्रियों का प्रोक्षण करे। ॐ ह्रीं हं हुं खं खः मन्त्र से षोडशोपचार पूजन करे। तदनन्तर आरती करके दर्पण चामर आदि दिखाकर फलसहित अर्घ्य प्रदान करे। अर्घ्य मन्त्र है—

ॐ भूमिपुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः। धनार्थी त्वा प्रपन्नोऽस्मि गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते।।
रक्तप्रवालसंकाश जपाकुसुमसन्निभ। महीसुत महाबाहो गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते।।

तदनन्तर मूल मन्त्र से तीन पुष्पाञ्जलि देकर इक्कीस कोष्ठों में भौम गायत्री के साथ इक्कीस नामों से पूजा करे। भौम गायत्री है—अंगारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात्। नाममन्त्र इस प्रकार हैं—मंगलाय नमः, भूमिपुत्राय

नम:, ऋणहर्त्रे नम:, धनप्रदाय नम:, स्थिरासनाय नम:, महाकायाय नम:, सर्वकर्मावबोधकाय नम:, लोहिताय नम:, लोहिताङ्गाय नम:, सामगानां कृपाकराय नम:, धरात्मजाय नम:, कुजाय नम:, भौमाय नम:, भूतिदाय नम:, भूमिनन्दनाय नम:, अंगारकाय नम:, यमाय नम:, सर्वशोकापहारकाय नम:, वृष्टिकर्त्रे नम:, वृष्ट्यपहर्त्रे नम:, सर्वकामफल- प्रदाय नम:, गायत्रीसहित इन नामों से पूजा करके ताम्बूल देकर प्रदक्षिणा नमस्कार करके इस प्रकार प्रार्थना करे—

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेज:समप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च मंगलं प्रणमाम्यहम्।।

तदनन्तर खैर के कोयला से तीन रेखा खींचकर दु:ख एवं दुर्भाग्य की समाप्ति के लिये तथा पुत्र प्राप्ति के लिये बाँयें पैर से उस रेखा को इस मन्त्र से मिटावे—

दु:खदौर्भाग्यनाशायपुत्रसन्तानहेतवे। कृतं रेखात्रयं वामपादेन मार्जयाम्यहम्।।

तदनन्तर इस प्रकार प्रार्थना करे—

ऋणहर्त्रे नमस्तेऽस्तु दु:खदारिद्र्यनाशन। सौभाग्यसुखभाङ् नित्यं भवामि धरणीसुत् ।।
तप्तकाञ्चनसङ्काश तरुणार्कसमप्रभ। सुखसौभाग्यधनद ऋणदारिद्र्यनाशक ।।
ग्रहराज नमस्तुभ्यं सर्वकल्याणकारक। प्रसादात्तव देवेश सदा कल्याणभाजनम् ।।
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगा:। प्राप्नुवन्ति शिवं सर्वं सदा पूर्णमनोरथा: ।।
प्रसादं कुरु मे देव प्रसादं मङ्गलप्रद। बाल: कुमारको यस्तु स भौम: प्रार्थितो मया ।।

इस प्रकार की प्रार्थना के बाद उन नामों का शरीर में इस प्रकार न्यास करे—दोनों पैरों में मंगलाय नम:, दोनों जानुओं में भूमिपुत्राय नम:, दोनों ऊरुओं में ऋणहर्त्रे नम:, कमर में धनप्रदाय नम:, गुह्य में स्थिरासनाय नम:, हृदय में महाकायाय नम:, बाँयीं भुजा में सर्वकर्मावबोधकाय नम:, दाहिनी भुजा में लोहिताय नम:, कण्ठ में लोहिताङ्गाय नम:, मुख में सामगानां कृपाकराय नम:, दोनों नासिकाओं में धरात्मजाय नम:, दोनों आँखों में कुजाय नम:, ललाट में भौमाय नम:, दोनों भौंहों में भूतिदाय नम:, मूर्धा में भूमिनन्दनाय नम:, शिखा में अंगारकाय नम:, कवच में यमाय नम:, अस्त्र में सर्वरोगापहारकाय नम:, ऊपर वृष्टिकर्त्रे नम:, नीचे वृष्टियपहर्त्रे नम:, समस्त अंगों में सर्वकामफलप्रदाय नम:। इस प्रकार न्यास करके के पश्चात् भौम पूजन विधि पूर्ण करके स्तोत्र का पाठ करे।

ऋणमोचनस्तोत्रम्

ऋणमोचनभौमस्य स्तोत्रं वक्ष्ये शृणुष्वथो। ऋषिरस्य भवेद्ब्रह्माधिश्छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम् ।।१।।
अङ्गारको देवतात्र ऋणमोचनपूर्वक:। विनियोग: समाख्यातो विशेषऋणमोचने ।।२।।
रक्तमाल्याम्बरधर: शक्तिशूलगदाधर:। चतुर्भुजो मेषगमो वरदश्च धरासुत: ।।३।।
ऋणग्रस्तनराणां च ऋणमुक्तिप्रदायक:। मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रद: ।।४।।
स्थिरासनो महाकाय: सर्वकर्मावबोधक:। लोहितो लोहिताङ्गश्च सामगानां कृपाकर: ।।५।।
धरात्मज: कुजो भौमो भूमिदो भूमिनन्दन:। अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारक: ।।६।।
वृष्टिकर्तापहर्ता च सर्वकामफलप्रद:। अङ्गारको महीपुत्रो भगवान् भक्तवत्सल: ।।७।।
नमोऽस्तु ते ममाशेषमृणमाशु विनाशय। एतानि कुजनामानि नित्यं य: प्रयत: पठेत् ।।८।।
ऋणं न जायते तस्य धनप्राप्तिस्तु जायते। भूमिपुत्र महातेज: स्वेदोद्भव पिनाकिन: ।।९।।
धनार्थी त्वां प्रपन्नोऽस्मि गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते। रक्तगन्धैश्च पुष्पैश्च धूपदीपैर्गुडौदनै: ।।१०।।
मङ्गलं पूजयित्वा तु मङ्गलेऽहनि सर्वदा। ऋणरेखा: प्रकर्तव्या: खादिराङ्गारकेण तु ।।११।।
अङ्गुष्ठाग्रेण वामाङ्घ्रेरानुपूर्वीकृता: पठेत्। एकविंशतिनामानि पठित्वा तु तदन्तिके ।।१२।।
तास्तु प्रमार्जयेत् पश्चाद्वामपादेन संस्पृशन्। एवं स्तुतो महातेजा ऋणं मे नाशय प्रभो ।।१३।।
एवं भक्ति: कुजे यस्य न ऋणघ्नो धनी भवेत्।

ॐनमो भगवते अङ्गारकाय भूमिपुत्राय ऋणहर्त्रे धनप्रदाय भक्तवत्सलाय धनं मे देहि शीघ्रं हुं फट् स्वाहा। ॐआंऐंह्रींश्रींक्लींग्लौं मङ्गलाय मम ऋणविमोचनं कुरु कुरु स्वाहा धनं देहि देहि स्वाहा। गुडौदनोपहारं दत्त्वा पूजनान्ते गोधूमान्नं भुञ्जीयात्। इति मङ्गलपूजनं व्रतं च।

ऋणमोचन स्तोत्र—ऋण मोचन मंगल स्तोत्र के ऋषि गाधि छन्द अनुष्टुप् एवं देवता अंगारक कहे गये हैं। समस्त ऋण की समाप्ति के लिये ऋणमोचनपूर्वक विनियोग किया जाता हैं। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

रक्तमाल्याम्बरधरः शक्तिशूलगदाधरः। चतुर्भुजो मेषगमो वरदश्च धरासुतः।।

यह स्तोत्र ऋणग्रस्त मनुष्यों के लिये ऋणमुक्ति-प्रदायक है। मंगल, भूमिपु,, ऋणहर्ता, धनप्रद, स्थिरासन, महाकाय, सर्वकर्मावबोधक, लोहित, लोहिताङ्ग, सामगानां कृपाकर, धरात्मज, कुज, भौम, भूमिद, भूमिनन्दन, अङ्गारक, यम, सर्वरोगापहारक, वृष्टिकर्ता, वृष्ट्यहर्ता, सर्वकामफलप्रद—मंगल के इन इक्कीस नामों का जो नित्य पाठ करता है, उसे कभी भी ऋण नहीं लेना पड़ता और सदा धन प्राप्त होता है।

भूमिपुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः। धनार्थी त्वां प्रपन्नोस्मि गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते।।

इस मन्त्र से अर्घ्य प्रदान करे। लाल चन्दन, लाल फूल, धूप, दीप एवं गुड़ के खीर से सर्वदा मंगलवार में पूजा करे। खैर के कोयले से तीन रेखा खींचे। उस पर बाँयें पैर का अंगूठा रखकर इक्कीस नामों का पाठ करे। पाठ के बाद उन तीन रेखाओं को बाँयें पैर से मिटा दे और ऋणनाश के लिये प्रार्थना करे।

इस प्रकार जो मंगल की भक्ति करता है, उसे कभी भी ऋण लेने का दुःख नहीं उठाना पड़ता और वह धनी हो जाता है। इसके बाद निम्न दो मन्त्रों से आहुति प्रदान करे—

ॐ नमो भगवते अंगारकाय भूमिपुत्राय ऋणहर्त्रे धनप्रदाय भक्तवत्सलाय धनं मे देहि शीघ्रं हुं फट् स्वाहा।

ॐ आं ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ग्लौं मंगलाय मम ऋणविमोचनं कुरु कुरु स्वाहा धनं देहि देहि स्वाहा।

तदनन्तर गुड़ खीर का नैवेद्य अर्पित कर गेहूँ की रोटी खाये। इस प्रकार मंगल का पूजन एवं व्रत पूर्ण होता है।

मङ्गलव्रतकथा

अथ कथा—

सूत उवाच

पूजितो देवदेवेश देवैस्तु मङ्गलप्रदः। गौतमेन पुरा पृष्टो लोहिताङ्गो महीसुतः ।।१।।

गौतम उवाच

कथयस्व महाभाग गुह्यं पूजनमुत्तमम्। मन्त्रमाराधनं सर्वं सर्वपापप्रणाशनम् ।।२।।
रूपं सुवर्णसङ्काशं वाहनायुधसंयुतम्। येन पूजितमात्रेण जायते सुखमुत्तमम् ।।३।।
धर्मार्थकाममोक्षाणां कालेनैव फलप्रदम्। सर्वपापप्रशमनं सर्वव्याधिविनाशनम् ।।४।।
सर्वसौख्यप्रदं देवं हत्यापातकनाशनम्। सर्वयज्ञफलं प्रोक्तं सर्वकामफलप्रदम् ।।५।।
तपसा जपदानानां फलं चैव तु लभ्यते। तद्व्रतं ब्रूहि मे देव लोहिताङ्ग महाग्रह ।।६।।
यस्मिन्नाराधिते मर्त्यः सर्वसौभाग्यवान् भवेत्।

श्रीमङ्गल उवाच

शृणु विप्र महाभाग धर्मज्ञ ऋषिगौतम। व्रतं च पूजनं दानं यत्कृतं भुवनत्रये ।।७।।
आसीत् पूर्वं महाप्राज्ञो ब्राह्मणो वेदपारगः। तस्य भार्या सुनन्दीका नाम्ना ख्याता सुलोचना ।।८।।
तस्यापत्यं च सञ्जातं वन्ध्यत्वान्न कदाचन। तेनान्यस्य सुता जातु सुशीला रूपसंयुता ।।९।।
ब्राह्मणस्य कुले जाता गृहीता पोषिता ध्रुवम्। सर्वलक्षणसंपन्ना मद्व्रतेनैव गौतम ।।१०।।

पुरा जन्मनि तेनाहं चैकभावेन पूजितः। सा पुत्री स्वगृहे नीता ब्राह्मणेनैव पालिता ॥११॥
नित्यं हि पुष्पितं तस्या अष्टाङ्गं कनकेन वै। तत्सुवर्णेन विप्रोऽसौ धनसौभाग्यगर्वितः ॥१२॥
कोटीश्वरो महर्षिस्तु जातोऽस्मिन् भूमिमण्डले। दृष्ट्वा नन्दकविप्रेण दशवर्षा वरार्थिनी ॥१३॥
विवाहार्थं च विप्रस्य दत्ता सौम्येश्वरस्य च। वेदोक्तविधिना तेन विवाहमकरोत् तदा ॥१४॥
वर्षैः कतिपयैर्विप्रस्तां कन्यां प्रौढयौवनाम्। आदाय श्वशुरगृहान्निर्गतः शुभवासरे ॥१५॥
स्वदेशोपरि मार्गेण व्रजंश्चौरैस्त्वहर्निशम्। निशान्ते गह्वरे घोरे अरण्ये पर्वतोत्तमे ॥१६॥
सर्वशून्ये व्रजन् तस्मिन्महालोभेन भावितः। मार्गे चलति विप्रोऽसौ चौरैश्च विनिपातितः ॥१७॥
तं पतिं मृतमालोक्य सा नारी शोकपीडिता। पतिना सह विप्रेण मरणे समकल्पत ॥१८॥
स्वपतिं तन्मयं विश्वं चिन्तयन्ती पदे पदे। पतिं प्रदक्षिणीकृत्य चितायाश्च समीपतः ॥१९॥
तेनाहं तस्य तुष्टो हि वरार्थं च प्रणोदिता।

ब्राह्मण्युवाच

यदि तुष्टोऽसि मे देव तदा जीवतु मे पतिः ॥२०॥

मङ्गल उवाच

देव इवाजरामरस्तव भर्ता भविष्यति। अन्यद्ब्रूहि मयाख्यातं वरं त्रिभुवनोत्तमम् ॥२१॥

ब्राह्मण्युवाच

यदि तुष्टोऽसि मे देव ग्रहाणामधिपेश्वर। ये त्वां स्मरन्ति देवेश रक्तचन्दनचर्चितम् ॥२२॥
रक्तपुष्पैश्च संपूज्य प्रत्यूषे भौमवासरे। बन्धनं व्याधिरोगाश्च कदाचिन्नोपजायते ॥२३॥
न सर्पाग्निभयं मित्रवियोगो ब्राह्मणस्य वै। मा कुरुष्व महीपुत्र भक्तानां सौख्यदो भव ॥२४॥

मङ्गल उवाच

एकविंशति भौमाश्च मद्भक्ता विजितेन्द्रियाः। एकान्ते ह्यर्चितास्ते च चतुर्दीपाङ्किते गृहे ॥२५॥
अर्घ्यैश्च सकलैर्मन्त्रैर्वेदपौराणिकैस्तथा। स्वशक्त्या भोजयेद्विप्रान् दातव्यं च हिरण्यकम् ॥२६॥
युवानं रक्तवृषभं सर्वोपस्करसंयुतम्। दत्त्वा वै ग्रहपीडा तु न स्यात् तेषां कदाचन ॥२७॥
भूतवेतालडाकिन्यो न भवन्तीह हिंसकाः। एवमुक्त्वा तदा तत्र मङ्गलोऽपि दिवं गतः ॥२८॥
इदं व्रतं तदाख्यातं सर्वसौख्यप्रदायकम्। इदं व्रतं करिष्यन्ति तेषां पीडा न जायते ॥२९॥
स्त्रीभिर्व्रतं प्रकर्तव्यं पुरुषैश्च विशेषतः। तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भवत्येव न संशयः ॥३०॥

इति भविष्योत्तरे भौमव्रतम्।

मंगल व्रतकथा—पूजित होने पर देवदेवेश मंगल मंगलदायक होते हैं। पहले गौतम ने लोहिताङ्ग मंगल से पूछा कि हे महाभाग! उत्तम गुह्य पूजन मन्त्र का आराधन कहिये, जो सभी पापों का विनाशक है। स्वर्णाभ स्वरूप आयुध, वाहन से युक्त एवं जिसके पूजन से ही उत्तम सुख प्राप्त होता है, समय पर धर्म अर्थ काम मोक्ष फल प्राप्त होता है, जिससे सभी पापों का प्रशमन, सभी व्याधियों का नाश होता है; जो सभी सुखों को देने वाला; हत्या के पाप का नाशक एवं सभी यज्ञों का कथित फल तथा सर्वकामफल फलप्रद है। जिससे तप जप दान का फल प्राप्त होता है, उस लोहितांग महाग्रह के व्रत को कहिये। जिस व्रत के करने से मनुष्य सर्वसौभाग्यवान होता है।

श्री मंगल ने कहा—हे महाभाग धर्मज्ञ विप्र ऋषि गौतम! सुनिये; मैं व्रत-पूजन-दान को कहता हूँ, जो तीनों लोकों में किए जाते हैं। पूर्वकाल में महाप्राज्ञ वेदपारग सुनन्दीक नाम के एक ब्राह्मण थे। उनकी पत्नी सुनन्दीका ख्यात सुलोचना

थी। वन्ध्या होने के कारण उसे कोई सन्तान नहीं हुई। वह दूसरे ब्राह्मण कुल में उत्पन्न सुन्दर सुशील कन्या को लेकर पालन-पोषण करने लगा। उस कन्या के आठों अंगों से सोना झरने लगा। उस सोना से ब्राह्मण धन-सौभाग्य से गर्वित हो गया। भूमिमण्डल पर वह करोड़पति हो गया। दश वर्ष बीतने पर उस कन्या को विवाहयोग्य देखकर नन्दक विप्र ने उसे सौम्येश्वर को दिया। उसने वेदोक्त विधि से उसके साथ विवाह किया। कुछ वर्षों के बाद कन्या जब युवती हुई तो शुभ दिन में उसे लेकर अपने घर चला। मार्ग में घोर जंगल पड़ता था। उस निर्जन जंगल में पहाड़ के गह्वर में चोर दिन-रात विचरण करते थे। मार्ग में जाते हुए विप्र को चोरों ने मार दिया। पति को मृत देखकर नारी शोक-पीड़ित हुई और विप्र पति के साथ मरने का सङ्कल्प किया। पग-पग पर संसार को पतिमय होने का चिन्तन किया और चिता पर पति के शव को रखकर प्रदक्षिणा किया। तब मैंने प्रसन्न होकर ब्राह्मणी से वर माँगने को कहा। ब्राह्मणी ने कहा कि यदि आप मुझसे प्रसन्न हैं तो वर दीजिये कि मेरा पति जीवित हो जाय।

मंगल ने कहा—तुम्हारा पति अजर-अमर होगा। अब त्रिभुवन में उत्तम कोई अन्य वर माँगो। ब्राह्मणी ने कहा—ग्रहाधिपेश्वर! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो वर दीजिये कि जो आपका स्मरण करके लाल चन्दन, लाल फूल से मंगलवार के प्रत्यूष काल में पूजा करे, उसे बन्धन-व्याधि-रोग कभी न हो। उसे सर्प-अग्नि का भय न हो, मित्र से वियोग न हो। हे मंगल! अपने भक्तों को आप सुख प्रदान करें।

मंगल ने कहा—चार दीपों से सज्जित एकान्त गृह में मेरा जो भक्त मेरे इक्कीस नामों से अर्घ्यादि से सभी वैदिक एवं पौराणिक मन्त्रों से पूजन करता है, अपनी शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को भोजन करता है; सोना देता है, सभी उपस्करों से युक्त लाल बैल देता है; उसे ग्रहपीड़ा कभी नहीं होती। भूत-वेताल-डाकिनी का कष्ट भी उस नहीं होता। ऐसा कहकर मंगल अन्तर्ध्यान हो गये। उसी समय से यह व्रत समस्त सुखों को देने वाले के रूप में प्रसिद्ध है। इस व्रत को जो करता है, उसे पीड़ा नहीं होती। स्त्री को यह व्रत करना चाहिये। पुरुष को तो विशेषरूप से करना चाहिये। इस व्रत को जो करते हैं, उन्हें भोग-मोक्ष दोनों प्राप्त होता है।

भौमव्रतोद्यापनम्

अथ भौमव्रतोद्यापनम्—पूर्वोक्तप्रकारेणैकविंशतिभौमाः कर्तव्याः द्वाविंशतितमे उद्यापनं कार्यम्। तद्यथा—दन्तधावनादिकं पूर्ववत् कृत्वा गृहमागत्य शुद्धायां भूमौ गोधूमैस्त्रिकोणमध्ये एकविंशतिभिः कोष्ठैर्विरचितं मण्डलं कृत्वा, तत्र नानावर्णरजोभिः पूरणं प्रतिकोष्ठे च वस्त्रेणाच्छाद्य तत्तत्प्रतिमाः संस्थाप्य पूर्ववत् पूजां कुर्यात्। केचित् एतत् सर्वं प्रथमदिने सन्ध्याकालमागत्य कृत्वा रात्रौ जागरणं दीपदानं च कुर्वन्ति।

कुङ्कुमं सोदकं दद्याद्वस्त्रं दीपं तथैव च। रक्तचन्दनलिप्ताङ्गाः पञ्चरत्नविभूषिताः ॥१॥
रक्तवस्त्रपरिच्छन्ना नानाविधफलान्विताः। त्रिसप्तकलशाः कार्या रक्तवर्णाश्च निर्व्रणाः ॥२॥

रक्तचन्दनगोरोचनैर्भौमं संपूज्य रक्तपुष्पैर्मालाभिः सर्जरसधूपेन गुडौदनेन नैवेद्येन च पूजयेत्। फलार्घ्यं दद्यात्। ततो भौमादिभिर्मन्त्रैः प्रतिकुम्भं पूजां कुर्यात्। प्रदक्षिणनमस्कारांश्च कर्तव्याः। होमं घृततिलैः कुर्यात्।

अग्निर्मूर्धेति मन्त्रेण समिधोऽष्टोत्तरं शतम्। अष्टोत्तरसहस्रं वा अष्टाविंशतिरेव वा ॥३॥
होतव्या मधुसर्पिर्भ्यां दध्ना चैव घृतेन च। गृह्योक्तविधिना चैव होमं कुर्याज्जितेन्द्रियः ॥४॥
समिधः खादिरा ज्ञेया होमे चाष्टोत्तरं शतम्। भौमप्रीत्यै च विप्रेभ्यः सवस्त्रान् कलशान् दिशेत् ॥५॥
प्रतिमां दक्षिणायुक्तामाचार्याय निवेदयेत्। रथं रक्तमनुड्वाहं सर्वोपस्करसंयुतम् ॥६॥
दद्याद् व्रतसमाप्त्यर्थं सहेम प्रतिपद्य च। अन्येभ्योऽपि यथाशक्त्या दद्याद्विप्रांश्च भोजयेत् ॥७॥
ततोऽच्छिद्रव्रतवाचनम्। इति भविष्योत्तरे भौमव्रतोद्यापनम्।

भौम व्रत का उद्यापन—पूर्वोक्त प्रकार से इक्कीस मंगलवार को इस व्रत को करना चाहिये। बाईसवे मंगलवार को इसका उद्यापन करना चाहिये। उद्यापन हेतु दतुवन आदि पूर्ववत् करके अपने घर आकर लिपी-पुती शुद्ध भूमि में गेहूँ से

त्रिकोण बनावे। उसमें इक्कीस कोष्ठ बनावे। कोष्ठों को नाना वर्ण के चूर्णों से पूरित करे। प्रत्येक कोष्ठ को स्वच्छ वस्त्र से ढक दे। उस पर प्रतिमा स्थापित करके पूर्ववत् पूजा करे। किसी के मत से यह सब दिन के सन्ध्या काल में करके रात में जागरण और दीपदान करना चाहिये।

जल के साथ कुङ्कुम वस्त्र दीप से मंगल की पूजा करे। गुड़ का खीर नैवेद्य में प्रदान करे। फल के साथ अर्घ्य देवे। लाल रंग के इक्कीस कलश स्थापित करे। उसमें जल भरे। उनमें लाल वस्त्र लपेटे। पञ्चरत्न डाले। प्रत्येक कलश में भौमादि मन्त्र से पूजा करे। प्रदक्षिणा नमस्कार करे। घी, तिल से हवन अग्निर्मूर्धा मन्त्र से एक सौ आठ या एक हजार आठ या अट्ठाईस बार करे। मधु, गोघृत, दही, घी से हवन गृह्योक्त विधि से जितेन्द्रिय होकर करे। हवन में एक सौ आठ खैर की समिधा ग्रहण करे। मंगल की प्रसन्नता के लिये ब्राह्मणों को वस्त्रसहित कलशों को दान करे। आचार्य को दक्षिणासहित प्रतिमा प्रदान करे। लाल घोड़ों से युक्त रथ सभी उपस्करों के साथ एवं सोना प्रदान करे तथा अन्य विप्रों को भी यथाशक्ति दक्षिणा देकर भोजन करावे। तदनन्तर अच्छिद्र व्रत का वाचन करे।

ऋग्विधानम्

अथ ऋग्विधानम्।

अग्निरुवाच

ऋग्यजु:सामकाथर्वविधानं पुष्करोदितम्। भुक्तिमुक्तिकरं जप्याद्धोमाद्रामाय तद्वदे ॥८॥

पुष्कर उवाच

प्रतिवेदं तु कर्माणि कार्याणि प्रवदामि ते। प्रथमं ऋग्विधानं वै शृणु त्वं भुक्तिमुक्तिदम्॥९॥
अन्तर्जले तथा होमे जपतो मनसेप्सितम्। कामं करोति गायत्री प्राणायामाद्विशेषत: ॥१०॥
गायत्र्या दशसाहस्रो जपो नक्ताशिनो द्विज। बहुस्नातस्य तत्रैव सर्वकल्मषनाशन: ॥११॥
दशायुतानि जप्त्वाथ हविष्याशी स मुक्तिभाक्। प्रणवो हि परं ब्रह्म तज्जप: सर्वपापहा॥१२॥
ॐकारशतजप्तं तु नाभिमात्रोदके स्थित:। जलं पिबेत् स सर्वैस्तु पापैर्वै विप्र मुच्यते॥१३॥
मात्रात्रयं त्रयो वेदास्त्रयो देवास्त्रयोऽग्नय:। महाव्याहृतय: सप्त लोका होमोऽखिलाघहा॥१४॥
गायत्री परमा जाप्या महाव्याहृतयस्तथा। अन्तर्जले तथा राम प्रोक्तश्चैवाघमर्षण: ॥१५॥
अग्निमीळे पुरोहितं सूक्तोऽयं वह्निदैवत:। शिरसा धारयन् वह्निं यो जपेत् परिवत्सरम्॥१६॥
होमं त्रिषवणं भैक्ष्यमनग्निज्वलनं चरेत्। अत: परमृच: सप्त वायवाद्या: प्रकीर्तिता: ॥१७॥
ता जपन् प्रयतो नित्यमिष्टान् कामान् समश्नुते। मेधाकामो जपेन्नित्यं सदसस्पतिमित्यृचम्॥१८॥
अम्बयो यन्तीमा: प्रोक्ता नवर्चो मृत्युनाशना:। शुन: शेपमृचं बद्ध: सन्निरुद्धोऽथवा जपेत्॥१९॥
मुच्यते सर्वपापेभ्यो गदी वाप्यगदी भवेत्। य इच्छेच्छाश्वतं कामं मित्रं प्राज्ञं पुरन्दरम्॥२०॥
ऋग्भि: षोडशभि: कुर्यादिन्द्रस्येति दिने दिने। हिरण्यस्तूपमित्येतज्जपञ्छत्रून् प्रबाधते॥२१॥
क्षेमी भवति चाध्वन्यो ये ते पन्था जपन् नर:। रौद्रीभि: षड्भिरीशानं स्तूयाद्यो वै दिने दिने॥२२॥
चरुं वा कल्पयेद्रौद्रं तस्य शान्ति: परा भवेत्। उदित्युद्यन्तमादित्यमुपतिष्ठन् दिने दिने॥२३॥
क्षिपेज्जलाञ्जलीन् सप्त मनोदु:खविनाशनम्।

ऋग्विधान—अग्नि ने पुष्कर से पूछा कि आपने जो ऋग्यजु: साम अथर्व विधान बनाया है, उस भुक्ति-मुक्तिकर जप-होम विधान को कहिये। पुष्कर ने कहा—प्रत्येक वेद के कर्मों को कहता हूँ। पहले भोग-मोक्षप्रद ऋग्विधान सुनिये। जल में गायत्री का जप, बाद में हवन और प्राणायाम से कामनाएँ पूरी होती हैं। केवल रात में भोजन करके दश हजार गायत्री जप से सभी पापों का नाश होता है। हविष्य भोजन पर रहकर एक लाख गायत्री जप से जापक मोक्ष का भाजन होता है। 'ॐ' परम ब्रह्म का वाचक है, उसके जप से सभी पापों का नाश होता है। नाभि तक जल में खड़े होकर एक सौ गायत्री-जप से

जल को मन्त्रित करके पान करे तो विप्र सभी पापों से मुक्त हो जाता है। तीन मात्रा, तीन वेद, त्रिदेव, तीन अग्नि, सात व्याहृतियाँ भू: भुव: स्व मह: जन: तप: जन सत्य सात लोक से युक्त गायत्री से हवन सभी पापों का नाश करता है। राम ने कहा है कि परमा गायत्री का महा व्याहृतियों के साथ जल में जप करने से अघमर्षण होता है।

अग्निमीळे पुरोहितं (१.१.१) सूक्त के देवता अग्नि हैं। शिर पर अग्नि को धारण करके जो एक वर्ष तक जप-हवन तीनों सन्ध्याओं में मानसिक द्रव्यों से करता है और वायवादि (१.२.१) सात ऋचाओं का जप करता है, वह नित्य इष्ट कामों को प्राप्त करता है। बुद्धि चाहने वालो को 'सदसस्पतिमद्भुतं' (१.१८.६) आदि ऋचा का जप करना चाहिये। मृत्यु के विनाश के लिये ऋग्वेद की 'अम्बयो' (१.२३.१६) आदि नव मन्त्रों का जप करना चाहिये।

'शुन:शेप' (१.२४.१३) मन्त्र का जप करने से साधक बन्धन या अवरोध से मुक्त हो जाता है; साथ ही समस्त पापों से मुक्त हो जाता है एवं रोगी निरोग हो जाता है। जिसे शाश्वत काम एवं बुद्धिमान तथा सम्पत्तिशाली मित्र की इच्छा हो, वह ऋग्वेद की 'इन्द्रस्य' (१.३२.१) आदि सोलह ऋचाओं का प्रतिदिन पाठ करे। शत्रुबाधा होने पर 'हिरण्यस्तूप' ऋचा का जप करे। 'ये ते पन्था' (१.३५.११) ऋचा का जो जप करता है, उसका मार्ग में कल्याण होता है। रौद्री (१.४३.१) आदि छ: ऋचाओं का पाठ जो प्रतिदिन करता है और चरु से हवन करता है, उसे परा शक्ति की प्राप्ति होती हैं। 'उदिति' (१.५०.१) आदि ऋचा से जो सूर्योदय के समय सात जलाञ्जलि सूर्य को देता है उसके मनोदु:ख का नाश होता है।

द्विषन्तमित्यथार्धर्चं यद्विप्र तं जपन् स्मरेत् ॥२४॥
आगस्कृत् सप्तरात्रेण विद्वेषमधिगच्छति । आरोग्यकामी रोगी वा प्रस्कण्वस्योत्तमं जपेत् ॥२५॥
उत्तमस्तस्य चार्धर्चो जपेद्वै विविधासने । उदयत्यायुरक्षय्यं तेजो मध्यन्दिने जपेत् ॥२६॥
अस्तं प्रतिगते सूर्ये द्विषन्तं प्रतिबाधते । उप प्र चेति सूक्तानि जपञ्छत्रून् नियच्छति ॥२७॥
एकादश सुपर्णस्य सर्वकामान् विनिर्दिशेत् । आध्यात्मिकी: क इत्येता जपन् मोक्षमवाप्नुयात् ॥२८॥
आ नो भद्रा इत्यनेन दीर्घमायुरवाप्नुयात् । त्वं सोमेति च सूक्तेन नवं पश्येन्निशाकरम् ॥२९॥
उपतिष्ठेत् समित्पाणिर्वासांस्याप्नोत्यसंशयम् । आयुरीप्सन्निममिति कौत्सं सूक्तं सदा जपेत् ॥३०॥
अप न: शोशुचदिति स्तुत्वा मध्ये दिवाकरम् । यथा मुञ्चति चेषीकां तथा पापं प्रमुञ्चति ॥३१॥
जातवेदस इत्येतज्जपेत् स्वस्त्ययनं पथि । भयैर्विमुच्यते सर्वै: स्वस्तिमानाप्नुयात् गृहान् ॥३२॥
व्युष्टायाञ्च तथा रात्र्यामेतद् दु:स्वप्ननाशनम् । प्रमन्दिनेति सूयन्त्यां जपेद्गर्भविमोचनम् ॥३३॥
जपन्निन्द्रमिति स्नातो वैश्वदेवं तु सप्तकम् । मुञ्चत्याज्यं तथा जुह्वत् सकलं किल्विषं नर: ॥३४॥
इमा इति जपन् शश्वत् कामानाप्नोत्यभीप्सितान् । मानस्तोक इति द्वाभ्यां त्रिरात्रोपोषित: शुचि: ॥३५॥
औडम्बरीश्च जुहुयात् समिधश्चाज्यसंस्कृता: । छित्त्वा सर्वान् मृत्युपाशाञ्जीवेद्रोगविवर्जित: ॥३६॥
ऊर्ध्वबाहुरनेनैव, स्तुत्वा शम्भुं तथैव च । मानस्तोकेति च ऋचा शिखाबन्धे कृते नर: ॥३७॥
अधृष्य: सर्वभूतानां जायते संशयं विना । चित्रमित्युपतिष्ठेत त्रिसन्ध्यं भास्करं तथा ॥३८॥
समित्पाणिर्नरो नित्यमीप्सितं धनमाप्नुयात् । अथ स्वप्नेति च जपन् प्रातर्मध्यन्दिने दिने ॥३९॥
दु:स्वप्नं चार्दते कृत्स्नं भोजनञ्चाप्नुयाच्छुभम् । उभे पुनामीति तथा रक्षोघ्न: परिकीर्तित: ॥४०॥

'द्विषन्तं' (१.५०.१३) ऋचा का जप जो विप्र वैरी का स्मरण करते हुये करता है उसका सात रातों में विद्वेषण होता है। आरोग्यकामी या रोगी 'प्रस्कण्व' मन्त्र का जप करे। उत्तम की आधी ऋचा का जप विविध आसनों पर करे। 'उदयत्यायुरक्षय्यं तेजो' का मध्य दिन में जप करे। सूर्यास्त होने पर 'द्विषन्तं प्रतिबाधते' का जप करे। शत्रुनाश के लिये 'उप प्र च' (१.७१.१) आदि ऋचा का जप करे। 'सुपर्ण' (१.७४.१) के एकादश जप से अभीष्ट विनिर्देशित होते हैं। 'क इत्येता' (१.८८.१६) के जप से मोक्ष मिलता है। 'आ नो भद्रा' (१.८९.१) ऋचा के जप से दीर्घायु प्राप्त होती है। 'त्वं सोम'

(१.९१.१) ऋचा का जप नवोदित चन्द्रमा को देखते हुए समित्पाणि होकर बैठकर जप करे तो वस्त्र की प्राप्ति होती है। 'इमं' (१.९४.१) इस ऋचा का आयु की कामना वालों को जप करना चाहिये।

'अप नः शोशुचद्' (१.९७.१) का जप मध्याह्न में करे तो सूर्य की कृपा से पापों का नाश होता है। 'जातवेदसे सुनवाम' (१.९९.१) ऋचा के जप से कल्याण होता है। सभी भयों से मुक्ति मिलती है। घर में मंगल होता है। रात में जप करने से बुरे स्वप्न नहीं आते। 'प्रमन्दिना' (१.१०१.१) ऋचा के जप से गर्भ-विमोचन होता है।

स्नान करके 'इन्द्रमित्र वरुण' (१.१०६.१) ऋचा के जप कर वैश्वदेव को गोघृत की सात आहुति प्रदान करे तो सभी पापों का नाश होता है। 'इमा रुद्राय तप' (१.११४.१) से ऋचा के जप से सदा साधक की इच्छायें पूर्ण होती हैं। 'मानस्तोक तनये' (१.११४.८) इस ऋचा से दो दिन एवं तीन रात उपवास रहकर गूलर की समिधा को गोघृत से सिक्त करके जो हवन करता है, वह सभी मृत्युपाशों को काटकर निरोगी होकर जीवित रहता है। हाथों को ऊपर उठाकर इस मन्त्र से जो शिव की स्तुति करता है, उसे भी यही फल मिलता है। इस ऋचा से शिखाबन्धन करने पर मनुष्य के निकट कोई भूत नहीं जाता। 'चित्रं देवानामुद्गादनीकं' (१.११५.१) इस ऋचा से तीनों सन्ध्याओं में हाथों को जोड़कर जो भास्कर की स्तुति करता है, उसे मनवांछित धन मिलता है। 'अध स्वप्नस्य निर्विदे' (१.१२०.१२) इस ऋचा का जप जो प्रात: एवं मध्याह्न में करता है, उसे बुरे स्वप्न नहीं आते और शुभ भोजन मिलता है। 'उभे पुनामि रोदसी' (१.१३९.१) इस ऋचा को रक्षा करने वाला कहा गया है।

ये देवास इति ऋचो जपन् कामानवाप्नुयात्। न मा गरन्निति जपन् मुच्यते चाततायिनः ॥४१॥
कया शुभेति च जपञ्ज्ञातिश्रैष्ठ्यमवाप्नुयात्। इमं नु सोममित्येतत् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥४२॥
पितुं न्वित्युपतिष्ठेत नित्यमन्नमुपस्थितम्। अग्ने नयेति सूक्तेन घृतहोमाच्च मार्गगः ॥४३॥
वीरान्नयमवाप्नोति सुश्लोकं यो जपेत्सदा। कङ्कतो नेति सूक्तेन विषान् सर्वान् व्यपोहति ॥४४॥
यो जात इति सूक्तेन सर्वान् कामानवाप्नुयात्। गणानामिति सूक्तेन स्निग्धमाप्नोत्यनुत्तमम् ॥४५॥
यो मे राजन्नितीमान्तु दुःस्वप्नशमनीमृचम्। अध्वनि प्रस्थितो यस्तु पश्येच्छत्रुं समुत्थितम् ॥४६॥
अप्रशस्तं प्रशस्तं वा कुविन्मां गो इमं जपेत्। द्वाविंशकं जपन् सूक्तमाध्यात्मिकमनुत्तमम् ॥४७॥
पर्वसु प्रयतो नित्यमिष्टान् कामान् समश्नुते। कृणुष्वेति जपन् सूक्तं जुह्वदाज्यं समाहितः ॥४८॥
अरातीनां हरेत् प्राणान् रक्षांस्यपि विनाशयेत्। उपतिष्ठेत् स्वयं वह्निं परीत्यृचा दिने दिने ॥४९॥
तं रक्षति स्वयं वह्निर्विश्वतो विश्वतोमुखः। हंसः शुचिषदित्येतच्छुचिरीक्षेद् दिवाकरम् ॥५०॥
कृषिं प्रपद्यमानस्तु स्थालीपाकं यथाविधि। जुहुयात् क्षेत्रमध्ये तु शुनं वाहास्तु पञ्चभिः ॥५१॥
इन्द्राय च मरुद्भ्यस्तु पर्जन्याय भगाय च। यथालिङ्गं तु विहरेल्लाङ्गलं तु कृषीवलः ॥५२॥
युक्तो धान्याय सीतायै सुनासीरावथोत्तरम् (४.५७.५)।
गन्धमाल्यैर्नमस्कारैर्यजेदेताश्च देवताः ॥५३॥
प्रवापने प्रलवने खलसीतापहारयोः। अमोघं कर्म भवति वर्धते सर्वदा कृषिः ॥५४॥
समुद्रादिति सूक्तेन कामानाप्नोति पावकात्। विश्वानि न इति द्वाभ्यां य ऋग्भ्यां वह्निमर्हति ॥५५॥
स तरत्यापदः सर्वा यशः प्राप्नोति चाव्ययम्। विपुलां श्रियमाप्नोति जयं प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥५६॥
अग्ने त्वमिति च स्तुत्वा धनमाप्नोति वाञ्छितम्। प्रजाकामो जपेन्नत्यं वरुणदैवतत्रयम् ॥५७॥
स्वस्त्यात्रेयं जपेत् प्रातः सदा स्वस्त्ययनं महत्। स्वस्ति पन्था इति प्रोच्य स्वस्तिमान् व्रजतेऽध्वनि ॥५८॥

'ये देवासो दिव्येकादशस्थ' (१.१३९.१) ऋचा के जप से सभी मनोरथ मूर्ण होते हैं। 'न मा गरन्नद्यो मातृतमा' (१.१५८.५) ऋचा के जप से आततायियों से छुटकारा होता है। 'कया शुभा सवयसः' (१.१६५.१) ऋचा के जप से श्रेष्ठता प्राप्त होती है। 'इमं नु सोममन्तितो' (१.१७९.५) ऋचा के जप से सभी इच्छायें पूरी होती हैं। 'पितुं नु स्तोषं महो'

(१.१८७.१) ऋचा का जप जो करता है, उसे नित्य अन्न प्राप्त होता है। 'अग्ने नय सुपथा राये' (१.१८९.१) ऋचा का जप जो सदा-सर्वदा करता है और घी से हवन करता है, वह रास्ते में वीरों द्वारा नमस्कार प्राप्त करता है। 'कङ्कतो न कंकतोऽथो' (१.१९१.१) सूक्त के जप से विष के समस्त प्रभावों का नाश होता है। 'यो जात एव प्रथमो' (२.१२.१) सूक्त के जप से सभी कामनायें पूरी होती हैं। 'गणानान्त्वा गणपतिं हवामहे' (२.२३.१) ऋचा के जप से उत्तम स्निग्ध पदार्थ प्राप्त होते हैं। 'यो मे राजन्युज्यो वा सखा' (२.२८.१०) यह ऋचा बुरे स्वप्नों का नाश करती है। मार्ग में शत्रु की देखकर अप्रशस्त या प्रशस्त रूप से जो 'कुविन्मां गो' (३.४३.५) ऋचा का जप करता है, उसकी रक्षा होती है। ऋग्वेद के बाईसवें सूक्त का जप करने से आध्यात्मिकता प्राप्त होती है। पर्वों में विधिपूर्वक जो इसका जप करता है, उसे समस्त अभीष्ट प्राप्त होते हैं। 'कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वी' (४.४.१) सूक्त का जप करते हुए गोघृत से हवन करने पर दुष्टों के वध के साथ-साथ राक्षसों का भी नाश होता है। 'परि ते दूलभो' (४.१०.८) ऋचा का पाठ प्रतिदिन करने से स्वयं अग्नि उठकर विश्वतोमुख होकर विश्व की रक्षा करते हैं। 'हंसः शुचिषद्' (४.४०.५) इस ऋचा से सूर्य की आराधना करके इस ऋचा के अर्थ के अनुसार फल प्राप्त करे। कृषक अपने खेत में स्थालीपाक विधि से इन्द्र, मरुत् पर्जन्य एवं भग के लिये 'शुनं वाहा शुनं नरः' (४.५७.४) आदि पाँच मन्त्र से हवन करे तो अपनी सीमा तक उसकी भूमि में निर्बाध रूप से हल चलता है। 'शुनासीर' (४.५७.५) ऋचा से गन्ध-माला एवं नमस्कार से उक्त देवताओं की पूजा करे तो पैदावार बढ़ती है। 'समुद्रादूर्मिर्मधुआँ (४.५८.१) आदि सूक्त के जप से अग्नि साधक की इच्छाओं को पूर्ण करते हैं। 'विश्वानि नो दुर्गहा जातवेदः' (५.४.९) आदि दो ऋचा के जप से अग्नि प्रसन्न होते हैं। साधक के सभी आपदाओं का समापन होता है। एवं अव्यय यश की प्राप्ति होती है। उसे बहुत धन मिलता है और उत्तम विजय मिलती है। 'अग्ने त्वं नो अन्तम उत' (५.२४.१) ऋचा से स्तुति करने पर वाञ्छित धन मिलता है। प्रजा की कामना से नित्य वरुण दैवत त्रय का जप करना चाहिये। 'स्वस्ति नो मिमीताश्विना' (५.५१.११) इस स्वस्त्ययन का प्रातःकाल में सदा जप करना चाहिये। 'स्वस्ति पन्था मनु चरेम' (५.५१.१५) ऋचा का उच्चारण कर यात्रा करने से व्यक्ति का कल्याण होता है।

विजिहीष्व वनस्पते शत्रूणां व्याधितं भवेत्। स्त्रिया गर्भप्रमूढाया गर्भमोक्षणमुत्तमम् ॥५९॥
अच्छावदेति सूक्तं च वृष्टिकामः प्रयोजयेत्। निराहारः क्लिन्नवासा न चिरेण प्रवर्षति ॥६०॥
मनसः काममित्येतां पशुकामो नरो जपेत्। कर्दमेन इति स्नायात् प्रजाकामः शुचिव्रतः ॥६१॥
अश्वपूर्वामिति स्नायाद्राज्यकामस्तु मानवः। रोहिते चर्मणि स्नायाद्ब्राह्मणस्तु यथाविधि ॥६२॥
राजा चर्मणि वैयाघ्रे छागे वैश्यस्तथैव च। दशसाहस्त्रिको होमः प्रत्येकं परिकीर्तितः ॥६३॥
आगाव इति सूक्तेन गोष्ठे गां लोकमातरम्। उपतिष्ठेद् व्रजेच्चैव यदीच्छेत्ताः सदाक्षयाः ॥६४॥
उपेति तिसृभी राज्ञो दुन्दुभिमभिमन्त्रयेत्। तेजो बलं च प्राप्नोति शत्रुं चैव नियच्छति ॥६५॥
तृणपाणिर्जपेत् सूक्तं रक्षोघ्नं दस्युभिर्वृतः। ये के च ज्मेत्यृचं जप्त्वा दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥६६॥
जीमूतसूक्तेन तथा सेनाङ्गान्यभिमन्त्रयेत्। यथालिङ्गं ततो राजा विनिहन्ति रणे रिपून् ॥६७॥
आग्नेयेति त्रिभिः सूक्तैर्धनमाप्नोति चाक्षयम्। अमीवहेति सूक्तेन भूतानि स्वापयेन्निशि ॥६८॥
संबाधे विषमे दुर्गे बन्धो(द्धो) वा निर्गतः क्वचित्। पलायन् वा गृहीतो वा सूक्तमेतत्तथा जपेत् ॥६९॥
त्रिरात्रं नियतोऽपोष्य श्रपयेत् पायसं चरुम्। तेनाहुतिशतं पूर्णं जुहुयात् त्र्यम्बकेत्यृचा ॥७०॥
समुद्दिश्य महादेवं जीवेदब्दशतं सुखम्। तच्चक्षुरित्यृचा स्नात उपतिष्ठेद् दिवाकरम् ॥७१॥
उद्यन्तं मध्यगं चैव दीर्घमायुर्जिजीविषुः। (सूक्ताभ्यां पर एताभ्यां महतीं भूतिमाप्नुयात्) ॥७२॥
इन्द्रासोमेति सूक्तं तु कथितं शत्रुनाशनम्। यस्य लुप्तं व्रतं मोहाद् व्रात्यैर्वा संसृजेत् सह ॥७३॥
उपोष्याज्यं स जुहुयात् त्वमग्ने व्रतपा इति। अदितीत्यृक् च साम्राजं जप्त्वा वादे जयी भवेत् ॥७४॥
नहीति च चतुष्केण मुच्यते महतो भयात्। ऋचं जप्त्वा यदीत्येतत् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥७५॥

'विजिहीष्व वनस्पते' (५.७८.५) ऋचा के जप से शत्रु की खेती में रोग लग जाता है। ऋग्वेद की ५.७८.७ ऋचा से गर्भवतियों का गर्भपात हो जाता है। 'अच्छा वद' (५.८३.१) ऋचा का जप वर्षा के लिये किया जाता है। निराहार रहकर भीगे वस्त्र धारण किये ही इस ऋचा का यदि जप करे तो अल्प काल में ही वर्षा होती है। पशु की कामना से श्रीसूक्त की दशवीं ऋचा 'मनसः काममाकू का जप करना चाहिये। प्रजा की कामना से पवित्रतापूर्वक व्रत का आचरण कर स्नान के बाद श्रीसूक्त की ऋचा ग्यारहवीं 'कर्दमेन प्रजा भूता' का जप करना चाहिये। राज्य की कामना से स्नान करके श्रीसूक्त की तीसरी ऋचा 'अश्वपूर्वां रथमध्यां' का जप करना चाहिये। तथा ब्राह्मण को मृग-चर्म पर, राजा को व्याघ्रचर्म पर एवं वैश्य को अजाचर्म पर बैठकर दश-दश हजार हवन भी करना चाहिये। 'आ गावो अग्मन्नुत' (६.२८.१) ऋचा का प्रयोग गोशाला में बैठकर या खड़े होकर इच्छानुसार करे तो गायों की वृद्धि होती है। 'उपश्वासय पृथिवीमुत द्या' (६.४७.२९) ऋचा के तीन जप से राजा ढोल को अभिमन्त्रित करे तो उसके तेज एवं बल की वृद्धि होती है और युद्ध में शत्रु का नाश होता है। डाकुओं से घिरने पर रक्षोघ्न सूक्त (४.४.१) का जप हाथों में घास लेकर करना चाहिये। 'ये के च ज्मा' (६.५२.१५) ऋचा के जप से दीर्घायु प्राप्त होती है। 'जीमृतस्येव भवति प्रतीकं' (६.७५.१) मन्त्र से अपनी सेना के अंगों को अभिमन्त्रित करने से राजा युद्ध में शत्रु को मार गिराता है। 'अग्नि नरो दीधितिभिररण्यो' (७.१.१-३) आदि तीन सूक्तों के जप से अक्षय धन प्राप्त होता है। 'अमीवहा वास्तोष्पते' (७.५५.१) रात में स्वप्न में भूतबाधा होने पर, दुर्गम किले में बन्दी होने पर कहीं जाने पर, किसी के भाग जाने पर या किसी के द्वारा पकड़ लिये जाने पर सूक्त का जप करना चाहिये। तीन रातों तक उपवास रहकर पायस चरु का पाक करे और 'त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं (७.५९.१२) ऋचा से एक सौ आहुतियों से हवन महादेव को उद्देश्य कर करे तो सौ वर्ष तक जीवित रहता है। 'तच्चक्षुर्देवहितं' ऋचा से स्नान करके सूर्योदय से मध्याह्न तक सूर्य के सामने बैठकर इसी ऋचा का जप करे तो साधक दीर्घ काल तक जीवित रहता है। इसके बाद के दो सूक्त के जप से बहुत धन मिलता है। 'इन्द्रा सोमा तपतं रक्ष' (८.११.१) सूक्त शत्रु-विनाशक कहा गया है। मोह के कारण अथवा पतितों से स्पर्श के कारण जिसका व्रत भंग हो गया हो, वह उपवास करके 'त्वमग्रे व्रतपा असि देव आ' (८.११.१) ऋचा से गाय के घी से हवन करे। 'अदितिर्नो दिवा पशु' (८.१८.६) इस ऋचा के जप से वाद-विवाद में जीत होती है। 'न हि वो अस्त्यर्भको' (८.३०.१-४) आदि चार ऋचाओं के जप से साधक भयंकर भय से मुक्त होता हैं। 'यदि मे रारणः सृत' (८.३२.६) ऋचा के जप से सभी अभीष्ट सिद्ध होते हैं।

द्वाचत्वारिंशतं चैन्द्रं जप्त्वा नाशयते रिपून्। ऋचं महीति जप्त्वा च प्राप्नोत्यारोग्यमेव च ॥७६॥
शन्नो भवेति द्वाभ्यां तु भुक्त्वान्नं प्रयतः शुचिः। हृदयं पाणिना स्पृष्ट्वा व्याधिभिर्नाभिभूयते ॥७७॥
उत्त्वा मन्दन्त्विति स्नातो हुत्वा शत्रुं प्रमापयेत्। त्वन्नोऽग्ने इति सूक्तेन हुतेनान्नमवाप्नुयात् ॥७८॥
कन्या वारिति सूक्तेन त्वग्दोषाद्विप्र मुच्यते। यदद्य केच्चत्युदिते जप्ते वश्यं जगद्भवेत् ॥७९॥
यद्वागिति च जप्तेन वाणी भवति संस्कृता। वचोविदमिति त्वेता जयन् वाचं समश्नुते ॥८०॥
पवित्राणां पवित्रं तु पावमान्यो ह्यृचो मताः। वैखानसा ऋचस्त्रिंशत् पवित्राः परमा मताः ॥८१॥
ऋचो द्विषष्टिः प्रोक्ताश्च पवस्वेत्यृषिसत्तम। सर्वकल्मषनाशाय पावनाय शिवाय च ॥८२॥
स्वादिष्ठयेति सूक्तानां सप्तषष्टिरुदाहृता। दशोत्तरा ऋचां चैताः पावमान्यः शतानि षट् ॥८३॥
एतज्जपंश्च जुह्वच्च घोरं मृत्युभयं जयेत्। आपो हि ष्ठेंति वारिस्थो जपेत् पापभयार्दने ॥८४॥
प्र देवत्रेति नियतो जपेच्च मरुधन्वसु। प्राणान्तिके भये प्राप्ते क्षिप्रमायुस्तु विन्दति ॥८५॥
प्रावेपा मेत्यृचमेकां जपेच्च मनसा निशि। व्युष्टायामुदिते सूर्ये द्यूते जयमवाप्नुयात् ॥८६॥
मा प्र गामेति मूढश्च पन्थानं पथि विन्दति। क्षीणायुरिति मन्येत यं कञ्चित् सुहृदं प्रियम् ॥८७॥
यत्ते यममिति स्नातस्तस्य मूर्धानमालभेत्। सहस्रकृत्वः पञ्चाहं तेनायुर्विन्दते महत् ॥८८॥
इदमित्थेति जुहुयाद् घृतं प्राज्ञः सहस्रशः। पशुकामो गवां गोष्ठे अन्नकामश्चतुष्पथे ॥८९॥

वयः सुपर्णा इत्येतां जपन्वै विन्दते श्रियम्। हविष्पान्तीयमभ्यस्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥९०॥
तस्य रोगा विनश्यन्ति कायाग्निर्वर्धते तथा। या ओषधीः स्वस्त्ययनं सर्वव्याधिविनाशनम् ॥९१॥
बृहस्पते प्रतीत्येतद् वृष्टिकामः प्रयोजयेत्। सर्वत्रेति परा शान्तिर्ज्ञेयाऽप्रतिरथं तथा ॥९२॥
भूतांशं काश्यपं नित्यं प्रजाकामस्य कीर्तितम्। अहं रुद्रेति च जपेद्वाग्मी भवति मानवः ॥९३॥
न योनौ जायते विद्वान् जपन्नात्रीति रात्रिषु। रात्रिसूक्तं जपन् रात्रौ रात्रिं क्षेमी नयेन्नरः ॥९४॥
कल्पयन्तीति च जपेन्नित्यं कृत्वारिनाशनम्। (आयुष्यं चैव वर्चस्यं सूक्तं दाक्षायणं महत्)॥९५॥
उत देवा इति जपेदामयघ्नं धृतव्रतः। अयमग्ने जरित्येतज्जपेदग्निभये सति ॥९६॥
अरण्यानीत्यरण्येषु जपेत्तद्भयनाशनम्। ब्राह्मीमासाद्य सूक्ते द्वे वचां ब्राह्मीं शतावरीम् ॥९७॥
पृथगद्भिर्घृतैर्वाद्य मेधां लक्ष्मीं च विन्दति। शास इत्यसपत्नघ्नं संग्रामं विजिगीषतः ॥९८॥
ब्रह्मणाग्निः संविदानं गर्भमृत्युनिवारणम्। अपेहीति जपेत् सूक्तं शुचिर्दुःस्वप्ननाशनम् ॥९९॥
तुभ्येदमिति वै जप्त्वा समाधिं विन्दते परम्। मयोभूर्वात इत्येतद्गवां स्वस्त्ययनं महत् ॥१००॥
शाम्बरीमिन्द्रजालं वा मायामेतेन वारयेत्। महि त्रीणामवोऽस्त्विति पथि स्वस्त्ययनं जपेत् ॥१०१॥
प्रागनयेति द्विषन्नेवं जपेच्च रिपुनाशनम्। वास्तोष्पत्येन मन्त्रेण यजेत गृहदेवताः ॥१०२॥
जपस्यैष विधिः प्रोक्तो हुते ज्ञेयो विशेषतः। होमान्ते दक्षिणा देया पापशान्तिर्हुतेन तु ॥१०३॥
हुतं शाम्यति चान्नेन अन्नं हेमप्रदानतः। विप्राशिषस्त्वमोघाः स्युर्बहिः स्नानं तु सर्वतः ॥१०४॥
सिद्धार्थका यवा धान्यं पयो दधि घृतं तथा। क्षीरवृक्षास्तथेध्मं तु होमा वै सर्वकामदाः ॥१०५॥
समिधः कण्टकिन्यश्च राजिका रुधिरं विषम्। अभिचारे तथा शैलमशनं सक्तवः पयः ॥१०६॥
दधि भैक्ष्यं फलं मूलमृग्विधानमुदाहृतम्।

इति ऋग्विधानम्।

'आ द्या ये अग्निमिम्धते' (८.४५.१) ऋचा के बयालीस जप से शत्रुओं का नाश होता है। 'महि वो महतामवो' (८.४७.१) ऋचा के जप से आरोग्य मिलता है। 'शन्नो भव हृद आपीत (८.४८.४) ऋचा का हृदय पर हाथ रखकर पवित्रतापूर्वक जप करके जो भोजन करता है, उसे व्याधि नहीं होती। स्नान करके 'उत्त्वा मन्दन्तु स्तोमाः' (८.६४.१) ऋचा से हवन करने पर शत्रु का नाश होता है। 'त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि' (८.७१.१) ऋचा से हवन करने पर अन्न प्राप्त होता है। 'कन्या वारवायती' (८.९१.१) ऋचा के जप से विप्र त्वचा के रोग से मुक्त होता है। सूर्योदय काल में 'यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा' (८.९३.४) ऋचा के जप से सारा संसार वश में होता है। 'यद्वाग् वदन्त्यविचेतनानि (८.१००-१०) ऋचा के जप से वाणी परिमार्जित होती है। वचोविदं वाचमदीरयन्ती' (८.१०२.१६) ऋचा के जप से वाणी प्रखर होती है। पवित्र पावमानी ऋचाओं में से 'वैखानसा' (९.६६.१) इत्यादि तीन सौ ऋचायें अत्यन्त पवित्र कही गई है। 'पवस्व' एवं कल्याण करने वाली कही गई हैं। 'स्वादिष्ठया' (९.१.१) आदि सड़सठ और दो सौ दस ऋचाओं को पवमान कहा जाता है। इनके जप और इनसे हवन करने पर घोर मृत्युभय पर भी विजय प्राप्त होती। 'आपो हिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन महे रणाय चक्षसे' (१०.९.१) इस ऋचा का जप जल में खड़े होकर करने से पापों के भय का नाश होता है। 'प्र देवत्रा ब्रह्मणों (१०.३०.१) प्राणान्त का भय उपस्थित होने पर ऋचा का जप करने से कष्टों का निवारण होता है। 'प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति' (१०.३४.१) ऋचा का रात्रि में एवं सूर्योदय के समय मानसिक जप करने से जुये में जीत होती है। 'मा प्र गाम पथो वयं' (१०.५७.१) ऋचा का जप करने से मार्ग में कल्याण होता है। यदि कोई सुहृद क्षीणाय हो रहा हो अर्थात् मरणासन्न हो तो 'यत्ते यमं वैवस्वतं' (१०.५८.१) ऋचा से स्नान कराकर उसके मूर्धा पर पाँच दिनों तक एक हजार बार अभिषेक करने से उसके आयु की वृद्धि होती है। पशु की कामना से गोशाला में एवं अन्न की कामना से चौराहे पर 'इदमित्था रौद्रं' (१०.६१.१) ऋचा से एक हजार हवन करना चाहिये। 'वयः सुपर्णा उप सेदुरिन्द्रं' (१०.७३.११) इस ऋचा के जप से घर में लक्ष्मी का

निवास होता है। 'हविष्पान्तमजरं स्वर्विदि' (१०.८८.१) इस ऋचा के जप से सभी पापों का नाश होता है। रोगों का नाश होता है एवं शरीर में अग्नि की वृद्धि होती है। 'या ओषधी पूर्वा जाता (१०.९७.१) इस ऋचा के स्वस्त्ययन से सभी व्याधियाँ नष्ट होती हैं। 'वृहस्पते प्रति मे देवता मिहि' (१०.९८.१) इस ऋचा के प्रयोग से वर्षा होती है। 'आशु: शिशानो वृषभो न भीमो' (१०.१०३.१) इस अप्रतिरथ सूक्त के जप से सर्वत्र परा शान्ति होती है। 'उभा उनूनं तदिदर्थयेथे' (१०.१०६.१) इस भूतांश काश्यप ऋचा के नित्य जप से प्रजा की वृद्धि होती हैं। 'अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः' (१०.१२५.१) इस ऋचा के जप से मनुष्य वक्ता होता है। रात्रिसूक्त का रात्रि में जप करने से बुद्धिमान् पुरुष का पुनर्जन्म नहीं होता। 'रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा' (१०.१२७.१) इस रात्रिसूक्त के जप से मनुष्य क्षेमयुक्त होता है। 'कल्पयन्ती' (१०.१३०.५६) ऋचा के जप से शत्रु का नाश होता है एवं आयु तथा वर्चस्व प्राप्त होता है। 'उत देवा अवहितं' (१०.१३७.१) ऋचा का व्रती होकर जप करने से रोगों का नाश होता है। 'अयमग्ने जरितात्वे अभूदपि' (१०.१४२.१) इस ऋचा का जप अग्निभय का विनाशक है। 'अरण्यान्यरण्यान्यसौ' (१०.१४६.१) इस ऋचा का जप अरण्यभय का नाशक है। दो सूक्तों से ब्राह्मी को लाकर वच, शतावर एवं ब्राह्मी को अलग-अलग घी अथवा जल में पाक कर इसे खाने से बुद्धि एवं लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। 'शास इत्था महाँ' (१०.१५२.१) यह ऋचा वैरियों का विनाशक एवं है। संग्राम में विजयप्रद है। 'ब्रह्मणाग्नि: संविदानो' (१०.१६२.१) यह ऋचा गर्भमृत्यु का निवारक है। इसके प्रयोग से गर्भस्राव नहीं होता। 'अपेहि मनसस्पते' (१०.१६४.१) इस सूक्त का पवित्र होकर जप करने से बुरे स्वप्नों का विनाश होता है। 'तुभ्येदमिन्द्र परिषिच्यते' (१०.१६७.१) इस ऋचा के जप से परम समाधि प्राप्त होती है। 'मयोभूर्वातो अभि' (१०.१६९.१) यह ऋचा महास्वस्त्ययन स्वरूप है। इससे शाम्बरी इन्द्रजाल का निवारण होता है। 'महि त्रीणामवोऽस्तु धुक्षं' (१०.१८५.१) इस ऋचा का जप मार्ग में कल्याण के लिये करना चाहिये। 'प्रागनये वाचमीरय' (१०.१८७.१) इस ऋचा के जप से शत्रुओं का नाश होता है।

'वास्तोष्पतये' (७.५४.१) मन्त्र से गृह देवता का पूजन करना चाहिये। इसके जप और हवन की विधि पूर्व में कही गई है। हवन के बाद दक्षिणा भी देनी चाहिये। हवन से पाप-शान्ति होती है। दक्षिणा में ब्राह्मणों को अन्न, सोना देना चाहिये। विप्रों का आशीर्वाद अमोघ होता है। सरसो, यव, धान्य, दूध, दही, घी से हवन क्षीरवृक्ष की लकड़ी से ज्वलित अग्नि में करना चाहिये; इससे कामनाओं की पूर्ति होती है। कण्टकी समिधा राई रुधिर विष से हवन अभिचार में होता है। शूल का शमन सत्तू और दूध से होता है। दही भैक्ष्य फल एवं मूल का विधान ऋग्वेद में बताया गया है।

यजुर्विधानम्

अथ यजुर्विधानम्—

यजुर्विधानं वक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदं शृणु। ॐकारपूर्विका राम महाव्याहृतयो मताः ॥१॥
सर्वकल्मषनाशिन्यः सर्वकामप्रदास्तथा। आज्याहुतिसहस्रेण देवानाराधयेद् बुधः ॥२॥
मनसः काङ्क्षितं राम मनसेप्सितकामदम्। शान्तिकामो यवैः कुर्यात्तिलैः पापापनुत्तये ॥३॥
धान्यैः सिद्धार्थकैश्चैव सर्वकामकरैस्तथा। औडुम्बरीभिरिध्माभिः पशुकामस्य शस्यते ॥४॥
दध्ना चैवान्नकामस्य पयसा शान्तिमिच्छतः। अपामार्गसमिद्भिस्तु कामयन् कनकं बहु ॥५॥
कन्याकामो घृताक्तानि युग्मशो ग्रथितानि तु। जातीपुष्पाणि जुहुयाद् ग्रामार्थी तिलतण्डुलान् ॥६॥
वश्यकर्मणि शाखोटं वासापामार्गमेव च। विषासृङ्मिश्रसमिधो व्याधिघातश्च भार्गव ॥७॥
क्रुद्धस्तु जुहुयात् सम्यक् शत्रूणां वधकाम्यया। सर्वव्रीहिमयीं कृत्वा राज्ञः प्रतिकृतिं द्विज ॥८॥
सहस्रशस्तु जुहुयाद्राजा वशगतो भवेत्। वस्त्रकामस्य पुष्पाणि दूर्वा व्याधिविनाशिनी ॥९॥
ब्रह्मवर्चसकामस्य वासोग्रं च विधीयते। प्रत्यङ्गिरेषु जुहुयात् तुषकण्टकभस्मभिः ॥१०॥
विद्वेषणे च पक्षाणि काककौशिकयोस्तथा। कापिलं च घृतं हुत्वा तथा चन्द्रग्रहे द्विज ॥११॥
वचाचूर्णेन संपातान् समानीय च तां वचाम्। सहस्रमन्त्रितां भुक्त्वा मेधावी जायते नरः ॥१२॥

एकादशाङ्गुलं शङ्कुं लौहं खादिरमेव च। द्विषतो वधोऽसीति जपन्निखनेद्रिपुवेश्मनि ॥१३॥
उच्चाटनमिदं कर्म शत्रूणां कथितं तव। चक्षुष्या इति जप्त्वा च विनष्टं चक्षुराप्नुयात् ॥१४॥
उपयुञ्जत इत्येतदनुवाकं तथान्नदम्। तनूपा अग्ने सदिति (३.१७)दूर्वां हुत्वार्तिवर्जितः ॥१५॥
भेषजमसीति दध्याज्यैर्होमः पशूपसर्गनुत्। त्रियम्बकं यजामहे होमः सौभाग्यवर्धनः ॥१६॥
कन्यानाम गृहीत्वा तु कन्यालाभकरः परः। भयेषु तु जपन्नित्यं भयेभ्यो विप्र मुच्यते ॥१७॥
धत्तूरपुष्पं सघृतं हुत्वा स्यात् सर्वकामभाक्। हुत्वा तु गुग्गुलं राम स्वप्ने पश्यति शङ्करम् ॥१८॥

यजुर्विधान—भोग-मोक्षप्रद यजुर्विधान इस प्रकार है—ॐ राम, भूः राम एवं भुवः राम स्वः राम यह मन्त्र सभी का विनाशक एवं सर्वकामप्रदायक है। गाय के घी से एक हजार आहुतियाँ देकर देव का आराधन करने पर मनोवांछायें पूर्ण होती हैं। शान्ति की कामना से यव से हवन करे। पापों से मुक्ति के लिये तिल से हवन करे। धान्य और सरसों से हवन करने पर सभी मनोरथ पूरे होते हैं। पशु की कामना से गूलर की समिधा से हवन करे। अन्न की कामना से दही से और शान्ति के लिये दूध से हवन करे। चिड़चिड़ा की समिधा से हवन करने पर बहुत सोना मिलता है। दो-दो ग्रथित जातीपुष्पों को घृताक्त करके हवन करने से विवाह में पत्नी मिलती है। ग्रामप्राप्ति के लिये तिल एवं चावल से हवन करे। वशीकरण के लिये शाखोट वासा चिड़चिड़ा की समिधाओं से हवन करे। व्याधियों से मुक्ति के लिये विष एवं रक्तमिश्रित समिधाओं से हवन करे। शत्रुवध की कामना से क्रुद्ध होकर हवन करना चाहिये, समस्त व्रीहियों से राजा की प्रतिकृति बनाकर एक हजार हवन करे तो राजा वश में होता है। वस्त्र की कामना से पुष्पों से हवन करे। दूर्वा से हवन व्याधिविनाशक होता है। ब्रह्मवर्चस् की कामना से वासाग्र से हवन करे। प्रत्यंगिरा में तुष कण्टक भस्म से हवन करे। विद्वेषण के लिये कौआ एवं उल्लू के पंखों से हवन करे। चन्द्रग्रहण में कपिला गाय के घी से हवन करे। हुत-शेष बून्दों को वचाचूर्ण पर टपकावे एवं उसे एक हजार जप से अभिमन्त्रित करके खा जाय तो मनुष्य मेधावी होता है। लोहा या खैर के ग्यारह अंगुल लम्बे शंकु को 'द्विषतो वधो असिति' मन्त्र से मन्त्रित करके शत्रु के घर में गाड़ दे तो उसका उच्चाटन होता है। 'चक्षुष्य' मन्त्र के जप से विनष्ट चक्षु भी ठीक हो जाता है। 'उपयुंजत' अनुवाक के जप से अन्न प्राप्त होता है। यजुर्वेद के अध्याय ३ की सत्रहवीं ऋचा 'तनूपाऽअग्नेऽसि' आदि का उच्चारण करते हुये दूर्वा से हवन करने पर दुःखों का नाश होता है। 'भेषजमसि भेषजंगवे' (३.५९) ऋचा के द्वारा दही एवं गोघृत के हवन से पशुरोग का प्रशमन होता है। 'त्र्यम्बकं यजामहे' (३.६०) इन ऋचाओं के द्वारा हवन करने से सौभाग्य की वृद्धि होती है। कन्या का नाम लेकर इसका जप करने से उस कन्या के साथ विवाह होता है। भय की स्थिति में इसका जप करने से विप्र भयमुक्त होता है। घृताक्त धत्तूर के फूलों से हवन करने पर सभी कार्य होते हैं। गुग्गुल से हवन करने पर स्वप्न में शंकर जी का दर्शन होता है।

युञ्जते मनोऽनुवाकं जप्त्वा दीर्घायुराप्नुयात्। विष्णो रराटमित्येतत् सर्वबाधाविनाशनम् ॥१९॥
रक्षोघ्नं च यशस्यं च तथैव विजयप्रदम्। अयन्नो अग्निरित्येतत् सङ्ग्रामे विजयप्रदम् ॥२०॥
इदमापः प्रवहत स्नाने पापापनोदनम्। विश्वकर्मन् हविषेति सूचीं लौहीं दशाङ्गुलाम् ॥२१॥
कन्याया निखनेद् द्वारि साऽन्यस्मै न प्रदीयते। देव सवितरेतेन हुतेनान्नेन चान्नवान् ॥२२॥
अग्ने स्वाहेति जुहुयाद्बलकामो द्विजोत्तम। तिलैर्यवैश्च धर्मज्ञ तथापामार्गतण्डुलैः ॥२३॥
सहस्रमन्त्रितां कृत्वा तथा गोरोचनां द्विज। तिलकं च तया कृत्वा जनस्य प्रियतामियात् ॥२४॥
रुद्राणां च तथा जप्यं सर्वाघविनिसूदनम्। सर्वकर्मकरो होमस्तथा सर्वत्र शान्तिदः ॥२५॥
अजाविकानामश्वानां कुञ्जराणां तथा गवाम्। मनुष्याणां नरेन्द्राणां बालानां योषितामपि ॥२६॥
ग्रामाणां नगराणां च देशानामपि भार्गव। उपद्रुतानां धर्मज्ञ व्याधितानां तथैव च ॥२७॥
मरके समनुप्राप्ते रिपुजे च तथा भये। रुद्रहोमः परा शान्तिः पायसेन घृतेन च ॥२८॥
कूष्माण्डघृतहोमेन सर्वान् पापान् व्यपोहति। सक्तुयावकभैक्षाशी नक्तं मनुजसत्तम ॥२९॥

बहि:स्नानरतो मासान्मुच्यते ब्रह्महत्यया। मधु वातेति मन्त्रेण होमादितोऽखिलं लभेत्॥३०॥
दधि क्राब्णोति हुत्वा तु पुत्रान् प्राप्नोत्यसंशयम्। तथा घृतवतीत्येतदायुष्यं स्याद् घृतेन तु॥३१॥
स्वस्ति न इन्द्र इत्येतत् सर्वबाधाविनाशनम्। इह गाव: प्रजायध्वमिति पुष्टिविवर्धनम्॥३२॥
घृताहुतिसहस्रेण तथाऽलक्ष्मीविनाशनम्। स्रुवेण देवस्य त्वेति हुत्वापामार्गतण्डुलम्॥३३॥
मुच्यते विकृताच्छीघ्रमभिचारान्न संशय:। रुद्र यत्ते पलाशस्य समिद्भि: कनकं लभेत्॥३४॥
शिवो भवेत्यग्न्युत्पाते व्रीहिभिर्जुहुयान्नर:। या: सेना इति चैतच्च तस्करेभ्यो भयापहम्॥३५॥

'युञ्जते मनो' (५.१४) के जप से आयु लम्बी होती है। 'विष्णो रराटमसि' (५.२१) ऋचा के जप से सभी बाधाओं का नाश होता है। यह ऋचा राक्षसों का नाश करने वाली, यश प्रदान करने वाली एवं विजय देने वाली है। 'अयं नोऽअग्निर्वरिवस्कृणो त्वयं मृध:' (५.३७) ऋचा के जप से युद्ध में विजय मिलती है। स्नान के समय 'इदमाप: प्रवहतावद्यं' (६.१७) ऋचा के जप से पापमोचन होता है। 'विश्वकर्म्मन् हविषा वर्द्धनेन' (८.४६) इससे अभिमन्त्रित दश अंगुल लम्बे लोहे के कील को जिस कन्या के द्वार पर गाड़ दिया जाता है, उस कन्या का विवाह दूसरे से नहीं होता। 'देव सवितरेष ते' (५.३९) ऋचा से अन्न के द्वारा हवन से अन्न प्राप्त होता है। बल के लिये द्विजोत्तम तिल, यव, अपामार्ग, तण्डुल से 'अग्ने स्वाहा कृणुहि' (२७.२२) इस ऋचा के एक हजार जप से हवन करे। गोरोचन का टीका लगावे तो वह लोगों का प्रिय पात्र होता है। सभी पापों के नाश के लिये रुद्रीय से हवन करे। इससे सभी कार्य होते हैं एवं सर्वत्र शान्ति मिलती है। बकरी, घोड़ों, हाथियों, गौओं, मनुष्यों, राजाओं, बालिकाओं, युवतियों, ग्रामों, नगरों, देशों में, उपद्रवों, व्याधियों में और मारी होने पर या शत्रुभय होने पर पायस घी से रुद्र होम करने पर परा शान्ति होती है। घृताक्त कुष्माण्डखण्डों से हवन करने पर पापों का नाश होता है। रात में सत्तू-यावक का भोजन करके प्रात: स्नान कर होकर हवन करने से एक महीने में ब्रह्महत्या के पाप का भी नाश हो जाता है। 'मधुवाताऽऋतायते' (१३.२७) इस ऋचा से हवन करने पर सब कुछ प्राप्त होता है। 'दधि क्राव्णोऽ अकारिषं' (२३.३२) इस ऋचा से हवन करने पर असंशय पुत्र प्राप्त होता है। 'घृतवती भुवनानाम्' (३४.४५) इस ऋचा के द्वारा घी से हवन करने पर आयु बढ़ती है। 'स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवा:' (२५.२९) यह ऋचा सभी बाधाओं की विनाशिका है। यह गौओं और प्रजाओं की पुष्टिप्रदायिका है। इससे एक हजार घृताहुति से अलक्ष्मी का नाश होता है। 'स्रुवेण देवस्य' (५.२२) मन्त्र से अपामार्ग के बीजों से हवन करे तो अभिचारकृत कष्टों से शीघ्र मुक्त हो जाता है। रुद्री के द्वारा पलाश की समिधा से हवन करने पर सोना मिलता है। 'शिवो भव प्रजाभ्यो' (११.४५) इस मन्त्र से अग्नि का उत्पात होने पर चालव से हवन करना चाहिये। 'या: सेनाऽअभीत्वरी' (११.७७) इसके जप से तस्कर भयभीत होते हैं।

योऽस्मभ्यमरातीयाद् हुत्वा कृष्णतिलान्नर:। सहस्रशोऽभिचाराच्च मुच्यते विकृताद् द्विज॥३६॥
अन्नेनान्नपतेत्येवं हुत्वा चान्नमवाप्नुयात्। हंस: शुचिषदित्येतज्जप्तं तोयेऽघनाशनम्॥३७॥
चत्वारि शृङ्गेत्येतत्तु सर्वपापहरं जले। देवा यज्ञेति जप्त्वा तु ब्रह्मलोके महीयते॥३८॥
वसन्तेति च हुत्वाज्यमादित्याद्वरमाप्नुयात्। सुपर्णोऽसीति चेत्यस्य कर्म व्याहृतिवद्भवेत्॥३९॥
नम: सुतेति त्रिर्जप्त्वा बन्धनान्मोक्षमाप्नुयात्। अन्तर्जले त्रिरावर्त्य द्रुपदा सर्वपापनुत्॥४०॥
इह गाव: प्रजायध्वं मन्त्रोऽयं बुद्धिवर्धन:। हुतस्तु सर्पिषा दध्ना पयसा पायसेन वा॥४१॥
शतं व इति (१२.७६) वैतेन हुत्वा पर्णफलानि च। आरोग्यं श्रियमाप्नोति जीवितञ्च चिरं तथा॥४२॥
ओषधी: प्रतिमोदध्वं वपने लवनेऽर्थकृत्। अश्वावतीं पायसेन होमाच्छान्तिमवाप्नुयात्॥४३॥
उच्छुष्मा इति मन्त्रेण बन्धनस्थो विमुच्यते। युवा सुवासा इत्येव वासांस्याप्नोत्यनुत्तमम्॥४४॥
मुञ्चन्तु मा शपथ्येति सर्वान्तकविनाशनम्। मा मा हिंसीस्तिलाज्येन हुतं रिपुविनाशनम्॥४५॥
नमोऽस्तु सर्वसर्पेभ्यो घृतेन पायसेन च। कृणुष्व पाज इत्येतदभिचारविनाशनम्॥४६॥
दूर्वाकाण्डायुतं हुत्वा काण्डात्काण्डेति मानव:। ग्रामे जनपदे वापि मरकं तु शमं नयेत्॥४७॥

रोगार्तो मुच्यते रोगात्तथा दुःखात्तु दुःखितः। औडुम्बरीश्च समिधो मधुमान्नो वनस्पतिः ॥४८॥
हुत्वा सहस्रशो राम धनमाप्नोति मानवः। सौभाग्यं महदाप्नोति व्यवहारे तथा जयम् ॥४९॥
अपां गम्भनिति हुत्वा देवं वर्षापयेद् ध्रुवम्। अपां त्वेमेति (१३.५३) च तथा हुत्वा दधि घृतं मधु ॥५०॥
प्रवर्तयति धर्मज्ञ महावृष्टिमनन्तरम्। नमस्ते रुद्र इत्येतत् सर्वोपद्रवनाशनम् ॥५१॥
सर्वशान्तिकरं प्रोक्तं महापातकनाशनम्। अध्यवोचदित्यनेन रक्षणं व्याधितस्य तु ॥५२॥
रक्षोघ्नं च यशस्यं च चिरायुःपुष्टिवर्धनम्। सिद्धार्थकानां क्षेपेण पथि चैतज्जपन् सुखी ॥५३॥
असौ यस्ताम्र इत्येतत् पश्यन्नित्यं दिवाकरम्। उपतिष्ठेत धर्मज्ञ सायं प्रातरतन्द्रितः ॥५४॥
अन्नमक्षयमाप्नोति दीर्घमायुश्च विन्दति। प्र मुञ्च धन्वनेत्येतत् षड्भिरायुधमन्त्रणम् ॥५५॥
रिपूणां भयदं युद्धे नात्र कार्या विचारणा। मा नो महान्त इत्येवं बालानां शान्तिकारकम् ॥५६॥

योऽअस्मभ्यमरातीयाद्यश्च (११.८०) इस ऋचा से जो मनुष्य काले तिल से एक हजार हवन करता है, वह आभिचारिक कष्टों से मुक्त हो जाता है। 'अन्नपतेऽन्नस्य नो' (११.८३) इस ऋचा से हवन करने पर अन्न प्राप्त होता है। 'हंसः शुचिषद् वसुरुतरिक्ष' (१०.२४) जल में खड़े होकर इसका जप करने से पापों का नाश होता है। 'चत्वारि श्रृंगा त्रयोऽअस्य पादा' (१७.९१) जल में खड़े होकर जप करने से सभी पापों का क्षय होता है। 'देवा यज्ञमतन्वत' (१९.१२) इस ऋचा के जप से ब्रह्मलोक में वास होता है। 'वसन्ताय कपिञ्जलानालभते' (२४.२०) इस ऋचा के द्वारा गाय के घी से हवन करने पर सूर्य का वर मिलता है। 'सुपर्णोऽसि गरुत्माँस्त्रिवृत्ते' (१२.४) मन्त्र के कर्म व्याहृति के समान होते हैं। 'नमः सुते निर्ऋते तिग्मतेजो' (१२.६३) इस ऋचा के तीन जप से बन्धा हुआ व्यक्ति स्वतन्त्र घूमता है। 'द्रुपदादिव मुमुचानः' (२०.२०) इस ऋचा का जल में खडे होकर तीन बार जप करने से सभी पापों का नाश होता है। 'इह गावः प्रजायध्वं' मन्त्र बुद्धि को बढ़ाने वाला है। इस मन्त्र से गाय के घी, दूध, दही, पायस से एक सौ हवन करने पर बुद्धि की वृद्धि होती है। 'शतं वोऽअम्ब धामानि' (१२.७६) इस ऋचा के द्वारा पत्तों और फल से हवन करने पर आरोग्य, श्री और दीर्घ आयु प्राप्त होती है। 'ओषधीः प्रतिमोदध्वं' (१२.७७) इसके जप से धन मिलता है। 'अश्वावतीं सोमावती' (१२.८१) इस ऋचा द्वारा पायस से हवन करने पर शान्ति प्राप्त होती है। 'उच्छुष्मा ओषधीनां गावो' (१२.८२) इस ऋचा के जप से कैदी कैद से छूट ज़ाता है। 'युवा सुवासा' के जप से उत्तम वस्त्र प्राप्त होते हैं। 'मुञ्चन्तु मा शपथ्यादयो' इस ऋचा के जप से सभी राक्षसों का नाश होता है। 'मा मां हिंसीज्जनिता यः' (१२.१०२) इस ऋचा द्वारा तिल और घी से हवन करने पर शत्रुओं का नाश होता है। 'नमोऽस्तु सर्पेभ्यो' (१३.६) इस ऋचा से घी और पायस से हवन करने से भी शत्रुओं का नाश होता है। 'कृणुष्व पाजः प्रसितिं (१३.९) इसके जप से अभिचार कर्म का नाश होता है। 'काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती' (१३.२०) इस ऋचा द्वारा दूर्वाकाण्डों से दश हजार हवन करने पर ग्राम या जनपद में फैले महामारी का नाश होता हे। रोगी रोगमुक्त होता है और दुःखी सुखी हो जाता है। 'मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाऽअस्तु सूर्ये। माध्वीर्गावो भवन्तु नः' (१३.२९) इस ऋचा से गूलर की समिधा से एक हजार हवन करने पर मनुष्य को धन प्राप्त होता है, महान् सौभाग्य मिलता है और व्यवहार में जीत होती है। 'अपां गम्भन्त्सीद मा त्वा' (१३.२०) इस ऋचा से हवन करने पर देवता अवश्य वर्षा करते हैं। 'अपां त्वमे' (१३.५३) ऋचा द्वारा दधि. घृत, मधु से हवन करने पर लगातार होने वाली वर्षा को रोका जा सकता है। 'नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो' (१६.१) इस ऋचा से सभी उपद्रवों का नाश होता है। यह सर्वशान्तिकर और महापातकनाशक है। 'अध्यवोचदधिवक्ता' (१६.५) यह मन्त्र व्याधियों से रक्षा करता है। साथ ही पर राक्षसों का नाशक एवं यश-दीर्घायु और पुष्टि की वृद्धि करने वाला है। इससे अभिमन्त्रित सरसों को मार्ग में छीटने से यात्रा सुगम होती है। 'असौ यस्ताम्रौ' (१३.६) इस ऋचा का जप कर सूर्य का दर्शन कर सूर्य के सामने निरालस होकर प्रातः सन्ध्या में बैठकर जप करे तो उसे अक्षय अन्नभण्डार मिलता है। साथ ही वह दीर्घकाल तक जीवित रहता है। 'प्र मुञ्च धन्वनस्त्वमुभयो' (१६.९) इस ऋचा के छः जप से आयुधों को अभिमन्त्रित करे तो युद्ध में शत्रुओं के लिये वे आयुध भयप्रद होते हैं। 'मा नो महान्तमुत' (१६.१५) यह ऋचा बालकों के लिये शान्तिकारक है।

नमो हिरण्यबाहवे इत्यनुवाकसप्तकम्। राजिकां कटुतैलाक्तां जुहुयाच्छत्रुनाशिनीम् ॥५७॥
नमो वः किरिकेभ्यश्च पद्मलक्षाहुतैर्नरः। राज्यलक्ष्मीमवाप्नोति तथा बिल्वैः सुवर्णकम् ॥५८॥
इमा रुद्रायेति तिलैर्होमाच्च धनमाप्यते। दूर्वाहोमेन चान्येन सर्वव्याधिविवर्जितः ॥५९॥
आशुः शिशान इत्येतदायुधानां च रक्षणे। संग्रामे कथितं राम सर्वशत्रुनिवर्हणम् ॥६०॥
वाजश्च मेति जुहुयात् सहस्रं पञ्चभिर्द्विज। आज्याहुतीनां धर्मज्ञ चक्षूरोगाद्विमुच्यते ॥६१॥
शन्नो वनस्पते गेहे होमः स्याद्वास्तुदोषनुत्। अग्न आयूंषि हुत्वाज्यं द्वेषं नाप्नोति केनचित् ॥६२॥
अपां फेनेति(१९.७१)लाजाभिर्हुत्वा जयमवाप्नुयात्। भद्रा इतीन्द्रियैर्हीनो जपन् स्यात् सकलेन्द्रियः ॥६३॥
अग्निश्च पृथिवी चेति वशीकरणमुत्तमम्। अध्वनेति जपन्मन्त्रं व्यवहारे जयी भवेत् ॥६४॥
ब्रह्म राजन्यमिति च कर्मारम्भे तु सिद्धिकृत्। संवत्सरोऽसीति घृतैर्लक्षहोमादरोगवान् ॥६५॥
केतुं कृण्वन्नित्येतच्च संग्रामे जयवर्धनम्। इन्द्रोऽग्निर्वर्म इत्येतद्रणे वर्मनिबन्धनम् ॥६६॥
धन्वना गेति मन्त्रश्च धनुर्ग्रहणकः परः। ऋजीतेति तथा मन्त्रो विज्ञेयो ह्यभिमन्त्रणे ॥६७॥
मन्त्रश्चाहिरिवेत्येतच्छराणां मन्त्रणे भवेत्। बह्वीनां पिता इत्येतत्तूणमन्त्रः प्रकीर्तितः ॥६८॥
युञ्जन्तीति तथाश्वानां योजने मन्त्र उच्यते। आशुः शिशान इत्येतद्यात्रारम्भणमुच्यते ॥६९॥
विष्णोः क्रमेति मन्त्रश्च रथारोहणिकः परः। आजङ्घन्तीति चाश्वानां ताडनीयमुदाहृतम् ॥७०॥
याः सेना अभीत्वरीति परसैन्यमुखे जपेत्। दुन्दुभ्य इति चाप्येतद् दुन्दुभीताडनं भवेत् ॥७१॥
एतैः पूर्वैर्हुतैर्मन्त्रैः कृत्वैवं विजयी भवेत्। यमेन दत्तमित्यस्य कोटिहोमाद्विचक्षणः ॥७२॥
रथमुत्पादयेच्छीघ्रं सङ्ग्रामे विजयप्रदम्। आ कृष्णेन तथैतस्य कर्म व्याहृतिवद्भवेत् ॥७३॥
शिवसङ्कल्पजापेन समाधिं मनसो लभेत्। पञ्चनद्यः पञ्चलक्षं हुत्वा लक्ष्मीमवाप्नुयात् ॥७४॥
यदाबध्नन् दाक्षायणा मन्त्रेणानेन मन्त्रितम्। सहस्रकृत्वः कनकं धारयेद्रिपुवारणम् ॥७५॥
इमं जीवेभ्य इति च शिलां लोष्टं चतुर्दिशम्। क्षिपेद् गृहे तदा तस्य न स्याच्चोरभयं निशि ॥७६॥
परी मे गामनेषेति वशीकरणमुत्तमम्। हन्तुमभ्यागतस्तत्र(स्य) वशी भवति मानवः ॥७७॥
भक्ष्यताम्बूलपुष्पाद्यं मन्त्रितं तु प्रयच्छति। यस्य धर्मज्ञ वशगः सोऽस्य शीघ्रं भविष्यति ॥७८॥
शन्नो मित्रः शमित्येतत्सदा सर्वत्र शान्तिदम्। गणानां त्वा गणपतिं कृत्वा होमं चतुष्पथे ॥७९॥
वशीकुर्याज्जगत्सर्वं सर्वधान्यैरसंशयम्। हिरण्यवर्णाः शुचयो मन्त्रोऽयमभिषेचने ॥८०॥
शन्नो देवीरभिष्टये तथा शान्तिकरः परः। एकचक्रेति मन्त्रेण हुतेनाज्येन भागशः ॥८१॥
ग्रहेभ्यः शान्तिमाप्नोति प्रसादं च न संशयः। गावो भग इति द्वाभ्यां हुत्वाज्यं गा अवाप्नुयात् ॥८२॥
प्रवादांशः सोपदिति ग्रहयज्ञे विधीयते। देवो वनस्पतिरिति द्रुमयज्ञे विधीयते ॥८३॥
गायत्री वैष्णवी ज्ञेया तद्विष्णोः परमं पदम्। सर्वपापप्रशमनं सर्वकामकरं तथा ॥८४॥

इति यजुर्विधानम्।

'नमो हिरण्य बाहवे' (१६.१७) इस अनुवाक सप्तक से राई एवं कड़ुआ तेल के मिश्रण से हवन शत्रुनाशक होता है। 'नमो व: किरिकेभ्यो देवानां' (१६.४६) इस ऋचा से एक लाख हवन कमल फूलों से करने पर राज्यलक्ष्मी प्राप्त होती है, बेल से हवन करने पर सोना प्राप्त होता है। 'इमा रुद्राय तपसे कपर्दिने' (१६.४८) इस ऋचा के द्वारा तिल के हवन से धन प्राप्त होता है। एवं दूर्वा के हवन से सभी व्याधियों से मुक्त होकर साधक निरोग होता है। 'आशु: शिशानो वृषभो न भीमो' (१७.३३) इस ऋचा से आयुधों को मन्त्रित करे तो युद्ध में सभी शत्रुओं का नाश होता है। 'वाजश्च मे प्रसवश्च मे' (१८.१) इस ऋचा से द्विज पाँच हजार आज्याहुतियों से हवन करे तो आँखों का रोग ठीक हो जाता है। 'शन्नो वनस्पते' से घर में हवन करने से वास्तुदोष छूट जाता है। 'अग्नऽ आयूंषि' (१९.३८) इस ऋचा द्वारा गोघृत से हवन करने पर किसी से द्वेष

नहीं प्राप्त होता। 'अपां फेनेन नमुचे:' (१९.७१) इस ऋचा द्वारा धान के लावा से हवन करने पर युद्ध में जय होती है। 'भद्राऽउत प्रशस्तयो' (१५.२९) इस ऋचा के जप से इन्द्रियहीन मनुष्य सभी इन्द्रियों से युक्त हो जाता है। 'अग्निश्च पृथिवी च सन्नते ते मे' (२६.१) इस ऋचा से उत्तम वशीकरण होता है। 'अध्वनस्कुरु संज्ञानमस्तु मेऽमुना (२६.१) इस मन्त्र के जप से व्यवहार में जीत होती है। 'ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाथ चारणाय' (२६.२) कर्म के आरम्भ में इस मन्त्र के जप से कार्यसिद्धि मिलती है। 'संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसीदा' (२७.४५) इस मन्त्र से एक लाख हवन घी से करने पर रोगी निरोग होता है। 'केतुं कृण्वन्न केतवे पेशो' (२९.३९) यह मन्त्र संग्राम में जय की वृद्धि करने वाला है। 'इन्द्रो अग्नि' मन्त्र से कवच धारण करके युद्ध में जाने से जीत होती है। 'धन्वना गा धन्वनानि' (२९.३९) इस मन्त्र से धनुष ग्रहण करना चाहिये। 'ऋजीते परिवृधि' (२९.४९) इस मन्त्र से धनुष को अभिमन्त्रित करके धारण करना चाहिये। 'अहिरिव भोगै: पर्येति' (१९.५१) इस मन्त्र से बाणों को अभिमन्त्रित करना चाहिये। 'बह्वीनां पिता बहुरस्य' (२९.४२) इस मन्त्र से तरकश को अभिमन्त्रित करना चाहिये। 'युञ्जन्ति ब्रघ्नमरुणं (२३.५) इस मन्त्र से घोड़ों को रथ में जोड़े। 'आशु: शिशानो वृषभो' का पाठ करके यात्रा का प्रारम्भ करे। 'विष्णो: क्रमोऽसि सपत्नहा गायत्रं (१२.५) इस मन्त्र का पाठ करके रथ पर सवार होना चाहिये। 'आजङ्घन्ति सान्वेषा' (२९.५०) इस मन्त्र से घोड़ों ताड़न करना चाहिये। 'या: सेनाऽअभीत्वरीरा' (११.७७) इस मन्त्र का शत्रुसेना के सामने जप करना चाहिये। 'दुन्दुभ्य' मन्त्र से ढोल बजवाना चाहिये। उपर्युक्त सभी मन्त्रों से हवन करने पर विजयी होता है। 'यमेन दत्तं' (२९.१३) इस मन्त्र से एक करोड़ हवन करने पर रथ मिलता है, जिससे युद्ध में शीघ्र विजय मिलती है। 'आकृष्णेन रजसा वर्तमानो' (३३.४३) इसके जप से समस्त उपर्युक्त कर्म व्याहृति के समान होते हैं। 'यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं' (३४.१) इसके जप से मन में समाधि प्राप्ति होती है। 'पञ्चनद्य: सरस्वतीमपि' (३४.११) इस मन्त्र से पाँच लाख हवन करने पर लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यं' (३४.५२) इस मन्त्र के एक हजार जप से मन्त्रित सोना धारण करने से शत्रुओं का निवारण होता है। 'इमं जीवेभ्य: परिधिं दधामि' (३५.१५) इस मन्त्र से पत्थर के टुकड़ों को मन्त्रित करके घर के चारो ओर रखने से चारो का भय नहीं रहता। 'परी मे गामनेषत' (३५.१८) यह उत्तम वशीकरण मन्त्र है। इसके जप से साधक को मारने के लिये आया हुआ व्यक्ति उसके वशीभूत हो जाता है। इस मन्त्र से मन्त्रित पान-फूल आदि जिसे दिया जाता है, वह शीघ्र वश में हो जाता है। 'शन्नो मित्र: शं वरुण' (३६.९) इसके जप से सर्वत्र शान्ति रहती है। 'गणानां त्वा गणपतिं' से चौराहे पर हवन करने से सारे संसार को वश में किया जा सकता है एवं सभी धान्य उसके घर में उपस्थित हो जाते हैं। 'हिरण्यवर्णा: शुचयो' मन्त्र से अभिषेक करना चाहिये। 'शन्नो देवीरभिष्टये' (३६.१२) यह परम शान्तिकारक मन्त्र है। 'एकचक्रे' मन्त्र से गोघृत से भागश: हवन करे तो इससे ग्रहशान्ति होती है एवं साधक पर ग्रहों की कृपा होती है। 'गावो भग' मन्त्र से गोघृत से हवन करने पर गायें मिलती हैं। 'प्रवादांश: सोपद:' से ग्रहयज्ञ का विधान किया जाता है। 'देवो वनस्पति: देवमिन्द्र' (२८.४३) इस मन्त्र से द्रुमयज्ञ का विधान किया जाता है। 'तद्विष्णो: परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरय: दिवीव चक्षुराततम्' इसे विष्णुगायत्री कहते हैं। यह सभी पापों की विनाशिका और सर्व काम-प्रदायिका है।

सामविधानम्

अथ सामविधानम्—

यजुर्विधानं कथितं वक्ष्ये साम्नां विधानकम्। संहितां वैष्णवीं जप्त्वा हुत्वा स्यात्सर्वकामभाक् ॥१॥
संहितां छान्दसीं साधु जप्त्वा प्रीणाति शङ्करम्। स्कान्दीं पैत्र्यां संहितां च जप्त्वा स्यात्तु प्रसादवान् ॥२॥
यत इन्द्र भयामहे हिंसादोषविनाशनम्। अवकीर्णी मुच्यते च अग्निस्तिग्मेति वै जपन् ॥३॥
सर्वपापहरं ज्ञेयं परितोषिञ्चता सुतम्। अविक्रेयं च विक्रीय जपेद् घृतवतीति च ॥४॥
अद्य नो देव सवितर्ज्ञेयं दु:स्वप्ननाशनम्। अबोध्यग्निरिति मन्त्रेण घृतं राम यथाविधि ॥५॥
अभ्युक्ष्य घृतशेषेण मेखलाबन्ध इष्यते। स्त्रीणां यासां तु गर्भाणि पतन्ति भृगुसत्तम ॥६॥
मणिं जातस्य बालस्य बध्नीयात्तदनन्तरम्। सोमं राजानमेतेन व्याधिभिर्विप्र मुच्यते ॥७॥
सर्पसाम प्रयुञ्जानो नाप्नुयात् सर्पजं भयम्। माद्य त्वा वाद्यतेत्येतद् हुत्वा विप्र सहस्रश: ॥८॥

शतावरिमणिं बद्ध्वा नाप्नुयाच्छत्रुतो भयम्। दीर्घतमसोऽर्क इति हुत्वान्नं प्राप्नुयाद् वसु ॥९॥
समिन्यायन्तीति जपन् न म्रियेत पिपासया। त्वमिमा ओषधी ह्येतज्जप्त्वा व्याधिं न चाप्नुयात् ॥१०॥
पथि देवव्रतं जप्त्वा भयेभ्यो विप्र मुच्यते। यदिन्द्रो अनयदिति हुतं सौभाग्यवर्धनम् ॥११॥
भगो न चित्र इत्येवं नेत्रयोरञ्जनं हितम्। सौभाग्यवर्धनं राम नात्र कार्या विचारणा ॥१२॥
जपेदिन्द्रेति वर्गं च तथा सौभाग्यवर्धनम्। परि प्रिया दिवःकविः काम्यां संश्रावयेत् स्त्रियम् ॥१३॥
सा तं कामयते राम नात्र कार्या विचारणा। रथन्तरं वामदेव्यं ब्रह्मवर्चसवर्धनम् ॥१४॥
प्राशयेद्बालकं नित्यं वचाचूर्णं घृतप्लुतम्। इन्द्रमिहासिनं जप्त्वा भवेच्छ्रुतिधरस्त्वसौ ॥१५॥
हुत्वा रथन्तरं जप्त्वा पुत्रमाप्नोत्यसंशयम्। मयि श्रीरिति मन्त्रोऽयं जप्तव्यः श्रीविवर्धनः ॥१६॥
वैरूप्यस्याष्टकं नित्यं प्रयुञ्जानः श्रियं लभेत्। सप्ताष्टकं प्रयुञ्जानः सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥१७॥
गव्येषु णेति यो नित्यं सायं प्रातरतन्द्रितः। उपस्थानं गवां कुर्यात्तस्य स्युस्ताः सदा गृहे ॥१८॥
घृताक्तं तु यवद्रोणं वात आवातु भेषजम्। अनेन हुत्वा विधिवत् सर्वा मायां व्यपोहति ॥१९॥
प्रदैवो दासेन तिलान् हुत्वा कार्मणकृन्तनम्। अभि त्वा पूर्वपीतये वषट्कारसमन्वितम् ॥२०॥
वासकेध्मसहस्रं तु हुतं युद्धे जयप्रदम्। हस्त्यश्वपुरुषान् कुर्याद्बुधः पिष्टमयान् शुभान् ॥२१॥
परकीयानथोद्देश्य प्रधानपुरुषांस्तथा। सुस्विन्नान् पिष्टकवरान् क्षुरेणोत्कृत्य भागशः ॥२२॥
अभि त्वा शूर नो नुमो मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्। कृत्वा सर्षपतैलाक्तान् प्रोक्तेन जुहुयात्ततः ॥२३॥
एतत् कृत्वा बुधः कर्म सङ्ग्रामे जयमाप्नुयात्। गारुडं वामदेव्यं च रथन्तरबृहद्रथौ ॥२४॥
सर्वपापप्रशमनः कथितः संशयं विना।

इति सामविधानम्।

साम-विधान—यजुर्विधान के विवेचन के उपरान्त सामवेद का विधान कहा जा रहा है। वैष्णवी संहिता के जप और उससे हवन करने पर सभी मनोरथ पूरे होते हैं। इस छान्दसी संहिता के जप से शंकर प्रसन्न होते हैं। स्कान्दी संहिता के जप से पितरों को प्रसन्नता प्राप्त होती है और साधक उनकी कृपा से युक्त होता है। 'यत इन्द्र भयामहे' (१२.२१) इस मन्त्र के जप से हिंसादोष का नाश होता है। 'अग्निस्तिग्मेन शोचिषा' (२२) इस मन्त्र के जप से व्रतभ्रष्ट दोषमुक्त होते हैं। 'परितो षिञ्चता सुतं' (५१२) यह मन्त्र सभी पापों का विनाशक कहा गया है। 'घृतवती भुवनानामभि' (३७८) इस मन्त्र का जप करने से व्यापारियों को लाभ होता है। 'अघानो देव सवितः' (१४१) इस मन्त्र के जप से बुरे स्वप्न नहीं आते। 'अबोध्यग्निर्ज्म उदेति सूर्यो' (१७५८) इस मन्त्र से घी का अभ्युक्षण करके शेष घी से मेखलाबन्धन करके जिस स्त्री को गर्भपात होता हो उसे उस मेखला को बाँधने से गर्भपात नहीं होता। उसके बाद जातक शिशु के गले में मणि बाँधनी चाहिये। 'सोमं राजानं वरुणमग्नि' (९१) इसके जप से विप्र व्याधिमुक्त होता है। इन मन्त्र द्वारा सरसों से हवन करने पर सर्पों का भय नहीं रहता। 'माद्य त्वा बाधते' मन्त्र से एक हजार हवन करने पर और शतावरि मणि को बाँधने से विप्र को शत्रुभय नहीं होता। 'दीर्घ तमसोऽर्क' मन्त्र से हवन करने पर अन्न प्राप्त होता है। 'समिन्यायन्ति' मन्त्र के जप से प्यास से मृत्यु नहीं होती। 'त्वमिमा ओषधीः सोम' (६०४) इस मन्त्र के जप से व्याधि नहीं होती एवं मार्ग में भय नहीं होता। 'यदिन्द्रो अनयद्रितो' (१४८) इस मन्त्र से हवन करने पर सौभाग्य की वृद्धि होती है। 'भगो न चित्रो अग्निर्महोना:' (४४९) यह यह मन्त्र नेत्रों के लिये हितकर अञ्जन सदृश एवं सौभाग्य वर्धन है। इन्द्र वर्ग का जप सौभाग्यवर्द्धक है। परिप्रया दिव: (४७६) इसके जप से स्त्रियाँ कामविह्वल होती हैं एवं साधक की कामिनी होती हैं। 'रथन्तरं वामदेव्यं' ब्रह्म तेज को बढ़ाने वाला है। 'इन्द्रमिहासिनं' मन्त्र के जप से साधक श्रुतिधर होता है। बालक को नित्य घृतप्लुत वचाचूर्ण खिलाना चाहिये। 'रथन्तर' से हवन करके जप करने से पुत्र प्राप्त होता है। 'मयि श्री' मन्त्र के जप से श्री जी वृद्धि होती है। वैरूप्य अष्टक से नित्य हवन करने पर धन प्राप्त होता है। सात अष्टक से हवन करने पर सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं। 'व्येषु गण' (१८६) इस मन्त्र से नित्य प्रात:-सायं अतन्द्रित होकर गायों

का उपस्थान करने से घर में सदा गायों का झुण्ड रहता है। 'वात आवातु भेषजं (१८४) इस मन्त्र से विधिवत् हवन करने पर सभी माया का नाश होता है। प्रदैवो दासो अग्निर्देव' (५१) इस मन्त्र से तिल का हवन करना सभी बुरे कर्मों का नाशक होता है। 'अभि त्वा पूर्व पीतय' (१५७३) इस मन्त्र के साथ वषट् जोड़कर सुगन्धित समिधा से हवन करने पर युद्ध में विजय होती है।

हाथी-घोड़े के विष्टा को मिलाकर उस विष्टा में परकीया तथा प्रधान पुरुष के उद्देश्य से अन्न मिलाकर बड़ा पिष्टक बनाकर उसे छूरे से काटे। उसे सरसों तेल से सिक्त करे और 'अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा' आदि मन्त्र से हवन करे। ऐसा करने से युद्ध में जय होती है। गारुड़, वामदेव्य, रथन्तर, बृहद्रथ सूक्त सभी पापों के नाशक कहे गये हैं।

अथर्वविधानम्

अथाथर्वविधानम्—

साम्नां विधानं कथितं वक्ष्ये चाथर्वणमथ। शान्तातीयं गणं हुत्वा शान्तिमाप्नोति मानवः ॥१॥
भैषज्यं च गणं हुत्वा सर्वान् रोगान् व्यपोहति। त्रिसप्तीयं गणं हुत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥२॥
क्वचिन्नाप्नोति च भयं हुत्वा चैवाभयं गणम्। न क्वचिज्जायते राम गणं हुत्वापराजितम् ॥३॥
आयुष्यं च गणं हुत्वा अपमृत्युं व्यपोहति। स्वस्तिमाप्नोति सर्वत्र हुत्वा स्वस्त्ययनं गणम् ॥४॥
श्रेयसा योगमाप्नोति हुत्वाथर्वगणं तथा। वास्तोष्पत्यं गणं हुत्वा वास्तुदोषान् व्यपोहति ॥५॥
तथा रौद्रगणं हुत्वा सर्वान् दोषान् व्यपोहति। एतैर्दशगणैर्होमो ह्यष्टादशसु शान्तिषु ॥६॥
वैष्णवी शान्तिरैन्द्री तु ब्राह्मी रौद्री तथैव च। वायव्या वारुणी चैव कौबेरी भार्गवी तथा ॥७॥
प्राजापत्या तथा त्वाष्ट्री कौमारी वह्निदेवता। मारुद्गणा च गान्धर्वी शान्तिर्नैर्ऋतकी तथा ॥८॥
शान्तिराङ्गिरसी याम्या पार्थिवी सर्वकामदा। यस्त्वां मृत्युरिति ह्येतज्जप्तं मृत्युविनाशनम् ॥९॥
सुपर्णस्त्वेति हुत्वा च भुजगैर्नैव बाध्यते। इन्द्रेण वृत्तमित्येतत् सर्वबाधाविनाशनम् ॥१०॥
इमा देवीति मन्त्रश्च सर्वशान्तिकरः परः। देवा मरुत इत्येतत् सर्वकामकरं भवेत् ॥११॥
यमस्य लोकादित्येतद् दुःस्वप्नशमनं परम्। इन्द्रं वयं वणिजेति पण्यलाभकरं परम् ॥१२॥
कामो मे राजेति हुतं स्त्रीणां सौभाग्यवर्धनम्। तुभ्यमेव जरिमन्नित्ययुतं तु हुतं भवेत् ॥१३॥
अग्ने गोभिर्न इत्येतत् मेधावृद्धिकरं परम्। ध्रुवं ध्रुवेणेति हुतं स्थानलाभकरं भवेत् ॥१४॥
युनक्तिसीरा वियुगा कृषिलाभकरं भवेत्। अयं ते योनिरित्येतत् पुत्रलाभकरं भवेत् ॥१५॥
अहन्ते भग इत्येतद्भवेत् सौभाग्यवर्धनम्। ये मे पाशास्तथाप्येतद् बन्धनान्मोक्षकारणम् ॥१६॥
अहन्नहन्निति रिपून्नाशयेद्धोमजाप्यतः। त्वमुत्तममिति वैतद् यशोबुद्धिविवर्धनम् ॥१७॥
यथा मृगवतीत्येतत् स्त्रीणां सौभाग्यवर्धनम्। येन देही त्विदं चैव गर्भलाभकरं भवेत् ॥१८॥
शिवः शिवाभिरित्येतत् क्रुद्धं भूपं प्रसादयेत्। बृहस्पतिर्नः परिपातु पथि स्वस्त्ययनं भवेत् ॥१९॥
मुञ्चामि त्वेति च जपादपमृत्युनिवारणम्। अथर्वशिरसोऽध्येता सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥२०॥
प्राधान्येन तु मन्त्राणां किञ्चित्कर्म तवेरितम्। वृक्षाणां यज्ञियानां तु समिधः प्रथमं हविः ॥२१॥
आज्यं च व्रीहयश्चैव तथा वै गौरसर्षपाः। अक्षतानि तिलाश्चैव दधिक्षीरे च भार्गव ॥२२॥
दर्भास्तथैव दूर्वाश्च बिल्वानि कमलानि च। शान्तिपुष्टिकराण्याहुर्द्रव्याण्येतानि सर्वतः ॥२३॥
तैलं कणानि धर्मज्ञ राजिका रुधिरं विषम्। समिधः कण्टकोपेता अभिचारेषु योजयेत् ॥२४॥
आर्षं वै दैवतं छन्दो विनियोगज्ञ आचरेत्।

इत्यथर्वविधानम्।

अथर्व-विधान—साम विधान का कथन पूरा, हुआ अब अथर्व विधान कहता हूँ। शान्तातीय गण से हवन करने पर मनुष्य को शान्ति मिलती है। भैषज्य गण से हवन करने पर रोगों का नाश होता है। त्रिसप्तीय गण से हवन करने पर साधक सभी पापों से मुक्त हो जाता है। अभय गण से हवन करने पर किसी प्रकार का भय नहीं रहता। अपराजित गण से हवन करने पर कभी भी पराजित नहीं होता एवं आयुष्य गण के हवन से आयु की वृद्धि होती है तथा अपमृत्यु का नाश होता है। स्वस्त्ययन गण से हवन करने पर सर्वत्र कल्याण होता है। अथर्व गण से हवन क पर कल्याण प्राप्त होता है। वास्तोष्पत्य गण से हवन करने पर वास्तुदोष नष्ट होता है। रौद्र गण से हवन करने पर सभी गों का अन्त होता है। अट्ठारह प्रकार के शान्ति कर्म में इन दश गणों से हवन करना चाहिये। वैष्णवी, ऐन्द्री, ब्राह्मी, रौद्री, वायव्या, वारुणी, कौवेरी, भार्गवी, प्राजापत्या, त्वाष्ट्री, कौमारी, वह्निदेवता, मारुद्गणा, गान्धर्वी, नैर्ऋतकी, आगिरसी, याम्या एवं पार्थिवी शान्ति सर्वकामदा कही गई हैं। जो मर रहा हो, उसकी मृत्य इनके जप से नहीं होती। 'सुपर्णस्त्वा' मन्त्र से हवन करने पर सर्पबाधा कभी नहीं होती। 'इन्द्रेण वृत्तं' मन्त्र के जप से सभी बाधाओं का नाश होता है। 'इमा देवी' मन्त्र जप से सभी प्रकार की शान्ति होती है। 'देवा मरुत' के जप से सभी कार्य सिद्ध होते है। 'यमस्य लोकात्' के जप से बुरे स्वप्न नहीं आते। 'इन्द्र वयं वणिजा' के जप से व्यापार में लाभ होता है। 'कामो मे राजा' से हवन करने पर स्त्रियों का सौभाग्य बढ़ता है। 'तुभ्यमेव जरिमन्' से नित्य दश हजार हवन करने से भी उपरोक्त फल होता है। 'अग्ने गोमिर्न' से मेधा की वृद्धि होती हैं। 'ध्रुवं ध्रुवेण' से हवन करने पर स्थानलाभ होता है। 'युनक्तिसीरा वियुगा' से कृषि में लाभ होता है। 'अयं ते योनि' से पुत्रलाभ होता है। 'अहन्ते भग' से सौभाग्य की वृद्धि होती है। 'ये मे पाशास्तथा' के जप से बन्धन खुल जाता है। 'अहन्नहन्' के जप एवं होम से शत्रु का नाश होता है। 'त्वमुत्तमम्' के जप से यश की वृद्धि होती है। 'यथा मृगवती' के जप से स्त्रियों के सौभाग्य की वृद्धि होती है। 'येन देही' के जप से स्त्री गर्भवती होती है। 'शिव: शिवाभि' के जप से क्रुद्ध राजा प्रसन्न होता है। 'बृहस्पतिर्न: परिपातु' के जप से मार्ग में कल्याण होता है। 'मुञ्चामि त्वा' के जप से अपमृत्यु का निवारण होता है। अथर्वशीर्ष का पाठक सभी पापों से मुक्त होता है। मन्त्रों की प्रधानता से यहाँ कुछ कर्मों को कहा गया है। यज्ञों की समिधा वृक्ष, हवि, आज्य, चावल पीला सरसों, अक्षत, तिल, दही, दूध हैं। कुश, दूर्वा, बेल, कमल के हवन से शान्ति एवं पुष्टि प्राप्त होती है। तेलबून्द, राई, रुधिर विष, कटीली समिधा का प्रयोग अभिचार कर्म में किया जाता है। इन सभी कर्मों में विनियोग को जानने वाले साधक को ऋषि एवं देवता का कथन अवश्य करना चाहिये।

मृत्युञ्जयप्रयोग:

अथ मृत्युञ्जयप्रयोगो ग्रन्थान्तरे—

चतुरस्रं चतुर्द्वारं त्रिरेखं पद्मगर्भितम्। हस्तत्रयप्रमाणं तु तण्डुलैर्मण्डलं लिखेत्॥१॥
भैरवीर्भैरवान् सिद्धीर्दिशो नागानुपग्रहान्। पीठोपपीठसंयुक्तदिक्पालादिसमन्वितम्॥२॥
देवतानां चतुष्षष्टिं लिखेत् पद्मे सुशोभने। एकैकपद्मपत्रेषु वसुसंख्या दले दले॥३॥
प्रणवादिनमोऽन्तैस्तु नाममन्त्रैः प्रपूजयेत्। गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपदीपनैवेदनादिकैः॥४॥
अर्चयेत् पद्मपत्रेषु सर्वकार्यप्रसादकान्। सौवर्णं त्र्यम्बकं कुर्यात् पलेनार्धपलेन वा॥५॥
गोमयेन गुडेनापि तथा वित्तानुसारतः। मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण पूजयेदुपचारकैः॥६॥
सौम्यद्वारे महाभाग देवदेवं घटे न्यसेत्। जपेन्मृत्युञ्जयं मन्त्रं तदग्रे तु सहस्रकम्॥७॥
देवीसूक्तं जपेत् तावद्रुद्राध्यायं विशेषतः। अथवा बहुभिर्विप्रैः कोटिलक्षायुतादिकम्॥८॥
जप्त्वा पूर्वं विघ्नराजं सर्वकार्यप्रसाधनम्। षण्मासं राज्यकामस्तु पुत्रकामस्तथैव च॥९॥
शत्रुनाशनकामस्तु वर्षान्तमपि कारयेत्। षण्मासं पूजयेद्विद्वान् महारोगैः प्रपीडितः॥१०॥
मासमेकं तु मासार्धं कुर्याद्रोगाकुलीकृतः। वन्दीवेश्मनि दुर्गे वा बद्धो मुच्येत बन्धनात्॥११॥
षाण्मासिकप्रयोगाच्च द्विगुणान्नात्र संशयः। महारिष्टभयग्रस्तः प्रयोगमिममाचरेत्॥१२॥

न चारिष्टभयं घोरं प्राप्नुयादार्तिमेव च। महापापसमुद्भूतं दृढकर्मसमर्जितम् ॥१३॥
प्रयोगात् त्र्यम्बकाख्याच्च न त्वारिष्टभयं क्वचित्। एतन्मण्डलमध्यस्थोऽभिषिक्तः पुरुषो यदा ॥१४॥
ततः प्रभृति युद्धेषु शत्रूञ्जयति निश्चितम्। राज्यभ्रष्टो लभेद्राज्यं क्षीणायुर्म्रियते न च ॥१५॥
मुक्त्वा पीडां ग्रहाः सर्वे शान्तिं कुर्वन्ति नित्यशः। प्रयोगस्य प्रभावेन नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥

मृत्युंञ्जय प्रयोग—ग्रन्थान्तर में कहा गया है कि तीन हाथ लम्बा-चौड़ा चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र के मध्य में अष्टदल कमल चावल से बनाकर, उसके दिशाओं में भैरवी, भैरव, सिद्धियों नागों, ग्रहों को स्थापित करे। पीठों एवं उपपीठों में दिक्पालों को स्थापित करके कमल में चौसठ देवताओं को आठ-आठ करके आठ दलों में लिखे। पहले ॐ तब नाम तब नमः लगाकर नाममन्त्रों से उनकी पूजा करे। गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य आदि अर्पण करे। अष्टदल कमल के पत्रों में सर्वकार्यप्रसाधकों की पूजा करे। अपने सामर्थ्य के अनुसार एक पल या आधा पल सोने से त्र्यम्बक की मूर्ति बनावे अथवा गोबर से या गुड़ से मूर्ति बनावे। मृत्युञ्जय मन्त्र से सभी उपचारों से उसकी पूजा करे। उत्तर द्वार में देवदेव को कलश में स्थापित करे। उसके सामने बैठकर एक हजार मन्त्र-जप करे। देवी सूक्त और रुद्राध्याय का जप करे। अथवा बहुत विप्रों से एक करोड़, एक लाख या दश हजार जप करावे। पहले विघ्नराज का जप करने से सभी कार्य सिद्ध होते हैं। राज्य की कामना से छः महीनों तक तथा पुत्र की कामना से भी इतने ही समय तक जप करावे। शत्रुनाश के लिये एक वर्ष तक यह कर्म करे। महारोगी छः महीनों तक पूजा करे। लघु रोग से ग्रस्त एक महीना या पन्द्रह दिनों तक साधना करे। जेल में या किले में बन्द बन्दी को छुड़ाने के लिये छः महीनों या एक वर्ष तक साधना करनी चाहिये। महा अरिष्ट के भय से ग्रस्त होने पर भी इतने ही दिनों तक साधना करावे तो उसका कष्ट दूर हो जाता है। महापाप से उत्पन्न या दृढ़ कर्म से अर्जित अरिष्टों के नाश के लिये त्र्यम्बक मन्त्र का प्रयोग करना चाहिये। इस मण्डल में बैठकर जो पुरुष अभिषिक्त होता है, वह युद्ध में शत्रुओं को जीत लेता है; राज्य भ्रष्ट को राज्य को प्राप्त होता हैं एवं क्षीण आयु वाले की मृत्यु नहीं होती है। पीड़ाकारक ग्रह पीड़ा से मुक्त कर उसे नित्य शान्ति प्रदान करते हैं। इस प्रयोग के प्रभाव से उक्त फल प्राप्त होते हैं, इसमें शंका नहीं करनी चाहिये।

मृत्युञ्जयप्रयोगान्तरम्

प्रयोगमपरं वक्ष्ये रहस्यं त्र्यम्बकाभिधम्। सर्वार्थसाधनं पुण्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥१७॥
यत्कृते सर्वराजानो राजपुत्राश्च मन्त्रिणः। राष्ट्रस्थाः सर्वलोकाश्च तत्क्षणात् तद्वचोनुगाः ॥१८॥
अवश्या वश्यतां यान्ति दुष्टस्त्रीक्षुद्रजन्तवः। वैरिणो वशगास्तस्य प्रयोगस्य प्रभावतः ॥१९॥
सिध्यन्त्यखिलकार्याणि दुर्लभान्यपि तस्य तु। तत्रादौ पूजयेद् देवं गणेशं विधिवत् सुधीः ॥२०॥
लिङ्गानेकादशमितान् पूजयेद्गुडसम्भवान्। पार्थिवान् वा प्रयत्नेन तदलाभे प्रयोजयेत् ॥२१॥
रक्तवस्त्रैस्तथा गन्धैरुपचारैः समन्त्रकैः। पूजयेच्च तथा देवीं पठेच्चण्डीं विधानतः ॥२२॥
कोटिलक्षार्धकं जप्त्वा मन्त्रं मृत्युञ्जयाभिधम्। ॐजूंसः इति वै मन्त्रं त्र्यम्बकाख्यं सनातनम् ॥२३॥
कुण्डे षडस्रसंयुक्ते त्र्यस्रे वा विधिवत् कृते। स्वगृह्योक्तविधानेन स्थाप्य तत्र हुताशनम् ॥२४॥
होमयेत् तद्दशांशेन मध्वाज्यतिलसर्षपैः। आलिखेन्मण्डलं तत्र तण्डुलैः शोभनं बुधः ॥२५॥
चतुरस्रं चतुर्द्वारं त्रिरेखं पद्मगर्भितम्। साधकस्य त्रिभिर्हस्तैर्मितं हीनाधिकं न तत् ॥२६॥
तन्मध्ये शोभनं पद्मं कृत्वा चाष्टदलान्वितम्। एकैकपद्मपत्रे तु वसुसंख्या दले दले ॥२७॥
भैरवीर्भैरवान् सिद्धीर्दिशो नागानुपग्रहान्। पीठोपपीठसंयुक्तान् दिक्पालैरष्टभिर्युतान् ॥२८॥
चतुष्षष्टिमितान् देवान् विधिना स्थाप्य तण्डुलैः। गन्धपुष्पोपचारैश्च नैवेद्यैर्विविधैस्तथा ॥२९॥
प्रणवादिनमोऽन्तैश्च नाममन्त्रैः प्रपूजयेत्। पूर्वद्वारे गणेशेन्द्रौ शिवमुत्तरतस्तथा ॥३०॥
वरुणं पश्चिमे देवं यमं याम्ये विभुं तथा। ईशान्यां कलशं स्थाप्य तीर्थवारिसमन्वितम् ॥३१॥
मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण शतवाराभिमन्त्रितम्। संपूज्य विधिवद्राजा विसर्जनमथाचरेत् ॥३२॥

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्। इष्टकामफलार्थाय पुनरागमनाय च ॥३३॥
अभिषिञ्चेत् ततो वीरं संग्रामे विजयी भवेत्। श्रद्धयापि कृते ह्यस्मिन् प्रयोगे त्र्यम्बकाभिधे ॥३४॥
यथेप्सितमवाप्नोति फलं रुद्रप्रभावतः। अश्रद्धयाल्पकरणात् फलमल्पं प्रजायते ॥३५॥
यथाविभवतश्चापि महदैश्वर्य्यमाप्नुयात्। ऋत्विग्भ्यो दक्षिणां दद्यात् प्रयोगस्य प्रसिद्धये ॥३६॥
यथाशक्त्या तथा दद्यादाचार्याय विशेषतः। ब्राह्मणान् भोजयेच्छक्त्या स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ॥३७॥

इति मृत्युञ्जयप्रयोगविशेषः।

मृत्युञ्जय का अन्य प्रयोग—त्र्यम्बक के अन्य प्रयोग को कहता हूँ। यह प्रयोग सर्वार्थसाधक, सर्वविध उपद्रवनाशक है। इस प्रयोग को करने से राजा, राजपुत्र, मन्त्री एवं राष्ट्र के सभी लोग साधक की आज्ञा के अनुसार कार्य करते हैं। इस प्रयोग से दुष्ट स्त्रियाँ एवं क्षुद्र जन्तु वश में होते हैं। इस प्रयोग के प्रभाव से प्रयोक्ता के वैरी उसके वश में होते हैं एवं सभी दुर्लभ कार्य सिद्ध होते हैं।

पहले विधिवत् गणेश की विधिवत् पूजा करे। तब गुड़ के ग्यारह लिङ्गों की पूजा करे। गुड़ न होने पर मिट्टी के लिङ्गों की पूजा करे। तब देवी की पूजा लाल वस्त्र गन्धादि उपचारों से करके विधानपूर्वक चण्डीपाठ करे। तब डेढ़ करोड़ अर्थात् एक करोड़ पचास लाख मृत्युञ्जय मन्त्र 'ॐ जूं सः' का जप करे।

विधिवत् षट्कोण या त्रिकोण कुण्ड बनावे। अपने गृह्योक्त विधान से उसमें अग्नि-स्थापन करे। जप का दशांश हवन मधु-गोघृत-तिल-सरसों से करे। वहाँ सुन्दर मण्डल चावल से बनावे। मण्डल में चार द्वारयुक्त तीन चतुरस्र के अन्दर अष्टदल कमल साधक के हाथ के नाप से तीन हाथ का बनावे। माप न कम हो, न अधिक। अष्टदल के एक-एक दल में भैरवी, भैरव, सिद्धियों, नागों, ग्रहों को एवं पीठ-उपपीठयुक्त आठ दिक्पालों को लिखे। चौसठ देवों को चावल पर विधिवत् स्थापित करे। गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य से उनकी पूजा करे। नाम के पहले ॐ और बाद में नमः लगे मन्त्र से पूजा करे। पूर्वद्वार में गणेश एवं इन्द्र की, उत्तर द्वार में शिव की, पश्चिम द्वार में वरुण की और दक्षिण द्वार में यम की पूजा करे। ईशान कोण में कलश स्थापित करके उसमें तीर्थ का जल भरे। उस कलश-जल को मृत्युञ्जय मन्त्र के सात जप से मन्त्रित करे। विधिवत् पूजा करके विसर्जन करे। विसर्जन मन्त्र है—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्। इष्टकामफलार्थाय पुनरागमनाय च।।

तब उस कलश जल से वीर राजा का अभिषेक करे। इससे राजा विजयी होता है। श्रद्धा-भक्ति से इस प्रयोग को करने से रुद्र के प्रभाव से यथेच्छ फल मिलता है। अश्रद्धा के कारण अल्प प्रयोग करने से अल्प फल मिलता है। यथाविभव इसे करने से महान् ऐश्वर्य प्राप्त होता है। प्रयोग की सिद्धि के लिये ब्राह्मण को प्रचुर दक्षिणा प्रदान करनी चाहिये। एवं आचार्य को भी यथाशक्ति विशेष धन प्रदान करना चाहिये। तत्पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन कराकर स्वयं भोजन करनी चाहिये।

पार्थिवपूजाविशेषविधानम्

अथ पार्थिवपूजाविशेषो ग्रन्थान्तरे—

कार्तिक मार्गशीर्षे वा माघे वैशाख एव च। श्रावणे बहुले पक्षे व्रतस्याचरणं शुभम् ॥१॥
लिङ्गं पार्थिवसंज्ञं तु कुर्यात् संपत्प्रदायकम्। शुभेऽह्नि प्रातरुत्थाय शिवं ध्यात्वा विधानतः ॥२॥
गत्वा प्राचीदिशं तत्र पठित्वा मन्त्रमुत्तमम्। नमो गणेभ्य इति च मृदं ग्राह्य प्रयत्नतः ॥३॥
ये पृथिव्यामित्येतच्च स्नात्वा पञ्चाक्षरं जपेत्। ततस्तु तर्पणं कार्यं शिवमन्त्रैः पृथक्पृथक् ॥४॥
शिवं शर्वं तथा चोग्रं मृडं च भवमेव च। शशिशेखरसंज्ञं च शङ्करं च महेश्वरम् ॥५॥
नवमं विश्वरूपं च दशमं च कपर्दिनम्। त्रियम्बकं तर्पयामि प्रणवादींश्च तर्पयेत् ॥६॥
ततो नित्यक्रियां कृत्वा ध्यात्वा देवं महेश्वरम्। लिङ्गन्येकादशाष्टौ वा पञ्च वा कारयेत् सुधीः ॥७॥
मन्त्रमुच्चार्य देवेभ्यो ये दिवीति विधानतः। मा नस्तोकेति मन्त्रेण तानि संप्रोक्ष्य वारिणा ॥८॥

ये पृथिव्यामिति पठन् आसनानि प्रकल्पयेत्। ॐ नमो भगवत्यै च उमादेव्यै च शङ्कर ॥९॥
प्रियायै नम इत्यम्बां वामदेशे नियोजयेत्। ततश्च स्वशरीरे तु न्यासं कुर्यात् समाहितः ॥१०॥
ललाटे तु शिवं न्यस्येत् कण्ठे रुद्रं ततः परम्। ईशानं नाभिदेशे तु जान्वोः शङ्करमेव च ॥११॥
गुह्ये सर्वव्यापिनं च पञ्चाङ्गेषु ततः परम्। पञ्चब्रह्ममनूंश्चैव तेषु लिङ्गेषु वै द्विजः ॥१२॥
मङ्गलायतनं देवं युवानमतिसुन्दरम्। ध्यायेत् कल्पतरोर्मूले समासीनं सहोमया ॥१३॥
एवं ध्यात्वा सहस्राणि सहस्रश इतीरयन्। हिरण्यबाहवे वस्त्रं भूषणं शम्भवाय च ॥१४॥
धृष्णावे चोत्तरीयं किरिकेभ्य उपवीतकम्। गन्धं दद्यान्नमः श्वभ्यः पुष्पं पार्याय मन्त्रतः ॥१५॥
नमः कपर्दिने धूपं दीपं च नम आशवे। बभ्लुशाय च नैवेद्यं पर्ण्याय चेति पर्णकम् ॥१६॥
आरार्तिकं ते तेजांसि एष ते च प्रदक्षिणम्। नमोऽस्त्विति नमस्कारं एष रुद्रार्चनाविधिः ॥१७॥
अथवा ह्यसुसमये ह्युपचाराष्टकं भवेत्। पञ्चाक्षरेण मन्त्रेण दशाक्षरेण वा पुनः ॥१८॥
नमः शिवायेति मन्त्रः पञ्चाक्षर इति स्मृतः। ॐनमो भगशब्दान्ते वते रुद्राय वै भवेत् ॥१९॥
मन्त्रो दशाक्षरः प्रोक्तः सर्वाभीष्टफलप्रदः। गन्धं पुष्पं च नैवेद्यं धूपं दीपं तथैव च ॥२०॥
ताम्बूलं च नमस्कारं प्रादक्षिण्यं तथैव च। उपचारांस्ततो दत्त्वा गौरीशं वै क्षमापयेत् ॥२१॥
अष्ट मूर्तीस्ततः पूज्याः शर्वाय क्षितिमूर्तये। नमोन्तेन च संपूज्य भवाय जलमूर्तये ॥२२॥
नमो रुद्राय तत्राग्निमूर्तये नमः ईरितः। उग्राय वायुमूर्तिं ङे नमो भीमाय तत्परम् ॥२३॥
आकाशमूर्तये पश्चान्नमः पशुपतिं तथा। ङेन्तं च यजमानेति मूर्तये तदनन्तरम् ॥२४॥
ततो नमो महादेवं ङेन्तं सोमादिमूर्तये। नम ईशानाय सूर्यमूर्तये नम ईरितः ॥२५॥
अष्ट मूर्तीः शङ्करस्य वामावर्तेन पूजयेत्। लिङ्गस्तवं प्रवक्ष्यामि शृणु पापहरं परम् ॥२६॥
सर्वज्ञ ज्ञानविज्ञानप्रदानैकमहात्मने। नमस्ते देवदेवेश सर्वभूतहिते रत ॥२७॥
अनन्तकीर्तिसंपन्न अनन्तासनसंस्थित। अनन्तकान्तिसंभोग परमेश नमोऽस्तु ते ॥२८॥
बहुरूप महारूप सर्वरूपोत्तमोत्तम। पशुपाशार्णवासीन दृढव्रत नमोऽस्तु ते ॥२९॥
परापर परातीत उत्पत्तिस्थितिकारक। सर्वार्थसाधनोपाय विश्वेश्वर नमोऽस्तु ते ॥३०॥
स्वभावनिर्मलाकार सर्वव्याधिविनाशन। योगियोगमहायोग योगीश्वर नमोऽस्तु ते ॥३१॥
कृत्वा लिङ्गप्रतिष्ठां तु स्तवमेनमुदीरयेत्। लिङ्गस्तवं महापुण्यं यः शृणोति सदा नरः ॥३२॥
नोत्पद्यते हि संसारे स्थानं प्राप्नोति शाश्वतम्। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन शृणुयाल्लिङ्गसंस्तवम् ॥३३॥
पापकञ्चुकनिर्मुक्तः प्राप्नोति परमं पदम्। इति स्तुत्वा चिरं प्रार्थ्य मन्त्रमेनमुदीरयेत् ॥३४॥
अङ्गहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं महेश्वर। पूजितोऽसि मया देव तत्क्षमस्व भ्रमात्कृतम् ॥३५॥
यद्यप्युपहतैः पुष्पैरपास्तैर्भावदूषितैः। केशकीटादिविद्धैश्च पूजितोऽसि मया प्रभो ॥३६॥
अन्यत्रासक्तचित्तेन क्रियाहीनेन वा प्रभो। मनोवाक्कायदुष्टेन पूजितोऽसि त्रिलोचन ॥३७॥
यच्चोपहतपात्रेण कृतमर्घ्यादिकं मया। तामसेन च भावेन तत् क्षमस्व मम प्रभो ॥३८॥
मन्त्रेणाक्षरहीनेन पुष्पेण विह्वलेन च। पूजितोऽसि महादेव तत् सर्वं क्षम्यतां मम ॥३९॥
व्रतं संपूर्णतां यातु फलं चाक्षयमस्तु मे। इति।

पार्थिव पूजा विशेष—ग्रन्थान्तर में कहा गया है कि कार्तिक अगहन माघ वैशाख श्रावण मास के जिस पक्ष में कृतिका नक्षत्र हो, उस दिन व्रत करना शुभ माना जाता है। यह पार्थिव पूजन सम्पत्तिप्रदायक होता है। शुभ दिन में प्रातः उठकर शिवजी का ध्यान करे। विधान से पूर्व दिशा में जाकर 'नमो गणेभ्य' कहकर मिट्टी ग्रहण करे। 'ये पृथिव्या' मन्त्र से स्नान

करके पञ्चाक्षर मन्त्र का जप करे। ग्यारह शिवमन्त्र से पृथक्-पृथक् तर्पण करे। ये ग्यारह शिव हैं—शिव, शर्व, उग्र, मृड, भव, शशिशेखर, शंकर, महेश्वर, विश्वरूप, कपर्दी एवं त्रियम्बक। इनके नाम के पहले ॐ लगाकर तर्पण करे; जैसे—ॐ शिवं तर्पयामि, ॐ शर्वं तर्पयामि इत्यादि। तब नित्यक्रिया करके महेश्वर का ध्यान करे। ग्यारह, आठ या पाँच लिङ्ग बनावे। लिङ्ग बनाते समय 'देवेभ्यो ये दिवि' मन्त्र बोलता रहे। 'मानस्तोके' मन्त्र से जल से प्रोक्षण करे। 'ये पृथिव्या' मन्त्र पढ़कर आसन कल्पित करे। 'ॐ नमो भगवत्यै उमादेव्यै शंकरप्रियायै नम:' मन्त्र पढ़कर शिव के वाम भाग में पार्वती को स्थापित करे। तब अपने शरीर में न्यास करे। ललाट में, शिव, कण्ठ में रुद्र, नाभि में ईशान, जानुओं में शंकर, गुह्य में सर्वव्यापी का न्यास करे। पञ्च ब्रह्म मन्त्र का न्यास लिङ्गों में करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—

मंगलायतनं देवं युवानमतिसुन्दरम्। ध्यायेत्कल्पतरोर्मूले समासीनं सहोमया।।

ध्यान के बाद 'सहस्राणि सहस्रश:' से जल, 'हिरण्यबाहवे' से वस्त्र एवं 'शम्भवाय' से भूषण, 'धृष्णवे' से उत्तरीय, 'किरिकेभ्य:' से उपवीत, 'नम: श्वभ्य:' से गन्ध, पार्याय मन्त्र से पुष्प, 'नम: कपर्दिने' से धूप, 'नम: आशवे' से दीप, 'बभ्लुशाय' से नैवेद्य, 'पर्ण्याय' से पर्ण, 'तेजांसि' से आरती, 'एषते' से प्रदक्षिणा एवं 'नमोस्तु' से नमस्कार करे। यही रुद्रार्चन की विधि है।

पञ्चाक्षर या दशाक्षर मन्त्र से आठ उपचारों से पूजा करे। पञ्चाक्षर मन्त्र 'नम: शिवाय' है। दशाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो भगवते रुद्राय' है। दशाक्षर मन्त्र को सर्वाभीष्ट-प्रदायक कहा गया है। गन्ध, पुष्प, नैवेद्य, धूप, दीप, ताम्बूल, नमस्कार, प्रदक्षिणा—ये आठ उपचार हैं। पूजा के बाद गौरीश से क्षमा-प्रार्थना करे।

अष्ट मूर्तियों की पूजा इस प्रकार करे—शर्वाय क्षितिमूर्तये नम:, भवाय जलमूर्तये नम:, उग्राय वायुमूर्तये नम:, भीमाय आकाशमूर्तये नम:, पशुपतये यजमानमूर्तये नम:, महादेव सोममूर्तये नम:, ईशानाय सूर्यमूर्तये नम:। शङ्कर की इन आठ मूर्तियो की पूजा वामावर्त क्रम से करे। तदनन्तर पापहर लिङ्गस्तोत्र का पाठ करे, जो इस प्रकार है—

सर्वज्ञ ज्ञानविज्ञानप्रदानैकमहात्मने। नमस्ते देवदेवेश सर्वभूतहिते रत।।
अनन्तकीर्तिसंपत्र अनन्तासनसंस्थित। अनन्तकान्तिसंभोग परमेश नमोऽस्तु ते।।
बहुरूप महारूप सर्वरूपोत्तमोत्तम। पशुपाशार्णवासीन दृढव्रत नमोऽस्तु ते।।
परापर परातीत उत्पत्तिस्थितिकारक। सर्वार्थसाधनोपाय विश्वेश्वर नमोऽस्तु ते।।
स्वभावनिर्मलाकार सर्वव्याधिविनाशन। योगियोगमहायोग योगीश्वर नमोऽस्तु ते।।

लिङ्ग की प्रतिष्ठा करके इस स्तोत्र का पाठ करे। यह लिङ्गस्तोत्र अत्यन्त पवित्र है। जो मनुष्य सदा इसे सुनता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता और वह शाश्वत स्थान प्राप्त करता है। इसलिये यत्नपूर्वक लिङ्गस्तोत्र सुनना चाहिये। इससे पापों से छुटकारा पाकर श्रोता परम पद प्राप्त करता है। इस प्रकार स्तुति करके निम्नवत् प्रार्थना करे—

अङ्गहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं महेश्वर। पूजितोऽसि मया देव तत्क्षमस्व भ्रमात्कृतम्।।
यद्यप्युपहतै: पुष्पैरपास्तैर्भावदूषितै:। केशकीटादिविद्धैश्च पूजितोऽसि मया प्रभो।।
अन्यत्रासक्तचित्तेन क्रियाहीनेन वा प्रभो। मनोवाक्कायदुष्टेन पूजितोऽसि त्रिलोचन।।
यच्चोपहतपात्रेण कृतमर्घ्यादिकं मया। तामसेन च भावेन तत् क्षमस्व मम प्रभो।।
मन्त्रेणाक्षरहीनेन पुष्पेण विह्वलेन च। पूजितोऽसि महादेव तत् सर्वं क्षम्यतां मम।।

भयनाशनमन्त्र:

अथ भयनाशनम्—

गौरीवल्लभ कामारे कालकूटविषाशन। मामुद्धरापदम्भोधेस्त्रिपुरघ्नान्तकान्तक ।।१।।
पाहि पाहि महादेव भक्तवर्गैकपोषक। भयं दूरीकुरुष्वाद्य किमेतदनुवर्तते ।।२।।

इति स्मरणेन भयनाशनं भवति।

भयनाशन मन्त्र—हे गौरीवल्लभ, काम के शत्रु, कालकूट विष का भक्षण करने वाले, त्रिपुर का नाश करने वाले,

अन्तकासुर-विनाशक! इस आपत्ति के सागर में मेरी रक्षा करो। भक्तों की रक्षा [illegible] महादेव! मेरी रक्षा करो। [illegible] आज मेरे भय को दूर करो—इस प्रकार मूलोक्त दो श्लोकों द्वारा महादेव की प्रार्थना करते हुये उनका स्मरण [illegible] का नाश होता है।

आपद्विनाशनमन्त्रः

अथापद्विनाशनम्—

सर्वार्थसाधनोपाय सर्वैश्वर्यप्रदायक। समस्तापत्प्रतीकार चन्द्रशेखर ते नमः ॥१॥

इत्यापद्विनाशनम्।

आपद् विनाशक मन्त्र—निम्न मन्त्र के स्मरण से आपदाओं का नाश होता है; मन्त्र है—

सर्वार्थसाधनोपाय सर्वैश्वर्यप्रदायक। समस्तापत्प्रतीकार चन्द्रशेखर ते नमः ।।

बालरक्षायन्त्रम्

अथ बालरक्षायन्त्रम्—

तारादिलद्वयजलद्विठवर्णवीता रा(ठा)न्तान्तरे विलिखिता विधिनैव माया।
साध्यावृता बहिरथो वदनार्धचन्द्रैर्यन्त्रं शिशो रुरुदिषां विनिहन्ति सद्यः ॥१।

इति बालरक्षायन्त्रम्।

बाल रक्षायन्त्र—अधिक रोने वाले बालक के लिये यह उत्तम यन्त्र है। अर्द्धचन्द्राकार मण्डल में ॐ लं लं वं वं ठं ह्रीं लिखे। अर्द्धचन्द्र को बालक के नामाक्षरों से वेष्टित कर दे। बालक को पहनाने से उसका रोना तत्काल बन्द हो जाता है।

कुबेरयन्त्रम्

अथ कुबेरयन्त्रम्—

कर्णिकायां साध्यगर्भं तारं पत्रेषु चाष्टसु। वर्णान् कुबेरमन्त्रस्य चतुरश्चतुरो बहिः ॥१॥
अया ते अग्ने समिधा ४.४.२५ मातृकार्णैश्च वेष्टयेत्।
भूपुरास्त्रिषु ठंबीजं दिक्षु वंबीजमेव च ॥२॥
एतद्यन्त्रं कुबेरस्य रक्षाकरमनुत्तमम्। चातुर्थिकादिविषमज्वरानाशु निहन्ति च ॥३॥

इति कुबेरयन्त्रम्।

कुबेर यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर तीन चतुरस्र से भूपुर बनावे। अष्टपत्र की कर्णिका में ॐ के उदर में साध्य लिखे। आठ दलों में कुबेर मन्त्र के चार-चार अक्षरों को लिखे। उसके बाहर 'अया ते अग्नि समिधा' मन्त्र के वर्णों से वेष्टित करे। तीनों भूपुरों में 'ठं' लिखे। दिशाओं में 'वं' लिखे। यह कुबेर यन्त्र उत्तम रक्षाकर होता है। चातुर्थिक और विषम ज्वरों का यह विनाशक होता है।

ॐह्रींक्लींकालिके अमुकस्य बन्दीमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा। 'गौरीवल्लभ कामारे कालकूटनिषूदन। त्रिपुरध्वान्तकर्त्रे च निगडध्वंसकारिणे।' इति मन्त्रद्वयं जपेत् वन्दीमोक्षो भवति।

बन्दीमोक्ष मन्त्र— १. ॐ ह्रीं क्लीं कालिके अमुकस्य बन्दीमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा।
२. गौरीवल्लभ कामारे कालकूटनिषूदन। त्रिपुरध्वान्तकर्त्रे च निगड़ध्वंसकारिणे।।

इन दो मन्त्रों के जप से कैदी जेल से जाता है।

भूरिविजयमन्त्रः

अथ भूरिविजयमन्त्रः—भगे भगे क्षोभय मोहय छेदय क्लेदय क्लिन्नस्य शरीरे हुंफट् स्वाहा। २६ वर्णाः।

एष मन्त्रवर: श्रीमान् त्रिषु लोकेषु विश्रुत:। नाम्ना भूरिजय इति स्वयं देवेन भाषित: ॥१॥
दुर्भगानां च लोकानां निर्द्रव्याणां वरानने। बुद्धितेजोविहीनानां विद्यागुणविवर्जिनाम् ॥२॥
एतज्जपेन तत् सर्वं संप्राप्नोति च मानव:। यद्यद्विहीनो जपते तत्तत् प्राप्नोति मानव: ॥३॥ इति

भूरि विजय मन्त्र—भगे भगे क्षोभय मोहय छेदय क्लेदय क्लिन्नस्य शरीरे हुं फट् स्वाहा। यह छब्बीस अक्षरों का श्रेष्ठ मन्त्र तीनों लोकों में विख्यात है। इस मन्त्र का नाम भगवान् शिव द्वारा भूरिजय कहा गया है। अभागों, दरिद्रों, मूर्खों अनपढ़ों को इस मन्त्र के जप से वह सब मिलता है। जिसके पास जो नहीं है, वह उसे मिलता है।

रत्नधारामन्त्र:

अथ रत्नधारामन्त्र:—रत्नरत्नमहारत्नधाराय स्वाहा। अस्य प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्री च्छन्द: रत्नधाराख्यो देवता रत्नधारालाभे विनियोग:। साधकाय रत्नधारावर्षन्तं हस्ताभ्यां हारमुकुटमणिभूषितं ध्यायन् जपेत्, महती रत्नसमृद्धि:।

रत्नधारा मन्त्र—रत्नधारा मन्त्र है—रत्नरत्नमहारत्नधाराय स्वाहा। इसके ऋषि प्रजापति, छन्द गायत्री एवं देवता रत्नधारा हैं। रत्नधारा-लाभ के लिये इसका विनियोग होता है। साधक के लिये हाथों से रत्नों की धारा बरसाते हुये एवं हार-मुकुटमणि से भूषित देवता का ध्यान करते हुये इसका जप करने से प्रभूत रत्न प्राप्त होता है।

कुबेरमन्त्रहोमप्रकार:

अथ कुबेरमन्त्र: (होमप्रकार:) वैश्रवणाय स्वाहा, यक्षेशाय०, पिङ्गलाय०, विटिदाय०, कुबेराय०, धनदाय०, राजराजाय०, भू: स्वाहा, भुव: स्वाहा, स्व: स्वाहा, भूर्भुव: स्वाहा। एते दशमन्त्रा धनप्रदा:। हेमपीठे **कनकवर्णे करपुटे करण्डविलसितकरद्वयबृहदुदररत्नमण्डितशङ्खपद्मनिधिवृतं कुबेरं वटवृक्षाधो ध्यात्वा, वैश्वदेवावसाने अग्निमावाह्य तन्मुखे आज्याक्तवटसमिद्भिर्दशभिर्दशभिर्मन्त्रैर्जुहुयात्, बहुतरधनलाभ:। घृताक्तपायसैर्घृताक्तबिल्वसमिद्भिर्वा जुहुयाद्धनलाभ:।**

कुबेर मन्त्र—हवन में कुबेर का मन्त्र है—वैश्रवणाय स्वाहा, यक्षेशाय स्वाहा, पिङ्गलाय स्वाहा, विटिदाय स्वाहा, कुबेराय स्वाहा, धनदाय स्वाहा, राजराजाय स्वाहा, भू: स्वाहा, भुव: स्वाहा, भूर्भुव: स्वाहा। कुबेर के यह दश मन्त्र धनप्रदायक कहे गये हैं।

वट वृक्ष के नीचे हेमपीठ पर स्वर्ण वर्ण वाले, हाथों में शंख एवं पद्म धारण किये। कुबेर का ध्यान करके वैश्वदेव के बाद अग्नि का आवाहन करके अग्नि के मुख में आज्याक्त वटवृक्ष की दश समिधा को उपर्युक्त दश मन्त्र से डाले। इससे बहुत धन एवं रत्न का लाभ होता है। घृताक्त पायस या विल्व समिधा से हवन करने पर धनलाभ होता है।

विस्फोटकहरणमन्त्र:

'घण्टाकर्ण विरूपाक्ष व्यात्तानन भयङ्कर। विस्फोटकरुजं हत्वा रक्ष रक्ष महाबल'। द्वात्रिंशद्वारं जलमभिमन्त्र्य पेयं विस्फोटकहरणं भवति।

विस्फोटक-हरण मन्त्र—विस्फोटक हरण मन्त्र है—

घण्टाकर्ण विरूपाक्ष व्यात्तानन भयंकर। विस्फोटकरुजं हत्वा रक्ष-रक्ष महाबल।।

बत्तीस अक्षरों के इस मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित करके चेचक ग्रस्त को पिलाये तो उसका चेचक ठीक हो जाता है।

पञ्चमुखहनुमन्मन्त्रध्यानम्

अथ हनुमत्प्रकरणम्। तत्र पञ्चमुखहनुमन्मन्त्रविधिस्तत्र हनुमद्गह्वरे—अस्य पञ्चमुखहनुमन्मन्त्रस्य, ब्रह्मा ऋषि:, गायत्री छन्द:, पञ्चमुखविराड्रूपी हनुमान् परमात्मा देवता, ह्रां बीजं, ह्रीं शक्ति:, ह्रूं कीलकम्, ममाभीष्टसिद्धये विनियोग:। षड्दीर्घमायया षडङ्गं विधाय ध्यायेत्।

अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वाङ्गसुन्दरि। मत्कृतं देवदेवस्य ध्यानं हनुमतः परम् ॥१॥
पञ्चवक्त्रं महाभीमं त्रिपञ्चनयनैर्युतम्। बाहुभिर्दशभिर्युक्तं सर्वकाम्यार्थसिद्धिदम् ॥२॥
पूर्वे तु वानरं वक्त्रं कोटिसूर्यसमप्रभम्। दंष्ट्राकरालवदनं भ्रुकुटीकुटिलेक्षणम् ॥३॥
अत्रैव दक्षिणं वक्त्रं नारसिंहं महाद्भुतम्। अत्युग्रतेजोवपुषं भीषणं भयनाशनम् ॥४॥
पश्चिमं गारुडं वक्त्रं वज्रतुण्डं महाबलम्। सर्वरोगप्रशमनं विषरोगनिवारणम् ॥५॥
उत्तरं सौकरं वक्त्रं कृष्णं दीप्तं नभोनिभम्। पातालानिलभेत्तारं ज्वररोगनिकृन्तनम् ॥६॥
ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवान्तकरं परम्। एकवक्त्रेण विप्रेन्द्र तारकाख्यं महाबलम् ॥७॥
कुर्वन्तं शरणं तस्य सर्वशत्रुहरं परम्। खड्गं त्रिशूलं खट्वाङ्गं पाशमङ्कुशपर्वतम् ॥८॥
ध्रुवमुष्टिगदामुण्डं दशभिर्मुनिपुङ्गव। एतान्यायुधजालानि धारयन्तं यमामहे ॥९॥
ध्रुवमुष्टिगदामुण्डं दशभिर्मुनिपुङ्गव। एतान्यायुधजालानि धारयन्तं यजामहे ॥९॥
प्रेतासनोपविष्टं तं सर्वाभरणभूषितम्। दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ॥१०॥
सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतो मुखम्।
पञ्चास्यमच्युतमनेकविचित्रवीर्यवक्त्रं। सुशंखविधृतं कपिराजवर्यम्।
पीताम्बरादिमुकुटैरभिशोभिताङ्गं पिङ्गाक्षमाद्यमनिशं मनसा स्मरामि ॥११॥
मर्कटेश महोत्साह सर्वलोकविनाशन। शत्रुसंहार मां रक्ष श्रियं दापय देहि मे ॥१२॥

इति प्रार्थ्य। (१) ॐ नमः पञ्चवदनाय पूर्वकपिमुखेन सकलशत्रुसंहरणाय महाबलाय स्वाहा। (२) ॐ नमः पञ्चवदनाय दक्षिणमुखेन करालनृसिंहाय सकलभूतप्रमथनाय स्वाहा (३)। ॐ नमः पञ्चवदनाय पश्चिममुखेन वीरगरुडाय सकलविषहराय स्वाहा। (४) ॐ नमः पञ्चवदनाय उत्तरमुखेनादिवराहाय सकलवशङ्कराय स्वाहा। (५) ॐ नमः पञ्चवदनाय ऊर्ध्वमुखेन हनुमद्देवाय सकलजनवशीकराय महादेवाय स्वाहा। इति पञ्च मन्त्राञ्जपेत्, सर्वकार्यसिद्धिर्भवति।

पञ्चमुख हनुमन्मन्त्र विधि—हनुमद् गह्वर में कहा गया है कि इस हनुमन्मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री, देवता पञ्चमुख विराट् रूपी परमात्मा हनुमान् बीज ह्रां, शक्ति ह्रीं एवं कीलक ह्रूं है। अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है। ह्रां ह्रीं ह्रैं ह्रौं ह: से इसका षडङ्ग न्यास किया जाता है। हे सर्वाङ्गसुन्दरि! मेरे द्वारा बनाये गये हनुमान् का श्रेष्ठ ध्यान इस प्रकार है। पाँच मुख वाले हनुमान का भयंकर शरीर, आठ आँखें, दश भुजायें धारण करने वाले हनुमान् समस्त कामनाओं को देने वाले हैं। इनका पूर्व दिशा का मुख वानर का है, ये करोड़ों सूर्य के समान प्रकाशमान हैं, भीषण दाँतों के कारण भयंकर मुख है एवं भौहों को तिरछे कर दे देखते हैं। दक्षिण दिशा का मुख नृसिंह के समान अत्यन्त अद्भुत है। अत्यन्त उग्र तेज से युक्त भीषण शरीर वाले ये भय का नाश करने वाले हैं। पश्चिम स्थित गरुड सदृश मुख वाले हनुमान वज्रसदृश तुण्ड वाले एवं अतीव बलशाली हैं। ये समस्त रोगों का शमन करने वाले एवं विषरोग का निवारण करने वाले हैं। इनका उत्तर दिशा वाला मुख सूकर-सदृश, कृष्ण वर्ण का होते हुये दीप्तिमान है। इनका वर्ण आकाशसदृश है और ये जल तथा अग्नि के भय को दूर करने वाले तथा ज्वर रोग का नाश करने वाले हैं। इनका ऊर्ध्व-स्थित मुख घोड़े का है, जो घोर दानवों का नाश करने वाला है। एक मुख वाले हनुमान तारण करने वाले, महाबलशाली तथा शरणागत के समस्त शत्रुओं का नाश करने वाले हैं। पञ्चमुख हनुमान के दश हाथों में खड्ग, त्रिशूल, खट्वाङ्ग, पाश, अंकुश, पर्वत, ध्रुव, मुष्टि, गदा एवं मुण्ड है। ये प्रेतासन पर विराजमान हैं एवं समस्त आभूषणों से भूषित हैं। ये दिव्य माला एवं वस्त्र धारण किये हैं तथा दिव्य गन्धों का लेप धारण किये हैं। समस्त आश्चर्यों से समन्वित विश्वतोमुख हनुमान् का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

पञ्चास्यमच्युतमनेकविचित्रवीर्यवक्त्रं सुशंखविधृतं कपिराजवर्यम्।
पीताम्बरादिमुकुटैरभिशोभिताङ्गं पिङ्गाक्षमाद्यमनिशं मनसा स्मरामि।।
मर्कटेश महोत्साह सर्वलोकविनाशन। शत्रुसंहार मां रक्ष श्रियं दापय देहि मे।।

ध्यान के बाद निम्नलिखित पाँच मन्त्रों का जप करे—

(१) ॐ नम: पञ्चवदनाय पूर्वकपिमुखेन सकलशत्रुसंहरणाय महाबलाय स्वाहा। (२) ॐ नम: पञ्चवदनाय दक्षिणमुखेन करालनृसिंहाय सकलभूतप्रमथनाय स्वाहा (३)। ॐ नम: पञ्चवदनाय पश्चिममुखेन वीरगरुडाय सकलविषहराय स्वाहा। (४) ॐ नम: पञ्चवदनाय उत्तरमुखेनादिवराहाय सकलवशङ्कराय स्वाहा। (५) ॐ नम: पञ्चवदनाय ऊर्ध्वमुखेन हनुमद्देवाय सकलजनवशीकराय महादेवाय स्वाहा।

इन पाँच मन्त्रों के जप से जापक के सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

हनुमन्मन्त्रान्तराणि

विभीषण उवाच—

भगवंस्तार्क्ष्य पक्षीन्द्र वद कल्पं हनूमत:। साङ्गोपाङ्गस्य मन्त्रस्य श्रीमद्धनुमत: स्मृतम्॥१॥

तार्क्ष्य उवाच

पवनात्मजमन्त्राणां वदामि गह्वरं परम्। येन विज्ञानमात्रेण हनुमान् सुप्रसीदति॥२॥
प्रणवाद्यामर्ककलां बिन्दुनोर्ध्वविभूषिताम्। रमां मायां च सम्भिद्य मनुतुर्यरसस्वरै:॥३॥
सबिन्दुभि: पुनश्चाथ शिवाद्यमस्त्रवर्णकम्। एतद्गतं जयारूढं शिवस्वरेण संयुतम्॥४॥
बिन्दुमद्वा तदग्रे च खमस्त्रेण युतं वदेत्। वह्नियुक्तं शूलपाणिस्वरयुक्तं च बिन्दुमत्॥५॥
ततो वदेच्छिवं चान्द्रसंयुतं वह्निसंस्थितम्। मनुस्वरेण संयुक्तं भूषितं बिन्दुनोपरि॥६॥
तत: साद्यं च शशिना संयुतं शून्यवर्णयुक्। पान्त्यवह्निसमायुक्तं वागादिसंयुतं वदेत्॥७॥
सबिन्दुकं तत: शैवं शशिसंस्थं च बिन्दुमत्। शक्रस्वरयुतं वाच्यं रुद्रबीजादिको मनु:॥८॥
ततो नतिं समुच्चार्य ङेन्तं हनुमत: पदम्। अस्मच्छब्दं च षष्ठ्यन्तं परं षष्ठीयुतं तत:॥९॥
चकार: क्षयकुष्ठेति गण्डमाला च स्फोटक:। क्षतज्वरेति च तत: एकाहिकपदं तत:॥१०॥
द्व्याहिकं त्र्याहिकं चेति चातुर्थिकं च सन्ततम्। ज्वरेति च ततो वाच्यं सान्निपातिकमीरयेत्॥११॥
ज्वरभूतज्वरमन्त्र-ज्वरशूल-भगन्दरा:। मूत्रकृच्छ्रकपालेति शूलकर्णेति शूलकम्॥१२॥
अक्षिशूलोदरशूल-हस्तशूलपदं तत:। पादशूलादि प्रवदेत् सर्वव्याधीन् क्षणेन च॥१३॥
भिन्धियुग्मं छिन्धियुग्मं नाशयेति द्विधा वद। निकृन्तययुगं चैव छेदयेति द्विधा वद॥१४॥
भेदयेति द्विधा वाच्यं महावीरपदं तत:। हनूमन् हाक्षरं द्वेधा द्विधा तु कवचं द्विधा॥१५॥
घेशब्दयुगलं चोक्त्वा बीजानि च ततो वदेत्। द्वितीयपञ्चषष्ठैश्च कवचास्त्राग्निवल्लभा॥१६॥
पञ्चषष्ट्युत्तरशतवर्णा मन्त्रे प्रकीर्तिता:। अयं रोगप्रशान्त्यर्थं जप्तव्य: सततं नृभि:॥१७॥

ॐऐंश्रींह्रौंह्रींहूं स्फ्रें खफ्रें हस्त्रौं हसखफ्रें हसौं नमो हनुमते मम परस्य च क्षयकुष्ठगण्डमालास्फोटकक्षतज्वरैकाहिकद्व्याहिकत्र्याहिकचातुर्थिकसन्ततज्वरसान्निपातिकज्वरभूतज्वरमन्त्रज्वरशूलभगन्दरमूत्रकृच्छ्रकपालशूलकर्णशूलाक्षिशूलोदरशूलहस्तशूलपादशूलादिसर्वव्याधीन् क्षणेन भिन्धि भिन्धि च्छिन्धि च्छिन्धि नाशय नाशय निकृन्तय निकृन्तय च्छेदय च्छेदय भेदय भेदय महावीरहनूमन् हाहाहुंहुंघेघेह्रांहुंहूं फट् स्वाहा, (१६५ वर्णा:) इत्युद्धार:।

भस्मादाय त्रिधा ह्येवं मन्त्रयित्वा ददेत् सुधी:। मन्त्रे ये गदिता रोगास्ते नश्यन्त्यस्य चाज्ञया॥१॥ इति।

अन्य विधान—विभीषण ने कहा—हे भगवन् तार्क्ष्य पक्षीन्द्र! आप मुझसे हनुमत् कल्प कहिये। श्री हनुमत् मन्त्र अंग-उपाङ्गसहित कहिये। गरुड़ ने कहा—हनुमान जी के परम गह्वर मन्त्र को कहता हूँ। हनुमान का एक सौ पैंसठ अक्षरों का मन्त्र इस प्रकार है—

ॐऐंश्रींह्रौंह्रींहूं स्फ्रें खफ्रें हस्त्रौं हसखफ्रें हसौं नमो हनुमते मम परस्य च क्षयकुष्ठगण्डमालास्फोटकक्षतज्वरैकाहि-

...द्व्याहिकत्र्याहिकचातुर्थिकसन्ततज्वरसान्निपातिकज्वरभूतज्वरमन्त्रज्वरशूलभगन्दरमूत्रकृच्छ्रकपालशूलकर्णशूलाक्षिशूल...शूलहस्तशूलपादशूलादिसर्वव्याधान् क्षणेन भिन्धि भिन्धि छिन्धि छिन्धि नाशय नाशय निकृन्तय निकृन्तय छेदय छेदय भेदय भेदय महावीरहनूमन् हाहाहुंहुंघेघेह्रांह्रुंह्रूं फट् स्वाहा।

रोग-शान्ति के लिये मनुष्यों को इस मन्त्र का जप निरन्तर करना चाहिये।

भस्म को लेकर उसे इस मन्त्र के तीन जप से अभिमन्त्रित करे। इस अभिमन्त्रित भस्म को रोगी को खिलाने से रोगी के मन्त्रोक्त समस्त रोग नष्ट होते हैं।

हनुमन्मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

आनिलेयस्यान्यमन्त्रं प्रवदामि समासतः। सर्वलोकहितार्थाय सद्यः प्रत्ययकारकम्॥१॥
वेदादि च ततो वाचं लक्ष्मीं मायां त्रिधोच्चरेत्। द्वितीयतुर्य्यषष्ठैश्च स्वरैः समनुवर्तिनीम्॥२॥
शशिपान्त्यं वह्निसंस्थमेकारेण विभूषितम्। बिन्दुमच्च ततः शून्यं पान्त्ययुक्तं सवह्निकम्॥३॥
एकादशकलाढ्यं च बिन्दुनोर्ध्वविभूषितम्। शिवचन्द्राग्निसंरूढमौयुक्तं बिन्दुभूषितम्॥४॥
भार्गं सोमं शून्यसंस्थमस्त्रार्णाग्निसमन्वितम्। अर्कादिककलायुक्तं बिन्द्वाढ्यं विजयप्रदम्॥५॥
हंसयुक्तं मनुकलायुक्तं बिन्दुविभूषितम्। बीजकूटे त्विमे वर्णा एकादश निवेशिताः॥६॥
हृदयं हनुमच्छब्दं चतुर्थ्यन्तं समुच्चरेत्। महाबल ततश्चाथ पराक्रम ममेति च॥७॥
परस्य च चतुर्वर्णान् भूतप्रेतपिशाचकान्। शाकिनी डाकिनी चाथ यक्षिणी पूतनेति च॥८॥
मारी ततो महामारी कृत्या यक्षेति राक्षस। ततो भैरववेतालग्रहब्रह्मग्रहेति च॥९॥
ब्रह्मराक्षसादिकेति जातक्रूरेति चोच्चरेत्। बाधाः क्षणेन च हन द्विधा भञ्जययुग्मकम्॥१०॥
विनाशय द्विधा वाच्यं वारयेति द्विधा वदेत्। बन्धयेति युगं चैव नुदेति च तथोच्चरेत्॥११॥
सुन्देति च द्विधा प्रोक्तं धुनेति च द्विधा वदेत्। तथोच्चरेन्मोचयेति मामेनं च ततः परम्॥१२॥
रक्षेति युगलं वाच्यं महामहेश्वरं पदम्। ततो रुद्रावतारेति हा त्रिधा कवचं त्रिधा॥१३॥
घेऽक्षरं च त्रिवारं स्यात् कवचास्त्राग्निवल्लभा। एकषष्ट्युत्तरशतं (?) वर्णा मन्त्रे प्रकीर्तिताः॥१४॥

अथोद्धारः—ॐऐंश्रीह्रांह्रींह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्त्रौं हसख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते महाबलपराक्रम मम परस्य च भूतप्रेतपिशाचकशाकिनीडाकिनीयक्षिणीपूतनामारीमहामारीकृत्यायक्षराक्षसभैरववेतालग्रहब्रह्मग्रहब्रह्मराक्षसादिकजात-क्रूरबाधाः क्षणेन हन हन भञ्जय भञ्जय विनाशय विनाशय वारय वारय बन्धय बन्धय नुद नुद सुन्द सुन्द धुन धुन मोचय मोचय मामेनं च रक्ष रक्ष महामहेश्वर रुद्रावतार हाहाहा हुंहुंहुं घेघेघे हुं फट् स्वाहा।

सर्वत्र सर्वभूतानां नाशको हनुमन्मनुः। भस्म वारि सर्षपांश्च सिकताश्चाभिमन्त्रयेत्॥१५॥
यत्र क्वापि भयं शङ्का विकिरेत्तत्र तत्र तु। एकैकं वा समूहं वा दशदिक्षु इतस्ततः॥१६॥
विकीर्य भस्म वारिभ्यो भीतस्य प्रक्षिपेत्तनौ। पानार्थं वारि दातव्यं भस्म चाङ्गे निवेशयेत्॥१७॥ इति।

मन्त्रान्तर—एक सौ इकसठ अक्षरों का एक अन्य मन्त्र इस प्रकार है—ॐऐंश्रीह्रांह्रींह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्त्रौं हसख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते महाबलपराक्रम मम परस्य च भूतप्रेतपिशाचकशाकिनीडाकिनीयक्षिणीपूतनामारीमहामारीकृत्यायक्षराक्षसभैरववेताल-ग्रहब्रह्मग्रहब्रह्मराक्षसादिकजातक्रूरबाधाः क्षणेन हन हन भञ्जय भञ्जय विनाशय विनाशय वारय वारय बन्धय बन्धय नुद नुद सुन्द सुन्द धुन धुन मोचय मोचय मामेनं च रक्ष रक्ष महामहेश्वर रुद्रावतार हाहाहा हुंहुंहुं घेघेघे हुं फट् स्वाहा।

यह हनुमन् मन्त्र सर्वत्र सभी भूतों का नाशक है। भस्म-जल-सरसों एवं सिकता को अभिमन्त्रित करे। जहाँ कहीं भी

भय की शंका हो, वहाँ इन्हें छींट दे। इन चारों में से एक-एक द्रव्य को अलग-अलग या सम्मिलित करके दशों दिशाओं में या इधर-उधर छींट दे। इसके बाद भयग्रस्त को जल में भस्म मिलाकर पिलावे और अंगों में भस्म लगावे तो इससे शान्ति होती है।

हनुमन्मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

अपरं चाञ्जनेयस्य मन्त्रं वच्मि समासतः। कलौ जप्तं तु सर्वत्राभयदं सर्वसिद्धिदम् ॥१॥
ॐकारवाग्भवरमा ह्रांह्रींहूं च ततः परम्। पूर्ववत् पञ्चकूटानि बीजानि च तथोच्चरेत् ॥२॥
एकादशेति कूटानि प्रोच्चार्य च ततः परम्। हनुमते चतुर्वर्णान् मम शब्दं परस्य च ॥३॥
महाभयानि पञ्चार्णान् सर्वव्याघ्रादितस्कर। जलाग्निविषजङ्गमस्थावरसहजेति च ॥४॥
कृत्रिमोपविषं चेति महासांग्रामिकं तथा। अरण्यवादविवादशस्त्राण्यस्त्रादिकानि च ॥५॥
संहरेति द्विधोच्चार्य विनाशय तथा पुनः। तथोच्चरेद् ग्रसयुगं ग्रासय त्रोटय द्विधा ॥६॥
भञ्ज द्विधा भञ्जयाथ द्विधा स्तम्भय वै द्विधा। कुण्ठयेति द्विधा वाच्यं मोहयेति द्विधोच्चरेत् ॥७॥
कवचं च त्रिधोच्चार्य घेक्षरं च त्रिधा वद। क्रोधमस्त्रं वह्निजायासंयुतो मनुरीरितः ॥८॥
एकषष्ट्युत्तरशतं (?) मन्त्रे वर्णा निवेशिताः। शस्त्रास्त्रविषसर्पादिव्यथाभयविनाशनः ॥९॥
मन्त्रोऽयं रामदूतस्य चिन्तितेप्सितसाधकः।

अथोद्धारः—ॐऐंश्रींह्रांह्रींहूंस्फ्रेंख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं हनुमते मम परस्य च महाभयानि सर्वव्याघ्रतस्करजलाग्निविषजङ्गमस्थावरसहजकृत्रिमोपविषमहासंग्रामिकारण्यवादविवादशस्त्रास्त्रादिकानि संहर संहर विनाशय विनाशय ग्रस ग्रस ग्रासय ग्रासय त्रोटय त्रोटय भञ्ज भञ्ज भञ्जय भञ्जय स्तम्भय स्तम्भय कुण्ठय कुण्ठय मोहय मोहय हुं हुं हुं घे घे घे हुं फट् स्वाहा।

मन्त्रान्तर—अब आंजनेय का एक अन्य मन्त्र कहता हूँ। कलियुग में इसके जप से सर्वत्र अभय एवं सभी सिद्धियों की प्राप्ति होती है। मन्त्र है—

ॐऐंश्रींह्रांह्रींहूंस्फ्रेंख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं हनुमते मम परस्य च महाभयानि सर्वव्याघ्रतस्करजलाग्निविषजङ्गमस्थावरसहजकृत्रिमोपविषमहासंग्रामिकारण्यवादविवादशस्त्रास्त्रादिकानि संहर संहर विनाशय विनाशय ग्रस ग्रस ग्रासय ग्रासय त्रोटय त्रोटय भञ्ज भञ्ज भञ्जय भञ्जय स्तम्भय स्तम्भय कुण्ठय कुण्ठय मोहय मोहय हुं हुं हुं घे घे घे हुं फट् स्वाहा।

यद्यपि मूल में कहा गया है कि इसमें एक सौ इकसठ अक्षर हैं, परन्तु यह कथन चिन्त्य है, क्योंकि इसमें एक सौ चालीस अक्षर ही होते हैं। यह मन्त्र शस्त्र-अस्त्र-विष-सर्पादि की व्यथा एवं भय का विनाशक है। रामदूत का यह मन्त्र जप करने पर साधक की सभी इच्छायें पूरी करता है।

हनुमन्मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

मारुतेर्मन्त्रमन्यं च ब्रुवे सर्वमनोहरम्। सद्यः फलति भक्तानां कार्यप्रत्ययकारकम् ॥१॥
तारं वागिन्दिरां देवीं हृल्लेखां च त्रिधा वद। आद्यस्वरैस्त्रिभिश्चाथ बिन्दुनाङ्कितमस्तकाम् ॥२॥
सपान्तं वह्निसंस्थं च ईशानस्वरसंयुतम्। बिन्दुनादं ततः प्रोक्तमितरं कूटकं शृणु ॥३॥
द्वितीयं तु कवर्गस्य पवर्गस्य तदेव हि। यवर्गस्य द्वितीयेन संयुक्तमेयुतं कुरु ॥४॥
बिन्दुना भूषितं मूर्ध्नि ततोऽन्यच्छृणु बीजकम्। शिवेन्दुवह्निमच्छक्रस्वराढ्यं बिन्दुभूषितम् ॥५॥
प्राणजीवशून्यपान्तमनलेशस्वरान्वितम्। बिन्द्वन्तिकशिरस्कं च कूटं पंक्त्यभिधं महत् ॥६॥

शिवशक्तियुतं चान्यदिन्द्रस्वरसमन्वितम्। बिन्द्वन्तिकं विद्धि कूटमेकादशमतिध्रुवम् ॥७॥
नतिर्हनुमते चेति पश्चाद्राक्षसकुलेति वै। दावानल द्वादशार्ककोटिसूर्यप्रभा-पदम् ॥८॥
ज्वलत्तनूरुह-पदं भीमनादं ममोच्चरेत्। परस्य च दुष्टपदं दुर्जनस्य महा-पदम् ॥९॥
पकारक-पदं वादि-विवादद्वेषकारक। ततः कार्यभञ्जकेति क्रूरप्रकृतिकं पदम् ॥१०॥
प्रवृद्धकोपावेशक हन्तु चेति ततः परम्। कामुकादीन् पदं वाच्यं दूरस्थेति पदं ततः ॥११॥
समीपस्थान् भूतभविष्यद्वर्तमानानथोच्चरेत्। पुंस्त्रीनपुंसकांश्चातुर्वर्णान् क्षणेन सत्वरम् ॥१२॥
हन द्विधा दह द्विधा संहारय द्विधा वदेत्। मोहयेति द्विधा वाच्यं मर्दयेति द्विधा वदेत् ॥१३॥
द्वेषयेति पुनश्चोक्त्वा मार्जारमूषकेति च। (तथा)वत्सद्यः प्राणैश्च वियोजय द्विधोच्चरेत् ॥१४॥
विध्वंसय द्विधा झिल्लि द्विधा मूकय च द्विधा। पौनरुक्त्या जारयेति बन्धयेति द्विधा वदेत् ॥१५॥
जृम्भयेति द्विधा प्रोक्त्वा पातयेति द्विधा वदेत्। ततो ममपदं चोक्त्वा परस्य च ततः परम् ॥१६॥
पादतलाक्रमितांश्च कुरुद्वन्द्वं ततो वदेत्। दासीभूतान् संपादय द्विधा हा च त्रिधोच्चरेत् ॥१७॥
त्रिः कोपं च त्रिधा घे च कवचास्त्राग्निवल्लभा। वर्णानां द्विशतं प्रोक्तं पञ्चषष्ट्युत्तरं मनौ ॥१८॥
विद्वेषे वैरिदुष्टानां क्रूरबुद्धिविनाशने। मन्त्रोऽयं गदितः सत्यं मुनिभिर्मन्त्रपारगैः ॥१९॥
विशेषतो कलौ सद्यःप्रत्ययश्चाल्पबुद्धिभिः। महारुद्रावतारस्य जगत्प्राणात्मजस्य हि ॥२०॥
मनुं विद्धि वरिष्ठं च सर्वसिद्धिप्रदं नृणाम्। वारि भस्माभिमन्त्र्याथ सिकताः सर्षपास्तथा ॥२१॥
अभिमन्त्र्य प्रविकिरेत् सर्वत्र च इतस्ततः। तल्लङ्घनाद्भवन्त्येव सर्वे दुष्टास्तु सेवकाः ॥२२॥

अथोद्धारः—ॐऐंश्रींह्रांह्रींहूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते राक्षसकुलदावानल द्वादशार्ककोटिसूर्यप्रभाज्वलत्तनूरुह भीमनाद मम परस्य च दुष्टदुर्जनमहापकारकवादिविवादद्वेषकारककार्यभञ्जक क्रूरप्रकृतिकवृद्धकोपावेशकहन्तुकामुकादीन् दूरस्थसमीपस्थान् भूतभविष्यद्वर्तमानान् पुंस्त्रीनपुंसकांश्चातुर्वणन् क्षणेन सत्वरं हन हन दह दह संहारय संहारय मोहय मोहय मर्दय मर्दय मर्दय द्वेषय द्वेषय मार्जारमूषिकवत् सद्यः प्राणैर्वियोजय वियोजय विध्वंसय विध्वंसय झिल्लि झिल्लि मूकय मूकय जारय जारय बन्धय बन्धय जृम्भय जृम्भय पातय पातय मम परस्य च पादतलाक्रमितान् कुरु कुरु दासीभूतान् संपादय संपादय हा हा हा हुं हुं हुं घे घे घे हुं फट् स्वाहा।

मन्त्रान्तर—मारुति के अन्य मनोहर मन्त्र को कहता हूँ, जिसकी उपासना से भक्तों की शीघ्र इच्छित फल मिलता है। दो सौ पैंसठ अक्षरों का यह मन्त्र है—ॐऐंश्रींह्रांह्रींहूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते राक्षसकुलदावानल द्वादशार्ककोटिसूर्यप्रभाज्वलत्तनूरुह भीमनाद मम परस्य च दुष्टदुर्जनमहापकारकवादिविवादद्वेषकारककार्यभञ्जक क्रूरप्रकृतिकवृद्धकोपावेशकहन्तुकामुकादीन् दूरस्थसमीपस्थान् भूतभविष्यद्वर्तमानान् पुंस्त्रीनपुंसकांश्चातुर्वणन् क्षणेन सत्वरं हन हन दह दह संहारय संहारय मोहय मोहय मर्दय मर्दय मर्दय द्वेषय द्वेषय मार्जारमूषिकवत् सद्यः प्राणैर्वियोजय वियोजय विध्वंसय विध्वंसय झिल्लि झिल्लि मूकय मूकय जारय जारय बन्धय बन्धय जृम्भय जृम्भय पातय पातय मम परस्य च पादतलाक्रमितान् कुरु कुरु दासीभूतान् संपादय संपादय हा हा हा हुं हुं हुं घे घे घे हुं फट् स्वाहा।

शत्रुओं एवं दुष्टों में विद्वेष क्रूर बुद्धि के विनाश के लिये मन्त्रपारग मुनियों के मत से यह श्रेष्ठ मन्त्र है। कलियुग में अल्प बुद्धि वालों को इससे शीघ्र सिद्धि मिलती है। महारुद्रावतार जगत्प्राण पवन के पुत्र का यह वरिष्ठ मन्त्र मनुष्यों के लिये सर्वसिद्धिप्रद है। इस मन्त्र से जल. भस्म, सिकता (बालू), सरसों को अभिमन्त्रित करके इधर-उधर सर्वत्र छींट दे तो इसको लाँघने वाले सभी दुष्ट साधक के सेवक हो जाते हैं।

हनुमन्मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

वेदमूर्धा तथा वाणी रमा बिन्दुविभूषिता। माया मुखेन वामाक्षिवामश्रुतिविभेदिना ॥१॥
बिन्दुना भूषितं मूर्ध्नि षड्बीजानि ततः परम्। चान्द्रं चास्त्रार्णयुक् कृत्वा दहनारूढमेव च ॥२॥
शिवस्वरेण संयुक्तमपरं कूटकं शृणु। शून्यं पान्त्यसमायुक्तमग्निनाधोयुतं तथा ॥३॥
एकादशकलायुक्तं बिन्दुमत्तदनन्तरम्। ततो वदेच्छिवं चान्द्रसंयुतं वह्निसंस्थितम् ॥४॥
मनुस्वरेण संयुक्तं बिन्दुनापि ततः शिवम्। जीवं शून्यं पान्त्ययुक्तं वह्निनाधो युतं तथा ॥५॥
वाण्यादिकेन संयुक्तं बिन्दुभूषितमस्तकम्। शिवमिन्दुयुतं कुर्यात् शतमन्युकलान्वितम् ॥६॥
मस्तके बिन्दुसंयुक्तं तदेतद्बीजपञ्चकम्। नतिर्हनुमते चोक्त्वा त्रैलोक्याक्रमणेति च ॥७॥
पराक्रमेति श्रीरामभक्त मम परस्य च। सर्वशत्रूंश्चतुर्वर्णसंभवानिति वै वदेत् ॥८॥
पुंस्त्रीनपुंसकान् भूतभविष्यद्वर्तमानकान्। दूरस्थ च समीपस्थान् राज्ञो नाना ततो वदेत् ॥९॥
नामधेयांस्ततो नाना सुकरेति च कीर्तिजान्। कलत्रपुत्रमित्रेति भृत्यबन्धुसुहृज्जनान् ॥१०॥
समेतान् प्रभुशक्तीति सहितान् क्षित्यतः परम्। धनधान्यादिसंपत्तियुक्तान् राज्ञस्ततः परम् ॥११॥
राजसेवकान् मन्त्रीति पदं मन्त्रिसखानिति। आत्यन्तिकं क्षणेनेति वारयेति द्विधा वद ॥१२॥
नानोपायैः पदं चैव ततो मारययुग्मकम्। शस्त्रैश्छेदययुग्मं च अग्निना ज्वालय द्विधा ॥१३॥
दाहयेति द्विधा वाच्यं घातयेति द्विधा वद। कुमारवत् पादतलाक्रमणेन ततो वद ॥१४॥
आत्रोटय द्विधा वाच्यं घातयेति द्विधा तथा। बन्धयुग्मं भूतसङ्घैः सह भक्षययुग्मकम् ॥१५॥
क्रुद्धचेतसेति नखैर्विदारय द्विधा वद। देशादस्मादिति तत उच्चाटय द्विधा वद ॥१६॥
पिशाचवद् भ्रंशयेति द्विधा भ्रामय च द्विधा। भयातुरान् विसंज्ञांश्च सद्यः कुरुयुगं वद ॥१७॥
भस्मीभूतान् द्विधा वाच्यमुन्मूलय पुनर्वद। भक्तजनवत्सलेति सीताशोकापहारक ॥१८॥
सर्वत्र मां तथैनं च रक्षयुग्मं च हात्रयम्। क्रोधत्रयं घे-त्रयं च कवचास्त्राग्निवल्लभा ॥१९॥
एकचत्वारिंशोत्तरत्रिशतान्यपि च स्फुटम्। वर्णानां गणना ज्ञेया दुष्टारिद्वेषणे तथा ॥२०॥
हनुमन्मन्त्रसामर्थ्याद् दुर्जयो मन्त्रविद्भवेत्।

अथोद्धारः—ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते त्रैलोक्याक्रमणपराक्रम श्रीरामभक्त मम परस्य च सर्वशत्रूंश्चतुर्वर्णसम्भवान् पुंस्त्रीनपुंसकान् भूतभविष्यद्वर्तमानकान् दूरस्थसमीपस्थान् राज्ञो नानानामधेयान् नानासुकरकीर्तिजान् कलत्रपुत्रमित्रभृत्यबन्धुसुहृज्जनसमेतान् प्रभुशक्तिसहितान् क्षितिधनधान्यादिसंपत्तियुक्तान् राज्ञो राजसेवकान् मन्त्रिमन्त्रिसखानात्यन्तिकं क्षणेन वारय वारय नानोपायैर्मारय मारय शस्त्रैश्छेदय छेदय अग्निना ज्वालय ज्वालय दाहय दाहय घातय घातय कुमारवत् पादतलाक्रमणेन आत्रोटय आत्रोटय घातय घातय बन्ध बन्ध भूतसङ्घैः सह भक्षय भक्षय क्रुद्धचेतसा नखैर्विदारय विदारय देशादस्मादुच्चाटय उच्चाटय पिशाचवद् भ्रंशय भ्रंशय भ्रामय भ्रामय भयातुरान् विसज्ञांश्च सद्यः कुरु कुरु भस्मीभूतानुन्मूलय उन्मूलय भक्तजनवत्सल सीताशोकापहारक सर्वत्र मामेनं च रक्ष रक्ष हा हा हा घे घे घे हुं फट् स्वाहा।

हनुमान् मन्त्रान्तर—तीन सौ इकतालीस अक्षरों का एक अन्य मन्त्र इस प्रकार है—ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते त्रैलोक्याक्रमणपराक्रम श्रीरामभक्त मम परस्य च सर्वशत्रूंश्चतुर्वर्णसम्भवान् पुंस्त्रीनपुंसकान् भूतभविष्यद्वर्तमानकान् दूरस्थसमीपस्थान् राज्ञो नानानामधेयान् नानासुकरकीर्तिजान् कलत्रपुत्रमित्रभृत्यबन्धुसुहृज्जनसमेतान् प्रभुशक्तिसहितान् क्षितिधनधान्या-दिसंपत्तियुक्तान् राज्ञो राजसेवकान् मन्त्रिमन्त्रिसखानात्यन्तिकं क्षणेन वारय वारय नानोपायैर्मारय मारय शस्त्रैश्छेदय छेदय अग्निना

ज्वालय ज्वालय दाहय दाहय घातय घातय कुमारवत् पादतलाक्रमणेन आत्रोटय आत्रोटय घातय घातय बन्ध बन्ध भूतमण्डलं भक्षय भक्षय क्रुद्धचेतसा नखैर्विदारय विदारय देशादस्मादुच्चाटय उच्चाटय पिशाचवद् भ्रंशय भ्रंशय भ्रामय भ्रामय भयातुरान् विसंज्ञांश्च सद्यः कुरु कुरु भस्मीभूतानुन्मूलय उन्मूलय भक्तजनवत्सल सीताशोकापहारक सर्वत्र मामेनं च रक्ष रक्ष हा हा हा घे घे घे हुं फट् स्वाहा।

तीन सौ इकतालीस अक्षरों का यह मन्त्र दुष्टों एवं शत्रुओं में विद्वेषकारक है। इस हनुमन्मन्त्र के प्रभाव से साधक ... हो जाता है।

हनुमन्मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

वेदमूर्धा ततो वाणी लक्ष्मीर्बीजत्रयं ततः। द्वितुर्य्यषष्ठभिन्ना च हल्लेखा समुदीरिता ॥१॥
बीजान्येतानि षड्विद्धि सबिन्दूनि महान्त्यपि। शिवः शशी पान्त्यवह्निर्बिन्दुयुक्तं ततः परम् ॥२॥
(सफरेणादिसंयुक्तं बिन्दुमद्वैन्दवे ततः। कान्त्यपान्त्यसमारूढं बृहद्भानुस्फुटं युतम् ॥३॥
ईश्वरेण समायुक्तं बिन्दुभूषितमस्तकम्। शिवः शक्तिश्च वह्निश्च शतमन्युकलायुतम् ॥४॥)
जीवान्त्यं चन्द्रसंयुक्तं गादिमेन तथा युतम्। अस्त्रवर्णसमोपेतमेवर्णानलसंयुतम् ॥५॥
बिन्दुना भूषितं पूर्वं सहाद्यं समुदीरितम्। शक्त्यारूढः शिवो ज्ञेयो बिन्दुभूषितमस्तकः ॥६॥
चतुर्दशस्वरोपेतमेतत् कूटमनुक्रमात्। पञ्चकूटानि बीजानि एकादश क्रमेण च ॥७॥
पुनर्वेदादि संप्रोक्तं नतिर्हनुमते ततः। प्रकटेति ततश्चान्ते पराक्रमपदं ततः ॥८॥
आक्रान्तदिङ्मण्डलेति यशोवितानधवलीकृत वै ततः।
जगत्त्रितय वज्रदेहेति ज्वलदग्निसूर्यकोटिसमप्रभ ॥९॥
तनूरुहपदं रुद्रावतार लङ्कापुरीदहनेति च। उदधिलङ्घनपदं दशग्रीवशिरःकृतान्तक ॥१०॥
सीतासमाश्वासनतस्ततो वायुसुतेति च। अञ्जनीगर्भसंभूत श्रीरामेति पदं ततः ॥११॥
लक्ष्मणानन्दकरेति कपिसैन्यपदं ततः। प्राकारपदमुच्चार्य ततो द्रोणपदं वदेत् ॥१२॥
पर्वतोच्चाटनपदं सुग्रीवसख्यकारण। वालिनिर्हरणकारण ततो द्रोणपदं वदेत् ॥१३॥
पर्वतोत्पाटनाशोकवनमुक्त्वा विदारण। अक्ष चेति कुमारेति च्छेदनेति पदं वदेत् ॥१४॥
वनरक्षाकरसमूहविभञ्जन ब्रह्मास्त्रमुच्चरेत्। ब्रह्मशक्तिपदस्यान्ते ग्रसनेति ततो वदेत् ॥१५॥
तथोद्धरेल्लक्ष्मणेति शक्तिभेदनिवारण। शल्यविशल्यौषधीति समानयन वै ततः ॥१६॥
बालोदितभानुपदं मण्डलग्रसनेति च। मेघनादहोमपदं विध्वंसन ततः परम् ॥१७॥
इन्द्रजिद्वधकारणेति सीतारक्षक वै पदम्। ततश्च राक्षसीसङ्घविदारणपदं ततः ॥१८॥
कुम्भकर्णादिवधेति परायणपदं वदेत्। श्रीरामभक्तितत्पर समुद्रेति पदं वदेत् ॥१९॥
व्योमद्रुमलङ्घनेति महासामर्थ्य वै पदम्। महातेजःपुञ्जपदं विराजमान वै पदम् ॥२०॥
स्वामिवचनसंपादितार्जुनेति पदं वदेत्। संयुगेति पदं चोक्त्वा सहायेति पदं वदेत् ॥२१॥
कुमारब्रह्मचारिंश्च गम्भीरशब्द वेति च। उदयेति दक्षिणाशामार्तण्ड मेरुपर्वत ॥२२॥
पीठिकार्चन सकलमन्त्रागमपदं तथा। आचार्यपदमुच्चार्य मम सर्वग्रहेति च ॥२३॥
विनाशन सर्वपदं ज्वरोच्चाटन सर्व च। विषविनाशनपदं सर्वापत्तिनिवारण ॥२४॥
सर्वदुष्टादीति पदं निवर्हणपदं ततः॥ सर्पव्याघ्रादिभयेति निवारणपदं ततः ॥२५॥
सर्वशत्रुच्छेदनेति पदं मम परस्य च। ततस्त्रिभुवनं पुंस्त्रीनपुंसकात्मकं पदम् ॥२६॥

ततः सर्वजीवजातं वशयेति द्वयं वदेत्। ममाज्ञाकारकं चेति संपादय द्विधा वद ॥२७॥
ततो नानानामधेयान् सर्वराज्ञः पदं वद। ततः सपरिवारांश्च तथैव मम सेवकान् ॥२८॥
कुरुयुग्मपदं सर्वशस्त्रास्त्रेति विषाणि च। विध्वंसय द्विधोच्चार्य मायां पूर्ववदुच्चरेत् ॥२९॥
हा त्रिधा च समुच्चार्य तद्वदेव हि चोच्चरेत्। पूर्वोदितं पञ्चकूटं वैपरीत्येन चोच्चरेत् ॥३०॥
सर्वशत्रून् हनद्वन्द्वं परबलानि ततः परम्। परसैन्यानि क्षोभय द्विधा ममपदं ततः ॥३१॥
ततः सर्वकार्यजातं साधयेति द्विधा वद। सर्वदुष्टदुर्जनेति मुखानि कीलय द्विधा ॥३२॥
घे त्रिधोच्चर हाकारं त्रिधा क्रोधं त्रिधा ततः। त्रिधा चास्त्रं वह्निजायासंयुतोऽयं मनुः स्मृतः ॥३३॥
मन्त्रे वर्णाः समाख्याता द्विनवत्युत्तराः खलु। पञ्चशत्यर्णकाः सत्यं मन्त्रविद्भिः पुरातनैः ॥३४॥
मन्त्रेण वायुपुत्रस्य महाबलयशस्विनः। एकादशोग्ररूपस्य रामचन्द्रपदात्मनः ॥३५॥
सर्वकार्यार्थसिद्धिश्च गदितः सर्वसिद्धिदः। रक्षाविधौ प्रयोक्तव्यः क्षते शस्त्रामये तथा ॥३६॥
वश्ये च विजये वादे स्तम्भे सर्वत्र चोदितः। राजगृहे च संग्रामे राजचौरभये क्षते ॥३७॥
विषबन्धविमोक्षे च क्रोधस्तम्भे विशेषतः। रिपुदुर्जनदुष्टानां निग्रहोच्चाटने तथा ॥३८॥
प्रयोक्तव्यो विशेषेण सत्वरं फलते ध्रुवम्। किमत्र बहुनोक्तेन भाषणेन पुनः पुनः ॥३९॥
यदीच्छेत् प्रत्ययं द्रष्टुं प्रोक्तोऽयं मनुरद्भुतः। कार्ये सम्मोहनेऽत्यर्थं सत्यं सत्यं न चान्यतः ॥४०॥

अथोद्धारः—ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें हस्रौं हसखफ्रें हसौं ॐ नमो हनुमते प्रकटपराक्रमाक्रान्तदिङ्मण्डल-यशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितय वज्रदेह ज्वलदग्निसूर्यकोटिसमप्रभतनूरुह रुद्रावतार लङ्कापुरीदहन उदधिलङ्घन दशग्रीव(शिरः)कृतान्तक सीतासमाश्वासन वायुसुताञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार (द्रोणपर्वतोच्चाटन) सुग्रीवसख्यकारण वालिनिर्हरणकारण द्रोणपर्वतोत्पाटन अशोकवनविदारण अक्षकुमारकच्छेदन वनरक्षाकरसमूहविभञ्जन ब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रसन लक्ष्मणशक्तिभेदनिवारण शल्यविशल्यौषधिसमानयन बालोदि-तभानुमण्डलग्रसन मेघनादहोमविध्वंसन इन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षकराक्षसीसङ्घविदारण कुम्भकर्णादिवधपरायण श्रीरामभक्तितत्पर समुद्रव्योमद्रुमलङ्घन महासामर्थ्य महातेजःपुञ्जविराजमान स्वामिवचनसंपादितार्जुनसंयुगसहाय कुमारब्रह्मचारिन् गम्भीरशब्दोदय दक्षिणाशामार्तण्ड मेरुपर्वतपीठिकार्चन सकलमन्त्रागमाचार्य्य मम सर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्तिनिवारण सर्वदुष्टादिनिबर्हण सर्पव्याघ्रादिभयनिवारण सर्वशत्रुच्छेदन मम परस्य च त्रिभुवनं पुंस्त्रीनपुंसकात्मकं सर्वजीवजातं वशय वशय ममाज्ञाकारकं संपादय संपादय नानानामधेयान् सर्वराज्ञः सपरिवारान् मम सेवकान् कुरु कुरु सर्वशस्त्रास्त्रविषाणि विध्वंसय विध्वंसय ह्रांह्रींह्रूं हाहाहा ह्सौं हसखफ्रें ह्स्रौं खफ्रें स्फ्रें सर्वशत्रून् हन हन परबलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय मम सर्वकार्यजातं साधय साधय सर्वदुष्टदुर्जनमुखानि कीलय कीलय घेघेघे हाहाहा हुंहुंहुं फट् फट् फट् स्वाहा।

मन्त्रान्तर—हनुमान का पाँच सौ बानवे अक्षरों का एक अन्य मन्त्र इस प्रकार है—ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें हस्रौं हसखफ्रें हसौं ॐ नमो हनुमते प्रकटपराक्रमाक्रान्तदिङ्मण्डलयशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितय वज्रदेह ज्वलदग्निसूर्यकोटिसमप्रभतनूरुह रुद्रावतार लङ्कापुरीदहन उदधिलङ्घन दशग्रीव(शिरः)कृतान्तक सीतासमाश्वासन वायुसुताञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर कपि-सैन्यप्राकार (द्रोणपर्वतोच्चाटन) सुग्रीवसख्यकारण वालिनिर्हरणकारण द्रोणपर्वतोत्पाटन अशोकवनविदारण अक्षकुमारकच्छेदन वन-रक्षाकरसमूहविभञ्जन ब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रसन लक्ष्मणशक्तिभेदनिवारण शल्यविशल्यौषधिसमानयन बालोदितभानुमण्डलग्रसन मेघनादहो-मविध्वंसन इन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षकराक्षसीसङ्घविदारण कुम्भकर्णादिवधपरायण श्रीरामभक्तितत्पर समुद्रव्योमद्रुमलङ्घन महासामर्थ्य महातेजःपुञ्जविराजमान स्वामिवचनसंपादितार्जुनसंयुगसहाय कुमारब्रह्मचारिन् गम्भीरशब्दोदय दक्षिणाशामार्तण्ड मेरुपर्वतपीठिकार्चन सकलमन्त्रागमाचार्य्य मम सर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्तिनिवारण सर्वदुष्टादिनिबर्हण सर्पव्याघ्रादिभयनिवारण

सर्वशत्रुच्छेदन मम परस्य च त्रिभुवनं पुंस्त्रीनपुंसकात्मकं सर्वजीवजातं वशय वशय ममाज्ञाकारकं संपादय संपादय नानानामधेयान् सर्वराज्ञः सपरिवारान् मम सेवकान् कुरु कुरु सर्वशस्त्रास्त्रविषाणि विध्वंसय विध्वंसय ह्रांह्रींहूं हाहाहा ह्सौं हसखफ्रें ह्स्त्रौं खफ्रें स्फ्रें सर्वशत्रून् हन हन परबलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय मम सर्वकार्यजातं साधय साधय सर्वदुष्टदुर्जनमुखानि कीलय कीलय घेघेघे हाहाहा हुंहुंहु फट् फट् फट् स्वाहा।

महाबली, यशस्वी वायुपुत्र, ग्यारह उग्र रूपों वाले, रामराचन्द्र के भक्त हनुमान् का यह मन्त्र सभी कार्यों में सिद्धिदायक कहा गया है। शास्त्राघात के घाव में या रोग में इससे रक्षा होती है। इसका प्रयोग वशीकरण, वाद में विजय, स्तम्भन, राजगृह में, युद्ध में, राजभय, चोरभय, विषनिवारण, बन्धन-मोक्ष में, क्रोध-स्तम्भन में, शत्रु-दुर्जन एवं दुष्टों के निग्रह-उच्चाटन में होता है। यह प्रयोग शीघ्र फल-प्रदायक है। बार-बार क्या कहा जाय; इससे सभी इच्छायें पूरी होती हैं इस मन्त्र को सम्मोहन में अद्भुत कहा जाता है।

हनुमद्द्वादशाक्षरमन्त्रः

अथ द्वादशाक्षरमन्त्रः—

द्वादशाक्षरविद्याया उद्धारः क्रियतेऽधुना। शैवं मनुस्वराक्रान्तं बिन्दुभूषितमस्तकम् ॥१॥
पूर्वोदितं पञ्चकूटं बीजषट्कमिदं विदुः। हनुमांश्चतुर्थ्या संयोज्य ततो नतिपुरःसरम् ॥२॥
द्वादशार्णा महाविद्या यस्य कस्यापि मा वद। रहस्यं ते मयाख्यातं वाल्मीकिमुनिनोदितम् ॥३॥

हौं स्फ्रें खफ्रें ह्स्त्रौं हसखफ्रें ह्सौं हनुमते नमः।

रामचन्द्र ऋषिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम्। महावीरो हनुमांश्च देवतात्र समीरितः ॥४॥
मारुतात्मजशब्दादि ह्स्त्रौंबीजं तु बीजकम्। अञ्जनीसूनुशब्दान्ते स्फ्रेंबीजं शक्तिरुच्यते ॥५॥
कीलकं हात्रयं प्रोक्तं श्रीरामभक्तिरादितः। ह्रांप्राणश्चापि श्रीरामलक्ष्मणानन्दकारि च ॥६॥
ह्रांह्रींहूमिति जीवः स्यात्तत्तत्कामे नियोजनम्। एवं हि सर्वमन्त्राणां ज्ञातव्यो मुनिवित्तमैः ॥७॥
विशेषोऽत्र षडङ्गानि षट्कूटैः कुरुते बुधः। कराङ्गुलीषु विन्यासं कुर्यादिष्टशुभोदयम् ॥८॥
एवमङ्गेषु विन्यस्य मन्त्रवर्णांस्ततो न्यसेत्। मूर्ध्नि भाले दृशोरास्ये गले दोर्हृदयाम्बुजे ॥९॥
कुक्षौ नाभौ ध्वजे जानुद्वये पादद्वये न्यसेत्। मन्त्रपादैरष्टभिश्च देहाङ्गेष्वेव संस्मृतः ॥१०॥
मूर्ध्नि भाले मुखे कण्ठे नाभौ चोर्वोस्तु जङ्घयोः। पादयोश्चैव कर्तव्यो ध्यानं कुर्यात् समाहितः ॥११॥

ध्यायेद्बालदिवाकरप्रतिनिभं देवारिदर्पापहं देवेन्द्रप्रमुखैः प्रशस्तयशसं देदीप्यमानं रुचा।
सुग्रीवादिसमस्तवानरयुतं सुव्यक्ततत्त्वप्रियं संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालङ्कृतम् ॥१२॥
मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥१३॥

द्वादशाक्षर मन्त्र—हनुमान् का परम गोपनीय द्वादशाक्षर मन्त्र इस प्रकार है—हौं स्फ्रें खफ्रें ह्स्त्रौं हसखफ्रें ह्सौं हनुमते नमः। वाल्मीकि ने कहा है कि यह महाविद्या जिस-किसी को नहीं बतलानी चाहिये। इस मन्त्र के ऋषि रामचन्द्र, छन्द गायत्री एवं देवता महावीर हनुमान हैं ह्स्त्रौं बीज, स्फ्रें शक्ति, कीलक हात्रय एवं ह्रां प्राण है। ह्रां ह्रीं हूं जीव है। कर्मानुसार इसे नियोजित किया जाता है। सभी मन्त्रों में इसी प्रकार जानना चाहिये षडङ्ग न्यास हौं स्फ्रें खफ्रें ह्स्त्रौं हसफ्रें ह्स्त्रौं षट्कूटों से किया जाता है। कर न्यास भी इन्हीं से किया जाता है।

मन्त्रवर्ण न्यास—मन्त्रवर्णों का न्यास मूर्धा, भाल, नेत्रों, मुख, गला, बाहु, हृदय, कुक्षि, नाभि, लिङ्ग, जानुद्वय, पादद्वय में करे। मन्त्र के आठ पदों का न्यास मूर्धा, भाल, मुख, कण्ठ, नाभि, उरुओं, जाँघों, पैरों में करे। तदनन्तर इस प्रकार हनुमान का ध्यान करे—

ध्यायेद्बालदिवाकरप्रतिनिभं देवारिदर्पापहं देवेन्द्रप्रमुखैः प्रशस्तयशसं देदीप्यमानं रुचा।
सुग्रीवादिसमस्तवानरयुतं सुव्यक्ततत्त्वप्रियं संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालङ्कृतम्।।
मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्। वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि।।

वानरेयामुद्रा

वानरेया च मुद्रेयं तां शृणुष्व वदाम्यहम्। करौ संपुटितौ कृत्वा समाश्लिष्टाङ्गुलि स्फुटम्॥१४॥
अङ्गुष्ठौ द्वौ प्रलुपितौ(?) अन्तर्गर्भे स्थिरीकुरु। हृदयोपरि संस्थाप्य मुकुलाकारसंपुटम्॥१५॥
स्वामिपादे स्थिता दृष्टिर्मुद्रोपरि समास्थिता। ज्ञेयेयं वानरीमुद्रा चैतन्मन्त्रं जपेद् ध्रुवम्॥१६॥
तर्जन्यग्रेऽङ्गुष्ठमूले कृत्वा त्वङ्गुलयोरपि (?)। तत् स्यात् पुटितयोः पाण्योर्मुद्रा वानरिसंज्ञिका॥१७॥
अरे मल्लवटजेत्युक्त्वा, वातोऽरमल्लवटजेत्युक्त्वा कपिमुद्रां प्रदर्शयेत्।

पुरश्चर्यास्य मन्त्रस्य प्रोक्ता चार्कसहस्रिका। भौमस्य वासरे पूजा कार्या हनुमतो ध्रुवम्॥१८॥
ततश्चार्कास्तमारभ्य यावत् सूर्योदयो भवेत्। तावन्मन्त्रं जपेद्रात्रौ कार्यमुद्दिश्य मन्त्रवित्॥१९॥
प्रियङ्गवो व्रीहयोऽथ दध्याज्यक्षीरसंयुताः। कदलीमातुलुङ्गाम्रफलैर्नानाविधैर्हुनेत्॥२०॥
दशांशेन ततो ब्रह्मचारिणो भोजयेद् ध्रुवम्। द्वाविंशतिं च संख्याभिर्हनुमत्प्रीतये सुधीः॥२१॥

वानरी मुद्रा—अब वानरी मुद्रा कहता हूँ। हाथों को मिलाकर अंगूठों को सम्पुट में छिपा दे और उसे हृदय पर रखे। स्वामी के पैर पर दृष्टि रखे। तब इस मन्त्र का जप करे। अंगूठों के मूल में तर्जनियों को लगावे और हाथों को मिलावे तो वानरी मुद्रा बनती है।

इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह हजार जप से होता है। मंगलवार को हनुमान की पूजा करे। सूर्यास्त से सूर्योदय तक रात में कार्य या उद्देश्य का स्मरण करते हुए जप करे। प्रियंगु, चावल, दही, दूध, गोघृत मिलाकर हवन करे। केला, जम्बीरी नीबू, आम आदि फलों से भी हवन करे। कुल जप का दशांश हवन करे। तब बाईस ब्रह्मचारियों को भोजन करावे।

काम्यप्रयोगविधिः

अष्टोत्तरशतेनाभिमन्त्रयेद्भस्म वारि च। ग्रहदोषे विषे चैव मार्जयेत् पयसा तनुम्॥२२॥
हनुमत्प्रतिमा कार्या ततो भूताङ्कुशस्य च। पूर्वोत्तरगतेनैव मूलेनाङ्गुष्ठमात्रता (?)॥२३॥
सर्वावयवसंपूर्णा चित्तप्राशस्त्यकारिणी। प्राणसंस्थापनं तस्याः कृत्वा वै मारुतेर्ध्रुवम्॥२४॥
सिन्दूरचर्चितां कृत्वा तथाभ्यर्च्योपचारकैः। मन्त्रिता तेन मन्त्रेण ततस्तां द्वारदेशके॥२५॥
खनित्वा निक्षिपेद्भूमौ गृहस्याभिमुखं निशि। भूतजा विषजा बाधा ग्रहजा कूटमन्त्रजा॥२६॥
चेटकाभयजा व्याधिज्वरजा चाभिचारजा। चोराग्निबाधा च तथा न भवेत्तद्गृहेऽरिजा॥२७॥
तद्गृहं नन्दते सर्वसमृद्धिधनसंयुतम्। रात्रौ रात्रौ जपेन्मन्त्रं षट्शतं त्रिशतं तथा॥२८॥
दशवासरपर्यन्तं राजशत्रुभयं हरेत्। अभिचारज्वरे भूतज्वरे च भस्मना तनुम्॥२९॥
मन्त्रितेनाम्भसा वाथ ताडयेद्रोषपूर्वकम्। त्रिदिनाज्ज्वरमुक्तिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा॥३०॥
औषधे च रसे मन्त्रं दशवारं जपेद् बुधः। तेनाभिमन्त्रितं दत्तं सर्वं सफलतां व्रजेत्॥३१॥
शस्त्रधाराग्निसंस्तम्भे दशवारं जपेद् बुधः। तेनाभिमन्त्रितं तोयं भस्म तस्य प्रदापयेत्॥३२॥
भस्मना चर्चितं देहं पयश्च प्राशयेद् ध्रुवम्। शस्त्रस्तम्भो भवेत्तस्य सत्यं सत्यं न संशयः॥३३॥
शस्त्रक्षतेषु लूतासु रक्तग्रन्थ्यादिसम्भवे। भस्मना पयसा तत्र त्रिवारं चाभिमन्त्रयेत्॥३४॥
न व्यथा न च पूयं स्यात्संशोभयति तद्व्रणम्। सप्तवासरपर्यन्तं विद्वेषोच्चाटने जपः॥३५॥
सूर्यास्तं च समारभ्य कुर्यादित्थं बुधोत्तमः। अरुणोदयपर्यन्तं भस्म कीलाभिमन्त्रितम्॥३६॥

तद्द्वारे पूरितं गेहे रोपितं वापि तत्क्षणात्। ततस्तस्योच्चाटनं स्यात् परिवारयुतस्य च ॥३७॥
पुत्रादिभिः सर्वलोकैः पौरैर्जानपदैस्तथा। विद्वेषणप्राणघातः सत्यं सत्यं वचो मम ॥३८॥
भस्माम्बु मन्त्रितं यस्य देहे चन्दनमिश्रितम्। चर्चितं यत्तु खाद्यादियोजितं यत्र दापितम् ॥३९॥
स वश्यो जायते नूनं प्राणैरपि धनैरपि। दासतां याति देवोऽपि मनुष्येषु च का कथा ॥४०॥
क्रूरसत्त्वानि सर्वाणि वशयेदमुना खलु। प्रकारेण महावीर ज्वलनं शीततामियात् ॥४१॥
दिव्यस्थाने च कर्तव्यं निःशक्तिश्च हुताशनः। भवत्येव न सन्देहो लोहतैलेषु संस्थितः ॥४२॥

इस मन्त्र के एक सौ आठ जप से भस्म जल को अभिमन्त्रित करे। ग्रहदोष में, विष खाने पर इसके साथ दूध से मार्जन करे तो रोगी ठीक हो जाता है। कूशमूल से अंगूठे के बराबर हनुमान जी की प्रतिमा सभी अवयवों से युक्त मनोहर बनावे। उसमें हनुमान की प्राण-प्रतिष्ठा करे; उसे सिन्दूर चर्चित करके उपचारों से पूजा करे। मन्त्र से उसे अभिमन्त्रित करे। घर के द्वार पर प्रतिमा का मुख घर की ओर करके रात में भूमि में गाड़ दे तो उस घर में शत्रुकृत भूत, विष, ग्रह, कूट मन्त्रजन्य बाधा, चेटक भय, व्याधि, ज्वर, अभिचार, चोर, अग्नि-बाधा नहीं होती। वह घर समस्त समृद्धियों से युक्त होकर आनन्द से परिपूर्ण रहता है। प्रत्येक रात में छः सौ या तीन सौ मन्त्र-जप करे। दश रात तक ऐसा करने से राजा एवं शत्रु का भय समाप्त हो जाता है। अभिचार ज्वर में, भूत ज्वर में जल में भस्म को मन्त्रित करके क्रुद्ध मुद्रा से छींटा मारे। ऐसा करने पर तीन दिनों में बुखार उतर जाता है।

औषधि या रस को दश मन्त्रजप से अभिमन्त्रित करके पीड़ित को देने से पूर्ण सफलता मिलती है। शस्त्र, जलधारा, अग्निस्तम्भन में दश मन्त्रजप से भस्म जल को मन्त्रित करके उनमें गिराने से उनका स्तम्भन होता है। मन्त्रित भस्म को देह में लगाकर दूध पिलावे तो उस पर छोड़े गये शस्त्रों का स्तम्भन होता है। शस्त्रघात के घाव में, लूता में, रक्तग्रन्थि होने पर तीन मन्त्रजप से मन्त्रित भस्म लगावे तो पीड़ित की पीड़ा खत्म हो जाती है और उसका घाव ठीक हो जाता है। विद्वेषण-उच्चाटन के लिये सात दिनों तक जप करे। सूर्योस्त से सूर्यादय तक रात भर कील भस्म को जप से मन्त्रित करे। तदनन्तर साध्य के घर में या उसके द्वार पर उस गोड़ दे तो उसी क्षण से परिवार-पुत्रसहित साध्य का उच्चाटन हो जाता है। इससे सभी लोकों, नगरों, जनपदों में प्राणघातक विद्वेष हो जाता है। मन्त्रित भस्माम्बु में चन्दन मिलाकर जिसके देह में लगाया जाय या भोज्य में मिलाकर दिया जाय, वह धन-प्राणसहित वश में हो जाता है। इससे देवता भी दास हो जाते हैं, तब मनुष्यों की तो बात ही क्या है। इससे सभी क्रूर सत्त्व वाले वश में होते हैं। जलते हुए घर की ज्वाला बुझ जाती है। दिव्य स्थान में निःशक्ति हुताशन करे। इससे साध्य लौह तैल में संस्थित होता है।

मारणे क्रुद्धचित्तेन श्मशाने निशि भूतले। रिपोः प्रतिकृतिं कृत्वा भस्मना वाथवा मृदा ॥४३॥
पूर्ववत् प्राणसंस्थां च कृत्वा यत्नेन मन्त्रवित्। प्रतिमाहृदि तन्नाम लेख्यं चैव प्रयत्नतः ॥४४॥
शस्त्रेण च्छेदनं कुर्यान्मन्त्रोच्चारणपूर्वकम्। छिन्धि भिन्धि मारयेति तन्नामान्ते समुच्चरेत् ॥४५॥
एवं सप्तदिनं कुर्याद् दन्तैरोष्ठं निपीड्य च। कृत्वा प्रपीडितं पाणितलयोर्दृढमात्मनः ॥४६॥
होमः कार्यस्तत्र वाथ राजिकालवणैः सह। उन्मत्तफलपुष्पैश्च श्लेष्मान्तकविभीतकैः ॥४७॥
विषरोमनखैश्चैव काककौशिकगृध्रकैः। पक्वैः कटुकतैलाक्तैरर्धचन्द्राकृतौ हुनेत् ॥४८॥
स्थण्डिले मुक्तकेशस्तु सूकर्य्या मुद्रया बुधः। दक्षिणाशामुखो भूत्वा पल्लवोच्चारणं कुरु ॥४९॥
त्रिशतावृत्तिभेदेन सप्तवासरमध्यतः। शत्रुर्मृत्युमवाप्नोति रुद्रेणापि सुरक्षितः ॥५०॥
दिनत्रयं रात्रिभागे श्मशाने षट्शतं जपेत्। प्रेतमुत्थापयेत् सत्यं वेतालः किंकरो भवेत् ॥५१॥
शुभाशुभं च वदति मन्त्रिणा सह निश्चयात्। ददाति भाषां सत्यां च कारयेति करोति च ॥५२॥

मारण कर्म में क्रुद्ध चित्त से श्मशान में रात में जमीन पर भस्म या मिट्टी से शत्रु की प्रतिमा बनावे। उसमें शत्रु की

प्राणप्रतिष्ठा करे। प्रतिमा के हृदय में शत्रु का नाम लिखे। मन्त्रोच्चारणपूर्वक शस्त्र से उसे टुकड़ों में काट दे। काटते समय शत्रु के नाम के आगे 'छिन्धि भिन्धि मारय' जोड़कर उच्चारण करे। दाँतों से ओठ दबाकर सात दिनों तक दृढ़ता से करतलों को दबाकर ऐसा करे। इसके बाद राई नमक धत्तूर फल पुष्प लिसोडे विभीतक विष, कौआ उल्लू गिद्ध के रोम-नख को कडुआ तेल में पकाकर अर्द्ध चन्द्राकृति कुण्ड में हवन करे। स्थण्डिल में केश खोलकर सूकरी मुद्रा से दक्षिण तरफ मुख करके पल्लव उच्चारणसहित हवन तीन सौ सात दिनों तक करे। ऐसा करने से रुद्र से रक्षित होने पर भी शत्रु की मृत्यु हो जाती है। तीन रातों तक श्मशान में छ: सौ जप करे तो श्मशान से वेताल उठकर साधक का किंकर हो जाता है और वह वेताल मन्त्री को शुभाशुभ बतलाता है एवं उसकी भाषा को सत्य करता या कराता है।

भस्माम्बु मन्त्रितं रात्रौ सहस्रावृत्तिकं कुरु। दिनत्रयं ततश्चैव निक्षिपेत् प्रतिमासु च ॥५३॥
यासु कासु च स्थूलासु लघुष्वपि विशेषतः। मन्त्रप्रभावाच्चलनं भवत्येव न संशयः ॥५४॥
मन्त्रेणानेन सिद्धेन यदसाध्यं च साधयेत्। विषे भये विवादे च शस्त्रसंग्रामसङ्कटे ॥५५॥
द्यूते दिव्यस्तम्भने च विशेषो मारणे तथा। मृतकोत्थापने चैव प्रतिमाचलने तथा ॥५६॥
विषे ज्वरे भूतज्वरे ग्रहे कृत्यादिमोचने। क्षते ग्रन्थौ महारण्ये दुर्गे व्याघ्रे च दन्तिनि ॥५७॥
क्रूरसत्त्वेषु सर्वेषु शस्त्रस्तम्भविमोक्षणे। बन्धमोक्षे मारणे च मोहे शान्तौ नियोजयेत् ॥५८॥
मन्त्रमेनं हनुमतो नानाकार्यप्रसाधनम्। बन्धमुक्तौ जपेन्मन्त्रं रात्रौ रात्रौ च निर्भयः ॥५९॥
लिखित्वा प्रतिमां भूमौ मारुतेरस्खलन् नरः। स्वनामाक्षरसङ्घं तु द्वितीयान्तं समालिखेत् ॥६०॥
मन्त्रस्यान्ते तथा मां च विमोचय विमोचय। मार्जयेद्वामहस्तेन पुनस्तथैव लेखयेत् ॥६१॥
एवमष्टाधिकशतं लेखयेन्मार्जयेन्नरः। एवं कुर्वन् सुबद्धोऽपि शृङ्खलाभिर्दृढं नरः ॥६२॥
महापराधसंयुक्तः प्राणहानर्थकारकः। स सप्तदिनमध्ये तु बन्धनान्मुच्यते सुखम् ॥६३॥
हनुमांस्तु समागत्य स्वयं स मोक्षयेन्नरम्। न तु दण्डयितुं शक्ता राजानो विभवो जनाः ॥६४॥
हवनान्यपि सन्त्यत्र दशांशेन निबोधय। स्तम्भने चणका माषा न्यग्रोधस्य फलानि च ॥६५॥
हरिद्रा च तथा प्रोक्ता तालकं सल्लकीफलम्। शाल्मलीकुसुमान्याहुर्मधुत्रययुतानि च ॥६६॥
उच्चाटे गदितान्यत्र श्लेष्मान्तकविभीतकाः। वश्यार्थे सर्षपा लाक्षा मधुकाण्डं च गुग्गुलम् ॥६७॥
विद्वेषे करवीराणां पत्राणि समिधस्तथा। श्लेष्मान्तकविभीतानां समिधो जीरकं तथा ॥६८॥
मधुरं रामठं चैव कटुतैलसमन्वितम्। ज्वरे तापे च शूले च गण्डमालाभगन्दरे ॥६९॥
दुर्वागुडूचीखण्डानि साज्यक्षीरदधीनि च। शूलेष्वेरण्डसमिधः कुबेराक्षस्तथैव च ॥७०॥
निर्गुण्डीसमिधश्चैव तिलतैलसमन्विताः। लक्ष्मीप्राप्त्यै सरोजानि बिल्वपत्राणि चैव हि ॥७१॥
समिधस्तस्य होतव्या मधुत्रयसमन्विताः। पञ्च खाद्यं नारिकेलद्राक्षेक्षुकदलीफलम् ॥७२॥
सौभाग्यसर्वसंपत्तिसाधनं हवनं शृणु। कर्पूरं केसरं नाभिं चन्दनं रोचनां तथा ॥७३॥
तजपत्रं वीरणं च लवलैलागरु तथा। मांसीं नखं जातिपत्रं त्वक्फलं लोहवालुकाम् ॥७४॥
साज्यान्येतानि सर्वत्र विज्ञेयानि मनीषिभिः। पुष्पैः सुगन्धिभिर्वासः प्राप्यते चोत्तमोत्तमम् ॥७५॥
द्रोहे च मारणे ज्ञेयं विषं स्याद्राजिकास्तथा। कङ्कौशिकगृध्राणां पक्षाश्च विजया तथा ॥७६॥
गृहधूमकराश्चैव लवणं कटुतैलकम्। पादपांशुस्तथा राजी लवणं कर्षणे स्मृतम् ॥७७॥
गृहधूमकराश्चैव लवणं कटुतैलकम्। पादपांशुस्तथा राजी लवणं कर्षणे स्मृतम् ॥७७॥
उन्मत्तफलपुष्पाणि समिधो मोहने स्मृताः। धान्यैः संप्राप्यते धान्यमत्रैरन्नसमृद्धयः ॥७८॥

तिलाज्यक्षीरदधिभिर्महिषीगोसमृद्धयः । एवं नानाप्रयोगांश्च साधयेन्मन्त्रवित्तमः ।।७९।।
पुरश्चर्याजपेनैव हनुमन्तं च सेवयेत् ।

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे त्रयस्त्रिंशः श्वासः।।३३।।

●

तीन दिनों तक रात में एक हजार मन्त्रजंप से भस्माम्बु को मन्त्रित करके प्रतिमा पर छींटा मारे तो छोटी या मोटी प्रतिमा मन्त्रप्रभाव से चलने लगती है। इस सिद्ध मन्त्र से जो चाहे सिद्ध किया जा सकता है। विष से भय में, विवाद में, शस्त्र संग्राम-संकट में, जुआ में, दिव्य स्तम्भन में, विशेष मारण में, मृतक को उठाने में, प्रतिमाचालन में, विषमज्वर में, भूतज्वर में, ग्रह-कृत्यादि मोचन में, ग्रन्थि कटने में, घोर जंगल में, दुर्गम मार्ग में, व्याघ्र-हाथी क्रूर सत्त्वों के बीच पड़ने पर एवं सभी शस्त्रों के स्तम्भन-विमोक्षण में, बन्धन-मोक्ष में, मारण में, मोहन में और शान्ति कर्म में इस हनुमत् मन्त्र का प्रयोग करे। विविध कार्य-साधन में, जेल से छुड़ाने के लिये प्रत्येक रात में निर्भय होकर मन्त्र-जप करे। भूमि पर हनुमान का चित्र बनाकर उसमें अपने द्वितीयान्त नामाक्षरों को लिखे। मन्त्र के अन्त में 'मां विमोचय विमोचय' लिखे। उसे बाँयें हाथ से मिटा दे। फिर चित्र बनावे। इस प्रकार एक सौ आठ बार चित्र लिखे और मिटावे। ऐसा करने से मजबूत सीकड़ में भी बन्धा महापराधी हत्यारा भी सात दिनों के अन्दर बन्धन से छूटकर सुखी होता है। ऐसा करने से हनुमान् स्वयं आकर उसे बन्धन से मुक्त करते हैं। राजा भी कैदी को दण्ड नहीं दे सकता। इसके लिये दशांश हवन भी अपेक्षित है। स्तम्भन में चना, उड़द, वटवृक्ष के फल, हल्दी, ताल, सल्लकी फल, सेमर फूल आदि को त्रिमधुराक्त करके हवन करे। उच्चाटन कर्म में श्लेष्मान्तक विभीतक से हवन करे। वशीकरण में सरसों लाह मधुकाण्ड गुग्गुल से हवन करे। विद्वेषण में कनैल के पत्तों और उसी की समिधा से हवन करे। श्लेष्मान्तक विभीतक समिधा जीरा मीठा रामठ में कड़ुआ तेल मिलाकर हवन करे। बुखार ताप दर्द गण्डमाला भगन्दर में तिल तेलमिश्रित निर्गुण्डी की समिधा से हवन करे। लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये कमल बेल पत्र से बेल की समिधाग्नि में मधुरत्रय मिलाकर हवन करे। सौभाग्य सर्वसम्पत्ति के लिये पञ्चमेवा नारियल द्राक्षा ईख केला से हवन करे। सौभाग्य-सम्पत्ति के लिये कपूर केसर कस्तूरी चन्दन गोरोचन तेजपत्र वीरण लवंग इलायची अगर जटामासी नख जातीपत्र छाल फल लौहचूर्ण में गोघृत मिलाकर हवन करे। सुवासित पुष्पों के हवन से उत्तम लक्ष्मी प्राप्त होती है। विद्वेषण-मारण में विष, राई, कौआ, उल्लू, गिद्ध के पंख, भांग, गृहधूम, नमक, कड़ुआ तेल से हवन करे। आकर्षण के लिये पदतल की धूल राई नमक से हवन करे। मोहन के लिये धत्तूर के फल फूल समिधा से हवन करे। धान्य के हवन से धान्य और अन्न के हवन से अन्न की समृद्धि होती है। तिल गोघृत दूधदही के हवन से गाय-भैसों की वृद्धि होती है। इस प्रकार मन्त्रज्ञ नाना प्रयोगों का साधन करे। पुरश्चरण करके हनुमान की सेवा में लगा रहे।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र की कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में त्रयस्त्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ चतुस्त्रिंशः श्वासः

हनुमत्पूजायन्त्रम्

अथ हनुमत्पूजायन्त्रम्—

अथ पूजाविधानार्थं यन्त्रं वै कथ्यतेऽधुना। षट्कोणं वसुपत्रं च चतुरस्रं च बाह्यतः ॥१॥
बीजयुक्तं लिखेत्सम्यक् नाम लेख्यं हनूमतः। षट्कोणेषु षडङ्गानि बीजयुक्तानि संलिखेत् ॥२॥
बीजत्रयं च कोणाग्रे लिखेत्सम्यक् पुनस्ततः। अञ्जनीपुत्राय तथा ततो वै रुद्रमूर्तये ॥३॥
तथा वायुसुतायेति जानकीजीवनाय च। रामदूताय ब्रह्मास्त्रनिवारणाय ततः परम् ॥४॥
षट्कोणस्यान्तरालेषु संलेख्यं नामषट्ककम्। वसुकोणेषु बीजानि नामानि च समालिखेत् ॥५॥
सुग्रीवायाङ्गदायाथ सुशीलाय ततः परम्। नलायाथ च नीलाय तथा जाम्बवते-पदम् ॥६॥
प्रहस्ताय सुषेणाय दलमध्येषु संलिखेत्। रामभक्तो महातेजाः कपिराजो महाबलः ॥७॥
द्रोणाद्रिधारको मेरुपीठिकार्चनकारकः। दक्षिणाशाभास्करश्च सर्वविघ्ननिवारकः ॥८॥
दलान्तरालेषु लिखेन्नामान्यष्टौ प्रयत्नतः। लोकपालान् सायुधांश्च चतुरस्रे च संलिखेत् ॥९॥
रक्षोघ्नाय द्वि(वि)षघ्नाय रिपुघ्नाय तथैव च। व्याधिघ्नाय ज्वरघ्नाय भूतघ्नाय ततः परम् ॥१०॥
पाशशस्त्रमन्त्रघ्नाय यन्त्रघ्नाय विशेषतः। सर्पव्याघ्रमहोत्पातभयघ्नाय जितात्मने ॥११॥
ब्रह्मग्रहमहाराजकोपघ्नाय तदुत्तरम्। कृत्याक्षतग्रहघ्नाय बलघ्नाय च सर्वतः ॥१२॥
रामप्रियाय रुद्राय रामभक्तिरताय च। भक्तप्रियाय जगतीदुर्भिक्षार्तिविदारिणे ॥१३॥
पार्थोग्रसङ्गरानन्तशक्तिविक्रमवर्धिने। अनन्तनगरग्रामपुरपट्टनरक्षिणे ॥१४॥
स्वामिभक्ताय शूराय वीरभद्राय योगिने। स्वभक्तवादसंग्रामविजयाप्तिविवर्धिने ॥१५॥
इत्येतद्दिक्षु संलेख्यं स्तुत्याख्यं नामसङ्घकम्। एवं यन्त्रवरे सम्यक् पूजा कार्या हनूमतः ॥१६॥
अप्राप्तं वाञ्छितं सर्वं प्रापयत्येव निश्चितम्।

हनुमत् पूजा यन्त्र—अब मैं पूजा-विधान के लिये यन्त्र का वर्णन करता हूँ। षट्कोण बनाकर उसके बाहर अष्टपत्र बनावे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। कर्णिका में बीजयुक्त हनुमत् नाम लिखे। षट्कोण के कोणों में बीजयुक्त षडङ्ग मन्त्र लिखे। कोणाग्र में फिर बीजत्रय लिखे। बीजयुक्त छः नामों अञ्जनीपुत्राय, रुद्रमूर्तये, वायुसुताय, जानकीजीवनाय, रामदूताय, ब्रह्मास्त्रनिवारणाय को षट्कोण के अन्तरालों में लिखे। अष्टपत्रों में बीजों साथ सुग्रीवाय, अंगदाय, सुशीलाय, नलाय, नीलाय, जाम्बवते, प्रहस्ताय, सुषेणाय—इन आठ नामों को लिखे। दलों के अन्तरालों में रामभक्त, महातेजा, कपिराज महाबल, द्रोणाद्रिधारक, मेरु पीठिकार्चनकारक, दक्षिणाशाभास्कर एवं सर्व विघ्ननिवारक—इन आठ नामों को लिखे। चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि उनके आयुधों को लिखे। निम्नांकित नामसमूह स्तुति को दिशाओं में लिखे—

रक्षोघ्नाय विषघ्नाय रिपुघ्नाय तथैव च। व्याधिघ्नाय ज्वरघ्नाय भूतघ्नाय ततः परम्।।
पाशशस्त्रमन्त्रघ्नाय यन्त्रघ्नाय विशेषतः। सर्पव्याघ्रमहोत्पातभयघ्नाय जितात्मने।।
ब्रह्मग्रहमहाराजकोपघ्नाय तदुत्तरम्। कृत्याक्षतग्रहघ्नाय बलघ्नाय च सर्वतः।।
रामप्रियाय रुद्राय रामभक्तिरताय च। भक्तप्रियाय जगतीदुर्भिक्षार्तिविदारिणे।।
पार्थोग्रसंगरानन्तशक्तिविक्रमवर्द्धिने। अनन्तनगरग्रामपुरपट्टनरक्षिणे।।
स्वामिभक्ताय शूराय वीरभद्राय योगिने। स्वभक्तवादसंग्रामविजयाप्तिविवर्धिने।।

इस श्रेष्ठ यन्त्र में हनुमान् की पूजा सम्यक् रूप में करे। इससे अप्राप्त एवं वांछित सब कुछ प्राप्त होता है।

धारणयन्त्रविधिः

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि धारणार्थं विशेषतः ॥१७॥

भूर्जे ताम्रेऽथवा वस्त्रे भित्तौ पट्टे शिलातले। तालपत्रेऽथवा लेख्यं रोचनानाभिकेसरैः ॥१८॥
श्रीखण्डैश्चैव कर्पूरैः सर्वं यन्त्रं समालिखेत्। वृत्तत्रयं समालेख्यं वलयेन सुपुच्छवत् ॥१९॥
साध्यनाम लिखेन्मध्ये बहिरष्टदलं लिखेत्। दलेष्वष्टसु संलेख्यं हुंकारं संमुखं तथा ॥२०॥
बहिः संवेष्टयेत्तत्र वलयेन दृढं तथा। तद्बहिश्चतुरस्रं स्याद् रेखाग्रैश्च सुविस्तृतैः ॥२१॥
तद्रेखासु त्रिशूलानि लेखयेच्छोभनानि च। मूलमन्त्रेण तत् सर्वं वेष्टयेन्मण्डलक्रमैः ॥२२॥
पुनर्बहिस्तथैवापि त्रिरेखाभिश्च वेष्टयेत्। रेखान्ते च त्रिवलयं कारयेदेककोणकम् ॥२३॥
तन्मध्ये त्वङ्कुशं लेख्यं ह्सौंबीजं च समालिखेत्। वज्राष्टकेषु संयोज्यं मूलबीजं तथाष्टधा ॥२४॥
मर्कटस्य च तद्यन्त्रे प्राणारोपं च कारयेत्। पाशादित्र्यक्षरस्यान्ते स्यादमुष्यपदं पुनः ॥२५॥
क्रमात् प्राणा इह प्राणास्तथा जीव इहस्थितः। अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि भूयोऽमुष्य-पदं वदेत् ॥२६॥
वाङ्मनोनयनश्रोत्रघ्राणप्राणपदान्यथ। पश्चादिहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु ठद्वयम् ॥२७॥
अयं प्राणमनुः प्रोक्तः सर्वजीवप्रदायकः। षट्शतैस्त्रिशतैर्वापि तद्यन्त्रमभिमन्त्रयेत् ॥२८॥
मर्कटेश्वरसंयोगं प्राणबुद्ध्या च कारयेत्। निष्कल्मषब्रह्मचर्याव्रतधारी जितेन्द्रियः ॥२९॥
त्यक्ताशनो महाभागो हनूमन्तं च पूजयेत्। कदलीमातुलुङ्गादिफलैलादिमनोहरैः ॥३०॥
पुष्पैर्नानाविधैस्तं च सोपचारैः समाहितः। ततो यन्त्रं सुधार्यं स्यात्सर्वबाधाविनाशकृत् ॥३१॥
सर्वरक्षाकरं नृणां बालानां योषितामपि। पशूनां च मृगाणां च हयानां सर्वजीविनाम् ॥३२॥
ज्वरमारीस्फोटकादिचोररोगभयापहम्। राजद्वारे वने घोरे संग्रामे रिपुसङ्कटे ॥३३॥
शस्त्रपाते महाभीमे दिव्याग्निजलसंप्लवे। जनवश्ये राजवश्ये रिपुविद्वेषणे वधे ॥३४॥
दधतामनिशं यन्त्रं प्राणस्थापनपूर्वकम्। सर्वकार्यं सुसिद्धं स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥३५॥

धारण यन्त्र—अब धारण किये जाने वाले यन्त्र को कहता हूँ। भोजपत्र ताम्रपत्र वस्त्र भीत पट्ट शिलातल या ताडपत्र पर गोरोचन कस्तूरी केसर चन्दन कपूर से सभी यन्त्रों को लिखे। पहले तीन वृत्त बनावे। मध्य में साध्य का नाम लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। दलों में हुं सं लिखे। उसके बाहर वलय से वेष्टित करे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। चतुरस्र की रेखाग्रों को बढ़ाकर त्रिशूल बनावे। इनको मूल मन्त्र से मण्डल क्रम से वेष्टित करे। उसके बाहर तीन रेखाओं से वेष्टित करे। रेखा के अन्त में त्रिवलयों से कोण बनावे। उसमें क्रों ह्सौं लिखे। वज्राष्टक में आठ मूल बीजों को लिखे। उस यन्त्र में मर्कट की प्राणप्रतिष्ठा करे। 'आं ह्रीं क्रों अमुष्य प्राण इह प्राण जीव इह स्थितः, अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि अमुष्य वाङ्मनो नयन श्रोत्र घ्राण प्राण इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' यह प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र है। यह मन्त्र सर्व जीव-प्रदायक है। छः सौ या तीन सौ मन्त्रजप से इसे अभिमन्त्रित करे। इसमें प्राणबुद्धि से मर्कटेश्वर का संयोग करे। निष्पाप ब्रह्मचर्य व्रतधारी जितेन्द्रिय निराहार रहकर महाभाग साधक हनुमान की पूजा केला जम्बीरी नीबू आदि फल नाना फूलों और उपचारों से करे। तब इस यन्त्र को धारण करे तो सभी बाधाओं का नाश होता है। मनुष्यों बालकों औरतों पशुओं मृगों घोड़े आदि जीवों की रक्षा होती है। इस यन्त्र के धारण करने से ज्वर, मारी, चेचक, चोर, रोगभय का नाश होता है। राजद्वार, जंगल, घोर संग्राम, शत्रुसंकट, शस्त्रपात, भयंकर अग्नि, जलसंप्लव, जनवश्य, राजवश्य, शत्रु विद्वेषण एवं वध में यह यन्त्र रक्षा करता है। प्राणप्रतिष्ठापूर्वक धारण करने से यह यन्त्र सभी कार्यों को सिद्ध करता है।

अन्यद्धारणयन्त्रविधिः

अन्यद्यन्त्रं धारणाख्यं कथ्यते शृणु सुन्दरम्। षट्कोणं विलिखेद्यन्त्रं भूर्जपत्रे च सुन्दरे ॥३६॥

वस्त्रे पट्टे कागदे वा भित्त्यां द्रव्यैः सुगन्धकैः। हसौंमध्यगतं साध्यनाम लेख्यं विशेषतः ॥३७॥
ततस्तद्वेष्टयेत् तेन मायाबीजेन वै पुनः। हनूमान् रक्षरक्षेति षट्कोणेषु लिखेत् ततः ॥३८॥
अन्तराले त्रिशूलानि मायाबीजान्तराणि च। एतद्यन्त्रं महाश्रेष्ठं सर्वसिद्धिकरं नृणाम् ॥३९॥
साधयेत् सर्वकार्याणि नात्र कार्या विचारणा।

अन्य धारण यन्त्र—अब अन्य धारण यन्त्र कहता हूँ। भोजपत्र वस्त्र पर, पटरे पर, कागज पर या भीत पर सुगन्धित द्रव्यों से षट्कोण लिखे। इसके मध्य में साध्य नाम के साथ 'ह्सौं' लिखे। उसे 'ह्रीं' से वेष्टित करे। षट्कोण को काणों में हनुमान् रक्ष रक्ष लिखे। कोणों के अन्तरालों में त्रिशूल बनाकर उनमें ह्रीं लिखे। यह महाश्रेष्ठ यन्त्र मनुष्यों को सभी सिद्धियाँ देने वाला है। इससे सभी कार्यों को सिद्ध किया जा सकता है।

प्रतिमायन्त्रविधानम्

अधुना प्रतिमायन्त्रं कथ्यते तन्निशामय ॥४०॥
कपीश्वरस्य रूपं च समालेख्यं प्रयत्नतः। वस्त्रे वा कागदे वाथ मस्या चालक्तकेन वा ॥४१॥
हिङ्गुलेनाथवा चान्यैर्लेख्यं द्रव्यैः सुशोभनैः। तत्रैव क्रमयोगेन साध्यनामाक्षराणि च ॥४२॥
प्रथमं हृदये लेख्यं द्वितीयं मस्तके तथा। तृतीयं दक्षिणे बाहौ चतुर्थं वामके भुजे ॥४३॥
पञ्चमं च तथा षष्ठं पाण्योर्दक्षिणवामयोः। उदरे सप्तमं चैव दक्षोरौ चाष्टमं तथा ॥४४॥
वामोरौ नवमं चैव दशमं दक्षपत्तले। एकादशं च संलेख्यं वामपादतले तथा ॥४५॥
एवं क्रमेण संलेख्यं वर्णानां च समूहकम्। वश्ये द्वेषे स्तम्भने च मारणे मोहने तथा ॥४६॥
आकर्षणे बन्धमुक्तौ विजये च विशेषतः। द्वादशाक्षरविद्यायास्तदक्षरयुतं लिखेत् ॥४७॥
मन्त्राद्यं बीजषट्कं च चतुर्थ्यन्तं नमोन्तकम्। तन्नाम कथिता विद्या द्वादशाक्षरवर्णिका ॥४८॥
वशमानय संलेख्यं वश्ये चाम्रेडितान्वितम्। विद्वेषयाम्रेडितं च विद्वेषे समुदीरितम् ॥४९॥
आम्रेडितं स्तम्भयेति स्तम्भने समुदीरितम्। आम्रेडितं मारयेति मारणे समुदीरितम् ॥५०॥
आम्रेडितं मोहयेति मोहने समुदीरितम्। आम्रेडितं मोक्षयेति बन्धमोक्षे समीरितम् ॥५१॥
एवंविधं तु संलेख्यं प्रतिमायन्त्रमुत्तमम्। साध्याकृतिं वस्त्रमयीं कृत्वा पूर्ववदुत्तमाम् ॥५२॥
रक्ताञ्जनेन संलेख्य सान्द्रां कृत्वा प्रयत्नतः। क्षीरेण नवनीतेन दध्ना चान्येन केनचित् ॥५३॥
प्राणानां स्थापनं कृत्वा रोषेणोच्चाटनं कृतम्। नामोद्देशेन तु रिपोः पीडयेदाकृतिं स्थिताम् ॥५४॥
तद्रसस्य तु पानं वै कारयेन्मृत्युहेतवे। अथवाग्नौ क्षिपेत्तत्तु चैत्ये मारणहेतवे ॥५५॥
एवं कृत्वा रिपोः सत्यं मृत्युर्भवति नान्यथा। प्राणप्रतिष्ठापूर्वं तु संपूज्य निक्षिपेद् भुवि ॥५६॥
साध्यस्य द्वारदेशे तु निखनेच्च महामतिः। अथवा भूतले लेख्यं प्रतिमायन्त्रमुत्तमम् ॥५७॥
तत्रेत्थं श्लोकसन्दर्भं साध्यनाम लिखेद् ध्रुवम्। संमार्ज्य पुनरालेख्यं तथैव च पुनः पुनः ॥५८॥
एवमष्टोत्तरशतं लेखनावृत्तिपूर्वकम्। यत्तत्कामं समासाद्य तदा पल्लवयोजना ॥५९॥
कार्यस्य पूर्वयोगे तु ज्ञातव्या मन्त्रिणा ध्रुवम्।
हरिमर्कटमर्कट मन्त्रमिमं यदि लिखति लिखति भूमितले।
यदि नश्यति नश्यति वामकरात् परिमुञ्चति मुञ्चति शृङ्खलिका ॥६०॥
इति लेखनप्रकारः।

प्रतिमा यन्त्र—अब प्रतिमा यन्त्र को कहता हूँ। वस्त्र पर या कागज पर आलता से, हिंगुल से या अन्य लेख्य द्रव्यों से कपीश्वर का चित्र बनावे। क्रमयोग से हृदय में साध्य नामाक्षरों का पहला अक्षर लिखे। दूसरा अक्षर मस्तक में लिखे। तीसरे

अक्षर को दक्ष बाहु में लिखे। चौथे को वाम बाहु में लिखे। पाँचवें अक्षर को दाहिने करतल में, छठे अक्षर को वाम करतल में, सातवें को पेट में, आठवें को दाहिने ऊरु में, नवें को वाम ऊरु में, दशवें को दाहिने पद तल में एवं ग्यारहवें को बाँयें पद तल में लिखे। इस प्रकार वर्णसमूह को क्रमशः लिखे। वशीकरण, विद्वेषण, स्तम्भन, मारण, मोहन, आकर्षण, बन्ध-मोक्ष, विजय के लिये विशेषतः द्वादशाक्षर मन्त्र के अक्षरों के साथ लिखे। द्वादशाक्षर मन्त्र है—हौं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं हनुमते नमः। वशीकरण में इस मन्त्र के अन्त में साध्य नाम अमुकं वशमानय वशमानय लिखे। विद्वेषण में विद्वेषय विद्वेषय लिखे। स्तम्भन में स्तम्भय स्तम्भय लिखे। मारण में मारय मारय लिखे। मोहन में मोहय मोहय लिखे। कैद से छुड़ाने के लिये मोक्षय मोक्षय लिखे। इस प्रकार से लिखित प्रतिमा यन्त्र उत्तम होता है।

वस्त्र पर पूर्ववत् साध्य की आकृति लाल स्याही से बनाकर उसे सुखाकर दूध से, मक्खन से, दही से या अन्य द्रव्य से प्राणप्रतिष्ठा करे। क्रोधपूर्वक अमुकं शत्रु उच्चाटय उच्चाटय कहे तो उच्चाटन होता है। शत्रु के नाम के साथ उस वस्त्र को निचोड़े और जो रस गिरे, उसे पी जाय तो शत्रु की मृत्यु होती है। अथवा चित्रांकित वस्त्र को अग्नि में डालकर जला दे तो शत्रु की मृत्यु होती है। प्राण-प्रतिष्ठा करके पूजन करे और भूमि में गाड़ दे अथवा शत्रु के दरवाजे पर उसे गाड़ दे अथवा भूतल पर प्रतिमा यन्त्र लिखकर उसमें साध्य नाम लिखे। तदनन्तर उसे मिटाकर फिर लिखे। इस प्रकार एक सौ आठ बार लिखने-मिटाने से अभीष्ट कार्य सम्पन्न होता है। कार्य के पहले साधक को निश्चित रूप से पल्ल्वयोजना करनी चाहिये। पल्लव योजना का का प्रकार निम्नवत् बताया गया है—

हरिमर्कटमर्कट मन्त्रमिमं यदि लिखति लिखति भूमितले।
यदि नश्यति नश्यति वामकरात् परिमुञ्चति मुञ्चति शृङ्खलिका।।

द्वादशार्णमन्त्रप्रयोगः

अथ द्वादशाक्षरस्य प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि श्रीरामचन्द्राय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीहनुमते देवतायै नमः। गुह्ये मारुतात्मजबीजाय नमः। पादयोः अञ्जनीहृदयानन्दशक्तये नमः। कृपाप्लवङ्गमेति प्राणाः। श्रीरघुवरकपिश्रेष्ठेति कीलकम्। मत्कार्यकर्ता वानरो रामकिङ्करः, इति कवचम्। हरिर्वज्राङ्गवान् इति शस्त्रम्। धनुर्धरध्वजवासीति ध्यानम्। ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐमारुतात्मज हृदयाय नमः। अञ्जनीहृदयानन्द शिरसे स्वाहा। लक्ष्मणप्राणदात्रे प्लवङ्गमाय शिखायै वषट्। हनूमान् रामदूत कवचाय हुं। श्रीरघुवरकपिश्रेष्ठ नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीवानरो रामकिङ्करः अस्त्राय फट्। एवं करषडङ्गं विधाय ॐहरिर्वज्राङ्गवानिति मणिबन्धयोः। ॐऐंश्रीं‌ह्रांह्रींह्रूं हनुमते नमः इति सर्वाङ्गे व्यापकम्। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं हनुमते नमः हृदयाय नमः। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं रामदूताय शिरसे स्वाहा। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं रामप्रियाय शिखायै वषट्। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं सीताशोकविनाशनाय कवचाय हुं। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं अञ्जनीसूनवे नेत्राभ्यां वौषट्। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं श्रीरामकिङ्करायास्त्राय फट्। ॐ ऐं नमः शिखायां। एवं श्रीं नेत्रयोः। ह्रां मुखे। ह्रीं कण्ठे। ह्रूं बाह्वोः। हं हृदये। नुं कुक्षौ। मं नाभौ। तें गुह्ये। नं जान्वोः। मः पादयोः। इत्यक्षरन्यासः। हौं नमो मूर्ध्नि। ऐं ललाटे। श्रीं मुखे। ह्रां कण्ठे। ह्रीं नाभौ। ह्रूं ऊर्वोः। हनुमते जङ्घयोः। नमः पादयोः। ध्यानम्—

वामे करे वैरिभिदं वहन्तं शैलं तदन्ये घनरन्ध्रटङ्कम्।
बभार? (विशाल)पुच्छाग्रसुवर्णवर्णं ध्यायेज्ज्वलत्कुण्डलमाञ्जनेयम् ॥१॥
अशोकवनपान्दोलं स्वामिमुद्राङ्किताधरम्। जपन्तं रामचन्द्रं च क्रीडादेवारिमर्दनम् ॥२॥
ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं हनुमते नमः, इत्येकः। (हौंऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं हनुमते नमः) इति द्वादशाक्षरोऽन्यः।

द्वादशाक्षर मन्त्र प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि श्रीरामचन्द्राय ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीहनुमते देवतायै नमः। गुह्ये मारुतात्मजबीजाय नमः। पादयोः अञ्जनीहृदयानन्दशक्तये नमः। कृपाप्लवङ्गम इसके प्राण हैं। श्रीरघुवरकपिश्रेष्ठ इसका कीलक है। मत्कार्यकर्ता वानरो रामकिङ्करः इसका कवच है। हरिर्वज्राङ्गवान् इसका शस्त्र है। धनुर्धरध्वजवासी से इसका ध्यान

किया जाता है। अपनी अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास किया जाता है—ॐमारुतात्मज हृदयाय नम:। अञ्जनीहृदयानन्द शिरसे स्वाहा। लक्ष्मणप्राणदात्रे प्लवङ्गमाय शिखायै वषट्। हनूमान् रामदूत कवचाय हुं। श्रीरघुवरकपिश्रेष्ठ नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीवानरो रामकिङ्कर: अस्त्राय फट्। तदनन्तर पुन: ॐहरिर्वज्राङ्गवान् से दोनों मणिबन्ध में न्यास करके ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं हनुमते नम: से समस्त अंगों में व्यापक न्यास करने के पश्चात् षडङ्ग न्यास करे—ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं हनुमते नम: हृदयाय नम:। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं रामदूताय शिरसे स्वाहा। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं रामप्रियाय शिखायै वषट्। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं सीताशोकविनाशनाय कवचाय हुं। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं अञ्जनीसूनवे नेत्राभ्यां वौषट्। ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं श्रीरामकिङ्करायास्त्राय फट्। तदनन्तर शरीर के विविध अंगों में इस प्रकार मन्त्र के अक्षरों का न्यास करे—ॐ ऐं नम: से शिखा में, ॐ श्रीं नम: से नेत्रों में, ॐ ह्रां नम: से मुख में, ॐ ह्रीं नम: से कण्ठ में, ॐ ह्रूं नम: से बाहुओं में, ॐ हं नम: हृदय में, ॐ नुं नम: से कुक्षि में, ॐ मं नम: से नाभि में, ॐ तें नम: से गुह्य में, ॐ नं नम: से जानुओं में, ॐ म: नम: से पैरों में। तदनन्तर पुन: इस प्रकार न्यास करे—ॐ ह्रौं नम: से मूर्धा में, ॐ ऐं नम: से ललाट में, ॐ श्रीं नम: से मुख में, ॐ ह्रां नम: से कण्ठ में, ॐ ह्रीं नम: से नाभि में, ॐ ह्रूं नम: से ऊरुओं में, ॐ हनुमते नम: से जांघों में, ॐ नम: नम: से पैरों में। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

वामे करे वैरिभिदं वहन्तं शैलं तदन्ये घनरन्ध्रटङ्कम्।
बभार? (विशाल)पुच्छाग्रसुवर्णवर्णं ध्यायेज्ज्वलत्कुण्डलमाञ्जनेयम्।।
अशोकवनपान्दोलं स्वामिमुद्राङ्किताधरम्। जपन्तं रामचन्द्रं च क्रीडादेवारिमर्दनम्।।

पहला द्वादशाक्षर मन्त्र है—ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं हनुमते नम:।

दूसरा द्वादशाक्षर मन्त्र है—ह्रौं ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं हनुमते नम:।

सप्रयोगविधिर्हनुमन्मालामन्त्र:

अथ हनुमन्मालामन्त्र:—ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं नमो हनुमते प्रकटपराक्रमाक्रान्तदिङ्मण्डलयशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितयाय वज्रदेहज्वलदग्निसूर्यकोटिसमप्रभतनूरुह रुद्रावतार लङ्कापुरीदहन उदधिलङ्घन दशग्रीवशिर:कृतान्तक सीताश्वासनवायुसुत अञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार द्रोणपर्वतोत्पाटन अशोकवनविदारण अक्षकुमारच्छेदन राक्षसेश्वरसमूहविभञ्जन ब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रसन लक्ष्मणशक्तिभेदनिवारण शल्यविशल्यौषधिसमानयन बालोदितभानुमण्डलग्रसन मेघनादहोमविध्वंसन इन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षक राक्षसीसङ्घविदारण कुम्भकर्णवधपरायण श्रीरामभक्तितत्पर समुद्रव्योमद्रुमलङ्घन महासामर्थ्य महातेज:पुञ्जविराजमान स्वामिवचनसंपादितार्जुनसंयुगसहाय कुमारब्रह्मचारिन् गम्भीरशब्दोदय दक्षिणाशामार्तण्ड मेरुपर्वतपीठिकार्चन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्तिनिवारण सर्वदुष्टनिवर्हण सर्वव्याघ्रादिभयनिवारण सर्वशत्रुच्छेदन मम परस्य च त्रिभुवनपुंस्त्रीनपुंसकात्मकं सर्वजीवजातं वशय वशय ममाज्ञाकरं संपादय संपादय नानानामधेयान् सर्वराज्ञ: सपरिवारान् कुरु कुरु सर्वशस्त्रास्त्रविषादि विध्वंसय विध्वंसय ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं हाहाहा घेघेघे हुंहुंहु ह्रूंह्रींह्रांश्रींऐंॐ एह्येहि सर्वशत्रून् हन हन परबलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय मम कार्यजातं साधय साधय सर्वदुर्जनदुष्टमुखानि कीलय कीलय घेघेघे हुं फट् स्वाहा।

जपेन्मन्त्रमष्टवारं त्रिवारं वा दिने दिने। जपेद् द्वादशसाहस्रं मन्त्रसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।।१।।
अर्घ्यं दशांशत: कुर्याद् दशांशेनैव होमयेत्। मार्जनं तद्दशांशेन तद्दशांशेन भोजनम् ।।२।।
प्रियङ्गुतिलश्यामाकयवव्रीहिसमन्वितम् । पुष्पफलविशेषैस्तु शर्करामधुसंयुतम् ।।३।।
सघृतं शुभखाद्यं च जुहुयाद् भक्तिसंयुत:। करवीरैर्जातिपुष्पैर्बकुलैश्चम्पकै: शुभै: ।।४।।
शतपत्रैश्च कह्लारै: पङ्कजैश्च सुशोभनै:। दाडिमीमातुलुङ्गैश्च नारिकेलफलाम्बुना ।।५।।
पनसद्राक्षाखर्जूरै: शुभैर्वस्त्रैर्हविर्भुजे। राजद्वारे सभामध्ये संवादे रिपुसङ्कटे ।।६।।
बन्धमोक्षे च संग्रामे विषयोगे विशेषत:। असाध्यसाध्यकामे च विद्यारम्भे प्रयत्नत: ।।७।।
क्षुद्रप्रयोगनाशार्थे प्रसूतिनिग्रहस्थले। भूतवेतालसर्पादिव्याघ्रचोरभयाकुले ।।८।।

यात्राप्रयाणकाले च पठेन्मन्त्रं स्वमानसे। नेत्रदु:खे च मोक्षे च शिरोदु:खे तथैव च ॥९॥
ज्वरादिसर्वव्याधिश्च ग्रहपीडा न जायते ॥ कानने जलमध्ये च जपेन्मन्त्रं स्वमानसे ॥१०॥
चिताभस्म वचा कुष्ठं तगरं कुङ्कुमं समम्। चूर्णं स्त्रीशिरसि क्षिप्त्वा पुरुषाणां च पादयो: ॥११॥
अदासो दासतां याति यावज्जीवं न संशय:।

इति विधि:।

हनुमान् माला मन्त्र—हनुमान् का माला मन्त्र इस प्रकार है—ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं नमो हनुमते प्रकटपराक्रमाक्रान्तदिङ्मण्डलयशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितयाय वज्रदेहज्वलदग्निसूर्यकोटिसमप्रभतनूरुह रुद्रावतार लङ्कापुरीदहन उदधिलङ्घन दशग्रीवशिर:कृतान्तक सीताश्वासनवायुसुत अञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार द्रोणपर्वतोत्पाटन अशोकवनविदारण अक्षकुमारच्छेदन राक्षसेश्वरसमूहविभञ्जन ब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रसन लक्ष्मणशक्तिभेदनिवारण शल्यविशल्यौषधिसमानयन बालोदितभानुमण्डलग्रसन मेघनादहोमविध्वंसन इन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षक राक्षसीसङ्घविदारण कुम्भकर्णवधपरायण श्रीरामभक्तितत्पर समुद्रव्योमद्रुमलङ्घन महासामर्थ्य महातेज:पुञ्जविराजमान स्वामिवचनसंपादितार्जुनसंयुगसहाय कुमारब्रह्मचारिन् गम्भीरशब्दोदय दक्षिणाशामार्तण्ड मेरुपर्वतपीठिकार्चन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्तिनिवारण सर्वदुष्टनिवर्हण सर्वव्याघ्रादिभयनिवारण सर्वशत्रुच्छेदन मम परस्य च त्रिभुवनपुंस्त्रीनपुंसकात्मकं सर्वजीवजातं वशय वशय ममाज्ञाकरं संपादय संपादय नानानामधेयान् सर्वराज्ञ: सपरिवारान् कुरु कुरु सर्वशस्त्रास्त्रविषादि विध्वंसय विध्वंसय ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूं हाहाहा घेघेघे हुंहुंहुं ह्रूंह्रींह्रांश्रींऐंॐ एह्येहि सर्वशत्रून् हन हन परबलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय मम कार्यजातं साधय साधय सर्वदुर्जनदुष्टमुखानि कीलय कीलय घेघेघे हुं फट् स्वाहा।

प्रतिदिन इस मन्त्र का जप आठ बार या तीन बार करे। बारह हजार जप पूरा होने पर मन्त्र सिद्ध होता है। दशांश अर्घ्यदान करे। दशांश हवन करे। दशांश मार्जन करे। उसका दशांश ब्राह्मणभोजन करावे। प्रियंगु, तिल, साँवाँ, यव, चावल मिलाकर फूल फल को शक्कर-मधु से युक्त करके घी सहित शुभ खाद्य से हवन करे। शतपत्री, कल्हार, कमल, अनार, मातुलुंग, नारियल जल, कटहल, दाख, खजूर से हविष्यान्न खाकर हवन करे। राजद्वार में, सभा में, संवाद में, शत्रुसंकट में, बन्दी को छुड़ाने में, युद्ध में, विषयोग में, असाध्य साध्य कर्म में, विद्यारम्भ में, क्षुद्र प्रयोगों के नाश के लिये, प्रसूति निग्रह स्थल में, भूत प्रेत वेताल सर्प व्याघ्र से भयाकुल होने पर, यात्रा में जाने के समय इस मन्त्र का मानसिक पाठ करे। आँखों के दर्द में, शिर की पीड़ा में, ज्वरादि सर्व व्याधि में, ग्रहपीड़ा में मानसिक जप करे। जंगल में, जल में मन्त्र का मानसिक जप करे। जंगल में, जल में मन्त्र का मानसिक जप करे। चिताभस्म, वच, कूठ, तगर, कुङ्कुम बराबर-बराबर लेकर चूर्ण बनावे। स्त्री के शिर पर छींटने से एवं पुरुषों के पैरों पर छींटने से अदास भी आजीवन दास रहता है, इसमें संशय नहीं है।

हनुमन्मन्त्रान्तरम्

अथ मन्त्रान्तरम्—

आञ्जनेयमनुं वक्ष्ये भुक्तिमुक्त्येकसाधनम्। प्रकाशितं शङ्करेण लोकानां हितकाम्यया ॥१॥
भूतप्रेतपिशाचादिडाकिनीब्रह्मराक्षसा:। दृष्ट्वा च प्रलयं यान्ति मन्त्रानुष्ठानतत्परम् ॥२॥
प्रधानश्चाङ्गभूतोऽयं मन्त्रराजो ह्यनुत्तम:। पूर्वं नम:पदं चोक्त्वा ततो भगवते-पदम् ॥३॥
आञ्जनेयपदं ङेन्तं महाबलपदं तथा। वह्निजायान्त एव स्यान्मन्त्रो हनुमत: पर: ॥४॥

नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा (१८)।

मूर्ध्नि भाले भ्रुवोर्मध्ये नेत्रयो: कर्णनासयो:। आस्ये कण्ठे च दोर्मूले हृदयेऽप्यथ नाभिके ॥५॥
लिङ्गमूले तथाधारे कट्यां जान्वोश्च जङ्घयो:। पादयोश्च समस्तेन व्यापकं विन्यसेन्मनो: ॥६॥
सर्वसिद्धिकर: प्रोक्तो मन्त्रश्चाष्टादशाक्षर:। मालाख्योऽपरमन्त्रोऽपि मारुते: सर्वसिद्धिद: ॥७॥

एतन्मन्त्रस्यार्घ्यादिध्यानपुरश्चरणप्रयोगादिविधि: पूर्वोक्तवत्।

मन्त्रान्तर—अब आंजनेय मन्त्र को कहता हूँ, जो भोग-मोक्ष का साधन है। यह मन्त्र लोकहित की कामना से शंकर ने कहा है। इस मन्त्र के अनुष्ठान से भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, ब्रह्मराक्षस साधक को देखते ही भाग जाते हैं। यह हनुमान का उत्तम मन्त्र है। उद्धार करने पर अट्ठारह अक्षरों का हनुमान मन्त्र होता है—नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा। मन्त्रवर्णों का न्यास मूर्धा, भाल, भ्रूमध्य, नेत्र, कान, नाक, मुख, कण्ठ, बाहुमूल, हृदय, नाभि, लिङ्गमूल, आधार, कमर, जङ्घा, घुटनों, पैरों में करे। पूरे मन्त्र से व्यापक न्यास करे। यह अट्ठारह अक्षरों का मन्त्र सर्वसिद्धिदायक है। हनुमान का अन्य माला मन्त्र सर्वसिद्धिदायक है। इस मन्त्र के ऋष्यादि ध्यान पुरश्चरण प्रयोग आदि पूर्वोक्त मन्त्र के समान ही होते हैं।

हनुमन्मालामन्त्रः

अथापरो मालामन्त्रः—ॐनमो हनुमते प्रकटपराक्रमाय आक्रान्तदिङ्मण्डलाय यशोवितानधवलीकृत-जगत्त्रितयाय वज्रदेहाय रुद्रावताराय लङ्कापुरीदहन उदधिलङ्घन दशग्रीवकृतान्तक सीताश्वासन अञ्जनीगर्भसम्भव रामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार सुग्रीवसाधारण पर्वतोत्पाटन बालब्रह्मचारिन् गम्भीरशब्द सर्वग्रहविनाशन सर्व-ज्वरहर डाकिनीविध्वंसन ॐह्रांह्रींह्रूं भस्मन्येव सर्वविषहर परबलं क्षोभय क्षोभय मम सर्वकार्याणि साधय साधय हुं फट् स्वाहा। उद्धारस्तु—

प्रणवं पूर्वमुच्चार्य नमो हनुमते पदम्। ङेन्तं प्रकटसंयुक्तं पराक्रमपदं तथा ॥१॥
तथाक्रान्तपदोपेतं दिङ्मण्डलमुदीरयेत्। यशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितयाय च ॥२॥
वज्रदेहाय चेत्युक्त्वा रुद्रावतारपदं तथा। संबुद्ध्यन्तं पदं लङ्कापुरीदहनमीरयेत् ॥३॥
उदधिलङ्घनपदं दशग्रीवकृतान्तक। सीताश्वासनपदोपेतमञ्जनीगर्भसम्भव ॥४॥
श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार च। सुग्रीवसाधारणपदं पर्वतोत्पाटनं तथा ॥५॥
तथा बालब्रह्मचारिंस्तथा गम्भीरशब्द च। सर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरहरं तथा ॥६॥
डाकिनीविध्वंसनपदं ततस्तारमुदीरयेत्। मायात्रितयमुच्चार्य भस्मन्येव वदेत् ततः ॥७॥
सर्वविषहर परबलं क्षोभय क्षोभय। मम च सर्वकार्याणि साधयेति द्विरुच्चरेत् ॥८॥
हुंफट् स्वाहेति मन्त्रोऽयं मालाख्यः सर्वकामधुक्। ऋषिरीश्वर एव स्यादनुष्टुप् छन्द ईरितम् ॥९॥
हनुमान् देवता प्रोक्तो हुंबीजं शक्तिरन्तजा। कीलकं ह्रात्रयं प्रोक्तं वेधकं तु हसौं पुनः ॥१०॥
हनूमत्प्रीतये चैव फलमाद्यमुदीरितम्। नमो भगवते चाञ्जनेयायाङ्गुष्ठयोर्न्यसेत् ॥११॥
रुद्रमूर्तये च तथा तर्जनीभ्यामनन्तरम्। वायुसुतायेति तथा मध्यमाभ्यामपि स्फुटम् ॥१२॥
अग्निगर्भाय च तथानामिकाभ्यां प्रविन्यसेत्। रामदूताय च पुनः कनिष्ठाभ्यां विचक्षणः ॥१३॥
ब्रह्मास्त्रनिवारणाय चास्त्रयन्त्रः समीरितः। षडङ्गं चामुना कृत्वा ततो ध्यायेदनन्यधीः ॥१४॥
स्फटिकाभं स्वर्णकान्तिं द्विभुजं च कृताञ्जलिम्। कुण्डलद्वयसंशोभिमुखाम्भोजं मुहुर्मुहुः ॥१५॥
अयुतं तु पुरश्चर्या रामस्याग्रे शिवस्य वा। पूजां तु वैष्णवे पीठे शैवे वा विदधीत वै ॥१६॥
आवृतिभिर्विना नित्यं नियताशी जितेन्द्रियः। क्षुद्ररोगनिवृत्त्यर्थमष्टोत्तरशतं मुने ॥१७॥
पूजयेत् तद्भयान्मुक्तो भवत्येव न संशयः। महारोगादिशान्त्यर्थमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥१८॥
जप्त्वा तस्मात् प्रमुच्येत निशीथे नियताशनः। जयाभिकाङ्क्षिणो राज्ञस्तस्मादन्यन्न विद्यते ॥१९॥
ध्यायेद्राक्षसहन्तारमयुतं नियताशनः। जपन्नियमतश्चैव जयेदजेयमप्यरिम् ॥२०॥
संदधानं तु सुग्रीवं सन्धानाय स्मरन्नपि। अयुतेनापि बलिना सन्धिमाप्नोत्यसंशयम् ॥२१॥
लङ्काया दाहनं ध्यायन् जपन्नयुतमञ्जसा। शत्रुराष्ट्रं दहेदेव विभवेन सहारिणः ॥२२॥
जयार्थे रिपुसङ्घानामस्मादन्यन्न विद्यते। यस्तु ग्रहे हनूमन्तं सर्वदैव प्रपूजयेत् ॥२३॥
सर्वदैतस्य मन्त्रेण तस्य लक्ष्मीरचञ्चला। दीर्घमायुर्लभेदेव सर्वतो विजयी भवेत् ॥२४॥

सर्पादिभूतसंरक्षा तद्देशे चैव जायते। सर्वतः सर्वदा मित्रं भवत्येव न संशयः ॥२५॥
शैवानां वैष्णवानां च षट्कर्मात्र प्रदर्शितम्। नान्यसाधनमस्त्येव मन्त्रादस्मादनुत्तमम् ॥२६॥
वैरिव्याघ्रादिभीतीनामयमेव परायणः। संनाहे भूरियुद्धेषु रुद्धानां परसैनिकैः ॥२७॥
यात्राकाले हनूमन्तं स्मरन् यस्तु स्वकाद्गृहात्। इच्छया याति वेगेन इष्टार्थमधिगच्छति ॥२८॥
स्वापकाले स्मरेन्नित्यं चोरभूतादिकांस्त्यजेत्। पदं च वासुदेवाद्यं हनुमते पदं पुनः ॥२९॥
कलद्वन्द्वं घघद्वन्द्वं खत्रयं वह्निवल्लभा। चतुर्विंशतिवर्णोऽन्यो सप्लीहोदररोगहृत् ॥३०॥

ॐनमो भगवते हनुमते कल कल घघ घघ खखख स्वाहा (२४)।

नागवल्लीदले चैवमष्टप्रगुणितं शुभम्। वंशजं शङ्कुकं स्थाप्य क्रमात् प्लीहोदरोपरि ॥३१॥
सप्तारण्योपलाग्रे वै बन्धयष्टिं प्रतापयेत्। मन्त्रेणानेनाभिमन्त्रय सप्तवारं तथा पुनः ॥३२॥
तथैव मन्त्रयेदेनं सप्तभिस्तु विचक्षणः (?)। स्फोटद्वारा भवेत् प्लीहो भस्मीभूतो न संशयः ॥३३॥
कर्पूराद्यष्टगन्धेन पुच्छाकारं पटे लिखेत्। कोकिलाक्षस्य लेखिन्या रूपं हनुमतो मनुम् ॥३४॥
उद्यदष्टादशार्णं तु मन्त्रमध्ये निधारयेत्। मूर्ध्नि बद्धेन तेनैव त्रैलोक्यं जयति ध्रुवम् ॥३५॥
महासैन्यपताकायां मन्त्रं यन्त्रं समालिखेत्। चनद्रसूर्यग्रहे जाप्यो मन्त्रस्तन्मोक्षणावधि ॥३६॥
होमयेच्च दशांशेन तिलसर्षपकादिभिः। युद्धकाले पताकां तां गजाश्वोपरि संस्थिताम् ॥३७॥
दर्शयेत् परसैन्यस्य तद्भङ्गं स्यात् सुनिश्चितम्: मालामन्त्रं जपेद्यस्तु हनूमन्तं स्मरन् रणे ॥३८॥
वज्राङ्गो जायते युद्धे हनूमत्समविक्रमः।

अन्य माला मन्त्र—एक अन्य माला मन्त्र है—ॐनमो हनुमते प्रकटपराक्रमाय आक्रान्तदिङ्मण्डलाय यशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितयाय वज्रदेहाय रुद्रावताराय लङ्कापुरीदहन उदधिलङ्घन दशग्रीवकृतान्तक सीताश्वासन अञ्जनीगर्भसम्भव रामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार सुग्रीवसाधारण पर्वतोत्पाटन बालब्रह्मचारिन् गम्भीरशब्द सर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरहर डाकिनीविध्वंसन ॐह्रांह्रींह्रूं भस्मन्येव सर्वविषहर परबलं क्षोभय क्षोभय मम सर्वकार्याणि साधय साधय हुं फट् स्वाहा।

इस मन्त्र के ऋषि ईश्वर, छन्द अनुष्टुप्, देवता हनुमान्, बीज हुं, शक्ति स्वाहा, कीलक ह्रात्रय एवं वेधक ह्सौं है। हनुमान की प्रीति के लिये इसका विनियोग किया जाता है। करन्यास इस प्रकार किया जाता है—नमो भगवते अंगुष्ठाभ्यां नमः, रुद्रमूर्तये तर्जनीभ्यां नमः, वायुसुताय मध्यमाभ्यां नमः, अग्निगर्भाय अनामिकाभ्यां नमः, रामदूताय कनिष्ठाभ्यां नमः। पञ्चाङ्ग न्यास भी इन्हीं मन्त्रों से करके अस्त्र न्यास 'ब्रह्मास्त्रनिवारणाय अस्त्राय फट्' मन्त्र से करे। इसके बाद स्फटिक के समान तेज वाले, स्वर्णसदृश कान्ति वाले, दो भुजाओं वाले, अञ्जलि बाँधे हुये, दो कुण्डलों से सुशोभित मुख वाले हनुमान् का बार-बार ध्यान करते हुये। राम अथवा शिव के आगे बैठकर दश हजार जप करके इसका पुरश्चरण सम्पन्न करे। वैष्णव पीठ या शैव पीठ पर पूजा आवरणसहित करे। निश्चित भोजन करके जितेन्द्रिय रहकर क्षुद्ररोग के लिये एक सौ आठ बार पूजा करे। ऐसा करने से साधक रोगमुक्त हो जाता है। महारोगादि की शान्ति के लिये एक हजार आठ जप करे। इससे रोग से मुक्ति मिलती है। जीत के इच्छुक राजा के लिये इससे श्रेष्ठ अन्य कोई मन्त्र नहीं है। नियत भोजन करके राक्षसहन्ता हनुमान का ध्यान करे एवं निश्चित संख्या में रात में जप करे तो वह शत्रुओं को जीत लेता है। शत्रु से सन्धि के लिये सुग्रीव से सन्धि कराने वाले हनुमान का ध्यान करके दश हजार जप करे तो इससे बलवान शत्रु से भी सन्धि हो जाती है। लंका-दहन का ध्यान करके दश हजार जप करे तो शत्रुसहित शत्रु का राष्ट्र एवं वैभव जल जाता है। युद्ध में जय या सन्धि के लिये इससे बढ़कर दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। जिस घर में हनुमान की पूजा सदैव सर्वदैवत मन्त्र से होती है, उसके घर में स्थिर लक्ष्मी का वास होता है, दीर्घायु प्राप्त होती है एवं सर्वत्र विजय प्राप्त होता है। उस देश में सर्पादि भूतों से रक्षा होती है। सर्वतः सर्वदा मित्रता होती है। शैव और वैष्णवों के लिये यह षट्कर्म यहाँ प्रदर्शित किया गया है। दूसरा कोई साधन नहीं है; इसलिये यह मन्त्र उत्तम है।

वैरी व्याघ्र आदि के भय में इसका जप करे। बड़े युद्ध की तैयार में सैनिकों को रुद्ध करने के लिये इसका जप करे।

यात्राकाल में इस मन्त्र का स्मरण करके घर से बाहर जाने पर साधक गन्तव्य स्थान पर शीघ्र पहुँच जाता है। शयन के समय नित्य स्मरण करने से चोर-भूतादि भाग जाते हैं। इस समय चौबीस अक्षर वाले इस मन्त्र का जप करना चाहिये—ॐ नमो भगवते हनुमते कल कल घघघघ खखख स्वाहा।

पान के पत्ते पर बाँस का आठ अंगुल का शंकु उदर की प्लीहा पर स्थापित करे। सात जंगली पलाग्रों को छड़ी में बाँधकर आग पर तपावे। तब सात मन्त्रजप से उसे अभिमन्त्रित करे। फिर सात बार मन्त्रजप से मन्त्रित करे। ऐसा करने से प्लीहा फूटकर भस्मीभूत हो जाता है। कपूरादि अष्ट गन्ध से वस्त्र पर कोयल के पंख की लेखनी से हनुमान के रूप में मन्त्र लिखे। मन्त्र के मध्य में अट्ठारह अक्षरों का मन्त्र लिखे। उसे मूर्धा पर बाँधने से तीनों लोकों पर विजय होती है। महासैन्य पताका में मन्त्र-यन्त्र लिखे। चन्द्र-सूर्यग्रहण के प्रारम्भ से मोक्ष तक मन्त्रजप करे। जप का दशांश हवन तिल-सरसों से करे। युद्ध के समय उस पताका को घोड़े पर स्थापित करे एवं शत्रुसेना को उसे दिखावे तो शत्रुसेना नष्ट हो जाती है। युद्ध में हनुमान के मालामन्त्र का जप जो करता है, वह हनुमान के समान वज्रांग हो जाता है।

रक्षायन्त्रोद्धार:

अथ रक्षां प्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रदायिनीम् ।।४९।।
स्तम्भनीं परसैन्यानां भूतानां च वशङ्करीम् । रोचनाकुङ्कुमाभ्यां च भूर्जपत्रे सुशोभने ।।४०।।
सुवर्णस्य च लेखिन्या यन्त्रमष्टदलं लिखेत् । साध्यनाम च तन्मध्ये मूलमन्त्रं दलाष्टके ।।४१।।
मालामन्त्रं च तन्मध्ये त्रिधा हुङ्कारवेष्टितम् । त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा कटिबाहुशिर:स्थितम् ।।४२।।
धारयेद्बाहुना विद्यां विघ्नस्तस्य न जायते । रणे राजकुले द्यूते व्यवहारे पराभवे ।।४३।।
शस्त्रैर्नाक्रम्यते तस्य सर्वेषां चातिवल्लभ: । तस्य पीडां न कुर्वन्ति ग्रहाश्चोराद्युपद्रवा: ।।४४।।
जलवह्निभयं नास्ति व्याघ्रतस्करजं तथा । ज्वरा: सर्वे विनश्यन्ति त्र्याह्निकाद्या महाबला: ।।४५।।
अक्षिजादिमहारोगा मन्त्रराजप्रभावत: ।

रक्षा यन्त्र—अब सर्व-सिद्धिप्रदायिनी रक्षाविधि को कहता हूँ। यह विधि परसैन्य स्तम्भिनी है एवं भूतों की वशंकरी है। सुन्दर भोजपत्र पर सोने की लेखनी से गोरोचन कुङ्कुम से अष्टदल यन्त्र बनावे। उसके मध्य में साध्य का नाम लिखे। आठ दलों में मूल मन्त्र लिखे। उसके मध्य में माला मन्त्र को तीन हुंकार से वेष्टित करके लिखे। त्रिलोह के ताबीज में उसे भरकर कमर, बाँह या शिर पर धारण करे। बाँह में धारण करने पर विद्या में विघ्न नहीं होता। युद्ध में, राजदरबार में, जुआ में, व्यवहार में उसका पराभव नहीं होता। वह सबों का प्रिय होता है। ग्रह चोर उपद्रवों की पीड़ा उसे नहीं होती। आग, पानी, व्याघ्र, तस्करों का भय उसे नहीं होता। महाबली त्र्याह्निक ज्वरादि का नाश होता है। मन्त्र के प्रभाव से आँख में रोग नहीं होते।

हनुमदष्टाक्षरमन्त्र:

तारो हकारोऽग्नियुत: षड्दीर्घस्वरबिन्दुना ।।४६।।
प्रणवान्तोऽष्टाक्षरको मूलमन्त्र उदाहृत: ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्र: ॐ इति (८)।।

हनुमान का आठ अक्षरों का मूल मन्त्र इस प्रकार है—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्र: ॐ।

गन्धाष्टकम्

चन्दनागरुकर्पूरतमालजलकुङ्कुमम् । उशीरकुष्ठसंयुक्तमेतद् गन्धाष्टकं स्मृतम् ।।४७।।

चन्दन, अगर, कपूर, तमाल, जल, कुङ्कुम, खश, कूठ को अष्टगन्ध कहते हैं।

ज्वरादिनाशनमन्त्र:

ताराद्यं वज्रकायेति वज्रतुण्ड समुद्धरेत् । कपिल पिङ्गल प्रोच्य ऊर्ध्वकेश महाबल ।।४८।।

रक्तमुख तडिज्जिह्वामहारौद्रपदं ततः। दंष्ट्रोत्कट कहकह करालिन् पदमुद्धरेत् ॥४९॥
महादृढप्रहारिंश्च लङ्केश्वरवधोद्यत। महासेतुबन्धपदं महाशैलप्रवाह च ॥५०॥
गगनचर एह्येहि भगवंश्च महापदम्। ततो बलपराक्रम भैरवाज्ञाजयेति च ॥५१॥
एह्येहि च महारौद्र दीर्घपुच्छेन वेष्टय। वैरिणं भञ्जय-पदं द्विरुक्तं हुंफडन्तकम् ॥५२॥
स्वाहान्तकः शतं पञ्चविंशदक्षरको मनुः। मालाख्योऽयं ज्वरादीनां रोगाणामन्तकः स्मृतः ॥५३॥

(१) ॐवज्रकाय वज्रतुण्ड कपिलपिङ्गलोर्ध्वकेश महाबल रक्तमुख तडिज्जिह्वामहारौद्रदंष्ट्रोत्कट कह कह करालिन् महादृढप्रहारिन् लङ्केश्वरवधोद्यत महासेतुबन्धमहाशैलप्रवाह गगनचर एह्येहि भगवन् महाबलपराक्रम भैरवाज्ञाजय एह्येहि महारौद्रदीर्घपुच्छेन वेष्टय वैरिणं भञ्जय भञ्जय हुंफट्। (२) ॐ हौं स्फ्रें खफ्रें हसौं हसखफ्रें हसौं हनुमते नमः। (३) ॐ नमो हनूमान् सर्वग्रहान् भूतभविष्यवर्तमानान् दूरस्थान् समीपस्थान् सर्वकालमुच्चाटय परबलाानि क्षोभय क्षोभय सर्वकार्याणि साधय साधय ह्रांह्रींह्रूं घेघेघे हुंफट् स्वाहा। (४) ॐशिवं ॐशिव ॐॐसिद्धिं ॐहरं ॐहरिं ॐहरायै ॐ रां ॐ स्वाहा परमन्त्रपरयन्त्रपराहङ्कारभूतप्रेतपिशाचसर्वज्वरपरदृष्टि-सर्वदुर्जनचेटककरणसर्वविद्यासर्पाग्निनिवारण नाशय नाशय इलु इलु वुवु वुवु खिलि खिलि विलय सर्वकुयन्त्राणि सर्वदुष्टवाचं हुंफट् स्वाहा। (५) ॐ ऐंश्रींह्रांह्रीं हसौं स्फ्रें ख्फ्रें हसखफ्रें हसौं हनुमते नमः—इति षोडशाक्षरमन्त्रः। (६) ॐस्फ्रें ख्फ्रें हसौं स्ह्रौं—इति पञ्चाक्षरमन्त्रः। सर्वेषां रामचन्द्र ऋषिः, नानाछन्दांसि, महावीरो हनुमान् देवता, मारुतात्मज हसौं बीजं। अञ्जनीसूनु स्फ्रें इति शक्तिः, श्रीरामभद्र ह्रां इति प्राणाः, ॐह्रां इति कीलकम्, श्रीराम-लक्ष्मणानन्दकर ह्रांह्रींह्रूं इति जीवः, मम इष्टसिद्धये विनियोगः। द्वादशाक्षरवत् षडङ्गन्यासध्यानानि ज्ञेयानि। इति हनूमत्प्रकरणम्।

ज्वरादिनाशन मन्त्र—ज्वरादि रोगों का विनाशक एक सौ पच्चीस अक्षरों का मालामन्त्र इस प्रकार है—

१. ॐवज्रकाय वज्रतुण्ड कपिलपिङ्गलोर्ध्वकेश महाबल रक्तमुख तडिज्जिह्वामहारौद्रदंष्ट्रोत्कट कह कह करालिन् महा-दृढप्रहारिन् लङ्केश्वरवधोद्यत महासेतुबन्धमहाशैलप्रवाह गगनचर एह्येहि भगवन् महाबलपराक्रम भैरवाज्ञाजय एह्येहि महारौद्रदीर्घपुच्छेन वेष्टय वैरिणं भञ्जय भञ्जय हुंफट्।

२. ॐ हौं स्फ्रें खफ्रें हसौं हसखफ्रें हसौं हनुमते नमः।

३. ॐ नमो हनूमान् सर्वग्रहान् भूतभविष्यवर्तमानान् दूरस्थान् समीपस्थान् सर्वकालमुच्चाटय परबलाानि क्षोभय क्षोभय सर्वकार्याणि साधय साधय ह्रांह्रींह्रूं घेघेघे हुंफट् स्वाहा।

४. ॐशिवं ॐशिव ॐॐसिद्धिं ॐहरं ॐहरिं ॐहरायै ॐ रां ॐ स्वाहा परमन्त्रपरयन्त्रपराहङ्कारभूतप्रेतपिशाच-सर्वज्वरपरदृष्टिसर्वदुर्जनचेटककरणसर्वविद्यासर्पाग्निनिवारण नाशय नाशय इलु इलु वुवु वुवु खिलि खिलि विलय सर्वकुयन्त्राणि सर्वदुष्टवाचं हुंफट् स्वाहा।

५. ॐ ऐंश्रींह्रांह्रीं हसौं स्फ्रें ख्फ्रें हसखफ्रें हसौं हनुमते नमः यह षोडशाक्षर मन्त्र है।

६. ॐस्फ्रें ख्फ्रें हसौं स्ह्रौं—यह पञ्चाक्षर मन्त्र है।

इसी प्रकार अन्य ज्वरादिनाशक मन्त्र भी हैं। इन सभी मन्त्रों के ऋषि रामचन्द्र हैं। अनेक छन्द हैं। देवता महावीर हनुमान हैं। मारुतात्मज हसौं बीज है। अञ्जनीसूनु स्फ्रें शक्ति है। श्रीरामचन्द्र ह्रां प्राण है। ॐ ह्रां कीलक है। श्रीराम लक्ष्मण का आनन्ददायक ह्रां ह्रीं ह्रूं जीव है। इष्ट सिद्धि के लिये इसका विनियोग होता है। इन सभी मन्त्रों के षडङ्ग न्यास ध्यान द्वादशाक्षर मन्त्र के समान होते हैं।

अग्निचक्रपरिज्ञानम्

अथोक्तानां काम्यहोमकर्मणां तन्त्रोक्तप्रकारेणाग्निचक्रमविज्ञाय कृतानां नैष्फल्यं प्रत्यवायश्च भवतीति श्रुतेस्तत्परिज्ञानस्यावश्यकत्वात् परिज्ञानं प्रकाश्यते। श्रीरुद्रयामले—

अथ वक्ष्ये महादेवि होमकर्मसु सिद्धिदम्। अग्निचक्रं वरारोहे सर्वतन्त्रेषु गोपितम्॥१॥
नवग्रहमयो वह्निस्ते च वह्निमया ग्रहाः। वह्नौ हुतं हविर्देवि ग्रहाणां प्रविशेन्मुखम्॥२॥
तृप्यन्ति देवताः सर्वास्तेषु तृप्तेषु पार्वति। फलं वापि प्रयच्छन्ति सर्वदेवमया ग्रहाः॥३॥
अतस्तेषां स्थितिं वह्नौ ज्ञात्वा होमं समाचरेत्। शान्तिके पौष्टिके वृद्धौ क्रूरेष्वपि च कर्मसु॥४॥
तेषां स्थितिक्रमं वक्ष्ये नक्षत्रेषु यथा स्थिताः। सूर्यो बुधो भृगुश्चैव शनिश्चन्द्रो महीसुतः॥५॥
जीवो राहुश्च केतुश्च नवैते दिवि खेचराः। त्रीणि त्रीणि च ऋक्षाणि रव्यादीनि च दापयेत्॥६॥
सूर्यभाच्चन्द्रभं यावद्गणयेच्च महेश्वरि। सूर्यादीनां फलं देवि शृणु वक्ष्ये यथाक्रमम्॥७॥
आदित्ये तु भवेच्छोको बुधे चैव धनागमः। शुक्रे लाभं विजानीयाच्छनौ पीडा न संशयः॥८॥
चन्द्रे लाभो महादेवि भौमे चैव तु बन्धनम्। गुरुणा च धनप्राप्तिः राहौ हानिस्तथैव च॥९॥
केतुना जायते मृत्युः फलमेवं महेश्वरि। एवं ज्ञात्वा महेशानि होमकर्म समाचरेत्॥१०॥
सौम्यग्रहमुखे यस्मिन् दिने विंशति चाहुतिः। आरम्भं सौम्यहोमस्य दिने तस्मिन् विधीयते॥११॥
क्रूरहोमस्तथा देवि क्रूरग्रहमुखे भवेत्। इति ज्ञात्वा महादेवि काम्यहोमं समाचरेत्॥१२॥
अन्यथा क्रियमाणे तु नैष्फल्यं चात्मनाशनम्। इति।

हवन में अग्नि-चक्र का ज्ञान—उक्त काम्य होम कर्म तन्त्रोक्त प्रकार से अग्निचक्र को जानकर करना चाहिये; अन्यथा निष्फलता और प्रत्यवाय होता है। अत: उनका ज्ञान आवश्यक होने के कारण होमकर्मों में सिद्धि प्रदान करने वाले अग्निचक्र का विवेचन करते हुये रुद्रयामल में कहा गया है कि अग्निचक्र सभी तन्त्रों में गोपित है। अग्नि नवग्रहमय है और ग्रह वह्निमय हैं। अग्नि में दी गयी आहुति ग्रहों के मुख में पड़ती है। नवग्रहों के तृप्त होने पर सभी देवता तृप्त होते हैं। फलत: सर्वदेवमय ग्रह फल प्रदान करते हैं। अत: ग्रहों की स्थिति से वह्नि की स्थिति जानकर हवन करना चाहिये। शान्तिक पौष्टिक क्रूर कर्मों में उनकी स्थितिक्रम को कहता हूँ। जिस नक्षत्र में वे रहते हैं, उसे भी कहता हूँ। सूर्य, बुध, शुक्र, शनि, चन्द्र, मंगल, गुरु, राहु, केतु—ये नव आकाशचारी हैं। सूर्यादि की तीन-तीन नक्षत्रों में स्थिति मानें तो सत्ताईस नक्षत्रों में स्थिति का ज्ञान होता है। सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र तक गिनने पर सूर्यादि का फल यथाक्रम इस प्रकार होता है—सूर्य नक्षत्र में शोक होता है, बुध में धनागम होता है, शुक्र में लाभ एवं शनि में पीड़ा होती है। चन्द्र में लाभ एवं मंगल में बन्धन होता है। गुरु में धनलाभ और राहु में धनहानि होती है। केतु में मृत्यु होती है। यह जानकर हवन कर्म करना चाहिये। जिस दिन में सौम्य ग्रह मुख में आहुति पड़ती है, उसी में सौम्य होम का प्रारम्भ करे। क्रूर होम में क्रूर ग्रह के मुख में आहुति पड़ती हो तो उसी से प्रारम्भ करे। यह जानकर काम्य हवन करे; अन्यथा करने से निष्फलता और आत्मनाश होता है।

वह्निस्थितिः

ब्रह्मयामले—

अथ वह्नेः स्थितिं वक्ष्ये होमकर्मसु सिद्धये। स्वर्गलोके च पाताले भूमौ तिष्ठति हव्यवाट्॥१॥
तत्प्रकारमहं वक्ष्ये साधकानां हिताय च। धृतिं च तिथिवारांश्च सप्तद्वीपं चतुर्युगम्॥२॥
एकीकृत्य हरेद्भागं त्रिभिः शेषेण पावकः। एकेन वसति स्वर्गे द्वये पाताल एव च॥३॥
शून्ये च मर्त्यलोके स्यादेवं वसति पावकः। उत्पातः स्वर्गलोकस्थे पातालस्थे धनक्षयः॥४॥
मर्त्यलोकस्थिते वह्नौ होमोऽभीष्टफलप्रदः। इत्थं विज्ञाय मन्त्रज्ञो होमकर्म समारभेत्॥५॥

धृतिरष्टादश। तिथयः पञ्चदश प्रतिपदादयः होमारम्भतिथिपर्यन्ताः, वाराः सूर्यवारादिहोमारम्भवारान्ताः। अन्यत्सुगमम्।

अग्नि की स्थिति—ब्रह्मयामल में कहा गया है कि हवन कर्म में वह्नि की स्थिति कहता हूँ। अग्नि का वास स्वर्ग,

पाताल, भूमि में जिस प्रकार होता है, साधको के हित के लिये उसे कहता हूँ। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से गिनकर वर्तमान तिथि की संख्या में एक जोड़कर वार की संख्या जोड़नी चाहिये। फिर उसमें चार का भाग देने से तीन शेष बचे तो अग्निवास पृथ्वी पर होता है, जो शुभ है। एक शेष बचे तो स्वर्ग में वास होता है, यह प्राणनाशक है। दो शेष बचे तो अग्नि का वास पाताल में होता है, यह धननाशक होता है।

अरिमन्त्रपरित्यागविधिः

अथारिमन्त्रपरित्यागविधिस्तत्र श्रीरुद्रयामले—

अरिमन्त्रपरित्यागविधिं वक्ष्ये महेश्वरि। यज्ज्ञात्वा मोचयेच्छिष्यं शत्रुमन्त्रभयाद् गुरुः ॥१॥
अज्ञानाद्यत्र कुत्राप्तमरिमन्त्रं महेश्वरि। जप्त्वा मूढा महादुःखं प्राप्नुवन्तीह तत्कृतम् ॥२॥
गुरुस्तद् रक्षयेद्येन विधिना तद्वदामि ते। शुचिः समाहितो भूत्वा प्रारभेत् प्रवरे दिने ॥३॥
अशेषदुःखनाशाय देशिकप्रवरो विधिम्। तत्रादौ रम्यभवने कुम्भं दीक्षाविधानतः ॥४॥
मण्डले स्थापयेद् देवि पूरयेत् तं शुभैर्जलैः। विधिना मन्त्रपाठेन तत्रावाह्येष्टदेवताम् ॥५॥
सकलीकृत्य संपूज्यावरणानि प्रपूजयेत्। एवं सावरणामिष्ट्वा देवि मन्त्रस्य देवताम् ॥६॥
हुत्वा विलोममन्त्रेण गोघृतेन महेश्वरि। अष्टोत्तरसहस्रं वा शतं चाष्टोत्तरं प्रिये ॥७॥
ब्रह्मार्पणेन मनुना तथान्ते तर्पयेत् प्रभुम्। ततो यवान्नदुग्धान्नैर्देवताभ्यो बलिं हरेत् ॥८॥
विदिक्षु दिक्षु च तथाधश्चोर्ध्वे मनुवित्तमः। आयाहीन्द्र सुराधीश शतमन्यो शचीपते ॥९॥
नमस्तुभ्यं गृहाणेमं पुष्पधूपादिकं बलिम्। आयाहि तेजसां नाथ हव्यवाह वरप्रद ॥१०॥
गृहाण पुष्पधूपादिबलिमेनं प्रयोजितम्। प्रेतनाथ त्वमायाहि भिन्नाञ्जनसमायुधैः ॥११॥
बलिं दत्तं गृहीत्वेमं सुप्रीतो वरदो भव। नमस्ते रक्षसां नाथ निर्ऋते त्वमिहागतः ॥१२॥
गृहाण बलिपूजादि मया भक्त्या निवेदितम्। एहि पश्चिमदिक्पाल जलनाथ नमोऽस्तु ते ॥१३॥
भक्त्या निवेदितां पूजां गृहीत्वा प्रीतिमाप्नुहि। प्रभञ्जन प्राणपते त्वमेहि सपरिच्छद ॥१४॥
मया प्रयुक्तं विधिवद्गृहाण बलिमादरात्। कुबेरतारकाधीशावागच्छेतां सुरेश्वरौ ॥१५॥
पुष्पधूपादिभिः प्रीतौ भवेतां वरदौ मम। ईश त्वमेहि भगवन् सर्वविद्याश्रय प्रभो ॥१६॥
पूजितः पुष्पधूपादिप्रीतो भव विभूतये। आयाहि सर्वलोकानां नाथ ब्रह्मन् समर्चनम् ॥१७॥
गृहाण सर्वविघ्नान् मे निवर्तय नमोऽस्तु ते। आगच्छ वरदाव्यक्त विष्णो विश्वस्य नायक ॥१८॥
पूजितः परया भक्त्या भव त्वं सुखदो मम। ततः सपरिवारां च पूजयेन्मन्त्रदेवताम् ॥१९॥
मन्त्रेण विपरीतेन पुष्पधूपोपचारकैः। ततस्तु प्रार्थयेद्विद्वान् पूजितां मन्त्रदेवताम् ॥२०॥
आनुकूल्यमनालोच्य मया तरलबुद्धिना। यदुपात्तं विप्रभावमरिमन्त्रस्वरूपकम् ॥२१॥
तेन मे मनसः क्षोभमशेषं विनिवर्तय। पापं प्रतिहतं मेऽस्तु भूयाच्छ्रेयः सनातनम् ॥२२॥
तनोतु मम कल्याणं पावनी भक्तिरेव च। इति संप्रार्थ्य मन्त्रेण मन्त्रे यन्त्रे विलोमतः ॥२३॥
विलिख्यामलकर्पूरचन्दनेन समर्चयेत्। कलशोपरि संस्थाप्य भक्त्या परमया युतः ॥२४॥
तद्यन्त्रं देवि मतिमान् बद्ध्वा निजशिरस्यथ। स्नायात् पूजितकुम्भस्थैर्जलैर्मन्त्रमयैः शिवैः ॥२५॥
पुनश्चान्येन तोयेन कुम्भमापूर्य संयतः। तन्मध्ये मन्त्रं यन्त्रं च निक्षिप्याथ प्रपूजयेत् ॥२६॥
तत्कुम्भं निम्नगातीरे शुद्धे वान्यजलाशये। विसृजेदथ विप्रांश्च यथाशक्त्या प्रपूजयेत् ॥२७॥
इत्थं कृतविधानस्य रिपुमन्त्रोद्भवा रुजः। विनश्यन्ति न सन्देहः क्रमाच्चित्तप्रसन्नता ॥२८॥
जायतेऽतीवसंपन्ना वर्धते तत्कुलं क्रमात्।

इत्यरिमन्त्रपरित्यागविधिः।

अरिमन्त्र-त्यागविधि—रुद्रयामल में महेश्वर ने कहा है कि अब मैं अरिमन्त्र त्याग-विधि कहता हूँ। इसे जानकर गुरु शिष्य को शत्रुमन्त्र के भय से मुक्त करता है। अज्ञान से यदि अरिमन्त्र प्राप्त होता है, तो उसे जप कर मूढ़ महादु:ख प्राप्त करता है। इससे जिस विधि गुरु रक्षा करे, उसे कहता हूँ। पवित्र समाहित चित्त होकर शुभ दिन में गुरु सभी दु:खों के नाश के लिये अनुष्ठान प्रारम्भ करे। पहले सुन्दर भवन में दीक्षा विधान से मण्डल में कलश स्थापित करे। उसे शुभ जल से विधिवत् मन्त्रपाठ करते हुए पूर्ण करे। उसमें देवता का आवाहन करे। सकलीकरण करके पूज्य आवरणों की पूजा करे एवं सावरण देवता मन्त्र के विलोम क्रम से गोघृत से हवन करे। हवन एक हजार आठ या एक सौ आठ बार करे। ब्रह्मार्पण करके मन्त्र से तर्पण करे। तब दूध अन्न से देवता को बलि प्रदान करे। दिशाओं विदिशाओं में एवं ऊपर-नीचे तत्तत् देवताओं को बलि प्रदान करे। इन्द्र का बलिमन्त्र है—

आयाहीन्द्र सुराधीश शतमन्यो शचीपते। नमस्तुभ्य गृहाणेमं पुष्पधूपादिकं बलिम्।।

अग्नि का बलि मन्त्र है—

आयाहि तेजसां नाथ हव्यवाह वरप्रद। गृहाण पुष्पधूपादिबलिमेनं प्रयोजितम्।।

यम का बलि मन्त्र है—

प्रेतनाथ त्वमायाहि भिन्नांजनसमायुधै:। बलिं दत्तं गृहीत्वेमं सुप्रीतो वरदो भव।।

निर्ऋति का बलि मन्त्र है—

नमस्ते रक्षसां नाथ निर्ऋते त्वमिहागत:। गृहाण बलिपूजादि मया भक्त्या निवेदितम्।।

वरुण का बलि मन्त्र है—

एहि पश्चिमदिक्पाल जलनाथ नमोस्तु ते। भक्त्या निवेदितां पूजां गृहीत्वा प्रीतिमाप्नुहि।।

वायु का बलि मन्त्र है—

प्रभंजन प्राणपते त्वमेहि सपरिच्छद। मया प्रयुक्तं विधिवद् गृहाण बलिमादरात्।।

कुबेर का बलि मन्त्र है—

कुबेरतारकाधीशावागच्छेतां सुरेश्वरौ। पुष्पधूपादिभि: प्रीतौ भवेतां वरदौ मम।।

ईशान का बलिमन्त्र है—

ईश त्वमेहि भगवन् सर्वविघ्नश्रय प्रभो। पूजित: पुष्पधूपादिप्रीतो भव विभूतये।।

ब्रह्मा का बलि मन्त्र है—

आयाहि सर्वलोकानां नाथ ब्रह्मन् समर्चनम्। गृहाण सर्वविघ्नान् मे निवर्तय नमोऽस्तु ते।।

अनन्त का बलि मन्त्र है—

आगच्छ वरदाव्यक्त विष्णो विश्वस्य नायक। पूजित: परया भक्त्या भवत्वं सुखदो मम।।

इस प्रकार तत्तत् देवताओं को तत्तत् मन्त्रों से बलि प्रदान करने के बाद सपरिवार मन्त्रदेवता की पूजा करे। विपरीत मन्त्र से पुष्प-धूप उपचारों से पूजा करे। तदनन्तर पूजित मन्त्रदेवता की इस प्रकार प्रार्थना करे—

आनुकूल्यमनालोच्य मया तरलबुद्धिना। यदुपात्तं विप्रभावमरिमन्त्रस्वरूपकम्।।
तेन मे मनस: क्षोभमशेषं विनिवर्तय। पापं प्रतिहतं मेऽस्तु भूयाच्छ्रेय: सनातनम्।।
तनोतु मम कल्याणं पावनी भक्तिरेव च ।

प्रार्थना के बाद मन्त्र से विलोम क्रम से कपूर चन्दन से यन्त्र लिखकर परम भक्ति से कलश पर स्थापित करके उसकी पूजा करे। उस यन्त्र को धारण करे। तब पूजित कुम्भजल से स्नान करे। फिर कुम्भ में दूसरा जल भरकर उसमें मन्त्र यन्त्र डालकर पूजा करे। उस कुम्भ को नदी या जलाशय में विसर्जित कर दे। विप्रों की पूजा यथाशक्ति करे। इस विधान से शत्रुकृत रोग नष्ट होता है। मन प्रसन्न होता है और उसका कुल सम्पन्न रहता है।

गुर्वभावे दीक्षाविधिः

अथ गुरोरभावे दीक्षाविधिस्तत्र श्रीरुद्रयामले—

गुरोरभावे विप्रेन्द्र मन्त्रग्रहणमुच्यते। कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां दक्षिणामूर्तिसन्निधौ ॥१॥
तालपत्रे मनुं लिख्य स्थापयेच्च तदग्रतः। संपूज्य दक्षिणामूर्तिमुपचारैः प्रयत्नतः ॥२॥
पायसं विनिवेद्याथ प्रणमेद् दण्डवत् ततः। तालपत्रं समालोक्य पठेदष्टोत्तरं शतम् ॥३॥
एवं गृहीतो मन्त्रः स्याद्गुरोरपि विशिष्यते। गुरोः सम्भाविता दोषाः प्रायेण च कलौ युगे ॥४॥
एवं गृहीतमन्त्रः स्यात् सर्वसिद्धिप्रदो नृणाम्। इति।

गुरु के अभाव में दीक्षाविधि—रुद्रयामल में कहा गया है कि गुरु के अभाव में मन्त्रदीक्षा कहता हूँ। कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी में दक्षिणामूर्ति की सन्निधि में ताड़पत्र पर मन्त्र लिखकर उनके आगे स्थापित करे। दक्षिणामूर्ति की पूजा उपचारों से करे। नैवेद्य में पायस अर्पण करे। दण्डवत् प्रणाम करे। तालपत्र पर मन्त्र को देखकर एक सौ आठ बार पढ़े। इस प्रकार से गृहीत मन्त्र गुरुगृहीत मन्त्र से भी श्रेष्ठ होता है। कलियुग में गुरु प्रायः दोषयुक्त होते हैं। अतः इस प्रकार से गृहीत मन्त्र मनुष्यों के लिये समस्त प्रकार की सिद्धियों को देने वाले होते हैं।

मुद्रालक्षणानि

अथ मुद्रालक्षणम्। तन्त्रराजे—

कनिष्ठानामयोः पृष्ठे स्यादङ्गुष्ठस्तु तर्जनी। कुटिला ऋजुमध्यस्था मुद्रासावङ्कुशाभिधा ॥१॥ इति।

नारदपञ्चरात्रे—

दक्षाङ्गुष्ठं पराङ्गुष्ठे क्षिप्त्वा हस्तद्वयेन तु। सावकाशं त्वेकमुष्टिं कुर्यात् कुम्भाख्यमुद्रिका ॥१॥ इति।

प्रयोगसारे—

त्रिशूलाग्रौ करौ कृत्वा व्यत्यस्तावभितो नयेत्। अस्त्रमुद्रेयमाख्याता वह्निप्राकारलक्षणा ॥१॥ इति।

सारसंग्रहे—'ऋषिच्छन्दोदेवतानां न्यासे त्वङ्गुलयः स्मृताः। चतस्रोऽङ्गुष्ठरहिताः' इति। नारदपञ्चरात्रे—

मन्त्राभिमृष्टयोः पाण्योः पल्लवेऽङ्गानि विन्यसेत्। अङ्गुष्ठेनाचरेन्न्यासमन्याङ्गुलिसमाश्रयम् ॥१॥
अङ्गुष्ठविषयं न्यासं तर्जनीशिरसैव हि। अङ्गुष्ठवर्जमङ्गुल्यश्चतस्रो हृदि विन्यसेत् ॥२॥
शिखायां मुष्टिरेव स्यादङ्गुष्ठकृतनामिका। सर्वाङ्गुलय आनाभेः पाण्योः कवचबन्धने ॥३॥
तर्जनीमध्यमानामाः प्रोक्ता नेत्रत्रये क्रमात्। अङ्गुष्ठतर्जन्यग्राभ्यां हस्तयोरभिशब्दयेत् ॥४॥ इति।

चतस्रः प्रसारिताः। 'प्रसारिततलेनैव पाणिना हृदयं शिरः' इति। दक्षिणामूर्तिसंहितायाम्—

कनिष्ठाङ्गुष्ठरहितैस्त्रिभिस्तु हृदि विन्यसेत्। मध्यमानामिकाभ्यां तु न्यसेच्छिरसि मन्त्रवित् ॥१॥
शिखाङ्गुष्ठेन विन्यस्य दशभिः कवचं न्यसेत्। हृद्गतैर्नेत्रविन्यासं विन्यसेत् परमेश्वरि ॥२॥
तर्जनीमध्यमाभ्यां तु ततोऽस्त्रं विन्यसेत् प्रिये। मुष्टिं कृत्वोच्चलेन्मन्त्री तर्जनी दण्डवत्तदा ॥३॥
सौभाग्यदण्डिनी नाम रिपून् दण्डयतीक्षणात्। अङ्गुष्ठे मुष्टिकं कुर्याद्रिपुजिह्वाग्रहा भवेत् ॥४॥ इति।

ज्ञानार्णवे—'त्रिद्व्येकदशकत्रिद्विमिताङ्गुलिभिरीरिताः' इति। अस्यार्थः—कनिष्ठाङ्गुष्ठरहिताङ्गुलित्रयेण हृदयमुद्रा। मध्यमानामाभ्यां शिरोमुद्रा। अङ्गुष्ठेन शिखामुद्रा। दशाङ्गुलिभिः कवचमुद्रा। हृदयस्थाभिर्नेत्रमुद्रा। तर्जनीमध्यमाभ्यां तालत्रयेणास्त्रमुद्रा। आनाभेः स्कन्धान्ताधोभूताभ्यां पाणिभ्यां वर्म। 'वर्म स्कन्धादिनाभिग'मिति तन्त्रराजवचनात्।

अंकुश मुद्रा—तन्त्रराज में कहा गया है कि कनिष्ठा अनामिका को मोड़कर उन पर अंगूठा रखे और मध्यमा को सीधा रखे तर्जनी को उसमें सटाकर मोड़े तो अंकुश मुद्रा बनती है।

कुम्भमुद्रा—नारदपञ्चरात्र में कहा गया है कि दाहिने हाथ के अंगूठे को बाँयें में लगाकर शेष अंगुलियों को मुट्ठी के समान नीचे करके ऊपर को लगा दे एवं मुट्ठी को पोली रखे तो कुम्भमुद्रा बनती है।

अस्त्र मुद्रा—प्रयोगसार में कहा गया है कि दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा से बाँयी हथेली पर ताली बजाने से अस्त्रमुद्रा बनती है।

नारदपञ्चरात्र में कहा गया है कि मुद्रा मन्त्र से करतलों को मलकर पल्लव में अंग न्यास करे। अंगूठे में अंगुलियों को सटाकर न्यास करे। तर्जनी से शिर में, अंगूठे को छोड़कर चार अंगुलियों से हृदय में एवं अंगूठे से शिखा में न्यास करे। दशों अंगुलियों से कवच अर्थात् दाहिने हाथ की पाँच अंगुलियों को बाँयें कन्धे पर और बाँयें हाथ की पाँचों अंगुलियों को दाहिने कन्धे पर रखे तो कवच न्यास होता है। तर्जनी मध्यमा और अनामा से नेत्रों को स्पर्श करे। तर्जनी मध्यमा से बाँयीं हथेली पर चोट करे तो अस्त्रमुद्रा होती है।

दक्षिणामूर्ति संहिता में अंग न्यास मुद्रा का विवेचन करते हुये कहा गया है कि कनिष्ठा-अंगुष्ठ-रहित तीन अंगुलियों से हृदय में न्यास करे। मध्यमा-अनामिका से शिर में न्यास करे। शिखा में अंगूठे से न्यास करे। दशों अंगुलियों से कवच-न्यास करे। अनामा-मध्यमा-तर्जनी से नेत्र में न्यास करे। तर्जनी-मध्यमा से अस्त्र न्यास करे। मुट्ठी बाँधकर तर्जनी को दण्डवत् रखे तो सौभाग्यदण्डिनी मुद्रा बनती है, जो शत्रुओं को तत्क्षण दण्डित करती है। मुट्ठी में अंगूठे को करने से रिपुजिह्वाग्रहा मुद्रा बनती है।

ज्ञानार्णव में कहा गया है कि तर्जनी-मध्यमा-अनामिका से हृदयमुद्रा, मध्यमा-अनामा से शिरोमुद्रा, अंगूठे से शिखामुद्रा, दशों अंगुलियों से कवचमुद्रा, हृदयस्थ से नेत्रमुद्रा, तर्जनी-मध्यमा से ताली बजाने से अस्त्रमुद्रा एवं दाँयें हाथ को बाँयें गन्धे पर और बाँयें हाथ को दाँयें कन्धे पर रखने से कवच मुद्रा बनती है।

शैवागमे षडङ्गमुद्राविशेषः

शैवमन्त्राणां तु शैवागमे षडङ्गमुद्राविशेष उक्तः—

कृतमुष्टिपुटौ हस्तौ कृत्वाङ्गुष्ठौ हृदि न्यसेत्। हृन्मुद्रेयं समाख्याता शिरोमुद्रा प्रकीर्त्यते॥१॥
ललाटाग्रे समाधाय कृतमुष्टिपुटौ करौ। कुर्यादूर्ध्वप्रसक्ताग्रे तर्जन्यौ ज्येष्ठबाह्यतः॥२॥
करौ शिखायां संयोज्य कृतमुष्टिपुटाकृती। ज्येष्ठादधः प्रसक्ताग्रौ कारयेदूर्ध्वतस्तथा॥३॥
कुर्यात् सेयं तथा मुद्रा सर्वोपद्रवनाशिनी। कृत्वाङ्गुष्ठौ प्रसक्ताग्रौ तर्जन्यौ च त्रिकोणवत्॥४॥
मूर्ध्नि पश्चान्मुखं कृत्वा नयेदुभयपार्श्वतः। करं हृदयमुद्रेयं कवचस्याभयप्रदा॥५॥
कृत्वा नेत्रोन्मुखं हस्तं सक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठिकम्। प्रसार्य मध्यमाः किञ्चिन्नमयेदितराङ्गुलीः॥६॥
नेत्रमुद्रेयमुद्दिष्टा रक्षोभूतार्तिभञ्जनी। परस्परतलद्वन्द्वं पुनरास्फोटयेद् भृशम्॥७॥
तर्जनया शब्दयेत् ताभ्यां ज्येष्ठाग्रवलिताग्रया। इति।

ताभ्यां कराभ्यां। मन्त्रतन्त्रप्रकाशे—

कनिष्ठाङ्गुष्ठकौ भुग्नौ करयोरितरेतरम्। तर्जनीमध्यमानामाः संहता भुग्नवर्जिताः॥१॥
मुद्रैषा गालिनी प्रोक्ता शङ्खस्योपरि चालिता।

संहताः परस्परसंयुक्ताः। भुग्नवर्जिताः अकुटिलाः। लक्षणसंग्रहे—

वामाङ्गुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना। कृत्वोत्तानं ततो मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत्॥१॥
वामाङ्गुल्यस्तथा श्लिष्टाः संयुक्ताः संप्रसारिताः। दक्षिणाङ्गुष्ठसंस्पृष्टा ज्ञेयैषा शङ्खमुद्रिका॥२॥
अधोमुखं वामहस्तं तादृशं दक्षहस्तकम्। विन्यस्याङ्गुष्ठयुग्मं तु पार्श्वयोः संप्रसार्य च॥३॥
दर्शयेदर्घ्यपात्रे तु मत्स्यमुद्रेयमीरिता। इति।

पद्मवाहिन्यां—'अञ्जल्यनामातर्जाख्यकनिष्ठाग्राख्ययोगतः। मुद्रेयं त्रिशिखा प्रोक्ता' इति।

षडङ्ग मुद्रा के सम्बन्ध में शैवागम में कहा गया है कि चारो अंगुलियों से मुट्ठी बाँधकर अंगूठे को सीधा रखकर हृदय में लगाने को **हृदयमुद्रा** कहते हैं। दोनों हाथों की मुट्ठी से ललाट में न्यास करे। मुट्ठी बाँधकर तर्जनी को सीधा करके शिखा में लगावे। मुट्ठियों को मिलाकर मध्यमा को सीधी करके ऊपर की ओर करे तो यह **सर्वोपद्रवनाशिनी मुद्रा** होती है। अंगूठे को आगे करके तर्जनी से त्रिकोण बनाकर दोनों पार्श्वों में न्यास करे। दोनों हाथों से दोनों कन्धों का स्पर्श करने से **कवच-मुद्रा** बनती है। नेत्रों के सामने अंगूठे से कनिष्ठा को मिलाकर मध्यमा को फैलावे तो राक्षस-भूतविनाशिनी **नेत्रमुद्रा** बनती है। तर्जनी और मध्यमा से दोनों हाथों से ताली बजावे।

मन्त्रतन्त्रप्रकाश में **गालिनी मुद्रा** का विवेचन करते हुये कहा गया है कि दाहिने हाथ की कनिष्ठा को बाँयें हाथ के अंगूठे से और बाँयें हाथ के अंगूठे को दाहिने हाथ की कनिष्ठा से मिलाकर तर्जनी-मध्यमा-अनामिका को सटावे तो शङ्खजल को शुद्ध करने वाली गालिनी मुद्रा बनती है।

लक्षणसंग्रह में **शङ्ख मुद्रा** का विवेचन करते हुये कहा गया है कि बाँयें हाथ के अंगूठे को दाहिने हाथ की मुट्ठी में लेकर बाँयें हाथ की चारों अंगुलियों को सीधी करके दाहिने हाथ की मुट्ठी को दबावे एवं दाहिने हाथ के अंगूठे का अग्रभाग बाँयें की तर्जनी के अग्रभाग में लगावे तो शङ्खमुद्रा बनती है। दाहिने हाथ की पीठ पर बाँयें हाथ की हथेली रखकर अंगूठों को हिलाता रहे तो **मत्स्य मुद्रा** बनती है।

पद्मवाहिनी में कहा गया है कि हाथों की अंजलियों को मिलाकर तर्जनी से तर्जनी, अनामा से अनामा, कनिष्ठा से कनिष्ठा को मिलाने से **त्रिशिखा मुद्रा** बनती है।

आवाहनादिमुद्राः

अथावा-हनादिमुद्राः लक्षणसंग्रहे—

हस्ताभ्यामञ्जलिं बद्ध्वानामिकामूलपर्वणोः। अङ्गुष्ठौ निक्षिपेत् सेयं मुद्रा त्वावाहनी स्मृता ॥१॥
अधोमुखी त्वियं चेत् स्यात् स्थापनीति निगद्यते। उच्छ्रिताङ्गुष्ठमुष्ट्योश्च संयोगात् सन्निधापनी ॥२॥
अन्तःप्रवेशिताङ्गुष्ठा सैव संरोधनी मता। उत्तानमुष्टियुगला सम्मुखीकरणी भवेत् ॥३॥
देवताङ्गे षडङ्गानां न्यासः स्यात् सकलीकृतिः। सव्यहस्तकृता मुष्टिर्दीर्घाधोमुखतर्जनी ॥४॥
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता मता। अन्योन्याभिमुखा श्लिष्टा कनिष्ठानामिका पुनः ॥५॥
तथैव तर्जनी मध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता। अमृतीकरणं कुर्यात् तया साधकसत्तमः ॥६॥
अन्योन्यग्रथिताङ्गुष्ठा प्रसारितपराङ्गुली। महामुद्रेयमुदिता परमीकरणे प्रिये ॥७॥
प्रयोजयेदिमा मुद्रा देवताह्वानकर्मणि। अङ्गन्यासस्य मुद्राणां लक्षणं प्राक् समीरितम् ॥८॥ इति।

आवाहनादि मुद्राओं का विवेचन करते हुये लक्षणसंग्रह में कहा गया है कि ऊर्ध्वमुख दोनों अञ्जलियों की अनामिकाओं के मूल में अंगूठों को मिलाकर दो बार ऊपर-नीचे करने से **आवाहनी मुद्रा** बनती है। आवाहनी की अञ्जलियों को अधोमुखी करने से **स्थापिनी मुद्रा** होती है। दोनों हाथों की मुट्ठी मिलाकर अंगूठों को सीधा करने से **सन्निधापिनी मुद्रा** बनती है। दोनों मुट्ठियों में अंगूठों को दबाने से **सन्निरोधिनी मुद्रा** होती है। दोनों मुट्ठियों को ऊँचा करने से **सम्मुखीकरणी मुद्रा** होती है। देवता के अंग में षडङ्ग न्यास को **सकलीकरण** कहते हैं। दोनों हाथों की मुट्ठियों को मिलाकर दोनों तर्जनियों को मिलाने से **अवगुण्ठनी मुद्रा** होती है। दोनों हथेलियों को मिलाकर दाहिनी अनामा को बाँयीं कनिष्ठा से, बाँयीं अनामा को दाहिनी कनिष्ठा से, दाहिनी मध्यमा को बाँयीं तर्जनी से और बाँयीं मध्यमा को दाहिनी तर्जनी से मिलाने से **धेनुमुद्रा** बन जाती है। इसी का दूसरा नाम अमृतीकरण भी है। दोनों हाथों को त्रिकोणाकार में मिलावे तो **परमीकरण मुद्रा** बनती है। इन मुद्राओं का प्रयोग देवता के आवाहन में होता है। अंगन्यास की मुद्राओं का वर्णन पूर्व में ही किया जा चुका है।

शक्तिमुद्राः

तन्त्रराजे (४ प० ३३,४१)—

कृताञ्जली करौ कृत्वा व्यत्यस्येत् तदनामिके। तन्नखे तर्जनीग्रस्ते त्रिखण्डा ललितावहा ॥१॥
कनिष्ठानामिकामध्या नखैरन्योन्यसङ्गताः। कृत्वाङ्गुष्ठौ कनिष्ठास्थौ ऋजू कुर्याच्च तर्जनी ॥२॥
सर्वसंक्षोभणी मुद्रा त्रैलोक्यक्षोभकारिणी। एतस्या मध्यमे देवि तर्जनीवत्कृते सति ॥३॥
सर्वविद्राविणी मुद्रा सर्वासामपि योषिताम्। ताभ्यामङ्कुशरूपाभ्यां संश्लिष्टाकर्षिणी मता ॥४॥
परिवृत्ताङ्गुली कृत्वा नखाश्लिष्टतलौ करौ। अङ्गुष्ठौ तर्जनीश्लिष्टौ नखैरावेशकारिणी ॥५॥
कराग्रे प्रसृते कृत्वा व्यत्यस्येत् तत्कनिष्ठिके। तदग्राश्लेषतो भुग्ने मध्यमेऽनामिके ऋजू ॥६॥
तन्नखस्थे तु तर्जन्यावङ्गुष्ठौ मध्यमोपरि। इयमुन्मादिनी मुद्रा सर्वोन्मादनकारिणी ॥७॥
अस्यास्त्वनामिके भुग्ने तर्जन्यावङ्कुशाकृती। एषा महाङ्कुशामुद्रा स्तम्भनाकर्षकारिणी ॥८॥
सव्यदक्षकरौ सम्यग् व्यत्यस्येत् कूर्परोपरि। मणिबन्धे च बध्नीयादञ्जलिं मध्यपृष्ठयोः ॥९॥
विधाय भुग्ने तर्जन्यावङ्गुष्ठौ कारयेदधः। कनिष्ठानामिके कुर्याद् व्यत्यस्ते करपृष्ठगे ॥१०॥
इयं सा खेचरीमुद्रा ललिताप्रीतिकारिणी। अस्या विरचनेनैव सर्वाः सिध्यन्ति देवताः ॥११॥ इति।

तन्त्रराज में कहा गया है कि दोनों हाथों को मिलावे एवं अंगूठों को सीधा रखे। दोनों तर्जनियों को तिरछी करके अनामिकाओं के नखों पर रखे। कनिष्ठाओं को उनके नीचे लगावे तो इससे न्यास और ध्यान में सुख देने वाली **त्रिखण्डा मुद्रा** बनती है। दोनों मध्यमाओं को मिलावे, कनिष्ठाओं को अंगूठों से दबावे। तर्जनियों को सीधा रखे और मध्यमाओं पर अनामाओं को लगावे तब त्रैलोक्य-क्षोभकारिणी **संक्षोभिणी मुद्रा** बनती है। पूर्वोक्त संक्षोभिणी मुद्रा बनाने की क्रिया में केवल मध्यमाओं को सीधा करने से **सर्वविद्राविणी मुद्रा** बनती है। यह मुद्रा सभी योषिताओं को विद्रावित करती है। अंगूठों को कनिष्ठाओं और अनामाओं पर रखे तर्जनियों को सीधा करके अंगूठों पर अंकुशाकार मोड़े तो **सर्वाकर्षिणी मुद्रा** बनती है। दोनों हाथों को पुटाकार करके दोनों तर्जनियों को तिरछी करे और उनके मध्य में मध्यमाओं को लगावे। इसी प्रकार दोनों कनिष्ठाओं को तिरछी करके उनके बीच में अनामिका लगावे। सबों को परस्पर संश्लिष्ट करके दबा दे और उनके ऊपर अंगूठों को रखे तो इससे **वशंकरी मुद्रा** बनती है। दोनों हाथों को सम्मुख करके मध्यमाओं के मध्यगत कनिष्ठिकाओं को पकड़े। अनामिकाओं को सीधी रखे। उन पर दोनों तर्जनियों को लगावे। अंगूठों को दण्डाकार सीधा करे और मध्यमाओं के आगे रखे। **उन्मादिनी** नाम की यह मुद्रा औरतों को क्लेदित करती है। मध्यमा को सीधी करके उसके मध्य के निकट तर्जनी को लगाकर कुछ मोड़ दे तो **अंकुशमुद्रा** बनती है। यह **स्तम्भनकारिणी मुद्रा** होती है। बाँयें हाथ को दाहिने हाथ में उलटा रखकर कनिष्ठाओं और अनामिकाओं को तर्जनियों से पकड़े और मध्यमा के पूर्वार्ध में मिलावे। अंगूठों को सीधा करके ललाट में लगावे तो **खेचरी मुद्रा** बनती है। इसको बनाने से सभी देवता सिद्ध होते हैं।

खेचरीप्रभावः

अस्यामुक्तमुद्रायामीषद्भेद उक्तो वामकेश्वरतन्त्रे—

सव्यं दक्षिणदेशे तु दक्षिणं सव्यदेशके। बाहुं कृत्वा महादेवि हस्तौ संपरिवर्त्य च ॥१॥
कनिष्ठानामिके देवि युक्तानेन क्रमेण तु। तर्जनीभ्यां समाक्रान्ते सर्वोर्ध्वमपि मध्यमे ॥२॥
अङ्गुष्ठौ तु महेशानि कारयेत् सरलावपि। इयं सा खेचरी नाम्ना मुद्रा सर्वोत्तमा प्रिये ॥३॥
रचितैव महेशानि सर्वतेजोपहारिणी। बद्धयैवैतया देवि दृश्यते साधकोत्तमः ॥४॥
योगिनीसर्ववृन्दैस्तु ज्वलत्पावकसन्निभः। डाकिनीराकिणीवृन्दैर्लाकिनीकाकिनीगणैः ॥५॥
साकिनीहाकिनीवृन्दैर्दृश्यते परमेश्वरि। एतया ज्ञातया देवि योगिनीनां प्रियो भवेत् ॥६॥
अतः समयमुद्रेयं सर्वासां परिकीर्तिता। प्रयतोऽप्रयतो वापि शुचौ देशेऽथवाऽशुचौ ॥७॥

उत्थितश्चोपविष्टश्च चङ्क्रमन् निश्चलोऽपि वा। उच्छिष्टो वा शुचिर्भूत्वा भुञ्जानो मैथुने रतः ॥८॥
मुद्रया मध्यमाङ्गुल्यौ परिवर्त्य क्रमो मनुः। पार्थिवस्थानके युक्तः सद्यः खेचरतां लभेत् ॥९॥ इति।

तन्त्रराजे (४ प० ५१ श्लो०)—

मध्यमा मध्यपार्श्वाधः कनिष्ठाग्रे विपर्ययात्। अनामिकेऽधो व्यत्यस्ते तर्जन्यावङ्कुशाकृती ॥१॥
इतरे तन्त्रखाग्राग्रे बीजमुद्रेयमीरिता। कनिष्ठाङ्गुष्ठसंश्लेषान्महायोनिस्त्रिखण्डिका ॥२॥
कनिष्ठानामिकामध्या व्यत्यस्ताः पृष्ठतः क्रमात्। वलितावूर्ध्वयोगेन ऋजुतर्जनिकौ करौ ॥३॥
शक्त्युत्थापनमुद्रैषा जपपूजासमाधिषु। मूर्तीकरणमेतस्या रचनेन समीरितम् ॥४॥
बाणकोदण्डमुद्रा स्यादृज्वङ्गुष्ठेन मुष्टिना। (४-३८) पाशमुद्रा तु तेनैव तर्जन्यङ्गुष्ठयोगतः ॥५॥
कनिष्ठानामयोः पृष्ठे स्यादङ्गुष्ठस्तु तर्जनी। कुटिला ऋजुमध्यस्था मुद्रासावङ्कुशाभिधा ॥६॥
खेचर्या वक्ष्यमाणाया मध्यमे करपृष्ठगे। तर्जन्यौ ऋजुसंश्लिष्टे मुद्रैषोक्ता नमस्कृतौ ॥७॥ इति।

वामकेश्वर तन्त्र में इस मुद्रा में कुछ भेद कहा गया है। वहाँ कहा गया है कि बाँयें हाथ को दाँयें तरफ करके दाँयें हाथ को बाँयें तरफ करे। इस प्रकार हाथों को परिवर्तित करे। कनिष्ठाओं अनामिकाओं को मिलाकर तर्जनियों से समाक्रान्त करे। सबों के बीच में मध्यमाओं एवं अंगूठों को सीधा रखे। इस प्रकार खेचरी मुद्रा बनता है, जो सर्वोत्तम है। यह मुद्रा सभी तेजों की अपहारिणी है। इस मुद्रा के बाँधने से साधक को सभी योगिनियाँ प्रज्ज्वलित अग्नि के समान दिखायी पड़ती हैं। डाकिनी, राकिणी, लाकिनी, काकिनी, साकिनी, हाकिनी का समूह दिखलायी पड़ता है। इस मुद्रा का ज्ञाता योगिनियों का प्रिय होता है। इसीलिये इसे समयमुद्रा कहा गया है। प्रयत या अप्रयत पवित्र या अपवित्र देश में खड़ा या बैठा, चक्कर लगाता हुआ या निश्चल बैठा, जूठे मुँह या मुख धोकर भोजनकाल में या मैथुन में इस मुद्रा में मध्यमा अंगुलि परिवर्तित करके ललाट में लगावे तो खेचरत्व प्राप्त होता है।

तन्त्रराज में कहा गया है कि दोनों हाथों से अर्धचन्द्राकृति बनाकर दोनों तर्जनियों और दोनों अंगूठों को मिलावे। उनके नीचे मध्यमाओं में कनिष्ठाओं को जोड़े और सबके नीचे अनामिकाओं को लगावे तो **बीजमुद्रा** बनती है। कनिष्ठाओं से अंगूठों को मिलाने पर महायोनि **त्रिखण्डिका मुद्रा** बनती है। बाँयें हाथ की कनिष्ठा अनामिका मध्यमा की पीठ पर दाहिने हाथ की इन तीनों अंगुलियों को उलटकर रखे और तर्जनियों की सीधी रखे तो शक्ति **उत्थापिनी मुद्रा** बनती है, जो जप-पूजा-समाधि-मूर्तिकरण में लाभदायक होती है। मुट्ठी बाँधकर अंगूठों को सीधा करने से बाण को **दण्ड मुद्रा** बनती है।

दोनों हाथों की मूट्ठी बाँधकर बाँयें हाथ की तर्जनी को दाहिने की तर्जनी में जोड़ दे और अंगूठों के अग्रभाग को उनमें लगा दे तो **पाशमुद्रा** बनती है। कनिष्ठाओं और अनामिकाओं को मोड़कर उनकी पीठ पर अंगूठों को रखे। मध्यमा को सीधा रखकर उसके मध्य में तर्जनी को टेढ़ी करके सटा दे तो **अंकुशमुद्रा** बनती है। बाँयें हाथ को दाहिने हाथ पर उलटा रखे। कनिष्ठाओं और अनामिकाओं को तर्जनियों से पकड़े। मध्यमा के पूर्वार्ध को मिलावे। अंगूठों को सीधा करके ललाट में लगावे तो **खेचरी मुद्रा** बनती है।

गणेशमुद्राः

अथ गणेशमुद्रा लक्षणसंग्रहे—

ततो गणेशमुद्राणामुच्यन्ते लक्षणान्यथ। उत्तानोर्ध्वमुखी मध्या सरला बद्धमुष्टिका ॥१॥
दन्तमुद्रा समाख्याता सर्वागमविशारदैः। वाममुष्टेस्तु तर्जन्या दक्षमुष्टेस्तु तर्जनीम् ॥२॥
संयोज्याङ्गुष्ठकाग्राभ्यां तर्जन्यग्रे स्वके क्षिपेत्। एषा पाशाह्वया मुद्रा विद्वद्भिः परिकीर्तिता ॥३॥
ऋज्वीं च मध्यमां कृत्वा तर्जनीं मध्यपर्वणि। संयोज्याकुञ्चयेत् किञ्चिन्मुद्रैषाङ्कुशसंज्ञिका ॥४॥
तर्जनीमध्यमासन्धिनिर्गताङ्गुष्ठमुष्टिका। अधोमुखी दीर्घरूपा मध्यमा विघ्नमुद्रिका ॥५॥

तले तलं तु करयोस्तिर्यक् संयोज्य चाङ्गुली: । संहता: प्रसृता: कुर्यान्मुद्रा परशुसंज्ञिता ।।६।।
ऊर्ध्वास्यं दक्षिणं हस्तमानप्रविरलाङ्गुलिम् । किञ्चिन्निम्नतलं कुर्यान्मुद्रैषा लड्डुकाभिधा ।।७।।
उत्तानवाममुष्टिस्तु बीजपूराह्वया मता । दन्तपाशाङ्कुशविघ्नपरशुलड्डुकाह्वया: ।।८।।
बीजपूराह्वया चेति गणेशस्य प्रिया मता: ।

गणेश मुद्रा का विवेचन करते हुये लक्षण संग्रह में दाहिने हाथ ढीली मुट्ठी बाँधकर मध्यमा को सीधी ऊर्ध्वमुख रखे तो **दन्तमुद्रा** बनती है। दोनों हाथों की मूट्ठी बाँधकर बाँयें हाथ की तर्जनी को दाहिने तर्जनी में जोड़ दे और अंगूठों को उनमें लगा दे तो **पाश मुद्रा** बनती है। मध्यमा को सीधी करके उसके मध्य के समीप तर्जनी लगाकर कुछ मोड़े तो **अंकुश मुद्रा** बनती है। तर्जनी मध्यमा के बीच से अंगूठे को बाहर निकालकर अधोमुख करे तो **विघ्न मुद्रा** होती है। दोनों करतलों को मिलाकर अंगुलियों को तिरछे से **परशु मुद्रा** बनती है। दाहिने हाथ की अंगुलियों को लड्डू या अनार की आकृति का बनाने से **मोदक** या **लड्डू मुद्रा** बनती है, जो गणेश को अतिशय प्रिय है। दोनों हाथों की मुड़ी हुई पोली अंजली को बिजौरे के समान बनाने से **बीजपूर मुद्रा** होती हैं। दन्त, पाश, अंकुश, विघ्न, परशु, मोदक और बीजपूर मुद्रा श्री गणेश को अतिशय प्रिय हैं।

शाक्तेयमुद्रा:

शाक्तेयानां च मुद्राणां कथ्यन्ते लक्षणानि तु ।।९।।
पाशाङ्कुशवराभीतिखड्गचर्मधनु: शरा: । मौसली मुद्रिका दौर्गी मुद्रा: शक्तिप्रिया मता: ।।१०।।
लक्ष्मीमुद्रार्चने लक्ष्म्या वाग्वादिन्यास्तु पूजने । अक्षमाला तथा व्याख्या वीणा पुस्तकमुद्रिका ।।११।।
मातङ्गिन्यास्तु वीणाख्या मुद्रा चातिप्रिया भवेत् । योनिमुद्रा तु सर्वासां शक्तीनां प्रीतिदा मता ।।१२।।
पाशाङ्कुशाख्ये प्रोक्ते च कथ्यन्ते ता यथाक्रमम् । उत्तानं दक्षिणं हस्तं कृत्वाधो नमयेच्छनै: ।।१३।।
संहताङ्गुलिका मुद्रा वराख्या परिकीर्तिता । पराङ्मुखं वामहस्तमुच्छ्रिताङ्गुलिकं भवेत् ।।१४।।
अभयस्य तु मुद्रैषा कथिताभयदायिनी । कनिष्ठानामिके बद्ध्वा स्वाङ्गुष्ठेनैव दक्षत: ।।१५।।
शिष्टाङ्गुली तु प्रसृते संसृष्टे खड्गमुद्रिका । वामहस्तं तथा तिर्यक् कृत्वा चैव प्रसार्य च ।।१६।।
आकुञ्चिताङ्गुलिं कुर्याच्चर्ममुद्रेयमीरिता । दक्षमुष्टेस्तु तर्जन्या दीर्घया बाणमुद्रिका ।।१७।।
मुष्टिं कृत्वा तु हस्ताभ्यां वामस्योपरि दक्षिणम् । कुर्यान्मुसलमुद्रेयं सर्वविघ्नविनाशिनी ।।१८।।
मुष्टिं कृत्वा कराभ्यां च वामस्योपरि दक्षिणम् । कृत्वा शिरसि संयोज्य दुर्गामुद्रेयमीरिता ।।१९।।
दक्षिणाङ्गुष्ठतर्जन्यौ वक्रलग्ने कराङ्गुली: । प्रसार्य दर्शयेदेषा मुद्रा स्यादक्षमालिका ।।२०।।
एषैव संहतोत्ताना व्याख्यामुद्रा समीरिता । वीणावादनवद्धस्तौ कृत्वा सञ्चालयेत् तत: ।।२१।।
वीणामुद्रेयमाख्याता सरस्वत्या: प्रियङ्करी । वाममुष्टिं स्वाभिमुखे कुर्यात् पुस्तकमुद्रिका ।।२२।। इति।

शक्ति मुद्रा—अब शक्तिमुद्राओं का विवेचन किया जा रहा है। शक्ति को प्रिय मुद्रायें हैं—पाश अंकुश वर अभय खड्ग ढाल धनुष बाण मुसल और दौर्गी। लक्ष्मी-पूजन में लक्ष्मी मुद्रा और सरस्वती पूजा में अक्षमाला-व्याख्यान-वीणा एवं पुस्तक मुद्रा होती है। मातङ्गिनी को वीणा मुद्रा अतिशय प्रिय होती है। सभी शक्तियों को योनिमुद्रा प्रिय है। पाश अंकुश को पूर्व में विवेचित किया जा चुका है। उत्तान दाहिना हाथ नीचे करके फैलाने से **वर मुद्रा** बनती है। पराङ्मुख बाँयें हाथ को उर्ध्वमुख पसारने से **अभयमुद्रा** होती है। दाहिने हाथ की कनिष्ठा और अनामिका को अंगूठे से दबाकर शेष मध्यमा-तर्जनी को सीधा रखे तो **खड्ग मुद्रा** बनती है। बाँयें हाथ को तिरछा करके फैलावे और मुट्ठी बाँध ले तो **ढाल मुद्रा** बनती हैं। दाहिने हाथ को सीधा करके मुट्ठी बाँधे और तर्जनी को सीधा करे तो **बाण मुद्रा** बनती है। बाँयीं मुट्ठी को दाहिनी मूट्ठी पर रखने से विघ्नों को नाश करने वाली **मुसल मुद्रा** बनती है। दोनों हाथों की मुट्ठी बाँधकर बाँयीं मुट्ठी को दाहिनी पर रखे और मस्तक से लगावे तो **दुर्गा मुद्रा** बनती है। अंगूठे और तर्जनी के अग्रभाग को शेष तीनों अंगुलियों में गूँथकर फैलाने से अक्षमाला मुद्रा बनती है। दाहिने हाथ की तर्जनी के अग्रभाग पर उसी हाथ के अंगूठे को लगाकर फैलाने से **व्याख्यान मुद्रा** बनती है।

दोनों हाथों को वीणा बजाने के समान करके शिर को हिलावे तो **वीणा मुद्रा** बनती है। कुछ खुली हुई बाँयीं मुट्ठी को स्वाभिमुखी करने से **पुस्तक मुद्रा** बनती है।

गायत्रीमुद्राः

अथ गायत्र्या द्वात्रिंशन्मुद्रास्तत्रैव—

सुमुखं संपुटं चैव विततं विस्तृतं तथा। द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्पञ्चमुखं तथा ॥१॥
षण्मुखोऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा। शकटं यमपाशं च ग्रथितं संमुखोन्मुखम् ॥२॥
विलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मवराहकौ। सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा ॥३॥
एता मुद्राश्चतुर्विंशद् गायत्र्याः सुप्रतिष्ठिताः। वृथा मन्त्रजपश्चैव स्नानं भोजनमेव च ॥४॥
तथा वै तीर्थयात्रा च मुद्राहीने वृथा हि सा। यज्ञश्च निष्फलस्तेषां होमो देवार्चनं तथा ॥५॥
तस्मान्मुद्रा महाज्ञेया विद्वद्भिर्यत्नमास्थितैः। आकुञ्चिताङ्गुलिकरौ सम्मुखौ सुमुखं भवेत् ॥६॥
कोशाकारौ तु साङ्गुष्ठौ तत् संपुटमुदाहृतम्। विरलाङ्गुलिकौ तौ तु विततं परिकीर्तितम् ॥७॥
विस्तीर्णं विस्तृतौ हस्तावन्योन्याञ्जलिसंयुतौ। कनिष्ठेऽनामिके युक्ते चेति तद्द्विमुखं भवेत् ॥८॥
तदेव मध्यमायुक्तं त्रिमुखं परिकीर्तितम्। तदेव तर्जनीयुक्तं चतुर्मुखमुदीरितम् ॥९॥
तदेव स्यात् पञ्चमुखं मिलिताङ्गुष्ठकं यदि। तदेव षण्मुखं प्रोक्तं तथा व्यस्तकनिष्ठिकम् ॥१०॥
अधोमुखयुतौ हस्तावधोमुखमुदीरितम्। व्यापकाञ्जलिका सा स्याद्व्यस्ताङ्गुलिकरौ युतौ ॥११॥
अङ्गुष्ठकद्वययुतं मुष्टिद्वयमधोमुखम्। भवेद्यदि तदा प्रोक्तं शकटं मुनिसत्तमैः ॥१२॥
मुष्टिं कृत्वा करौ योज्य तर्जनीं च प्रसार्य च। आकुञ्च्याग्रौ तु संयोज्य यमपाशं विदुर्बुधाः ॥१३॥
अन्योन्यान्तरसाश्लिष्टदशाङ्गुलिकरावुभौ। अन्योन्यमपि बध्नीयाद् ग्रथितं परिकीर्तितम् ॥१४॥
चुलुकाग्रौ करौ कृत्वा चोर्ध्वे वामकरे सुधीः। अधोमुखेन दक्षेण योजयेत् संमुखोन्मुखम् ॥१५॥
अधःकोशाकृतिकरौ विलम्बं विदुषो विदुः। युतं मुष्टिद्वयं चैव सम्यग् मुष्टिकमीरितम् ॥१६॥
अन्योन्यानामिकामध्यामन्योन्येन च संस्पृशेत्। कनिष्ठिकायुगेनैव मत्स्यमुद्रा समीरिता ॥१७॥
अधोमुखे करे वामे तादृशो दक्षिणः करः। पृष्ठदेशसमाक्रान्तः कूर्ममुद्रा समीरिता ॥१८॥
मुष्टिं कृत्वा वामहस्तं मध्यमां तां प्रसार्य्य च। निवेशयेद् वामकक्षे वराहस्य समीरिता ॥१९॥
प्रसारिताङ्गुलिकरौ समीपं कर्णयोर्नयेत्। सिंहाक्रान्तं समुद्दिष्टं गायत्रीजपतत्परैः ॥२०॥
दर्शयेच्छ्रोत्रयोर्हस्तौ संयुक्ताङ्गुलिपञ्चकौ। महाक्रान्तं भवेन्मुद्रा गायत्रीहृदयङ्गता ॥२१॥
तर्जनीं दक्षहस्तस्य वामे करतले न्यसेत्। बध्नीयाद्वामहस्तेन मुद्गरं समुदीरितम् ॥२२॥
दक्षिणेन करेणैव चालिताङ्गुलिना शिरः। वदनाभिमुखेनैव पल्लवं मुनिभिः स्मृतम् ॥२३॥
सुरभिर्ज्ञानसिंहौ च योनिः कूर्मोऽथ पङ्कजम्। लिङ्गं निर्याणमुद्रेति जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत् ॥२४॥

निर्याणं प्रयाणं तेन प्रयाणकाले दर्शनीया संहारमुद्रा लक्ष्यते। अन्याः सप्त मुद्राः प्रसिद्धाः।

मिथः कनिष्ठिके बद्ध्वा तर्जनीभ्यामनामिके। अनामिकोर्ध्वसंश्लिष्टदीर्घमध्यमयोरधः ॥२५॥
अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यस्य योनिमुद्रेयमीरिता। इति।

गायत्री की बत्तीस मुद्रायें—गायत्री की चौबीस प्रसिद्ध मुद्रायें हैं—सुमुख, संपुट, वितत, विस्तृत, द्विमुख, त्रिमुख, चतुर्मुख, पञ्चमुख, षण्मुख, अधोमुख, व्यापकाञ्जलि, शकट, यमपाश, ग्रथित, सन्मुखोन्मुख, विलम्ब, मुष्टिक, मत्स्य, कूर्म, वराह, सिंहाकान्त, महाक्रान्त, मुद्गर, पल्लव। इनके विना मन्त्रजप, स्नान, भोजन, तीर्थयात्रा, व्यर्थ होती है। इन मुद्राओं के प्रयोग के विना यज्ञ, होम एवं देवार्चन भी निष्फल होता है। इसलिये विद्वानों को प्रयत्नपूर्वक मुद्राओं का ज्ञान

अवश्य करना चाहिये। इन चौबीस मुद्राओं का स्वरूप इस प्रकार है—

१. सुमुख—दोनों हाथों को अंगुलियों को मोड़कर परस्पर मिलाये।

२. सम्पुट—दोनों हाथों को फुलाकर परस्पर मिलाये।

३. वितत—दोनों हथेलियों को एक-दूसरे के सामने करे।

४. विस्तृत—दोनों हाथों की अंगुलियों को खोलकर दोनों को कुछ दूर रखे।

५. द्विमुख—दोनों हाथों की कनिष्ठा से कनिष्ठा एवं अनामिका से अनामिका को मिलावे।

६. त्रिमुख—दोनों मध्यमाओं को मिलावे।

७. चतुर्मुख—दोनों तर्जनियों को मिलावे।

८. पञ्चमुख—दोनों अंगूठों को मिलावे।

९. षण्मुख—हाथ वैसे ही रखते हुए दोनों कनिष्ठाओं को खोले।

१०. अधोमुख—उलटे हाथों की अंगुलियों को मोड़े तथा मिलाकर नीचे करे।

११. व्यापकाञ्जलि—वैसे ही मिले हाथों को शरीर की ओर घुमाकर सीधा करे।

१२. शकट—दोनों हाथों को उलटा कर अंगूठे से अंगूठा मिलाकर तर्जनियों को सीधा रखते हुए मुट्ठी बाँधे।

१३. यमपाश—तर्जनी से तर्जनी मिलकर दोनों मुट्ठियों को बाँधे।

१४. ग्रथित—दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर संश्लिष्ट करे।

१५. उन्मुखोन्मुख—हाथों की पाँचों अंगुलियों को मिलाकर पहले बाँयें पर दाहिना फिर दाहिने पर बाँयाँ हाथ रखे।

१६. प्रलम्ब—अंगुलियों को कुछ मोड़कर दोनों हाथों को उलटा कर नीचे करे।

१७. मुष्टिक—दोनों अंगूठों को ऊपर रखते हुए दोनों मुट्ठियाँ बाँधकर मिलावे।

१८. मत्स्य—दक्ष करपृष्ठ पर उलटा वाम हस्त रखकर दोनों अंगूठों को हिलाये।

१९. कूर्म—सीधे बाँयें हाथ की मध्यमा अनामिका कनिष्ठा को मोड़कर उलटे दाहिने हाथ की मध्यमा अनामिका को उन तीनों अंगुलियों के नीचे रखकर तर्जनी पर दाहिनी कनिष्ठा और बाँयें अंगूठे पर दाहिनी तर्जनी रखे।

२०. वराह—दाहिनी तर्जनी को बाँयें अंगूठे से मिलाकर दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर बाँधे।

२१. सिंहाक्रान्त—दोनों हाथों को कानों के समीप करे।

२२. महाक्रान्त—दोनों हाथों की अंगुलियों को कानों के समीप करे।

२३ मुद्गर—मुट्ठी बाँधकर दाहिनी कुहनी बाँयीं हथेली पर रखे।

२४. पल्लव—दाहिने हाथ की अंगुलियों को मुख के सामने हिलावे।

जप के अन्त में सुरभि, ज्ञान, सिंह, योनि, कूर्म, पंकज, लिङ्ग एवं निर्याण—इन आठ मुद्राओं को दिखाना चाहिये। निर्माण को ही संहारमुद्रा भी कहते हैं। इन आठ मुद्राओं का स्वरूप इस प्रकार कहा गया है—

१. सुरभि—दोनों हाथों की अंगुलियों को संश्लिष्ट कर बाँयें हाथ की तर्जनी से दाहिने हाथ की मध्यमा, मध्यमा से तर्जनी, अनामिका से कनिष्ठा और कनिष्ठा से अनामिका को मिलाये तो सुरभि मुद्रा बनती है।

२. ज्ञान—दाहिने हाथ की तर्जनी से अंगूठा मिलाकर हृदय में तथा इसी प्रकार बाँयाँ हाथ बाँयें घुटने पर सीधा रखे।

३. वैराग्य—दोनों तर्जनियों से अंगूठों को मिलाकर घुटनों पर सीधा रखे।

४. योनि—दोनों मध्यमाओं के नीचे से बाँयी तर्जनी के ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनी पर बाँयीं अनामिका रखे। दोनों तर्जनियों से बाँधकर मध्यमाओं को ऊपर रखे।

५. शङ्ख—बाँयें अंगूठे को दाहिनी मुट्ठी में बाँधकर दाहिने अंगूठे से बाँयीं अंगुलियों को मिलाये।

६. पंकज—दोनों हाथों के अंगूठों तथा अंगुलियों को मिलाकर ऊपर की ओर करे।

७. लिङ्ग—दाहिने अंगूठे को सीधा रखते हुए दोनों हाथों की अंगुलियाँ को संश्लिष्ट बाँयाँ अंगूठा दाहिने अंगूठे की जड़ पर रखे।

८. निर्याण—उलटे बाँयें हाथ पर दाहिना हाथ सीधा रखे। अंगुलियों को परस्पर संश्लिष्ट कर दोनों हाथों को अपनी ओर घुमाकर दोनों तर्जनियों को सीधा कान के समीप करे।

वैष्णवमुद्राः

अथ वैष्णवमुद्रास्तत्रैव—

एकोनविंशतिर्मुद्रा विष्णोरुक्ता मनीषिभिः। शङ्खचक्रगदापद्मवेणुश्रीवत्सकौस्तुभाः ॥१॥
वनमाला तथा ज्ञानमुद्रा बिल्वाह्वया तथा। गरुडाख्या परा मुद्रा विष्णोः संतोषवर्धिनी ॥२॥
नारसिंही च वाराही हायग्रीवी धनुस्तथा। बाणमुद्रा च परशुर्जगन्मोहनिका परा ॥३॥
काममुद्रा समाख्याता तासां लक्षणमुच्यते। वामाङ्गुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ॥४॥
कृत्वोत्तानं ततो मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत्। वामाङ्गुल्यस्तथा शिष्टाः संयुक्ताः संप्रसारिताः ॥५॥
दक्षिणाङ्गुष्ठसंस्पृष्टा मुद्रैषा शङ्खसंज्ञिता। विपर्यस्ते तले कृत्वा वामदक्षिणहस्तयोः ॥६॥
अङ्गुष्ठौ ग्रथयेच्चैव कनिष्ठानामिकान्तरे। चक्रमुद्रेयमुद्दिष्टा सर्वसिद्धिकरी शुभा ॥७॥
हस्तौ तु संमुखौ कृत्वा संलग्नौ संप्रसारितौ। अङ्गुल्यौ मध्यमे भूयः संलग्ने संप्रसारिते ॥८॥
गदामुद्रेयमाख्याता विष्णोः सन्तोषकारिणी। हस्तौ तु संमुखौ कृत्वा संनतप्रोन्नताङ्गुली ॥९॥
तलान्तर्मिलिताङ्गुष्ठौ मुद्रैषा पद्मसंज्ञिका। ओष्ठे वामकराङ्गुष्ठो लग्नस्तस्य कनिष्ठिका ॥१०॥
दक्षिणाङ्गुष्ठसंलग्ना तत्कनिष्ठा प्रसारिता। तर्जनीमध्यमानामाः किञ्चित् सङ्कोच्य चालिताः ॥११॥
वेणुमुद्रा भवेदेषा सुगुप्ता प्रेयसी हरेः। अन्योन्यपृष्ठकरयोर्मध्यमानामिकाङ्गुली ॥१२॥
अङ्गुष्ठेन तु बध्नीयात् कनिष्ठामूलसंश्रिते। तर्जन्यौ कारयेदेषा मुद्रा श्रीवत्ससंज्ञिता ॥१३॥
अनामापृष्ठसंलग्ना दक्षिणस्य कनिष्ठिका। कनिष्ठयान्यया बद्धा तर्जन्या दक्षया तथा ॥१४॥
वामानामां च बध्नीयाद् दक्षिणाङ्गुष्ठमूलके। अङ्गुष्ठमध्यमे वामे संयोज्य सरलाः पराः ॥१५॥
चतस्रोऽप्यग्रसंलग्ना मुद्रा कौस्तुभसंज्ञिका। स्पृशेत् कण्ठादिपादान्तं तर्जन्याङ्गुनिष्ठया ॥१६॥
करद्वयेन मालावन्मुद्रेयं वनमालिका। उन्नतं वाममङ्गुष्ठं दक्षाङ्गुष्ठेन वेष्टयेत् ॥१७॥
दक्षिणाङ्गुष्ठकं चैव तदीयाभिर्निपीड्य च। अङ्गुलीभिर्वामहस्ताङ्गुलिभिस्ताश्च पीडयेत् ॥१८॥
गाढं हृदि क्षिपेदेषा बिल्वाख्या मुद्रिका परा। हस्तौ तु विमुखौ कृत्वा ग्रथयित्वा कनिष्ठिके ॥१९॥
मिथस्तर्जनिके श्लिष्टे श्लिष्टावङ्गुष्ठकौ तथा। मध्यमानामिके द्वे तु द्वौ पक्षाविव चालयेत् ॥२०॥
एषा गरुडमुद्रा स्याद्विष्णोः प्रीतिविवर्धिनी। तर्जन्यङ्गुष्ठकौ सक्तावग्रतो हृदि विन्यसेत् ॥२१॥
वामहस्ताम्बुजं चैव वामजानुनि विन्यसेत्। ज्ञानमुद्रा भवेदेषा रामचन्द्रप्रियङ्करी ॥२२॥
जानुमध्ये करौ कृत्वा चिबुकोष्ठौ समावुभौ। हस्तौ तु भूमिसंलग्नौ कम्पमानः पुनः पुनः ॥२३॥
मुखं च विततं कुर्याल्लेलिहानां च जिह्विकाम्। नारसिंही भवेन्मुद्रा ह्येषा तत्प्रीतिवर्धिनी ॥२४॥
दक्षोपरि करं वामं कृत्वोत्तानमधः सुधीः। नामयेदिति संप्रोक्ता मुद्रा वाराहसंज्ञिता ॥२५॥
वामहस्ततले कृत्वा दक्षाङ्गुलीरधोमुखीः। संरोप्य मध्यमां तासामुन्नम्याधो विकुञ्चयेत् ॥२६॥
हयग्रीवप्रिया मुद्रा तन्मूर्तेरनुकारिणी।

धनुर्बाणमुद्रे प्रागेवोक्ते। परशुमुद्रापि प्रागुक्ता।

मूर्ध्नि साङ्गुष्ठमुष्टी द्वे मुद्रा त्रैलोक्यमोहिनी। हस्तौ तु संपुटौ कृत्वा प्रसृताङ्गुलिकौ तथा ॥२७॥

तर्जन्यौ मध्यमापृष्ठे अङ्गुष्ठौ मध्यमास्थितौ। काममुद्रेयमुदिता सर्वदेवप्रियङ्करी ॥२८॥ इति।

वैष्णव मुद्रा—मनीषियों ने कहा है कि विष्णु की उन्नीस मुद्रायें होती हैं। उनमें से शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, वेणु, श्रीवत्स, कौस्तुभ, वनमाला, ज्ञान, बिल्व, गरुड—ये विष्णु को सन्तोषवर्द्धिनी हैं। नारसिंही, वाराही, हयग्रीवी, धनुष, बाण, परशु, जगन्मोहिनी और काम—ये आठ अन्य मुद्रायें कही गई हैं। इनके अतिरिक्त लक्षण इस प्रकार कहे गये हैं—

१. शङ्ख—बाँयें हाथ के अंगुठे को दाहिने हाथ की मुट्ठी में लेकर बाँयें हाथ की चारो अंगुलियों से दाहिने हाथ की मुट्ठी को दबावे एवं दाहिने हाथ के अंगूठे का अग्रभाग बाँयें हाथ की तर्जनी कें अग्रभाग में लगावे।

चक्र—दोनों हाथों को आमने-सामने करके फैला दे एवं कनिष्ठाओं को अंगूठों से लगा दे तो यह सर्वसिद्धिकरी चक्र मुद्रा होती है।

गदा—दोनों हाथों को आमने-सामने करके अंगुलियों को परस्पर संश्लिष्ट करे । फैले हुए स्थान में अंगूठों को लगाये तो विष्णु के लिये सन्तोषप्रद गदा मुद्रा होती है।

पद्म—दोनों हाथों को परस्पर मिलाकर अविकसित कमल के समान खड़ा करे और दोनों अंगूठों को उनके भीतर तल भाग में लगा दे तो पद्ममुद्रा होती है।

वेणु—जिस प्रकार वाँसुरी बजाते हैं, उसी प्रकार बाँयें हाथ के अंगूठे को होठों के पास लगाकर वहीं कनिष्ठा को रखे एवं दाँयें हाथ की तर्जनी मध्यमा अनामिका को चलाता रहे तो वेणुमुद्रा होती है।

श्रीवत्स—औंधे बाँयें हाथ पर सीधा दाहिना हाथ रखकर बायें की कनिष्ठा को दाहिने की तर्जनी से और दाहिनी कनिष्ठा को बाँयीं तर्जनी से मिला दे तथा दोनों अनामिका, मध्यमा को अंगूठों से पकड़े तो श्रीवत्स मुद्रा बनती है।

कौस्तुभ—दाहिनी कनिष्ठा को सटी अनामिका की पीठ पर लगावे एवं बाँयीं कनिष्ठा से तर्जनी और अनामा को आबद्ध करे। दाहिने अंगूठे के मूल में बाँयी अनामिका लगावे। बाँयें अंगूठे से शेष अंगुलियों को लगावे तो कौस्तुभ मुद्रा बनती हैं।

वनमाला—दोनों हाथों की तर्जनी एवं अंगूठे से गले से आरम्भ करके पाँवों तक वनमाला की तरह दोनों ओर स्पर्श करे तो वनमाला मुद्रा बनती है।

ज्ञान—दाँयीं तर्जनी और अंगूठे के अग्रभाग को हृदय पर रखे एवं बाँयें हाथ को बाँयें मोड़कर रखे तो ज्ञानमुद्रा बनती है।

बिल्व—बाँयें अंगूठे को खड़ा करके उसके अग्रभाग को दाहिने अंगूठे से आबद्ध करे। शेष अंगुलियों को बाँयीं अंगुलियों से दृढ़ रूप से बाँधे और हृदय पर स्थापित करे तो बिल्व मुद्रा बनती है।

गरुड़—दोनों हाथों के पीठों को परस्पर मिलावे। कनिष्ठाओं को संश्लिष्ट करे। दोनों तर्जनियों को मिलावे। दोनों अंगूठों को भी मिलावे एवं मध्यमा अनामिका को पंखों के समान हिलावे तो गरुड़ मुद्रा बनती है।

नारसिंही मुद्रा—दोनों हाथों को पैरों के बीच में देकर उकड़ू बैठकर ठोढ़ी और होठ समान बना ले। दोनों हथेलियों को जमीन में लगावे। शरीर को छूता रहे। डरावनी सूरत बना ले एवं जीभ को बाहर निकाल कर हिलावे तो नारसिंही मुद्रा होती है।

वाराही—दाहिने हाथ पर बाँयाँ हाथ रखकर ऊँचा-नीचा करे तो वराह मुद्रा बनती है।

हयग्रीव—बाँयें हाथ की हथेली में दाहिने हाथ की अंगुलियों को अधोमुख लगाने से हयग्रीव मुद्रा बनती है।

धनुष—बाँयीं मध्यमा के अग्रभाग में तर्जनी के अग्रभाग को जोड़े। अनामिका-कनिष्ठा को अंगूठे से दबाकर बाँयें कन्धे के निकट ले जाय तो धनुष मुद्रा बनती है।

बाण—दाहिना हाथ सीधा करके मुट्ठी बाँध ले और तर्जनी को सीधी रखे तो बाणमुद्रा बनती है।

परशु—दोनों करतलों को मिलाकर अंगुलियों को तिरछा फैलाने से परशु मुद्रा बनती है।

जगन्मोहिनी—दोनों हाथों की मुट्ठियों पर अंगूठों को रखने से जगन्मोहिनी मुद्रा बनती है।

काम—हाथों को सम्पुटित करके अंगुलियों को फैला दे। दोनों तर्जनियों और मध्यमाओं को पीठ पर लगा दे। अंगूठों को मध्यमाओं से जोड़ दे तो काममुद्रा बनती है।

सौरमुद्रे

अथ सौरमुद्रे नारायणीये—

पद्माकारौ करौ कृत्वा प्रतिश्लिष्टे तु मध्यमे। अङ्गुल्यौ धारयेत्तस्मिन् बिम्बमुद्रेति सोच्यते ॥१॥
दर्शयेदग्रतः पद्मबिम्बमुद्रे यथोदिते। इति।

सौर मुद्रा—नारायणीय में कहा गया है कि हाथों को पद्माकार करके मध्यमा को प्रतिश्लिष्ट करे। उसमें अंगुलियों को धारण करे तो बिम्ब मुद्रा बनती है। सूर्योदय के समय इसे दिखाना चाहिये।

शैवमुद्राः

अथ शैवमुद्रास्तत्र शिवरहस्ये—

शैवीनामथ मुद्राणां दशानां षण्मुख शृणु। महादेवप्रियाणां ते कथ्यन्ते लक्षणानि वै ॥१॥
उच्छ्रितं दक्षिणाङ्गुष्ठं वामाङ्गुष्ठेन बन्धयेत्। वामाङ्गुलीर्दक्षिणाभिरङ्गुलीभिश्च वेष्टयेत् ॥२॥
लिङ्गमुद्रा समाख्याता शिवसान्निध्यकारिणी। मिथः कनिष्ठिके बद्ध्वा तर्जनीभ्यामनामिके ॥३॥
अनामिकाद्वयाश्लिष्टदीर्घमध्यमयोरधः। अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यस्येद् योनिमुद्रेयमीरिता ॥४॥
अङ्गुष्ठेन कनिष्ठाग्रं बद्ध्वा शिष्टाङ्गुलित्रयम्। प्रसारयेत् त्रिशूलाख्या मुद्रैषा परिकीर्तिता ॥५॥
अङ्गुष्ठतर्जन्यग्रं तु ग्रथयित्वाङ्गुलित्रयम्। प्रसारयेद् अक्षमालामुद्रेयं गुह कीर्तिता ॥६॥
अधःकृतो दक्षहस्तः प्रसृतो वरमुद्रिका। ऊर्ध्वीकृतो वामहस्तः प्रसृतोऽभयमुद्रिका ॥७॥
मिलित्वानामिकाङ्गुष्ठमध्यमाग्राणि योजयेत्। शेषाङ्गुल्यावुच्छ्रिताग्रे मृगमुद्रेयमीरिता ॥८॥
पञ्चाङ्गुल्यो दक्षिणास्तु मिलितास्तूर्ध्वमुच्छ्रिताः। खट्वाङ्गमुद्रा षड्वक्त्र शिवस्यातिप्रिया मता ॥९॥
पात्रवद्वामहस्तं च कृत्वाङ्के वामके तथा। निधायोच्छ्रितवत् कुर्यान्मुद्रा कापालिनी मता ॥१०॥
मुष्टिं च शिथिलां बद्ध्वा ईषदुच्छ्रितमध्यमाम्। दक्षिणां तूर्ध्वमुन्नम्य कर्णदेशे प्रचालयेत् ॥११॥
एषा मुद्रा डुमरुका सर्वविघ्नविनाशिनी। लिङ्गयोनित्रिशूलाक्षमालेष्टाभीमृगात्मिकाः ॥१२॥
खट्वाङ्गा च कपालाख्या डमरुः शिवतोषदाः। इति।

शैव मुद्रा—शिवरहस्य में महादेव को प्रिय दश मुद्राओं का विवेचन किया गया है। क्रमशः इनका स्वरूप इस प्रकार है—

१. लिङ्ग मुद्रा—दाहिने हाथ के अंगूठे को उठाकर बाँयें अंगूठे में बाँधे और बाँयें हाथ की अंगुलियों को दाहिने हाथ की अंगुलियों में सटा दे तो लिङ्गमुद्रा बनती है।

२. योनि मुद्रा—कनिष्ठाओं को आपस में सटा दे। ऊँची की हुई अनामिकाओं से तर्जनियों को लगावे। दोनों मध्यमाओं को फैलावे और उनके मूल में अंगूठों को कर दे तो योनि मुद्रा बनती है।

३. त्रिशूल मुद्रा—अंगूठे से कनिष्ठा को दबा दे एवं तर्जनी मध्यमा और अनामा को सीधा करे तो त्रिशूल मुद्रा बनती है।

४. अक्षमाला मुद्रा—अंगूठे और तर्जनी के अग्रभाग को तीनों अंगुलियों से ग्रथित करके फैलाने से अक्षमुद्रा बनती है।

५. वर मुद्रा—दाहिने हाथ को नीचे करके आगे पसारने से वर मुद्रा होती है।

६. अभय मुद्रा—बाँयें हाथ को ऊपर करके फैला देने से अभय मुद्रा बनती है।

७. मृग मुद्रा—अंगूठा अनामिका और मध्यमा के अग्रभागों को मिलाकर तर्जनी-कनिष्ठा को सीधा करने से मृग मुद्रा बनती है।

८. खट्वाङ्ग मुद्रा—दाहिने हाथ की पाँचों अंगुलियों को मिलाकर ऊँची करने से खट्वाङ्ग मुद्रा होती है।

९. कपाल मुद्रा—बाँयें हाथ को पात्र के समान बनाकर बाँयीं गोद में रखे और उठावे तो कपाल मुद्रा बनती है।

१०. डमरू मुद्रा—दाहिने हाथ से ढीली मुट्ठी बाँधकर मध्यमा को सिकोड़े। उसे कान के समीप हिलाये तो डमरू मुद्रा बनती है। ये लिङ्ग, योनि, त्रिशूल, अक्ष, वर, मृगी, खट्वांग, त्रिशूल, डमरू, कपाल करने वाली मुद्रायें शिव को प्रसन्न करने वाली हैं।

आसनादिमुद्राः

लक्षणसंग्रहे—

आसने पद्ममुद्रा स्याद् हस्तद्वयमधोमुखम्। मुद्रैषा कुशलप्रश्ने तदेवोर्ध्वमुखं पुनः ॥१॥
मुद्रा स्यात् स्वागते पाद्यमुद्रा चाञ्जलिरुच्यते। अनामाङ्गुष्ठसंयोगात् प्रोक्ता चार्घ्यस्य मुद्रिका ॥२॥
उत्तानं दक्षहस्तं तु कृत्वा निम्नतलं सुधीः। कनिष्ठिहीना संयुक्ताश्चतस्रोऽङ्गुलिकास्तथा ॥३॥
मुद्रैषाचमनी प्रोक्ताऽधोमुखी सा त्वनामया। स्पष्टाङ्गुष्ठा भवेन्मुद्रा मधुपर्के वरानने ॥४॥
अधोमुखी दक्षहस्तकृता मुष्टिः कनिष्ठया। वियुक्ता स्नानमुद्रैषा गदिता परमेश्वरि ॥५॥
उत्तानं दक्षिणं हस्तं कृत्वा तन्मध्यमां पुनः। अङ्गुष्ठेन स्पृशेदेषा मुद्रा वस्त्रस्य कीर्तिता ॥६॥
एषैवानामिकास्पर्शान्मुद्रा भूषणसंज्ञिता। कनिष्ठास्पर्शतो ह्येषा उपवीतस्य मुद्रिका ॥७॥
ज्येष्ठाग्रेण कनिष्ठाग्रं स्पृशेद् गन्धस्य मुद्रिका। अधोमुखं करं कृत्वा तर्जन्यग्रे तु योजयेत् ॥८॥
अङ्गुष्ठाग्रं तु मुद्रेयं पुष्पाख्या परमेश्वरि। अङ्गुष्ठाग्रेण तर्जन्याः स्पृशेदग्रं महेश्वरि ॥९॥
धूपमुद्रेयमाख्याता सर्वदेवप्रियङ्करी। ज्येष्ठाग्रेण स्पृशेदग्रं मध्यमायाः सुरार्चिते ॥१०॥
दीपमुद्रेयमुदिता सर्वदेवप्रिया शिवे। अनामाग्रं स्पृशेद् देवि ज्येष्ठाग्रेण तु देशिकः ॥११॥
नैवेद्यमुद्रा कथिता देवानां तृप्तिदायिनी। इति।

आसनादि मुद्रायें—लक्षणसंग्रह में कहा गया है कि आसन के लिये पद्ममुद्रा दोनों हाथों को अधोमुख करने से होती है। कुशल प्रश्नों में इसी मुद्रा को ऊर्ध्व मुख करने से मुद्रा होती है, स्वागत मुद्रा भी यही होती है। पाद्य मुद्रा अञ्जलि है। अर्घ्य मुद्रा अनामा, अंगूठे के योग से बनती है। दाँयें हाथ को उत्तान कर कनिष्ठा को अलग करे और चारो अंगुलियों को मिलावे तो आचमनी मुद्रा बनती है। इसे अधोमुखी करके अनामा से अलग करे तो मधुपर्क मुद्रा बनती हैं। कनिष्ठारहित अधोमुखी दाहिनी मुट्ठी स्नान मुद्रा होती है। दाँयें हाथ को उत्तान करके अंगूठे से मध्यमा को मिलावे तो वस्त्र मुद्रा बनती हैं। इसी मुद्रा में अंगूठे से अनामा मिलाने से भूषण मुद्रा बनती है। कनिष्ठा-अंगूठे को मिलाने पर उपवीत मुद्रा बनती है। मध्यमाग्र से कनिष्ठाग्र को मिलाने से गन्ध मुद्रा बनती है। अधोमुख तर्जनी अंगूठे के योग से पुष्प मुद्रा बनती है। अंगुष्ठाग्र और तर्जनी के योग से धूप मुद्रा बनती है। मध्यमा अंगूठे के योग से दीप मुद्रा बनती है। अनामाग्र और अंगुष्ठाग्र के योग से नैवेद्य मुद्रा बनती है। ये सभी देवों को तृप्तिदायिनी होती हैं।

पञ्चवायुमुद्राः

नारदपञ्चरात्रे—

ग्रासमुद्रां सव्यहस्ते प्रफुल्लकमलाकृतिम्। दर्शयेत् पञ्चवायूनामन्यहस्तेन दर्शयेत् ॥१॥
कनिष्ठानामिके सम्यगङ्गुष्ठाग्रेण योजयेत्। प्राणमुद्रा समाख्याता प्रथमं दर्शयेदिमाम् ॥२॥
योजयेत् तर्जनीमध्यामपानस्याथ मुद्रिका। मध्यमानामिके तद्वद्व्यानमुद्रा प्रकीर्तिता ॥३॥
तर्जनीमध्यमानामा तद्वन्मुद्रा तुरीयका। सर्वाभिरङ्गुलीभिश्च पञ्चमी मुद्रिका मता ॥४॥
स्वकीयैर्मनुभिर्युक्ता पञ्च मुद्राः प्रकीर्तिताः। प्राणसंज्ञस्तथापानो व्यानोदानमनुस्तथा ॥५॥
समानो ङेयुताः सर्वे प्रणवाद्या द्विठान्तकाः। पञ्च मुद्रा भवन्तीह क्रमेणैव समीरिताः ॥६॥ इति।

वायु मुद्रायें—नारदपञ्चरात्र के अनुसार बाँयें हाथ को कमलाकार बनाकर दाहिने हाथ से पञ्च प्राण मुद्रा दिखाने से **ग्रासमुद्रा** बनती है। अंगूठा-अनामिका-कनिष्ठा को मिलाने से **प्राणमुद्रा** बनती है। अंगूठा, तर्जनी, मध्यमा के योग से **अपान मुद्रा** बनती है। अंगूठा, मध्यमा, अनामिका के योग से **व्यान मुद्रा** बनती है। अंगूठा, तर्जनी, मध्यमा, अनामा के अग्रभाग के योग से **उदान मुद्रा** बनती है। अंगूठा के अग्रभाग से चारो के अग्रभाग को मिलाने से **समान मुद्रा** बनती है। इनके नाम के पहले ॐ और बाद में स्वाहा जोड़ने से उनके मन्त्र बनते हैं।

वैश्वानरनाराचसृणिकालकर्णिकाविस्मयनादबिन्दुमुद्राः

लक्षणसंग्रहे—

मणिबन्धस्थितौ कृत्वा प्रसृताङ्गुलिकौ करौ। कनिष्ठाङ्गुष्ठयुगलं मिलित्वान्तः प्रसारयेत्॥१॥
सप्तजिह्वाख्यमुद्रेयं प्रिया वैश्वानरस्य हि। इति।

कुलार्णवे—'सर्वाभिरङ्गुलीभिश्च दद्याद्भूतबलिं प्रिये' इति। पद्मवाहिन्याम्—

वृद्धाभ्यामंङ्गुलीर्बद्ध्वा तर्जन्यौ दण्डवत् सृजेत्। अग्रं वामं ततः पृष्ठे दक्षमाकर्षयेच्छनैः॥१॥
नाराचमुद्रा संप्रोक्ता योज्या बलिविसर्जने। इति।

लक्षणसंग्रहे—

अधोमुखे वामहस्ते ऊर्ध्वास्यं दक्षहस्तकम्। क्षिप्त्वाङ्गुलीरङ्गुलीभिः संयोज्य परिवर्तयेत्॥१॥
एषा संहारमुद्रा स्याद्विसर्जनविधौ मता। ऊर्ध्वास्यवामतर्जन्या मध्ये वक्रां परां न्यसेत्॥२॥
तिर्यङ्मध्ये भवेदेषा सृणिमुद्रारिमर्दिनी। अङ्गुष्ठावुन्नतौ मुष्ट्योः कृत्वा संलग्नयोर्द्वयोः॥३॥
तावेदाभिमुखे कुर्यान्मुद्रैषा कालकर्णिका। दक्षिणा निबिडा मुष्टिर्नासिकार्पिततर्जनी॥४॥
मुद्रा विस्मयसंज्ञा स्याद्विस्मयावेशकारिणी। मुष्टिरूर्ध्वीकृताङ्गुष्ठा दक्षिणा नादमुद्रिका॥५॥
तर्जन्यङ्गुष्ठसंयोगादग्रतो विन्दुमुद्रिका। इति।

सप्तजिह्वा आदि मुद्रायें—लक्षणसंग्रह अग्नि को प्रिय सप्तजिह्वा मुद्रा का निरूपण करते हुये कहा गया है कि दोनों मणिबन्धों को मिलाकर अंगुलियों को सीधा करे और कनिष्ठा से अंगूठे को मिलावे तो **सप्तजिह्वा मुद्रा** बनती है। कुलार्णव के अनुसार सभी अंगुलियों को मिलाकर बलि दी जाती है। पद्मवाहिनी के अनुसार अंगूठे से अंगुलियों को दबाकर तर्जनी को दण्डवत् सीधा करके बाँयें कन्धे पर रखे एवं दाहिने हाथ को आगे करके धनुष की डोरी खीचने के समान खींचे तो **नाराच मुद्रा** बनती है। बलि प्रदान करते समय यह मुद्रा प्रदर्शित की जाती है।

लक्षणसंग्रह के अनुसार बाँयें हाथ को अधोमुख करके दाहिने हाथ को सीधा करके उनकी अंगुलियों को आपस में संश्लिष्ट करे। तथा अदल-बदल करे तो **संहार मुद्रा** बनती है। बाँयें हाथ को सीधा करके मुट्ठी बाँधे एवं तर्जनी को लम्बा करे तथा तर्जनी के मध्य से मध्यमा को टेढ़ा करे तो **अंकुश मुद्रा** बनती है। दोनों मुट्ठियों को मिलाकर अंगूठों को सीधा करे तो **कालकर्णिका मुद्रा** बनती है। दाहिनी मुट्ठी को बाँधकर तर्जनी को सीधा करके नाक में लगावे तो **विस्मय मुद्रा** बनती है। दाहिने हाथ की मुट्ठी को ऊँचा करके अंगूठा खड़ा करे तो **नादमुद्रा** बनती है। तर्जनी एवं अंगूठे को मिलाने से **बिन्दु मुद्रा** बनती है।

स्वस्तिकाद्यासनलक्षणम्

अथ कालविहितासनानि गोरक्षसंहितायाम्—

जानूर्वोरन्तरे सम्यक् कृत्वा पादतले उभे। ऋजुकायः समासीनः स्वस्तिकं तत्प्रचक्षते॥१॥
गुल्फौ च वृषणस्याधः सीवन्याः पार्श्वयोः क्षिपेत्। पार्श्वपादौ च पाणिभ्यां दृढं बद्ध्वा सुनिश्चलः॥२॥
सिद्धासनं भवेदेतत् सर्वव्याधिविषापहम्। एकपादमथैकस्मिन् विन्यस्योपरि संस्थितम्॥३॥

इतरस्मिंस्तथा चोरौ वीरासनमुदाहृतम्। वामपादमुपादाय दक्षिणोरौ प्रविन्यसेत्॥४॥
तथैव दक्षिणं पादं सव्योरौ परिविन्यसेत्। पद्मासनं भवेदेतत् सर्वेषामपि पूजितम्॥५॥
स्वस्तिकं पद्मकं वीरं सिद्धं चेति चतुष्टयम्। जपे प्रशस्तमन्येषां प्रसङ्गादेव कीर्तितम्॥६॥ इति।

गौतमे तन्त्रे—

प्राङ्मुखोदङ्मुखो वापि स्वस्तिकासनमास्थितः। रात्रावुदङ्मुखः कुर्याद् देवकार्यं सदैव हि॥१॥
शिर्वाचनं सदाप्येवं शुचिः कुर्यादुदङ्मुखः। इति।

दक्षिणामूर्तिपरमिदम्। उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा भूत्वा प्रयतमानसः। 'स्वस्तिकासनमासीनः पद्मासनमथापि वा' इति स्वयमेवोभयविधानादिति।

कालविहित आसन—गोरक्षसंहिता में आसनों का विवेचन इस प्रकार किया गया है—

स्वस्तिकासन—जानुओं और जंघों के बीच में दोनों पादतलों को स्थापित करे एवं मेरुदण्ड को सीधा रखे तो स्वस्तिक आसन होता है।

सिद्धासन—दाँयें पैर की एड़ी को गुदा में दृढ़ता से लगावे। बाँयें पैर की ऐड़ी को मूत्रेन्द्रिय पर सावधानी से रखे। दोनों घुटनों को भूमि से स्पर्श करावे। मूत्रेन्द्रिय एवं अण्डकोष दोनों ऐड़ियों के बीच में रहें एवं रीढ सीधी रहे। हाथों को घुटनों पर रखें तो सिद्धासन होता है।

वीरासन—दाहिने पादतल पर दाँयाँ चूतड़ रखे। बाँयें पैर को दाहिने घुटने के बगल में रखे। बाँयें हाथ की केहुनी को बाँयें घुटने पर रखे। शिर को बाँयें हाथ पर टिकाये तो वीरासन बन जाता है।

पद्मासन—बैठकर दाँयें पाँव को बाँयीं जङ्घा पर और बाँयें पैर को दाँयीं जङ्घा पर रखे तो पद्मासन बनता है।

स्वस्तिक, पद्म, वीर, सिद्ध—ये चार आसन जप में प्रशस्त कहे गये हैं। प्रसङ्गवश अन्य आसनों को भी कहा गया है। गौतमतन्त्र में कहा गया है कि पूर्वमुख या उत्तरमुख होकर दिन में पूजा करे। रात में उत्तरमुख होकर पूजा करे। देवकार्य स्वस्तिकासन पर बैठकर करे। दक्षिणामूर्ति के पूजाक्रम में उत्तरमुख या पूर्वमुख होकर स्वस्तिकासन पर बैठकर या पद्मासन पर बैठकर पूजा करनी चाहिये।

षडन्वयशाम्भवरश्मिपूजाक्रमः

अथ (षट्शाम्भवपूजायाः श्रीचक्रे आवरणत्वेनावश्यकत्वात्) षट्शाम्भवरश्मि-पूजाक्रमः, लक्ष्मीकुलार्णवे—

प्रातरुत्थाय शान्तात्मा सहस्रारवराटके। षट् प्रेतान् ब्रह्मविष्णवदीन् हेमगर्भानिमान् स्मरेत्॥१॥
पद्मस्य कर्णिकामध्ये द्वादशान्ते गुरूक्तितः। पदत्रयमनुस्मृत्य गुरुस्मृतिपुरःसरम्॥२॥
शुक्लं रक्तं च मिश्रं च प्रेतोपरि रहस्यवित्। चरणद्वयसम्भूतौ स्वेच्छाविग्रहधारिणौ॥३॥
प्रातःप्रभृति सायान्तं सायादि प्रातरन्ततः। यत् करोमि जगन्नाथ तदस्तु तव पूजनम्॥५॥
इति संप्रार्थनापूर्वं प्रणम्य गुरुपादुकाम्। बहिर्निर्गत्य शुद्धात्मा पुण्यदेशं तु दूरतः॥६॥
कृत्वावश्यकमास्थाय शौचाचमनपूर्वकम्। गण्डूषं दन्तकाष्ठं च कृत्वा वाचम्य वाग्यतः॥७॥

क्लीं कामदेवाय सर्वजनप्रियाय नमः इति। चतुर्वारं मुखक्षालनम्।

स्नात्वा सन्ध्यामुपासीत यथाविधि विचक्षणः। स्नानप्रकारं द्विविधं बाह्याभ्यन्तरभेदतः॥८॥
आन्तरं स्नानमत्यन्तं रहस्यमपि पार्वति। कथयामि भवध्वस्त्यै चतुर्वर्गाप्तयेऽपि च॥९॥ इति।

षट्शाम्भव पूजाक्रम—लक्ष्मी कुलार्णव में कहा गया है कि प्रातः उठकर सहस्रार पद्म में ब्रह्मा विष्णु और छः प्रेतों का स्मरण स्वर्णाभ रूप में करे। पद्म की कर्णिका में गुरु के उपदेशानुसार द्वादशान्त में गुरु-स्मरणपूर्वक पदत्रय का स्मरण

करे। शुक्ल, रक्त एवं मिश्र वर्ण के प्रेत पर दोनों चरणों को स्थापित करे एवं स्वेच्छया रूप धारण करने वाले जगन्नाथ की इस प्रकार प्रार्थना करे—

प्रात:प्रभृति सायान्तं सायादि प्रातरन्ततः। यत् करोमि जगन्नाथ तदस्तु तव पूजनम्।।

इस प्रकार प्रार्थना करते हुये गुरुपादुका को प्रणाम करे। तब घर से बाहर दूर जाकर पुण्य देश में शौच आचमन आदि आवश्यक कृत्य बैठकर करे। गण्डूष, दन्तकाष्ठ करके आचमन करके 'क्लीं कामदेवाय सर्वजनप्रियाय नमः' मन्त्र से चार बार मुख धोये। स्नान करके सन्ध्योपासना करे। स्नान दो प्रकार का होता है—बाह्य एवं आभ्यन्तर। आन्तर स्नान अत्यन्त रहस्यमय है। यह संसार की शान्ति करने वाला एवं चतुर्वर्ग को देने वाला है।

आभ्यन्तरस्नानम्

अथाभ्यन्तरस्नानम्—

सरित्त्रयमुपस्मृत्य चरणत्रयमध्यतः। स्रवन्तं सच्चिदानन्दप्रभावं भावगोचरम् ।।१०।।
विमुक्तिसाधनं पुंसां स्मरणादेव योगिनाम्। तेनाप्लावितमात्मानं भावयेद् भवशान्तये ।।११।।

तत्रैव—

इडा गङ्गेति विख्याता पिङ्गला यमुनानदी। मध्ये सरस्वती ज्ञेया प्रयाग इति संस्मृतः ।।१२।।

आभ्यन्तर स्नान—सच्चिदानन्द के प्रभाव से युक्त भाव से जानने योग्य ब्रह्मा, विष्णु, महेश के चरणों से निकली तीन सरितायें पुरुषों के मोक्ष का साधन हैं। योगी ही इसे स्मरण करते हैं। संसार के कल्याण के लिये अपने को उस आनन्दामृत से प्लावित समझे। वहीं यह भी कहा गया है कि इड़ा गंगा, पिङ्गला यमुना एवं सुषुम्ना सरस्वती है और तीनों का सङ्गम ही प्रयाग है।

बाह्यस्नानम्

बाह्यं पञ्चविधं स्नानं पञ्चभूतात्मकं यतः। मन्त्रस्नाने कृते तस्मात् सर्वस्नानकृतो भवेत् ।।१३।।
पञ्चभूतात्मबीजानि लवरयहेतीरिताः। सबिन्दुकास्तैः संमन्त्र्य दक्षहस्ते स्थिते जले ।।१४।।
वामाङ्गुलिच्छदायोगात् प्रोक्षयेच्छिरसि त्रिधा। वामनासिकयाऽऽपूर्य शिष्टं ज्योतिर्मयं जलम् ।।१५।।
दक्षनासिकयान्तःस्थमलक्षालनपूर्वकम् । विरेच्यास्त्रमनुं जप्त्वा प्रक्षिपेच्च शिलोपरि ।।१६।।
अघमर्षणमेतद्धि सकलाघनिवारणम्। इति स्नानं च सर्वापन्निवारणं निवर्त्य च ।।१७।।

बाह्य स्नान—पाँच भूतात्मक पाँच प्रकार के बाह्य स्नान होते हैं। मन्त्रस्नान करने से सभी स्नान हो जाते हैं। पाँच भूतों के बीज लं वं रं यं हं हैं। दाँयें हाथ में जल लेकर उसे इन मन्त्रों से मन्त्रित करे। बाँयें हाथ की अंगुलियों से शिर का प्रोक्षण तीन बार करे। शेष ज्योतिर्मय जल को बाँयीं नासिका से भीतर खींचकर दाँयीं नासिकान्त तक प्रक्षालित करके अस्त्र मन्त्र से बाहर निकाल कर शिला पर पटक दे। यह अघमर्षण सभी पापों का निवारक है। इस प्रकार सर्वापन्निवारक स्नान सम्पन्न करना चाहिये।

प्रातरादिसन्ध्योपासनम्

ततः सन्ध्यामुपासीत यथाविधि विचक्षणः। प्रातः सन्ध्यामुपासीत धर्मकामार्थसिद्धये ।।१८।।
मूलाधारे वसाब्जे तु ह्लांबीजं पीतसप्रभम्। ध्यात्वा वहत्पुटान्तःस्थं बहिर्निस्सार्य मण्डले ।।१९।।
सौरे विभाव्य पीताभां त्रिनेत्रां च चतुर्भुजाम्। बिभ्राणामभयं शूलं कपालाही च बाहुभिः ।।२०।।
बालसूर्यासनां ज्येष्ठां ध्यात्वैवं सञ्जपेन्मनुम्।

ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं ह्लां हसौं ह्लां ज्येष्ठासंध्यायै ह्लां हसौं ह्लां ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, इति त्रिरर्घ्यं दत्त्वा,

आदित्याभिमुखस्तिष्ठन् गायत्रीं च शतं जपेत् । गायत्र्याभिनियुक्तस्य ज्ञानमुत्पद्यतेऽचिरात् ॥२१॥

५ँ षडाननाय विद्महे चित्रपादाय धीमहि तन्नो रुद्र: प्रचोदयात् ५ँ।

अथ माध्यन्दिनी सन्ध्या मणिपूरे डफाब्जके । ह्वींबीजं श्यामसङ्काशं ध्यात्वा नि:सार्य पूर्ववत् ॥२२।
सोममण्डलमध्यस्थां त्रिनेत्रां श्यामविग्रहाम् । आरूढयौवनां जाप्यां पुस्तं वामे तथेतरे ॥२३॥
बिभ्राणां च तथा वामां ध्यात्वैवं सञ्जपेन्मनुम् ।

५ँ ह्वीं हसौं ह्वीं वामासन्ध्यायै ह्वीं हसौं ह्वीं ५ँ श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम:। इति त्रिरर्घ्यं दत्त्वा प्राग्वद्गायत्रीं जपेत्।

अथ सायन्तनी सन्ध्या स्वाधिष्ठाने बलाब्जके । ह्रौंबीजं रक्तवर्णं तु ध्यात्वा नि:सार्य पूर्ववत् ॥२४॥
वह्निमण्डलमध्यस्थां रक्तवर्णां चतुर्भुजाम् । शूलाभये करे दक्षे कपालं तर्जनीं तथा ॥२५॥
वामभागे च बिभ्राणां वृद्धां नेत्रत्रयान्विताम् । विचित्राभरणां रौद्रीं ध्यात्वैवं सञ्जपेन्मनुम् ॥२६॥

५ँ ह्रौं हसौं ह्रौं रौद्रीसन्ध्यायै ह्रौं हसौं ह्रौं ५ँ श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम:, इति त्रिरर्घ्यं दत्त्वा— तां देवीं तन्मनुं पश्चान्मूलतेजसि संयोजयेत्।

इति सन्ध्याविधि:

सन्ध्योपासन—तदनन्तर यथाविधि सन्ध्योपासन करे। धर्म काम, अर्थ की सिद्धि के लिये प्रात: सन्ध्योपासना करे। मूलाधार पद्म में ह्लां बीज पीले रंग का है। इसका ध्यान करके प्रवहमान नासापुट से श्वास को बाहर निकाल दे। सौरमण्डल में पीताभ त्रिनेत्र चतुर्भुज अभय, शूल, कपाल, सर्पयुक्त बाल सूर्यरूप ज्येष्ठा का ध्यान करके मूल मन्त्र का जप करे। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्लां हसौं ह्लां ज्येष्ठासन्ध्यायै ह्लां हसौं ह्लां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजायाम तर्पयामि नम:—इससे तीन अर्घ्य प्रदान करे। सूर्य की ओर मुख करके एक सौ बार गायत्री का जप करे। गायत्री के जप से अल्प काल में ही ज्ञान प्राप्त होता है। गायत्री मन्त्र है—षडाननाय विद्महे चित्रपादाय धीमहि तन्नो रुद्र: प्रचोदयात्। इस प्रकार प्रात:सन्ध्या सम्पन्न होती है।

मध्याह्न सन्ध्या—डफाब्ज मणिपूर में श्याम वर्ण के ह्वीं बीज का ध्यान करके पूर्ववत् श्वास का नि:सारण करे। सोम मण्डल के मध्य में स्थित तीन नेत्रों वाली, श्याम शरीर वाली, यौवनारूढ़, वाम हाथ में पुस्तक धारण की हुई तथा अन्य को नचाती हुई वामा का ध्यान करके मूल मन्त्र का जप करे।

ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्वीं ह्सौं ह्वीं वामासन्ध्यायै ह्वीं ह्सौं ह्वीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम:—इस मन्त्र से तीन अर्घ्य देकर पूर्ववत् गायत्री का जप करे।

सायं सन्ध्या—स्वाधिष्ठान के बलाब्ज में रक्त वर्ण के ह्रौं बीज का ध्यान करके श्वास का पूर्ववत् नि:सारण करे। तदनन्तर वह्निमण्डल में रक्तवर्ण, चतुर्भुज, शूल-अभय-कपाल-तर्जनी धारण करने वाली वृद्धस्वरूपिणी, तीन नेत्रों वाली, विचित्र आभरणों से भूषित रौद्रवर्णा देवी का ध्यान करके मन्त्रजप करे।

तदनन्तर ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रौं ह्सौं ह्रौं रौद्रीसन्ध्यायै ह्रौं ह्सौं ह्रौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नम:—इस मन्त्र से तीन अर्घ्य देकर देवी के गायत्री मन्त्र का जप करे।

सन्ध्यालोपे प्रायश्चित्तं सौत्रकण्टकीध्यानञ्च

अथ प्रायश्चितखण्ड:—

संध्यालोपो न कर्तव्य: शम्भोराज्ञैवमेव हि । दीक्षित: संध्यया हीनो न दीक्षितफलं लभेत् ॥१॥
न कुर्यात् यदि तां सन्ध्यां पतिते दशधा जपेत् । अन्यसंध्यासमे काले सौत्रकण्टकिविद्यया ॥२॥
कृत्वा षडङ्गं मन्त्रेण ध्यायेत्तां सौत्रकण्टकीम् ।

अथ ध्यानम्—

षड्वक्त्रां द्वादशभुजां त्रिनेत्रां परमेश्वरीम् । गलादूर्ध्वं शुक्लवर्णां पीतां गलतलादधः ॥३॥
कट्यादिपादपर्यन्तं नीलाभां च ततः स्मरेत् । द्विरष्टवर्षां रक्ताङ्गीं सर्वशृङ्गारचर्चिताम् ॥४॥
स्वर्णरक्तप्रभाभिश्च मण्डितालिसहस्रिकाम् । मोचनीं सर्वपापानां रत्नसिंहासने स्थिताम् ॥५॥
तदूर्ध्वे श्वेतपद्मं च तदूर्ध्वे श्वेतकेसरम् । तत्पृष्ठे संस्थितां देवीं त्रिखण्डां गुणमण्डिताम् ॥६॥
रत्नमुकुटोज्ज्वलां दिव्यां सन्ततानन्दपूरिताम् । हसद्वक्त्रां महादेवीं दक्षिणोदयगामिनीम् ॥७॥
महासमययागाय नित्यनिष्कलगामिकाम् ।

प्रायश्चित्त खण्ड—शिव की आज्ञा है कि सन्ध्या का लोप न करे। सन्ध्याहीन दीक्षित को दीक्षा का फल नहीं मिलता। यदि सन्ध्या न करे तो दूसरी सन्ध्या में दश बार जप करे। अन्य सन्ध्या काल में सौत्रकण्टकी मन्त्र से षडङ्ग न्यास करके सौत्रकण्टकी का इस प्रकार ध्यान करे—

षड्वक्त्रां द्वादशभुजां त्रिनेत्रां परमेश्वरीम्। गलादूर्ध्वं शुक्लवर्णां पीतां गलतलादधः।।
कट्यादिपादपर्यन्तं नीलाभां च ततः स्मरेत्। द्विरष्टवर्षां रक्ताङ्गीं सर्वशृङ्गारचर्चिताम्।।
स्वर्णरक्तप्रभाभिश्च मण्डितालिसहस्रिकाम्। मोचनीं सर्वपापानां रत्नसिंहासने स्थिताम्।।
तदूर्ध्वे श्वेतपद्मं च तदूर्ध्वे श्वेतकेसरम्। तत्पृष्ठे संस्थितां देवीं त्रिखण्डां गुणमण्डिताम्।।

सौत्रकण्टकीमन्त्रः

अथ मन्त्रः—५ँ ऐं परदुष्करकर्मच्छेनकरि अघोरे वरदे विच्चे मायात्रैलोक्यरूपसहस्रपरिवर्तिनि मातृगणे हस्रः ५ँ।

सौत्रकण्टकी मन्त्र—सौत्रकण्टकी विद्या है—ऐं परदुष्करकर्मच्छेदना करि अघोरे वरदे विच्चे मायात्रैलोक्यरूप-सहस्रपरिवर्तिनि मातृगणे हस्रः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं।

चतुरन्वयिनां सौरपूजाविधिः

अथ सौरपूजा—

उषस्युत्थाय यत् कर्म श्रीनाथस्मृतिपूर्वकम् । बाह्यमावश्यकं कृत्वा शौचं दन्तविशोधनम् ॥१॥
श्रौतागमात्मकं स्नानं संध्यातर्पणमेव च । सर्वं निवर्त्य पूतात्मा निःशङ्कः शान्तमानसः ॥२॥
यथा विभक्तिः स्वच्छाच्छो विशेत् पूजागृहं प्रति । आगत्य तत्सपर्यार्थं साधनाशेषसंयुतम् ॥३॥
समीक्ष्य षट्क्रमावेच्र्छा (?) यदि तत्प्राङ्गणे यजेत् । मार्तण्डं तदशक्तश्चेन्न कुर्याच्चापराह्णयोः (?) ॥४॥ इति।

तथा चोक्तं शम्भुनिर्णये—

चतुरन्वयिनामेव सौरपूजेत्थमीरिता । तद्विचार्य चिदादित्यपूजां कर्तुं सुखासने ॥१॥
प्राङ्मुखः प्रत्यगासीनः समस्निग्धमहीतले । भूभूतशुद्धिश्वसनसंयमादिविचक्षणः ॥२॥
सामान्यार्घ्यं स्वपुरतः प्रणवान् पञ्च चोच्चरेत् । मण्डलोश्चा(द्धा)रणं कार्यमिति साधारणो मतः ॥३॥
भूताङ्गुलं च वेदास्रं षट्कोणं चोर्ध्वरेखकम् । विलिख्य तस्मिन् साधारपात्रमस्त्रविशोधितम् ॥४॥
संस्थाप्य पयसापूर्याधारपात्रजलेषु च । वह्न्यर्कसोमबीजैस्तु तदात्मकविभावनम् ॥५॥
सर्वं निष्पाद्य षड्दीर्घद्वितीयप्रणवात्मकम् । अङ्गं तस्य विधायेत्थं पात्रं संस्थाप्य दक्षिणे ॥६॥
कृत्वा सामान्यवत् पात्रस्थापनान्तं विधाय च । सद्वितीयं निधानेन संपूज्याभ्यर्च्य (पूर्य) बिन्दुना ॥७॥
सामान्ये योजयेत्तत्र स्वदेहं यागमण्डलम् । सौरं सम्भृत्य सम्भारान् सर्वं संप्रोक्षयेदथ ॥८॥
वहच्छ्वासकराग्रेण पुरतः सौरमण्डले । वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण कस्तूरीचन्दनादिभिः ॥९॥

'५ँ ऐं चन्द्रसूर्याग्निगर्भ स्फुर स्फुर धर्मार्थकाममोक्षलाभं कुरु कुरु महासमयखेचरीमुद्रां प्रकटय प्रकटय शाम्भवान्वयिनां सिद्धिं सामर्थ्यं दद दद फ्रें किचि किचि फ्रें किचि किचि फ्रें मण्डलब्रह्माण्डमण्डल हस्त्रूं महाचण्डशिवे हसखफ्रें ५ँ'। अनेन मन्त्रेणाभ्यर्च्य वृत्ताष्टदलपद्मं लिखेत्, अथ मण्डलं चतुरस्रं कृत्वा संस्थाप्य तद्दक्षिणे,

सामान्यवद् विशेषार्घ्यमण्डलं विलिखेद्बुधः। मध्ये सौरार्घ्यपूजार्थं मण्डलं चतुरस्रकम् ॥१०॥
कृत्वाधारं तु संस्थाप्य पूजयेदमुनाणुना।

५ँ ऐं पात्रासनाय नमः ऐं ५ँ। 'तत्रास्त्रक्षालितपात्रं प्रतिष्ठाप्य' ५ँ क्लीं ५ँ इति मन्त्रेण सामान्यार्घ्यविशेषार्घ्यौ सौः इत्यापूर्याथ षडङ्गकम्।

कुर्यात् प्रोक्तद्वितीयेन षट्स्वरैर्भेदितेन च। अष्टगन्धान् विनिक्षिप्य रक्तपुष्पैः समर्चयेत् ॥११॥
अस्त्रेण रक्षां सङ्कल्प्य स्वात्मानन्तादिभिर्यजेत्। अथाष्टदलपद्मस्य मध्ये प्रेतस्वरूपिणम् ॥१२॥
अनन्तमर्चयेत्तत्र शयानममुनाणुना।

५ँ अं अनन्ताय अं ५ँ।

तल्पीकृतस्वयंदेहं छत्रीकृतफणात्रयम्। फणिनामीश्वरं श्वेतं ध्यात्वा संपूजयेदथ ॥१३॥
मध्यादारभ्य वायव्याद्यस्त्रिषु क्रमतो यजेत्।

५ँ अंहुंफ्रें प्रभूताय फ्रेंहुंअं ५ँ श्रीपादु०। मध्ये ५ँ रं विमलाय रं ५ँ। ५ँ लं साराय लं ५ँ। ५ँ यं आराध्याय यं ५ँ। ५ँ हं परमसुखाय हं ५ँ। इति कोणपूजा। मण्डले आवाहनम्।

दहराकाशमध्यस्थं ह्लौंबीजं रक्तसन्निभम्। वहत्पुटाद्विनिःसार्यानन्तं प्रेतात्मकासनम् ॥१४॥
आवाह्य तद्वीजमयं ध्यायेन्मार्तण्डभैरवम्। रक्तवर्णं स्थूलदेहं षड्वक्त्रं चोर्ध्वकेशिकम् ॥१५॥
भुजद्वादशसंयुक्तं सर्पास्थिरत्नचर्चितम्। क्रोधिनं चोर्ध्वलिङ्गं च ज्वलद्रश्मिसमाकुलम् ॥१६॥
व्याघ्रचर्मपरीधानं मुण्डमालाविभूषणम्। हुंहुंकारान् प्रमुञ्चन्तं संहरन्तं महाशिनम् ॥१७॥
त्रिशूलासिचक्रघण्टासृणीवरदपाणिकम्। तर्जाशोकगदाचापपाशाभयकरालिनम् ॥१८॥
आवाहनादिमुद्रांश्च संदर्श्याभ्यर्च्य साधकः। ह्लामादिक्रमतश्चाङ्गं कृत्वा मार्तण्डभैरवे ॥१९॥
समन्त्रं साक्षतं सर्वं चन्दनं च निवेदयेत्।

५ँ ह्लौं हसौं श्रीकुलमार्तण्डभैरवाय हसौं ह्लौं ५ँ श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

पश्चात् संप्रोक्ष्य चात्मानं जपेन्मन्त्रमिमं पुनः। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् सम्यक् सवित्रे सर्वसाक्षिणे ॥२०॥

५ँ स्त्रौंक्षौंहसौं ५ँ फट् खफ्रेंभां फट् हसौंक्षौंस्त्रौं ५ँ श्रीपा०। तथा द्वितीयमन्त्रः—५ँ स्त्रौंक्षौंह्लौंझ्रौंहसौं फट् खफ्रेंभां फट् हस्त्रौंक्षौंस्त्रौं ५ँ श्रीपा०। इति पुष्पाञ्जलिमन्त्रः।

मुद्रे च शूलतर्जन्यौ त्रिधाङ्कां हालिनीमपि। कार्धाङ्गुलीः प्रदर्श्याथ पूर्वाद्यष्टदलेषु च ॥२१॥
मध्ये च शूलतर्जन्यौ दधानाश्चण्डरोचिषः। नव शक्तीर्यजेत् तत्र भैरवानपि पूजयेत् ॥२२॥

५ँ जुं ज्वालायै जुं ५ँ श्रीपा०। ५ँ क्षं मित्रायै क्षं ५ँ श्री०। ५ँ फट् चण्डमालिन्यै फट् ५ँ श्री०। ५ षौं भीषिण्यै षौं ५ँ श्री०। ५ँ इं नारसिंह्यै इं ५ँ श्री०। ५ँ ह्रीं कामदेव्यै ह्रीं ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें मार्तण्डायै फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें कापालिन्यै फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ हसौं कौलिन्यै हसौं ५ँ श्री०।

अथ भैरवमन्त्राः—५ँ फ्रें चण्डाय फ्रें ५ँ श्रीपा०। ५ँ फ्रें प्रचण्डाय फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें विश्वेशाय फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें महादेवाय फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें महाकालाय फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें गभस्तये फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें चण्डीशाय फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें तेजेशाय फ्रें ५ँ श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

सर्वत्र खेचरीमुद्रा लयभोगाङ्गकल्पनाम्। ह्रामादिना विधायाथ दूर्वारक्तकुसुम्भकैः ॥२३॥
संपूज्य धूपदीपादिनैवेद्यान्तेऽर्घ्यमन्त्रकम्। यथाशक्ति जपित्वा तु अर्घ्यमन्त्रेण तज्जपः ॥२४॥
पूर्वोक्तमर्घ्यमन्त्रं च चिदादित्य हृदम्बुजे। दहराकाशकूटात्मा बिन्दावेव समुद्धरेत् ॥२५॥
नाथायार्घ्यं निवेद्यान्ते जुहुयाच्च ततो बहिः। वामभागे विलिख्यं च चतुरस्रं च शोभनम् ॥२६॥
मण्डलं तु विधानेन तस्मिन् साधारपात्रके। पशुमार्तण्डमभ्यर्च्य तन्मन्त्रेणैव देशिकः ॥२७॥

५ँ ह्रांह्रींसः पशुमार्तण्डभैरवाय नमः ५ँ श्रीपादुकां पूजयामि।

सपर्यां शेषनिर्माल्यं स तस्मै विनिवेदयेत्।

इति सौरपूजा।

सौर पूजा—प्रातःकाल में उठकर श्रीनाथ का स्मरण करके बाहर आवश्यक कर्म करके शौच-दतुवन करे। श्रौत आगम के अनुसार स्नान-सन्ध्या-तर्पण करे। सभी कर्मों को करके पूतात्मा निःशंक शान्त मन से पूजा गृह में जाय। सपर्या के अनुसार साधना शेष संयुत छः कर्मों की समीक्षा करके शक्तिसहित मार्तण्ड की पूजा करे।

शम्भुनिर्णय में कहा गया है कि चारो मार्गों ने सूर्यपूजा को जिस प्रकार का कहा गया है, उसे विचार कर चिदादित्य की पूजा सुखासन में बैठकर करे। समतल स्निग्ध भूमि पर पूर्वमुख बैठे। भूशुद्धि, भूतशुद्धि करके प्राणायाम करे। अपने आगे सामान्यार्घ्य स्थापित करे। पाँच प्रणव उच्चारण करे। मण्डलोद्धारण कार्य करे यह साधारण मत है। पाँच अंगुल के चतुरस्र षट्कोण बनावे। उस पर अस्त्रमन्त्र से शोधित पात्र को आधार पर रखे। उसमें जल भरे। जल में अग्नि, सूर्य, चन्द्र, कला की विभावना करे। षद्दीर्घ ह्रां ह्रीं से अंग विधान करके पात्र स्थापित करे। उसके दाहिने भाग में दूसरे पात्र का स्थापन करके द्वितीय विधान से पूजा करे। उस जलबिन्दु से अपना और पूजन सामग्रियों का अभ्युक्षण करे। बहते श्वास के ओर के हाथ से सौर मण्डल का पूजन कस्तूरी चन्दन आदि से विहित मन्त्र से पूजा करे।

शाम्भव पूजा का मन्त्र है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं चन्द्रसूर्याग्निगर्भ स्फुर स्फुर धर्मार्थकाममोक्षलाभं कुरु कुरु महासमयखेचरीमुद्रां प्रकटय प्रकटय शाम्भवान्वयिनां सिद्धिं सामर्थ्यं दद दद फ्रें किचि किचि फ्रें किलि किलि फ्रें मण्डलब्रह्माण्डमण्डल ह्स्रूं महाचण्डशिवे ह्सखफ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं। इस मन्त्र से अर्चन कर अष्टदल कमल बनावे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। सामान्य अर्घ्य के दाँयें भाग में विशेषार्घ्य मण्डल लिखे। मध्य में सौर अर्घ्य पूजन के लिये चतुरस्र मण्डल बनावे। मण्डल में आधार रखकर इस मन्त्र से पूजा करे—

ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं पात्रासनाय नमः ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अस्त्र मन्त्र से धुले पात्र उस पर रखे। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मन्त्र से उसमें जल भरे। षडङ्ग न्यास ह्रां ह्रीं इत्यादि से करे। उसमें अष्टगन्ध डालकर लाल फूल से पूजा करे। अस्त्र से रक्षण करके सङ्कल्प करे, आत्म पूजा करे। तब अष्टदल के मध्य में प्रेतस्वरूपिणी की पूजा करे। तब अनन्त की पूजा इस मन्त्र से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अं अनन्ताय अं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं।

अपने देह को तल्पीकृत करके फणात्रय से छत्रीकृत करके फणीश्वर का ध्यान करके पूजन करे। मध्य से आरम्भ करके वायव्यादि में तीनों की पूजा करे। कोण में इन मन्त्रों से पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अं हुं फ्रें प्रभूताय फ्रें हुं अं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः। मध्य में ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं विमलाय रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं साराय लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं आराध्याय यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः,। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं परम सुखाय हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तब मण्डल में आवाहन करे। दहराकाशस्थ 'ह्रौं' लाल वर्ण वहन्नासापुट से निकालकर प्रेतात्मक आसन पर आवाहन कर तद्बीजमय मार्तण्ड भैरव का इस प्रकार ध्यान करे—

रक्तवर्णं स्थूलदेहं षड्वक्त्रं चोर्ध्वकेशिकम्। भुजद्वादशसंयुक्तं सर्पास्थिरत्नचर्चितम्।।
क्रोधिनं चोर्ध्वलिङ्गं च ज्वलद्रश्मिसमाकुलम्। व्याघ्रचर्मपरीधानं मुण्डमालाविभूषणम्।।
हुंहुंकारान् प्रमञ्चन्तं संहरन्तं महाशिनम्। त्रिशूलासिचक्रघण्टासृणीवरदपाणिकम्।।
तर्जाशोकगदाचापपाशाभयकरालिनम्।

ध्यान के बाद आवाहनादि मुद्रा दिखावे। पूजा करे। ह्रां ह्रीं इत्यादि से षडङ्ग पूजा करे। मन्त्र के साथ गन्धाक्षत पुष्प निवेदन करे। मन्त्र है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हौं ह्सौं श्रीकुलमार्तण्डभैरवाय ह्सौं हौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। इसके बाद अपना प्रोक्षण करके मन्त्रजप करे। तब सर्व साक्षी सविता को पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। पुष्पाञ्जलि प्रदान करने का मन्त्र है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्त्रौं क्ष्रौं ह्सौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं खफ्रेंभां फट् हसौं क्ष्रौंस्त्रौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। द्वितीय मन्त्र है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्त्रौं क्ष्रौं हौं झ्रौं ह्सौं फट् खफ्रेंभां फट् ह्स्त्रौं क्ष्रौं स्त्रौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। शूल, तर्जनी, त्रिधांका, हालिनी मुद्रा दिखावे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से नव शक्तियों और भैरवों की पूजा इस प्रकार करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं जुं ज्वालायै जुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षं मित्रायै क्षं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फट् चण्डमालिन्यै फट् ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं षौं भीषिण्यै षौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं इं नारसिंह्यै इं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं कामदेव्यै ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें मार्तण्डायै फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें कापालिन्यै फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसौं कौलिन्यै हसौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

भैरवमन्त्र—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें चण्डाय फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें प्रचण्डाय फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें विश्वेशाय फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें महादेवाय फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें महाकालाय फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें गभस्तये फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें चण्डीशाय फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें तेजेशाय फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

सर्वत्र खेचरी मुद्रा सहित लय-भोगांग ह्रां ह्रीं इत्यादि से करके दूर्वा एवं रक्तपुष्पों से पूजा करे। धूप-दीप-नैवेद्य अर्घ्य मन्त्र से प्रदान करे। अर्घ्य मन्त्र का जप यथाशक्ति करे। पूर्वोक्त अर्घ्य मन्त्र का चिदादित्य हृदयकमल दहराकाश कूटात्म बिन्दु में ही उद्धार करे। नाथ को अर्घ्य देने के बाद हवन करे। बाँयें भाग में सुन्दर चतुरस्र बनाकर उसमें आधार पर पात्र रखकर पशु मार्तण्ड का अर्चन उसके मन्त्र से करे। मन्त्र है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रां ह्रीं सः पशुमार्तण्डभैरवाय नमः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। तदनन्तर शेष पूजा एवं निर्माल्य निवेदित करे।

शाम्भवपूजाप्रयोगः

आरभ्य शाम्भवीपूजा मध्ये शङ्काकलङ्किता। बहिर्निर्गत्य तन्नत्वा सर्वेशस्य महात्मनः ॥१॥
तस्मात् सौरसपर्यान्ते कृतसावश्यकः शुचिः। ततः षडन्वयाधीशसाधकाधीश उत्सुकः(?) ॥२॥
साधकः साधिताशेषसामग्रीपूर्णमन्दिरम्। वहच्छ्वासपदा पूर्वं प्रविशेन्नतिमुद्रया ॥३॥
निजनाथान् गणपतिं दुर्गां चैव सरस्वतीम्। क्षेत्रपं परमात्मानं स्वस्वबीजपुरःसरम् ॥४॥
शिरोदक्षांसवामांस ऊरुद्वयहृदि न्यसेत्। अभ्यर्च्य पुण्डरीकत्वगाद्यासनवरं ततः ॥५॥
ईशानादिमुखो वाथ यथोचितदिशामुखः। आसीन आसने सम्यगर्चयेदादिभैरवम् ॥६॥

आसनं कल्पयेत् स्वस्य मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्। मन्त्रासनविहीनस्तु नाधिकारी शिवार्चने ॥७॥

५ँ ॐ नमो भगवति नीलवज्रासने मम बीजं रक्षरक्ष हुंफट् स्वाहा ५ँ। इति मन्त्रेणासने उपविश्य,

शिवशक्त्यात्मकौ हस्तौ भावयेद् दक्षवामगौ। तयोः समरसीभावं तालत्रयमथाचरेत् ॥८॥
दिग्बन्धं कल्पयेत् पश्चात्तदुत्थेनैव वह्निना। प्रागादीशान्तमूर्ध्वान्तः परिवेषं त्रिधाचरेत् ॥९॥
पञ्चप्रणवमुच्चार्य पञ्चभूतांल्लयं नयेत्। क्रमात् सर्वात्मके शम्भुपदे शक्तिशिवात्मके ॥१०॥
योनिमुद्रां समाबध्य मूलात् कुण्डलिनीं पुनः। उत्थाप्य शक्तिबीजेन हस्त्रीमिति न्यसेत् तदा ॥११॥
मूलाधारे वसाब्जं स्थान्मणिपूरे डफाब्जकम्। स्वाधिष्ठाने स्मरेदब्जं बादिलान्ताक्षरावृतम् ॥१२॥
कठात्मकं रविदलं षोडशारं स्वरात्मकम्। विशुद्धिमाज्ञाद्विदलं हक्षरूपं क्रमेण तु ॥१३॥
निर्भिद्य मात्रात्रितयं विभेदेन परे शिवे। परिपूर्णे चिदानन्दे सत्तात्रितयरूपिणि ॥१४॥
संयोज्य शोषयेद् देहं पवनायामपूर्वकम्। दाहनप्लावने चैव कृत्वा नित्यं क्षणं शिवे ॥१५॥
विलीनचित्तवृत्तिस्तु प्रतिलोमक्रमेण तु। हादिशक्तिसमायुक्तं साक्षरं षट्सरोरुहम् ॥१६॥
विभाव्य शाम्भवे देहे स्वात्मानं योजयेत् पुनः।

अस्यायमर्थः—योनिमुद्रां समाबध्य मूलात् कुण्डलिनीं शनैरुत्थाप्य, हस्त्रीमित्युच्चरन् अकुलात्मना शिवेन सह संयोज्य, तस्मात् हस्त्रीमिति स्मरन् मनसैवानाहतस्थानाद्वायुना योनिमुद्रया सहैवाक्रम्य मूलेन शक्त्या सह योजयेत्।

कुलाकुलानुसन्धानमित्येवं प्राणसंयमात्। यः करोति स वै योगी स मुक्तः स च कौलिकः ॥१७॥
षडन्वयमहारत्ने प्राणसंयमितस्ततः। एवमेव त्रिशः पश्चान्न्यासजालं समाचरेत् ॥१८॥
न्यासजालं प्रकुर्वीत यथाशास्त्रं यथाक्रमम्। पञ्चप्रणवमुच्चार्य पश्चान्मन्त्रं समुच्चरेत् ॥१९॥
विलोमप्रणवं पश्चान्न्यासजालं समाचरेत्। न्यासजालं प्रकुर्वीत इति शास्त्रस्य निर्णयः ॥२०॥ इति।

शाम्भव-पूजाप्रयोग—शाम्भवी पूजा प्रारम्भ करने के पहले घर से बाहर निकल कर महात्मा सर्वेश को प्रणाम करे। आवश्यक कृत्य करके पवित्र हो जाय। तब षडन्वयाधीश का साधक पूजन सामग्रियों को एकत्र करे। प्रवाहित श्वास की ओर के पैर को आगे बढ़ाकर पूजागृह में प्रवेश करे। नमन मुद्रा से अपने गुरु, गणेश, दुर्गा, सरस्वती, क्षेत्रपाल, परमात्मा को उनके बीजों के सहित शिर, दाँयाँ कन्धा, बाँयाँ कन्धा, दोनों ऊरु एवं हृदय में न्यास करे। कमलासन की पूजा करे। ईशान या यथोचित दिशा में मुख करके आसन पर बैठे। आदि भैरव का अर्चन करे। तदनन्तर विहित मन्त्र से आसन कल्पित करे। बिना मन्त्रासन के शिवार्चन में अधिकार नहीं होता। 'ॐ नमो भगवति नीलवज्रासने मम बीजं रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं—यह मन्त्र पढ़कर आसन पर बैठे।

अपने दाहिने-बाँयें हाथों को शिव-शक्त्यात्मक माने। उनके समरसीभाव से तीन ताली बजावे। पूर्वादि दशों दिशाओं में तीन बार दिग्बन्ध करे। पाँच प्रणवों का उच्चारण करके पञ्चमहाभूतों को क्रम से सर्वात्मक शक्ति, शिवात्मक शम्भु के पैरों में विलीन कर दे। योनिमुद्रा बाँधकर मूलाधार से कुण्डलिनी को शक्तिबीज 'ह्स्त्रीं' से उठाकर न्यास करे। मूलाधार पद्म में वं शं षं सं, मणिपूर पद्म में डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं, वं भं मं यं रं लं युक्त स्वाधिष्ठान पद्म में, कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं युक्त द्वादश दल हृदय में, सोलह स्वरों से युक्त विशुद्धि पद्म में, हं क्षं युक्त द्विदल पद्म आज्ञा में कुण्डलिनी का भेदन करावे। तीन मात्राभेद से पर शिव परिपूर्ण चिदानन्द सत्ता त्रितयरूपिणी को जोड़कर देह का शोषण करे। पवनायाम पूर्वक दाहन-प्लावन करे। नित्य प्रति शिवा में चित्तवृत्ति को विलीन करे। हादिशक्ति युक्त साक्षर छः चक्रों से शाम्भव देह में अपने आत्मा को योजित करे। सारांश यह है कि योनिमुद्रा बाँधकर मूलाधार से कुण्डलिनी को धीरे से उठाकर 'ह्स्त्रीं' कहकर अकुलात्मा शिव के साथ जोड़ दे। वहाँ 'ह्स्त्रीं' का स्मरण करे—मन से अनाहत स्थान से वायु से योनि मुद्रा के साथ आक्रमित करके मूल मन्त्र से शक्ति के साथ योजित करे।

इस कुलाकुल का अनुसन्धान जो प्राणसंयम से करता है; वही योगी है, वही मुक्त है, वही कौलिक है। तदनन्तर षडन्वय महारत्न में प्राण को संयमित करे। तब न्यास करे। यथाशास्त्र, यथाक्रम न्यास पाँच प्रणवपूर्वक मन्त्रोच्चारण से करे। इसके बाद विलोम प्रणव का उच्चारण करे। शास्त्र का निर्णय है कि न्यास अवश्य करना चाहिये।

न्यासजालविधानम्

तथा च—

श्रीशासनेऽत्र ये सन्ति मन्त्रास्ते समुदीरिताः। अनुलोमविलोमाभ्यामङ्गन्यासमतः परम् ॥१॥
बीजन्यासं ततः कुर्याद्रत्नन्यासमनन्तरम्। परादित्रिविधं न्यासं कृत्वा ध्यानं समाचरेत् ॥२॥
अङ्गमन्त्रैः कनिष्ठादिष्वङ्गुलीषु यथाक्रमम्। तलयोरपि विन्यस्य करन्यास उदाहृतः ॥३॥
हृदयादिष्वथो न्यस्य स्थानेष्वस्त्रान्तमादरात्। चोरकूपे तथा वामे दक्षश्रुतिमुखेषु च ॥४॥
वक्त्रन्यासं तथा कुर्यात् स्वमूर्ध्नि द्वादशान्तके। आज्ञाविशुद्धिहृन्नाभिस्वाधिष्ठानेषु देशिकः ॥५॥
विन्यस्य पूर्ववत् कृत्वा परादिन्यासमास्तिकः।

तथा कनिष्ठाद्यऽ्ङ्गुलीषु तारादिरत्नानि च विन्यस्य मूलेन व्यापकम्। ऐं फ्रें ह्सौं हसखफ्रें श्रीं ह्रीं ऐं इति मन्त्रः। ५ँ स्हां फ्रां ५ँ इत्यादिषड्दीर्घक्रमेणाङ्गन्यासं कृत्वा, अथ बीजषोढान्यासः कर्तव्यः। ५ँ सजूं ५ँ चूलीमूले। ५ँ जं ५ँ ब्रह्मरन्ध्रे। ५ँ रखदसहवरयूँ ५ँ भाले। ५ँ सहक्षरयूं ५ँ दक्षशङ्खे। ५ँ क्षराऊअं ५ँ वामशङ्खे। ५ँ सहफ्रें ५ँ दक्षभ्रूमध्ये। ५ँ स्ह्रौं ५ँ वामभ्रूमध्ये। ५ँ स्त्रूं ५ँ भ्रूमध्ये। ५ँ सह्रीं ५ँ तालुनि। ५ँ क्षंक्षौं ५ँ घण्टिकायां। ५ँ फट् ५ँ दक्षकर्णबिले। ५ँ सह ५ँ वामकर्णबिले। ५ँ लमयरूं ५ँ चोरकूपे। ५ँ हस्त्रूं ५ँ गले। ५ँ डरयूं ५ँ गलाधः। ५ँ जयरूंऔं ५ँ दक्षप्रस्फुरे। ५ँ डयरुं ५ँ वामप्रस्फुरे। ५ँ हसौं ५ँ दक्षप्रस्फुरवेष्टने। ५ँ जूं ५ँ वामप्रस्फुरवेष्टने। ५ँ सक्लीं ५ँ दक्षकक्षमूले। ५ँ ऐं ५ँ वामकक्षमूले। ५ँ हसौं ५ँ नाभौ। ५ँ फ्रः ५ँ दक्षपाणितले। ५ँ फ्रें ५ँ वामपाणितले। ५ँ सह्रीं ५ँ लिङ्गरन्ध्रे। ५ँ ह्रौं ५ँ लिङ्गमूले। ५ँ हस्त्रौं ५ँ मेदसि। ५ँ फ्रें ५ँ दक्षाण्डे। ५ँ सहक्षमलवयूं ५ँ वामाण्डे। ५ँ हं ५ँ ब्रह्मसूत्रे। ५ँ हसफरयूं ५ँ गुदे। ५ँ हसफ्रें ५ँ दक्षगुदफलकसन्धौ। ५ँ हक्षौं ५ँ वामगुदफलकसन्धौ। ५ँ ह्रौं ५ँ गुदोर्ध्वे। ५ँ हसौं ५ँ दक्षजानुचक्रे। ५ँ हुं ५ँ वामजानुचक्रे। ५ँ हउऔं ५ँ दक्षचक्राधः। ५ँ ह्वःक्षं ५ँ वामचक्राधः। ५ँ ब्रें ५ँ दक्षगुल्फे। ५ँ प्रं ५ँ वामगुल्फे। ५ँ हरक्षफट् ५ँ दक्षगुल्फाधः। ५ँ अं ५ँ वामगुल्फाधः। ५ँ नफयरीं ५ँ दक्षयमद्वारे। ५ँ जरक्षहरौं ५ँ वामयमद्वारे। ५ँ हसूं ५ँ दक्षपादतले। ५ँ हुंफट् ५ँ वामपादतले। ५ँ वलमह्रीं ५ँ पृष्ठवंशे। ५ँ जसहसजूं ५ँ दक्षपार्श्वे। ५ँ क्षं ५ँ वामपार्श्वे। ५ँ हः फट् ५ँ दक्षकूर्परे। ५ँ सह्रीं ५ँ वामकूर्परे। ५ँ गलमपलं ५ँ दक्षमणिबन्धे। ५ँ लवरयहसूं ५ँ वाममणिबन्धे। ५ँ हसखफ्रें ५ँ दक्षांसे। ५ँ क्षःफट्क्षं ५ँ वामांसे। ५ँ फ्रें ५ँ दक्षचूलके। ५ँ क्षमयमरुं ५ँ वामचूलके। ५ँ ह्रें फट् ५ँ दक्षनेत्रमध्ये। ५ँ ह्रींहसौयरुं ५ँ वामनेत्रगध्ये। ५ँ हसूं ५ँ नासिकाग्रे। ५ँ हूं ५ँ दक्षवृद्धतर्जनीमध्ये। ५ँ हसकलह्रीं ५ँ वामवृद्धतर्जनीमध्ये। ५ँ अकक्षूंहसकहलह्रीं ५ँ दक्षनासिकायां। ५ँ अकक्षूंसकलह्रीं ५ँ वामनासिकायां। ५ँ आदिक्षान्तैर्मातृकाक्षरैर्मूर्धादिपादान्तं पुनः पादादिमूर्धान्तं व्यापकं कुर्यात्, हृदि सकलमातृकया। इति बीजषोढान्यासः।

अथ पञ्चरत्नन्यासः—५ँ ग्लूं गगनरत्नगगनपीठगगनलोकवासिन्यम्बागगननाथगगनगर्भगामिनीचतुः-षष्टिकोटियोगिनी ग्लूं ५ँ श्रीपा० आज्ञाचक्रे। ५ँ स्लूं स्वर्गरत्नस्वर्गपीठस्वर्गलोकगामिन्यम्बास्वर्गनाथस्वर्गलोक-(गर्भ)व्यापिनीद्वात्रिंशत्कोटियोगिनी स्लूं ५ँ श्रीपा० विशुद्धौ। ५ँ म्लूं मर्त्यरत्नमर्त्यपीठमर्त्यलोकवासिन्यम्बामर्त्यनाथ-मर्त्यलोकगर्भगामिनीषोडशकोटियोगिनी म्लूं ५ँ श्रीपा० अनाहते। ५ँ प्लूं पातालरत्नपातालपीठपातालल्लोकवासिन्य-म्बापातालनाथपाताललोकगर्भगामिनी-अष्टकोटियोगिनी प्लूं ५ँ श्रीपा० मणिपूरके। ५ँ न्लूं नागरत्ननागपीठ-नागलोकवासिन्यम्बानागनाथनागलोकगामिनीचतुष्कोटियोगिनी न्लूं ५ँ श्रीपा० स्वाधिष्ठाने। इति रत्नन्यासः। अथ परादिन्यासः। ५ँ ऐं परायै ऐं ५ँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ५ँ ह्रूं इच्छायै ह्रूं ५ँ तर्जनी०। ५ँ ऐं ज्ञानायै ऐं ५ँ मध्यमा०। ५ँ

श्रीं क्रियायै श्रीं ५ँ अनामिका०। ५ँ ह्रीं कुण्डलिन्यै ह्रीं ५ँ कनिष्ठिकाभ्यां०। ५ँ फ्रें मातृकायै फ्रें ५ँ करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एभिरेव षडङ्गन्यासक्रमः। ५ँ ऐं परायै ऐं ५ँ पश्चान्मुखे चूलीमूले। ५ँ ह्रूं इच्छायै ह्रूं ५ँ उत्तरमुखे वामकर्णे। ५ँ ऐं ज्ञानायै ऐं ५ँ दक्षमुखे दक्षकर्णे। ५ँ श्रीं क्रियायै श्रीं ५ँ पूर्ववक्त्रे मुखे। ५ँ ह्रीं कुण्डलिन्यै ह्रीं ५ँ ऊर्ध्ववक्त्रे ललाटे। ५ँ फ्रें मातृकायै फ्रें ५ँ अपरवक्त्रे ब्रह्मरन्ध्रे। इति षड्वक्त्रन्यासः।

श्रीशासन में न्यास-हेतु जो मन्त्र कहे गये हैं, उन्हें कहता हूँ। अनुलोम-विलोम क्रम से अंगन्यास करना चाहिये। तब बीज न्यास, तब रत्न न्यास करे। परादि त्रिविध न्यास करके ध्यान करे। अंगमन्त्रों से अंगुलियों में न्यास करके तलों में भी न्यास करे। हृदयादि स्थानों में न्यास के साथ अस्त्रन्यास करे। शिखा में बाँयें-दाँयें तथा कान में न्यास करे; मुख में वक्त्र न्यास करे। मूर्धा द्वादशान्त आज्ञा विशुद्धि हृदय नाभि स्वाधिष्ठान में न्यास करे। इसके बाद परादि न्यास करे।

न्यास—कनिष्ठादि अंगुलियों में तारादि रत्न न्यास करके मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। मूल मन्त्र है—ऐं फ्रें ह्सौं ह्सखफ्रें श्रीं ह्रीं ऐं। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हां फ्रां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं इत्यादि दीर्घ मन्त्रों से क्रम से षडङ्ग न्यास करे। तब बीज षोढ़ा न्यास करे। बीजषोढ़ा न्यास मूलोक्त तत्तत् मन्त्रों से शिखामूल, ब्रह्मरन्ध्र, ललाट, दशशंख, वाम शंख, दक्ष-वाम भ्रूमध्य गले के नीचे, दश-वाम प्रस्फूर, दश-वाम प्रस्फुरवेष्टन, दक्ष-वाम कक्षमूल, नाभि, दक्ष-वाम हस्ततल, लिंगच्छिन्द, लिङ्ग-मूल, भेद, दक्ष-वाम अण्ड, ब्रह्मसूत्र, गुदा, दक्ष-वाम गुदफलकसन्धि, गुदा के ऊपर, दक्ष-वाम जानुचक्र, दक्ष-वाम जानु चक्र के नीचे, दक्ष-वाम गुल्फ, दक्ष-वाम गुल्फ के नीचे, दक्ष-वाम यमद्वार, दक्ष-वाम पादतल, पृष्ठावंश, दश-वाम पार्श्व, दश-वाम कूर्पर, दक्ष-वाम मणिबन्ध, दक्ष-वाम अंस, दक्ष-वाम चूलक, दक्ष-वाम नेत्रमध्य, नासिकाग्र, दक्ष-वाम वृद्ध-तर्जनी मध्य, दक्ष-वाम नासिका में करने के बाद समस्त मातृका से पैर से मूर्धा तक व्यापक न्यास करना चाहिये। इसके बाद आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर एवं स्वाधिष्ठान में मूलोक्त तत्तत् मन्त्रों से पञ्चरत्न न्यास करके करतल-करपृष्ठसहित समस्त अंगुलियों में तत्तत् मन्त्रों से परादि न्यास करके इसी प्रकार हृदयादि न्यास भी करे। तदनन्तर मूलोक्त मन्त्रों से चूलीमूल, वाम-दक्ष कर्ण, मुख, ललाट एवं ब्रह्मरन्ध्र में षड्वक्त्र न्यास करना चाहिये।

इमं न्यासं विधायेत्थं पश्चाद् ध्यानं समाचरेत्। सहस्रसूर्यसङ्काशो महादीप्तिधरो गुरुः ॥१॥
षडन्वयेश्वरः श्रीमान् परशम्भुरजोऽव्ययः। षडाननः स्फुरन्नेत्रैरष्टादशभिरन्वितः ॥२॥
द्वीपिचर्मकटिस्फारो मुण्डमालाविभूषणः। नरास्थिरत्नपारिजातपुष्पमालासमावृतः ॥३॥
ब्रह्मनाभिकजाङ्गुष्ठो दंष्ट्राविश्रुतलापनः। विचित्राभरणैर्युक्तः सर्वतः पशुपाशहृत् ॥४॥
शूलासीषुशक्तिसृणिवरधारी महातनुः। कपालफलचापारिपाशाभयकरोद्यतः ॥५॥
देवावृतः पितृवने क्रीडाकृन्मानसोत्तरे। एवं परेश्वरीं ध्यायेत् कन्यागणसमावृताम् ॥६॥
वामोर्ध्वाद्वामाधः पर्यन्तमायुधध्यानम्।

इति ध्यात्वाभिसञ्जप्य मूलविद्याद्वयं पुनः। समभ्यस्य विशेषार्घ्यं चरणद्वयमन्त्रितम् ॥७॥
तेन सन्तर्पयेद् धीमान् स्वशिरसि गुरुक्रमम्। श्रीनाथपूर्वनिर्वाणचरणं परपावकम् ॥८॥
कुलकामगवीशुक्लरक्तौ निष्कलरूपकौ। सकलौ च तदात्मानावुपचारपदौ ततः ॥९॥
सितरक्तैश्च कुसुमैः स्वमूर्ध्नि ब्रह्मरन्ध्रके। सहस्रदलराजीवकर्णिकोदरसंस्थिताः ॥१०॥
ब्रह्मादिहेमगर्भान्ताधिष्ठिताः कुलनायिकाः। स्वस्वमन्त्रैर्यजेत् पश्चाद्युगनाथचतुष्टयम् ॥११॥
निर्वाणचरणध्यानकरणैकपरायणः। चर्यादिमानवौघं च यजेच्च परितः क्रमात् ॥१२॥
तत्रैव हेमगर्भादिप्रेतनाभ्यम्बुजेष्वधः। परेशादिनवेशान्तकूटान्तक्रममादरात् ॥१३॥
स्मरंस्तत्तत्कूटभवं देवं देवीं समावृतीः। आत्मनैक्यमनुध्यायन् पूजयेदथ साधकः ॥१४॥

तद्यथा—ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ५ँ अः हंसः सोहं अः शौं सौं

ज्योतिष्परम्बानिर्वाणानन्दनाथ सौः शौः अः हंसः सोहं अः ५ँ निर्वाणचरणपादुकां पूजयामि०। इति निर्वाणविद्येयं तुरीयातीतस्था। ५ँ हयूं हसक्षमलवयरां हसक्षमलवयरूँ हसक्षमलवयरूँ श्रीपरपावक सर्वाराध्य सर्वगुरुनाथ सर्वगुरुगुरुश्रीनाथ गुरुनाथ रहसक्षमलवयरूँ हसूँ हसक्षमलवयरीं हसक्षमलवयरूँ सहक्षमलवयराँ एकशम्भु ५ँ श्रीपरमपावक शम्भु श्रीपा०। श्रीशम्भुगुरु ५ँ हसक्षमलवयराँ हसक्षमलवयरँ हसक्षमलवयरीं हसूं हसक्षमलवयरूँ ५ँ ॐ ह्रीं कामदुघे अमोघे वरदे विच्चे स्फुर स्फुर श्रां श्रीं श्रूं श्रैं श्रौं श्रः ५ँ श्रीकामधेनुचरण श्रीपा०। ५ँ हसूँ शुक्लपाद हसूं ५ँ शुक्लनिष्कलपाद श्रीपा०। ५ँ सहरूं रक्तपाद सहरूँ ५ँ रक्तनिष्कलपाद श्रीपा०। इति निष्कलपादौ। ५ँ हस्त्रौं शर्वोर्ध्वे वशं देहि हस्त्रौं ५ँ शुक्लसकलपाद श्री०। ५ँ सह्रीं सत्ये श्रियं देहि सह्रीं ५ँ रक्तसकलपाद श्रीपा०। इति सकलपादौ। ५ँ हस्त्रौं शुक्लविद्यामहापीठशुक्लपुष्पशुक्लमण्डलमहापीठ शुक्लचरुक शुक्लार्णवमहापीठ शुक्लनदी शुक्लमन्त्रमहापीठ शुक्लदीपमहापीठ शुक्लमुद्रामहापीठ शुक्लनति शुक्लमहाप्रकाशानन्दनाथपाद हस्त्रौं ५ँ शुक्लचरणश्रीपादुकां पू०। ५ँ सहरौं रक्तविद्यामहापीठ रक्तपुष्प रक्तमण्डलमहापीठ रक्तचरुक रक्तार्णवमहापीठ रक्तनदी रक्तमन्त्रमहापीठ रक्तदीपमहापीठ रक्तमुद्रामहापीठ रक्तनति श्रीरक्तमहाविमर्शपराम्बापाद सहरौं ५ँ परापररक्तचरणश्रीपा०। ५ँ हसरौं सहरौं मिश्रविद्यामहापीठ मिश्रपुष्प मिश्रमण्डलमहापीठ मिश्रचरुक मिश्रार्णवमहापीठ मिश्रनदीमिश्रमन्त्रमहापीठ मिश्रदीपमहापीठ मिश्रमुद्रामहापीठ मिश्रनति मिश्रमहाप्रकाशविमर्शानन्दनाथपराम्बापाद सह्रौं हस्त्रौं ५ँ श्रीपरापरमिश्राम्बाचरणश्रीपा०। ५ँ लं ब्रह्ममहाप्रेतासनाय लं ५ँ श्रीपा०। ५ँ वं विष्णुमहाप्रेतासनाय वं ५ँ श्री०। ५ँ रं रुद्रमहाप्रेतासनाय रं ५ँ श्री०। ५ँ यं ईश्वरमहाप्रेतासनाय यं ५ँ श्री०। ५ँ हं सदाशिवमहाप्रेतासनाय हं ५ँ श्री०। ५ँ हं हिरण्यगर्भमहा-प्रेतपद्मासनाय हं ५ँ श्री०। तच्छक्तयः—५ँ ऐं परायै ऐं ५ँ श्रीपा०। ५ँ हुं इच्छायै हुं ५ँ श्री०। ५ँ ऐं ज्ञानायै ऐं ५ँ श्री०। ५ँ श्रीं क्रियायै श्रीं ५ँ श्री०। ५ँ ह्रीं कुण्डलिन्यै ह्रीं ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें मातृकायै फ्रें ५ँ श्री०। इति दिव्यौघाः। ५ँ आं आदिगुरुनाथ आद्याम्बा आं ५ँ श्रीपा०। ५ँ अं अचिन्त्यगुरुनाथ अचिन्त्याम्बा अं ५ँ श्रीं०। ५ँ अं अव्यक्तगुरुनाथ अव्यक्ताम्बा अं ५ँ श्रीपा०। ५ँ कुं कुलेश्वरनाथ कुलेश्वर्य्यम्बा कुं ५ँ श्रीपा०। इति युगनाथचतुष्टयं सिद्धौघाः। बिन्दुमध्ये। ७ँ श्रीचर्य्यातूष्णीशानन्दनाथ सिद्धापराम्बा चामुण्डापराम्बा ७ँ श्रीपा०। ७ँ श्रीचिञ्चिणि मित्रेश कुब्जेशानन्दनाथ मदनापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीगगनानन्दनाथ चाटुलीपराम्बा आडलीपराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीचन्द्रगर्भानन्दनाथ भगीयापराम्बा लालीयापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीमुक्तानन्दनाथ महिलापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीललितानन्दनाथ शङ्खापराम्बा श्रीकरुणापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीकण्ठानन्दनाथ श्रीकण्ठापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीपरेश्वरानन्दनाथ श्रीपरेश्वरीपराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीकूर्मानन्दनाथ सहजापराम्बा श्रीरत्नदेवीपराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीरत्नेशानन्दनाथ ज्ञातीपराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीवर्मेशानन्दनाथ सदाख्यापराम्बा अम्बिकापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्री उमाकान्तेशानन्दनाथ योगापराम्बा योगीश्वरीपराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीब्रह्मेशानन्दनाथ वज्रेश्वरीपराम्बा ७ँ श्रीपा०। श्रीभुजङ्गेशानन्दनाथ सहजापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीक्रोधीशानन्दनाथ सहजापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीविश्वानन्दनाथ सहजापराम्बा ७ँ श्री०। श्रीदिगेश्वरानन्दनाथ सहजापराम्बा श्रीपार्वतीपराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीसर्वेश्वरानन्दनाथ सहजापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीअनन्तानन्दनाथ सहजापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीकपिलेशानन्दनाथ अचलापराम्बा ७ँ श्री०। ७ँ श्रीएकाम्बरानन्दनाथ सहजापराम्बा ७ँ श्री०। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसौं हसखफ्रें सहखफ्रें श्रीअमृतानन्दनाथ सहजापराम्बा ७ँ श्रीपा०। इति मानवौघाः। अथ मूलमन्त्राः—५ँ सहखफ्रें ऐं फ्रें ५ँ श्रीपरेश्वरानन्दनाथ श्रीपरेश्वरीपराम्बा ७ँ श्री०। ५ँ हसं ऐं कुब्जिके फ्रें हसमईऐं कुब्जिकायै फ्रें ५ँ श्रीविच्चेश्वरानन्दनाथ श्रीविच्चेश्वरीपराम्बा ५ँ श्री०। हसर्यइंऐं कुब्जिकायै हसखफ्रें विच्चे ५ँ श्रीहंसेश्वरानन्दनाथ श्रीहंसेश्वरीपराम्बा ५ँ श्रीपा०। ५ँ ह्रां ह्रां ह्रीं ह्रीं हस्त्रां हस्त्रीं ५ँ हस्त्रूं हस्त्रीं क्षीं क्ष्रूं क्षीं किणि किणि हसखफ्रां हसखफ्रूं हसखफ्रीं विच्चे ह्रौं हसः हसः हसखफ्रें हसक्षमलवयरुं औं हसक्षमलवयरूं औं ५ँ श्रीसंवर्तकेश्वरानन्दनाथ श्रीसंवर्तकेश्वरीमहासमयापराम्बा ५ँ श्री०। ५ँ हसूं

ऐं रिगिटि पिंगिटि डुक डुक कण्टापि विच्चे ५ँ श्रीद्वीपेश्वरानन्दनाथ श्रीद्वीपेश्वरीपराम्बा ५ँ श्रीपा०। ५ँ हसक्षमलवयरं नमो भगवति हसखफ्रें कुब्जिकायै ह्रां ह्रूं ह्रीं ङञणनमे अघोरमुखि छां छूं छीं किणि किणि श्रीविच्चे ५ँ नवात्मकेश्वरानन्दनाथ श्रीनवात्मकेश्वरीपराम्बा ५ँ श्री०। इति गुरुक्रमः। अथ मानसरश्मिपूजा—शिरसि षट्कोणे ईशानादिवायव्यान्तकोणेषु क्रमशो द्वात्रिंशत्क्रमरश्मिकान् पूजयेत्। ५ँ ऐं परानन्दनाथ परापराम्बा ऐं ५ँ श्रीपा०। ५ँ ऐं भानन्दनाथ भापराम्बा ऐं ५ँ श्री०। ५ँ ऐं चिदानन्दनाथ चित्पराम्बा ऐं ५ँ श्री०। ५ँ ऐं महामायानन्दनाथ महामायापराम्बा ऐं ५ँ श्री०। (४) इतीशानकोणे। ५ँ हुं इच्छानन्दनाथ इच्छापराम्बा हुं ५ँ श्री०। ५ँ हुं सृष्ट्यानन्दनाथ सृष्टिपराम्बा हुं ५ँ श्री०। ५ँ हुं स्थित्यानन्दनाथ स्थितिपराम्बा हुं ५ँ श्री०। ५ँ हुं तिरोधानन्दनाथ तिरोधापराम्बा हुं ५ँ श्री०। ५ँ हुं मुक्त्यानन्दनाथ मुक्तिपराम्बा हुं ५ँ श्री०। (५) इति पूर्वदिग्रश्मयः। ५ँ ऐं ज्ञानानन्दनाथ ज्ञानापराम्बा ऐं ५ँ श्री०। ५ँ ऐं सदानन्दनाथ सतीपराम्बा ऐं ५ँ श्री०। ५ँ ऐं असदानन्दनाथ असतीपराम्बा ऐं ५ँ श्री०। ५ँ ऐं सदसदानन्दनाथ सदसतीपराम्बा ऐं ५ँ श्री०। (४) इत्यग्निकोणे। ५ँ श्रीं क्रियानन्दनाथ क्रियापराम्बा श्रीं ५ँ श्री०। ५ँ श्रीं आत्मेश्वरानन्दनाथ आत्मेश्वरीपराम्बा श्रीं ५ँ श्री०। ५ँ श्रीं इन्द्रियानन्दनाथ इन्द्रियापराम्बा श्रीं ५ँ श्री०। ५ँ श्रीं गोचरानन्दनाथ गोचरापराम्बा श्रीं ५ँ श्री०। ५ँ श्रीं लोकमुख्यानन्दनाथ लोकमुख्यापराम्बा श्रीं ५ँ श्री०। ५ँ श्रीं वेदानन्दनाथ वेदापराम्बा श्रीं ५ँ श्री०। ५ँ श्रीं सच्चिदानन्दनाथ सच्चित्पराम्बा श्रीं ५ँ श्री०। (७) इति नैर्ऋत्यकोणे। ५ँ ह्रीं कुण्डल्यानन्दनाथ कुण्डलिनीपराम्बा ह्रीं ५ँ श्री०। ५ँ ह्रीं सौषुम्नानन्दनाथ सौषुम्नापराम्बा ह्रीं ५ँ श्री०। ५ँ ह्रीं प्राणसूत्रानन्दनाथ प्राणसूत्रापराम्बा ह्रीं ५ँ श्री०। ५ँ ह्रीं स्पन्दानन्दनाथ स्पन्दापराम्बा ह्रीं ५ँ श्री०। (४) इति पश्चिमे। ५ँ फ्रें मातृकानन्दनाथ मातृकापराम्बा फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें शब्दानन्दनाथ शब्दापराम्बा फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें वर्णानन्दनाथ वर्णापराम्बा फ्रें ५ँ श्री। ५ँ फ्रें स्वरोद्भवानन्दनाथ स्वरोद्भवापराम्बा फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें वर्णजानन्दनाथ वर्णजापराम्बा फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें वर्गजानन्दनाथ वर्गजापराम्बा फ्रें श्री०। ५ँ फ्रें संयोगानन्दनाथ संयोगापराम्बा फ्रें ५ँ श्री०। ५ँ फ्रें मन्त्रविग्रहानन्दनाथ मन्त्रविग्रहापराम्बा फ्रें ५ँ श्री०। (८) इति वायव्यकोणे।

इसके बाद कन्याओं से घिरी परमेश्वरी का इस प्रकार ध्यान करे—

सहस्रसूर्यसङ्काशो महादीप्तिधरो गुरुः। षडन्वयेश्वरः श्रीमान् परशम्भुरजोऽव्ययः।।
षडाननः स्फुरन्नेत्रैरष्टादशभिरन्वितः। द्वीपिचर्मकटिस्फारो मुण्डमालाविभूषणः।।
नरास्थिरत्नपारिजातपुष्पमालासमावृतः। ब्रह्मनाभिकजाङ्गुष्ठो दंष्ट्राविश्रुतलापनः।।
विचित्राभरणैर्युक्तः सर्वतः पशुपाशहृत्। शूलासीषुशक्तिसृणिवरधारी महातनुः।।
कपालफलचापारिपाशाभयकरोद्यतः। देवावृतः पितृवने क्रीडाकृन्मानसोत्तरे।।
एवं परेश्वरीं ध्यायेत् कन्यागणसमावृताम्।

इस प्रकार ध्यान करके दोनों मूल विद्याओं को जपकर चरणद्वय पर विशेषार्घ्य डाले। उसी विशेषार्घ्य से अपने शिर पर गुरुक्रम का तर्पण करे, जैसे—ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अः हंसः सोहं अः शौं सौं ज्योतिष्पराम्बानिर्वाणानन्दनाथ सौः शौः अः हंसः सोहं अः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं निर्वाणचरणश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। यह निर्वाण विद्या तुरीयातीत में स्थित रहती है। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हयूं हसक्षमलवयराँ हसक्षमलवयरूँ हसक्षमलवयरूँ श्रीपरपावक सर्वाराध्य सर्वगुरुनाथ सर्वगुरुगुरुश्रीनाथ गुरुनाथ रहसक्षमलवयरूँ हसूँ हसक्षमलवयरीं हसक्षमलवयरूँ सहक्षमलवयराँ एकशम्भु ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपरमपावकशम्भुश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, श्रीशम्भुगुरु ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसक्षमलवयराँ हसक्षमलवयरँ हसक्षमलवयरीं हसूं हसक्षमलवयरूँ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ॐ ह्रीं कामदुघे अमोघे वरदे विच्चे स्फुर स्फुर श्रां श्रीं श्रूं श्रैं श्रौं श्रः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीकामधेनुचरणश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसूँ शुक्लपाद हसूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शुक्लनिष्कलपादश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहरूं रक्तपाद सहरूँ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रक्तनिष्कलपादश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ये

निष्कल पाद में रहते हैं। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हस्त्रौं शर्वोर्ध्वे वशं देहि हस्त्रौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शुक्लसकलपादश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहीं सत्ये श्रियं देहि सहीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रक्तसकलपादश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ये सकल पाद में रहते हैं। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हस्त्रौं शुक्लविद्यामहापीठशुक्लपुष्पशुक्लमण्डलमहापीठ शुक्लचरुक शुक्लार्णवमहापीठ शुक्लनदी शुक्लमन्त्रमहापीठ शुक्लदीपमहापीठ शुक्लमुद्रामहापीठ शुक्लनति शुक्लमहाप्रकाशा-नन्दनाथपाद हस्त्रौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शुक्लचरणश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहरौं रक्त-विद्यामहापीठ रक्तपुष्प रक्तमण्डलमहापीठ रक्तचरुक रक्तार्णवमहापीठ रक्तनदी रक्तमन्त्रमहापीठ रक्तदीपमहापीठ रक्तमुद्रामहापीठ रक्तनति श्रीरक्तमहाविमर्शपराम्बापाद सहरौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं परापररक्तचरणश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसरौं सहरौं मिश्रविद्यामहापीठ मिश्रपुष्प मिश्रमण्डलमहापीठ मिश्रचरुक मिश्रार्णवमहापीठ मिश्रनदीमिश्रमन्त्रमहापीठ मिश्रदीपमहापीठ मिश्रमुद्रामहापीठ मिश्रनति मिश्रमहाप्रकाशविमर्शानन्दनाथपराम्बापाद सह्रौं हस्त्रौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपरा-परमिश्राम्बाचरणश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं ब्रह्ममहाप्रेतासनाय लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौंश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं विष्णुमहाप्रेतासनाय वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं रुद्रमहाप्रेतासनाय रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं ईश्वरमहाप्रेतासनाय यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं सदाशिवमहाप्रेतासनाय हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं हिरण्यगर्भमहाप्रेतपद्मासनाय हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

उनकी शक्तियों का पूजन एवं तर्पण इन मन्त्रों से होता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं परायै ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हुं इच्छायै हुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं ज्ञानायै ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं क्रियायै श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं कुण्डलिन्यै ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें मातृकायै फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ये दिव्यौघ होते हैं।

ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं आं आदिगुरुनाथ आद्याम्बा आं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अं अचिन्त्यगुरुनाथ अचिन्त्याम्बा अं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अं अव्यक्तगुरुनाथ अव्यक्ताम्बा अं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कुं कुलेश्वरनाथ कुलेश्वर्य्यम्बा कुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ये चार सिद्धौघ होते हैं।

बिन्दुमध्य में इनका पूजन तर्पण करे—ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीचर्य्यातूष्णीशानन्दनाथ सिद्धापराम्बा चामुण्डापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीचिञ्चिणि मित्रेश कुब्जेशानन्दनाथ मदनापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीगगनानन्दनाथ चाटुलीपराम्बा आडलीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीचन्द्रगर्भानन्दनाथ भगीयापराम्बा लालीयापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीमुक्तानन्दनाथ महिलापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीललितानन्दनाथ शङ्खापराम्बा श्रीकरुणापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीकण्ठानन्दनाथ श्रीकण्ठापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपरेश्वरानन्दनाथ श्रीपरेश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीकूर्मानन्दनाथ सहजापराम्बा श्रीरत्नदेवीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीरत्नेशानन्दनाथ ज्ञातीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीवर्मेशानन्दनाथ सदाख्यापराम्बा अम्बिकापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्त्रैं

श्रीं ह्रीं ऐं श्री उमाकान्तेशानन्दनाथ योगापराम्बा योगीश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीब्रह्मेशानन्दनाथ वज्रेश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीभुजङ्गेशानन्दनाथ सहजापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीक्रोधीशानन्दनाथ सहजापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीविश्वानन्दनाथ सहजापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीदिगेश्वरानन्दनाथ सहजापराम्बा श्रीपार्वतीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीसर्वेश्वरानन्दनाथ सहजापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीअनन्तानन्दनाथ सहजापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीकपिलेशानन्दनाथ अचलापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीएकाम्बरानन्दनाथ सहजापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसौं हसखफ्रें सहखफ्रें श्रीअमृतानन्दनाथ सहजापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रैं श्रीं ह्रीं ऐं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ये सभी मानवौघ होते हैं।

मूल मन्त्र से गुरुक्रम का पूजन इस प्रकार होता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहखफ्रें ऐं फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपरेश्वरानन्दनाथ श्रीपरेश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसं ऐं कुब्जिके फ्रें हसमईऐं कुब्जिकायै फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीविच्चेश्वरानन्दनाथ श्रीविच्चेश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, हसर्यइऐं कुब्जिकायै हसखफ्रें विच्चे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीहंसेश्वरानन्दनाथ श्रीहंसेश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रां ह्रां ह्रीं ह्रीं हस्त्रां हस्त्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हस्त्रूं हस्त्रीं क्ष्रीं क्ष्रूं क्ष्रीं किणि किणि हसखफ्रां हसखफ्रूं हसखफ्रीं विच्चे ह्रौं हसः हसः हसखफ्रें हसक्षमलवयरुं औं हसक्ष-मलवयरूं औं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीसंवर्तकेश्वरानन्दनाथ श्रीम्ंत्रर्तकेश्वरीमहासमयापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसूं ऐं रिगिटि पिंगिटि डुक डुक कण्टापि विच्चे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीद्वीपेश्वरानन्दनाथ श्रीद्वीपेश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हस-क्षमलवयरं नमो भगवति हसखफ्रें कुब्जिकायै ह्रां ह्रूं ह्रीं ङञणनमे अघोरमुखि छां छूं छीं किणि किणि श्रीविच्चे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं नवात्मकेश्वरानन्दनाथ श्रीनवात्मकेश्वरीपराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

मानसरश्मि पूजन—शिर स्थित षट्कोण के ईशान कोण में क्रमशः इन चार रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हस-खफ्रें हसौं ऐं परानन्दनाथ परापराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं भानन्दनाथ भापराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं चिदानन्दनाथ चित्पराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं महामायानन्दनाथ महा-मायापराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

पूर्व में इन पाँच रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हुं इच्छानन्दनाथ इच्छापराम्बा हुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हुं सृष्ट्यानन्दनाथ सृष्टिपराम्बा हुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हुं स्थित्यानन्दनाथ स्थितिपराम्बा हुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हुं तिरोधानन्दनाथ तिरोधापराम्बा हुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हुं मुक्त्यानन्दनाथ मुक्तिपराम्बा हुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

अग्नि कोण में इन चार रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं ज्ञानानन्दनाथ ज्ञानापराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं सदानन्दनाथ सतीपराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं असदानन्दनाथ असतीपराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं

श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं सदसदानन्दनाथ सदसतीपराम्बा ऐं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

नैर्ऋत्य कोण में इन सात रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं क्रियानन्दनाथ क्रियापराम्बा श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं आत्मेश्वरानन्दनाथ आत्मेश्वरीपराम्बा श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं इन्द्रियानन्दनाथ इन्द्रियापराम्बा श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं गोचरानन्दनाथ गोचरापराम्बा श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं लोकमुख्यानन्दनाथ लोकमुख्यापराम्बा श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं वेदानन्दनाथ वेदापराम्बा श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं सच्चिदानन्दनाथ सच्चित्पराम्बा श्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

पश्चिम दिशा में इन चार रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं कुण्डल्यानन्दनाथ कुण्डलिनीपराम्बा ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं सौषुम्नानन्दनाथ सौषुम्नापराम्बा ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं प्राणसूत्रानन्दनाथ प्राणसूत्रापराम्बा ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं स्पन्दानन्दनाथ स्पन्दापराम्बा ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

वायव्य कोण में इन आठ रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें मातृकानन्दनाथ मातृकापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें शब्दानन्दनाथ शब्दापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें वर्णानन्दनाथ वर्णापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें स्वरोद्भवानन्दनाथ स्वरोद्भवापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें वर्णजानन्दनाथ वर्णजापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें वर्गजानन्दनाथ वर्गजापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें संयोगानन्दनाथ संयोगापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं फ्रें मन्त्रविग्रहानन्दनाथ मन्त्रविग्रहापराम्बा फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

रश्मिध्यानम्

अथ रश्मिध्यानम्—

चतुष्कं सूर्यसङ्काशं पञ्चकं चन्द्रसन्निभम्। तृतीयं च चतुष्कं च धूम्राभं सप्तकं पुनः॥१॥
अञ्जनाभं कुङ्कुमाभं चतुष्कं पञ्चमं पुनः। षष्ठं तथाष्टकं चेति शुद्धतालकसन्निभम्॥२॥
वरदाभयहस्ताश्च सर्वे वामार्धविग्रहाः। तेजोरूपाश्च वा ध्येयाः केवलं मोक्षकाङ्क्षिभिः॥३॥

इति ध्यानम्। इति रश्मि-आवरणम्।

रश्मिध्यान—चार रश्मियाँ सूर्यवर्ण की, पाँच चन्द्राभ, तृतीय चतुष्क धूम्राभ सप्तक अंजन वर्ण की, फिर चतुष्क पञ्चम कुङ्कुम वर्ण की, षष्ठ, अष्टक शुद्ध तालक के समान हैं। सभी वर एवं अभय से युक्त हैं। सभी वामार्ध विग्रह हैं। मोक्ष चाहने वालों को केवल तेजोरूप रश्मि का ध्यान करना चाहिये।

परमेश्वरकूटध्यानादि गुप्ततमस्तोत्रञ्च

हिरण्यगर्भनाभिस्थसरसीरुहमध्यतः। कूटं परेश्वरस्याथ चिन्तयेदर्कसन्निभम्॥१॥
स्वगुरुं मूर्ध्नि सञ्चिन्त्य मूलाधारे परेश्वरीम्। तिथिसंख्याफणोद्भिन्नभोगिमध्यफणे स्थिताम्॥२॥

तेजोरूपां पुनर्देवीमामस्तकमनुस्मरेत्। परेश्वरेण संयोज्य ध्यायन्नैक्येन मान्त्रिकः ॥३॥
देवं देवीं च संयोज्य पुनरेकीकृतेन च। तन्मन्त्रेण च तावेव त्रिधा संपूज्य साधकः ॥४॥
नुत्वा स्तुत्वा मनुं जप्त्वा मानसक्रममाचरेत्।

पुनः स्ह्रां फ्रां इत्याद्यङ्गन्यासः। 'सहस्रसूर्यसङ्काशः' इत्यादि ध्यानं, मूलमन्त्रेण यथाशक्ति जपं कुर्यात्। पञ्चाङ्गं नमस्कारं कुर्यात्। 'वक्त्रशून्या हृदाप्यूना करादृते हरेज्जपम्। कादृते सर्वहानिस्तु मरणं वचनादृते' इति लक्षणयुक्त्या नमस्कारं कृत्वा,

नमो द्रुहिणवैकुण्ठशक्तिप्रसवधारिणे। आधारस्वाधिष्ठानाभिहृत्कण्ठबिन्दुवासिने ॥५॥
बिलषोडशपर्यन्तचारुसंचारवर्ष्मणे। जन्मभोगलयव्याधिदुःखकर्मविनाशिने ॥६॥
भूतवर्तभविष्याख्यजगज्जातकथाविदे। षडूर्मिभेदिने सत्ताशून्यवादविनाशिने ॥७॥
षड्गतित्राससंत्रस्तलोके भयक्षयात्मने। पौनःपुन्यसलोकाख्यसत्ताविध्वंसकात्मने ॥८॥
वलीपलितनाशैकमूर्तयेऽमृतधारिणे। सर्वज्ञस्फारणोपेतजीवन्मुक्तिप्रदायिने ॥९॥
इदं गुप्ततमं स्तोत्रं पावनं श्लोकपञ्चकम्। पठेन्नित्यं भुक्तिमुक्ती साधकाय परेश्वरः ॥१०॥
संस्तूय मानसे भक्त्या पञ्चाङ्गं प्रणमेद्भुवि। मन्त्रदेवगणैः सार्धं तं मण्डलगतं पुनः ॥११॥
देवं चरणमध्यस्थं ब्रह्मरन्ध्रे लयं नयेत्।

इति मानसगुरुक्रमः।

नाभिस्थ मणिपूर-हिरण्यगर्भ मध्य में परमेश्वर कूट का चिन्तन सूर्य के समान करे। मूर्धा में अपने गुरु का चिन्तन करे। मूलाधार में परमेश्वरी का चिन्तन करे। तिथि संख्या फण से उद्भिन्न सर्प फणमध्य में स्थित तेजोरूपा देवी का स्मरण मस्तक में करे। परा एवं ईश्वर से अपने को जोड़कर एक रूप में ध्यान करे। देव-देवी को संयोजित करके पुनः एकीकृत करे। उनके मन्त्रों से उनकी पूजा तीन बार करे। नमस्कार स्तुति करके मन्त्र जप के मानस पूजा करे।

फिर स्ह्रां फ्रां इत्यादि से अंगन्यास करे। 'सहस्रसूर्यसंकाश' इत्यादि से ध्यान करे। मूल मन्त्र का यथाशक्ति जप करे। पञ्चाङ्ग नमन करे। तदनन्तर नमस्कार करके निम्न स्तोत्र का पाठ करे—

नमो द्रुहिणवैकुण्ठशक्तिप्रसवधारिणे। आधारस्वाधिष्ठानाभिहृत्कण्ठबिन्दुवासिने॥
बिलषोडशपर्यन्तचारुसंचारवर्ष्मणे। जन्मभोगलयव्याधिदुःखकर्मविनाशिने॥
भूतवर्तभविष्याख्य-जगज्जातकथाविदे। षडूर्मिभेदिने सत्ताशून्यवादविनाशिने॥
षड्गतित्राससंत्रस्तलोके भयक्षयात्मने। पौनःपुन्यसलोकाख्यसत्ताविध्वंसकात्मने॥
वलीपलितनाशैकमूर्तयेऽमृतधारिणे। सर्वज्ञस्फारणोपेतजीवन्मुक्तिप्रदायिने॥

यह पवित्र श्लोकपञ्चक अत्यन्त गुप्त है। इसके नित्य पाठ से परमेश्वर साधक को भोग-मोक्ष प्रदान करते हैं। मानसिक पाठ करके पञ्चाङ्ग प्रणाम भूमि पर करे। मन्त्र देव गणों के साथ उन्हें मण्डलगत करके चरणमध्यस्थ देव को ब्रह्मरन्ध्र में विलीन कर दे। यही मानस गुरुक्रम होता है।

सामान्यार्घ्यविधिः

तदनन्तरं गुरुक्रमं शिरसि विन्यस्य, सर्वतीर्थानि समुद्रसहितानि तीर्थमन्त्रेणाङ्कुशमुद्रयाकृष्य तस्मिन्नावाह्य तज्जले धेनुमुद्रां प्रदर्श्य, संस्कृतेनाभ्युक्ष्य तज्जलेनात्मानं पूजोपकरणानि च संप्रोक्ष्य सामान्यार्घ्यमाच्छादयेत्। 'भूताङ्गुलं च वेदास्रं षट्कोणं चोर्ध्वरेखकम्। विलिख्य तस्मिन् साधारं पात्रमस्त्रविशोधितम्। संस्थाप्य पयसापूर्याधारपात्रजलेषु च।' ५ँ रं वह्निमण्डलाय धर्मप्रददशकलात्मने सामान्यार्घ्यपात्रासनाय नमः। ५ँ हं सूर्यमण्डलाय वसुप्रदद्वादशकलात्मने सामान्यार्घ्यपात्राय नमः। ५ँ सं सोममण्डलाय मोक्षप्रदषोडशकलात्मने सामान्यार्घ्यपात्राय नमः। ५ँ श्रीविद्याखण्डत्रयेण

त्रिरभिपूज्य परेश्वरेण त्रिवारं संपूज्य परेश्वर्य्या सप्तवारमभिमन्त्र्य गन्धपुष्पाक्षतैरभ्यर्च्य, इति सामान्यार्घ्यविधिः। तद्दक्षिणे पात्रं प्रतिष्ठाप्य तदनु पञ्चभिर्वीक्षिण्यादिभिः कृतोत्पवनं कृत्वा घटसूत्रपठनं 'समुद्रे मथ्यमाने तु' इत्यादि पठन् सामान्यार्घ्यवदर्चयेत्। तद्बिन्दुं सामान्यार्घ्ये निःक्षिप्यात्मानं पूजोपकरणानि संप्रोक्ष्य मण्डलोद्धारणं कुर्यात्।

इसके बाद गुरुक्रम को शिर में न्यस्त करे। समुद्रसहित सभी तीर्थों को तीर्थ मन्त्र से अंकुश मुद्रा से आकर्षित करे, उसमें आवाहन करे, उस जल में धेनु मुद्रा दिखावे। उस संस्कृत जल से अपना और पूजा उपकरणों का प्रोक्षण करे। सामान्य अर्घ्य को उससे आच्छादित करे। पाँच अंगुल का चतुरस्र बनाकर उसमें षट्कोण बनावे। उसमें आधार रखकर अस्त्र फट् से शोधित पात्र को उस पर रखे। उसे जल से भरे। आधार पात्र एवं जल की इन मन्त्रों से पूजा करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं वह्निमण्डलाय धर्मप्रददशकलात्मने सामान्यार्घ्यपात्रासनाय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं सूर्यमण्डलाय वसुप्रदद्वादशकलात्मने सामान्यार्घ्यपात्राय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं सोममण्डलाय मोक्षप्रदषोडशकलात्मने सामान्यार्घ्यामृताय नमः। तब श्रीविद्या के तीनों खण्डों से तीनों की पूजा करे, परमेश्वर विद्या से तीन बार पूजा करे। परमेश्वरी विद्या से सात बार अभिमन्त्रित करे। गन्ध-पुष्पाक्षत से पूजा करे। यही सामान्य अर्घ्य विधि है। उसके दाँयें भाग में पात्र रखे। पाँच वीक्षिण्यादि से उत्पवन करे। घट सूत्र का पाठ करे। 'समुद्रे मथ्यमाने तु' इत्यादि से सामान्य अर्घ्य के समान अर्चन करे। उसमें से जलबून्दों को लेकर सामान्य अर्घ्य में डाले। अपना और पूजा उपकरणों को प्रोक्षण करके मण्डल को बनावे।

नवात्ममण्डलोद्धारप्रकारः मण्डलार्चनक्रमश्च

चतुरस्रमर्धचन्द्रं त्र्यस्रं षट्कोणवृत्तके। त्र्यस्रं पुनश्चन्द्रखण्डं नादबिन्दुनवात्मकम्॥१॥
श्रीभैरवीविशेषार्घ्यमण्डलानां यथा भवेत्। अवकाशस्तथा साधु लिखेदेतन्नवात्मकम्॥२॥
शाम्भवागमपूजार्थं तत्रोर्ध्वे मण्डलं लिखेत्। तस्मिन् प्रागादिदिङ्मध्ये ऊर्ध्वदेशे गुरूक्तितः॥३॥
आद्यन्तप्रणवैर्युक्त्या बीजषट्कं क्रमात् पठेत्। लंवंरंयंहंसमित्यादि चतुरस्रार्धचन्द्रकम्॥४॥
त्रिकोणमथ षट्कोणं वृत्तं नादं बहिः पुनः। पञ्चप्रणवमुच्चार्य वृत्तत्रयमथो लिखेत्॥५॥
श्रीभैरवसपर्यार्थं पद्मस्याधो विचक्षणः। अथ भूजानुको भूत्वा षोडशाङ्गुलमानतः॥६॥
चतुर्विंशाङ्गुलं वाथ द्वादशाङ्गुलमेव च। चतुरस्रं समालिख्य मध्ये पट्टं विधाय च॥७॥
राजतं स्वर्णमन्यद्वा तत्राष्टदलमालिखेत्। पद्मं वृत्तत्रयोपेतं तन्मध्ये मण्डलत्रयम्॥८॥
कर्पूरचन्दनादीनि कस्तूरीकुङ्कुमादयः। सान्द्रश्लक्ष्णेन पङ्केन हेमपट्टादि लेखयेत्॥९॥
प्रकृत्यष्टलसत्पत्रं परप्रकृतिकर्णिकम्। पुण्डरीकवरं सम्यक् सूच्या सौवर्णया लिखेत्॥१०॥
हेमपट्टाद्यभावे तु वस्त्रोपर्यथवा भुवि। पद्मस्याधःप्रदेशे तु सामान्यार्घ्यस्य वा पुनः॥११॥
सामान्यवद्विशेषार्घ्यमण्डलं विलिखेद्बुधः। पद्मस्य पार्श्वयोः सौम्ययाम्ययोर्मण्डलद्वयम्॥१२॥
वेदाङ्गुलप्रमाणं स्याल्लिखेत् प्राक्प्रत्यगायतम्। त्रयाणां द्वारपालानां गुरूणां पञ्चकस्य तु॥१३॥
क्रमात् सौम्ये च याम्ये च पञ्चमस्थानकल्पना। द्वारपालोत्तरे कुर्याद् बलीनां मण्डलानि च॥१४॥
अथ पुष्पाक्षतैः साघ्यैर्विशेषार्घ्यस्य पूजनम्। कृत्वा सामान्यवत् पात्रस्थापनान्तं विधाय च॥१५॥
सद्वितीयं विधानेन संपूज्यापूर्य पूर्ववत्। आबध्य कमठीमुद्रां कुसुमाक्षतगर्भिताम्॥१६॥
मूलकुण्डलिमुत्थाप्य उद्यच्चन्द्रसमप्रभाम्। षट्चक्रमण्डलं भित्त्वा सुषुम्नाकाशवाहिनीम्॥१७॥
सोमसूर्यपदं भित्त्वा विश्रान्तां शाम्भवेन तु। ध्यात्वा समरसोद्भूतमिश्ररक्तसितामृतैः॥१८॥
चरणत्रयसम्भूतैर्नयनद्वयनिर्गतैः। आपूरितं विशेषार्घ्यममृतीकृत्य वीक्षणैः॥१९॥
ज्वलदग्निनिभं ध्यात्वा धेनुमुद्रां प्रदर्शयेत्।

ब्रह्माण्डखण्डसम्भूतमित्यादि पठन् 'मयिविस्फुरणं कुरु' इति संप्रार्थ्यैवं वक्ष्यमाणमन्त्रैरपि समर्चयेत्। ५ँ हसरौं हसर अमृतेशोद्भवाय ह्र हसरौं, ५ँ ऐं परामृतेशोद्भवायै ऐं, ५ँ ओंजूंसः अमृतेशभैरवाय सःजूं ॐ अमृतेशभैरव्यै

ॐजूंसः ५ँ हसक्षमलवयरुं यं सहक्षमलवयरीं यीं सुरादेव्यै अर्धनारीश्वर्य्यै वौषट् ५ँ। ५ँ सहक्षमलवरयईं हसक्षमलवरयउं अंसंषः आनन्दभैरवानन्दनाथ नवात्मकापराम्बा ५ँ श्रीपा०। आवाहनादिमुद्राः प्रदर्श्य, अकथादि पात्रमध्ये सञ्चिन्त्य, त्रिकोणे षोडशस्वरान् विचिन्त्य, कोणेषु पीठमन्त्रैः संपूज्य मूलविद्यानित्याषोडशकं विचिन्त्य विन्यस्य, श्रीविद्यागुरूक्तमन्त्रं विन्यस्य, ५ँ अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय श्रींश्रींश्रूं अमृते अमृतेश्वर्यै नमः ५ँ। इत्यमृतेश्वरीं त्रिवारं पठित्वा, ५ँ आनन्दभैरवाय वषट् ५ँ, इति संशोध्य, ततो गुरुमन्त्रः। असिताङ्गाद्यष्टौ पात्राञ्चले संपूज्य नवात्मकविद्याभ्यां त्रिः सन्तर्पयेत्। परेश्वरेण त्रिवारं परेश्वर्य्या सप्तवारमभिमन्त्र्याङ्गानि देव्योर्विन्यस्य रक्षामस्त्रेण सङ्कल्पयेत्। सौभाग्यविद्या श्रीमूर्त्यादिविद्याः निर्वाणविद्याः। ५ँ हंसः सोऽहं ओं हां हौं सौः निर्वाणनन्दनाथ अहंस्वा-त्मप्रकाशानन्दनाथ ५ँ श्रीपा०। तथा सप्तधोच्चारात्। इति श्रीमूर्तिविधिः। विशेषार्घ्यस्य तादात्म्यं भावयित्वा पञ्चोपचारान् परिकल्प्य विशेषदक्षिणे मण्डले चतुरस्रके भोगपात्राधारकं ऐमिति संस्थाप्य, तत्र पात्रं क्लीमिति निःक्षिप्य, आद्येन सौरित्यापूर्य, विशेषोदकेन संस्कृत्य श्रीनाथादिपराषट्कान्तं शिरसि गुरुमन्त्रं पूजयेत्।

चतुरस्र, अर्धचन्द्र, त्र्यस्र, षट्कोण, वृत्त, त्र्यस्र, चन्द्रखण्ड, नाद, बिन्दु—नवात्मक मण्डल श्री भैरवी विशेषार्घ्य मण्डल के समान बनावे। इस मण्डल में शाम्भव आगम पूजा के लिये मण्डल के ऊर्ध्व में एवं पूर्वादि दश दिशाओं में ॐ लं ॐ, ॐवं ॐ, ॐ रं ॐ, ॐ यं ॐ, ॐ हं ॐ, ॐ सं ॐ लिखे। चतुरास्रार्धचन्द्र में बीज-षट्क लिखे। त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त एवं बाहर नाद पञ्च प्रणव लिखे; तदनन्तर वृत्तत्रय बनावे।

श्री भैरव की सपर्या के लिये पद्म के नीचे षोडश अंगुल या चौबीस अंगुल मान का या बारह अंगुल मान का चतुरस्र बनावे। उसमें सोने या चाँदी के पट्ट पर तीन वृत्तों के बीच में अष्टदल कमल बनावे। अष्टदल में तीन वृत्त बनावे। मण्डल को कपूर चन्दन कस्तूरी कुङ्कुम घोल से सोने की लेखनी से अत्यन्त सुन्दर बनावे। स्वर्णादि पट्ट न होने पर वस्त्र पर मण्डल बनावे या भूमि पर बनावे। पद्म के नीचे फिर सामान्य अर्घ्य मण्डल बनावे। सामान्यार्घ्य मण्डल के समान ही विशेषार्घ्य मण्डल बनावे। पद्म के उत्तर-दक्षिण पार्श्वों में दो मण्डल चार अंगुल प्रमाण का बनावे। तीनों द्वारपालों, पाँचों गुरुओं को उत्तर-दक्षिण मण्डल में लिखे। द्वारपाल के उत्तर बलिमण्डल बनावे। इनकी पूजा पुष्पाक्षत एवं विशेषार्घ्य जल से सामान्यतया करके पात्र स्थापित करे। इसमें द्वितीय विधान से पूजा करे। पुष्पाक्षत-गर्भित कमठी मुद्रा बनावे। उद्यत चन्द्र-प्रभा वाली कुण्डलिनी को मूलाधार से उठाकर छः चक्रों का भेदन कराते हुए सुषुम्ना आकाशवाहिनी सोम-सूर्य पद का भेदन करावे और शम्भु में लीन करावे। दोनों को समरसीभूत करे। इससे उत्पन्न मिश्र लाल, उजले एवं चरणत्रय से सम्भूत एवं नयनद्वय से निर्गत अमृत से विशेषार्घ्य को पूरित कर अमृतमय बनावे। प्रज्वलित अग्नि के समान रूप का ध्यान करके धेनुमुद्रा दिखावे। 'ब्रह्माण्डखण्डसम्भूम्' का पाठ करते हुये 'मयि विस्फुरणं कुरु' से प्रार्थना करके निम्न मन्त्रों से पूजा करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्सरौ ह्सर अमृतेशोद्भवाय ह्र ह्सरौं, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं परामृतेशोदभवायै ऐं, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ॐ जूं सः अमृतेशभैरवाय सः जूं ॐ अमृतेशभैरव्यै ॐ जूं सः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसक्षमलवयरुं यं सहक्षमलवयरीं यीं सुरादेव्यै अर्धनारीश्वर्यै वौषट् ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहक्षमलवरयईं हसक्षमलवयरउं अं सं षः आनन्दभैरवानन्दनाथ नवात्मकापराम्बा ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। तदनन्तर आवाहनादि मुद्रा दिखावे। पात्र मध्य में अकथादि का चिन्तन करे। त्रिकोण में सोलह स्वरों का चिन्तन करे। कोणों में पीठमन्त्रों से पूजा करे। मूल विद्या के सोलह नित्याओं का चिन्तन करके न्यास करे। श्री विद्या गुरु से उक्त मन्त्र का न्यास करे। तदनन्तर ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय श्री श्रीं श्रूं अमृते अमृतेश्वर्यै नमः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं इस अमृतेश्वरी मन्त्र को तीन बार पढ़े। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं आनन्दभैरवाय वषट् ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं से संशोधन करके गुरु मन्त्र पढ़े। असिताङ्गादि आठ भैरवों की पूजा पात्रों के जल में करे। नवात्मक विद्या से तीन बार तर्पण करे। परेश्वर से तीन बार एवं परेश्वरी से सात बार अभिमन्त्रित करके देवी के अंगों का न्यास करके रक्षा मन्त्र से सङ्कल्प करे। सौभाग्यविद्या श्रीमूर्त्यादि विद्या निर्वाण विद्या। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हंसः सोऽहं ॐ हां हौं सौः निर्वाणानन्दनाथ अहं स्वात्मप्रकाशानन्दनाथ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं

श्रीपादुकां पूजयामि इसका उच्चारण सात बार करे। विशेषार्घ्य में तादात्म्य श्री भावना करके पञ्चोपचार परिकल्पित करके विशेष दक्षिण मण्डल में चतुरस्र पर भोग-पात्र के आधार को 'ऐं' से स्थापित करे। उस पर 'क्लीं' से पात्र को रखे, सौः से जल भरे, विशेषोदक से संस्कृत करे, श्रीनाथादि पराषट्क गुरुमन्त्र का शिर पर पूजा करे।

कृत्वा पञ्चोपचारांश्च शेषं स्वात्मानले हुनेत्। सुगन्धतिलकाद्यैश्च नानाभरणसंयुतैः ॥२०॥
स्वात्मानं समलंकृत्य यथाविभवविस्तरम्। वक्ष्यमाणैस्तथा मन्त्रैर्यजेदागममण्डलम् ॥२१॥
वहत्पुटनासिकया प्रणवैश्च समर्चयेत्।

५ँ अष्टाविंशतिक्रममण्डलेभ्यो नमः ५ँ हसरौं महाप्रेतपद्मासनाय हसरौं श्रीपा०। ५ँ ऐं प्रणवमण्डलव्यापिपादाय विच्चे ऐं श्री०।

एतान् साक्षतपुष्पैश्च यजेदर्घ्याम्बुबिन्दुभिः। संस्थाप्य मण्डले तत्र यजेच्छाम्भवमण्डलम् ॥२२॥
दक्षिणोदग्दक्षिणोदङ्मध्यदेशे गुरूक्तितः। तारसंपुटितैस्तारैर्यष्टव्या मन्त्रदेवताः ॥२३॥

५ँ ऐं मन्त्रदेवतायै ऐं। ५ँ ह्रीं मन्त्रदेवतायै ह्रीं। ५ँ श्रीं मन्त्रदेवतायै श्रीं। ५ँ हसखफ्रें मन्त्रदेवतायै हसखफ्रें। ५ँ हसौं मन्त्रदेवतायै हसौं।

मध्ये पद्मासने देव्यै पूजयेदेकयोगतः। आवाहनादिमुद्राश्च योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥२४॥
धूपं दीपं च नैवेद्यं दद्यात्तदुक्तमन्त्रतः। एवमागममभ्यर्च्य ततोऽष्टदलपङ्कजे ॥२५॥
मण्डलत्रितयं चैव परितो देशमध्यतः। वक्ष्यमाणैस्तथा मन्त्रैः पूजयेदुक्तमार्गतः ॥२६॥

५ँ हं सूर्यमण्डलाय हं नमः। ५ँ रं वह्निमण्डलाय रं नमः। ५ँ सं सोममण्डलाय सं नमः। ५ँ अष्टाविंशतिमण्डलेभ्यो नमः। ५ँ हस्रौं महाप्रेतपद्मासनाय हस्रौं नमः।

पद्ममध्ये प्रतिष्ठाप्य शिवलिङ्गं सुलक्षणम्। सार्घ्यं पुष्पाक्षतैस्तस्मिन् दक्षिपादोत्तराननम् ॥२७॥
वह्निप्रेतं तथा स्वाहां दक्षे वामे समर्चयेत्।

५ँ ह्रीं जातवेदसे ह्रीं ५ँ। ५ँ ॐह्रीं स्वाहायै ह्रींॐ ५ँ नमः।

वरशक्तिधरौ ध्यात्वा तयोर्नाभ्यम्बुजे सिते। एकारपरमं व्योम ध्यात्वा एमिति पूजयेत् ॥२८॥
देवदेव्यौ च तन्मध्ये समावाह्य प्रपूजयेत्। आवाहनादिका मुद्रा ध्यात्वा त्वङ्गं विधाय च ॥२९॥
गन्धपुष्पाक्षतैरर्घ्याद्युपचारान् प्रकल्पयेत्। पूर्वादिपद्मपत्रेषु मङ्गलाष्टकमर्चयेत् ॥३०॥

५ँ हूं मङ्गलमहाभैरवानन्दनाथ हूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ हीं ब्रह्माणीदेव्यम्बा ह्रीं ५ँ श्रीपा०। ५ँ सूं चर्चकमहाभैरवानन्दनाथ सूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ सीं माहेश्वरीदेव्यम्बा सीं ५ँ श्रीपा०। ५ँ क्षूं योगमहाभैरवानन्दनाथ क्षूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ क्षीं कौमारीदेव्यम्बा क्षीं ५ँ श्रीपा०। ५ँ मूं हरसिद्धमहाभैरवानन्दनाथ मूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ मीं वैष्णवीदेव्यम्बा मीं ५ँ श्रीपा०। ५ँ लूं भटमहाभैरवानन्दनाथ लूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ लीं वाराहीदेव्यम्बा लीं ५ँ श्रीपा०। ५ँ वूं किलिकिलिभैरवानन्दनाथ वूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ वीं इन्द्राणीदेव्यम्बा वीं ५ँ श्रीपा०। ५ँ यूं कालरात्रिमहाभैरवानन्दनाथ यूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ यीं चामुण्डादेव्यम्बा यीं ५ँ श्रीपा०। ५ँ रूं भीषणमहाभैरवानन्दनाथ रूं ५ँ श्रीपा०। ५ँ रीं कमलादेव्यम्बा रीं ५ँ श्रीपा०। अथ ध्यानम्—

वर्वरकेशहस्ताश्च देव्यो ललितविग्रहाः। कपालशूलहस्ताश्च देव्यो(व) वामाङ्गसंस्थिताः ॥३१॥
रक्तवर्णास्त्रिनेत्राश्च सर्वाभरणभूषिताः। सर्वे षोडशवर्षाश्च मदघूर्णितलोचनाः ॥३२॥
अष्टौ बीजविभिन्नांश्च कृत्वा नवमयोजितान्। सानुस्वारान् नवेशस्य कूटस्यैतत् पुरो यजेत् ॥३३॥
पञ्च तेषां शक्तयश्चानन्ताद्योऽनुग्रहात्मिकाः। अध ऊर्ध्वमधोर्ध्वान्तःप्रदेशक्रमतोऽर्चयेत् ॥३४॥

यथा—....(?) ५ँ आं आदिनाथगुरु आद्यम्बा आं ५ँ श्रीपा०। ५ँ अं अनादिगुरुनाथ अनाद्यम्बा अं ५ँ श्री०। ५ँ कुं कुलेश्वरगुरुनाथ कुलेश्वर्यम्बा कुं ५ँ श्री०। ५ँ अं अचिन्त्यगुरुनाथ अचिन्त्यम्बा अं ५ँ श्री०।

पञ्चोपचार पूजा करके शेष का अपनी आत्माग्नि में हवन करे। अपने को सुगन्धित तिलक आदि नाना आभरणों से यथाशक्ति समलंकृत करे। तदनन्तर इन मन्त्रों से आगममण्डल का अर्चन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अष्टाविंशतिक्रममण्डलेभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्सरौं महाप्रेतपद्मासनाय नमः ह्सरौं श्रीपादुकां पूजयामि। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं प्रणवमण्डलव्यापिपादाय विच्चे ऐं श्रीपादुकां पूजयामि। साथ ही प्रवहमान नासापुट से प्रणव से भी अर्चन करे।

इनकी पूजा अक्षत पुष्प अर्घ्य जल से करे। शाम्भव मण्डल स्थापित करके उसमें दक्षिण से उत्तर और मध्य में गुरु की उक्ति के अनुसार पूजा करे। तारसम्पुटित तार से मन्त्रदेवता की पूजा करे; जैसे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं मन्त्रदेवतायै ऐं, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं मन्त्रदेवतायै ह्रीं, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं मन्त्रदेवतायै श्रीं, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्सख्फ्रें मन्त्रदेवतायै ह्सख्फ्रें। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मध्य पद्मासन में देवी की पूजा एकयोग से करे। आवाहनादि के साथ योनि मुद्रा दिखावे। उक्त मन्त्र से धूप, दीप, नैवेद्य देवे। इस प्रकार से आगम की पूजा करके अष्टदल कमल में और तीन मण्डलों में चारो ओर और मध्य में इन मन्त्रों से पूजा उक्त रीति से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं सूर्यमण्डलाय हं नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं वह्निमण्डलाय रं नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं सोममण्डलाय सों नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अष्टाविंशतिमण्डलेभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्स्रौं महाप्रेतपद्मासनाय ह्स्रौं नमः।

पद्ममध्य में सुलक्षण शिवलिंग स्थापित करके अर्घ्य पुष्प अक्षत से पैर दक्षिण एवं उत्तर मुख में वह्निप्रेत एवं स्वाहा का दाँयें-बाँयें अर्चन करे, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं जातवेदसे ह्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ॐ ह्रीं स्वाहायै ह्रीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं नमः। वर एवं शक्ति धारण करने वाले का ध्यान करे। उसके श्वेत नाभि कमल में परम व्योम एकार का ध्यान करके ऐं की पूजा करे। उसके मध्य में देव-देवी का आवाहन करके पूजा करे। आवाहनादि मुद्रा का ध्यान करके अंगविधान करके गन्ध पुष्प अक्षत अर्घ्य आदि उपचारों से पूजा करे। पूर्वादि कमल दलों में मंगलाष्टक की पूजा इस प्रकार करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हूं मंगलमहाभैरवानन्दनाथ हुं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रीं ब्रह्माणीदेव्याम्बा ह्रीं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सूं चर्चकमहाभैरवानन्दनाथ सूं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सीं माहेश्वरीदेव्यम्बा सीं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षूं योगमहाभैरवानन्दनाथ क्षू ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षीं कौमारीदेव्यम्बा क्षीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मूं हर सिद्धमहाभैरवानन्दनाथ मूं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मीं वैष्णवीदेव्यम्बा मीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लूं भट महाभैरवानन्दनाथ लूं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लीं वाराहीदेव्यम्बा लीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं बूं किलि किलि भैरवानन्दनाथ वूं० ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वीं इन्द्राणीदेव्यम्बा वीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यूं कालरात्रिमहाभैरवानन्दनाथ यूं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यीं चामुण्डा देव्यम्बा यीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रूं भीषण महाभैरवानन्दनाथ रूं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रीं कमला देव्यम्बा रीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

वर्वरकेशहस्ताश्च देव्यो ललितविग्रहाः। कपालशूलहस्ताश्च देव्यो(व) वामाङ्गसंस्थिताः।।
रक्तवर्णास्त्रिनेत्राश्च सर्वाभरणभूषिताः। सर्वे षोडशवर्षाश्च मदघूर्णितलोचनाः।।
अष्टौ बीजविभिन्नांश्च कृत्वा नवमयोजितान्। सानुस्वारान् नवेशस्य कूटस्यैतत् पुरो यजेत्।।
पञ्च तेषां शक्तयश्चानन्ताद्योऽनुग्रहात्मिकाः। अध ऊर्ध्वमधोर्ध्वान्तःप्रदेशक्रमतोऽर्चयेत्।।

आठों बीजों को अलग-अलग करके नवम से योजित करे। सानुस्वार नवेश के कूट की पूजा पहले करे। अनन्त से अनुग्रह तक इनकी पाँच शक्तियाँ हैं। नीचे-ऊपर, नीचे-ऊपर एवं अन्तप्रदेश में क्रम से इनकी पूजा करे एवं ॐ ऐं ह्री श्रीं हसखफ्रें हसौं आं आदिनाथगुरु आद्यम्बा आं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अं अनादिगुरुनाथ अनाद्यम्बा अं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कुं कुलेश्वरगुरुनाथ कुलेश्वर्यम्बा कुं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अं अचिन्त्यगुरुनाथ अचिन्त्यम्बा अं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि।

एवं गुरुक्रमं पश्चात् परितो देवयोर्यजेत्। देवी श्रीगुरवो देवो यथा पीठे तथाविधाः ॥३५॥
पुनर्देव्याः समभ्यर्च्य लयाङ्गं हृदयादिषु। अङ्गषट्कं समभ्यर्च्य वह्नीशासुरवायुषु ॥३६॥
कोणेषु नेत्रं मध्ये च दिक्षु चास्त्रमिति क्रमात्। भोगाङ्गमिति धूपादि हृदयेन प्रकल्पयेत् ॥३७॥
यथाशक्ति जपं कुर्याद् विद्याद्वयमनन्यधीः।

नुत्वा स्तुत्वा 'नमो द्रुहिणवैकुण्ठ' इत्यादिश्लोकपञ्चकैः स्तवीत। अथ पूर्ववत्तत्तेजो बाह्ये पूजयेन्मण्डलत्रये।

इन्दुं प्रत्यग्रकुन्दाभं शशपृष्ठसमावृतम्। शूलासितर्जनीकार्धकरक्रमविभूषणम् ॥३८॥
साधकानुग्रहायान्तं त्र्यक्षमेतेन पूजयेत्।

५ँ ह्वौं निशाटननाथाय ह्वौं ५ँ श्री०।

मण्डले प्राच्यां तपनं पूर्वोक्तायुधलक्षणम्। अश्वपृष्ठे समासीनं पीतवर्णतनुं यजेत् ॥३९॥
५ँ ह्रौं सौराय ह्रौं ५ँ श्री०।

मध्ये च मण्डले वह्निं पूर्वोक्तायुधलक्षणम्। कुङ्कुमक्षोदसङ्काशं यजेन्मेषाधिरोहणम् ॥४०॥
५ँ क्ष्रौं कालानलाय क्ष्रौं ५ँ श्री०। श्रीनाथादिपराषट्कपर्यन्तं पूजयेत्।

ततो विघ्नविनाशाय हेरम्बं स्वस्य वामतः। आवाहयेद् हृदि स्थितं मण्डले चतुरस्रके ॥४१॥
ग्लामित्यादिना षडङ्गं विधाय ध्यायेत्।

सितो गजास्यः परशुं दन्तकार्धं त्रिशूलकम्। भुजैश्चतुर्भिर्बिभ्राणो मूषकोपरि संस्थितः ॥४२॥
लक्षैकाद्विघ्नसङ्घातं हरतीति राजवचः? (गजाननः)।

५ँ ग्लौं हेरम्बाय ग्लौं ५ँ श्री०। ततः परेश्वरं ध्यायेत्। आद्यं मन्त्रं निवेदयेत्। ततो गुरुक्रमम्। हेरम्बमण्डलाधःस्थत्रिकोणे मण्डले साधारे पात्रं प्रतिष्ठाप्य पञ्चप्रणवैर्गन्धपुष्पाक्षतैरभ्यर्च्य प्रथमद्वितीयसहितमर्घ्याम्बुपूर्णसलिलं बलिं '५ँ ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं फट् स्वाहा' अनेन पङ्क्त्याकारेण बलिं दद्यात्। खेचरीमुद्रां योनिमुद्रां प्रदर्श्याज्ञापुरःसरं भूतानि वेष्टितं पात्रं तर्जन्या संप्रदर्शयेत्। हुंहुंहुं तदीयं मन्त्रं तु हृद्याकलय्य बलिं क्षिपेत्। ततोऽर्घ्यजलेनावाह्य च संप्रोक्ष्य तत् स्वात्मनि जुहुयात्। लिङ्गागमात्मनामैक्यबुद्ध्या कुर्यात् यथेच्छया पुनः शिरसि गुरुक्रमम्।

महाश्मशानमभ्यर्च्य क्षेत्रं पीठमनन्तरम्। वृक्षं वल्लीं समभ्यर्च्य पालकानपि मण्डले ॥४३॥
ततोऽर्चयेच्छिरीषादीन् वृक्षांश्चण्डादिभैरवान्। अनन्ताद्यांस्तथा नागान् पूर्वादीशान्तमादरात् ॥४४॥
असिचर्मधरानष्टौ मानुषोत्तमविग्रहान्।

तद्यथा—५ँ महाश्मशानाय नमः। ५ँ प्रयागक्षेत्राय नमः। ५ँ परापरपीठाय नमः। ५ँ कल्पवृक्षाय नमः। ५ँ ज्योतिष्मतीवल्ल्यै नमः। ५ँ पालकेभ्यो नमः। अग्निकोणमारभ्य—५ँ शिरीषाय नमः। ५ँ करञ्जाय नमः। ५ँ अश्वत्थाय नमः। ५ँ प्लक्षाय नमः। ५ँ अशोकाय नमः। ५ँ रक्ताशोकाय नमः। ५ँ चूताय नमः। ५ँ वटकाय नमः।

५ँ चण्डभैरवाय नमः। ५ँ क्रोधभैरवाय नमः। ५ँ गं गह्वरभैरवाय नमः। ५ँ बालामालाकुल-भैरवाय नमः। ५ँ भीषणाट्टहासभैरवाय नमः। ५ँ घोरान्धकारभैरवाय नमः। ५ँ लक्ष्मीभैरवाय नमः। ५ँ करालभैरवाय नमः। ५ँ अनन्ताय नमः। ५ँ वासुकये नमः। ५ँ तक्षकाय नमः। ५ँ कर्कोटाय नमः। ५ँ शङ्खाय नमः। ५ँ महाशङ्खाय नमः। ५ँ पद्माय नमः। ५ँ महापद्माय नमः। अथ ध्यानम्—

दृश्योर्ध्वाङ्गान् भीषणाभान् वृक्षस्कन्धसमाश्रितान्। त्रिशूलकर्तृमुण्डाग्रान् ध्वजं चासृक्कपालकम् ॥१॥
बिभ्राणांस्तर्जितकरान् जानुन्यस्तमुखाम्बुजान्। विलम्बितैकचरणान् महाश्मशानपालकान् ॥२॥
पीतरक्तनीलसितहरित्कृष्णारुणप्रभान् । श्वेतोष्ठभान् हरिव्याघ्रशिवेभतुरगाननान् ॥३॥
भल्लूकवृषभव्याघ्रहरिवक्त्रांश्च भैरवान्। असिचर्मधरान् नागान् मानुषोत्तमविग्रहान् ॥४॥
एवं सम्यक् समभ्यर्च्य क्षेत्ररक्षां विधाय च। एतानेव स्वदेहस्थान् सञ्चिन्त्यान्नं निवेदयेत् ॥५॥

इस प्रकार गुरुक्रम की पूजा करने के बाद चारो ओर देवों की पूजा करे। देवी, श्रीगुरु, देव पूजा करे। पुनः देवी की पूजा करके हृदयादि में लयाङ्ग पूजा करे। अंगषट्क की पूजा अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य, वायु कोणों में; नेत्र की पूजा मध्य में एवं चारो दिशाओं में अस्त्र की पूजा करे। भोगांग धूपादि हृदय से कल्पित करे। दोनों विद्याओं का जप यथाशक्ति एकाग्रता से करे। प्रणाम करके स्तुति 'नमो द्रुहिण वैकुण्ठ' इत्यादि पाँच श्लोकों से करे। उसके बाहर पूर्ववत् तीनों तेजो की पूजा मण्डलों में पूजा करे। मण्डल के पश्चिम में त्रिनेत्र की पूजा ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रौं निशाटननाथाय ह्रौं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि से करे। मण्डल के पूर्व में अश्व पर आरूढ पीत वर्ण तनु की पूजा मन्त्र से करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रौं सौराय ह्रौं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। मण्डल के मध्य में पूर्वोक्त मेषारूढ अग्नि की पूजा ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्ष्रौं कालानलाय क्ष्रौं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि मन्त्र से करे। इस प्रकार श्रीनाथादि पराषट्क तक पूजा करे।

तब विघ्नविनाश के लिये हेरम्ब की पूजा अपने बाँयें भाग में आवाहन करके चतुरस्र मण्डल में करे। ग्लां ग्लीं इत्यादि से न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

सितो गजास्यः परशुं दन्तकार्धं त्रिशूलकम्। भुजैश्चतुर्भिर्बिभ्राणो मूषकोपरि संस्थितः।।
लक्षैकाद्विघ्नसङ्घातं हरतीति गजाननः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ग्लौं हेरम्बाय ग्लौं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करे। तब परेश्वर का ध्यान करे। आद्य मन्त्र से निवेदन करे। तब गुरुक्रम का पूजन करे। हेरम्ब मण्डल के नीचे त्रिकोण मण्डल में आधार पर पात्र रखकर पाँच प्रणवों से गन्धाक्षत पुष्प से पूजा करे। प्रथम द्वितीय सहित अर्घ्याम्बुपूर्ण सलिल से बलि दे। 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं फट् स्वाहा'—इस मन्त्र से पंक्ति के आकार में बलि प्रदान करे। खेचरी मुद्रा, योनिमुद्रा दिखाये। आज्ञा लेकर भूतों से वेष्टि पात्र को तर्जनी से प्रदर्शित करे। 'हुं हुं हुं' मन्त्र से बलि प्रदान करे। तदनन्तर अर्घ्य जल से आवाहन एवं प्रोक्षण करके आत्मा में आहुति दे। लिङ्ग और अपने में ऐक्य बुद्धि की भावना करके इच्छानुसार पुनः शिर पर गुरुक्रम की पूजा करे। तदनन्तर महाश्मशान आदि की पूजा इस प्रकार करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं महाश्मशानाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं प्रयागक्षेत्राय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं परापरपीठाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कल्पवृक्षाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ज्योतिष्मतीवल्ल्यै नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं पालकेभ्यो नमः।

अग्नि कोण आरम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से इनका पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शिरीषाय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं करञ्जाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अश्वत्थाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं प्लक्षाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अशोकाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रक्ताशोकाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं चूताय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वटकाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं चण्डभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्रोधभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें

हसौं गं गह्वरभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं बालामालाकुलभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं भीषणाट्टहासभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं घोरान्धकारभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लक्ष्मीभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं करालभैरवाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अनन्ताय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वासुकये नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं तक्षकाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कर्कोटाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शङ्खाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं महाशङ्खाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं पद्माय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं महापद्माय नमः। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

दृश्योर्ध्वाङ्गान् भीषणाभान् वृक्षस्कन्धसमाश्रितान्। त्रिशूलकर्तृमुण्डाग्रान् ध्वजं चासृक्कपालकम्।।
बिभ्राणांस्तर्जितकरान् जानुन्यस्तमुखाम्बुजान्। विलम्बितैकचरणान् महाश्मशानपालकान्।।
पीतरक्तनीलसितहरित्कृष्णारुणप्रभान्। श्वेतोष्ठभान् हरिव्याघ्रशिवेभतुरगाननान्।।
भल्लूकवृषभव्याघ्रहरिवक्त्रांश्च भैरवान्। असिचर्मधरान् नागान् मानुषोत्तमविग्रहान्।।

इस प्रकार सम्यक् पूजा एवं क्षेत्ररक्षा करने के पश्चात् अपने देह में इनका चिन्तन करके अन्न निवेदित करे।

तिरस्करिण्यार्चाध्यानादिकम्

अथ तिरस्करिणीं प्रपूजयेत्। ततो गुरुक्रमम्। हसक्लीं नमः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। भगवति तर्जनीभ्यां नमः। माहेश्वरि मध्यमाभ्यां नमः। सर्वपशुजनचक्षुस्तिरस्करणं अनामिकाभ्यां नमः। कुरुकुरु कनिष्ठिकाभ्यां नमः। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एवमेव हृदयादि व्यापकं विन्यस्य ध्यायेत्।

मुक्तकेशीं विवस्त्राङ्गीं सर्वालङ्कारभूषिताम्। स्वयोनिदर्शनान्मुह्यत्पशुवर्गामनुस्मरेत् ।।१।।
ततो हृत्पद्ममध्यस्थां त्रिकोणान्तर्निवासिनीम्। तिरस्करणिकां ध्यायेद्भक्तसंरक्षणोत्सुकाम् ।।२।।
श्यामवर्णां मदाघूर्णरक्तनेत्रत्रयान्विताम्। कृष्णाम्बरां गदां खड्गं दधतीं च भुजद्वये ।।३।।
दोर्भ्यां मनोहराभ्यां च खर्जूरीकुम्भधारिणीम्।
नीलं तुरङ्गमधिरुह्य सुशोभमाना नीलांशुकाभरणमाल्यविभूषणाढ्या।
निद्रापटेन भुवनानि तिरोदधाना खड्गायुधा भगवती परिपातु चास्मान् ।।४।।

इति पञ्चोपचारान् परिकल्प्य हेतुपुष्पाक्षतादिभिः पूजागृहाद्बहिः परिपूज्यान्धो रक्षां विधाय, ५ँ हसक्लीं नमो भगवति माहेश्वरि सर्वपशुजनचक्षुस्तिरस्करणं कुरु कुरु स्वाहा। पुनः शिरसि गुरुक्रमम्।

मानसादिपृथिव्यन्तं षडन्वयसुधोदधेः। मरीचिवीचिनिचये चचार चतुरान्तरः ।।१।।
इति मानसक्रमपूजापद्धतिः। श्रीशाम्भवगुरवे नमः।

तदनन्तर तिरस्करिणी की पूजा करके गुरुक्रम का पूजन कर इस प्रकार न्यास करे—हसक्लीं नमः अगुष्ठाभ्यां नमः, भगवति तर्जनीभ्यां नमः, माहेश्वरि मध्यमाभ्यां नमः, सर्वपशुजनचक्षुस्तिरस्करणं अनामिकाभ्यां नमः, कुरु कुरु कनिष्ठकाभ्यां नमः, स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इसी प्रकार हृदयादि न्यास करके व्यापक न्यास करने के बाद खुले बालों वाली, वस्त्ररहित अंगों वाली, समस्त अलंकारों से अलंकृत, अपनी योनि का दर्शन कराकर पशुओं को मोहित करने वाली देवी का स्मरण करे। तदनन्तर हृदय कमल के मध्य में स्थित त्रिकोण के मध्य में निवास करने वाली एवं भक्तों की रक्षा के सर्वदा उत्सुक तिरस्करणिका का इस प्रकार ध्यान करे—

श्यामवर्णां मदाघूर्णरक्तनेत्रत्रयान्विताम्। कृष्णाम्बरां गदां खड्गं दधतीं च भुजद्वये।।
दोर्भ्यां मनोहराभ्यां च खर्जूरीकुम्भधारिणीम्।
नीलं तुरङ्गमधिरुह्य सुशोभमाना नीलांशुकाभरणमाल्यविभूषणाढ्या।
निद्रापटेन भुवनानि तिरोदधाना खड्गायुधा भगवती परिपातु चास्मान्।।

पञ्चोपचार परिकल्पित कर मदिरा पुष्प अक्षत लेकर पूजा गृह के बाहर पूजा करे। रक्षा विधान करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं

हसखफ्रें हसौं हसक्लीं नमो भगवति माहेश्वरि सर्वपशुजनचक्षुस्तिरस्करणं कुरु कुरु स्वाहा से पुनः शिर पर गुरुक्रम का स्मरण करे। इस प्रकार मानस क्रम पूजा पद्धति का वर्णन समाप्त हुआ।

नाभसरश्मिपूजा

अथ नाभसरश्मिक्रमः।

कूटं विच्चेश्वरस्याथ विशुद्धौ स्फटिकोपमम्। तदुद्भवं तथा देवमात्मानं हृदि भावयेत्॥१॥
शुद्धस्फटिकसङ्काशं षड्वक्त्रं द्वादशांघ्रिकम्। भैरवाभं शूलचक्राङ्कुशपाशशरान् वरम्॥२॥
दक्षे वामे तथा शङ्खध्वजाहिनृमुखं दधत्। चापाभये च बिभ्राणस्तद्वद् देवीं कुलेश्वरीम्॥३॥
ध्यायेदिति शेषः। दक्षोर्ध्ववामोर्ध्वक्रमत आयुधध्यानम्।

देवी च देववर्णाभा तत्प्रभावा तथास्थिता। खड्गकार्धचापशरपाशाङ्कुशाभयवरान् ॥४॥
पुस्तजाप्यशूलकादीन् संदधत्यङ्गमण्डले।

इति ध्यात्वा, ५ँ हस्त्रां फ्रां ५ँ इत्यादिनाङ्गन्यासं विधाय, शिरसि षट्कोणे पूर्वादीशान्तं षट्त्रिंशद्रश्मीन् भावयेत्। ५ँ हं हृदयानन्दनाथ कौलिनीपराम्बा हं ५ँ श्रीपा०। ५ँ धं धरानन्दनाथ धात्रीपराम्बा धं ५ँ श्री०। ५ँ भां भावानन्दनाथ विश्वात्मिकापराम्बा भां ५ँ श्री०। ५ँ भं भवानन्दनाथ योगिनीपराम्बा भं ५ँ श्री०। ५ँ मं महानन्दनाथ ब्रह्मपराम्बा मं ५ँ श्री०। ५ँ सं सर्वानन्दनाथ शाम्भवीपराम्बा सं ५ँ श्री०। (६) इति पूर्वकोणे। ५ँ द्रं द्रवानन्दनाथ कालिकापराम्बा द्रं ५ँ श्री०। ५ँ रं रमानन्दनाथ दुष्टचाण्डालीपराम्बा रं ५ँ श्री०। ५ँ मं मोहानन्दनाथ अघोरापराम्बा मं ५ँ श्री०। ५ँ मं मनोभवानन्दनाथ हेलापराम्बा मं ५ँ श्री०। ५ँ सं सेकानन्दनाथ महारक्तापराम्बा सं ५ँ श्री०। ५ँ जं ज्ञानानन्दनाथ कुब्जिकापराम्बा जं ५ँ श्री०। (६) इत्याग्नेयकोणे। ५ँ खं खेटानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा खं ५ँ श्री०। ५ँ ज्वं ज्वालानन्दनाथ राकिणीपराम्बा ज्वं ५ँ श्री०। ५ँ मं महाङ्कुशानन्दनाथ लाकिनीपराम्बा मं ५ँ श्री०। ५ँ शं श्रेयोज्वालानन्दनाथ काकिनीपराम्बा शं ५ँ श्री०। ५ँ तं तेजसानन्दनाथ शाकिनीपराम्बा तं ५ँ श्री। ५ँ मं मूर्धानन्दनाथ हाकिनीपराम्बा मं ५ँ श्री०। (६) इति नैर्ऋत्यकोणे। ५ँ वं वायव्यानन्दनाथ पद्मापराम्बा वं ५ँ श्री०। ५ँ कुं कुलानन्दनाथ सिंहापराम्बा कुं ५ँ श्री। ५ँ सं संहारानन्दनाथ कुलाम्बिकापराम्बा सं ५ँ श्री०। ५ँ वं विश्वम्भरानन्दनाथ कामापराम्बा वं ५ँ श्री०। ५ँ कं कौटिकानन्दनाथ कूर्ममातापराम्बा कं ५ँ श्री०। ५ँ गं गालवानन्दनाथ कंकालीपराम्बा गं ५ँ श्री०। (६) इति पश्चिमकोणे। ५ँ वं व्योमानन्दनाथ व्योमापराम्बा वं ५ँ श्री०। ५ँ शं श्वासानन्दनाथ नादापराम्बा शं ५ँ श्री०। ५ँ खं खेचरानन्दनाथ महिमापराम्बा खं ५ँ श्री०। ५ँ बं बहुलानन्दनाथ महामायापराम्बा बं ५ँ श्री०। ५ँ ज्ञां ज्ञानानन्दनाथ कुण्डलीपराम्बा ज्ञां ५ँ श्री०। ५ँ वं विश्वानन्दनाथ उन्मनीपराम्बा वं ५ँ श्री०। (६) इति वायव्यकोणे। ५ँ आं आज्ञानन्दनाथ इन्धिकापराम्बा आं ५ँ श्री०। ५ँ मं मदनानन्दनाथ दीपिकापराम्बा मं ५ँ श्री०। ५ँ यं यशानन्दनाथ रेचिकापराम्बा यं ५ँ श्री०। ५ँ शं शङ्खोदयानन्दनाथ मोचिकापराम्बा शं ५ँ श्री०। ५ँ वं वरानन्दनाथ चित्तिपराम्बा वं ५ँ श्री०। ५ँ पं परानन्दनाथ परापराम्बा पं ५ँ श्री०। (६) इतीशानकोणे। अथ रश्मिध्यानम्—

शुक्लं रक्तं श्यामलं च धूम्राभं च रविप्रभम्। षट्कं स्फटिकसङ्काशं षट्कं षट्कं क्रमेण तु॥१॥
वराभययुताः सर्वा नाभसक्रमदेवताः। नत्वा स्तुत्वा मनुं जप्त्वा नाभसक्रममाचरेत्॥२॥

इति विच्चेश्वरक्रमः। हस्त्रीं हसरफ्रामित्यादिनाङ्गन्यासः।

नाभस रश्मिक्रम—विशुद्धि में स्फटिक के समान विच्चेश्वर कूट का उद्भव एवं देवता का अपने हृदय में इस प्रकार ध्यान करे—

शुद्धस्फटिकसङ्काशं षड्वक्त्रं द्वादशांघ्रिकम्। भैरवाभं शूलचक्राङ्कुशपाशशरान् वरम्।।
दक्षे वामे तथा शङ्खध्वजाहिनृमुखं दधत्। चापाभये च बिभ्राणस्तद्वद् देवीं कुलेश्वरीम्।।

देवी च देववर्णाभा तत्प्रभावा तथास्थिता। खड्गकार्धचापशरपाशाङ्कुशाभयवरान्।।
पुस्तजाप्यशूलकादीन् संदधत्यङ्गमण्डले।

इस प्रकार का ध्यान इत्यादि करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्स्रां फ्रां ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं इत्यादि से अंगन्यास करे। शिर के षट्कोण में पूर्व से ईशान तक छत्तीस रश्मियों की भावना करके पूर्व कोण में इन छ: रश्मियों का उनके मन्त्रों से इस प्रकार पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं हृदयानन्दनाथ कौलिनीपराम्बा हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं धं धरानन्दनाथ धात्रीपराम्बा धं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं भां भावानन्दनाथ विश्वात्मिकापराम्बा भां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं भं भवानन्दनाथ योगिनीपराम्बा भं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं महानन्दनाथ ब्रह्मपराम्बा मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं सर्वानन्दनाथ शाम्भवीपराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

आग्नेय कोण में इन छ: रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं द्रं द्रवानन्दनाथ कालिकापराम्बा द्रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं रमानन्दनाथ दुष्टचाण्डालीपराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं मोहानन्दनाथ अघोरापराम्बा मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं मनोभवानन्दनाथ हेलापराम्बा मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं सेकानन्दनाथ महारक्तापराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं जं ज्ञानानन्दनाथ कुब्जिकापराम्बा जं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

नैर्ऋत्य कोण में अग्रांकित छ: रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं खं खेटानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा खं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ज्वं ज्वालानन्दनाथ राकिणीपराम्बा ज्वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं महाङ्कुशानन्दनाथ लाकिनीपराम्बा मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शं श्रेयोज्वालानन्दनाथ काकिनीपराम्बा शं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं तं तेजसानन्दनाथ शाकिनीपराम्बा तं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं मूर्धानन्दनाथ हाकिनीपराम्बा मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

तदनन्तर पश्चिम कोण में इन छ: रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं वायव्यानन्दनाथ पद्मापराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कुं कुलानन्दनाथ सिंहापराम्बा कुं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं संहारानन्दनाथ कुलाम्बिकापराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं विश्वम्भरानन्दनाथ कामापराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कं कौटिकानन्दनाथ कूर्ममातापराम्बा कं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं गं गालवानन्दनाथ कंकालीपराम्बा गं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

वायव्य कोण में इन छ: रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं व्योमानन्दनाथ व्योमापराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शं श्वासानन्दनाथ नादापराम्बा शं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं खं खेचरानन्दनाथ महिमापराम्बा खं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं बं बहुलानन्दनाथ महामायापराम्बा बं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ज्ञां ज्ञानानन्दनाथ कुण्डलीपराम्बा ज्ञां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं विश्वानन्दनाथ उन्मनीपराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

ईशान कोण में शेष इन छ: रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं आं आज्ञानन्दनाथ इन्धिकापराम्बा आं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं मदनानन्दनाथ दीपिकापराम्बा मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें

हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं यशानन्दनाथ रेचिकापराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शं शङ्खोदयानन्दनाथ मोचिकापराम्बा शं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं वरानन्दनाथ चित्तिपराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं पं परानन्दनाथ परापराम्बा पं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इस प्रकार उपर्युक्त छत्तीस रश्मियों का पूजन करने के पश्चात् निम्नवत् उनका ध्यान करे—

श्वेत, लाल, श्यामल, धूम्राभ, सूर्यप्रभ एवं स्फटिक वर्ण के छः छः के क्रम से वर एवं अभय से युक्त सभी नाभस रश्मियों के देवता को प्रणाम एवं स्तुति करके उनका मन्त्रजप करके नाभस क्रम का आचरण करे।

यही विच्चेश्वर क्रम होता है। ह्स्रीं हसरफ्रां इत्यादि से इसका अंगन्यास किया जाता है।

हंसेश्वरकूटध्यानं वायव्यरश्मिपूजा च

कूटं हंसेश्वरस्याथ धूम्राभं हृदि भावयेत्। तदुद्भवं तथा देवमात्मानं परिभावयेत्॥१॥

ध्यानं विच्चेश्वरवत्। पुनर्गुरुक्रमम्। शिरसि षट्कोणे पूर्वादीशान्तं सप्तविंशतिरश्मीन् भावयेत्। ५ँ लमयरूं खगेश्वरानन्दनाथ भद्रापराम्बा लमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ लमयरूं कूर्मानन्दनाथ माधवीपराम्बा लमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ लमयरूं मेघानन्दनाथ केशापराम्बा लमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ लमयरूं मीनानन्दनाथ मल्लीपराम्बा लमयरूं ५ँ श्री०। (४) इति पूर्वकोणे। ५ँ वमयरूं ज्ञानानन्दनाथ विमलापराम्बा वमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ वमयरूं महानन्दनाथ शाम्बरीपराम्बा वमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ वमयरूं तीव्रानन्दनाथ लीलापराम्बा वमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ वमयरूं प्रियानन्दनाथ कुमुन्दापराम्बा वमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ वमयरूं कौलिकानन्दनाथ मेनकापराम्बा वमयरूं ५ँ श्री०। (५) इत्यग्निकोणे। ५ँ रमयरूं डामरानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा रमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ रमयरूं रामरानन्दनाथ राकिणीपराम्बा रमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ रमयरूं लामरानन्दनाथ लाकिनीपराम्बा रमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ रमयरूं कामरानन्दनाथ काकिनीपराम्बा रमरयूं ५ँ श्री०। ५ँ रमयरूं सामरानन्दनाथ शाकिनीपराम्बा रमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ रमयरूं हामरानन्दनाथ हाकिनीपराम्बा रमयरूं ५ँ श्री०। (६) इति नैर्ऋत्यकोणे। ५ँ यमयरूं आधारेशानन्दनाथ रक्तापराम्बा यमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ यमयरूं चक्रेशानन्दनाथ बिन्दुपराम्बा यमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ यमयरूं कुरङ्गीशानन्दनाथ कुलापराम्बा यमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ यमयरूं समुद्रेशानन्दनाथ कुब्जि-कापराम्बा यमयरूं ५ँ श्री०। (४) इति पश्चिमकोणे। ५ँ हमयरूं हृदीशानन्दनाथ कमलापराम्बा हमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ हमयरूं गिरिशानन्दनाथ कुटिकदीधितिकापराम्बा हमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ हमयरूं शिखेशानन्दनाथ कर्बुरापराम्बा हमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ हमयरूं वर्मीशानन्दनाथ बहुरूपापराम्बा हमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ हमयरूं आग्नेशानन्दनाथ महत्तारीपराम्बा हमयरूं ५ँ श्री०। (५) इति वायव्यकोणे। ५ँ समयरूं परगुर्वानन्दनाथ मङ्गलापराम्बा समयरूं ५ँ श्री०। ५ँ समयरूं पराधिकारगुर्वानन्दनाथ कौसलीपराम्बा समयरूं ५ँ श्री०। ५ँ समयरूं पूज्यगुर्वानन्दनाथ समानीपराम्बा समयरूं ५ँ श्री०। (३) इतीशानकोणे रश्मित्रयं पूजयेत्। अथ रश्मिध्यानम्—

पीतं चतुष्कं श्यामं तु पञ्चकं रक्तसन्निभम्। षट्कं चतुष्कं श्यामं तु धूम्राभं पञ्चकं पुनः॥१॥
चन्द्रप्रभं त्रिकं सर्वे बालसूर्यसमप्रभाः। वरदाभयहस्ताश्च मदघूर्णितलोचनाः॥२॥
नत्वा स्तुत्वा मनुं जप्त्वा वायव्यक्रममाचरेत्।

पुनर्गुरुक्रममिति हंसेश्वरक्रमः।

'हंसेश्वर क्रम' अर्थात् वायव्य क्रम में हंसेश्वर कूट की भावना धूम्राभ वर्ण का करे। उसी से अपने देवात्मा के उद्भूत होने की भावना करे। विच्चेश्वर के समान ध्यान करे। तदनन्तर गुरुक्रम का पूजन कर शिर पर षट्कोण में पूर्व से पश्चिम तक सत्ताईस रश्मियों की भावना करते हुये पूर्वकोण में इन चार रश्मियों का उनके मन्त्रों से इस प्रकार पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लमयरूं खगेश्वरानन्दनाथ भद्रापराम्बा लमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लमयरूं कूर्मानन्दनाथ माधवीपराम्बा लमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लमयरूं

मेघानन्दनाथ केशापराम्बा लमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लमयरूं मीनानन्दनाथ मल्लीपराम्बा लमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

अग्नि कोण में अग्राङ्कित पाँच रश्मियों का उनके मन्त्रों से इस प्रकार पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वमयरूं ज्ञानानन्दनाथ विमलापराम्बा वमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वमयरूं महानन्दनाथ शाम्बरीपराम्बा वमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वमयरूं तीव्रानन्दनाथ लीलापराम्बा वमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वमयरूं प्रियानन्दनाथ कुमुन्दापराम्बा वमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वमयरूं कौलिकानन्दनाथ मेनकापराम्बा वमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

नैर्ऋत्य कोण में छः रश्मियों का उनके मन्त्रों से इन प्रकार पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं डामरानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं रामरानन्दनाथ राकिणी-पराम्बा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं लामरानन्दनाथ लाकिनीपराम्बा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं कामरानन्दनाथ काकिनीपराम्बा रमरयूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं सामरानन्दनाथ शाकिनीपराम्बा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं हामरानन्दनाथ हाकिनीपराम्बा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

पश्चिम कोण में चार रश्मियों का उनके मन्त्रों से इस प्रकार पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यमयरूं आधारे-शानन्दनाथ रक्तापराम्बा यमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यमयरूं चक्रेशा-नन्दनाथ बिन्दुपराम्बा यमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यमयरूं कुरङ्गीशा-नन्दनाथ कुलापराम्बा यमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यमयरूं समुद्रेशानन्दनाथ कुब्जिकापराम्बा यमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

वायव्य कोण में पाँच रश्मियों का उनके मन्त्रों से इस प्रकार पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हमयरूं हृदीशा-नन्दनाथ कमलापराम्बा हमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हमयरूं गिरिशा-नन्दनाथ कुटिकदीधितिकापराम्बा हमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हमयरूं शिखेशानन्दनाथ कर्बुरापराम्बा हमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हमयरूं वर्मीशानन्दनाथ बहुरूपापराम्बा हमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हमयरूं आम्रेशानन्दनाथ महत्तारीपराम्बा हमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ईशान कोण में शेष तीन रश्मियों का उनके मन्त्रों से इस प्रकार पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं समयरूं पर-गुर्वानन्दनाथ मङ्गलापराम्बा समयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं समयरूं पराधिकारगुर्वानन्दनाथ कौसलीपराम्बा समयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं समयरूं पूज्यगुर्वानन्दनाथ समानीपराम्बा समयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

इन रश्मियों में चार पीली, पाँच श्याम, छः लाल, चार श्याम, पाँच धूम्राभ एवं तीन चन्द्रप्रभ होती हैं। सभी बाल सूर्य के समान हैं एवं हाथों में वर तथा अभय धारण की हुई हैं; साथ ही मद्य से पूरित नेत्रों वाली हैं। इन्हें प्रणाम करे, स्तुति करे और इनका मन्त्रजप करे। इस प्रकार वायव्य क्रम का अनुसरण कर पुनः गुरुक्रम का पूजन करे।

संवर्तकेश्वरक्रमः न्यासः तैजसरश्मिपूजा च

अथ संवर्तकेश्वरक्रमः। ध्यानम्—

कूटं सप्तमकं ध्यात्वा संवर्तेशस्य सादरात्। उदयार्कसमप्रख्यं स्वाधिष्ठाने तदुद्भवम् ॥१॥

देवं विभावयेत् पश्चात् सम्यक् सूत्रोक्तमार्गतः । भिन्ननीलाञ्जनप्रख्यं तिथिनेत्रं दशाङ्घ्रिकम् ॥२॥
लसद्दंष्ट्राकरालास्यं वर्बरोर्ध्वशिरोरुहम् । द्विरष्टवर्षदेशीयं रत्नसर्पास्थिचर्चितम् ॥३॥
यावद्भूषणसंयुक्तमेकपादकजास्थितम् । पञ्चासनासने वह्निनाभिपद्माङ्गुलीयकम् ॥४॥
मुण्डमालाचर्चिताङ्गं गन्धादिकुसुमाञ्चितम् । आन्त्रालिबद्धकट्टारकटिकाञ्चीपदाञ्चितम् ॥५॥
अस्य दक्षिणदोर्दण्डे शस्त्राणि विविधानि च । शूलं चक्रं ध्वजं दानं दधद्वामे परं शृणु ॥६॥
पारिजातं जाप्यमालां पुस्तकं चाभयं प्रिये । शेषाभ्यां चैव बाहुभ्यां ब्रह्मचर्मविदारणे ॥७॥
ततो रक्तनिभं श्लोकं (कूटं) तुरीयं योनिमध्यतः । ध्यात्वा तद्रश्मिसम्भूतं देवीरूपमनन्यधीः ॥८॥
स्वात्मानं मूलसूत्रोक्तक्रमात् सम्यग् विभावयेत् । सहस्रभेदसंभिन्ना नित्येयं श्रीमहाचितिः ॥९॥
तेभ्यः सारतरा मूर्तिः समयाख्या निगद्यते । अतसीपुष्पसङ्काशशरीरांशुधरा चितिः ॥१०॥
दशास्या वा षडास्या वा विंशत्यास्या शतोन्मुखी । सहस्ररश्मिसंघातसंपूर्णस्फुरदीक्षणा ॥११॥
शूलकार्धं चापशरखड्गवरधरा चितिः । सृणिपाशचक्रशंखगदारत्नविभूषिता ॥१२॥
डिण्डीडमरुवज्राख्यभुशुण्डीशूलपाणिनी । शक्तिशल्यलसत्कुन्तसर्पजाप्यार्ध(ख्य)धारिणी ॥१३॥

इति ध्यानम्। अथ संवर्तेश्वरन्यासः—५ँ हं व्योमानन्दनाथ रजनीपराम्बा हं ५ँ करतलाभ्यां नमः। ५ँ सं चिदानन्दनाथ चितिपराम्बा सं ५ँ करपृष्ठाभ्यां नमः। ५ँ क्षं अहङ्कारानन्दनाथ क्रोधिनीपराम्बा क्षं ५ँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ५ँ मं बुद्ध्यानन्दनाथ कुलवागीश्वरीपराम्बा मं ५ँ तर्जनीभ्यां नमः। ५ँ लं ऋध्यानन्दनाथ मातृकापराम्बा लं ५ँ मध्यमाभ्यां नमः। ५ँ वं अमृतानन्दनाथ देवद्रवीपराम्बा वं ५ँ अनामिकाभ्यां नमः। ५ँ यं अचलानन्दनाथ चलापराम्बा यं ५ँ कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ५ँ रं दीप्तानन्दनाथ ज्वालिनीपराम्बा रं ५ँ करपृष्ठाभ्यां नमः। ५ँ ऊं प्रकृतीशानन्दनाथ प्रकृतीपराम्बा ऊं करतलाभ्यां नमः। इति करन्यासः। ५ँ हंसं विशुद्धानन्दनाथ शङ्खिनीपराम्बा हंसं ५ँ हृदयाय नमः। ५ँ क्षंमं प्राणानन्दनाथ योगीश्वरीपराम्बा क्षंमं ५ँ शिरसे स्वाहा। ५ँ लंवं ज्ञानानन्दनाथ बिन्दुपराम्बा लंवं ५ँ शिखायै वषट्। ५ँ यंरं व्यापकानन्दनाथ इन्धिकापराम्बा यंरं ५ँ कवचाय हुं। ५ँ ऊं विस्तारानन्दनाथ विस्तारापराम्बा ऊं ५ँ नेत्रत्रयाय वौषट्। ५ँ अंअः शूरानन्दनाथ प्रीतवतीपराम्बा अंअः ५ँ अस्त्राय फट्। इत्यङ्गन्यासः। ५ँ हंसं कालवक्त्रानन्दनाथ योगीश्वरीपराम्बा संहं ५ँ पश्चिमवक्त्राय नमः। ५ँ क्षंमं रौद्रवक्त्रानन्दनाथ संहारिणीपराम्बा मंक्षं ५ँ उत्तरवक्त्राय नमः। ५ँ लंवं विश्वग्रसनानन्दनाथ दहनीपराम्बा वंलं ५ँ दक्षिणवक्त्राय नमः। ५ँ यंरं प्रकाशानन्दनाथ ज्योतिष्पराम्बा रंयं ५ँ पूर्ववक्त्राय नमः। ५ँ ऊं हर्षानन्दनाथ अमृतवाहिनीपराम्बा ऊं ५ँ ऊर्ध्ववक्त्राय नमः। ५ँ अंअः परानन्दनाथ परापराम्बा अःअं ५ँ परापरवक्त्राय नमः। इति वक्त्रन्यासः। अथ करन्यासः—५ँ ऐं नित्ये भगवति हसखफ्रें कुलेश्वरि ५ँ कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ५ँ ह्रांह्रूंह्रींह्लांह्लूंह्लींह्यैंहंहौं ङञणनमे ५ँ अनामिकाभ्यां नमः। ५ँ क्षांक्षूंक्षींश्रींफट् हस्रौं फ्रें अघोरमुखि कुब्जिकायै ५ँ मध्यमाभ्यां०। ५ँ छ्रांछ्रूंछ्रीं घोरे अघोरे ५ँ तर्जनीभ्यां०। ५ँ यंरंलंवंहंसं ५ँ अङ्गुष्ठाभ्यां०। ५ँ किणिकिणि महाकिणिकिणि विच्चे ५ँ करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एभिरेव हृदयाद्यङ्गन्यासः। ५ँ ऐं नित्ये भगवति ५ँ पश्चिमवक्त्राय नमः। ५ँ हसखफ्रें कुलेश्वरि ५ँ उत्तरवक्त्राय नमः। ५ँ ह्रांह्रूंह्रींह्लांह्लूंह्लींह्यैंहंहौं ५ँ दक्षिणवक्त्राय नमः। ५ँ ङञणनमे ५ँ पूर्ववक्त्राय नमः। ५ँ क्षांक्षूंक्षींश्रींफट् हस्रौं फ्रें ५ँ वायव्यवक्त्राय नमः। ५ँ अघोरमुखि कुब्जिकायै ५ँ नैर्ऋत्यवक्त्राय नमः। ५ँ छ्रांछ्रूंछ्रीं ५ँ ईशानवक्त्राय नमः। ५ँ घोरे अघोरे ५ँ आग्नेयवक्त्राय नमः। ५ँ यंरंलंवंहंसं ५ँ ऊर्ध्ववक्त्राय नमः। ५ँ किणिकिणि महाकिणिकिणि विच्चे ५ँ परापरवक्त्राय नमः। इति महाशक्तिन्यासः। शिरसि षट्कोणे नैर्ऋत्याद्याग्नेयान्तमेकत्रिंशद्रश्मीन् भावयेत्। ५ँ सहलां परापरानन्दनाथ चण्डीश्वरीपराम्बा सहलां ५ँ। ५ँ सहलां परानन्दनाथ गुह्यकालिकापराम्बा सहलां ५ँ। ५ँ सहलां अपरानन्दनाथ संवर्तापराम्बा सहलां ५ँ। ५ँ सह्लां परमानन्दनाथ उच्छुष्मापराम्बा सह्लां ५ँ। ५ँ सहलां पैचिकानन्दनाथ नीलकुब्जिकापराम्बा सहलां ५ँ। (५) इति

नैर्ऋत्यकोणे। ५ँ सह्वीं अघोरानन्दनाथ गन्धापराम्बा सह्वीं ५ँ। ५ँ सह्वीं डामराघोरानन्दनाथ रसापराम्बा सह्वीं ५ँ। ५ँ सह्वीं ललितानन्दनाथ रूपापराम्बा सह्वीं ५ँ। ५ँ सह्वीं स्वच्छानन्दनाथ स्पर्शापराम्बा सह्वीं ५ँ। ५ँ सह्वीं भूतेश्वरानन्दनाथ शब्दापराम्बा सह्वीं ५ँ श्री०। (५) इति पश्चिमकोणे। ५ँ सह्रूं आनन्दानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा सह्रूं ५ँ श्री०। ५ँ सह्रूं आलस्यानन्दनाथ रत्नडाकिनी-पराम्बा सह्रूं ५ँ श्री०। ५ँ सह्रूं ब्रह्मानन्दनाथ चक्रडाकिनीपराम्बा सह्रूं ५ँ श्री०। ५ँ सह्रूं योग्यानन्दनाथ पद्मडाकिनीपराम्बा सह्रूं ५ँ। ५ँ स्ह्रूं अतीतानन्दनाथ कुब्जडाकिनीपराम्बा स्ह्रूं ५ँ। ५ँ स्ह्रूं पादेश्वरानन्दनाथ प्रचण्डडाकिनीपराम्बा स्ह्रूं ५ँ। (६) इति वायव्यकोणे। ५ँ सहयैं योगेश्वरानन्दनाथ प्रचण्डापराम्बा सहयैं ५ँ। ५ँ सह्यैं पीठेश्वरानन्दनाथ कौलिनीपराम्बा सह्यैं ५ँ। ५ँ सह्यैं कुलकौलेश्वरानन्दनाथ पावनीपराम्बा सह्यैं ५ँ। ५ँ सह्यैं कुब्जेश्वरानन्दनाथ महासमयापराम्बा सह्यैं ५ँ। (४) इतीशानकोणे। ५ँ सहौं श्रीकण्ठानन्दनाथ कामापराम्बा सहौं ५ँ। ५ँ स्हौं अनन्तानन्दनाथ चर्चिकापराम्बा स्हौं ५ँ। ५ँ स्हौं शङ्करानन्दनाथ ज्वालापराम्बा स्हौं ५ँ। ५ँ स्हौं पिङ्गलानन्दनाथ कलारावापराम्बा स्हौं ५ँ। ५ँ सदाख्यानन्दनाथ नागापराम्बा स्हौं ५ँ। (५) इति पूर्वकोणे। ५ँ स्हः कालगुर्वानन्दनाथ परापराम्बा स्हः ५ँ। ५ँ स्हः सिद्धगुर्वानन्दनाथ शान्त्यतीतापराम्बा स्हः ५ँ। ५ँ स्हः रत्नगुर्वानन्दनाथ शान्तिपराम्बा स्हः ५ँ। ५ँ स्हः शिवगुर्वानन्दनाथ विद्यापराम्बा स्हः ५ँ। ५ँ स्हः मैनाकगुर्वानन्दनाथ प्रतिष्ठापराम्बा स्हः ५ँ। ५ँ स्हः समयगुर्वानन्दनाथ निवृत्तिपराम्बा स्हः ५ँ। (६) इत्यग्निकोणे।

पञ्चकाद्याः क्रमात् पीतश्यामकृष्णारुणप्रभाः। शुक्लस्फटिकवर्णाभा वरदाभयसंयुताः ॥१४॥
कार्य्यादाकारिताः सर्वा निराकारा निरामयाः। पञ्चकं पञ्चकं षट्कं चतुष्कं पञ्चकं पुनः ॥१५॥
षट्कमिति क्रमाद्भिन्नास्तैजसक्रमरश्मयः। नत्वा स्तुत्वा मनुं जप्त्वा तैजसक्रममाचरेत् ॥१६॥
पुनर्गुरुक्रमः। इति संवर्तकेश्वरः।

संवर्तकेश्वर तैजसक्रम—संवर्तकेश कूट का ध्यान नवोदित सूर्य के वर्ण का स्वाधिष्ठान में करे। इसके बाद भावना करे कि सूत्रोक्त मार्ग से भिन्न नीलाञ्जन वर्ण पन्द्रह नेत्र दश पाद क्रम कराल दाँत खड़े शिर के बाल सोलह वर्ष के रत्न सर्प अस्थि चर्चित अलंकृत एक पैर पर स्थित पञ्चाङ्गनासीन वह्नि नाभि पद्मागुलीयक मुण्डमाला चर्चिताङ्ग गन्धादि कुसुमार्चित आन्त्रालिबद्ध कटार कटि कांचि पद दाँयें हाथों में विविध शस्त्र शूल, चक्र, ध्वज, दान और बाँयें हाथों में पारिजात माला पुस्तक और अभय मुद्रा है। शेष हाथों में ब्रह्मकपाल एवं टङ्क है। लाल रंग का चतुर्थ कूट योनिमध्य में ध्यान करे। उस रश्मि से उत्पन्न देवी के रूप का धारण करे। अपने आत्मा को मूल सूत्रोक्त क्रम से विभावित करे। सहस्र भेद से संभिन्न महाचिति नित्य हैं उससे 'समय' नामक सारतरा मूर्ति निकलती है। तीसी के फूल के समान वर्ण के उनके शरीर से रश्मियाँ प्रस्फुटित होती हैं। इनके दश छः बीस अथवा सौ मुख ये शूल चाप शर खड्ग धारण करने वाली हैं। सृणि, पाश, चक्र, शङ्ख, गदा, रत्नविभूषित हैं एवं डिण्डिम डमरू वज्र भुशुण्डी शूल हाथों में है। शक्ति शल्य कुन्त एवं सर्प को धारण करने वाली हैं। संवर्तेश्वर क्रम में करन्यास इस प्रकार किया जाता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं व्योमानन्दनाथ रजनीपराम्बा हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं करतलाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं चिदानन्दनाथ चितिपराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं करपृष्ठाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षं अहङ्कारानन्दनाथ क्रोधिनीपराम्बा क्षं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं बुद्ध्यानन्दनाथ कुलवागीश्वरीपराम्बा मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं तर्जनीभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं ऋध्यानन्दनाथ मातृकापराम्बा लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मध्यमाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं अमृतानन्दनाथ देवद्रवीपराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अनामिकाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं अचलानन्दनाथ चलापराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं दीप्तानन्दनाथ ज्वालिनीपराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं करपृष्ठाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऊं प्रकृतीशानन्दनाथ प्रकृतीपराम्बा ऊं करतलाभ्यां नमः।

तदनन्तर इस प्रकार अंग न्यास किया जाता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हंसं विशुद्धानन्दनाथ शङ्खिनीपराम्बा हंसं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हृदयाय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षमं प्राणानन्दनाथ योगीश्वरीपराम्बा क्षमं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें

हसौं शिरसे स्वाहा। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लंवं ज्ञानानन्दनाथ बिन्दुपराम्बा लंवं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शिखायै वषट्। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यंरं व्यापकानन्दनाथ इन्धिकापराम्बा यंरं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कवचाय हुं। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऊं विस्तारानन्दनाथ विस्तारापराम्बा ऊं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अंअ: शूरानन्दनाथ प्रीतवतीपराम्बा अंअ: ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अस्त्राय फट्।

तदनन्तर इस प्रकार वक्त्र न्यास किया जाता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हंसं कालवक्त्रानन्दनाथ योगीश्वरीपराम्बा संहं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं पश्चिमवक्त्राय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षंमं रौद्रवक्त्रानन्दनाथ संहारिणीपराम्बा मंक्षं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं उत्तरवक्त्राय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लंवं विश्वग्रसनानन्दनाथ दहनीपराम्बा वंलं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं दक्षिणवक्त्राय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यंरं प्रकाशानन्दनाथ ज्योतिष्पराम्बा रंयं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं पूर्ववक्त्राय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऊं हर्षानन्दनाथ अमृतवाहिनीपराम्बा ऊं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऊर्ध्ववक्त्राय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अंअ: परानन्दनाथ परापराम्बा अ:अं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं परापरवक्त्राय नम:।

तदनन्तर इस प्रकार करन्यास किया जाता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं नित्ये भगवति हसखफ्रें कुलेश्वरि ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कनिष्ठिकाभ्यां नम:। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रांह्रूंह्रींह्रांह्रूंह्रींह्रैंहंहौं ङञणनमे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अनामिकाभ्यां नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्ष्रांक्ष्रूंक्ष्रींश्रींफट् हस्त्रौं फ्रें अघोरमुखि कुब्जिकायै ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मध्यमाभ्यां नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं छ्रांछ्रूंछ्रीं घोरे अघोरे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं तर्जनीभ्यां नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यंरंलंवंहंसं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अङ्गुष्ठाभ्यां नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं किणिकिणि महाकिणिकिणि विच्चे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं करतलकरपृष्ठाभ्यां नम:। इसी प्रकार हृदयादि अङ्गन्यास भी सम्पन्न किया जाता है।

तदनन्तर इस प्रकार महाशक्ति न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं नित्ये भगवति ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं पश्चिमवक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसखफ्रें कुलेश्वरि ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं उत्तरवक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रांह्रूंह्रींह्रांह्रूंह्रींह्रैंहंहौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं दक्षिणवक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ङञणनमे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं पूर्ववक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्ष्रांक्ष्रूंक्ष्रींश्रींफट् हस्त्रौं फ्रें ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वायव्यवक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अघोरमुखि कुब्जिकायै ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं नैर्ऋत्यवक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं छ्रांछ्रूंछ्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ईशानवक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं घोरे अघोरे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं आग्नेयवक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यंरंलंवंहंसं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऊर्ध्ववक्त्राय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं किणिकिणि महाकिणिकिणि विच्चे ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं परापरवक्त्राय नम:।

शिर स्थित षट्कोण के नैर्ऋत्य से आग्नेय कोण तक प्रदक्षिण क्रम से इकतीस रश्मियों का पूजन करे। उसमें प्रथमत: नैर्ऋत्य कोण में पाँच रश्मियों का इन मन्त्रों से पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहलां परापरानन्दनाथ चण्डीश्वरीपराम्बा सहलां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहलां परानन्दनाथ गुह्यकालिकापराम्बा सहलां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहलां अपरानन्दनाथ संवर्तापराम्बा सहलां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्लां परमानन्दनाथ उच्छुष्मापराम्बा सह्लां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहलां पैचिकानन्दनाथ नीलकुब्जिकापराम्बा सहलां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

तदनन्तर पश्चिम कोण में इन पाँच रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्लीं अघोरानन्दनाथ गन्धापराम्बा सह्लीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्लीं डामराघोरानन्दनाथ रसापराम्बा सह्लीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्लीं ललितानन्दनाथ रूपापराम्बा सह्लीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्लीं स्वच्छानन्दनाथ स्पर्शापराम्बा सह्लीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्लीं भूतेश्वरानन्दनाथ शब्दापराम्बा सह्लीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नम:।

तदनन्तर वायव्य कोण में इन पाँच रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहूं आनन्दानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा सहूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहूं आलस्यानन्दनाथ रत्न-डाकिनीपराम्बा सहूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहूं ब्रह्मानन्दनाथ चक्रडाकिनी-पराम्बा सहूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहूं योग्यानन्दनाथ पद्मडाकिनीपराम्बा सहूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हूं अतीतानन्दनाथ कुब्जडाकिनीपराम्बा स्हूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हूं पादेश्वरानन्दनाथ प्रचण्डडाकिनीपराम्बा स्हूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तदनन्तर ईशान कोण में इन चार रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहयैं योगेश्वरानन्दनाथ प्रचण्डा-पराम्बा सहयैं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्वैं पीठेश्वरानन्दनाथ कौलिनीपराम्बा सह्वैं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्वैं कुलकौलेश्वरानन्दनाथ पावनीपराम्बा सह्वैं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सह्वैं कुब्जेश्वरानन्दनाथ महासमयापराम्बा सह्वैं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तदनन्तर पूर्वकोण में इन पाँच रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सहौं श्रीकण्ठानन्दनाथ कामापराम्बा सहौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हौं अनन्तानन्दनाथ चर्चिकापराम्बा स्हौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हौं शङ्करानन्दनाथ ज्वालापराम्बा स्हौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हौं पिङ्गलानन्दनाथ कलारावापराम्बा स्हौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सदाख्यानन्दनाथ नागापराम्बा स्हौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तदनन्तर अग्नि कोण में इन छः रश्मियों का पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हः कालगुर्वानन्दनाथ परापराम्बा स्हः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हः सिद्धगुर्वानन्दनाथ शान्त्यतीतापराम्बा स्हः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हः रत्नगुर्वानन्दनाथ शान्तिपराम्बा स्हः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हः शिवगुर्वानन्दनाथ विद्यापराम्बा स्हः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हः मैनाकगुर्वानन्दनाथ प्रतिष्ठापराम्बा स्हः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्हः समयगुर्वानन्दनाथ निवृत्तिपराम्बा स्हः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

उपर्युक्त पाँच आदि रश्मियाँ क्रमशः पीली श्याम काली अरुण एवं शुक्ल स्फटिक वर्ण की आभा से युक्त हैं। ये सभी निश्चल, निराकार एवं निरामय हैं। पाँच-पाँच, छः, चार, पाँच, छः के क्रम से इन तैजस रश्मियों को प्रणाम एवं स्तुति करके उनका मन्त्रजप करे पुनः गुरुक्रम का अनुसरण करे।

द्वीपेश्वरकूटध्यानं जलरश्मिपूजादि

अथ द्वीपेश्वरक्रमः। ध्यानम्—

कूटं द्वीपेश्वरस्याथ मणिपूरे सितप्रभम्। ध्यात्वा तदुद्भवं देवमात्मानं परिभावयेत्॥१॥
श्यामवर्णो दशभुजो पञ्चैकाम्बकचर्चितः। दंष्ट्राकरालवदनो भैरवाभरणो विभुः॥२॥
महाशवासनस्थोऽयं मातृमण्डलमध्यगः। सर्वतत्त्वेश्वरः श्रीमान् सर्वाश्रमसुपूजितः॥३॥
शूलं खड्गं तथा चक्रमङ्कुशं वरदं तथा। विभ्रद् दक्षे तथा वामे खट्वाङ्गं परशुं तथा॥४॥
गदां पाशं चाभयाख्यं बाहुभ्यां गजचर्मकम्। द्वीपेश्वरं विभाव्याथ ततस्तुर्याक्षरं स्मरेत्॥५॥
देवीं च देववर्णाभां स्थितां च शयनोपरि। शङ्खचक्रगदापद्मशूलं पाशं वराभये॥६॥

दधतीमिति शेषः। इति ध्यानम्। आ इत्यादि ह्स्रांह्स्रीं ऐं इत्याद्यङ्गन्यासं विधाय, शिरसि षट्कोणे

ईशानादिवायव्यान्तं षड्विंशतिरश्मीन् भावयेत्। ५ँ लं सद्यानन्दनाथ मायापराम्बा लं ५ँ। ५ँ लं वामानन्दनाथ श्रीपराम्बा लं ५ँ। ५ँ लं अघोरानन्दनाथ पद्मापराम्बा लं ५ँ। ५ँ लं तत्पुरुषानन्दनाथ अम्बिकापराम्बा लं ५ँ। (४) इतीशानकोणे। ५ँ वं अनन्तानन्दनाथ निवृत्तिपराम्बा वं ५ँ। ५ँ वं अनाथानन्दनाथ प्रतिष्ठापराम्बा वं ५ँ श्री०। ५ँ वं अनाश्रितानन्दनाथ विद्यापराम्बा वं ५ँ श्री०। ५ँ वं अचिन्त्यानन्दनाथ शान्तिपराम्बा वं ५ँ। (४) इति पूर्वकोणे। ५ँ रं शेखरानन्दनाथ शान्त्यतीतापराम्बा रं ५ँ। ५ँ रं तीव्रानन्दनाथ गङ्गापराम्बा रं ५ँ। ५ँ रं मणिवाहानन्दनाथ सरस्वतीपराम्बा रं ५ँ। ५ँ रं अम्बुवाहानन्दनाथ कमलापराम्बा रं ५ँ। ५ँ रं जालेश्वरानन्दनाथ यमुनापराम्बा रं ५ँ। ५ँ रं तेजोधीशानन्दनाथ पार्वतीपराम्बा रं ५ँ। (६) इत्यग्निकोणे। ५ँ यं विद्यावागीश्वरानन्दनाथ चित्रापराम्बा यं ५ँ। ५ँ यं चतुर्विद्येश्वरानन्दनाथ सुकमलापराम्बा यं ५ँ। ५ँ यं उमागङ्गेश्वरानन्दनाथ मन्मथापराम्बा यं ५ँ श्री०। ५ँ यं कृष्णेश्वरानन्दनाथ श्रीपराम्बा यं ५ँ श्री०। (४) इति नैर्ऋत्यकोणे। ५ँ हं श्रीकण्ठानन्दनाथ लयापराम्बा हं ५ँ श्री०। ५ँ हं अनन्तानन्दनाथ वसन्तापराम्बा हं ५ँ। ५ँ हं शङ्करानन्दनाथ रत्नमेखलापराम्बा हं ५ँ। ५ँ हं पिङ्गलानन्दनाथ यशोवतीपराम्बा हं ५ँ। ५ँ हं सदाख्यानन्दनाथ कुब्जिकापराम्बा हं ५ँ। (५) इति पश्चिमकोणे। ५ँ सं सर्वदेवेशानन्दनाथ वामापराम्बा सं ५ँ। ५ँ सं परमदिव्यौघानन्दनाथ ज्येष्ठापराम्बा सं ५ँ। ५ँ सं पीठेश्वरानन्दनाथ रौद्रीपराम्बा सं ५ँ। (३) इति वायव्यकोणे।

पीतं श्यामं रक्तकृष्णं शुक्लं भास्करसन्निभम्। चतुष्कं च चतुष्कं च षट्कं भूयश्चतुष्ककम्॥७॥
पञ्चकं त्रिकमित्येव भिन्ना जलमरीचयः। नत्वा स्तुत्वा मनुं जप्त्वा ह्यथाप्यक्रममाचरेत्॥८॥
पुनर्गुरुक्रमः। इति द्वीपेश्वरक्रमः।

द्वीपेश्वर क्रम—द्वीपेश्वर अर्थात् जलीय क्रम की रश्मियाँ श्वेत वर्ण वाला हैं एवं मणिपूर में स्थित हैं। उसी से उत्पन्न देव की अपनी आत्मा में भावना करे। इनका ध्यान इस प्रकार करे—

श्यामवर्णो दशभुजो पञ्चैकाम्बकचर्चितः। दंष्ट्राकरालवदनो भैरवाभरणो विभुः।।
महाशवासनस्थोऽयं मातृमण्डलमध्यगः। सर्वतत्त्वेश्वरः श्रीमान् सर्वाश्रमसुपूजितः।।
शूलं खड्गं तथा चक्रमङ्कुशं वरदं तथा। बिभ्रद् दक्षे तथा वामे खट्वाङ्गं परशुं तथा।।
गदां पाशं चाभयाख्यं बाहुभ्यां गजचर्मकम्। द्वीपेश्वरं विभाव्याथ ततस्तुर्याक्षरं स्मरेत्।।
देवीं च देववर्णाभां स्थितां च शयनोपरि। शङ्खचक्रगदापद्मशूलं पाशं वराभये।।

आं ह्स्रां ह्स्रीं ऐं इत्यादि से अंगन्यास करे। शिर पर षट्कोण में ईशान से वायव्य तक छब्बीस रश्मियों की भावना करते हुये ईशान कोण में चार रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं सद्यानन्दनाथ मायापराम्बा लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं वामानन्दनाथ श्रीपराम्बा लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं अघोरानन्दनाथ पद्मापराम्बा लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं तत्पुरुषानन्दनाथ अम्बिकापराम्बा लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं।

पूर्व कोण में चार रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं अनन्तानन्दनाथ निवृत्तिपराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं अनाथानन्दनाथ प्रतिष्ठापराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं अनाश्रितानन्दनाथ विद्यापराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं अचिन्त्यानन्दनाथ शान्तिपराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

अग्नि कोण में छः रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं शेखरानन्दनाथ शान्त्यतीतापराम्बा

रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं तीव्रानन्दनाथ गङ्गापराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं मणिवाहानन्दनाथ सरस्वतीपराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं अम्बुवाहानन्दनाथ कमलापराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं जालेश्वरानन्दनाथ यमुनापराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं तेजोधीशानन्दनाथ पार्वतीपराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

नैर्ऋत्य कोण में चार रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं विद्यावागीश्वरानन्दनाथ चित्रा-पराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं चतुर्विघ्नेश्वरानन्दनाथ सुकमलापराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं उमागङ्गेश्वरानन्दनाथ मन्मथापराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं कृष्णेश्वरानन्दनाथ श्रीपराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

पश्चिम कोण में पाँच रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं श्रीकण्ठानन्दनाथ लयापराम्बा हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं अनन्तानन्दनाथ वसन्तापराम्बा हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं शङ्करानन्दनाथ रत्नमेखलापराम्बा हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं पिङ्गलानन्दनाथ यशोवतीपराम्बा हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं सदाख्यानन्दनाथ कुब्जिकापराम्बा हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

वायव्य कोण में तीन रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं सर्वदेवेशानन्दनाथ वामापराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं परमदिव्यौघानन्दनाथ ज्येष्ठापराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं पीठेश्वरानन्दनाथ रौद्रीपराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

पीत श्याम रक्त कृष्ण शुक्ल सूर्य के समान चार-चार छः चार पाँच तीन जलीय रश्मियाँ होती है। इन्हें प्रणाम, स्तुति, जप करके जलीय क्रम का आचरण करे तथा पुनः गुरुक्रम का अनुसरण करे।

पार्थिवक्रमे न्यासः

अथ पार्थिवक्रमस्तत्र न्यासः। ५ँ हंसं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ५ँ क्षमं तर्जनीभ्यां नमः। ५ँ लंवं मध्यमाभ्यां नमः। ५ँ यंरं अनामिकाभ्यां नमः। ५ँ ऊं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ५ँ अंअः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एभिरेव हृदयाद्यङ्गन्यासः। ५ँ हसखफ्रां नमो भगवति कमलायै हसखफ्रां ५ँ कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ५ँ हसखफ्रीं कुब्जिकायै कुलदीपिकायै हसखफ्रीं ५ँ अनामिकाभ्यां नमः। ५ँ हसखफ्रूं ह्लांह्लूंह्लीं ङञणनमे वर्वरायै हसखफ्रूं ५ँ मध्यमाभ्यां नमः। ५ँ हसखफ्रैं अघोरमुखि बहुरूपायै हसखफ्रैं ५ँ तर्जनीभ्यां नमः। ५ँ हसखफ्रौं छ्रांछ्रूंछ्रीं महातारायै हसखफ्रौं ५ँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ५ँ हसखफ्रः किणिकिणि विच्चे कोकणायै हसखफ्रः ५ँ करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एवमेव हृदयादिन्यासः। तथा वक्त्रन्यासः। अथ ध्यानम्—

विभाव्यं देवकूटं तु मूलाधारेऽरुणप्रभम्। तदुद्भवं तथा देवमात्मानं परिभावयेत्॥१॥
संवर्तेश्वरतुल्यस्तु देवो ललितविग्रहः।

संवर्तेश्वरप्रथमध्यानम्। अथ शक्तिध्यानम्—

नीलाञ्जनचयप्रख्यां कुब्जरूपां महोदरीम्। षड्वक्त्रां द्वादशभुजां रत्नसर्पास्थिचर्चिताम्॥२॥
मुण्डमालाधरां रौद्रीं दंष्ट्राकालानलाननाम्। अष्टादशाम्बकां देवीं बर्बरोर्ध्वशिरोरुहाम्॥३॥

व्याघ्रचर्मपरीधानां सिंहचर्मोत्तरच्छदाम्। दिव्याभरणभूषाङ्गीं ध्यायेदट्टाट्टहासिनीम् ॥४॥
अस्याः पीतमाद्यवक्त्रमुत्तरं सोमसन्निभम्। दक्षिणं कृष्णवर्णं च यत्प्राग् दर्शितमम्बिके ॥५॥
पूर्ववक्त्रं भवेद्रक्तमीशानं स्फटिकोपमम्। सहस्रसूर्यसङ्काशमूर्ध्ववक्त्रं महाचितेः ॥६॥
दंष्ट्राकरालान्यखिलवक्त्राण्युक्तानि शम्भुना। त्रिशूलचक्रवज्राणि अङ्कुशं शरकर्तरीः ॥७॥
दक्षिणे वामतो देवी नीलोत्पलशताकर(तच्छद)म्। अन्यत्समुण्डखट्वाङ्गं घण्टापुस्तधनुस्तथा ॥८॥
कपालं वामके हस्ते सिंहासनभवासनम्।

इति ध्यात्वा, पार्थिवशाम्भवेनाङ्गन्यासं विधाय शिरसि षट्कोणे पश्चिमादिनिर्ऋत्यन्तमष्टाविंशतिरश्मीन् भावयेत्। ५ँ लमयरूं उड्याणमहापीठ उड्येश्वरानन्दनाथ उड्येश्वरीपराम्बा लमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ वमयरूं जालन्धरमहापीठ जालेश्वरानन्दनाथ जालेश्वरीपराम्बा वमयरूं ५ँ। ५ँ रमररूं पूर्णगिरिमहापीठ पूर्णगिरिजानन्दनाथ पूर्णेश्वरीपराम्बा रमयरूं ५ँ। ५ँ मयरूं कामेश्वरमहापीठ कामेश्वरानन्दनाथ कामेश्वरीपराम्बा मयरूं ५ँ। (४) इति पश्चिमकोणे। ५ँ ग्लूं श्रीकण्ठानन्दनाथ गगनापराम्बा ग्लूं ५ँ। ५ँ स्लूं अनन्तानन्दनाथ स्वर्गापराम्बा स्लूं ५ँ। ५ँ म्लूं शङ्करानन्दनाथ मर्त्यापराम्बा म्लूं ५ँ। ५ँ प्लूं पिङ्गलानन्दनाथ पातालापराम्बा प्लूं ५ँ। ५ँ न्लूं सद्योजानन्दनाथ नागापराम्बा न्लूं ५ँ। ५ँ (५) इति वायव्यकोणे। ५ँ डमयरूं आनन्दानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा डमयरूं ५ँ। ५ँ रमयरूं आवल्यानन्दनाथ राकिणीपराम्बा रमयरूं ५ँ। ५ँ लमयरूं पूजानन्दनाथ लाकिनीपराम्बा लमयरूं ५ँ। ५ँ कमयरूं योगानन्दनाथ काकिनीपराम्बा कमयरूं ५ँ। ५ँ शमयरूं अतीतानन्दनाथ शाकिनीपराम्बा शमयरूं ५ँ। ५ँ हमयरूं पादानन्दनाथ हाकिनीपराम्बा हमयरूं ५ँ। ५ँ (६) इतीशानकोणे। ५ँ लं आधारेशानन्दनाथ रक्तापराम्बा लं ५ँ। ५ँ वं चक्रेशानन्दनाथ चण्डिकापराम्बा वं ५ँ। ५ँ रं कुरङ्गेशानन्दनाथ करालापराम्बा रं ५ँ। ५ँ यं मदघ्नेशानन्दनाथ महोच्छुष्मापराम्बा यं ५ँ। (४) इति पूर्वकोणे। ५ँ गं अनादिविमलानन्दनाथ शावरीपराम्बा गं ५ँ। ५ँ सं सर्वज्ञविमलानन्दनाथ पुलन्दिनीपराम्बा सं ५ँ। ५ँ यं योगविमलानन्दनाथ शवरीपराम्बा यं ५ँ। ५ँ यं सिद्धविमलानन्दनाथ पराम्बिकापराम्बा यं ५ँ। ५ँ नं समयविमलानन्दनाथ कुलिकापराम्बा नं ५ँ। (५) इत्यग्निकोणे। ५ँ लमयरूं मित्रेशानन्दनाथ कुब्जिकापराम्बा लमयरूं ५ँ श्री०। ५ँ वमयरूं उड्डीशानन्दनाथ लघ्वीपराम्बा वमयरूं ५ँ। ५ँ रमयरूं षष्ठीशानन्दनाथ कुलेश्वरीपराम्बा रमयरूं ५ँ। ५ँ यमयरूं चर्यानन्दनाथ कुलकौलेश्वरीपराम्बा यमयरूं ५ँ। (४) इति नैर्ऋत्यकोणे। अथ ध्यानम्—

पीतं श्यामं कृष्णरक्तं शुक्लं भास्करसन्निभम्। चतुष्काद्याः क्रमात्सर्वे वरदाभयसंयुताः ॥१॥
चतुष्कं पञ्चकं षट्कं चतुष्कं पञ्चकं पुनः। चतुष्कमिति संभिन्नाः क्रमात् पार्थिवरश्मयः ॥२॥

पुनर्देवदेव्यौ त्रिधा संपूज्य, पुनर्गुरुक्रमं नत्वा स्तुत्वा मनुं च जप्त्वा पार्थिवक्रममाचरेत्। इति नवात्मेश्वरक्रमः।

पार्थिव क्रम—पार्थिव क्रम में करन्यास इस प्रकार किया जाता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हंसं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षंमं तर्जनीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लंवं मध्यमाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यंरं अनामिकाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऊं कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अंअः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इसी प्रकार हृदयादि अंगन्यास भी होते है। तदनन्तर पुनः विलोम क्रम से इस प्रकार करन्यास किया जाता है—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसखफ्रां नमो भगवति कमलायै हसखफ्रां ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसखफ्रीं कुब्जिकायै कुलदीपिकायै हसखफ्रीं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अनामिकाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसखफ्रूं ह्रांह्रूंह्रीं ङञणनमे वर्वरायै हसखफ्रूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मध्यमाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसखफ्रैं अघोरमुखि बहुरूपायै हसखफ्रैं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं तर्जनीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसखफ्रौं छ्रांछ्रूंछ्रीं महातारायै हसखफ्रौं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हसखफ्रः किणिकिणि विच्चे कोकणायै हसखफ्रः ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

करन्यास के समान ही हृदयादि न्यास एवं वक्त्रन्यास भी करे। मूलाधार में स्थित अरुण वर्ण वाली पार्थिव रश्मियों से उद्भूत देव का अपनी आत्मा में भावना करके इस प्रकार ध्यान करे—

नीलाञ्जनचयप्रख्यां कुब्जरूपां महोदरीम्। षड्वक्त्रां द्वादशभुजां रत्नसर्पास्थिचर्चिताम्।।
मुण्डमालाधरां रौद्रीं दंष्ट्राकालानलाननाम्। अष्टादशाम्बकां देवीं बर्बरोर्ध्वशिरोरुहाम्।।
व्याघ्रचर्मपरीधानां सिंहचर्मोत्तरच्छदाम्। दिव्याभरणभूषाङ्गीं ध्यायेदट्टाट्टहासिनीम्।।
अस्याः पीतमाद्यवक्त्रमुत्तरं सोमसन्निभम्। दक्षिणं कृष्णवर्णं च यत्प्राग् दर्शितमम्बिके।।
पूर्ववक्त्रं भवेद्रक्तमीशानं स्फटिकोपमम्। सहस्रसूर्यसङ्काशमूर्ध्ववक्त्रं महाचितेः।।
दंष्ट्राकरालान्यखिलवक्त्राण्युक्तानि शम्भुना। त्रिशूलचक्रवज्राणि अङ्कुशं शरकर्तरीः।।
दक्षिणे वामतो देवी नीलोत्पलशताकर(तच्छद)म्। अन्यत्समुण्डखट्वाङ्गं घण्टापुस्तधनुस्तथा।।
कपालं वामके हस्ते सिंहासनभवासनम्।

इस प्रकार के ध्यान के बाद पार्थिव शाम्भव से अंग न्यास करे। तब शिर में षट्कोण की भावना करके पश्चिम से प्रारम्भ करके नैर्ऋत्य तक बीस रश्मियों की भावना करते हुये प्रथम चार रश्मियों का पूजन पश्चिम कोण में इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लमयरूं उड्याणमहापीठ उड्येश्वरानन्दनाथ उड्येश्वरीपराम्बा लमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वमयरूं जालन्धरमहापीठ जालेश्वरानन्दनाथ जालेश्वरीपराम्बा वमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमररूं पूर्णगिरिमहापीठ पूर्णगिरिजानन्दनाथ पूर्णेश्वरीपराम्बा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मयरूं कामेश्वरमहापीठ कामेश्वरानन्दनाथ कामेश्वरीपराम्बा मयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

वायव्य कोण पाँच रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ग्लूं श्रीकण्ठानन्दनाथ गगनापराम्बा ग्लूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं स्लूं अनन्तानन्दनाथ स्वर्गापराम्बा स्लूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं म्लूं शङ्करानन्दनाथ मर्त्यापराम्बा म्लूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं प्लूं पिङ्गलानन्दनाथ पातालापराम्बा प्लूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं न्लूं सद्योजानन्दनाथ नागापराम्बा न्लूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ईशान कोण में छः रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं डमयरूं आनन्दानन्दनाथ डाकिनीपराम्बा डमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं आवल्यानन्दनाथ राकिणीपराम्वा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लमयरूं पूजानन्दनाथ लाकिनी-पराम्बा लमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं कमयरूं योगानन्दनाथ काकिनीपराम्बा कमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं शमयरूं अतीतानन्दनाथ शाकिनीपराम्बा शमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हमयरूं पादानन्दनाथ हाकिनीपराम्बा हमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

पूर्वकोण में चार रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं आधारेशानन्दनाथ रक्तापराम्बा लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं चक्रेशानन्दनाथ चण्डिकापराम्बा वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं कुरङ्गेशानन्दनाथ करालापराम्बा रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं मदघ्नेशानन्दनाथ महोच्छुष्मापराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

अग्निकोण में पाँच रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं गं अनादिविमलानन्दनाथ

शावरीपराम्बा गं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं सर्वज्ञविमलानन्दनाथ पुलन्दिनी-पराम्बा सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं योगविमलानन्दनाथ शवरीपराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं सिद्धविमलानन्दनाथ पराम्बिकापराम्बा यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं नं समयविमलानन्दनाथ कुलिकापराम्बा नं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

नैर्ऋत्य कोण में चार रश्मियों का पूजन इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लमयरूं मित्रेशानन्दनाथ कुब्जिकापराम्बा लमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वमयरूं उड्डीशानन्दनाथ लघ्वीपराम्बा वमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रमयरूं षष्ठीशानन्दनाथ कुले-श्वरीपराम्बा रमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यमयरूं चर्यानन्दनाथ कुलकौले-श्वरीपराम्बा यमयरूं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

इस प्रकार पीत, श्याम, कृष्ण, रक्त, शुक्ल, सूर्पसदृश चार, पाँच, छः, चार, पाँच, चार के क्रम से विभक्त अट्ठाईस पार्थिव रश्मियाँ वर एवं अभय से युक्त रहती हैं। पुनः देव एवं देवी की पूजा तीन बार करके गुरुक्रम को प्रणाम करके, स्तुति करके, मन्त्रजप कर पार्थिव क्रम का आचरण करे।

आयुधपूजा

अथायुधपूजा—'आयुधानि यजेत् पश्चात् कराग्रेषु च मन्त्रवित्।' ५ँ हं ब्रह्मकपालाय हं ५ँ नमः। एवं ५ँ सं त्रिशूलाय सं० ५ँ। क्षं चक्राय क्षं। मं ध्वंजाय मं। लं वराय लं। वं ब्रह्मपादाय वं। यं पारिभद्रप्रसूनाय यं। रं जाप्यमालायै रं। उं पुस्तकाय उं। अं अभयाय अं। श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः सर्वत्र। मानसादिपृथिव्यन्तं रश्मीन् भावयेत् पुंसः स्त्रियस्तथा क्रमादानन्दनाथेति पराम्बेत्याद्युदीरिताः। श्रीपादुकां तर्पयामि नमो वदेत्, अर्चयेदर्चकेन्द्रः पूजयामीति, निर्वाणगुरुसंप्रदायमवलम्ब्य कल्पिते ललितेश्वरविरचिते शिवषडन्वयार्चने।

आयुध पूजा—मन्त्रज्ञ साधक अन्त में कराग्रों में आयुधों की पूजा इन मन्त्रों से करे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं हं ब्रह्मकपालाय हं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सं त्रिशूलाय सं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं क्षं चक्राय क्षं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं मं ध्वजाय मं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं लं वराय लं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं वं ब्रह्मपादाय वं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं यं पारिभद्रप्रसूनाय यं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं रं जाप्यमालायै रं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं उं पुस्तकाय उं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं अं अभयाय अं ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। मानस से पार्थिव तक की रश्मियों की भावना करे। पुरुषों के साथ आनन्दनाथ और स्त्रियों के साथ पराम्बा जोड़कर पूजा 'श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः' लगाकर करे। यह पूजा निर्वाण-गुरुसम्प्रदाय के अनुसार ललितेश्वर द्वारा रचित शिवषडन्वय अर्चन में निरूपित की गई है।

षडन्वयार्चनविधिः

श्रीनाथादिमुखाम्भोजात् पारम्पर्ययुतं जपेत्। उपदिष्टं मन्त्रजातमूर्ध्वाम्नायादिगोचरम् ॥१॥
तत् सर्वमस्मिन् समये पीठपूजादिकं विना। पारम्पर्य्यगुरुनाथमूलविद्याङ्गसन्ततिः ॥२॥
अङ्गपूजासमर्चान्ते बहिः पूजां तु बाह्यतः। नवात्ममण्डले तत्र महापूर्वश्मशानके ॥३॥
अनेककोटियोगीन्द्रयोगिनीभैरवादिभिः। सेव्यमाने द्वारपेन्द्रविधिब्रह्माग्निमूर्तिभिः ॥४॥

त्रिभिर्निशाटनाद्यैश्च पालकैर्द्वारमण्डले। प्रयागाख्ये शुचिक्षेत्रे सदृग्ज्योतिष्मतीयुते ॥५॥
परापरमहापीठं संश्रितं श्रीनवात्मकम्। देवेशमर्चयेद् देवं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥६॥
श्रीमहार्थं तथान्यं च श्रीविद्यादिक्रमेण च। एतत्सर्वं समानं स्याच्छ्रीशम्भोस्तु नवात्मकम् ॥७॥
धूपदीपौ प्रदर्श्याथ बहुव्यञ्जनसंयुतम्। नैवेद्यं षड्रसोपेतं पुरतः स्थाप्य देशिकः ॥८॥
अन्नपूर्णेश्वरीन्यासं ध्यानं कुर्याद्यजेत् पुनः।

ह्रीं भुवनायै नमः। श्रीं कमलायै नमः। क्लीं सुभगायै नमः। ॐ परविद्यायै नमः। मूलाधारहृद्भ्रू-मध्यब्रह्मरन्ध्रेषु विन्यसेत्।

ब्रह्मरन्ध्रादिब्राह्म्यादिन्यासं कुर्यात् स्वदेहके। नैवेद्यं भावयेत् पद्मे वसुपत्रे सकर्णिके ॥१॥
त्रिकोणं चाथ तन्मध्ये परदेवीं विभावयेत्। भुवनाद्यास्तथा कोणेष्वथ दक्षेतरेषु च ॥२॥
ब्राह्म्याद्याश्चाष्टपत्रेषु न्यासवत् सर्वमर्चयेत्। नैवेद्यं सपरिवाराया देवदेव्योः समर्पयेत् ॥३॥
सौभाग्यदेवतायास्तु स्वनैवेद्यं समर्चयेत्।

तदीयबलिं वृत्तचतुरस्रमण्डले, व्यापकमण्डलाय नम इत्यभ्यर्च्य, ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं फट् स्वाहा, अनेन बलिं दत्त्वा गण्डूषादिराजोपचारान्। 'तत्त्वत्रयविशुद्धात्मा स्वीकुर्याद्विधिपूर्वकम्'। ५ँ ऐंह्रीं अघोरे ह्रींसः ५ँ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। ५ँ ह्रां परमघोरे हुं घोररूपे हौं घोरमुखि भीमभीषणे वमपिव हेरुरुहःरर ह्रींह्रः फ्रें हसरौं विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा। ५ँ सर्वतत्त्वसमष्टिसर्व(शिव)तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

तत्त्वत्रयविशुद्धात्मा पूर्णपात्रत्रयं पुनः। गुरुभैरवशक्तिभ्यो निवेद्याथ स्वयं पुनः ॥१॥
स्वकीयानाहूतान्यांश्च पूजयेच्च यथाविधिः।

इति सृष्टिपूजा।

श्रीनाथादि के मुखकमल से निकली परम्परा के अनुसार दश हजार जप उपदिष्ट मन्त्र के अनुसार ऊर्ध्वाम्नायादि को जानकर करे। इस समय पूजा में पीठपूजादि के बिना पारम्पर्य गुरुनाथ से मूल विद्या की संगति होती है। अंगपूजा के बाद बाह्य पूजा नवात्म मण्डल में करे। महाश्मशान के अनेक कोटि योगीन्द्र योगिनी भैरवादि से सेव्यमान द्वारपेन्द्र विधि ब्रह्माग्नि मूर्त्तियों से सेवित तीन निशाटन आदि द्वारपाल मण्डल में, पवित्र क्षेत्र प्रयाग ज्योतिष्मती में परापर महापीठ संश्रित श्री नवात्मक देवेश का अर्चन धूप, दीप से करके बहुव्यञ्जायुक्त छः रसों से युक्त नैवेद्य सामने स्थापित करे। तब अन्नपूर्णेश्वरी का न्यास ध्यान करे। पूजा इस प्रकार करे—ह्रीं भुवनायै नमः, श्रीं कमलायै नमः, क्लीं सुभगायै नमः, ॐ परविद्यायै नमः। मन्त्र से मूलाधार, हृदय, भ्रूमध्य और ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करे।

ब्रह्मरन्ध्र से प्रारम्भ करके अपने देह में ब्राह्मी आदि का न्यास करे। अष्टदल कमल की कर्णिका, त्रिकोण एवं मध्य में परदेवी के भावना करे एवं उन्हें नैवेद्य प्रदान करे। त्रिकोण के कोणों में भुवनादि की भावना करे। अष्टपत्रों में ब्राह्मी आदि की पूजा न्यासवत् करे। सपरिवार देव-देवियों को नैवेद्य समर्पित करे। सौभाग्य देवता को अपने नैवेद्य से अर्चन करे।

वृत चतुरस्र बलि मण्डल की पूजा 'व्यापकमण्डलाय नमः' से करे। 'ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं फट् स्वाहा' से बलि प्रदान करे। गण्डूषादि राजोपचारों को प्रदान करे। तब तत्त्वत्रय का शोधन इन मन्त्रों से करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ऐं ह्रीं अघोरे ह्रीं सः ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं ह्रां परमघोरे हुं घोररूपे हौं घोरमुखि भीमभीषणे वम पिव हेरुरुहःरर ह्रीं ह्रः फ्रें हसरौं विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं सर्वतत्त्वसमष्टिशिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

तीनों तत्त्वों का शोधन करने के बाद विशुद्ध आत्मा होकर पुनः तीन पात्रों को गुरु, भैरव और शक्तियों को निवेदित करे। तब अन्य आवाहितों की पूजा यथाविधि करे।

संहारक्रमतोऽर्चनक्रम:

अथ संहारपूजार्थं श्रीनाथं पूजयेत् त्रिशः। तदनुज्ञामवाप्याथ पूर्ववत् पार्थिवादितः ॥१॥
मानसान्तं क्रमान् कृत्वा तत्तत्क्रमफलं लभेत्। आज्ञाद्याधारषट्केषु चतुष्कादिक्रमार्चनम्॥२॥
तत्तत्स्थानेषु संपूज्य यतः पञ्चक्रमात्ततः। अर्चयेदुक्तमार्गेण श्रीगुरोरुपदेशतः ॥३॥
चूलीमूले परशम्भुः शाम्भवी योनिमध्यतः। षोडशान्ते परा पूज्या भा पूज्या चूलिमूलके ॥४॥
चिन्मनोमन्दिरोद्देशे महा नाभितले स्मृता। कन्दे चेच्छा मेढ्रे सृष्टिः स्थितिर्मेदसि संस्थिता ॥५॥
तिरोधा नासिकाग्रे तु मुक्तिं शूलपथे श्रयेत्। ज्ञाना पृष्ठाग्रके पूज्या सती योनिबिले स्मृता ॥६॥
असती लम्बिकामूले सदसती नसाश्रये। क्रियां च लिङ्गमूले तु अण्डे आत्मावतीं श्रयेत् ॥७॥
लिङ्गाधो विषयेच्छा तु गोचरी चर्ममालके। लोका नेत्रान्तरे वेदा सञ्चिन्त्योदरमध्यतः ॥८॥
कुण्डली नाभिमूले तु सौष्मणमुष्मणाबिले (?)। जीववायुप्राणसूत्रास्पदकोदण्डमध्यतः ॥९॥
मातृका कर्णिकासूत्रे जिह्वायां स्यादनामिका। वर्णावती च जिह्वाग्रे स्वरवर्णाश्च तालुके ॥१०॥
वर्गजा ओष्ठयोः पूज्याः संयोगा दन्ततालुके। कण्ठोर्ध्वे मन्दरवती नित्यं पूज्या प्रकीर्तिता ॥११॥
ततः परं वामभागे मण्डलं चतुरस्रकम्।

चतुर्दलपद्मं विभाव्य,

तन्मध्ये चिन्तयेद् देवीं ललितां श्यामविग्रहाम्। कराभ्यां दक्षवामाभ्यां पद्मं नीलोत्पलं तथा ॥१२॥
बिभ्राणां कुलचण्डं च ध्यात्वानेन प्रपूजयेत्।

ऍं श्रीं कुलचण्डाय श्रीं ऍं, इति चण्डबलिं दद्यात्।

तर्पयेन्मूलविद्याभं प्रत्येकं सप्तसप्तधा। श्रीगुरोः पादुकां स्मृत्वा सप्तवारं च तर्पयेत् ॥१॥
ततः पात्रं समुद्धृत्य कराभ्यां मस्तकावधि। अहन्तेदन्तयोरैक्यप्रतिपत्त्या निवेदयेत् ॥२॥
सर्वावरणमध्यस्थं ब्रह्मरन्ध्रे लयं नयेत्।

नानागोत्रजातिश्रीचर्य्याधिकार-श्रीपदाधिष्ठानाधिकार-एकद्विनवद्वादशषोडशपञ्चाशच्चतुरशीतिसिद्धभूत-वर्तमानभविष्यतादिगुरुनाथपादुकाः, इत्यादिस्थाने लयः।

सर्वं व्याहृतिसंस्थानो भूदेव्याः शम्भुशक्तयः।

नमो मम मनसि स्थिताय नाथाय यत्कर्मकार्यपराय स्वाहा।

चरणं पवित्रमित्यादिवेदमागममेव च। शाम्भवं चरणं ध्यात्वा सच्चिदानन्दलक्षणम् ॥१॥
पवित्रं परमं साक्षात् पुराणं परमामृतम्। येन पूता महात्मानः क्षणात् संसारसागरात् ॥२॥
समुत्तीर्य परानन्दं भुञ्जते परशाम्भवम्। तस्मिंश्चित्तलयं कृत्वा तद्भूयोऽहमिति स्मरन् ॥३॥
एतद्रहस्यमत्यन्तं वैदिके शाम्भवेऽपि च। एतद्गुरुमुखाज् ज्ञात्वा न भूयो भुवि जायते ॥४॥
आबध्य कमठीमुद्रां पुनर्योगं समभ्यसेत्। इत्यानन्दयतः पूर्वं प्राणबुद्धिलयो भवेत् ॥५॥

इति श्रीषडन्वयशाम्भवरश्मिपूजाक्रमः।

संहारक्रम पूजा—संहारपूजा के लिये श्रीनाथ की पूजा तीन बार करे। उनसे आज्ञा लेकर पूर्ववत् पार्थिवादि से मानस तक की पूजा क्रम से करे। आज्ञा चक्र से मूलाधार तक छः चक्रों में चतुष्कादि क्रम से पूजा करे। उन स्थानों में पूजा के बाद पाँच-पाँच के क्रम से पूजा गुरु के उपदेशानुसार करे। शिखामूल में परशम्भु और शाभवी की पूजा योनिमध्य में करे। षोडशान्त में परा पूजा एवं चूली मूल में रश्मि-पूजा करे। चिन्मय मन्दिर में, महानाभितल में एवं कन्द मेढ़ में सृष्टि-स्थिति पूजा करे। तिरोधा की पूजा नासिकाग्र में करने से शूलपथ में मुक्ति होती है। ज्ञाना की पूजा पृष्ठाग्र में एवं सती की पूजा योनिबिल

में करे। असती की जिह्वामूल में, सदसती की नासाग्र में, क्रिया की लिङ्गमूल में और अण्डकोष में आत्मावर्ता की पूजा करे। लिङ्ग के नीचे विषयेच्छा की एवं चर्ममाल में गोचरी की पूजा करे। नेत्रों में लोकों का और वेदों का चिन्तन उदर में करे। कुण्डली का नाभिमूल में, सुषुम्णा का मार्ग में, जीव वायु प्राण सूत्रास्पद का कोदण्डमध्य में चिन्तन करे। कर्णिका सूत्र में मातृका का, जीभ में अनामिका का एवं वर्णावती का जिह्वाग्र में, स्वर वर्णों का तालु में, वर्गज वर्णों का ओठों में, दन्त, तालु में संयुक्त वर्णों का एवं कण्ठोर्ध्व में मन्दरवती की पूजा नित्य करनी चाहिये। तब अपने वाम भाग में चतुरस्र मण्डल बनावे। चतुर्दल पद्म की भावना करके उसके मध्य में श्यामविग्रह ललिता का चिन्तन करे। उनके वाम-दक्षिण हाथों में कमल और नीलोत्पल हैं। कुलचण्ड से वे घिरी हैं, इस प्रकार का ध्यान करके पूजा करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं श्रीं कुलचण्डाय श्रीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौं से चण्डबलि प्रदान करे।

मूल विद्या से प्रत्येक का सात-सात बार तर्पण करे। श्रीगुरुपादुका का स्मरण करके पुनः सात बार तर्पण करे। तब पात्र को हाथों से मस्तक तक ले जाकर अहन्ता इदन्ता में ऐक्य की भावना निवेदित करे एवं सर्वावरण मध्यस्थ को ब्रह्मरन्ध्र में लीन करे। सभी व्याहृति संस्थान भूदेवी एवं शम्भु की शक्तियाँ हैं।

पवित्र चरण, वेद, आगम, शाम्भव का ध्यान करके सच्चिदानन्दलक्षण, परम पवित्र, साक्षात् पुराण परम अमृत; जिनसे पवित्र होकर महात्मा लोग क्षण में ही भव सागर से पार हो जाते हैं एवं शाम्भव परमानन्द का भोग करते हैं; उन्हीं में अपने चित्त को लय करके चिन्तन करे कि मैं भी वही हूँ। इस अत्यन्त रहस्य को वैदिक या शाम्भव गुरु से जानकर जो आचार करता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता। कमठी मुद्रा बाँधकर योग का अभ्यास करे। इस आनन्द से प्राण एवं बुद्धि का आपस में लय हो जाता है।

नवदुर्गाविधानम्

अथ नवदुर्गाविधानं रुद्रयामले—

श्रीईश्वर उवाच

अथ वक्ष्ये सुरेशानि नवदुर्गाविधानकम्। यज्ज्ञात्वा साधकः सर्वः षट्कर्माणि प्रसाधयेत्॥१॥
शान्तिः पुष्टिस्तथा वश्यं मारणोच्चाटकर्मणी। आकर्षणं तथा केचित् षट्कर्माणि नियोजयेत्॥२॥
मार्कण्डेयपुराणोक्तं देवीमाहात्म्यमुत्तमम्। मूलमन्त्रेण पुटितं जपन् वाञ्छितमाप्नुयात्॥३॥

अथ मूलमन्त्रं प्राग्दुर्गाप्रकरणोक्तनवार्णकं श्रीविद्यासंवलितं यथा—ऐंह्रींश्रीं कएईलह्रीं चामुण्डायै हसकहलह्रीं विच्चे सकलह्रीं। एवं श्रीविद्यासंवलितनवार्णमन्त्रं देवीमाहात्म्यस्याद्यन्ते संपुटत्वेन संयोज्य देवीमाहात्म्यं पठेदित्यर्थः। तथा—

शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं नवाक्षरम्। चण्डीसप्तशतीजाप्ये संपुटोऽयमुदाहृतः॥४॥
सकामं संपुटं जाप्यं निष्कामं संपुटं विना। आश्विनस्य सिते पक्षे तृतीयायामुपक्रमेत्॥५॥
आमध्यरात्रं प्रजपेद्रवेरुदयतः क्रमात्। एवं मूलमनुं जप्त्वा ततः सप्तशतीं पठेत्॥६॥

मूलमनुं विद्यायुक्तं, पाठोऽपि विद्यायुक्तनवार्णमन्त्रसंपुटितदेवीमाहात्म्यस्य। संपुटक्रमस्तु प्रागुक्तः 'शतमादौ शतं चान्ते' इत्यादि ज्ञेयम्। तथा—

अष्टम्यन्ते जपेल्लक्षं निराहारो जितेन्द्रियः। संपूज्य दिनशो देवीं ततो होमं समाचरेत्॥७॥
अत्र षड्दिनेषु यथा लक्षं पूर्णं भवेत्तथा जपेदिति।

दशांशतो भक्तियुतः पायसैः सर्पिषा तिलैः। ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात्कुमारीश्च प्रभोजयेत्॥८॥
इष्टार्थं लभते मन्त्री नात्र कार्या विचारणा। प्रथमं चरितं प्रोक्तं मधुकैटभनाशनम्॥९॥
द्वितीयं चरितं प्रोक्तं महिषासुरघातनम्। तृतीयं चरितं शुम्भनिशुम्भहरणं तथा॥१०॥

नवदुर्गा विधान—रुद्रयामल में श्री ईश्वर ने कहा कि हे सुरेशानि! अब नवदुर्गा का विधान कहता हूँ, जिसे जानकर साधक सभी षट्कर्मो शान्ति पुष्टि वश्य मारण उच्चाटन आकर्षण का साधन करता है। मार्कण्डेय पुराणोक्त उत्तम देवीमाहात्म्य को मूल मन्त्र से पुटित करके पाठ करने से वांछित फल की प्राप्ति होती है। यह मूल मन्त्र है—ऐं ह्रीं श्रीं क ए ई ल ह्रीं चामुण्डायै हसकहलह्रीं विच्चे सकलह्रीं। इस प्रकार श्रीविद्या-संवलित नवार्ण मन्त्र को देवीमाहात्म्य के आदि और अन्त में सम्पुटित करके दुर्गासप्तशती का पाठ करना चाहिये।

दुर्गा सप्तशती पाठ के पहले नवाक्षर मन्त्र का जप एक सौ आठ बार करे और अन्त में भी एक सौ आठ जप करे। चण्डी सप्तशती पाठ में इसे सम्पुटित पाठ कहते हैं। कामना पूर्ति के लिये सम्पुटित पाठ करे। निष्काम पाठ बिना सम्पुट के करे। आश्विन शुक्ल पक्ष की तृतीया में आधी रात से प्रारम्भ करके सूर्योदय तक पाठ करे। इस प्रकार मूल मन्त्र का जप कर सप्तशती का पाठ करे। तृतीया से प्रारम्भ करके अष्टमी तक छः दिनों में निराहार जितेन्द्रिय रहकर एक लाख जप रात में करे। दिन में प्रतिदिन देवी की पूजा करके दशांश अर्थात् दश हजार हवन भक्तिपूर्वक पायस, गोघृत एवं तिल से करे। ब्राह्मणों और कुमारियों को भोजन करावे। इससे निःसन्दिग्ध रूप से अभीष्ट की प्राप्ति होती है। मधु-कैटभ वध को प्रथम चरित्र कहते हैं। महिषासुर वध को द्वितीय चरित्र कहते हैं। शुभ-निशुम्भ वध को तृतीय चरित्र कहते हैं।

चरितत्रयस्य विनियोगादिविधिः

प्रथमस्य चरित्रस्य मुनिर्ब्रह्मा समीरितः। गायत्रं छन्द आख्यातं महाकाली तु देवता ॥११॥
वाग्भवं बीजमाख्यातमग्निस्तत्त्वं महेश्वरि। धर्मार्थे विनियोगः स्याद्वाग्बीजोक्तं समाचरेत् ॥१२॥

षडङ्गं ध्यानमिति शेषः।

द्वितीयस्य चरित्रस्य मुनिर्विष्णुरुदीरितः। छन्द उष्णिग् महालक्ष्मीर्देवतात्र समीरिता ॥१३॥
हृल्लेखा बीजमुदितं वायुस्तत्त्वं महेश्वरि। विनियोगोऽर्थसंप्राप्त्यै हृल्लेखोक्तं समाचरेत् ॥१४॥
उत्तरस्य चरित्रस्य ऋषी रुद्रः समीरितः। त्रिष्टुप् छन्दो महत्पूर्वा देवतात्र सरस्वती ॥१५॥
बीजं तु कामराजं स्याद्रविस्तत्त्वं समीरितम्। कामाप्त्यै विनियोगः स्यात् कामराजोक्तमाचरेत् ॥१६॥
एवमृष्यादिकं स्मृत्वा प्राग्वद् ध्यात्वा समाहितः। ध्यानपूर्वं पठेच्चण्डीं सुस्पष्टपदवर्णकाम् ॥१७॥
एवं यः कुरुते देवि न दुःखं प्राप्नुयात् क्वचित्। धनैर्धान्यैर्यशोभिश्च सुभगैः पुत्रपौत्रकैः ॥१८॥
संयुक्तः सुचिरं जीवेद्विद्यावान् स शतं समाः। प्रथमं चरितं देवि सृष्टिरूपं न संशयः ॥१९॥
द्वितीयं स्थितिरूपं स्यात् तृतीयं लयरूपकम्। पूर्वोक्तविधिना साध्वि साधकस्तु सुबुद्धिमान् ॥२०॥

अत्र सृष्ट्यन्तता स्थित्यन्तता संहारान्तता। तत्फलानि चाश्रमभेदेन प्राग्वद्बोध्यानि।

असाध्यं साधयेच्छीघ्रं यदि कार्यं न सिध्यति। पाठमात्रेण सिध्यन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥२१॥
देव्यालये शिवागारे पठेद् देवि यजेत् तदा। दीपं दत्त्वा घृतेनैव जपेन दशकेन च ॥२२॥
धूपयेद् गुग्गुलैर्देवीं मनसा चिन्तयन् सदा। दशावृत्त्या सदा नित्यं शुचिर्भूत्वा समाहितः ॥२३॥
अधःशायी हविष्याशी पुरश्चरणरूपतः। शतावर्तं जपेदादौ पुरश्चरणसिद्धये ॥२४॥
तद्दशांशेन जुहुयान्मूलमन्त्रेण साधकः। नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ॥२५॥
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्। अनेन वा प्रजुहुयाद् द्रव्यैः प्राक्समुदीरितैः ॥२६॥

अत्र केचित् 'जयन्ती मङ्गला काली' इति श्लोकरूपमन्त्रेण वा दशांशं जुहुयादिति। अत्र शतचण्डीविधानस्य मूलमन्त्रेण श्लोकरूपमन्त्रेण वा, दशांशहोमस्तु अयुतसंख्याकः। 'प्रतिश्लोकेन जुहुयात् पायसं तिल सर्पिषा' इति विधौ प्राग्वत् शतमादौ शतं चान्ते संपुटक्रमेण मूलमन्त्रहोम आवश्यकः। अत्रापि तर्पणब्राह्मणसंतर्पणादिकं पूर्वदशांशेन कृत्वा पुरश्चरणं समाप्य काम्यकर्माणि कुर्यात्।

प्रथम चरित्र के ऋषि ब्रह्मा हैं, छन्द गायत्री और देवता महाकाली हैं। ऐं बीज है एवं अग्नि तत्त्व है। धर्म के लिये इसका विनियोग होता है। वाग्बीज से इसमें षडङ्ग न्यास किया जाता है।

द्वितीय चरित्र के ऋषि विष्णु, छन्द उष्णिक्, देवता महालक्ष्मी, ह्रीं बीज एवं तत्त्व वायु है। अर्थ-प्राप्ति के लिये इसका विनियोग होता है। ह्रां ह्रीं ह्रूं इत्यादि से इसमें षडङ्ग कर न्यास किया जाता है।

उत्तर चरित्र के ऋषि रुद्र, छन्द त्रिष्टुप्, देवता महासरस्वती, बीज क्लीं एवं तत्त्व सूर्य हैं। काम-प्राप्ति के लिये इसका विनियोग होता है। षडङ्ग करन्यास क्लां क्लीं क्लूं इत्यादि से होता है। इस प्रकार ऋष्यादि का स्मरण-ध्यान करके सुस्पष्ट शब्द-वर्ण उच्चारण करके चण्डीपाठ करे। हे देवि! इस प्रकार जो पाठ करता है, उसे कभी दुःख नहीं होता। धन-धान्य, यश, पुत्र-पौत्र से वह युक्त होता है। विद्यावान होकर सौ वर्षों तक जीवित रहता है। प्रथम चरित्र सृष्टिरूप है, द्वितीय चरित्र स्थितिरूप है एवं तृतीय चरित्र संहाररूप है। विद्वान् साधक को पूर्वोक्त विधि से पाठ करना चाहिये। सृष्ट्यन्त, स्थित्यन्त एवं संहारान्त पाठ का फलभेद आश्रमभेद से ज्ञातव्य है।

इस प्रकार के पाठ से असाध्य भी शीघ्र ही साध्य हो जाता है। यदि कार्य सिद्ध नहीं होता हो तो वह पाठमात्र से ही सिद्ध हो जाता है। देवी मन्दिर में या शिव मन्दिर में देवी की पूजा करके घी का दीपक जलाकर दश पाठ करे। गुग्गुल का धूप देकर मन से सदैव देवी का चिन्तन करे। एकाग्रता से पवित्र होकर नित्य दश पाठ करे। नित्य जमीन पर शयन करे। हविष्यान्न का भोजन करे। पुरश्चरण रूप में सौ बार पाठ करे तो पुरश्चरण सिद्ध होता है। उसका दशांश हवन मूल मन्त्र से करे। अथवा 'नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्' से पूर्वोक्त द्रव्यों से हवन करे। कुछ लोग 'जयन्ती मंगला काली' इस श्लोकरूप मन्त्र से भी दशांश हवन करते हैं। यहाँ शतचण्डी विधान में मूल मन्त्र से या श्लोकमन्त्र से दश हजार हवन का विधान है। प्रत्येक श्लोक से खीर, जौ, तिल, गोघृत से हवन होता है। पूर्ववत् सौ पहले और सौ बाद में सम्पुट क्रम से मूल मन्त्र से हवन आवश्यक है। यहाँ भी तर्पण मार्जन ब्राह्मणभोजन दशांश क्रम से करना चाहिये। इस प्रकार का पुरश्चरण करके काम्य कर्मों का सम्पादन करना चाहिये।

काम्यकर्मसाधनप्रकारः

तथा—

अनुलोमैर्यदा जाप्यं शुभकर्म प्रसिद्ध्यति। विलोमेन तदा देवि क्रूरकर्म प्रसिद्धति ॥२७॥
चरित्रं प्रथमं देवि नित्यं जपति साधकः। द्वितीयं वा तृतीयं वा सम्पूर्णं वापि पठ्यते ॥२८॥
तस्य सिद्धिर्न सन्देहो ध्रुवं चेति वरानने। अक्षराणां पदानां च पादानामर्धरूपिणाम् ॥२९॥
श्लोकानां च तथा प्रोक्तमध्यायानां विलोमतः। निधनोच्चाटने द्वेषः स्तम्भनं मोहनं तथा ॥३०॥
वश्यादीनि च कर्माणि प्रसिद्ध्यन्ति क्रमेण वै। ग्रथनादिप्रभेदं तु प्राक्प्रोक्तं विधिना चरेत् ॥३१॥
अक्षराणि यथा मन्त्रे तथा श्लोकाः स्तवे शुभे।

शुभे स्तवे देवीमाहात्म्ये। अत्रायमर्थः—मन्त्रार्णान्तरितसाध्यनामार्णं ग्रथनं मन्त्रेषु। अत्र तु श्लोकान्तरित-साध्यनामाक्षरं ग्रथनमित्यर्थः। श्लोकद्वयान्तरितसाध्यनामार्णो विदर्भः। संपुटक्रमस्तु—देवीमाहात्म्यमनुलोमेन पठित्वा अमुकं स्तम्भय स्तम्भय इत्युच्चार्य पुनर्देवीमाहात्म्यमक्षरप्रतिलोमेन पठेदित्येकावृत्तिः। एवमग्रेऽपि। रोधनप्रकारस्तु—अर्धं देवीमाहात्म्यस्य पठित्वाऽनुलोमेन अमुकामुकयोर्विद्वेषणं कुरुकुरु इत्युच्चार्योत्तरार्धमक्षरार्धप्रति-लोमेन पठेदित्येकावृत्तिः। एवमग्रेऽपि। 'आदौ योगो भवेदन्ते पल्लवसंपुटयो'रित्यत्रोच्चाटने योगो मारणे पल्लवः इति संप्रदायः। तेन 'अमुकमुच्चाटय उच्चाटय फट्'। ततः पादप्रतिलोमेन देवीमाहात्म्यं पठेदित्येकावृत्तिः। एवमग्रेऽपि। कार्मणे तु अक्षरप्रतिलोमेन देवीमाहात्म्यं पठित्वा अन्ते 'अमुकं हनहन हुं फट्' इति पठेदित्येकावृत्तिरेवमग्रेऽपि। ग्रथनक्रमरीत्या विदर्भक्रमो वश्ये।

काम्य कर्म—दुर्गा सप्तशती के अनुलोम पाठ से शुभ कर्म सिद्ध होते हैं। विलोम पाठ से क्रूर कर्मों की सिद्धि होती है। प्रथम, द्वितीय या तृतीय चरित्र अथवा सम्पूर्ण सप्तशती का भी नित्य पाठ किया जाता है। इस क्रम से पाठ करने पर सिद्धि निश्चित मिलती है। अक्षर पाद, पादार्ध, श्लोक का विलोम पाठ अध्यायों का करने से मारण उच्चाटन विद्वेषण स्तम्भन मोहन वशीकरण सिद्ध होते हैं। पूर्वोक्त विधि से ग्रथन आदि करना चाहिये। मन्त्र में जैसे अक्षर होते हैं, वैसे ही देवीमाहात्म्य में श्लोक होते हैं।

ग्रथन—मन्त्र के एक अक्षर के बाद नाम का अक्षर फिर मन्त्र का एक अक्षर और नाम का एक अक्षर जोड़कर मन्त्र और नाम के अक्षरों के विन्यास को ग्रथन कहते हैं। एक श्लोक के बाद एक नामाक्षर फिर श्लोक के बाद एक नामाक्षर से श्लोक का ग्रथन होता है। दो-दो श्लोकों के बाद नाम का एक अक्षर का विन्यास बारम्बार करने से विदर्भ होता हैं। देवीमाहात्म्य के एक अनुलोम पाठ के बाद अमुकं स्तम्भय स्तम्भय कहे। पुनः सप्तशती का पाठ विलोम क्रम से करके 'अमुकं स्तम्भय स्तम्भय' कहने से एक आवृत्ति होती है। दुर्गा सप्तशती के प्रारम्भ में, मध्य में और अन्त में षड्कर्म जोड़ने से रोधन होता है। नाम के बाद पाठ करने से योग होता है। पाठ के बाद नाम जोड़ने से पल्लव होता है। यह उच्चाटन में प्रशस्त है। इसमें 'अमुकं' उच्चाटय उच्चाटय फट् कहना पड़ता है। प्रतिलोम क्रमपद पाठ से एक आवृत्ति होती है। मारण कर्म में अक्षरों के प्रतिलोम क्रम से पाठ होता है। 'अन्त में अमुकं हन हन हुं फट्' कहना पड़ता है। ग्रथन क्रम से विदर्भ क्रम का पाठ वशीकरण में होता है।

उत्कीलनक्रमः

तथा—

संहारसृष्टिस्थित्यन्तं कार्मणोत्कीलनं स्मृतम्। एतस्य वैपरीत्येन स्तम्भनोत्कीलनं भवेत्॥३२॥
स्थितिसंहारसृष्ट्यन्तमुच्चाटोत्कीलनं स्मृतम्। सृष्टिसंहारस्थित्यन्तं विद्वेषोत्कीलनं तथा॥३३॥
उत्कीलनक्रमो देवि तवाग्रे कथितो ध्रुवम्। येन ज्ञातेन देवेशि त्रैलोक्यविजयो भवेत्॥३४॥
उत्कीलनं विना कान्ते: स्थिति: क्वापि न जायते। जपित्वोत्कीलनं चाद्यं त्रिखण्डं भ्रंशितं क्षणात्॥३५॥

त्रिखण्डं चरितत्रयम्। भ्रंशितं प्रोक्तसृष्ट्यन्तता स्थित्यन्तता संहारान्तता। अयमर्थः—चरितत्रितयं क्रमेण सृष्टिस्थितिलयरूपं प्रोक्तक्रमेणोत्कीलनं नामपल्लवादिकं विना प्रथमतो जपित्वा ततः प्रयोगरूपेण जपेत्। संपुटकार्मणादौ प्रयोगमध्येऽनुग्रहं कर्तुमिच्छति तदानुग्रहप्रोक्तनामपल्लवादिकं संयोज्य यावत् स्वास्थ्यं तावदुत्कीलनमेव जपेदित्यर्थः। केचिदुत्कीलनादौ नामपल्लवादिकं न योज्यमिति वदन्ति, यथागुरूपदेशं कार्यमिति।

संहार-सृष्टि-स्थिति क्रम के पाठ से कार्मण उत्कीलन होता है। इसके विपरीत पाठ से स्तम्भन उत्कीलन होता है। उच्चाटन उत्कीलन के लिये स्थिति-संहार-सृष्टि क्रम से पाठ होता है। विद्वेषण उत्कीलन के लिये सृष्टि-संहार-स्थिति-क्रम से पाठ होता है। इस प्रकार हे देवि! आपको उत्कीलन क्रम बतलाया गया। इसके ज्ञान से साधक त्रैलोक्यविजयी होता है। उत्कीलन के बिना स्थिति कभी नहीं होती। पहले उत्कीलन-जप से चरितत्रय भ्रंशित होता है। सृष्टि से अन्त होने वाले, स्थिति से अन्त होने वाले और संहार से अन्त होने वालें को भ्रंशित पाठ कहते हैं। दुर्गा सप्तशती के प्रथम चरित्र-मध्यम चरित्र और उत्तर चरित्र सृष्टि-स्थिति एवं लयरूप हैं। इससे नाम-पल्लवादि नहीं लगते।

कार्मणे साध्यकथनन्तत्कर्मारम्भकालश्च

तथा—

साध्यं कार्मणकर्मादौ वक्ष्येऽहं शृणु पार्वति। सर्वभूतस्य चोरारिहिंसकाः पिशुनाः शठाः॥३६॥
ते साध्याः कार्मणे प्रोक्ताः कर्मारम्भदिनं शृणु। भूताष्टम्यां चतुर्दश्यां साधयेत् साधकोत्तमः॥३७॥
दशधा पञ्चधा वापि सप्तधा वा त्रिधापि च। देव्यालये पठेद् देवि विलयः सिद्ध्यति क्षणात्॥३८॥

विना न्यासं विना ध्यानं विना भूतविशोधनम्। पाठमात्रेण सिद्ध्यन्ति मन्त्रिणो नात्र संशयः ॥३९॥
सिन्दूररेणुभिर्देवि पूजां कुर्यात् समाहितः। इति।

सभी भूत चोर शत्रु हिंसक चुगलखोर मूर्ख दुष्ट कार्मण कर्म में साध्य होते हैं। उनके कर्मारम्भ दिनों को सुनो। भूतों को वश में करने के लिये अष्टमी और चतुदर्शी में साधक साधना करे। दश पाँच सात या तीन पाठ देवी-मन्दिर में करने से सभी का विलय क्षण भर में हो जाता है। बिना न्यास बिना ध्यान बिना भूतशुद्धि के पाठ मात्र से ही कार्य सिद्ध होता है। देवी पूजा एकाग्रता से सिन्दूर चूर्ण से करनी चाहिये।

एकावृत्त्यादिपाठानां फलानि

वाराहीतन्त्रे—

चण्डीपाठफलं देवि शृणुष्व गदतो मम। एकावृत्त्यादिपाठानां यथावत् कथयामि ते ॥१॥
सङ्कल्प्य पूर्वं संपूज्य न्यस्याङ्गेषु मनून् सकृत्। पाठाद् बलिप्रदानाद्धि सिद्धिमाप्नोति मानवः ॥२॥
उपसर्गोपशान्त्यर्थं त्रिरावर्तं पठेन्नरः। ग्रहोपशान्तौ कर्तव्यं पञ्चावर्तं वरानने ॥३॥
महाभये समुत्पन्ने सप्तावर्तमुदीरयेत्। नवावृत्त्या भवेच्छान्तिर्वाजपेयफलं भवेत् ॥४॥
राजवश्याय भूत्यै च रुद्रावृत्तिमुदीरयेत्। अर्कावृत्त्या कार्यसिद्धिर्वैरिहानिश्च जायते ॥५॥
मन्वावृत्त्या रिपुर्वश्यस्तथा स्त्री वश्यतामियात्। सौख्यं पञ्चदशावृत्त्या श्रियं चाप्नोति मानवः ॥६॥
कलावृत्त्या पुत्रपौत्रधनधान्यागमं विदुः। राज्ञां भीतिविनाशाय वैरिप्रोच्चाटनाय च ॥७॥
कुर्यात् सप्तदशावृत्तिं तथाष्टादशकं प्रिये। महाव्रणविनाशाय विंशावर्तं पठेत् सुधीः ॥८॥
पञ्चविंशावर्तनात्तु भवेद्बन्धविमोक्षणम्। सङ्कटे समनुप्राप्ते दुश्चिकित्स्यामये तथा ॥९॥
जातिध्वंसे कुलोत्सादेऽप्यायुषो नाश आगते। वैरिवृद्धौ व्याधिवृद्धौ धननाशे तथा क्षये ॥१०॥
तथैव त्रिविधोत्पाते तथा चैवातिपातके। कुर्याद्यतात्मा शतावृत्तिं तया संपद्यते सुखम् ॥११॥
श्रियो वृद्धिः शतावृत्त्या राज्यवृद्धिस्तथा परा। मनसा चिन्तितं देवि सिध्येदष्टोत्तराच्छतात् ॥१२॥
शताश्वमेधयज्ञानां फलमाप्नोति सुव्रते। सहस्रावर्तनाल्लक्ष्मीरावृणोति स्वयं स्थिरा ॥१३॥
भुक्त्वा मनोरमान् कामान् नरो मोक्षमवाप्नुयात्। यथाश्वमेधः क्रतुराट् देवानां च यथा हरिः ॥१४॥
स्तवानामपि सर्वेषां तथा सप्तशतीस्तवः। (नातः परतरं किञ्चित् स्तोत्रमस्ति वरानने ॥१५॥
भुक्तिमुक्तिप्रदं पुण्यं पावनानां च पावनम्।) अथवा बहुनोक्तेन किमनेन वरानने ॥१६॥
चण्ड्याः शतावृत्तिपाठात् सर्वाः सिद्ध्यन्ति सिद्धयः। इति।

वाराही तन्त्र में कहा गया है कि हे देवि! चण्डी पाठ के एक आवृत्ति आदि पाठों का यथावत् फल इस प्रकार है। पहले संकल्प करके पूजा करे। तब मन्त्रों से न्यास करे। पाठ एवं बलि प्रदान से मनुष्य को सिद्धि मिलती है। उपसर्ग की शान्ति के लिये मनुष्य तीन पाठ करे। ग्रहशान्ति के लिये पाँच पाठ करना चाहिये। महाभय होने पर सात पाठ करे। नव बार पाठ से शान्ति होती है और वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है। राजा को वश में करने और धनप्राप्ति के लिये ग्यारह पाठ करे। बारह पाठ से कार्य सिद्ध होते हैं और शत्रु की हानि होती है। चौदह पाठ से शत्रु और स्त्रियों का वशीकरण होता है। पन्द्रह पाठ से सुख और श्री की प्राप्ति होती है। सोलह पाठ से पुत्र-पौत्र एवं धन-धान्य मिलते हैं। राजभय के विनाश के लिये और वैरी के उच्चाटन के लिये क्रमशः सत्रह और अट्ठारह पाठ करे। बड़े घाव के नाश के लिये बीस पाठ करे। पच्चीस पाठ से बन्दी छूट जाता है।

शतचण्डी पाठ से संकट, असाध्य रोग, जाति विनाश, कुलोत्साद, आयुक्षय, वैरियों की वृद्धि, व्याधि की वृद्धि, धनहानि और आगत नाश, त्रिविध उत्पात एवं महापाप का नाश होता है एवं सुख प्राप्त होते हैं। सौ पाठ से श्रीवृद्धि एवं

राज्यवृद्धि होती है। एक सौ आठ पाठ से मन में चिन्तित कार्य सम्पन्न होते हैं। इससे सौ अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त होता है। एक हजार पाठ अर्थात् सहस्रचण्डी से लक्ष्मी वरण करती है और स्थिर बनी रहती है एवं मनवांछित भोगों को भोगकर मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है।

यज्ञों में जैसे अश्वमेध श्रेष्ठ है, देवताओं में जैसे विष्णु श्रेष्ठ हैं, वैसे ही सभी स्तोत्रों में सप्तशती स्तोत्र श्रेष्ठ हैं। इससे श्रेष्ठ कोई स्तोत्र नहीं है। यह भोग-मोक्षप्रद, पुण्यप्रद और पवित्रों को भी पवित्र करने वाला है। बहुत कहने से क्या लाभ? चण्डी के सौ पाठ से सभी सिद्धियों की सिद्धि होती है।

प्रयोगविधिः

अत्र प्रयोगस्तु—क्वचिद् देव्यालये शिवालये वा प्रागुक्तक्रमेण स्वासनोपरि प्राङ्मुखो उदङ्मुखो वा उपविश्याचम्य, श्रीविद्यासंवलितनवार्णमन्त्रेण प्राणानायम्य ऋष्यादिकरषडङ्गन्यासध्यानानि प्राक्प्रोक्तक्रमेण विधाय सङ्कल्पं कुर्यात्। अद्यामुके मासि अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकगोत्रोऽमुकदेवशर्म्मा श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीप्रीतिपूर्वकामुककामनासिद्धिकामोऽद्यारभ्यामुकदिनं यावत् प्रत्यहं द्वादशावृत्त्या नवावृत्त्या त्रिरावृत्त्या वा नियमतः शतसहस्रावृत्तिसंख्याकं 'सावर्णिः सूर्यतनयो' इत्यादि 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं मार्कण्डेयपुराणान्तर्गतदेवीमाहात्म्यपाठं नवार्णसंपुटत्वेन करिष्ये इति सङ्कल्प्य, पुस्तकं संपूज्य पुस्तकं दृष्ट्वा हस्ते धृत्वा पाठं कुर्यात्। प्राणायामर्ष्यादिकरषडङ्गन्यासध्यानपूर्वकं नवार्णमन्त्रमाद्यन्तेऽष्टोत्तरशतमष्टोत्तरशतं जपेत्। मौनी ध्यानपरायणो मध्येऽन्यत्र वार्तालापमकुर्वन्नस्खलिताक्षरं स्पष्टपदोच्चारणं कुर्वन् यथासंख्यया नियमतः प्रत्यहं तावत्संख्याकपाठं कुर्यात् प्रोक्तसिद्धिर्भवेत्। इति सप्तशतीपाठविधिः।

अत्र ग्रथनादिभेदक्रमेणानुलोमपाठादपि तत्तत्प्रयोगाः सिद्ध्यन्ति। अथवा प्रोक्तक्रमेण वर्णप्रतिलोमपदप्रतिलोमपादप्रतिलोमार्धश्लोकप्रतिलोमश्लोकप्रतिलोमाध्यायप्रतिलोमानां च ग्रथनादियोगात् तत्तत्प्रयोगाः सिध्यन्त्येव, ग्रथनादिकं विनापि सिध्यन्त्येव। एवमुभयथा विलोमक्रमाणां सिद्धिः। अनुलोमक्रमस्य ग्रथनादिकं विना प्रयोगा न सिध्यन्ति, तत्र ग्रथनादिक्रम आवश्यकः। विलोमपाठानामुभयथानुलोमपाठानामेकधा इति सर्वं गुरुतः शास्त्रतश्च सम्यग् ज्ञात्वा प्रयोगादिकं कुर्यात्।

प्रयोग—किसी देवी मन्दिर या शिवालय में पूर्वोक्त क्रम से आसन पर पूर्व या उत्तरमुख बैठकर आचमन करे। श्रीविद्या-संवलित नवार्ण मन्त्र से प्राणायाम करे। ऋष्यादि न्यास, कर न्यास, षडङ्ग न्यास, ध्यान पूर्वोक्त प्रकार से करके निर्धारित संख्या में 'सावर्णिः सूर्यतनयो' से 'सावर्णिर्भविता मनुः' तक सप्तशती पाठ का सङ्कल्प करे। इस प्रकार सङ्कल्प करके पुस्तक की पूजा करके हाथ में पुस्तक रखकर उसे देखकर पाठ करे। प्राणायाम, ऋष्यादि कर षडङ्ग न्यास ध्यान करके नवार्ण मन्त्र का एक सौ आठ जप आदि और अन्त में करे। मौन रहकर एवं ध्यानपरायण रहकर पाठ के समय वार्तालाप न करे। स्खलित अक्षर से पाठ न करे। पदों का उच्चारण स्पष्ट करे। यथासंख्या नियमतः प्रतिदिन तब तक पाठ करे जब तक संकल्पित संख्या में पाठ पूरा न हो जाय। इस प्रकार के पाठ से प्रयोग सिद्ध होते हैं अथवा पूर्वोक्त क्रम से वर्णप्रतिलोम, पदप्रतिलोम, पादप्रतिलोम, अर्द्धश्लोक प्रतिलोम, ग्रथनादि योग से पाठ करने पर वांछित प्रयोग सिद्ध होते हैं।

ग्रन्थनादि के बिना भी सिद्धि मिलती है। इस प्रकार दोनों प्रकार से विलोम क्रम से पाठ करने पर सिद्धि मिलती हैं। अनुलोम क्रम से ग्रन्थनादि के बिना प्रयोग सिद्ध नहीं होते। इसमें ग्रन्थनादि क्रम आवश्यक है। दो विलोम पाठ एवं एक अनुलोम पाठ से कार्य सिद्ध होता है। गुरु से और शास्त्र से सम्यक् ज्ञान प्राप्त करके ही प्रयोगादि करना चाहिये।

चरित्राणां पृथक्पृथक्फलानि

प्रथमादिचरित्रत्रयस्य पृथक्-पृथक् पाठस्य धर्मार्थकामा यथाक्रमं फलानि बोध्यानि। चरितत्रयपाठस्य

चतुर्वर्गफलसिद्धिः। केवलं मोक्षकामस्य संपुटं विना पाठः। 'गृही ससंपुटं कुर्यान्मोक्षार्थं संपुटं विना' इति वाराहीतन्त्रोक्तत्वात् गृहस्थः संपुटं विना न पठेदिति। अत्र 'सावर्णिः सूर्यतनयः' इत्यादि सावर्णिर्भविता मनुरित्यन्तं पाठक्रमः।

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे चतुस्त्रिंश: श्वास:।।३४।।

●

प्रथम आदि तीन चरित्रों के अलग-अलग पाठ से धर्म, अर्थ, काम फल यथाक्रम सिद्ध होते हैं। तीनों चरित्रों के पाठ से चतुवर्ग फल प्राप्त होते हैं। केवल मोक्ष के लिये बिना सम्पुट के पाठ करे। गृहस्थ सम्पुट पाठ करे। मोक्षार्थी बिना सम्पुट के पाठ करे। वाराही तन्त्र के अनुसार गृहस्थ बिना सम्पुट के पाठ न करे। यहाँ पर पाठक्रम 'सावर्णि: सूर्यतनय:' से 'सावर्णिर्भविता मनु:' तक कहा गया है।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र की कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में चतुस्त्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ पञ्चत्रिंशः श्वासः

नित्यानां मातृकादीनाञ्च प्राणात्मता

तत्र श्रीतन्त्रराजे (२७ शे पटले)—

अथ षोडशनित्यानां कालेन प्राणतोच्यते। मातृकाभूतनाथाद्यैः श्रीचक्रेण च शक्तिभिः ॥१॥

अत्र कालेनाहोरात्ररूपकालेन। प्राणता श्वासरूपतोच्यते इत्यर्थः। क्रममाह—मातृकेति, मातृकया पञ्च-भूतैर्नाथाद्यैर्नवनाथैरादिपदेन नवग्रहराश्यादीनां संग्रहः। श्रीचक्रेण शक्तिभिरावरणदेवताभिः सहोच्यते इत्यन्वयः। तथा—

लवादीनां तु कालस्य दुर्लक्ष्यत्वात्तदीरितम्। तेनैकश्वासमारभ्य तत्संख्याभिः क्रमेण वै ॥२॥
अहोरात्रस्य तद्व्याप्तिमुक्त्वा तेनान्यदूहयेत्। विशेषांश्चान्तराद् बाह्यात्तत्तत्सिद्ध्युपपादकान् ॥३॥

अत्र कालस्यातीन्द्रियत्वात् तत्रापि लवादीनां दुर्लक्ष्यत्वादनुमानेनापि निश्चेतुमशक्यत्वात् तदुदीरितं श्वासक्रम इत्यर्थः। वक्ष्यमाणरीत्याहोरात्रस्य तद्व्याप्तिं श्वासक्रमं ज्ञात्वा, विशेषांश्चान्तरान् बाह्यान् तत्तत्सिद्ध्युपपादकांश्च वक्ष्यमाणदिशा ऊहयेदित्यर्थः।

श्रीतन्त्रराज के सत्ताईसवें पटल में कहा गया है कि अब सोलह नित्याओं के दिन-रात के क्रम से एवं श्रीचक्र से उनकी शक्तियों एवं आवरण देवताओं की श्वासरूपता कही जा रही है। काल दुर्लक्ष्य है तो भी उसके लवादि सूक्ष्म खण्ड को अनुमान से एक श्वास से आरम्भ करके क्रम से संख्या को कहता हूँ। विहित रीति से दिन-रात में उसकी व्याप्ति को श्वासक्रम से जानकर विशेष अन्दर-बाहर सिद्धि के उपपादकों को जानना चाहिये।

मूलाधारोद्भवो वायुः प्राणाद्याख्यां समश्नुते। स तु पञ्चविधो भूभेदादुद्भवदेशतः ॥४॥

एक एव वायुः प्राणापानव्यानोदानसमानसंज्ञां लभते।

मूलाधार से उत्पन्न वायु प्राण अपान व्यान उदान समान—इन पाँच नाम से रहता है। भूतभेद से एवं उद्भवदेश के भेद से वे पाँच प्रकार के होते हैं।

उद्भवदेश-तत्त्वोदयः

उद्भवदेशमाह—

नासायाः पुटयोः पार्श्वतुङ्गमध्याधरंध्रगाः। प्राणाग्नीलाम्बुखात्मानः पवनाः स्युर्यथाक्रमम् ॥५॥

अत्र नासायाः पुटयोः पार्श्वस्पर्शेन वायुतत्त्वोदयः, ऊर्ध्वभागस्पर्शेनाग्नितत्त्वोदयः, मध्ये दण्डे स्पर्शेन इलातत्त्वोदयः, अधःस्पर्शेनाम्बुतत्त्वोदयः, रन्ध्रयोः परितः स्पर्शेन खतत्त्वोदयः। एवं यथाक्रमं बोद्धव्यमित्यर्थः।

नासापुटों के पार्श्वों को स्पर्श करते हुये वायुतत्त्व का उदय होता है। नासिका के ऊर्ध्व भाग को स्पर्श करते अग्नि तत्त्व का उदय होता है, नासिका के मध्य दण्ड को स्पर्श करते हुये इलातत्त्व का उदय होता है, नासिका के निचले भाग को स्पर्श करते हुये जल तत्त्व का उदय होता है एवं नासिका-छिद्र के चारों ओर स्पर्श करते हुये आकाश तत्त्व का उदय होता है।

श्वासानामुदयादिविशेषैः चन्द्रसूर्याद्यात्मकत्वम्

तथा—

गुरुकेतू भृगुकुजौ बुधार्कौ चन्द्रसूर्यजौ। क्रमाच्चतुर्षु भूतेषु व्योम सर्वात्मकं भवेत् ॥६॥

उभयस्थो भवेद्राहुश्चन्द्रसूर्यौ पुटौ क्रमात्। वामदक्षौ तयोस्तस्य प्रवेशो निर्गमस्तथा ॥७॥
जीवश्चन्द्रो रविः शून्यो भागः स्त्रीपुरुषौ तथा। पृथिवी सलिलं चन्द्रो रविरन्यत् त्रयं भवेत् ॥८॥
ग्रहेषु चन्द्रो भृग्विन्दुगुरुज्ञा भास्कराः परे। मातृकां च तथा विद्यात् स्वरव्यञ्जनभेदतः ॥९॥
अधः पृष्ठं च चन्द्रः स्यादूर्ध्वाग्रे दिनकृद्भवेत्। शरीरेऽपि कटेरूर्ध्वं चन्द्रोऽधो रविरीरितः ॥१०॥
अस्तीति वाक्यं चन्द्रः स्यान्नास्तीत्युक्तो रविः स्मृतः। शुक्लकृष्णौ तथा पक्षाविति चन्द्रा दशान्तराः ॥११॥
एवं सूर्या दश प्रोक्ता बाह्याभ्याञ्च यशस्विनि। एकादशविधौ चन्द्रभास्करौ सम्यगीरितौ ॥१२॥
एतेषां श्लोकानां स्पष्टोऽर्थः।

गुरु-केतु, शुक्र-मंगल, बुध-शनि, चन्द्र-सूर्य—इन चार युगलों में क्रमशः चार भूत रहते हैं। इन चारों भूतों में आकाश सर्वव्यापक है। चन्द्र-सूर्य के बीच में इनसे पुटित राहु रहता है। इसका प्रवेश एवं निर्गम दोनों के बाँयें-दाहिने से क्रम से होता है। जीव-चन्द्रमा है एवं सूर्य आकाश है और यही दोनों क्रमशः स्त्री-पुरुष हैं। पृथ्वी-जल में चन्द्र-सूर्य और अन्य तीन रहते हैं। ग्रहों में चन्द्र, शुक्र, इन्द्र, गुरु, सूर्य में मातृका तथा विद्या स्वर-व्यंजनभेद से रहते हैं। आगे- पीछे चन्द्रमा और ऊर्ध्व भाग में सूर्य रहते है। मानव शरीर में कमर के ऊपर चन्द्रमा और कमर के नीचे सूर्य का वास होता है। 'अस्ति' वाक्य से चन्द्र का और 'नास्ति' वाक्य से सूर्य का ज्ञान होता है। शुक्ल-कृष्ण पक्ष चन्द्र दशा अन्तर है। इस प्रकार बाह्य सूर्य दश होते हैं। एकादश प्रकार से चन्द्र, सूर्य रहते हैं।

चन्द्रादीनां सामान्यफलं तेषु कर्तव्यानि

तथा—
तयोश्चन्द्राः प्रीतिकरा भास्कराः क्लेशकारिणः। राहुः शून्यं च सर्वत्र नाशाय भवति क्षणात् ॥१३॥
सूर्येषु शस्तः सर्वत्र मृधभोजनमैथुनैः। संग्रहश्चान्यदखिलं चन्द्रे सिद्ध्यत्ययत्नतः ॥१४॥
जीवेषु कथितं तथ्यमेष्यदर्थश्च सिध्यति। निश्चित्य भवतीत्युक्तमन्यथा चेत्तदन्यथा ॥१५॥
अनिश्चिते विधौ कन्या गर्भप्रश्नेऽन्यतः पुमान्। शून्ये गर्भविपत्तिः स्यादित्याद्यूह्य वदेद् दृढम् ॥१६॥
शून्ये नभसि राहौ च शुभान्येवाशुभान्यपि। शुभानि तत्र सर्वाणि नश्यन्ति परमेश्वरि ॥१७॥

उनमें से चन्द्र प्रीतिकारक और सूर्य क्लेशकारक होते हैं। राहु और शून्य सर्वत्र नाश के लिये होता है। भोजन एवं मैथुन में सूर्य शस्त है एवं अन्य सभी संग्रह चन्द्र में अनायास सिद्ध होते हैं। गुरु में कथित तथ्य सिद्ध होता है; अन्यथा विपरीत होता है। अनिश्चित समय में प्रश्न से गर्भ में कन्या होती है एवं अन्य काल में पुत्र होता है। शून्य काल में गर्भस्राव कहना चाहये। शून्य आकाश एवं राहु शुभ-अशुभ दोनों होते हैं, परन्तु हे परमेश्वरि! इनकी स्थिति में समस्त शुभों का नाश हो जाता है।

शिष्यमन्त्रोपदेशकालः

वामे वहति वायौ तु वदेद् देशिकशिष्ययोः। तत्स्थाने स्थापयित्वा तं तत्कर्णे कथयेन्मनुम् ॥१८॥
अथवा जीवगस्थाने तत्कर्णे मन्त्रमादिशेत्। अन्यथा शून्यराहोस्तु नाशाय गुरुशिष्ययोः ॥१९॥

बाँयें श्वास चलते समय देशिक शिष्य को अपने बाँयें भाग में बैठाकर उसके कान में मन्त्र का उपदेश करे। अथवा दाहिने श्वास के गतिमान रहने पर उसके दाँयें कान में मन्त्र उपदेश करे। सुषुम्ना के प्रवहमान रहने पर शून्य राहु काल में उपदेश देने से गुरु-शिष्य दोनों का नाश होता है।

श्वासानां कालात्मकत्वं प्राणोदयश्च

षष्ट्या युतैस्तु त्रिशतैर्निश्वासैर्नाडिका मता। तासां षष्ट्या दिनं पूर्णं तद्दिनं स्यात्पुनः पुनः ॥२०॥
एकस्मिंस्तु दिने श्वासाः सहस्राण्येकविंशतिः। षट्शतं च ततस्तेषां स्वरूपं शृणु सुन्दरि ॥२१॥
आरभ्यार्कोदयं प्रातः सप्तत्या द्विशतं क्रमात्। प्राणाग्नीलाम्बुखानि स्युर्नवत्यान्यत्र संक्रमः ॥२२॥

तत्राप्येवमतोऽन्यत्राप्येवं पञ्चदश क्रमात् । दिनमेकं व्रजेदादौ दर्शप्रतिपदं प्रति ॥२३॥
एवं क्रमेण सर्वेषां प्राणोदय उदीरितः । एतत्क्रमविपर्यासादभव्यानि भवन्ति हि ॥२४॥

अस्यायमर्थः—शुक्लप्रतिपदमारभ्य दिनत्रयं सूर्योदयकाले वामनासापुटे वायुर्वहति, तदुत्तरं त्रीणि दिनानि दक्षिणे, ततस्त्रीणि दिनानि वामे, ततस्त्रीणि दिनानि दक्षिणे, पुनस्त्रीणि दिनानि वामे, ततः कृष्णपक्षे प्रतिपदमारभ्य त्रीणि दिनानि दक्षे, ततस्त्रीणि दिनानि वामे, तदुत्तरं दक्षे, तत्रस्त्रीणि दिनानि वामे, ततो दक्षिणे, एवं क्रमेण ज्ञातव्यानि। तत्रापि प्रतिनाडि पञ्चघटिकास्यितिर्बोद्धव्य व्येति। तत्रैकैकघटिकास्थितिरेकैकभूतस्य। तत्र क्रमस्तु—प्राणाग्नीलाम्बुखात्मान इति। एकघटिकायामपि सप्तत्युत्तरद्विशतश्वासकालस्थितिः, नवतिः श्वासाः संक्रमणे लगन्ति। एवं पञ्चभूतेषु श्वासानां स्थितिसंक्रमौ ज्ञेयौ। इत्थं दिवा एकैकनाड्यां वारत्रयं वारत्रयं रात्रावपि तथैव, वारत्रयस्य पञ्चदशघटिकाक्रमेणाहोरात्रमध्ये द्वादशावृत्त्या षष्टिघटिकाभिर्दिनमेकं व्रजेदित्यर्थः। प्रागुक्तपक्षक्रमविपर्यासादभव्यानि भवन्तीत्यर्थः।

तीन सौ साठ श्वासों को नाड़िका कहते हैं। उनमें साठ-साठ के बाद दिन होते हैं। एक दिन में इक्कीस हजार छः सौ श्वास होते हैं। उनका स्वरूप इस प्रकार है—प्रातः सूर्योदय से प्रारम्भ होकर दो सौ सत्तर के क्रम से प्राण अग्नि इला जल का संक्रम होता है; अन्यत्र नब्बे के संक्रम से होता है। उनमें भी अन्यत्र पन्द्रह के क्रम से होता है। दर्श प्रतिपदा में पहले होता है। इस क्रम से सबों में प्राणोदय होता है। इस क्रम से विपरीत होने पर अशुभ होता है।

आशय यह है कि शुक्ल प्रतिपदा से तीन दिनों तक सूर्योदय काल में वाम नासापुट से वायु बहता है। उसके बाद चतुर्थी से षष्ठी तक तीन दिनों में दक्षिण नासिका छिद्र से वायु गतिमान रहता है। उसके बाद सप्तमी अष्टमी नवमी—इन तीन तिथियों में वायु की गति बाँयीं नासिकाछिद्र में रहती है। उसके बाद दशमी एकादशी द्वादशी—इन तीन तिथियों में सूर्योदय काल में वायु का प्रवाह दाँयीं नासाछिद्र में रहता है। उसके पश्चात् शेष चतुर्दशी आदि तीन तिथियों में वायु का प्रवाह बाँयीं नासाछिद्र में रहता है।

कृष्ण पक्ष में प्रतिपदा से तृतीया तक तीनों दिनों में सूर्योदय के समय वायु का प्रवाह दक्षिण नासा में, चतुर्थी से षष्ठी तक तीन दिनों में वाम नासा में, सप्तमी से नवमी तक तीन दिनों में दक्ष नासा में, दशमी से द्वादशी तक तीन दिनों में वाम नासा में और त्रयोदशी से अमावस्या तक तीन दिनों में दक्ष नासा में रहता है। उसमें भी प्रति नाड़ी पाँच-पाँच घटी की स्थिति जाननी चाहिये। वहाँ भी प्रत्येक घटी में भूतों की स्थिति रहती है। उनका क्रम प्राण-अग्नि-इला-जल-आकाश होता है। एक घटी में भी दो सौ सत्तर श्वास की स्थिति होती है। नब्बे श्वास संक्रमण काल में लगते हैं इस प्रकार से पञ्च भूतों में श्वास की स्थिति एवं संक्रमण जानना चाहिये। इसी प्रकार की नाड़ी-स्थिति रात में भी होती है। तीनों दिनों के पन्द्रह घटिका क्रम की होरा में बारह आवृत्ति होती है। साठ घटी का एक दिन होता है। पूर्वोक्त घटिका क्रम के विपरीत होने से अशुभ घटित होता है।

वामदक्षिणोभयप्रवाहकाले बलाधिक्यम्

तथा—
बलाधिकाश्चरा वामे बलिनो दक्षिणे स्थिराः । उभयत्रोभयात्मानः शुभाशुभपरीक्षणे ॥२५॥
सार्धद्वाविंशतिश्वासक्रमाद् द्वादश राशयः । तत्र सार्धचतुष्केण भूतानि स्युरिति क्रमात् ॥२६॥
घकिार्णेषु सर्वत्र वाय्वाद्येकान्तरोदये । तत्तदर्णभवाः श्वासाः षष्ट्या त्रिशतमीरितम् ॥२७॥
तेषु तद्भूतवर्णानां दशानामादितो दश । सप्तावृत्त्या ततः शेषाः प्राणाग्नीलाम्बुखाक्षरैः ॥२८॥

अस्यार्थः—पञ्चभूतेषु पृथिवी जलं च सौम्यं, तेजो वायुराकाशं च क्रूरम्। वामनाड्यां पृथिवीतत्त्वं जलतत्त्वं च बलवच्चरं च। दक्षनाड्यां तेजस्तत्त्वं वायुतत्त्वमाकाशतत्त्वं च बलवत् स्थिरं च। उभयत्र साङ्कर्यश्वा-सेषु सर्वे उभयात्मानो द्विस्वभावा इत्यर्थः। एकस्यां नाड्यां पञ्चघटिकात्मककालस्थितायां पञ्चघटिकासु पञ्चभूतोदयश्चेदेकैकस्य

भूतस्यैकैकघटिकास्थितौ एकस्या घटिकाया: षष्ट्युत्तरत्रिशतं श्वासानां (३६०) नवतिश्वासा: संकरा:। एवमेकस्य भूतस्य सप्तत्युत्तरद्विशतश्वासा (२७०) निजास्तेषु श्वासेषु राशिक्रममाह—सार्धद्वाविंशति-श्वासक्रमादिति। अत्र राशिष्वपि बलाधिका इत्याद्यूह्यम्। एकस्मिन् राशौ भूतक्रममाह—तत्र सार्धेत्यादिना। घटिकार्णेष्विति अकारस्योदये अकारस्य प्रथमत: सप्तदश श्वासा अन्येषामक्षराणां सप्त सप्त श्वासा:। एव-मेकघटिकामध्ये सप्तावृत्तिर्मातृकाया भवतीत्यर्थ:। द्वितीयघटिकायामाकारस्याप्येवमूह्यम्।

पाँच भूतों में पृथ्वी एवं जल सौम्य हैं। अग्नि, वायु एवं आकाश क्रूर हैं। वाम नाड़ी में पृथ्वी तत्त्व एवं जल तत्त्व बलवान एवं चर होते हैं। दक्ष नाड़ी में अग्नि तत्त्व, वायु तत्त्व एवं आकाश तत्त्व बलवान तथा स्थिर होते हैं। दोनों के सांकर्य में सभी द्विस्वभाव होते हैं। एक नाड़ी में पाँच घटी काल स्थिति में पाँच घटिका में से एक-एक घटी में पाँचों भूतों का उदय होता है। प्रत्येक घटी में तीन सौ साठ श्वास होते हैं। सांकर्य में नब्बे श्वास होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक भूत का वास दो सौ सत्तर श्वासों में होता है। उनमें बारह राशियों का वास साढ़े बाईस श्वासों में होता है। यहाँ पर राशियों के बलाबल भी ज्ञेय हैं। घटिकार्णों में अकार का उदय प्रथमत: सत्रह श्वासों में रहता है। अन्य वर्णों की स्थिति सात-सात श्वासों में होती है। इस प्रकार एक घटी में मातृकाओं की सात आवृत्ति होती है। इसी प्रकार द्वितीय घटिका में आकारादि की स्थिति जाननी चाहिये।

श्वासानां वासनाव्याप्ति:

तथा—

संख्याभिर्वासनाव्याप्तिं श्वासानां शृणु सुन्दरि। यया विहितया मन्त्री सदा भजनवान् भवेत्॥२९॥
नित्यातत्त्वाप्तिविद्यानां संख्या: स्यु: पूर्वमेकश:। ततो दिनार्णा: संध्या: स्युस्ततश्च घटिकार्णका:॥३०॥
राशयो द्वादश ततो ग्रहा भूतानि पञ्च वै। मातृकाश्चापि पञ्चाशच्छ्रीचक्रस्थाश्च शक्तय:॥३१॥
सैका नवतय: प्रोक्ता देवी सर्वात्मना स्थिता। एवंविधां वासनां यो भावयेत् स महेश्वर:॥३२॥ इति।

अस्यार्थ:—नित्या: १६ तत्त्वा: ३६ आप्तिविद्या: युगत्वेन पर्यायत्वेन दिनत्वेन तिसृणां विद्यानां त्र्यक्षरत्वेन ९ दिनार्णा: ५७६ संध्यारूपा: ६१ घटिकार्णा: ६० राशय: १२ ग्रहा: ९ भूतानि ५ मातृका: ५० श्रीचक्रशक्तय: ९१ कालनित्या २०७३६ सर्वं मिलित्वा २१६०० श्वासरूपा इत्यर्थ:।

सोलह नित्यायें, छत्तीस तत्त्व एवं आप्ति विद्या युगत्व, पर्यायत्व, दिनत्व भेद से तीनों विद्याओं के नव वर्णों का दिनार्ण ५७९, सन्ध्यारूपा ६१, घटिका वर्ण ६०, राशि १२, ग्रह ९, भूत ५, मातृका ५०, श्रीचक्र की शक्तियाँ ९१, काल-नित्या २०७३६ इस प्रकार सब मिलकर २१६०० श्वासरूपा वासना होती है, जिसके क्रम से मन्त्रज्ञ सदा भजन-निरत रहता है। इस प्रकार की वासना को जो पूर्ण रूप से जानता है, वह साक्षात् महेश्वर हो जाता है।

योगसिद्धस्य लक्षणम्

तथा—

नाडीचक्रं च मर्माणि देहान्तर्मरुतां क्रियाम्। योगाभ्यासं तदङ्गैश्च स्वेच्छोत्क्रान्तिविधानकम्॥३३॥
परकायप्रवेशं च योगसिद्धस्य लक्षणम्।

अस्यार्थ:—नाडीचक्रस्य ज्ञानं मर्माणि शरीरे यावन्ति तावतां ज्ञानं, देहान्तर्मरुतां प्राणादिदशवायूनां स्थिते: क्रियायाश्च ज्ञानं, अङ्गै: सह योगाभ्यासस्तज्ज्ञानं च, तदङ्गानि यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारध्यानधा-रणासमाधय इति। स्वेच्छोत्क्रान्तिविधानकं स्वेच्छया मरणविधानम्। परकायप्रवेशनं चैतत्सर्वं प्राक्प्रोक्तश्वासक्रमं गुरुत: शास्त्रतश्च सम्यग् विज्ञाय तदभ्यासदार्ढ्यानुभूतस्य योगसिद्धस्य लक्षणमित्यर्थ:।

नाड़ी चक्र का ज्ञान शरीर के मर्मों के बराबर है। देह में दश प्राण रहते हैं। इन्हीं से क्रिया-ज्ञान होता है एवं अंगों के साथ योगाभ्यास और उसका ज्ञान होता है। योग के आठ अंग यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार ध्यान धारणा समाधि

हैं। स्वेच्छा उत्क्रान्ति विधान स्वेच्छा मरण विधान होता है। परकाय प्रवेश आदि सभी श्वासक्रमगुरु से या शास्त्र से जानकर अभ्यास से दृढ़ता की अनुभूति ही योगसिद्ध का लक्षण है। परकाय प्रवेश योग सिद्धि का लक्षण है।

काम्यविधौ पूर्णमण्डलशक्तिनामानि

मातृकार्णवे—

नेच्छन्ति काम्यपूजां ये चक्रस्थाभिश्च शक्तिभिः। तेषां काम्यविधिं वक्ष्ये पूर्णमण्डलशक्तिभिः ॥१॥
चतुष्षष्टिश्चतुष्षष्टिः प्रत्यावरणदेवताः। नित्यपूजां विधायादौ काम्यपूजां ततश्चरेत् ॥२॥
तासां नामानि वक्ष्यामि पूर्णमण्डलवर्णकैः। साध्यसाधककर्माणि प्रत्यावृति नियोजयेत् ॥३॥
अथवा प्रतिवर्गं च प्रतिशक्ति प्रयोजयेत्। अमृता च तथानन्दा इच्छा चैव तथेश्वरी ॥४॥
उमोर्मिका तथा ऋद्धिवृद्धिर्ऋषा तथैव च। लृकारा चैव लॄकारा एकनाथा तथैव च ॥५॥
ऐश्वर्या च तथोङ्कारिण्यौषधात्मिकया तथा। अम्बा अःकाररूपा च कमला कामिका तथा ॥६॥
किराता कीर्तिविभवा कुमारी कूर्मरूपिणी। कृपावती च कॄकारा क्लृप्ता क्लॄरूपिणी तथा ॥७॥
केशिनी कैतवा कोला कौमारी कम्बुवादिनी। कःकारा च खरूपा च खातीता खिन्नपालिनी ॥८॥
खीरूपिणी खुरूपा च खूरूपा खृस्वरूपिणी। खॄरूपा ख्लृस्वरूपा च ख्लॄरूपा खेचरप्रिया ॥९॥
खैरूपा खोस्वरूपा च खौरूपा खण्डितेन्दुधृक्। खःस्वरूपा गणेशी च गायत्री गिरिनन्दना ॥१०॥
गीर्वाणवन्द्या गुणपा गूरणा गृञ्जनप्रिया। गॄस्वरूपा ग्लृकारा च ग्लॄरूपा गेस्वरूपिणी ॥११॥
गैरूपा गोस्वरूपा च गौतमी गण्डकी तथा। गःस्वरूपा घना घाता घिरूपा घीस्वरूपिणी ॥१२॥
घुर्घुरा घूर्णरूपा च घृतामोदा च घॄकला। घ्लृरूपा घ्लॄस्वरूपा च घेरूपा घैस्वरूपिणी ॥१३॥
घोटरूपा घौस्वरूपा घण्टानादा च घोऽक्षरी। ङरूपा ङास्वरूपा च ङिरूपा ङीस्वरूपिणी ॥१४॥
ङुरूपा ङूस्वरूपा च ङृरूपा ङॄस्वरूपिणी। ङ्लृरूपा ङ्लॄस्वरूपा च ङेरूपा ङैस्वरूपिणी ॥१५॥
ङोरूपा ङौस्वरूपा च ङङ्कारा ङःस्वरूपिणी। चपला चारुचरिता चित्रणी चीरधारिणी ॥१६॥
चुर्चुरा चूर्णरूपा च चृरूपा चॄस्वरूपिणी। च्लृस्वरूपा ततः प्रोक्ता च्लॄस्वरूपा ततः परम् ॥१७॥
चेतना चैस्वरूपा च चोदयित्री च चौर्यहा। चण्डा च चःस्वरूपा च छन्ना छाया छिरूपिणी ॥१८॥
छीत्कारी छुरिकाहस्ता छूरूपा छृस्वरूपिणी। छॄरूपा छ्लृस्वरूपा च छ्लॄकारा छेदिनी तथा ॥१९॥
छैरूपिणी च छोरूपा छौरूपा छंस्वरूपिणी। छःस्वरूपा जया जाड्या जिता जीर्णास्वरूपिणी ॥२०॥
जुरूपा जूर्तिहन्त्री च जृरूपा जॄस्वरूपिणी। ज्लृरूपा ज्लॄस्वरूपा च जेरूपा जैत्ररूपिणी ॥२१॥
जोरूपा जौस्वरूपा च जङ्गला जःस्वरूपिणी। झरणा झास्वरूपा च झिरूपा झीस्वरूपिणी ॥२२॥
झुरूपा झूस्वरूपा च झृकारा झॄस्वरूपिणी। झ्लृरूपा झ्लॄस्वरूपा च झेरूपा झैस्वरूपिणी ॥२३॥
झोरूपा झौस्वरूपा च झंरूपा झःस्वरूपिणी। ञकारा ञार्णरूपा च ञिरूपा ञीस्वरूपिणी ॥२४॥
ञुरूपा ञूस्वरूपा च ञृरूपा ञॄस्वरूपिणी। ञ्लृरूपा ञ्लॄस्वरूपा च ञेरूपा ञैस्वरूपिणी ॥२५॥
ञोरूपा ञौस्वरूपा च ञंरूपा ञःस्वरूपिणी। टकाररूपा टाकारा टिकारा टीस्वरूपिणी ॥२६॥
टुकारा टूस्वरूपा च टृकारा टॄस्वरूपिणी। ट्लृकारा ट्लॄस्वरूपा च टेकारा टैस्वरूपिणी ॥२७॥
टोकारा टौस्वरूपा च टङ्कारा टःस्वरूपिणी। ठकारा ठास्वरूपा च ठिकारा ठीस्वरूपिणी ॥२८॥
ठुकारा ठूस्वरूपा च ठृकारा ठॄस्वरूपिणी। ठ्लृकारा ठ्लॄस्वरूपा च ठेकारा ठैस्वरूपिणी ॥२९॥
ठोकारा ठौस्वरूपा च ठंकारा ठःस्वरूपिणी। डकारा डास्वरूपा च डिकारा डीस्वरूपिणी ॥३०॥
डुकारा डूस्वरूपा च डृकारा डॄस्वरूपिणी। ड्लृकारा ड्लॄस्वरूपा च डेकारा डैस्वरूपिणी ॥३१॥
डोकारा डौस्वरूपा च डंकारा डःस्वरूपिणी।

मातृकार्णव में कहा गया है कि चक्रस्थ शक्तियों से जो काम्य पूजा नहीं करना चाहते हैं, उनके लिये पूर्णमण्डल की शक्तियों से काम्य पूजा की विधि को कहता हूँ। प्रत्येक आवरण में चौंसठ-चौंसठ शक्तियों की नित्य पूजा करके काम्य पूजा करनी चाहिये। पूर्ण मण्डल के ५७६ वर्ण की शक्तियों के नामों को कहता हूँ। प्रत्येक आवृत्ति में साध्य साधक कर्म को योजित करे। अथवा प्रत्येक वर्ग और प्रत्येक शक्ति के साथ योजित करे। वर्णशक्तियों के नाम इस प्रकार हैं—अमृता, आनन्दा, इच्छा, ईश्वरी, उमा, ऊर्मिका, ऋद्धि, वृद्धि, ॠषा, ऌकारा, ॡकारा, एकनाथा, ऐश्वर्या, ओंकारिणी, औषधात्मिका, अम्बा, अ:काररूपा, कमला, कामिका, किराता, कीर्तिविभवा, कुमारी, कूर्मरूपिणी, कृपावती, कॄकारा, क्ऌप्ता, क्ॡरूपिणी, केशिनी, कैतवा, कोला, कौमारी, कम्बुवादिनी, कःकारा, खरूपा, खातीता, खिन्नपालिनी, खीरूपिणी, खुरूपा, खूरूपा, खृस्वरूपिणी, खॄरूपा, ख्ऌस्वरूपा, ख्ॡरूपा, खेचरप्रिया, खैरूपा, खोस्वरूपा, खौरूपा, खण्डितेन्दुधृक्, खःस्वरूपा, गणेशी, गायत्री, गिरिनन्दना, गीर्वाणवन्द्या, गुणपा, गूरणा, गृंजनप्रिया, गॄस्वरूपा, ग्ऌकारा, ग्ॡरूपा, गेस्वरूपिणी, गैरूपा, गोस्वरूपा, गौतमी, गण्डकी, गःस्वरूपा, घना, घाता, घिरूपा, घीस्वरूपिणी, घुर्घुरा, घूर्णरूपा, घृतामोदा, घॄकला, घ्ऌरूपा, घ्ॡस्वरूपा, घेरूपा, घैस्वरूपिणी, घोररूपा, घौस्वरूपा, घण्टानादा, घोऽक्षरी, ङरूपा, ङास्वरूपा, ङिरूपा, ङीस्वरूपिणी, ङुरूपा, ङूस्वरूपा, ङृरूपा, ङॄस्वरूपिणी, ङ्ऌरूपा, ङ्ॡस्वरूपा, ङेरूपा, ङैस्वरूपिणी, ङोरूपा, ङौरूपा, ङंकारा, ङःस्वरूपिणी, चपला, चारुचरिता, चित्रणी, चीरधारिणी, चुर्चुरा, चूर्णरूपा, चृरूपा, चॄस्वरूपिणी, च्ऌस्वरूपा, च्ॡस्वरूपा, चेतना, चैस्वरूपा, चदयित्री, चौर्यहा, चण्डा, च:स्वरूपा, छत्रा, छाया, छिरूपिणी, छीत्कारी, छुरिकाहस्ता, छूरूपा, छृस्वरूपिणी, छॄरूपा, छ्ऌस्वरूपा, छ्ॡकारा, छेदिनी, छैरूपिणी, छोरूपा, छौरूपा, छंस्वरूपिणी, छःस्वरूपा, जया, जाड्या, जिता, जीर्णास्वरूपिणी, जुरूपा, जूर्तिहन्त्री, जृरूपा, जॄस्वरूपिणी, ज्ऌरूपा, ज्ॡस्वरूपा, जेरूपा, जैत्ररूपिणी, जोरूपा, जौस्वरूपा, जङ्गला, जःस्वरूपिणी, झरणा, झास्वरूपा, झिरूपा, झीस्वरूपिणी, झुरूपा, झूस्वरूपा, झृकारा, झॄस्वरूपिणी, झ्ऌरूपा, झ्ॡस्वरूपा, झेरूपा, झैस्वरूपिणी, झोरूपा, झौस्वरूपा, झंरूपा, झःस्वरूपिणी, ञकारा, ञार्णरूपा, ञिरूपा, ञीस्वरूपिणी, ञुरूपा, ञूस्वरूपा, ञृरूपा, ञॄस्वरूपिणी, ञ्ऌरूपा, ञ्ॡस्वरूपा, ञेरूपा, ञैस्वरूपिणी, ञोरूपा, ञौस्वरूपा, ञंरूपा, ञःस्वरूपिणी, टकाररूपा, टाकारा, टिकारा, टीस्वरूपिणी, टुकारा, टूस्वरूपा, टृकारा, टॄस्वरूपिणी, ट्ऌकारा, ट्ॡस्वरूपा, टेकारा, टैस्वरूपिणी, टोकारा, टौस्वरूपा, टंकारा, टःस्वरूपिणी, ठकारा, ठास्वरूपा, ठिकारा, ठीस्वरूपिणी, ठुकारा, ठूस्वरूपा, ठृकारा, ठॄस्वरूपिणी, ठ्ऌकारा, ठ्ॡस्वरूपा, ठेकारा, ठैस्वरूपिणी, ठोकारा, ठौस्वरूपा, ठंकारा, ठःस्वरूपिणी, डकारा, डास्वरूपा, डिकारा, डीस्वरूपिणी, डुकारा, डूस्वरूपा, डृकारा, डॄस्वरूपिणी, ड्ॡस्वकारा, ड्ऌरूपा, डेकारा, डैस्वरूपिणी, डोकारा, डौस्वरूपा, डंकारा, डःस्वरूपिणी।

ढकारा ढास्वरूपा च ढिकारा ढीस्वरूपिणी ॥३२॥

ढुकारा ढूस्वरूपा च ढृकारा ढॄस्वरूपिणी। ढ्ऌकारा ढ्ॡस्वरूपा च ढेकारा ढैस्वरूपिणी ॥३३॥

ढोकारा ढौस्वरूपा च ढंकारा ढःस्वरूपिणी। णकारा णास्वरूपा च णिरूपा णीस्वरूपिणी ॥३४॥

णुरूपा णूस्वरूपा च णृरूपा णॄस्वरूपिणी। ण्ऌरूपा ण्ॡस्वरूपा च णेरूपा णैस्वरूपिणी ॥३५॥

णोरूपा णौस्वरूपा च णंरूपा णःस्वरूपिणी। तरुणी तामसी चैव तिलनासा च तीरपा ॥३६॥

तुलसी तूर्णरूपा च तृष्णा तॄकाररूपिणी। त्ऌकारा त्ॡस्वरूपा च तेजोरूपा च तैतिला ॥३७॥

तोमरा तौलिनी तन्द्रा तस्करान्तककारिणी। थरूपा थानरूपा च थिरूपा थीस्वरूपिणी ॥३८॥

थुरूपा थूस्वरूपा च थृरूपा थॄस्वरूपिणी। थ्ऌरूपा थ्ॡस्वरूपा च थेरूपा थैस्वरूपिणी ॥३९॥

थोरूपा थौस्वरूपा च थंरूपा थःस्वरूपिणी। दया च दानशीला च दिरूपा दीनपालिनी ॥४०॥

दुर्मदा दूनहन्त्री च (दृकारा दॄस्वरूपिणी। द्ऌकारा द्ॡस्वरूपा च) देवी दैत्यनिसूदिनी ॥४१॥

दोषहन्त्री च दौर्भाग्यनाशिनी दम्भवर्जिता। दःस्वरूपा च धर्मज्ञा धारुणी धिस्वरूपिणी ॥४२॥

धीरा धुरीणा धूमावत्यथ पश्चाद् धृतिस्तथा। धॄरूपा ध्ऌस्वरूपा च ध्ॡरूपा धेस्वरूपिणी ॥४३॥

धैर्या च धोरणी धौर्या धंरूपा धःस्वरूपिणी। नदी नारायणी नित्या नीतिज्ञा च नुतिप्रिया॥४४॥
नूनना नृपवन्द्या च नॄरूपा न्लृस्वरूपिणी। न्लॄकाररूपिणी पश्चात् संप्रोक्ता नेत्रसुन्दरी॥४५॥
नैमित्तिका नोदयित्री नौकास्था नंदजा तथा। नःस्वरूपा च परमा पाविनी पिलिपिच्छिका॥४६॥
पीता पुण्या पूर्णरूपा पृथ्वी पॄकाररूपिणी। प्लृकारा प्लॄस्वरूपा च पेशला पैस्वरूपिणी॥४७॥
पोतरूपा पौरसेव्या पण्डिता पःस्वरूपिणी। फट्कारिणी फालरूपा फिटिशब्दनिनादिनी॥४८॥
फीरूपा फुस्वरूपा च फूत्कारा फृस्वरूपिणी। फॄस्वरूपा फ्लृरूपा च फ्लॄरूपा फेरवीरवा॥४९॥
फैरूपा फोस्वरूपा च फौरूपा फंस्वरूपिणी। फःस्वरूपा च बगला बाला बिलनिवासिनी॥५०॥
बीजरूपा बुधाराध्या बूरूपा च बृहत्कुचा। बॄरूपा ब्लृस्वरूपा च ब्लॄरूपा बेस्वरूपिणी॥५१॥
बैरूपिणी बोधरूपा बौद्धवन्ध्या च बंधिनी। बःस्वरूपा भवाराध्या भाग्यदा भिल्लरूपिणी॥५२॥
भीतिहन्त्री भुजङ्गाढ्यभूषणा भूरिविक्रमा। भृरूपा भॄस्वरूपा च भ्लृकारा भ्लॄस्वरूपिणी॥५३॥
भेदाभेदविहीना च भैरवी भोगदायिनी। भौमसेव्या भञ्जिका च भःस्वरूपा महोदया॥५४॥
मानिनी मित्रविम्बा च मीनाक्षी मुसलायुधा। मूर्तिधृग् मृत्युहारिणी मॄकाराक्षररूपिणी॥५५॥
म्लृरूपा म्लॄस्वरूपा च मेनका मैथिली तथा। मोदिनी मौड्यरहिता मंगला मःस्वरूपिणी॥५६॥
यमुना यादवप्रीता यिरूपा यीस्वरूपिणी। युवती यूथिकाप्रीता यृकारा यॄस्वरूपिणी॥५७॥
य्लृरूपा य्लॄस्वरूपा च येरूपा यैस्वरूपिणी। योधना यौस्वरूपा च यंरूपा यःस्वरूपिणी॥५८॥
रमणी रागशीला च रिरंसा रीतिदायिनी। रुधिराक्ता च रूक्षा च ॠरूपा ॠस्वरूपिणी॥५९॥
ऌरूपा ॡस्वरूपा च रेवती रैवतात्मजा। रोगघ्नी रौरवघ्नी च रंकिनी रःस्वरूपिणी॥६०॥

ढकारा, ढास्वरूपा, ढिकारा, ढीस्वरूपिणी, ढुकारा, ढूस्वरूपा, ढृकारा, ढॄस्वरूपिणी, ढ्लृकारा, ढ्लॄस्वरूपा, ढेकारा, ढैस्वरूपिणी, ढोकारा, ढौस्वरूपा, ढंकारा, ढःस्वरूपिणी णकारा, णास्वरूपा, णिरूपा, णीस्वरूपिणी, णुरूपा, णृस्वरूपिणी, ण्लृरूपा, ण्लॄस्वरूपा, णेरूपा, णैस्वरूपिणी, णोरूपा, णौस्वरूपा, णंरूपा, णःस्वरूपिणी, तरुणी, तामसी, तिलनासा, तीरपा, तुलसी, तूर्णरूपा, तृष्णा, तॄकाररूपिणी, प्लृरूपा, प्लॄस्वरूपा, तेजोरूपा, तैतिला, तोमरा, तौलिनी तन्द्रा, तस्करान्तकारिणी, थरूपा, थानरूपा, थिरूपा, थीस्वरूपिणी, थुरूपा, थूस्वरूपा, थृरूपा, थॄस्वरूपिणी, थ्लृरूपा, थ्लॄस्वरूपा, थेरूपा, थैस्वरूपिणी, थोरूपा, थौस्वरूपिणी, थंरूपा, थःस्वरूपिणी। दया, दानशीला, दिरूपा, दीनपालिनी, दुर्मदा, दूनहन्त्री, दृकारा, दॄस्वरूपिणी, द्लृकारा, द्लॄस्वरूपा, देवी, दैत्यनिसूदिनी, दोषहन्त्री, दौर्भाग्यनाशिनी, दम्भवर्जिता, दःस्वरूपा। धर्मज्ञा, धारुणी, धिस्वरूपिणी, धीरा, धुरीना, धूमावती, धृति, धॄरूपा, ध्लृस्वरूपा, ध्लॄरूपा, धेस्वरूपिणी, धैर्या, धोरणी, धौर्या, धंरूपा, धःस्वरूपिणी, नदी, नारायणी, नित्या, नीतिज्ञा, नुतिप्रिया, नूनना, नृपवन्द्या, नॄरूपा, न्लृस्वरूपिणी, न्लॄकाररूपिणी, नेत्रसुन्दरी, नैमित्तिका, नोदयित्री, नौकास्था, नन्दजा, नःस्वरूपा, परमा, पाविनी, पिलिपिच्छिका, पीता, पुण्या, पूर्णरूपा, पृथ्वी, पॄकाररूपिणी, प्लृकारा, प्लॄस्वरूपा, पेशला, पैस्वरूपिणी, पोतरूपा, पौरसेव्या, पण्डिता, पःस्वरूपिणी, फट्कारिणी, फालरूपा, फिटिशब्दनिनादिनी, फीरूपा, फुस्वरूपा, फूत्कारा, फृस्वरूपिणी, फॄस्वरूपा, फ्लृरूपा, फ्लॄरूपा, फेरवीरवा, फैरूपा, फोस्वरूपा, फौरूपा, फंस्वरूपिणी, फःस्वरूपा, बगला, बाला, बिलनिवासिनी, बीजरूपा, बुधाराध्या, बूरूपा, बृहत्कुचा, बॄरूपा, ब्लृस्वरूपा, बेस्वरूपिणी, बैरूपिणी, बोधरूपा, बौद्धवन्द्या, बन्धिनी, बःस्वरूपा, भवाराध्या, भाग्यदा, भिल्लरूपिणी, भीतिहन्त्री, भुजङ्गाढ्यभूषणा, भूरिविक्रमा, भृरूपा, भॄस्वरूपा, भ्लृकारा, भ्लॄस्वरूपिणी, भेदाभेदविहीना, भैरवी, भोगदायिनी, भौमसेव्या, भंजिका, भःस्वरूपा, महोदया, मानिनी, मित्रविम्बा, मीनाक्षी, मुसलायुधा, मूर्तिधृक्, मृत्युहारिणी, मॄकाराक्षररूपिणी, म्लृरूपा, म्लॄस्वरूपा, मेनका, मैथिली, मोदिनी, मौड्यरहिता, मङ्गला, मःस्वरूपिणा, यमुना, यादवप्रीता, यिरूपा, यीस्वरूपिणी, युवती, यूथिकाप्रीता, यृकारा, यॄस्वरूपिणी, य्लृरूपा, य्लॄस्वरूपा, येरूपा, यैस्वरूपिणी, योधना, यौस्वरूपा, यंरूया, यःस्वरूपिणी, रमणी, रागशीला, रिरंसा, रीतिदायिनी, रुधिराक्ता, रूक्षा, ॠरूपा, ॠस्वरूपिणी, ऌरूपा, ॡस्वरूपा, रेवती, रैवतात्मजा, रोगघ्नी, रौरवघ्नी, रंकिनी, रःस्वरूपिणी।

लज्जा च लाभदा लिङ्गा लीला लुप्ता च लूनहा। लृरूपा लॄस्वरूपा च ल्लृरूपा ल्लॄस्वरूपिणी ॥६१॥
लेरूपा लैस्वरूपा च लोकधात्री च लौल्यहा। लम्बोष्ठी लःस्वरूपा च वरदा वारिजानना ॥६२॥
विपुला वीतशोका च वुरूपा वूस्वरूपिणी। वृकोदरी वॄस्वरूपा व्लृरूपा व्लॄस्वरूपिणी ॥६३॥
वेदगर्भा वैनतेया वोरूपा वौस्वरूपिणी। वञ्जरा वःस्वरूपा च शशिखण्डावतंसिनी ॥६४॥
शाकम्भरी शिवा शीला शुष्कमांसा च शूलिनी। शृरूपा शॄस्वरूपा च श्लृरूपा श्लॄस्वरूपिणी ॥६५॥
शेरूपा शैत्यरूपा च शोभना शौर्यसंपदा। शङ्करी शःस्वरूपा च षडङ्गा षास्वरूपिणी ॥६६॥
षिङ्गा षीरूपिणी चैव षुरूपा षूस्वरूपिणी। षृरूपा षॄस्वरूपा च ष्लृरूपा ष्लॄस्वरूपिणी ॥६७॥
षेरूपा षैस्वरूपा च षोरूपा षौस्वरूपिणी। षंडा च षःस्वरूपा च सर्वदा सामगप्रिया ॥६८॥
सिरात्सारतरा चैव सीरपाणिसमर्चिता। सुभगा सूरशक्तिश्च सृष्टिदा सॄस्वरूपिणी ॥६९॥
स्लृरूपा स्लॄस्वरूपा च सेरूपा सैस्वरूपिणी। सोरूपिणी च सौभाग्या संगता सःस्वरूपिणी ॥७०॥
हव्यवाहा हारिणी च हिरण्या हीनवर्जिता। हुरूपा हूस्वरूपा च हृद्या हॄकाररूपिणी ॥७१॥
ह्लृरूपा ह्लॄस्वरूपा च हेतुदा हैहयान्वया। होरूपा हौस्वरूपा च हंरूपा हःस्वरूपिणी ॥७२॥
ळरूपिणी च ळारूपा ळिरूपा ळीस्वरूपिणी। ळुरूपा ळूस्वरूपा च ळृरूपा ळॄस्वरूपिणी ॥७३॥
ळ्ळृरूपा ळ्ळॄस्वरूपा च ळेरूपा ळैस्वरूपिणी। ळोरूपा ळौस्वरूपा च ळंरूपा ळःस्वरूपिणी ॥७४॥
क्षमारूपा तथा क्षामा क्षित्यादिपञ्चधारिणी। क्षीणमध्या क्षुधारूपा क्षूरूपा क्षृस्वरूपिणी ॥७५॥
क्षॄरूपा क्ष्लृस्वरूपा च क्ष्लॄरूपा क्षेत्रपालिनी। क्षैकाररूपा च तथा क्षोभिणी क्षौस्वरूपिणी ॥७६॥
क्षंकाररूपिणी चैव क्षःकाररूपिणी तथा। इति ते कथितं भद्रे रहस्यातिरहस्यकम् ॥७७॥
प्रत्यावृत्ति चतुर्वर्गं पूजयेत् साधकोत्तमः। सर्वान् कामानवाप्नोति पूजनात् साधकोत्तमः ॥७८॥

लज्जा, लाभदा, लिङ्गा, लीला, लुप्ता, लूनहा, लृरूपा, लॄस्वरूपा, ल्लृरूपा, ल्लॄस्वरूपिणी, लेरूपा, लैस्वरूपा, लोकधात्री, लौल्यहा, लम्बोष्ठी, लःस्वरूपा-वरदा, वारिजानना, विपुला, वीतशोका, वुरूपा, वूस्वरूपिणी, वृकोदरी, वॄस्वरूपा, व्लृरूपा, व्लॄस्वरूपिणी, वेदगर्भा, वैनतेया, वोरूपा, वौस्वरूपिणी, वंजरा, वःस्वरूपा, शशिखण्डा- वतंसिनी, शाकम्भरी, शिवा, शीला, शुष्कमांसा, शूलिनी, शृरूपा, शॄस्वरूपा, श्लृरूपा, श्लॄस्वरूपिणी, शेरूपा, शैत्यरूपा, शोभना, शौर्यसम्पदा, शंकरी, शःस्वरूपा, षडङ्गा, षास्वरूपिणी, षिङ्गा, षीरूपिणी, षुरूषा, षूस्वरूपिणी, षृरूपा, षॄस्वरूपा, ष्लृरूपा, ष्लॄस्वरूपिणी, षेरूपा, षैस्वरूपा, षोरूपा, षौस्वरूपिणी, षंडा, षःस्वरूपा, सर्वदा, सामगप्रिया, सिरात्सारतरा, सीरपाणिसमर्चिता, सुभगा, सूरशक्ति, सृष्टिदा, सॄस्वरूपिणी, स्लृरूपा, स्लॄस्वरूपा, सेरूपा, सैस्वरूपिणी, सोरूपिणी, सौभाग्या, सङ्गता, सःस्वरूपिणी, हव्यवाहा, हारिणी, हिरण्या, हीनवर्जिता, हुरूपा, हूस्वरूपा, हृद्या, हॄकाररूपिणी, ह्लृरूपा, ह्लॄस्वरूपा, हेतुदा, हैहयान्वया, होरूपा, हौस्वरूपा, हंरूपा, हःस्वरूपिणी, ळरूपिणी, ळारूपा, ळिरूपा, ळीस्वरूपिणी, ळुरूपा, ळूस्वरूपा, ळृरूपा, ळॄस्वरूपिणी, ळ्ळृरूपा, ळ्ळॄस्वरूपा, ळेख्या, ळैस्वरूपिणी, ळोरूपा, ळौस्वरूपा, ळंरूपा, ळःस्वरूपिणी, क्षमारूपा, क्षामा, क्षित्यादिपञ्चधारिणी, क्षीणमध्या, क्षुधारूपा, क्षूरूपा, क्षृस्वरूपिणी, क्षॄरूपा, क्ष्लृस्वरूपा, क्ष्लॄरूपा, क्षेत्रपालिनी, क्षैकाररूपा, क्षोभिणी, क्षौस्वरूपिणी, क्षंकाररूपिणी, झःकाररूपिणी। ये समस्त नाम अत्यन्त गोपनीय हैं। प्रत्येक आवरण में चार वर्गों की पूजा करे। इससे उत्तम साधक के सभी कामनाओं की पूर्ति होती है।

पञ्चधा वर्णशक्तयः

प्राणाग्नीलाम्बुखात्मानो वर्णशक्तय ईरिताः। तत्तत्प्रयोगसिद्ध्यर्थं तत्तच्छक्तीः प्रपूजयेत् ॥७९॥
एकैकस्य च भूतस्य शतं पञ्चदशोत्तरम्। शक्तयः पूजनीयास्ता नवावरणभागशः ॥८०॥
शेषास्तु बिन्दुचक्रे तु तत्तन्मण्डलके शुभे।

वर्ण-शक्तियाँ वायु, अग्नि, पृथ्वी, जल, आकाशात्मिका हैं। जैसा प्रयोग हो, उसकी सिद्धि के लिये उन्हीं शक्तियों की पूजा करे। प्रत्येक भूत की शक्तियों की संख्या एक सौ पन्द्रह हैं। उनकी पूजा नव आवरणों में करे। उस मण्डल की शेष शक्तियाँ बिन्दु चक्र में होती हैं।

षट्कर्मसु काः पूज्याः

उच्चाटे वायुवर्णानां शक्तयः समुदीरिताः ॥८१॥
विद्वेषे निधने चैव प्रशंस्ताः स्युः खशक्तयः। वश्ये च मोहने चैव पावकाक्षरशक्तयः ॥८२॥
कार्मणे केचिदिच्छन्ति स्तम्भने लार्णशक्तयः। शान्तिके पौष्टिके रोगनाशादिशुभकर्मसु ॥८३॥
जलार्णशक्तयो ज्ञेयास्तत्तन्मण्डलसंयुताः।

उच्चाटन के लिये वायु वर्ण के शक्तियों की पूजा करे। विद्वेषण और मारण में आकाशवर्ण के शक्तियों की पूजा करे। वश्य एवं मोहन में अग्निवर्ण की शक्तियाँ पूज्य हैं। पार्थिव शक्तियों की पूजा स्तम्भन में होती है। शान्तिक, पौष्टिक एवं रोगनाशादि शुभ कर्मों में जलवर्ण की शक्तियाँ पूज्य हैं।

षट्शाम्भवरश्मिपूजाक्रमः

अथ वक्ष्ये सुरेशानि षट्शाम्भवघृणिक्रमम् ॥८४॥
श्रीचक्रक्रममभ्यर्च्य मोक्षार्थी रश्मिपूजनम्। विदध्यात् तत्क्रमं ज्ञात्वा स्मृत्वा प्रागुक्तमार्गतः ॥८५॥
प्रत्यावरणपूजायां चत्वारिंशच्च भागशः। तदन्ते बिन्दुचक्रे तु यष्टव्याः सर्वरश्मयः ॥८६॥
सषट्त्रिंशत्सप्तशतं सहस्राणि च विंशतिः। नाथावृत्तिक्रमेणैव नवावरणपूजनम्॥८७॥
प्रत्यावृत्ति यजेन्नित्या द्विसहस्रं शतत्रयम्। चत्वारि च समाख्याता देवताभावसिद्धये ॥८८॥
श्वासक्रमेण पूजायां पूर्वोक्तगणनाविधौ। प्रत्यावृत्ति सहस्रे वै चतुःशतमुदीरितम् ॥८९॥
द्वयमात्माणुनित्यान्ते शक्तिसप्ताक्षरीयुतम्। प्रतिश्वासं यजेदेनं बिन्दुचक्रे समग्रकम् ॥९०॥
नानया सदृशी पूजा त्रिषु लोकेषु विद्यते। गुह्याद् गुह्यतरं ह्येतत् तवाग्रे प्रकटीकृतम् ॥९१॥ इति।

अब मैं षट्शाम्भव रश्मिक्रम को कहता हूँ। श्रीचक्र की पूजा के बाद मोक्षार्थी रश्मिपूजन करे। उसके क्रम को जानकर विहित मार्ग से पूजा करे। प्रत्येक आवरण में चालीस रश्मियों की पूजा करे। इसके बाद सभी रश्मियों की पूजा बिन्दुचक्र में करे। रश्मियों की संख्या बीस हजार सात सौ छत्तीस है। नाथावृत्ति क्रम से नव आवरणों की पूजा करे। प्रत्येक आवरण में दो हजार तीन सौ चार शक्तियों की पूजा से देवताभाव की सिद्धि होती है। पूजा में श्वासक्रम से उनकी गणना होती है। प्रत्येक आवरण में चौदह सौ शक्तियाँ होती हैं। सप्ताक्षरी युक्त नित्या शक्तियों की पूजा बिन्दुचक्र में करे। तीनों लोकों में इसके समान कोई पूजा नहीं है। यह पूजा अत्यन्त ही गुप्त है।

नाडीचक्रस्वरूपम्

तन्त्रराजे (२७ प० ३४ श्लो०)—

आसन्नमृत्युचिह्नानि कथयामि यथाक्रमम्। प्राक्प्रोक्तमूलाधारस्य मध्यस्थत्र्यस्रमध्यतः ॥१॥
सुषुम्ना पृष्ठवंशाख्यवीणादण्डस्य मध्यगा। मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्ता नासाग्राद् द्वादशाङ्गुले ॥२॥
तदग्रात् पायुगा प्रोक्तालम्बुषाख्या तु नाडिका। त्र्यस्राग्रादुत्थिता नाडी कुहूनाम ध्वजान्तिका ॥३॥
तद्वामदक्षपार्श्वाभ्यां सविश्वोदरवारणे। जठरान्ता सर्वगा च प्रोक्ते तद्वदनन्तरे ॥४॥
हस्तिजिह्वायशस्विन्यौ तत्तदङ्गुष्ठगे पदोः। तथैवेडापिङ्गले च नासारन्ध्रद्वयान्तगे ॥५॥
गान्धारी च तथा पूषा नेत्रद्वयगते क्रमात्। तथा कर्णगते शङ्खयशस्विन्यौ क्रमेण वै ॥६॥
सरस्वती तु या नाडी सा तु जिह्वाग्रगामिनी। एवं चतुर्दश प्रोक्ता नाड्यो देहे प्रधानकाः ॥७॥

तासां सन्धिषु तत्सन्धिष्वेवं नाड्यः स्थितास्तनौ। तासां प्रधाननाडीनां संख्या सार्धत्रिलक्षकम् ॥८॥
अप्रधाना: शिरा देहे त्वसंख्या याभिरेव वै। चेष्टतेऽङ्गैर्नर: सर्वै: स्वकीयैरिच्छयाऽनिशम् ॥९॥
नाडय: सुषिरा रक्तमरुत्पूर्णाश्च सर्वगा:। सुषुम्नामध्यगा वज्रनाडी तन्मध्यगा परा ॥१०॥
चित्राभिधाना तन्मध्ये स्थिता सा कुण्डली परा।

तन्त्रराज में कहा गया है कि अब आसन्न मृत्यु के लक्षणों को कहता हूँ। पूर्वोक्त मूलाधार के मध्य में स्थित त्रिकोण के मध्य में बाँस के वीणादण्ड के समान रीढ़ के मध्य में गमन करने वाली सुषुम्ना नाड़ी मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक रहती है और नासाग्र से बारह अंगुल आगे तक जाती है। त्रिकोण से निकलकर गुदा तक जाने वाली नाड़ी को अलम्बुषा कहते हैं। कुहू नाड़ी लिङ्गाग्र तक जाती है। उसके बाँयें एवं दाहिने भाग से गमन करने वाली नाड़ी जठर को व्याप्त करते हुये सम्पूर्ण शरीर में गमन करती है। इसे विश्वोदरा कहते हैं। हस्तिजिह्वा और यशस्विनी पैरों के अंगूठों तक जाती है। नासिकारन्ध्रों तक इड़ा-पिङ्गला जाती है। दोनों नेत्रों तक गान्धारी और पूषा जाती है। कानों तक शङ्खिनी और यशस्विनी जाती है एवं जिह्वाग्र तक सरस्वती जाती है। इस प्रकार ये चौदह नाड़ियाँ शरीर में प्रधान हैं। उनकी सन्धियों में भी क्रमश: नाड़ियों की स्थिति हैं। उनमें प्रधान नाड़ियों की संख्या साढ़े तीन लाख है एवं अप्रधान नाड़ियों की संख्या अगणित है। इन्हीं नाड़ियों से मनुष्यों के सभी अंग अपनी इच्छानुसार बराबर कार्य-सम्पादन करते हैं।

सुषिर रक्त वायुपूर्ण नाड़ियाँ शरीर में सभी ओर जाती हैं। सुषुम्ना के मध्य में वज्रा नाड़ी है और उसके मध्य में चित्रा नाड़ी है। उसके मध्य में कुण्डलिनी रहती है।

अष्टात्रिंशन्मर्मस्थानानि

मर्माण्यङ्गुष्ठगुल्फाङ्घ्रिपृष्ठजङ्घाख्यजानुषु ॥११॥
ऊरुसीवनिकामुष्कमेढ्रनाभिषु पार्श्वयो:। हृदयस्तनकण्ठांसकृकाटीकर्णमूर्धसु ॥१२॥
शङ्खयो: पल्लनासादिमध्यान्तास्यकपोलत:। अष्टात्रिंशदिति प्रोक्तान्येषु वायोस्तु धारणात् ॥१३॥
परकायप्रवेशश्च स्वेच्छोत्क्रान्तिश्च सिध्यति।

अड़तीस मर्म अंगूठों, गुल्फों, पादपृष्ठों, जंघों, जानुओं, ऊरुओं, सीवनी, अमुष्क, लिङ्ग, नाभि, पार्श्वों, हृदय, स्तनों, कण्ठ, कृकाटी, कानों, मूर्धा, शङ्खों, फल्गु, नासामध्य, मुख एवं कपोलों के मध्य स्थित हैं। इन मर्मों में वायु धारण करने से परकायप्रवेश में स्वत: उत्क्रान्ति सिद्ध होती हैं।

दशवायुनामकर्माणि

दशानामपि वायूनां देहस्थानां क्रिया: शृणु ॥१४॥
ऊर्ध्वाधोगमनासक्तौ प्राणापानौ सदा तनौ। नाग उद्गारकृत् प्रोक्त: क्षुत्कृत् कृकरसंज्ञक: ॥१५॥
देवदत्तो जृम्भणकृत् रवकृच्च धनञ्जय:। कूर्म उन्मेषकृत् प्रोक्त उदानोऽपि तथा द्विकृत् ॥१६॥
समानवायु: कायाग्निं संधुक्षयति पाचितुम्। व्यानाख्यो रसमादाय व्यापयेदखिलां तनुम् ॥१७॥
एषां दशानामंशास्तु मारुता: स्युरनन्तका:। तेषां प्रसाराद् देहस्य समीचीना स्थितिर्भवेत् ॥१८॥
वैलोम्ये विकृताङ्गत्वाल्लोकैर्नाशाय कल्प्यते। जीवात्मा भेदरूपेण मनसा परमात्मन: ॥१९॥

शरीरस्थ दश प्राणवायुओं की क्रियायें इस प्रकार हैं—प्राण ऊर्ध्वगामी और अपान अधोगामी होकर सदैव शरीर में रहता है। नाग वायु से डकार आता है। कृकर वायु भूख को जगाती है। देवदत्त से जम्भाई आती है। धनञ्जय से शब्द उत्पन्न होता है। कूर्म से उन्मेष होता है। उदान विभक्त करता है। समान वायु जठराग्नि को तेज करके भोजन को पचाता है। व्यान वायु रस को सारे शरीर में पहुँचाता है। ये दश वायु ही प्रधान ही हैं। इनके अतिरिक्त शरीर में वायुओं की संख्या अनन्त है। जिनके प्रसार से देह की स्थिति सम्यक् रूप से होती है। इनके विलोम होने से विकृताङ्गत्व होकर लोक का नाश होता है। मन के भेद से जीवात्मा भी परमात्मा ही है।

योगनिर्वचनन्तदङ्गानि तत्प्रत्यूहाश्च

योगो योगस्तु विज्ञेयस्तस्याङ्गानि तथाष्ट वै। यमोऽथ नियमः पश्चादासनं तदनन्तरम्॥२०॥
प्राणायामस्तथा प्रत्याहारस्तदनु धारणा। ध्यानं समाधिरित्युक्तान्यष्टाङ्गानि यथाक्रमम्॥२१॥
कथयामि शृणु प्राज्ञे यैर्मर्त्यो मत्समो भवेत्। आत्मापरोक्षप्रत्यूहकर्मणस्तु यमो यमः॥२२॥
तथैकादशरूपः स्यान्नियमः परिकीर्तितः। अहिंसा सत्यमास्तिक्यमार्जवं समता धृतिः॥२३॥
क्षमा दया त्रिधा शौचं संतोषो गुरुसेवनम्। तत्प्रत्यूहाः षडाख्याताः कामक्रोधौ ततस्तथा॥२४॥
लोभमोहौ मानमदौ वह्निवत् सर्वनाशकाः।

योगं आत्मा एवं परमात्मा का मिलन है। इसके आठ अंग हैं—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। क्रमशः इनको कहता हूँ, जिससे मनुष्य मुझ शिव के समान हो जाता है। आत्मा के अपरोक्ष प्रत्यूह कर्म को संयमित करना यम कहलाता है। नियम ग्यारह होते हैं—अहिंसा, सत्य, आस्तिक्य, आर्जव, समता, धृति, क्षमा, दया, त्रिधा शौच, सन्तोष एवं गुरुसेवन। इसके प्रत्यूह छः हैं—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मात्सर्य एवं मद। ये अग्नि के समान सर्वनाशक हैं।

आसनभेदाः

पद्मस्वस्तिकवीराख्यभद्राण्युक्तानि वै क्रमात्॥२५॥
आसनानि मनःस्थैर्यकरणे साधकानि वै। ऊर्वोरुपरि विन्यस्येद् व्यत्यासात् पादयोस्तले॥२६॥
बाह्यपार्श्वद्वयस्पर्शात् तत्पद्मासनमीरितम्। तथा तयोरधोभागे तदन्तः पार्श्वसङ्गमात्॥२७॥
स्वस्तिकाकारतः प्रोक्तं तद्भद्रासनमीश्वरि। तलान्तः पार्श्वगं कुर्यादेकमन्यत् तु बाह्यगम्॥२८॥
ऊर्वोरधस्तथोर्ध्वं च द्विधा भद्रासनं स्मृतम्। व्यत्यस्ततलयोरूर्ध्वसंस्पर्शादुच्चजङ्घयोः ॥२९॥
पादयोर्जानुदेशे वै वीराख्यं योगपट्टतः।

पद्मासन, स्वस्तिकासन, वीरासन, भद्रासन के क्रम से आसन मन को स्थिर करने के साधन हैं। पद्मासन में बाँयें पैर को दाहिने जाँघ पर तथा दाहिने पैर को बाँयीं जांघ पर इस प्रकार रखा जाता है कि नाभि के नीचे दोनों एड़ियाँ जुड़ जायँ। इसमें मेरू दण्ड गर्दन एवं शिर को सीधा रखा जाता है।

स्वस्तिकासन में बाँयाँ पैर नीचे और दाहिना पैर ऊपर रखा जाता है एडियों को जानु और जङ्घा के बीच में रखा जाता है। वक्ष, सीना और मेरुदण्ड को सीधा रखकर इस आसन का अभ्यास किया जाता है।

वीरासन में दाहिनी एड़ी पर दाँयीं गुदा रखकर बैठकर बाँयें पैर को दाँयें घुटने के पास रखा जाता है एवं बाँयीं केहुनी को बाँयें घुटने पर तथा इसमें शिर को बाँयें हाथ पर अवस्थित किया जाता है।

भद्रासन में पालथी मारकर दोनों पैरों के अंगूठों को सटाकर जितना हो सके, उतना दूर तक घुटनों को फैलाते हुये नितम्ब को को जमीन पर सटाये रखा जाता है।

प्राणायामभेदाः

प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्त उत्तमाधममध्यतः॥३०॥
लाघवो भूतलत्याग उत्तमे चित्तनिर्वृतिः। सर्वाङ्गे स्वेदसंवृद्धिरधमे मध्यमे तथा॥३१॥
सर्वाङ्गकम्पनं प्रोक्तमभ्यासात् कालसंयुतात्। तेऽप्युत्तमगुणा भूयुरभ्यासात् कालयोगतः॥३२॥
तस्मात् समभ्यसेत् प्रातः सायं च नियमेन वै। वामेन नासारन्ध्रेण पूरयेदमृतात्मना॥३३॥
स्मरन्नम्बु मरुत् पश्चाद् दक्षिणेनापसारयेत्। एवं सुसाधिते पश्चाद् द्वात्रिंशन्मात्रयाहरेत्॥३४॥
धारयेत् तच्चतुःषष्ट्या रेचयेत् तत्तुरीयतः। कम्पश्च पुलकानन्दौ वैमल्यस्थैर्यलाघवाः॥३५॥

तद्वत् कान्तिप्रकाशौ च योगसिद्धस्य लक्षणम्। मूलाधारे मनः कृत्वा वायुमापूर्य मूलतः ॥३६॥
नाडीचक्रान्तरं नीत्वा सर्वाङ्गानि च धारयेत्। एवं संसाधिते वायावष्टत्रिंशत्सु मर्मसु ॥३७॥
धारयेच्चारयेदिच्छावशेनाङ्गानि सर्वतः। तथाधारगतं कृत्वा मनः पवनसंयुतम् ॥३८॥
रसाम्बुदाहव्याप्तस्वैः सहंसैर्व्यापयेत् तनुम्। एवं तैरक्षरैर्देहे वायुना तन्मयीकृते ॥३९॥
त्रिकालज्ञो विशुद्धात्मा सुखी जीवेच्चिरं भुवि।

प्राणायाम तीन प्रकार का होता है—उत्तम, मध्यम और अधम। उत्तम प्राणायाम में साधक शरीर से हल्का होकर जमीन के ऊपर उठ जाता है एवं उसके चित्त में विराग उत्पन्न हो जाता है मध्यम प्राणायाम में सारे शरीर से पसीना निकलने लगता है एवं अधम प्राणायाम में भी पसीना बहने लगता है। जिस प्राणायाम के अभ्यास में कालयोग से सारे शरीर में कम्पन होने लगता है, वह भी उत्तम प्राणायाम होता है; इसलिये प्रात:-सायं नियम से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिये। वाम नासारन्ध्र से पूरक एवं दक्षिण नासारन्ध्र से रेचक करना चाहिये। इसके साधित होने पर बत्तीस मात्रा से पूरक करे एवं एक सौ अट्ठाइस मात्रा से कुम्भक करे तथा चौंसठ मात्रा से रेचक करना चाहिये। शरीर में कम्पन, विपुल आनन्द, विमलता, स्थिरता, हल्कापन, कान्ति एवं प्रकाश योगसिद्ध के लक्षण कहे गये हैं।

मूलाधार में मन को स्थिर कर मूल से पूरक करे। वायु को नाड़ियों में ले जाकर सारे अंग में धारण करे। इस प्रकार अड़तीस मर्मों में वायु धारण करे एवं सारे अंगों को इच्छानुसार सञ्चारित करे। मूलाधार में मन को लगाकर लंवंरंयंहं—इन पाँच भूताक्षरों के साथ वायु को धारण करे और उसे सारे शरीर में व्याप्त करे। उसे भूतभय करे तो साधक त्रिकालज्ञ एवं विशुद्धात्मा होकर सुखपूर्वक दीर्घ काल तक जीवित रहता है। साथ ही स्वेच्छाचारी एवं आकाशगामी होकर देवताओं के साथ विहार करता है।

योगसिद्धलक्षणानि

स्वेच्छाचारी व्योमगश्च व्रजेद् देवैश्च सङ्गमम् ॥४०॥
स्वेच्छया देहमध्यस्थः क्रीडन् गृहगतो यथा। एवं संसिद्धयोगस्तु स्वेच्छया देहमात्मनः ॥४१॥
प्राणानाकृष्य मध्यस्थसुषुम्नारन्ध्रतस्तथा। ब्रह्मरन्ध्राद्विनिर्गित्य भूयात् सर्वान्मिनात्मवान् ॥४२॥
अथवोत्तरसंप्रोक्तचूर्णास्वादनतो वशी। विरक्तचित्तः स्वं देहं तेनोपायेन संत्यजेत् ॥४३॥
स्वेच्छोत्क्रान्तिरिति प्रोक्ता योगयुक्तात्मनां प्रिये। परकायप्रवेशं तु वक्ष्ये देवि महाद्भुतम् ॥४४॥
कलौ तु दुष्करं प्रायो मर्त्यैः सर्वैरपीश्वरि। अक्लेशतः परित्यज्य प्राणान् स्वकतनुं तथा ॥४५॥
परिपूर्णाङ्गसंयुक्तामग्रतो वीक्ष्य योगतः। प्रविशेत् तत्तनुं प्राणप्रतिष्ठोक्तविधानतः ॥४६॥
(स्वां तनुं गोपयेत्स्वीयैस्ततस्तां च तथा व्रजेत्)। सिद्धस्य लक्षणान्यष्टौ योगाभ्यासेन सर्वदा ॥४७॥
शृणु तानि महादेवि यैरन्यैर्जायते गुणैः। द्वन्द्वहानिः सुखावाप्तिरारोग्यं वश्यवृत्तिता ॥४८॥
जितेन्द्रियत्वमक्रोधः कृपया जनसेवता।

इस प्रकार सिद्ध साधक अपने शरीर में घर के समान क्रीड़ा में लगा रहता है। इस योग के सिद्ध होने पर वह अपनी इच्छा से अपने शरीर से प्राणों को आकृष्ट करके सुषुम्णा रन्ध्र में करके ब्रह्मरन्ध्र से निकाल देता है और सर्वात्मना आत्मवान् होता है। अथवा पूर्वोक्त चूर्ण को खाकर चित्त को वश में करके विरक्त होकर अपने शरीर को त्याग देता है। इस प्रकार योगयुक्तात्मा के लिये स्वेच्छया प्राणत्याग को कहा गया अब अद्भुतपरकाय-प्रवेश का विवेचन किया जा रहा है। कलियुग में यह सभी मनुष्यों के लिये प्राय दुष्कर है, तथापि बिना कष्ट के मनुष्य शरीर-त्याग करके योग से परिपूर्णांग होकर पुन: अपने शरीर में आकर प्राणप्रतिष्ठा विधान से जीवित हो जाता है। परकाय-प्रवेश के समय अपने शरीर को गुप्त रखना चाहिये। योगाभ्यास-सिद्ध होने के आठ लक्षण हैं, जिनसे अन्य गुण भी प्राप्त होते हैं। इससे सुख-दु:ख में समभाव रहता है, निरोग एवं वश्य वृत्ति होती है; जितेन्द्रियत्व, अक्रोध, कृपा एवं जनसेवा से साधक युक्त होता है।

आसन्नमृत्युचिह्नानि

आसन्नमृत्योश्चिह्नानि कथयामि शृणु प्रिये ।।४९।।

यैः साध्यसाधकौ ज्ञात्वा देहत्यागमतन्द्रितौ। देवतास्वात्मभजनपरौ स्यातां ततस्तु तौ ।।५०।।
सुगतिं प्राप्य सिद्धौ तु भवतो जातमात्रतः। (अकारणं निजां पूर्वां विमुच्य प्रकृतिं नरः ।।५१।।
समाश्रयेत् ततस्त्वब्दान्मृतिस्तस्य सुनिश्चितम्)। अरुन्धतीं ध्रुवं व्योम्नि नेक्षते चेत्तदर्धतः ।।५२।।
दृशौ नासान्तिकाक्रान्त्या चन्द्रकेऽपाङ्गयोर्न चेत्। विलोकयति तस्यार्धान्मृतिस्तस्य सुनिश्चितम् ।।५३।।
(गुल्फाधः स्फुरणं नाड्योः पादयोश्चेन्न जायते)। तस्याशु नाशो गदितो भानौ रुण्डं च पश्यतः ।।५४।।
निरुद्धकर्णरन्ध्रस्य न चेत् कुण्डलिनीध्वनिः। धूमो वा दृश्यते मूर्ध्नि गृहक्षेत्रादितोऽपि वा ।।५५।।
मूर्ध्नि वा विहगा लीनाः परासुं तं न को वदेत्। पश्चात्कृतार्को गण्डूषे न पश्येच्छक्रचापकम् ।।५६।।
सद्यः परासुमात्मानं जानीयात् सर्वथा नरः। मस्तकस्थकरः पश्येत् प्रकोष्ठं स्थूलमात्मनः ।।५७।।
अङ्गुल्योरन्तरा दृग्भ्यां पश्येन्न तौ विनश्यतः। श्लेष्मशुक्रमलानि स्युर्निमग्नानि जले यदा ।।५८।।
तस्मिन् पक्षे प्रयात्येव यमं संत्यक्तजीवितः। हाटकां प्रतिमां पश्यन् ध्रुवं याति यमालयम् ।।५९।।
भास्करं भगणैः पश्यन्नपि याति यमालयम्। जलादिषु तनुच्छायां विकृतां वीक्ष्य मासतः ।।६०।।
प्रयाति निधनं छिद्रं पश्यन् भानोश्च मण्डले। स्नातानुलिप्तगात्रस्य पूर्वं शुष्यति चेदुरः ।।६१।।
स पक्षाद्याति निधनं सर्वैरपि सुरक्षितः। गुरुमातृगणान् विप्रान् चद्रसूर्यौ च देवताः ।।६२।।
आस्तिकान् सततं निन्दन्नकारणत एव च। स्वेर्ष्याविरस्य वलने परित्यागे स्वरोषतः ।।६३।।
गुरुमन्त्रद्विजत्यागेऽप्यचिराज्जायते मृतिः। गुरुं विद्यां च जनकं जननीं सर्वदेवताः ।।६४।।
सदाधिक्षेपशापाभ्यां न्यक्कुर्वन्नाशु नश्यति। पुस्तकं निजगेहं वा विष्टरं शयनं तु वा ।।६५।।
निष्कारणं निराकुर्वन्नाशु नश्यति मानवः। दृग्देहचक्रवालानां वैवर्ण्ये मासतो मृतिः ।।६६।।
ध्याने स्वदेववैरूप्ये मासतो निधनं भवेत्। इति।

अब आसन्न मृत्यु के चिह्नों को कहता हूँ, इसे जानकर साध्य साधक अतन्द्रित होकर देहत्याग करता है। वह देवता और स्वात्मा के भजन में लगा रहता है। जन्म लेते ही वह सुगति को प्राप्त होता है। जो मनुष्य अपनी पूर्व प्रकृति को अकारण त्याग देता है, उसकी मृत्यु एक वर्ष में हो जाती है। अरुन्धती-ध्रुवतारा जिसे आकाश में नहीं दीखते, उसकी मृत्यु छः महीनों में होती है। नासाग्र के आगे चन्द्रक्रान्ति जिसे नहीं दीखती, उसकी मृत्यु छः महीनों में निश्चित रूप से होती है। पैरों के गुल्फों के नीचे नाड़ी-स्फुरण जिसे नहीं होता, उसकी मृत्यु तत्काल होती है। जो सूर्य में शिर विहीन शरीर देखता है, उसकी मृत्यु शीघ्र होती है। कानों को बन्द करने पर कुण्डलिनी ध्वनि जिसे नहीं सुनायी पड़ती; मूर्धा में या गृह-क्षेत्र में धुआँ दीखना; मूर्धा पर चिड़ियों का मँड़राना, गण्डूष में सूर्य का न दीखना, इन्द्रधनुष का न दीखना—ये आसन्न मृत्यु के लक्षण हैं। अपनी अंगुलियों में अन्तर जिसे नहीं दीखता, उसकी मृत्यु शीघ्र होती है। कफ, वीर्य, मल यदि जल में डूब जाय तो उसकी मृत्यु पन्द्रह दिनों में होती है। सोने की प्रतिमा जिसे दीख पड़ती है, उसकी मृत्यु निश्चित होती है।

सूर्य यदि तारासदृश दिखाई पड़े तो मृत्यु होती है। जलादि में अपनी छाया विकृत दिखायी पड़े तो एक माह में मृत्यु होती है। सूर्यमण्डल में छेद दीखने पर मृत्यु हो जाती है। स्नान करने पर पेट का जल यदि पहले सूख जाय तो उसकी मृत्यु पन्द्रह दिनों में हो जाती है। आस्तिकों की अकारण निन्दा करना, ईर्ष्यावश अपने परिवार को त्यागना, गुरु-मन्त्र एवं ब्राह्मण को त्यागने से थोड़े ही दिनों में मृत्यु होती है। गुरु, विद्या, पिता, माता, सभी देवता को जो शाप देता है, उसकी मृत्यु शीघ्र होती है। पुस्तक, अपना घर, आसन, शयन को जो अकारण छोड़ देता है, उसकी मृत्यु तुरन्त होती है। आँख या देह में विवर्णता होने पर एक महीने में मृत्यु होती है। ध्यान में अपने देवता का रूप जिसे विकृत दीखता है, उसकी मृत्यु एक महीने में हो जाती है।

देवीमाहात्म्यस्य पूजाशक्तयः

वाराहीतन्त्रे—

ईश्वर उवाच

आश्विनस्य सिते पक्षे श्रीविद्योपासकैरिह। प्रतिपत्तिथिमारभ्य नवम्यन्तं महेश्वरि ॥१॥
श्रीचक्रपूजनं देवि कर्तव्यं विधिपूर्वकम्। क्रमार्चनं पुरा कृत्वा देवीमाहात्म्यशक्तयः ॥२॥
यष्टव्या यत्नतो देवि काम्यमिच्छद्भिरादरात्। तच्छक्तीः संप्रवक्ष्यामि शृणु त्वं शैलसम्भवे ॥३॥
वह्वानां (?) मन्दभाग्योऽपि भवेद्वैश्रवणोपमः। नित्या चैव जगन्मूर्तिर्देवी भगवतीति च ॥४॥
महामाया प्रसन्नात्र वरदा मुक्तिदायिनी। परमा हेतुभूता च तथैव च सनातनी ॥५॥
संसारबन्धहेतुश्च तथा सर्वेश्वरीश्वरी। योगनिद्रा ततश्चैव हरिनेत्रकृतालया ॥६॥
विश्वेश्वरी जगद्धात्री स्थितिसंहारकारिणी। निद्राभगवती चैव ह्यतुला तेजसां निधिः ॥७॥
स्वाहा स्वधा वषट्कारा स्वरात्मा च स्वधाक्षरा। त्रिधामात्रात्मिका चार्धमात्रा स्वरस्वरूपिणी ॥८॥
अनुच्चार्या ततः सन्ध्या सावित्री जननी परा। सृष्टिरूपा जगद्योनिः स्थितिरूपा ततः परम् ॥९॥
तथा संहृतिरूपा च ततश्चैव जगन्मया। महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥१०॥
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी। प्रकृतिश्चैव सत्त्वादिगुणत्रयविभाविनी ॥११॥
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा। सुरेश्वरी तथा ह्रीश्च बुद्धिर्बोधसुलक्षणा ॥१२॥
लज्जा पुष्टिस्ततस्तुष्टिः शान्तिः क्षान्तिस्तथैव च। खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥१३॥
शङ्खिनी चापिनी बाणभुसुण्डीपरिघायुधा। सौम्या सौम्यतरा चैव सुन्दरी च परा तथा ॥१४॥
परमा परमेशी च सदसच्चाखिलात्मिका। नारी शिवा सिंहवाहिन्यम्बिका भद्रकालिका ॥१५॥
चण्डिका च जगन्माता महिषासुरघातिनी। आत्मशक्तिः सर्वदेवमयी श्रद्धा गुणात्मिका ॥१६॥
सर्वाश्रयाऽव्याकृताऽऽद्या ततः शब्दात्मिका तथा। वार्त्तार्तिहन्त्री मेधा च दुर्गा भवसमुद्रनौः ॥१७॥
असङ्गा कैटभारातिहृदयैककृतालया। गौरी सदार्द्रचित्ता च गीर्वाणवरदायिनी ॥१८॥
देवी चैव महादेवी शिवा भद्रा ततः परम्। रौद्रा धात्री तथा ज्योत्स्ना तथा चैवेन्दुरूपिणी ॥१९॥
सुखा चैव तु कल्याणी ऋद्धिः सिद्धिश्च कूर्मिका। नैर्ऋती भूभृतां लक्ष्मीः शर्वाणी च ततः परम् ॥२०॥
दुर्गा च दुर्गपारा च सारा च सर्वकारिणी। क्षान्तिः कृत्स्ना च धूम्रा वै यातिसौम्यातिरौद्रिणी ॥२१॥
जगत्प्रतिष्ठा कृष्णा च विष्णुमाया ततः परम्। चेतना बुद्धिरूपा च निद्रारूपा क्षुधा तथा ॥२२॥
छायारूपा शक्तिरूपा तृष्णारूपा ततः परम्। क्षान्तिरूपा जातिरूपा लज्जारूपा तथैव च ॥२३॥
शान्तिरूपा तथा श्रद्धारूपा कान्तिस्वरूपिणी। लक्ष्मीरूपा वृत्तिरूपा धृतिरूपा ततः परम् ॥२४॥
स्मृतिरूपा दयारूपा तुष्टिरूपा ततः परम्। पुष्टिरूपा मातृरूपा भ्रान्तिरूपा तथैव च ॥२५॥
शुभहेतुः पार्वती च कौशिकी कालिका तथा। उग्रचण्डा च कृष्णा च हिमाचलकृतालया ॥२६॥
धूम्रलोचनहन्त्री च असिनी पाशिनी तथा। विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा ॥२७॥
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा। अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा ॥२८॥
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा। भीमाक्षी भीमरूपा च चण्डमुण्डविनाशिनी ॥२९॥
चामुण्डा लोकविख्याता ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी। माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी ॥३०॥
महाहिवलया चैव चन्द्ररेखाविभूषणा। कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ॥३१॥
गुहरूपा वैष्णवी च गरुडोपरि संस्थिता। शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गहस्ता तथैव च ॥३२॥
वाराही नारसिंही च नृसिंहसदृशी तथा। घोररावा सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहतिः ॥३३॥

वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता। सहस्रनयना चैव शक्ररूपा तथैव च ॥३४॥
भीषणाशक्तिरत्युग्रा शिवाशतनिनादिनी। तथापराजिता चैव शिवदूती तथैव च ॥३५॥
कात्यायनी रक्तबीजनाशिनी चण्डघण्टिका। अष्टादशभुजा चोग्रा निशुम्भासुरघातिनी ॥३६॥
शुम्भहन्त्री प्रपन्नार्तिहरा विश्वेश्वरी तथा। आधारभूता च तथा महीरूपा तथैव च ॥३७॥
अपां स्वरूपा च तथाप्यायिनी च ततः परम्। अलंघ्यवीर्या चानन्तवीर्या बीजस्वरूपिणी ॥३८॥
सम्मोहिनी च विद्या च स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी। अशेषजनहृत्संस्था तथा नारायणी शिवा ॥३९॥
कलाकाष्ठादिरूपा च परिणामप्रदायिनी। सर्वमङ्गलमाङ्गल्या शिवा सर्वार्थसाधिका ॥४०॥
शरण्या त्र्यम्बिका गौरी सृष्टिस्थितिलयात्मिका। शक्तिः सनातनी चैव तथा चैव गुणाश्रया ॥४१॥
ततो गुणमया चैव नारायणस्वरूपिणी। शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणा ॥४२॥
सर्वस्यार्तिहरा देवी विष्णुरूपा परात्परा। हंसयुक्तविमानस्था ब्रह्माणीरूपधारिणी ॥४३॥
कौशाम्भः क्षुरिकाशूलचन्द्राहिवरधारिणी। महावृषभसंरूढा तथा माहेश्वरीति च ॥४४॥
त्रैलोक्यत्राणसहिता किरीटवरधारिणी। वृत्रप्राणहरा चैव शिवदूतीस्वरूपिणी ॥४५॥
हतदैत्या महासत्त्वा घोररूपा महारवा। दंष्ट्राकरालवदना शिरोमालाविभूषणा ॥४६॥
चामुण्डा मुण्डमथना लक्ष्मीर्लज्जा तथैव च। महाविद्या तथा श्रद्धा पुष्टिश्चैव सदा ध्रुवा ॥४७॥
महारात्रिर्महाविद्या मेधा सरस्वती वरा। भूतिदा तामसी चैव नियतेशा तथैव च ॥४८॥
सर्वतः पाणिपादान्ता सर्वतोऽक्षिशिरोमुखा। सर्वतः श्रवणघ्राणा तथा सर्वस्वरूपिणी ॥४९॥
सर्वेशा सर्वरूपा च सर्वशक्तिसमन्विता। समस्तरोगहन्त्री च समस्ताभीष्टदायिनी ॥५०॥
विश्वात्मिका च विश्वेशवन्द्या पापापहारिणी। उत्पातपाकजनितोपसर्गचयनाशिनी ॥५१॥
विश्वार्तिहारिणी चैव त्रैलोक्यवरदायिनी। नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसम्भवा ॥५२॥
विन्ध्याद्रिवासिनी रौद्ररूपिणी रक्तदन्तिका। दाडिमीकुसुमप्रख्याऽयोनिजा शतलोचना ॥५३॥
भीमा शाकम्भरी दुर्गा दानवेन्द्रविनाशिनी। महाकाल्या महाकाली महामारी ततस्त्वजा ॥५४॥
लक्ष्मीवृद्धिप्रदा नित्या पुत्रपौत्रप्रवर्धिनी। शैलपुत्री ततो ब्रह्मचारिणी च ततः परम् ॥५५॥
चण्डघण्टा विशालाक्षी कूष्माण्डा वेदमातृका। स्कन्दमाता गणेशी च विरूपाक्षी ततोऽम्बिका ॥५६॥
महागौरी महावीर्या महाबलपराक्रमा। षष्ट्युत्तरं च त्रिशतं शक्तयः संख्यया शिवे ॥५७॥
प्रत्यावरणपूजायां चत्वारिंशच्च शक्तयः। संपूज्य बिन्दुचक्रे तु सर्वा एव प्रपूजयेत् ॥५८॥
गन्धैः पुष्पैस्तथा धूपैर्दीपैर्नैवेद्यचन्दनैः। कुमारीपूजनैर्योगियोगिनीपूजनैः शुभैः ॥५९॥
बलिप्रदानैर्होमैश्च तथा ब्राह्मणतर्पणैः। तोषयेन्मूलविद्यां च जपेदुत्तरवृद्धितः ॥६०॥

आश्विन नवरात्र प्रयोग—वाराही तन्त्र में कहा गया है कि आश्विन मास के शुक्ल पक्ष में श्रीविद्या के उपासक को प्रतिपदा से नवमी तक श्रीचक्र का पूजन विधिपूर्वक करना चाहिये। क्रमार्चन करने के बाद कामना की पूर्ति के लिये देवीमाहात्म्य के शक्तियों की पूजा आदरपूर्वक करनी चाहिये करे। इन शक्तियों की पूजा से अतीव मन्दभाग्य व्यक्ति भी कुबेर के समान धनी हो जाता है। ये शक्तियाँ तीन सौ साठ हैं। प्रत्येक आवरण में चालीस-चालीस शक्तियों की पूजा करने से नवावरण पूजा में इन समस्त शक्तियों की पूजा हो जाती है। इनके नाम इस प्रकार हैं—

नित्या, जगन्मूर्ति, भगवती, महामाया, प्रसन्ना, वरदा, मुक्तिदायिनी, परमा, हेतुभूता, सनातनी, संसारबन्धहेतु, सर्वेश्वरी, ईश्वरी, योगनिद्रा, हरिनेत्रकृतालया, विश्वेश्वरी, जगद्धात्री, स्थितिकारिणी, संहाकारिणी, निद्राभगवती, अतुला, तेजसांनिधि, स्वाहा, स्वधा, वषटकारा, स्वरात्मा, स्वधाक्षरा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी, अर्द्धमात्रा, स्वरस्वरूपिणी, अनुच्चार्या, सन्ध्या, सावित्री, जननी, परा, सृष्टिरूपा—इन चालीस की पूजा प्रथम आवरण में होती है।

जगद्योनि, स्थितिरूपा, संहृतिरूपा, जगन्मया, महामाया, महामेधा, महास्मृति, महामोहा, महादेवी, महासुरी, प्रकृति, सत्त्वरूपा, रजोरूपा, तमोरूपा, कालरात्रि, महारात्रि, मोहरात्रि, दारुणा, सुरेश्वरी, ह्रीरूपा, बुद्धिरूपा, बोधरूपा, सुलक्षणा, लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति, क्षान्ति, खड्गिनी, शूलिनी, घोरा, गदिनी, चक्रिणी, शङ्खिनी, बाणधरा, भुशुण्डी, हस्ता, परिघायुधा, सौम्या, सौम्यतरा—इन चालीस की पूजा द्वितीय आवरण में होती है।

सुन्दरी, परा, परमा, परमेशी, सद्रूपा, असद्रूपा, अखिलात्मिका, नारी, शिवा, सिंहवाहिनी, अम्बिका, भद्रकालिका, चण्डिका, जगन्माता, महिषासुरघातिनी, आत्मशक्ति, सर्वदेवमयी, श्रद्धा, गुणात्मिका, सर्वाश्रया, अव्याकृता, आद्या, शब्दात्मिका, वार्त्ता, आर्तिहन्त्री, मेधा, दुर्गा, भवसमुद्रनौ:, असंगा, कैटभारातिहृदयैककृतालया, गौरी, सदार्दचित्ता, गीर्वाणरूपा, वरदायिनी, देवी, महादेवी, शिवा, भद्रा, रौद्रा, धात्री—ये चालीस तृतीय आवरण में पूज्य हैं।

ज्योत्स्ना, इन्दुरूपिणी, सुखा, कल्याणी, ऋद्धि, सिद्धि, कूर्मिका, नैर्ऋती, भूभृतां, लक्ष्मी, शर्वाणी, दुर्गा, दुर्गपारा, सारा, सर्वकारिणी, क्षान्ति, कृत्स्ना, धूम्रा, अतिसौम्या, अतिरौद्रा, जगत्प्रतिष्ठा, कृष्णा, विष्णुमाया, चेतना, बुद्धिरूपा, निद्रारूपा, क्षुधारूपा, छायारूपा, शक्तिरूपा, तृष्णारूपा, क्षान्तिरूपा, गतिरूपा, लज्जारूपा, शान्तिरूपा, श्रद्धारूपा, कान्तिरूपा, लक्ष्मीरूपा, वृत्तिरूपा, धृतिरूपा, स्मृतिरूपा, दयारूपा—इन चालीस की पूजा चतुर्थ आवरण में होती है। तुष्टिरूपा, पुष्टिरूपा, मातृरूपा, भ्रान्तिरूपा, शुभहेतु, पार्वती, कौशिकी, कालिका, उग्रचण्डा, कृष्णा, हिमाचल- कृतालया, धूम्रलोचनहन्त्री, असिनी, पाशिनी, विचित्रखट्वांगधरा, नरमालाविभूषणा, द्वीपिचर्मपरीधाना, शुष्कमांसा, अतिभैरवा, अतिविस्तारवदना, जिह्वाललनभीषणा, निमग्ना, रक्तनयना, नादापूरिता, दिङमुखा, भीमाक्षी, भीमरूपा, चण्डविनाशिनी, मुण्डविनाशिनी, चामुण्डा, लोकविख्याता, ब्रह्माणी, ब्रह्मवादिनी, माहेश्वरी, वृषारूढ़ा, त्रिशूलधरा, वरधारिणी, महाविलया, चन्द्ररेखाविभूषणा, कौमारी ये चालीस पञ्चम आवरण में पूज्य हैं।

शक्तिहस्ता, मयूरवरवाहिना, गुहरूपा, वैष्णवी, गरुड़ोपरिसंस्थिता, शङ्खधरा, चक्रधरा, गदाहस्ता, शार्ङ्गधरा, खड्गहस्ता, वाराही, नारसिंही, नृसिंहसदृशी, घोररावा, सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहति, वज्रहस्ता, ऐन्द्री, गजराजोपरिस्थिता, सहस्रनयना, शक्ररूपा, भीषणो, अत्युग्रा, शिवाशतनिनादिनी, अपराजिता, शिवदूती, कात्यास्यनी, रक्तबीजनाशिनी, चण्डघण्टिका, अष्टादशभुजा, उग्रा, निशुम्भासुरघातिनी, शुम्भहन्त्री, प्रपन्नार्तिहरा, विश्वेश्वरी, आधारभूता, महीरूपा, अपांस्वरूपा, आप्यायनी, अलंघ्यवीर्या, अन्तवीर्या—इन चालीस की पूजा षष्ठ आवरण में होती है।

बीजस्वरूपिणी, सम्मोहिनी, विद्या, स्वर्गदात्री, मुक्तिप्रदायिनी, अशेषजनहृत्संस्था, नारायणी, शिवा, कलारूपा, काष्ठारूपा, परिणामप्रदायिनी, सर्वमंगला, मांगल्या, शिवा, सर्वार्थसाधिका, शरण्या, त्र्यम्बिका, गौरी, सृष्टिकर्त्री, स्थितिकर्त्री, लयात्मिका, शक्ति, सनातनी, गुणाश्रया, गुणमया, नारायणस्वरूपिणी, शरणागतरक्षिका, दीनपरित्राणकारिणी, आर्तपरित्राणपरायणा, सर्वस्यार्तिहरा देवी, विष्णुरूपा, परात्परा, हंसयुक्तविमानस्था, ब्रह्माणीरूपधारिणी, कौशाम्भधारिणी, क्षुरिकाधारिणी, शूलधारिणी, चन्द्रधारिणी, अहिधारिणी, वरधारिणी—ये चालीस सप्तम आवरण में पूज्य हैं। महावृषभसंरूढ़ा, माहेश्वरी, त्रैलोक्यत्राणसहिता, किरीटधारिणी, वरधारिणी, वृत्रप्राणहरा, शिवदूतीस्वरूपिणी, हतदैत्या, महासत्त्वा, घोररूपा, महारवा, दंष्ट्राकरालवदना, शिरोमालाविभूषणा, चामुण्डा, मुण्डमथना, लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, सदाध्रुवा, महारात्रि, महाविद्या, मेधा, सरस्वती, वरा, भूतिदा, तामसी, नियतेशा, सर्वत:[illegible]न्ता सर्वत: पादान्ता, सर्वतो अक्षि, सर्वतोशिरा, सर्वतोमुखा, सर्वत: श्रवणा, सर्वत: घ्राणा, सर्वस्वरूपिणी, सर्वेशा, सर्वरूपा, सर्वशक्तिसमन्विता—ये चालीस अष्टम आवरण में पूज्य हैं।

समस्तरोगहन्त्री, समस्ताभीष्टदायिनी, विश्वात्मिका, विश्वेशवन्द्या, पापापहारिणी, उत्पातपाकजनितो पसर्गचयनाशिनी, विश्वार्तिहारिणी, त्रैलोक्यवरदायिनी, नन्दगोपगृहजाता, यशोदागर्भसम्भवा, विन्ध्याद्रिवासिनी, रौद्ररूपिणी, रक्तदन्तिका, दादिमीकुसुमप्रख्या, अयोनिजा, शतलोचना, भीमा, शाकम्भरी, दुर्गा, दानवेन्द्रविनाशिनी, महाकाल्या, महाकाली, महामारी, अजा, लक्ष्मीप्रदा, वृद्धिप्रदा, नित्या, पुत्रपौत्रप्रवर्धिनी, शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चण्डघण्टा, विशालाक्षी, कूष्माण्डा, वेदमातृका, स्कन्दमाता, गणेशी, विरूपाक्षी, अम्बिका, महागौरी, महावीर्या, महाबलपराक्रमा—ये चालीस नवम आवरण में पूज्य हैं।

इस प्रकार इन तीन सौ साठ शक्तियों की पूजा प्रत्येक नव आवरणों में चालीस-चालीस की संख्या में करनी चाहिये। इसके बाद सबों की पूजा बिन्दुचक्र में करनी चाहिये। गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य चन्दन चढ़ाना चाहिये। इसके बाद कुमारियों और योगिनियों की पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर बलिप्रदान, हवन, ब्राह्मणभोजन, तर्पण से तुष्ट करके मूल विद्या का जप वृद्धिक्रम से करना चाहिये।

माहात्म्यपाठप्रमाणन्तत्फलञ्च

देवीमाहात्म्यपाठं तु कुर्यादेकोत्तरं शतम्। एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रतिवर्षं निरन्तरम्॥६१॥
भुक्त्वा भोगांस्ततश्चान्ते देवीसायुज्यमाप्नुयात्। इति।

इसके बाद दुर्गा सप्तशती का एक सौ आठ पाठ करना चाहिये। इस प्रकार जो प्रतिवर्ष निरन्तर पूजा करता है, वह इस संसार में सभी भोगों को भोगकर अन्त में देवीसायुज्य प्राप्त करता है।

षोडशनित्यानां लोकात्मत्वम्

श्रीतन्त्रराजे (२८ प०)—

अथ षोडशनित्यानां लोकात्मत्वं वदामि ते। यन्मयं विश्वमखिलं वर्तते सचराचरम्॥१॥
कालमातृकयोर्व्याप्तिः प्रागेवोक्ता मया तव। वाच्यवाचकयोगेन मातृकालोकयोरपि॥२॥
व्याप्तिमद्य प्रवक्ष्यामि सम्यक् ते काललोकयोः। यदायत्तमिदं विश्वं नित्यास्तत्कालविग्रहाः॥३॥
कालस्य षोडशाकारो रूपो दृश्यत एव हि। वृद्धिक्षयाभ्यां चन्द्रस्य चाद्यया कलया तथा॥४॥
लोकरूपं तत्प्रमाणं कालचक्रं च तादृशम्। तयोरन्योन्यनित्यत्वं व्याप्तिं तद्वत् स्थितिं तयोः॥५॥
नित्यालोकस्थितिं मानं नित्याकवचविग्रहम्।

श्रीतन्त्रराज में कहा गया है कि अब सोलह नित्याओं के लोकात्मत्व को कहता हूँ, जिनसे व्याप्त होकर चराचरों सहित समस्त संसार अवस्थित है। कालमातृकाओं की व्याप्ति को मैंने पहले कह दिया है। आज वाच्य-वाचक के योग से मातृकाओं की लोकव्याप्ति कहता हूँ। विश्व में काल एवं लोक की व्याप्ति जैसी है, उसमें नित्याएँ कालविग्रह हैं। काल का आकार एवं रूप सोलह प्रकार का दिखायी पड़ता है। चन्द्रकला की वृद्धि-क्षय दृष्टिगत होती है। इस कालचक्र में लोक ही प्रमाण है। उनमें अन्योन्य नित्यत्व एवं व्याप्ति होने से ही उनकी स्थिति है। लोकस्थिति एवं कवचविग्रह नित्य है।

कालचक्रे सप्तग्रहलोकस्थितिः

ग्रहाणां मातृकारूपं शृणु प्रोक्तक्रमेण वै॥६॥
हेमरूपो भुवो मध्ये मेरुस्तिष्ठति पर्वतः। तस्याभितो मही पार्श्वे पञ्चाशच्छतयोजना॥७॥
लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिक्षीरजलात्मभिः। सिन्धुभिः सप्तभिर्द्वीपैस्तत्संख्यैर्द्विगुणोत्तरैः॥८॥
आवृता बाह्यसलिलजलधेर्बाह्यपार्श्वयोः। मध्यविस्तारमानं तु बहिरावृत्य तत्पुनः॥९॥
कालचक्रं पराशक्तिमारुतेन सदैव तु। नूनं परिभ्रमत्येव पश्चिमाधोऽपसव्यतः॥१०॥
तच्च तन्मानवीथीभिर्युतमष्टभिरद्भुतैः। तेजोमयैर्द्वादशारैर्युक्तं मेषादिविग्रहैः॥११॥
तेषु वीथिषु पूर्वाशामुखाः सप्त ग्रहाः स्थिताः। राशिषूक्तेन कालेन प्रोक्तेनोपर्यधस्तथा॥१२॥
प्रयान्ति तेषां चारेण लोकानां भवति स्थितिः।

ग्रहों का मातृकारूप इस प्रकार है। भुवनमध्य में स्वर्णिम सुमेरु पर्वत है। उसके सभी ओर पृथ्वी पाँच सौ योजन विस्तृत है। लवण, ईखरस, सुरा गोघृत, दही, दूध, जल—इन सात द्रव्यों से पूर्ण सात सागरों से पृथ्वी घिरी हुई है। सबों का मान उत्तरोत्तर दुगुना हैं। पराशक्ति वायु कालचक्र को सदा पश्चिम से प्रदक्षिणक्रम से घुमाता रहता है। उनके मान के अनुसार युक्त आठ अद्भुत वीथियों में तैजस मेषादि बारह राशियाँ स्थित हैं। उन वीथियों में सात ग्रह पूर्वमुख हैं। ये उक्त काल में राशियों में ऊपर-नीचे घूमते रहते हैं। उन्हीं की गति से लोकों की स्थिति होती है।

नित्यानां मेरुद्वीपादिषोडशविधदेशेषु परिवृत्तिक्रमः

मध्यस्थमेरौ ललिता सदैवास्ते महाद्युतिः ॥१३॥

तस्याभितो जलान्तःस्थाः शेषास्ताः स्युश्चतुर्दश। तद्बहिः परमे व्योम्नि त्वन्त्या चित्रा तु संस्थिता ॥१४॥
कृतादिवर्षादारभ्य प्रतिवर्षमिति स्थिताः। द्वितीयादिषु वर्षेषु क्रमात् ताः परिवृत्तिभिः ॥१५॥
षोडशाब्दे परे व्योम्नि ललिता सलिलाम्बुधौ। चित्रा च भवतीत्थं हि भजन्ते परिवर्तनम् ॥१६॥
एवं युगेषु चान्येषु वर्तन्ते प्रोक्तरूपतः। कालेष्वपि च मध्यादिपरव्योमान्तमीश्वरि ॥१७॥
परिवृत्तिं भजन्ते ता मध्यस्था स्वांशतश्चरेत्। अन्याः सर्वास्तत्र तत्र चरन्ति स्वयमेव वै ॥१८॥
तथा कालक्रमात् तास्तु भजन्ते परिवर्तनम्। कालतो देशतश्चक्रादैक्यं सञ्जायते यदा ॥१९॥
तदा भवन्ति भूपाला धार्मिकाः कालवर्षतः। प्रजाश्च सुखिनो भूयुररोगाः कालमृत्यवः ॥२०॥
कालचक्रस्य बाह्यस्थवीथ्यां तिष्ठन्ति तारकाः। तद्बहिः परमव्योम स्थितिस्तत्र तदन्तिका ॥२१॥
तासामपि च नित्यानां षोडशानां च तत्क्रमात्। एवं देशं च कालं च तन्मयं समुदीरितम् ॥२२॥

मध्यस्थ मेरु पर्वत पर ललिता सदैव ज्योतिमान रहती हैं। मेरु के सामने जल तक चौदह नित्याओं की स्थिति है। उसके बाहर परम व्योम में चित्रा की स्थिति है। कृतादि वर्ष से प्रारम्भ करके प्रतिवर्ष ये स्थित रहती हैं। दूसरे वर्ष से वर्षक्रम से इनकी परिवृत्ति होती है। सोलह वर्ष के बाद परव्योम में जल-सिन्धु में ललिता चित्रा होती है। ऐसा परिवर्तन होता है। इसी प्रकार युगों में और अन्यों में प्रोक्त रूप से काल में परव्योमान्त में स्थिति होती है। परिवृत्ति में देवी मध्यस्थ होकर अपने अंश से रहती है और सभी स्वयमेव ही आचरण करते हैं। इस प्रकार के कालक्रम से जो उसका भजन करते हैं, उनका देश-काल से ऐक्य हो जाता है। काल-वर्ष के अनुसार राजा धार्मिक होते हैं। प्रजा भी निरोग एवं सुखी होकर समय पर देह छोड़ती है। कालचक्र की बाहरी विथि में तारागण स्थित रहते हैं। उसके बाहर परम व्योम में ललिता की स्थिति रहती है। उनमें भी सोलह नित्याओं की क्रम से स्थिति रहती है। इस प्रकार देश काल ललितामय होते हैं।

देशकालतिथिप्राप्तनित्यापूजनादि

देशवर्षतिथीनां च संपातादैक्यमागताम्। पूजयेत् सविशेषं तां प्रजपेच्चाखिलाप्तये ॥२३॥
तेषु विद्योपदेशात्तु तस्यास्तत्सन्निधिर्भवेत्। महाशक्तिश्च जायेत त्रयाणामैक्यवैभवात् ॥२४॥
कालप्राप्तां यजेत् स्वाब्दजन्मवासरके तु ताम्। देशप्राप्तां तु तन्मासपूर्णायां पूजयेच्छिवे ॥२५॥
प्रत्यब्दमेवं कुर्वाणं न मुञ्चति रमा यशः। कदाचिदपि दीर्घायुररोगो ज्ञानवान् सुखी ॥२६॥
राजभिर्मनुजैः स्त्रीभिरन्यैः प्राणिभिरप्यसौ। मान्यते सर्वमन्त्राश्च सिद्धाः स्युस्तत्र पूजनात् ॥२७॥
जम्बूः प्लक्षः शाल्मली च कुशक्रौञ्चौ यथाक्रमम्। शाकश्च पुष्करश्चेति सप्तद्वीपेषु भूरुहाः ॥२८॥
तेषां नामभिरेव स्युस्तत्तन्नामानि तन्मुखात्। तत्तन्नामभिरभ्यर्च्य तद्द्वीपं तत्र पूजयेत् ॥२९॥
तां तां नित्यां तत्र तत्र काले काले तु साधकः। एवं पूजयितुर्लोके न समोऽस्ति न चाधिकः ॥३०॥

देश-वर्ष एवं तिथि के सम्पात से ऐक्य होता है। इसमें विशेष पूजा करके जप क़रे तो सब कुछ प्राप्त होता है। इस ऐक्य काल में विद्या के उपदेश से साधक की विद्या से सन्निधि होती है। देश-वर्ष-तिथि के ऐक्य वैभव से महाशक्ति प्राप्त होती हैं। अपने जन्मदिन पर प्रत्येक वर्ष में इस समय पूजा करे। देशप्राप्त महीने की पूर्णिमा में देवी की पूजा करे। प्रत्येक वर्ष जो इस प्रकार की पूजा करता है, उसका कभी भी लक्ष्मी और यश त्याग नहीं करते। वह दीर्घायु, निरोग, ज्ञानवान और सुखी होता है। राजा और अन्य जन रानी और अन्य सभी स्त्रियाँ और प्राणी इस पूजन से सभी मन्त्र सिद्ध कर सकते हैं। सात द्वीपों के नाम के अनुसार सात वृक्ष जामुन, पाकड़, सेमर, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर हैं। इनमें से प्रत्येक वृक्ष की पूजा सात द्वीपों के नाम से करे और उनकी नित्याओं एवं कालों की पूजा करे तो संसार में ऐसे साधक से श्रेष्ठ कोई नहीं होता।

कालचक्रे ग्रहाणां स्थितिकारणम्

मध्ये भूमिं तामभितः कालचक्रं ततो बहिः। महाव्योम च निःसीमं तत्रैतद्द्वयसंस्थितिः ॥३१॥
सुस्थिराया भुवो मध्ये चक्रस्य भ्रमतोऽनिशम्। ग्रहाणामत्र संवासः प्रचारनियतात्मनाम् ॥३२॥
कारणं परमेशानि तवेच्छैव तु केवलम्। न त्वन्यदवलम्बाय तयोः कुत्रापि विद्यते ॥३३॥
तयोर्बहिः परे व्योम्नि क्वचिदब्धिचतुष्टयम्। प्रागुक्तरूपां तत्तीरे कोलवक्त्रां तु पञ्चमीम् ॥३४॥
सलिले कुरुकुल्लां च पोतारूढां शुचिस्मिताम्। तन्मध्ये नवरत्नात्ममहाद्वीपं च तत्र वै ॥३५॥
कल्पकोद्यानमृतुभिः षड्भिः सेवितविग्रहम्। तमध्येऽसंख्यरूपाभिर्वृतां सङ्गीतशक्तिभिः ॥३६॥
गीतवादित्रनृत्यादिसंसक्ताभिरनारतम्। विनोद्यमानां विलसन्मदमन्थरवीक्षणाम् ॥३७॥
रत्नमण्डपमध्यस्थरत्नसिंहासनोपरि। शुचिस्मितां शक्तिवृन्दगीताकर्णननन्दिताम् ॥३८॥
सहजासवसंभोगैः संजातानन्दविग्रहाम्। दयामदारुणापाङ्गविलोकितसुसाधकाम् ॥३९॥
परितो भूषणैश्चित्रैः कर्णचामरकादिभिः। विराजमानान् द्विरदानश्वानपि तथाविधान् ॥४०॥
शक्तिभिर्दर्शितानग्रे पश्यन्तीममितोत्सवाम्। स्वसमानाभिरभितो नित्याभिः सेवितां तथा ॥४१॥
प्रयाति तत्पूजयिता तत्समाकारतां शनैः। तद्विनोदस्तत्समीपनिवासी स्यात् सुनिश्चितम् ॥४२॥
कोटियोजनविस्तीर्णसमायामं महाद्भुतम्। नवरत्नमयं द्वीपं तन्मानाब्धिभिरावृतम् ॥४३॥
तत्तृतीयांशमानस्य सहस्रादित्यतेजसः। रत्नद्वीपस्य मध्यस्थतृतीयांशे तु मण्डपे ॥४४॥
कोट्यादित्यद्युतिप्रान्तेष्वभितोऽसंख्यशक्तिभिः। तथा समन्वितां ध्यायन्नरो भवति सत्तमः ॥४५॥
एवं ध्यात्वार्चयेद् देवीं भक्त्या परमयोक्तया। नरो निरस्तसंसारमूलाज्ञानो जितेन्द्रियः ॥४६॥
निपुणश्च कलादक्षः सुखी निःसङ्गचित्तवान्। अपापः पुण्यशीलश्च सत्यार्जवसमन्वितः ॥४७॥
देशिकः स्वकुलोत्तुङ्गः सर्वसम्भावितात्मवान्। जायते तस्य परितो योजनं पावनं भवेत् ॥४८॥
तदालोकनसंलापसंस्पर्शादिकृतां नृणाम्। पापकर्मक्षयात् तेन रहिताः स्युश्च तत्समाः ॥४९॥
कालचक्रस्य नित्याया लोकस्य च बहिःस्थितम्। व्योमरूपमनाद्यन्तं यत्तच्चिन्मयमावयोः ॥५०॥
यो वेत्त्येवमशेषं तु नित्यावैभवमीरितम्। स जीवन्मुक्त एवेति प्रोक्तं तल्लक्षणं च ते ॥५१॥ इति।

मध्य में भूमि, उसके चारो ओर कालचक्र, उसके बाहर महाव्योम में दोनों की स्थिति निःसीम है। मध्य में भूमि स्थित है, चक्र रात-दिन घूमता है, ग्रहों का सञ्चार यहाँ होता है। सबों का कारण परमेशानी की इच्छा है। उसी की इच्छा के अनुसार सभी कार्य होते हैं। उसके अतिरिक्त दूसरा कोई अवलम्ब कहीं नहीं है। उसके बाहर परव्योम में चार समुद्र और हैं। पूर्वोक्त उसके तट पर वाराही पञ्चमी रहती है। जल में पोत पर आरूढ़ कुरुकुल्ला रहती है। उनके मध्य में नवरत्न महाद्वीप है। वहाँ पर कल्पवृक्ष का बाग छः ऋतुओं से नित्य सेवित है। उसके मध्य में असंख्य सङ्गीत शक्तियों से घिरा स्थान है। गीत वाद्य नृत्य में सभी लग्न रहती हैं। उनके मध्य में विनोद्यमान मन्दिर, मद के कारण मन्द-मन्द देखती हुई, रत्नमण्डपमध्य में रत्नसिंहासन पर शक्तिवृन्द के पवित्र गीत को सुनकर देवी आनन्दित रहती है। सभी वहाँ सहज आसव पान से आनन्द विग्रह रहते हैं। दयामद से अरुण अपाङ्ग से साधकों को देवी देखती है। उसके सामने सभी भूषणों से युक्त चामरयुक्त हाथी, घोड़े खड़े रहते हैं। उसकी शक्तियाँ अनेक उत्सव में दिखती हैं। देवी के समाने नित्याएँ भी सेवा में लगी रहती हैं। इस प्रकार की पूजा से साधक उन्हीं के समान हो जाता है और उसी के समीप रहकर आनन्दित रहता है। नवरत्नमय महा अद्भुत द्वीप करोड़ योजन विस्तृत है और उतने ही मान के सागरों से घिरा है। उसके तृतीयांश मान का सहस्र आदित्य तेज का मण्डप है। करोड़ों सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित असंख्य शक्तियों सहित ध्यान करने से मनुष्य उसी के समान हो जाता है। इस प्रकार का ध्यान करके भक्तिपूर्वक परमय होकर जो मनुष्य देवी की पूजा करता है, वह संसारमूलक अज्ञान से रहित होकर जितेन्द्रिय होता है। निपुण, कलादक्ष, सुखी, निःसंग चित्त वाला हो जाता है। निष्पाप, पुण्यवान, सत्य एवं आर्जव से युक्त होता है। देशिक

अपने कुल का श्रेष्ठ होकर सर्वसम्मानित आत्मवान होता है। उसके चारो ओर योजन भग का घेरा पवित्र हो जाता है। उसे देखकर, बात करके, स्पर्श करके मनुष्य पाप कर्म से रहित हो उसी के समान हो जाता है। कालचक्र की नित्याएँ लोक के बाहर रहती हैं। चे अनाद्यन्त व्योमरूप चिन्मय होती हैं। जो नित्या-वैभव को पूरी तरह से जान लेता है, वह जीवन्मुक्त हो जाता है और यही इसका लक्षण कहा गया है।

पञ्चधा षोडशी विद्या

मातृकार्णवे—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि श्रीविद्यापूजनं महत्। रमादिषोडशी विद्या तथा परादिषोडशी ॥१॥
कामादिषोडशी चैव तथा वागादिषोडशी। शक्त्यादिषोडशी प्रोक्ता पञ्चधा वै कुलागमे ॥२॥
तत्तद्विद्योपासनायां तत्तत्पूजाविधिः स्मृतः।

अत्र यथोक्तषोडशीविद्यादौ तत्तद्बीजस्थापनेन तत्तत्षोडशीति सिद्धान्तः।

मातृकार्णव में महती श्रीविद्या के पूजन का विवेचन करते हुये कहा गया है कि पञ्चदशी विद्या के पहले 'श्रीं' लगाने से रमा षोडशी, 'ह्रीं' लगाने से परादि षोडशी, 'क्लीं' लगाने से कामादि षोडशी, 'ऐं' लगाने से वामादि षोडशी और 'ह्स्रौं' लगाने से शक्त्यादि षोडशी—यह पाँच प्रकार की षोडशी विद्या होती है। कुलागम में इन विद्याओं की उपासना और पूजाविधि का वर्णन किया गया है।

रमादिषोडशीविद्याशक्तयः

तथा—

१. रमादिषोडशीविद्यापूजने शक्तयः स्मृताः। ताः शक्तीः संप्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथाक्रमम् ॥३॥
अनन्ता चाप्रमेया च कमला कामिनी कला। कान्ता च कामगा चैव कलिकल्मषनाशिनी ॥४॥
सिद्धलक्ष्मी राज्यलक्ष्मीः सिद्धिस्थाने यजेत्तु ताः। क्षोभिणीं द्राविणीं चैवोन्मादिनीं वशिनीं तथा ॥५॥
आकर्षिणीं खेचरीं च ततश्च मदनातुराम्। सर्वबीजमयीं सर्वयोनिरूपां मनोन्मनीम् ॥६॥
एताः शक्तीर्दशैवात्र मुद्रास्थानेषु पूजयेत्। रञ्जनीं रागशीलां च राजसीं रतिरागिणीम् ॥७॥
तामसीं सात्त्विकीं सौम्यां क्रूरां चैवाष्टमातृकाः। पूजयेन्मातृकास्थानेष्वेवमाद्यावृतिं यजेत् ॥८॥
षोडशारे यजेत् प्रोक्तकलाः सोमस्य षोडश। अष्टारे तु मदोन्मत्तां मन्मथार्तां मनस्विनीम् ॥९॥
मातङ्गीं मदनां मत्तां पश्चाच्च मदविह्वलाम्। मनोवेगां च संपूज्य ततश्चतुर्दशारके ॥१०॥
इन्द्राणीं चैव शर्वाणीं शाङ्करीं शशिशेखराम्। इच्छावतीं कामचारां ततश्च गगनावतीम् ॥११॥
लास्यप्रियां ललामां च चन्द्रहासां ततः परम्। चार्वङ्गीं चारुचरितां चपलां चारुभूषणाम् ॥१२॥
यजेद् दशारयुग्मे तु जीवनां रतिसुन्दरीम्। हावरूपां भावरूपां वीणापुस्तकधारिणीम् ॥१३॥
खड्गिनीं बाणिनीं चैवाह्लादिनीं कुसुमप्रियाम्। बालामम्बां विशालाक्षीं सुखाराध्यां सुखोन्मुखाम् ॥१४॥
भक्तिप्रियां वेदगर्भां विचित्रां सुरसुन्दरीम्। हंसिनीं कोलवक्त्रां च ततोऽष्टारे यजेदिमाः ॥१५॥
ब्राह्मीं सरस्वतीं वाणीं तथा वाग्वादिनीं तथा। भारतीं नकुलीं भाषां श्रुतिस्मृतिविबोधिनीम् ॥१६॥
अन्तराले तु संपूज्याः प्राग्वदायुधदेवताः। वामां ज्येष्ठां च रौद्रीं च त्रिकोणाग्रेषु पूजयेत् ॥१७॥
एवं ते कथितं भद्रे श्रीचक्रार्चनमुत्तमम्। क्रमपूजां विधायादौ प्रोक्तपूजां समाचरेत् ॥१८॥
रमादिषोडशीविद्योपासकानामयं क्रमः। य एवं कुरुते नित्यं श्रीचक्रक्रममुत्तमम् ॥१९॥
भुङ्क्त्वेह भोगानखिलान् देवीसायुज्यमाप्नुयात्।

१. रमादि षोडशी विद्या—रमादि षोडशी पूजन में सिद्धिस्थान में जिन शक्तियों की पूजा होती है, वे हैं—अनन्ता,

अप्रमेया, कमला, कला, कामिनी, कान्ता, कामगा, कलिकल्पषनाशिनी, सिद्धलक्ष्मी एवं राज्यलक्ष्मी। इन दश की पूजा सिद्धियों की पूजा के स्थानों में करनी चाहिये। क्षोभिणी, द्राविणी, उन्मादिनी, वशिनी, आकर्षिणी, खेचरी, मदनातुरा, सर्वबीजमयी, सर्वयोनिरूपा, मनोन्मनी—इन दश शक्तियों की पूजा मुद्रापूजन स्थानों में करनी चाहिये। रंजनी, रागशीला, राजसी, रतिरागिणी, तामसी, सात्त्विकी, सौम्या, क्रूरा—इन आठ की पूजा ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाओं के पूजन स्थानों में करनी चाहिये। यह प्रथम आवरण की पूजा होती है।

षोडश दल कमल में सोलह चन्द्रकलाओं की पूजा करे। अष्टदल में मन्दोन्मत्ता, न्मथार्ता, मनस्विनी, मातङ्गी, मदना, मत्ता, मदविह्वला, मनोवेगा—इन आठ की पूजा करनी चाहिये।

चतुर्दशार में इन्द्राणी, शर्वाणी, शांकरी, शशिशेखरा, इच्छावती, कामचारा, गगनावती, लास्यप्रिया, ललामा, चन्द्रहासा, चार्वङ्गी, चारुचरिता, चपला, चारुभूषणा—इन चौदह की पूजा की जाती है।

बहिर्दशार में जीवना, रतिसुन्दरी, हावरूपा, भावरूपा, वीणा-पुस्तकधारिणी, खड्गिनी, बाणिनी, आह्लादिनी, कुसुमप्रिया—इन दश की पूजा होती है।

अन्तर्दशार में बाला, अम्बा, विशालाक्षी, सुखाराध्या, सुखोन्मुखा, भक्तिप्रिया, वेदगर्भा, विचित्रा, सुरसुन्दरी, हंसिनी, कोलवक्त्रा—इन दश की पूजा होती है। अष्टार में ब्राह्मी, सरस्वती, वाणी, वाग्वादिनी, भारती, नकुली, भाषा, श्रुति-स्मृति-विबोधिनी—इन आठ की पूजा होती है। अन्तराल में पूर्ववत् आयुध एवं उनके देवों की पूजा की जाती है। त्रिकोणाग्रों में वामा, ज्येष्ठा, रौद्री की पूजा होती है। इस प्रकार से उत्तम श्रीचक्रार्चन होता है। पहले क्रमपूजा करके तब इस पूजा को करना चाहिये। श्रीबीजादि षोडशी उपासकों के लिये यही क्रम है। इस प्रकार से उत्तम श्रीचक्रक्रम का पूजन जो करता है, वह इस संसार में सभी भोगों को भोगकर अन्त में देवी का सायुज्य प्राप्त करता है।

परादिषोडशीदिव्याशक्तयः

२. अथ वक्ष्ये महेशानि पराद्यायाश्च पूजनम् ॥२०॥

माया लज्जा प्रभा ज्योत्स्ना महोच्छुष्मा महानिशा। कमनीया कला कान्ता कम्बुकण्ठी कलावती ॥२१॥
वरेण्या वरदा बाला पावनी च परात्परा। भवानी भावुका भव्या भवबन्धविमोचिनी ॥२२॥
पाशिनी पाशविच्छेदा वाणिनी शारदा शिवा। अचिन्त्यानन्दचरिता तारिणी धर्मविक्रमा ॥२३॥
ईश्वरी कौतुकप्रीता दुर्गा कात्यायनी परा। उर्वशी दैत्यहन्त्री च पद्मा पद्मावती शिवा ॥२४॥
स्वाहा स्वधा वषट्कारा श्रद्धा प्रीतिर्मनोरमा। मनोहरा महामाया मानिनी मानपोषणा ॥२५॥
अजिता चोर्जितानन्ता ॐकारा सामगप्रिया। अभेद्या नीतिरक्षा च ज्ञानदा भक्तवत्सला ॥२६॥
निरवद्या विशोका च वरदा कामरूपिणी। कौलिनी कौलिकप्रीता कुलीना कूर्मरूपिणी ॥२७॥
आधाराधेयरूपा च कुलमार्गप्रबोधिनी। लिङ्गत्रयस्थानगता लिङ्गिनी लिङ्गरूपिणी ॥२८॥
अज्ञानहन्त्री घोरास्या मङ्गला मङ्गलप्रदा। भावाभावविनिर्मुक्ता गुणातीता गुणात्मिका ॥२९॥
धारुणी धर्मतनया दानशीला दयापरा। त्रिवर्णस्था च षट्कोणनिलया बिन्दुवासिनी ॥३०॥
योगिनी योगगम्या च योगाङ्गा योगरूपिणी। वेदान्तगोचरा वेद्या कालहन्त्री कुलान्तका ॥३१॥
वज्रेश्वरी च कामेशी महाविद्या महाभया। त्रिपुरा त्रिपुरेशी च सुन्दरी भगमालिनी ॥३२॥
नवकोणालया नित्या त्रिगुणा त्रिगुणात्मिका। प्राग्वत् प्रपूजयेदेता नवावरणगाः क्रमात् ॥३३॥

२. परा आद्या पूजन—अब मैं परा आद्या षोडशी पूजा का वर्णन करता हूँ। नव आवरणों की पूजा में इनकी इस क्रम से पूजा की जाती है। सिद्धियों के पूजास्थान में माया, लज्जा, प्रभा, ज्योत्स्ना, महोच्छुष्मा, महानिशा, कमनीया, कला, कान्ता, कम्बुकण्ठी—इन दश की पूजा करे। मुद्रा-पूजन स्थान में कलावती, वरेण्या, वरदा, बाला, पावनी, परात्परा, भवानी,

भावुका, भव्या, भवबन्धविमोचिनी—इन दश की पूजा करे। ब्राह्मी आदि के पूजास्थानों में पाशिनी, पाशविच्छेदा, वाणिनी, शारदा, शिवा, अचिन्त्यानन्दचरिता, तारिणी, धर्मविक्रमा—इन आठ की पूजा करे। षोड़शदल में ईश्वरी, कौतुकप्रीता, दुर्गा, कात्यायनी, परा, उर्वशी, दैत्यहन्त्री, पद्मा, पद्मावती, शिवा, स्वाहा, स्वधा, वषट्कारा, श्रद्धा, प्रीति, मनोरमा—इन सोलह की पूजा करे। अष्टदल में मनोहरा, महामाया, मानिनी, मानपोषणा, अजिता, उर्जिता, अनन्ता, ॐकारा—इन आठ की पूजा करे। चतुर्दशार में सामग्रप्रिया, अभेद्या, नीतिरक्षा, ज्ञानदा, भक्तवत्सला, निरवद्या, विशोका, वरदा, कामरूपिणी, कौलिनी, कौलिकप्रीता, कुलीना, कूर्मरूपिणी, अधाराधेयरूपा—इन चौदह की पूजा करे। बहिर्दशार में कुलमार्गप्रबोधिनी, लिङ्गत्रयस्थानगता, लिंगिनी, लिङ्गरूपिणी, अज्ञानहन्त्री, घोरास्या, मङ्गला, मङ्गलप्रदा, भावाभावविनिर्मुक्ता, गुणातीता—इन दश की पूजा करे। अन्तर्दशार में गुणात्मिका, धारुणी, धर्मतनया, दानशीला, दयापरा, त्रिवर्णस्था, षट्कोणनिलया, बिन्दुवासिनी, योगिनी, योगगम्या—इन दश की पूजा करे। अष्टार में योगांगा, योगरूपिणी, वेदान्तगोचरा, वेद्या, कालहन्त्री, कुलान्तका, वज्रेश्वरी, कामेशी—इन आठ की पूजा करे। अन्तराल में महाविद्या, महाभया, त्रिपुरा, त्रिपुरेशी, सुन्दरी एवं भगमालिनी—इन छः की पूजा षडङ्ग पूजा के स्थानों में करे। त्रिकोणाग्रों में नित्या, त्रिगुणा, त्रिगुणात्मिका की पूजा करे।

कामादिषोडशीविद्याशक्तय:

३. कामादिषोडशीविद्याशक्तीराकर्णयाम्बिके । कामेशी कामरूपा च कुलकान्ता कलावती ॥३४॥
कौमोदिनी रतिर्ज्येष्ठा श्रद्धा प्रीतिर्धृतिर्मति: । काली कलालिका काम्या काम्यदा कामगा सती ॥३५॥
सारा सर्वेश्वरी सौम्या साध्वी सत्या सनातनी । ऋद्धि: सिद्धिस्तत: शुद्धिर्बुद्धिस्तन्द्रा क्षुधा जरा ॥३६॥
जलजा जातिशीला च जागरा रागवर्जिता । जया च विजया चापराजिता कुसुमायुधा ॥३७॥
आद्या विद्या महाविद्या महावेगा मदोद्धता । भुजङ्गभूषणा रौद्री नरमालाविभूषणा ॥३८॥
आर्या हिमाचलसुता विन्ध्यशैलनिवासिनी । पीठगा पीठनिलया कामरूपकृतालया ॥३९॥
कौमारी कर्कशा क्रुद्धा गणेशी गणवन्दिता । भद्रा भद्रावती भव्या भैरवी भैरवप्रिया ॥४०॥
भावगम्या भवध्वंसिन्यचिन्त्याचिन्त्यवैभवा । नारायणी भद्रकाली वैष्णवी विष्णुपूजिता ॥४१॥
वाराही नारसिंही च भीमा भीमाट्टहासिनी । विशाला विमला बाला परा त्रैलोक्यमातृका ॥४२॥
भगवत्यप्रधृष्या च भगमाला भगोदरी । मदिरा मदिरानन्दा महिषी महिषान्तकी ॥४३॥
कदम्बवनमध्यस्था किराती कीर्तिशालिनी । अभङ्गुरा विश्वमूर्तिर्विश्वा विश्वैकवन्दिता ॥४४॥
वीरा वीरेश्वरी वीरवन्दिता विमलप्रभा । कपालिनी कामचारा कामिनी कामदायिनी ॥४५॥
इच्छा ज्ञाना क्रिया चैव पूजनीया: प्रयत्नत: ।

३. कामादि षोडशी विद्या-पूजन—कामादि षोडशी विद्या की शक्तियों का नवावरणों में इस क्रम से पूजन किया जाता है। सिद्धियों के पूजनस्थानों में कामेशी, कामरूपा, कुलकान्ता, कलावती, कौमोदिनी, रति, ज्येष्ठा, श्रद्धा, प्रीति, धृति—इन दश की पूजा करे। मुद्रापूजन स्थानों में मति, काली, कलालिका, काम्या, काम्यदा, कामगा, सती, सारा, सर्वेश्वरी, सौम्या—इन दश की पूजा करे। मातृका पूजन स्थान में साध्वी, सत्या, सनातनी, ऋद्धि, सिद्धि, शुद्धि, बुद्धि, तन्द्रा—इन आठ की पूजा करे। षोडश दल में क्षुधा, जरा, जलजा, जातिशीला, जागरा, रागवर्जिता, जया, विजया, अपराजिता, कुसुमायुधा, आद्या विद्या, महाविद्या, महावेगा, मदोद्धता, भुजङ्गभूषणा, रौद्री—इन सोलह की पूजा करे। अष्टदल में नरमालाविभूषणा, आर्या, हिमाचलसुता, विन्ध्यशैलनिवासिनी, पीठगा, पीठनिलया, कामरूपकृतालया, कौमारी—इन आठ की पूजा करे। चतुर्दशार में कर्कशा, क्रुद्धा, गणेशी, गणवन्दिता, भद्रा, भद्रावती, भव्या, भैरवी, भैरवप्रिया, भावगम्या, भवध्वंसिनी, अचिन्त्यवैभवा, नारायणी, भद्रकाली—इन चौदह की पूजा करे। बहिर्दशार में वैष्णवी, विष्णुपूजिता, वाराही, नारसिंही, भीमा, भीमाट्टहासिनी, विशाला, विमला, बाला, परा—इन दश की पूजा करे। अन्तर्दशार में त्रैलोक्यमातृका, भगवती, अप्रधृष्या, भगमाला, भगोदरी, मदिरा, मदिरानन्दा, महिषी, महिषान्तकी एवं कदम्बवनमध्यस्था—इन दश की पूजा

करे। अष्टार में किराती, कीर्तिशालिनी, अभंगुरा, विश्वमूर्ति, विश्वा, विश्वैकवन्दिता, वीरा, वीरेश्वरी आठ की पूजा करे। षडङ्ग स्थान में वीरवन्दिता, विमलप्रभा, कपालिनी, कामचारा, कामिनी, कामदायिनी—इन छः की पूजा करे। त्रिकोणाग्रों में इच्छा, ज्ञान, क्रिया की पूजा करे।

वागादिषोडशीविद्याशक्तयः

४. वागादिषोडशीशक्तीर्वक्ष्ये देवि यथाक्रमम् ॥४६॥

वाग्भवा वरदा वाणी शान्तिः क्षान्तिः क्रिया दया। मरीचिरङ्गिरा प्रज्ञा सृष्टिः श्रद्धा च सन्नतिः ॥४७॥
गुणप्रिया गुणाराध्या वाणी भाषा सरस्वती। ब्रह्माणी ब्रह्मवन्द्या च ब्राह्मणी ब्रह्मवादिनी ॥४८॥
श्वेतमाल्याम्बरधरा सुश्वेता श्वेतभूषणा। इन्दुमण्डलमध्यस्था चन्द्रखण्डविराजिता ॥४९॥
चन्द्रिका चारुभूषा च कौबेरी कालकल्यदा। वाच्यवाचकरूपा च ज्ञानगम्या गुणोत्कटा ॥५०॥
गेयाद्या गेयरूपा च गीर्वाणवरवन्दिता। भोगिनी भोगिरूपा च भूतेशी भूतरूपिणी ॥५१॥
भुवनानन्दिनी भूमिर्भुवनव्यापिनी ह्यजा। प्रगल्भा प्रौढचरिता वेदशास्त्रार्थगोचरा ॥५२॥
वेदान्तवेद्या सीमन्तिन्यङ्कुशिन्यखिलात्मिका। शुकहस्ता शुकाराध्या श्यामला चण्डविक्रमा ॥५३॥
चामुण्डा चण्डिका दुर्गा भावनी भावगोचरा। जृम्भिणी मोहिनी चण्डा रञ्जिनी वशिनी तथा ॥५४॥
बन्धिनी बुद्धिरक्षा च बुधरूपा बुधार्चिता। सामगानरता नित्या चतुरा चतुरानना ॥५५॥
जाड्यहन्त्री जनाराध्या तारा नीलसरस्वती। कुरुकुल्ला च वाग्वादिन्यानन्दा नन्दगोपजा ॥५६॥
नन्दिनी नादरूपा च नलिनी नलिनप्रिया। पाविनी परमाह्लादिन्यासुरी सुरपूजिता ॥५७॥
सुमना उन्मना गानप्रिया कल्याणदायिनी। महनीयगुणा रत्नभूषणा जनरञ्जिनी ॥५८॥
मुनिसेव्या मोदमाना मानिनी मलवर्जिता। मन्दारकुसुमप्रीता बन्धूककुसुमारुणा ॥५९॥
वृन्दा वृन्दारकनुता बृंहिताश्वमुखी तथा। प्राग्वत्पूजा प्रकर्तव्या नवस्वावरणेषु च ॥६०॥

४. वागादि षोडशी विद्या-पूजन—वागादि षोडशी विद्या की इन शक्तियों का पूजन नव आवरणों में अग्रांकित क्रम से करना चाहिये। सिद्धियों के पूजन स्थलों में वाग्भवा, वरदा, वाणी, शान्ति, क्षान्ति, क्रिया, दया, मरीचि, अङ्गिरा, प्रज्ञा—इन दश की पूजा करे। मुद्रा पूजन स्थानों में सृष्टि, श्रद्धा, सन्नति, गुणप्रिया, गुणाराध्या, वाणी, भाषा, सरस्वती, ब्रह्माणी, ब्रह्मवन्द्या—इन दश की पूजा करे। मातृका पूजन स्थानों में ब्राह्मणी, ब्रह्मवादिनी, श्वेतमाल्याम्बरधरा, सुश्वेता, श्वेतभूषणा, इन्दुमण्डलमध्यस्था, चन्द्रखण्डविराजिता, चन्द्रिका—इन आठ की पूजा करे। षोडश दल में चारुभूषा, कौबेरी, कालकल्यदा, वाच्यवाचकरूपा, ज्ञानगम्या, गुणोत्कटा, गेयाद्या, गेयरूपा, गीर्वाणवरवन्दिता, भोगिनी, भोगिरूपा, भूतेशी, भूतरूपिणी, भुवनानन्दिनी, भूमि-भुवनव्यापिनी, अजा—इन सोलह की पूजा करे। अष्टदल में प्रगल्भा, प्रौढ़चरिता, वेदशास्त्रार्थगोचरा, वेदान्तवेद्या, सीमन्तिनी, अंकुशिनी, अखिलात्मिका, शुकहस्ता—इन आठ की पूजा करे। चतुर्दशार में शुकाराध्या, श्यामला, चण्डविक्रमा, चामुण्डा, चण्डिका, दुर्गा, भावनी, भावगोचरा, जृम्भिणी, मोहिनी, चण्डा, रंजिनी, वशिनी, बन्धिनी—इन चौदह की पूजा करे। बर्हिदशार में बुद्धि, रक्षा, बुधारूपा, बुधर्चिता, सामगानरता, चतुरा, चतुरानना, जाड्यहन्त्री, जनाराध्या, तारा—इन दश की पूजन करे।

अन्तर्दशार में नीलसरस्वती, कुरुकुल्ला, वाग्वादिनी, आनन्दा, नन्दगोपजा, नन्दिनी, नादरूपा, नलिनी-नलिनप्रिया, पाविनी, आसुरी परमाह्लादिनी—इन दश की पूजा करे।

अष्टार में सुरपूजिता, सुमना, उन्मना, गानप्रिया, कल्याणदायिनी, महनीयगुणा रत्नभूषणा, जनरञ्जिनी—इन आठ की पूजा करे। षडङ्गस्थान में मुनिसेव्या, मोदमाना, मानिनी, मलवर्जिता, मन्दारकुसुमप्रीता, बन्धूककुसुमारुणा—इन छः की पूजा करे। त्रिकोणाग्रों में वृन्दा, वृन्दारकनुता, बृंहिताश्वमुखी की पूजा करे।

शक्त्यादिषोडशीविद्याशक्तय:

५. शक्त्यादिषोडशीशक्ती: प्रवक्ष्यामि समासत: । याभिरेतज्जगद् व्याप्तं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥६१॥
शक्ति: परा वसुमती विश्वाद्या विश्वमातृका। पञ्चभूतात्मिका प्राणदायिनी भूतदायिनी ॥६२॥
विश्वेश्वरी विश्वहन्त्री सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी। विश्वयोनिर्जगन्माता भावाभावविवर्जिता ॥६३॥
व्याप्तिदेवी जगज्जैत्री विवेका वीर्यवर्धिनी। मेयरूपा प्रमेया च प्रमागम्या प्रहेलिका ॥६४॥
ज्ञातृज्ञानज्ञेयरूपा ज्ञानविज्ञानदायिनी। प्रतीता प्रकृति: प्रज्ञा प्रामाण्यमतिसंस्थिता ॥६५॥
शून्यरूपाऽशून्यरूपा शून्याशून्यविवर्जिता। चित्स्वरूपा चिदंशा च निर्विकल्पा निरीहिका ॥६६॥
निराधारा निराकारा गुणातीता गुणोदया। सूर्यमण्डलमध्यस्था वह्निमण्डलवासिनी ॥६७॥
चन्द्रमण्डलमध्यस्था ह्याज्ञाचक्रनिवासिनी। अत्यन्तगहनातीता दिव्यमार्गविबोधिनी ॥६८॥
सुधापानरता सौधी सुधासारा सुधात्मिका। परमात्मस्वरूपा च कुण्डलिन्यमितप्रभा ॥६९॥
दिव्यस्थानत्रयातीता स्थानत्रयनिवासिनी। स्थानदा स्थानगम्या च स्थानास्थानविवेकिनी ॥७०॥
संभ्रमा भ्रमरूपा च विभ्रमा भ्रमवर्जिता। विश्रान्तिरूपा शृङ्गाटनिलयाऽकथवर्णिनी ॥७१॥
निर्मला निर्मलज्ञेया मलत्रयविशोषिणी। अव्यक्ता व्यक्तरूपा च व्यक्ताव्यक्तविवर्जिता ॥७२॥
तुरीया च त्वराकारा कुमारी पूजकप्रिया। गिरिजा गिरिशाराध्या गीर्वाणगणसेविता ॥७३॥
जाग्रद्रूपा स्वप्नरूपा तथा सुषुप्तिरूपिणी। अवस्थात्रयनिर्मुक्ता चिदानन्दस्वरूपिणी ॥७४॥
हंसिनी हंसरूपा च मुण्डमालाविभूषणा। आरक्तनयना रक्तभूषणा निरुपद्रवा ॥७५॥
भक्तप्रिया मुक्तिदात्री भुक्तिदा भुवनात्मिका। जन्मसंसारबन्धघ्नी जननी जनकात्मिका ॥७६॥
जरामरणविध्वंसिन्यम्बुजाक्षी शिवप्रिया। प्राणशक्तिर्भूतमाता सुकेशिन्यथ कौशिकी ॥७७॥
कोशरूपा भूरिगणा पूर्णरूपा पुरातनी। अकलङ्कशशाङ्काभा मुद्रापुस्तकधारिणी ॥७८॥
त्रिनेत्रा त्रिपुरा चैव त्रिस्थाना त्रिकविग्रहा। त्रिमूर्तिस्त्रिपुराम्बा च महात्रिपुरसुन्दरी ॥७९॥
पञ्चप्रकारयजनं प्रोक्तं तेऽतिरहस्यगम्। गोप्यं गोप्यं पुनर्गोप्यं गोपनीयं प्रयत्नत: ॥८०॥
एवं पूजयिता मर्त्यो मत्समो भवति ध्रुवम्। इति।

५. शक्त्यादि षोडशी विद्या-पूजन—शक्त्यादि षोडशी के इन शक्तियों की पूजा नव आवरणों में अग्रांकित क्रम से करनी चाहिये, क्योंकि इन्हीं से जिनसे चराचर-सहित त्रैलोक्य जगत् व्याप्त है। सिद्धियों के पूजन स्थानों में शक्ति, परा, वसुमती, विश्वाद्या, विश्वमातृका, पञ्चभूतात्मिका, प्राणदायिनी, भूतदायिनी, विश्वेश्वरी, विश्वहन्त्री—इन दश की पूजा करे। मुद्रा पूजन स्थानों में—सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी, विश्वयोनि, जगन्माता, भावाभावविवर्जिता, व्याप्तिदेवी, जगज्जैत्री, विवेश वीर्यवर्धिनीका, मेयरूपा, प्रमेया—इन दश की पूजा करे। अष्टमातृका पूजनस्थलों में प्रमागम्या, प्रहेलिका, ज्ञातृज्ञानज्ञेयरूपा, ज्ञानविज्ञानदायिनी, प्रतीता, प्रकृति, प्रज्ञा, प्रामाण्यमति संस्थिता—इन आठ की पूजा करे। षोडशदल में शून्यरूपा, अशून्यरूपा, शून्याशून्यविवर्जिता, चित्स्वरूपा, चिदंशा, निर्विकल्पा, निरीहिका, निराधारा, निराकारा, गुणातीता, गुणोदया, सूर्यमण्डलमध्यस्था, वह्निमण्डलवासिनी, चन्द्रमण्डलमध्यस्था, आज्ञाचक्र-निवासिनी, अत्यन्तगहनानीता—इन सोलह की पूजा करे। अष्टदल में दिव्यमार्गबिबोधिनी, सुधापानरता, सौधी, सुधासारा, सुधात्मिका, परमात्मस्वरूपा, कुण्डलिन्यमितप्रभा, दिव्यस्थानत्रयातीता—इन आठ की पूजा करे। चतुर्दशार में स्थानत्रयनिवासिनी, स्थानदा, स्थानगम्या स्थानास्थान, विवेकिनी, सम्भ्रमा, भ्रमरूपा, विभ्रमा, भ्रमवर्जिता, विश्रान्तिरूपा, शृंगारनिलयाऽकथवर्णिनी, निर्मला, निर्मलज्ञेया, मलत्रयविशोषिणी, अव्यक्ता—इन चौदह की पूजा करे। बहिर्दशार व्यक्तरूपा, व्यक्ताव्यक्तविवर्जिता, तुरीया, त्वराकारा, कुमारी, पूजकप्रिया, गिरिजा, गिरिशाराध्या, गीर्वाणगणसेविता, जाग्रद्रूपा—इन दश की पूजा करे। अन्तर्दशार में—स्वप्नरूपा, सुषुप्तिरूपिणी, अवस्थात्रयनिर्मुक्ता, चिदानन्दस्वरूपिणी, हंसिनी, हंसरूपा, मुण्डमालाविभूषणा, आरक्तनयना, रक्तभूषणा; निरुपद्रवा—इन दश की पूजा करे। अष्टार में—भक्तप्रिया,

मुक्तिदात्री, भुक्तिदा, भुवनात्मिका, जन्मसंसारबन्धघ्नी, जननी, जनकात्मिका, जरामरणा-विध्वंसिनी—इन आठ की पूजा करे। षडङ्ग स्थानों में अम्बुजाक्षी, शिवप्रिया, प्राणशक्तिर्भूतमाता, सुकेशिनी, कौशिकी, कोशरूपा—इन छ: की पूजा करे। त्रिकोणाग्रों में भूरिगणा, पूर्णरूपा, पुरातनी की पूजा करे। बिन्दुचक्र में अकलंकशशांकाभा, मुद्रापुस्तकधारिणी, त्रिनेत्रा, त्रिपुरा, त्रिस्थाना, त्रिकविग्रहा, त्रिमूर्ति, त्रिपुराम्बा, महात्रिपुरसुन्दरी की पूजा करे।

इस प्रकार पाँच प्रकार के यजन को कहा गया। ये अति रहस्यमय हैं एवं प्रयत्नपूर्वक गोपनीय हैं। जो मनुष्य इस प्रकार की पूजा करता हैं, वह साक्षात् शिव के समान हो जाता है।

सूक्ष्महोमविधानम्

श्रीतन्त्रराजे (३० प० ४३ श्लो०)—

ततः सूक्ष्मैः पराख्यैश्च होमैः सिद्धिं शृणु प्रिये । स्वमूलाधारके वह्नौ कुण्डलिन्यग्रगामिनि ॥१॥
वाच्यवाचकरूपं तु प्रपञ्चं जुहुयात् तथा । येनावयोः समो देवि जायते हवनेन च ॥२॥
तद्विधानं वद प्राज्ञ शम्भो सम्यङ्ममाधुना । आधारे वह्निसंस्थानं कुण्डलिन्याः स्थितिं ततः ॥३॥
तद्रूपं तत्क्रियां सर्वं वद मे विशदं प्रभो । शृणु वक्ष्ये विधानं ते सम्यग्विस्तरतोऽधुना ॥४॥
प्राणाग्निहोत्रविद्येति यत् त्रय्यां श्रूयते परम् । यज्ज्ञात्वा वनितागर्भं न प्रयाति नरो ध्रुवम् ॥५॥
यद्व्ययायासरहितमनन्यापेक्षनिर्वहम् । यन्मनःक्लेशविश्रान्तेः स्थानं निःशेषकल्मषम् ॥६॥
सुखास्पदं स्वगं विश्वमयं चिद्वेद्यवेदनात् । अत्रोक्तशेषमखिलं षट्त्रिंशे पटले स्फुटम् ॥७॥
प्रदर्श्यते ततस्तत्र वर्णयामि च किञ्चन । नित्यानित्योदिते मूलाधारमध्येऽस्ति पावकः ॥८॥
सर्वेषां प्राणिनां तद्वद् हृदये च प्रभाकरः । मूर्धनि ब्रह्मरन्ध्राधश्चन्द्रमाश्च व्यवस्थितः ॥९॥
तत्त्रयात्मकमेव स्यादाद्यानित्यात्रिखण्डकम् । तेषां त्रयाणामैक्यं तु मनसा भावयेत् तथा ॥१०॥
गमागमाभ्यां तेजोभिस्तेषामन्योन्यजैः शिवे । तथा समिद्धं तत्तेजस्त्रयं बुद्ध्वाथ तन्मयम् ॥११॥
विश्वं विकल्पविधुरं भावयेदद्भुतं च तम् । तेषां त्रयाणां वर्णानां प्रागुक्तानां क्रमेण वै ॥१२॥
द्वाभ्यामन्यतमं कृत्वा पुटितं जुहुयाच्च तैः । पुटितान् भानुहृद्वर्णैः स्वरांस्तारेण हुंकृतैः ॥१३॥
कुण्डलीमुखमार्गाग्नौ जुहुयान्निश्चलाशयः । वह्निभानुपुटान्तःस्थैश्चान्द्रैस्तद्वद् हुनेत् क्रमात् ॥१४॥
चन्द्रभानुपुटान्तःस्थैर्वह्न्यर्णैर्जुहुयात् तथा । भानुचन्द्रपुटान्तःस्थैर्वह्न्यर्णैर्जुहुयात् तथा ॥१५॥
चन्द्रवह्निपुटान्तःस्थैर्भान्वर्णैर्जुहुयादपि । वह्निचन्द्रपुटान्तःस्थैरपि तद्वद् हुनेत्तथा ॥१६॥
तथा तेषां प्रातिलोम्यात् षोडशानां हुनेदपि । एवं द्वादशधा होममक्षरैः स्यादुदीरितैः ॥१७॥

सूक्ष्म हवन—तन्त्रराज में कहा गया है कि अब सूक्ष्म परा नामक हवन से प्राप्त सिद्धियों को सुनो। अपने मूलाधार में कुण्डलिनी अग्रगामिनी वह्नि है। उसमें वाच्य-वाचकरूप प्रपञ्च का हवन करे। इससे साधक शिव-पार्वती के समान हो जाता है। गार्वती ने कहा कि हे प्रभो! आप उस हवन विंधान को कहिये मूलाधार में अग्नि एवं स्थान कुण्डलिनी की स्थिति को कहिये। उसका रूप, उसकी क्रिया को भी विशद रूप में कहिये। शिव ने कहा कि हे देवि! सुनो, अब मैं सम्यक् विधान विस्तार से कहता हूँ। वेद में जिस प्राणाग्निहोत्र विद्या को कहा गया है और जिसे जानकर मनुष्य पुन: वनितागर्भ में नहीं जाता। यह अव्यय आयासरहित अनन्यापेक्ष-निर्वह है। इस स्थान में मन को क्लेश से विश्राम मिलता है। इस स्थान में सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। जीव अपने को सुखास्पद विश्वमय मानने लगता है। इसका पूर्ण वर्णन छत्तीसवें पटल में स्पष्ट रूप से किया गया है। उनमें से किञ्चिन्मात्र यहाँ कहता हूँ। जिस प्रकार नित्या रूप में उदित मूलाधार मध्य में यह अग्नि नित्य रहती है, वैसे ही सबों के हृदय में सूर्य रहते हैं। मूर्धा में ब्रह्मरन्ध्र के नीचे चन्द्रमा व्यवस्थित रहता है। वहाँ पर त्रयात्मक आद्या नित्या त्रिखण्ड रूप में रहती है। मन में उन तीनों के ऐक्य की भावना करे। उनके गमागम से उत्पन्न उन तीनों तेजों की समिधा को भी उन्हीं के समान जानना चाहिये। उनमें विकल्परहित अद्भुत विश्व की भावना करे। उनके तीनों वर्णो का वर्णन क्रमश: पहले

किया गया है। उनमें से दो को अलग करके पुटित करके उनसे हवन करे। भानुवर्णों से ॐ हुं के साथ स्वरों को पुटित करे कुण्डलिनी मुख की अग्नि में निश्चल आशय से हवन करे। वह्नि भानु वर्णों से पुटित करके चन्द्र वर्णों से हवन करे। चन्द्र भानुवर्णों से पुटित वह्नि वर्णों से हवन करे। भानु चन्द्र वर्णों से पुटित अग्नि वर्णों से हवन करे। चन्द्र अग्नि वर्णों से पुटित सूर्य वर्णों से हवन करे। अग्नि, चन्द्र वर्णों से पुटित सूर्य वर्णों से हवन करे। ऐसे ही प्रतिलोम क्रम से सोलह वर्णों से हवन करे। इस प्रकार बारह अक्षरों से हवन करे।

शक्तिशिवयोस्तेजस्त्रयात्मकत्वादि

कृत्वा तद्वाच्यमखिलमर्थरूपं च तैः समम्। तेजस्त्रयात्मरूपं स्यादावयोरपि तद्वपुः ॥१८॥
अन्यानि चावयोरिच्छागृहीतानि वपूंषि वै। तान्यन्यदेवतादेहसमानीच्छावशानि च ॥१९॥
मुक्तिश्च तन्मयीभावस्थैर्यमेव समीरितम्।

उस वाच्य को अर्थरूप में उसी के समान त्र्यात्मरूप माने। हम शिवा-शिव का शरीर भी उसी त्र्यात्मक तेज के समान है। दूसरे सभी हमारी इच्छा से शरीर धारण करते है। अन्य देवता के शरीर भी हमारी इच्छा से होते हैं। उस भाव में स्थिरता होने पर मुक्ति मिलती है।

कुण्डलिनीस्वरूपम्

तत्र कुण्डलिनीं ब्रूहि स्फुटं मे परमेश्वर ॥२०॥

तां वदामि शृणु प्राज्ञे रहस्यं परमाद्भुतम्। मूलाधारस्थवह्न्यात्मतेजोमध्ये व्यवस्थिता ॥२१॥
जीवशक्तिः कुण्डलाख्या प्राणाकारेण तेन सा। प्रसुप्तभुजगाकारा त्रिरावर्ता महाद्युतिः ॥२२॥
मायाशीर्षा नदन्ती तामुच्चरन्त्यनिशं स्वगे। सुषुम्नामध्यदेशे सा यदा कर्णद्वयस्य तु ॥२३॥
पिधाय न शृणोत्यस्या ध्वनिं तस्य तदा मृतिः। एवं सा जीवशक्तिस्तु यदा कुण्डलिनीस्थितिम् ॥२४॥
विहाय ऋजुतां याति स्वेच्छादण्डाहता सती। तदा विश्वप्रतीतिः स्यात् प्राणिनामन्यदा पुनः ॥२५॥

पार्वती ने कहा कि हे परमेश्वर! उस कुण्डलिनी को स्पष्ट रूप में कहिये। शिव ने कहा कि हे पार्वति! सुनो, मैं परम रहस्य को कहता हूँ। मूलाधार में स्थित वह्न्यात्मक तेज के मध्य में जीवशक्ति कुण्डलिनी प्राण के आकार में स्थित रहती है। यह सोयी हुई सर्पिणी के समान तीन कुण्डल में महाज्योतिमान रहती है एवं माया शीर्ष से वर्णों का उच्चारण सुषुम्ना में करती रहती है। दोनों कानों को बन्द करने पर वह ध्वनि यदि नहीं सुनायी पड़ती है तब तुरन्त मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार जीवशक्ति कुण्डलिनी में स्थित रहती है। इच्छा दण्ड से आहत होकर कुण्डल त्याग कर वह जब सीधी होती है तब प्राणियों को विश्व की प्रतीति होती है।

जीवन्मुक्तलक्षणम्

निशान्धकारे भुवनस्थितिवत्स्वात्मनः स्थितिः। एवं तां वेत्ति यो देहे (देशिकादेशदर्शिताम् ॥२६॥
स वेत्ति ब्रह्म परमं मां त्वामपि च साधकः। जीवन्मुक्तः स विज्ञेयः शुद्धात्मासक्तमानसः ॥२७॥
अस्पृष्टपुण्यपापश्च शोकहर्षातिभूमिगः। रागद्वेषविनिर्मुक्त)स्त्यक्तसर्वक्रियाफलः ॥२८॥
निरुपाधिकसन्तुष्टः स्वेच्छाधीनेच्छया युतः। स्वदेहमात्रयात्रश्च समश्च स्तुतिनिन्दयोः ॥२९॥
समारिमित्रः कल्याणगुणशीलदयान्वितः। एवं स कथितो जीवन्मुक्तो लोकेषु साधकः ॥३०॥

रात्रि के अन्धकार में भुवन-स्थिति के समान ही मन की स्थिति होती है। गुरु के द्वारा बताये जाने पर इस प्रकार जो देह में देखता है, वही ब्रह्म को, मुझे और तुम्हें देखता है और वही जीवन्मुक्त, आत्मासक्त मानस होता है, पाप-पुण्य उसका स्पर्श नहीं करते और न ही हर्ष- शोक उसे होता है। वह राग-द्वेषमुक्त होकर सभी कर्मफलों का त्याग करता है। बिना उपाधि के सन्तुष्ट, अपनी इच्छा के अधीन इच्छा से युक्त, स्वदेहमात्र की यात्रा में निन्दा और स्तुति में भी वह समान भाव

से रहता है। जो शत्रु-मित्र में वह समभाव रखता है; लोककल्याण में सदा लग्न, गुणवान एवं दयावान रहता है। इस प्रकार के साधक को जीवन्मुक्त कहते हैं।

ज्ञानरहितस्यापि भक्तित: सिद्धि:

इतर पूजने देव्या भजने च सकौतुक:। कालेन सिद्धिभाग्भूयादितरो दु:खभाजनम्॥३१॥

पूर्वप्रोक्तो जीवन्मुक्तो, द्वितीय: कालेन सिद्धिभाग्जीवन्मुक्तसदृशो भूयादित्यर्थ:। तदितर: प्रोक्तद्वयातिरिक्तो दु:खभाजनं भवतीति।

दूसरे लोग देवी का भजन कौतुकवश करते हैं। फलत: उन्हें बहुत समय पर सिद्धि मिलती है एवं दूसरे कुछ दु:खभाजन होते हैं।

नित्याभक्तिवैभवम्

तथा—

जन्मभिर्बहुभि: क्लिष्टो मूर्खो विद्याधनोद्धवै:। मदैरुन्मदचित्त: सन्नधोऽधो याति योनिषु॥३२॥
नित्यासु भक्तिर्भुवने प्रक्षीणे पापकर्मणि। जायते यद्बलाल्लोके भवेत् प्रागुक्तलक्षण:॥३३॥
नरो भवन्ति तां भक्तिं प्राप्य लोकेषु देवता:। दृश्यन्ते भानुचन्द्रारबुधजीवसितासिता:॥३४॥
अन्ये च लोकपालाद्यास्तद्भक्तिप्राप्तसंपद:। बहुना किं परं देवि नित्याभि: सदृशानघे॥३५॥
न सन्ति देवता विद्यास्तस्मात्ता एव देवता:। भावयाम्यहमद्यापि त्रिकाले विग्रहान्वित:॥३६॥
तद्वर्णव्याप्तचक्रस्था ग्रहाश्च तव दर्शिता:। विधिविष्णुशिवात्मत्वं तासामेव निजेच्छया॥३७॥
अन्याश्च देवता या यास्तास्तास्तन्मयविग्रहा:।

प्रागुक्तमन्त्रभेदा देवताभेदाश्च सर्वे नित्याभेदा एवेत्यर्थ:। तत्प्रदर्शनमेतज्ज्ञानार्थमिति।

बहुत जन्मों तक कष्ट सहन करते रहते हैं। विद्या एवं धन मिलने पर वे मतवाले हो जाते हैं और नीचातिनीच योनि में जन्म लेते हैं। संसार में नित्या की भक्ति से पापकर्म क्षीण होते हैं। वह जिस लोक में जाता है, वहाँ पूर्वोक्त लक्षणों से युक्त होता है। उसकी भक्ति को प्राप्त करके वह भी देवता हो जाता है उसे सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु दृष्टिगत होते हैं। दूसरे लोकपालादि उसकी भक्ति से संपदा प्राप्त करते हैं। बहुत क्या कहा जाय, नित्या के समान दूसरा कोई देवता नहीं है। उनकी विद्या ही देवता है। मैं आज भी तीनों कालों में इनकी भावना करता हूँ। इस प्रकार उसके वर्ण से व्याप्त चक्रस्थ ग्रहों को मैंने बतलाया। विधि-विष्णु एवं शिवात्मत्व उसकी इच्छा पर निर्भर हैं। जो अन्य देवता हैं, वे सभी उसी के विग्रह हैं। अर्थात् पूर्वोक्त मन्त्रभेद एवं देवताभेद नित्या के ही स्वरूपभूत हैं।

परहोमस्वरूपम्

तथा—

पररूपं तु वक्ष्यामि होमं ते महदद्भुतम्। यत्सिद्धि: सिद्धरूपाणां प्रागुक्तानां भवेत् सदा॥३८॥
अन्येषां न भवेद्भावस्तथा सर्वाश्रयो महान्। प्रक्षीणाशेषपापानां भक्ति: स्याद्भक्तसेविनाम्॥३९॥
नित्याविद्यासु भक्तानां लक्षणं शृणु सुन्दरि। आमुष्मिकासंशयत्वं सन्तोषो नित्यपूर्णता॥४०॥
सुखिता त्यागिता ज्ञानं कृतज्ञत्वमलुब्धता। अकार्पण्यमदीनत्वं परचिन्तानिरुद्यम:॥४१॥
दयालुता मनस्वित्वमवैषम्यं मन:स्थितौ। लाभहान्यो: प्रीतिरोषाभाव: कल्याणशीलता॥४२॥
कल्याणाभिनिवेशित्वं सदा कल्याणकीर्तनम्। अकल्याणकथालापवैमुख्यं स्वेच्छया स्थिति:॥४३॥
सदैश्वर्यं च भोक्तृत्वं नैष्ठिकत्वमजिह्मता। सर्वानुकूल्यं सङ्गीतप्रियत्वं वाञ्छिताप्तय:॥४४॥
राजयोषित्प्रभुप्राज्ञबहुमानममत्सर:। सर्वोत्तरत्ववाञ्छा च लक्षणानीरितानि ते॥४५॥

यद्विकल्पस्वरूपं तु मनस्तन्निर्विकल्पके। निधानं परहोमं तु स्थूलसूक्ष्मं च यन्मयम् ॥४६॥
उच्चावचविकल्पानां वस्तूनामग्निदाहतः। तन्मयत्वादैकरूप्यं स्थूलहोममुदीरितम् ॥४७॥
सूक्ष्महोमं तथा शब्दैर्नानारूपैस्तु वाचकैः। वाच्यार्थानामशेषेण वेद्यवेत्तृविदात्मना ॥४८॥
स्थितिः परो भवेद्धोमः सर्वभेदविलापनात्। स्वात्मरूपमहावह्निज्वालारूपिषु सर्वदा ॥४९॥
निरिन्धनेद्धरूपेषु परमार्थात्मनि स्थिरे। निर्व्युत्थानविलापस्तु परहोमः समीरितः ॥५०॥ इति।

अब अत्यन्त अद्भुत पररूप हवन को कहता हूँ, पूर्वोक्त सिद्धियों का यह सिद्धरूप होता है। दूसरों को इसकी सिद्धि नहीं मिलती। जो उसके आश्रय में रहते हैं, उनके पाप नष्ट होते हैं और भक्ति से वे भक्तों की सेवा करते हैं। नित्या भक्तों को परलोक के बारे में संशय नहीं रहता। उनमें सन्तोष एवं नित्य पूर्णता रहती है। सुख, त्याग, ज्ञान, कृतज्ञता, निर्लोभता उनमें रहती है। कृपणता, दीनता उनमें नहीं होती। परचिन्ता वे नहीं करते। दयालुता, मनस्वित्व, अवैषम्य में उनका मन लगा रहता है। लाभ-हानि में वे सुख-दु:ख का अनुभव नहीं करते। उनमें कल्याणशीलता की खोज एवं कल्याण की खोज एवं कल्याण-कीर्तन में वे सदा रत रहते हैं। अकल्याणकर कथा-वार्ता में विमुख होकर इच्छानुसार उनकी स्थिति रहती है। सदा ऐश्वर्य, भोक्तृत्व, नैष्ठिकत्व, सरलता, सबों में अनुकूलता, संगीत, प्रियत्व, वांछित की प्राप्ति, रानियों के प्रिय, प्राज्ञ, सर्वमान्य, द्वेषरहित होने पर भी सर्वोत्तरत्व की वांछा उनमें होती है। जो विकल्पस्वरूप हैं उनमें भी उसका मन निर्विकल्प रहता है। परस्थूल सूक्ष्म होम के निधानस्वरूप वे उन्हीं में निमग्न रहते हैं। उच्चावच विकल्पों में अग्नि में वस्तुओं का हवन होता है। तन्मयत्व होने से एकरूपता को स्थूल हवन कहते हैं। सूक्ष्म हवन अनेक प्रकार के वाचक शब्दों से होता है। सभी वाच्यार्थ नामों को विद्वान् जानते हैं। पर हवन में सभी भेदों का समापन हो जाता है। अपने आत्मारूपी महावह्नि ज्वालारूप में सर्वदा बिना इन्धन परमात्मा में स्थिर रहता है। निर्व्युत्थान विलाप को ही पर होम कहते हैं।

दारिद्र्यध्वंसिनी पूजा

लक्ष्मीकुलार्णवे—

श्रीदेव्युवाच

अतिदारिद्र्यासिन्धौ तु मग्नानां परमेश्वर। उद्धारक्रमतो देव पूजां वद विधानतः ॥१॥
दारिद्र्यध्वंसनीं पूजां ललितायाः सविस्तराम्। शीघ्रसंपत्सिद्धिभूतां कृपया वद मे प्रभो ॥२॥

श्रीईश्वर उवाच

शीघ्रसंपत्प्रसिद्ध्यर्थं भार्गवेण कृता पुरा। श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्याः सा पूजा कथ्यते मया ॥३॥
ययातिमन्दभाग्योऽपि कुबेरसदृशो भुवि। जायते नात्र सदेहस्तां पूजां शृणु वल्लभे ॥४॥
चक्रपूजां विधायादौ नैमित्तिकमथाचरेत्। तत्तदावरणस्थानेष्वियं पूजा विधीयते ॥५॥

लक्ष्मीकुलार्णव में श्री देवी ने कहा है कि हे परमेश्वर! अतिदरिद्रता के सागर में डूबे लोगों के उद्धार के लिये देवपूजन विधान को कहिये। ललिता की दारिद्र्यध्वंसिनी पूजा को विस्तार से कहिये, जिससे शीघ्र सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। ईश्वर ने कहा—शीघ्र सम्पत्ति प्राप्ति के लिये शुक्राचार्य ने जिस पूजा को किया था, त्रिपुरसुन्दरी की उसी पूजा को कहता हूँ। इस पूजा के करने से मन्दभाग्य भी कुबेर के समान धनवान हो जाता है। श्रीचक्र-पूजन के बाद नैमित्तिक पूजा करके चक्रपूजा के आवरण पूजन में इस पूजा को करना चाहिये।

तदावरणशक्तयः

ताः शक्तीः संप्रवक्ष्यामि राज्यसंपत्प्रदायिकाः। हारनूपुरसंयुक्ता कमलद्वयधारिणी ॥६॥
लक्ष्मीः परशिवमयी शुद्धजाम्बूनदप्रभा। तेजोरूपा च कमलवसतिर्विश्वमोहिनी ॥७॥
सर्वभूषोज्ज्वलाङ्गी च बीजापूरधरा तथा। आद्या शक्तिश्च सकलजननी कलशधारिणी ॥८॥

विष्णुवामाङ्गसंस्था च ततश्च कमलालया। श्रीमत्सौभाग्यजननी भार्गवी च सनातनी ॥९॥
सर्वकामफलावाप्तिसाधनैकसुखावहा। हिरण्यवर्णा हरिणी सुवर्णललितस्रजा ॥१०॥
समस्तसंपत्सुखदोऽखिलसौभाग्यदायिनी। समस्तकल्याणकरी ज्ञानदा च हरिप्रिया ॥११॥
विज्ञानसंपत्सुखदा ह्यश्वपूर्णा हिरणमयी। विचित्रवाग्भूतिकरी रथमध्या मनोहरा ॥१२॥
हस्तिनादप्रमोदा चानन्तसौभाग्यदायिनी। सर्वभूतान्तरस्था च स्वर्णप्राकारमध्यगा ॥१३॥
समस्तभूतेश्वरी च विश्वरूपा प्रभामयी। दारिद्र्यदुःखौघतमोपहन्त्री पद्मिनी तथा ॥१४॥
दीनार्तिविच्छेददक्षा कृपाकलितलोचना। प्रणतस्वान्तशोकघ्नी शरणागतरक्षणा ॥१५॥
शान्तिः कान्तिः पद्मसंस्था कमनीयगुणाश्रया। क्षान्तिर्दान्तिश्च दुरितक्षयकारिण्यतः परम् ॥१६॥
शशिशेखरसंस्था च धनधान्यसमृद्धिदा। शक्ती रतिर्नित्यपुष्टा रजनीकरसोदरा ॥१७॥
करीषिणी च भक्तिश्च भवसागरतारिणी। मतिः सिद्धिर्धृतिश्चैव मधुसूदनवल्लभा ॥१८॥
पुष्टिर्हिरण्यमाला च शुभलक्षणलक्षिता। अतिदुर्गतिहन्त्री च वरसद्गतिदायिनी ॥१९॥
दिवि देवगणाराध्या भुवनार्तिविनाशिनी। आर्द्रा पुष्करिणी पुष्टिर्धरणीधरवल्लभा ॥२०॥
दारिद्र्यदुःखहन्त्री च भयविध्वंसिनी तथा। श्रीविष्णुवक्षःस्थलगा ह्यशेषसुविभूतिदा ॥२१॥
लक्षणालक्षिताङ्गी च पद्मा पद्मासनार्चिता। विद्या संपत्करी चैव देवसङ्घाभिपूजिता ॥२२॥
भद्रा च भाग्यरूपा च नित्या निर्मलबुद्धिदा। सत्या च सर्वभूतस्था रत्नगर्भान्तरस्थिता ॥२३॥
रम्या शुद्धा च कान्ता च कान्तिमद्धासिताङ्गका। सर्वसौख्यप्रदा देवी भक्तौघाभयदायिनी ॥२४॥
श्वेतद्वीपकृतावासा जगन्माता जगन्मयी। रत्नगर्भस्थिता सौम्या क्षीराम्बुधिकृतालया ॥२५॥
प्रसन्नहृदया चैव परिपूर्णा हिरण्मयी। वसुन्धरा श्रीधरा च वसुदोग्ध्री कृपामयी ॥२६॥
विष्णुप्रिया रत्नगर्भा समस्तफलदा तथा। रसातलगता चैव सुव्रता च हरिप्रिया ॥२७॥
धरणीगर्भसंस्था च समुन्नतमुखी तथा। समस्तपुरसंस्था च परिपूर्णमनोरथा ॥२८॥
करुणारसनिःष्यन्दनेत्रद्वयविलासिनी। सर्वराजगृहावासा महालक्ष्मीर्गुणान्विता ॥२९॥
वैकुण्ठनगरस्था च क्षीरसागरकन्यका। योगिहृत्पद्मसंस्था च कल्पवल्ली दयावती ॥३०॥
भक्तिचिन्तामणिश्चैव ह्यादिमायेन्दिरा रमा। निराकारा च साकारा ब्रह्माण्डचयधारिणी ॥३१॥
एकनाथाद्यलक्ष्मीश्चाज्ञानहन्त्री गुणातिगा। प्रज्ञानलोचनाशेषवाग्जाड्यमलहारिणी ॥३२॥
सुस्पृष्टवाक्प्रदा चैव सर्वसंपद्विराजिता। प्रभालावण्यसुभगा दोग्ध्री स्वर्णप्रदा तथा ॥३३॥
समस्तविघ्नौघहन्त्री भोगदा च विचक्षणा। देवाधिनाथवन्द्या च दीनपोषणतत्परा ॥३४॥
माङ्गल्यबीजमहिमा निधिरूपिण्यनन्तगा। आद्यादिलक्ष्मीश्च महासिद्धलक्ष्मीस्ततः परम् ॥३५॥
राज्यलक्ष्मीर्दिव्यलक्ष्मीः सुश्रीर्मङ्गलदेवता। भक्तिदा मुक्तिदा चैव भुक्तिदा सङ्गतिप्रदा ॥३६॥
कीर्तिदा धनदा चैव पुत्रपौत्रविवर्धिनी। पद्मानना च पद्मोरुः पद्माक्षी पद्मसम्भवा ॥३७॥
अश्वदायी च गोदायी धनदायी महाधना। चन्द्रसूर्याग्निसर्वाभा जातवेदास्त्रसंस्थिता ॥३८॥
दिग्गजेन्द्रसमाराध्या दिव्यभूषणभूषिता। सर्वसंपत्प्रदा चैव तथा सर्वार्थसाधिनी ॥३९॥

अब राज्य एवं सम्पत्ति देने वाली शक्तियों को कहता हूँ। ये शक्तियाँ एक सौ अस्सी हैं। प्रत्येक आवरण में बीस-बीस शक्तियों की पूजा होती है। पूजा के पहल इस प्रकार ध्यान करे—

हारनूपुरसंयुक्ता कमलद्वयधारिणी। लक्ष्मीः परशिवमयी शुद्धजाम्बूनदप्रभा।।
तेजोरूपा च कमलवसति विश्वमोहिनी। सर्वभूषोज्वलाङ्गी च बीजापूरधरा तथा।।

प्रथम आवरण में पूज्य शक्तियाँ हैं—आद्या शक्ति, सकलजननी, कलशधारिणी, विष्णुवामांगसंस्था, कमलालया, श्रीमत्सौभाग्यदायिनी, भार्गवी, सनातनी, सर्वकामफलावाप्तिसाधनैकसुखावहा, हिरण्यवर्णा, हरिणी, सुवर्णललितस्रजा, समस्तसम्पत्सुखदा, अखिलसौभाग्यदायिनी, समस्तकल्याणकरी, ज्ञानदा, हरिप्रिया, विज्ञानसम्पत्सुखदा, अश्वपूर्वा, हिरण्मयी।

द्वितीय आवरण में पूज्या हैं—विचित्रवाग्भूतिकरी, रथमध्या, मनोहरा, हस्तिनादप्रमोदा, अनन्तसौभाग्यदायिनी, सर्वभूतान्तरस्था, स्वर्णप्राकारमध्यगा, समस्तभूतेश्वरी, विश्वरूपा, प्रभामयी, दारिद्र्यदु:खतमोपहन्त्री, पद्मिनी, दीनार्तिविच्छेद दक्षा, कृपाकलितलोचना, प्रणतस्वान्तशोकघ्नी, शरणागतरक्षणा, शान्ति, कान्ति, पद्मसंस्था, कमनीयगुणाश्रया।

तृतीय आवरण में पूज्या हैं—क्षान्ति, दान्ति, दुरितक्षयकारिणी, शशिशेखरसंस्था, धन-धान्यसमृद्धिदा, शक्ति, रति, नित्यपुष्टा, रजनीकरसोदरा, करिषिणी, भक्ति, भवसागरतारिणी, मति, सिद्धि, धृति, मधुसूदनवल्लभा, पुष्टि, हिरण्यमाला, शुभलक्षणलक्षिता, अतिदुर्गतिहन्त्री।

चतुर्थ आवरण में पूज्या हैं—वरसद्रतिदायिनी, दिवि, देवगणाराध्या, भुवनार्तिविनाशिनी, आर्द्रा, पुष्करिणी, पुष्टि, धरणीधरवल्लभा, दारिद्र्यदु:खहन्त्री, भयविध्वंसिनी, श्रीविष्णुवक्ष:स्थलगा, अशेषसुविभूतिदा, लक्षणाङ्गी, लक्षिताङ्गी, पद्मा, पद्मासनार्चिता, विद्या, सम्पत्करी, देवसंघाभिपूजिता, भद्रा।

पञ्चम आवरण में पूज्या हैं—भाग्यरूपा, नित्या, निर्मलबुद्धिदा, सत्या, सर्वभूतस्था, रत्नगर्भान्तरस्थिता, रम्या, शुद्धा, कान्ता, कान्तिमद्दासिताङ्गका, सर्वसौख्यप्रदा, देवी, भक्तौघाभयदायिनी, श्वेतद्वीपकृतावासा, जगन्माता, जगन्मयी, रत्नगर्भस्थिता, सौम्या, क्षीराम्बुधिकृतालया, प्रसन्नहृदया।

षष्ठ आवरण में पूज्या है—परिपूर्णा, हिरण्मयी, वसुन्धरा, श्रीधरा, वसुदोग्ध्री, कृपामयी, विष्णुप्रिया, रत्नगर्भा, समस्तफलदा, रसातलगता, सुव्रता, हरिप्रिया, धरणीगर्भसंस्था, समुन्नतमुखी, समस्तपुरसंस्था, परिपूर्णमनोरथा, करुणारसनि:ष्यन्दनेत्रद्वयविलासिनी, सर्वरसाजगृहावासा, महालक्ष्मी, गुणान्विता।

सप्तम आवरण में पूज्या हैं—वैकुण्ठनगरस्था, क्षीरसागरकन्यका, योगिहृत्पद्मसंस्था, कल्पवल्ली, दयावती, भक्तचिन्तामणि, आदिमाया, इन्दिरा, रमा, निराकारा, साकारा, ब्रह्माण्डचयधारिणी, एकनाथा, आद्यालक्ष्मी, अज्ञानहन्त्री, गुणातिगा, प्रज्ञानलोचना, अशेषवाग्जाड्यमलहारिणी, सुस्पष्टवाक्प्रदा, सर्वसम्पद्विपराजिता।

अष्टम आवरण में पूज्या हैं—प्रभासुभगा, लावण्यसुभगा, दोग्ध्री, स्वर्णप्रदा, समस्तविघ्नौघहन्त्री, भोगदा, विचक्षणा, देवाधिनाथवन्द्या, दीनपोषणतत्परा, मांगल्यबीजा, महिमा, निधिरूपिणी, अनन्तगा, आद्या, आदिलक्ष्मी, महासिद्धलक्ष्मी, राज्यलक्ष्मी, दिव्यलक्ष्मी, सुश्री, मङ्गलदेवता।

नवम आवरण में पूज्या हैं—भक्तिदा, मुक्तिदा, भुक्तिदा, सङ्गतिप्रदा, कीर्तिदा, धनदा, पुत्र-पौत्रविवर्धिनी, पद्मासना, पद्मोरु, पद्माक्षी, पद्मसम्भवा, अश्वदायी, गोदायी, धनदायी, महाधना, सूर्यचन्द्राग्निसर्वाभा, जातवेदास्त्रसंस्थिता, दिग्गजेन्द्रसमाराध्या, दिव्यभूषणभूषिता, सर्वसम्पत्प्रदा, सर्वार्थसाधिनी।

पूजाफलम्

एताश्च शक्तयो देव्या: पूजनीया: प्रयत्नत:। सर्वसंपत्समृद्धि: स्यादचिरेण न संशय: ॥४०॥
सर्वदा पूजयेद् देवीं कृत्वा चक्रसमर्चनम्। तस्य गेहे स्थिरा लक्ष्मी: पुत्रपौत्रानुगामिनी ॥४१॥
शक्तय: शतसंख्याताश्चाशीतिश्चतुरुत्तरम्। आदौ संहृतिपूजां च कृत्वा सृष्टिक्रमं भजेत् ॥४२॥
स्थितिक्रमेण पूजां वै केचिदिच्छन्ति तान्त्रिका:।

देवी के इन शक्तियों की पूजा प्रयत्न से करनी चाहिये। इससे थोड़े ही दिनों में सभी सम्पत्ति एवं समृद्धि प्राप्त होती है, इसमें कोई संशय नहीं है। श्रीचक्र-पूजन के बाद देवी की पूजा बराबर करनी चाहिये। ऐसा करने से उसके घर में लक्ष्मी स्थिर होकर उसके पुत्र-पौत्र की अनुगामिनी होती है। ये शक्तियाँ एक सौ अस्सी हैं। पहले श्रीचक्र का पूजन संहार क्रम से करके सृष्टिक्रम से पूजा करे। यहाँ कुछ तान्त्रिक स्थितिक्रम से पूजा कहते हैं।

वारक्रमेण षट्सु चक्रेषु पूजा

अथ वक्ष्ये महादेवि षट्सु चक्रेषु पूजनम् ॥४३॥

मूलाधारे यजेच्चक्रं वृतं पार्थिवरश्मिभिः। रविवारे च सौभाग्यभाजनं जायते नरः ॥४४॥
इन्दुवारे च नाभिस्थमणिपूरकचक्रके। पूजयेच्चक्रमध्यस्थां जलरश्मिभिरावृताम् ॥४५॥
भौमवारे लिङ्गदेशे स्वाधिष्ठाने तथा यजेत्। तेजसां रश्मिभिर्वीतां बुधे हृत्पद्मसंस्थिते ॥४६॥
अनाहते वायुरश्मिवृतां तद्वद्यजेत् क्रमम्। विशुद्धिचक्रके चैव गुरोवरि समाहितः ॥४७॥
आकाशांशुभिरावीतां यजेत् सर्वार्थसिद्धये। आज्ञाचक्रे भृगोवरि मानसांशुभिरावृताम् ॥४८॥
यजेच्छ्रीचक्रमध्यस्थां यजेत् सौभाग्यसिद्धये। ब्रह्मरन्ध्रे सहस्रारे शनिवारे विशेषतः ॥४९॥
पूजयेच्च जगद्धात्रीं सर्वरश्मिभिरावृताम्। मनसा पूजयेदेवमन्वहं च समाहितः ॥५०॥
न कदापि भवेद्रोगो दारिद्र्यं नोपजायते। ग्रहपीडां विजित्याशु पुत्रपौत्रैः समेधते ॥५१॥

अत्र प्रोक्तचक्रेषु प्रोक्तवारेषु श्रीचक्रक्रममभ्यर्च्य, ततो लक्ष्मीशक्तीः समभ्यर्च्य तत्तद्रश्मीनां पूजनं तत्तन्नामकं कुर्यात्। तत्तन्नामानि षट्शाम्भवरश्मिक्रमे ज्ञेयानि।

वारक्रम से अब मैं षट्चक्रों के पूजनक्रम को कहता हूँ। मूलाधार में पार्थिव रश्मियों से घिरे श्रीचक्र की पूजा करे। इस पूजा को रविवार में करने से मनुष्य सौभाग्यशाली होता है। सोमवार में नाभि में स्थित मणिपूर चक्र में जलरश्मियों में स्थित श्रीचक्र की पूजा करे। मङ्गलबार में लिङ्ग देश में स्थित स्वाधिष्ठान में पूजा तैजस रश्मियों से घिरे श्रीचक्र का करे। बुधवार में हृदय कमल अनाहत में वायु रश्मियों से आवृत श्रीचक्र की पूजा करे। गुरुवार में विशुद्धि चक्र में नाभस रश्मियों से आवृत्त श्रीचक्र की पूजा करे। शुक्रवार में आज्ञा चक्र में मानस रश्मियों से आवृत्त श्रीचक्र की पूजा करने से सर्वार्थ-सिद्धि होती है। शनिवार में ब्रह्मरन्ध्र में स्थित सहस्रार में सभी रश्मियों से आवृत जगद्धात्री की पूजा करे। प्रतिदिन ऐसी पूजा मानसिक उपचारों से करे। इससे मनुष्य को कभी रोग नहीं होते, दरिद्रता नहीं होती, ग्रहपीड़ा नष्ट होती है और वह पुत्र-पौत्र से युक्त होता है। प्रोक्त चक्रों में प्रोक्त वारों में श्रीचक्र की पूजा के बाद लक्ष्मीशक्तियों की पूजा करे। तब नामों के अनुरूप रश्मियों की पूजा करे। ये नाम षट्शाम्भव रश्मि क्रम में ज्ञेय हैं।

शक्तिकूटोपासनाफलप्रकारः

मातृकार्णवे—

शक्तिकूटप्रभेदोत्थशक्तयोऽत्र प्रपूजिताः। शक्तिकूटोपासनायाः फलं दास्यन्त्ययत्नतः ॥१॥

तत्फलं तु प्रागेव दर्शितम्।

बीजद्वयं च तत्कूटरूपिणीशक्तिसंयुतम्। सप्ताक्षरीं समुच्चार्य पूजयेत् तत्र तत्र वै ॥२॥

अत्र चतुरस्रेऽष्टादश, षोडशारे षोडश, अष्टदलेऽष्टौ, चतुर्दशारे चतुर्दश, दशारद्वये विंशतिः, अष्टारेऽष्टौ, अन्तरालेऽष्टौ, त्रिकोणे तिस्रः, शेषं बिन्दुचक्रे, एवं क्रमेण पूजयेत्। पूजाक्रमस्तु—ह्रींश्रीं सकलह्रीं रूपिणीशक्ति-पादुकां पूजयामीति तत्तत्कूटमुच्चार्य पूजयेदित्यर्थः। प्रथमतः क्रमपूजां विधाय तत एवं पूजयेत्। केचित्तु क्रमपूजायामेव 'अणिमासिद्धिपादुकां पूजयामि, प्रोक्तकूटरूपिणीशक्तिपादुकां पूजयामि' इत्येकदैव पूजा कार्येति वदन्ति, तत्र यथागुरूपदेशं कार्यमिति। तत्र लक्ष्मीशक्तिपूजायामपि पृथग्वा सहैव वा कर्तव्या। एकदैव चेत् 'हारनूपुरसंयुक्तारूपिणी अणिमासिद्धिपादुकां पूजयामि' इति क्रमं गुरुतः शास्त्रतश्च विज्ञायाचरेत्।

मातृकार्णव में कहा गया है कि शक्तिकूट के प्रभेद से उत्पन्न शक्तियों की पूजा यहाँ होती है। शक्तिकूटोपासना से बिना यत्न के ही पूर्वोक्त फल की प्राप्ति होती है। दो बीज के बाद कूटरूपिणी शक्ति के उच्चारण के पश्चात् पादुकां पूजयामि कहकर पूजा करनी चाहिये।

यहाँ चतुरस्र में अट्ठारह, षोडशार में सोलह, अष्टदल में आठ, चर्तुदशार में चौदह, दशारद्वय में बीस, अष्टार में आठ, अन्तराल में आठ, त्रिकोण में तीन एवं शेष का बिन्दुचक्र में पूजन करना चाहिये 'ह्रीं श्रीं सकलह्रीं रूपिणीशक्तिपादुकां पूजयामि' इस प्रकार कहकर पूजा करनी चाहिये। पहले क्रमपूजा करके तब इस प्रकार की पूजा करे। कुछ के मत से अणिमासिद्धिपादुकां पूजयामि प्रोक्तकूटरूपिणीशक्तिपादुकां पूजयामि'—इस प्रकार एक ही बार पूजा करनी चाहिये। इस स्थिति में गुरु के उपदेशानुसार पूजा करनी चाहिये। यहीं पर लक्ष्मी शक्ति पूजा भी अलग से या साथ में ही करनी चाहिये। एक ही साथ करने पर उसका प्रकार यह होता है—हारनूपुरसंयुक्तारूपिणी अणिमासिद्धि पादुकां पूजयामि। गुरु या शास्त्र से क्रम को जानकर आचरण करना चाहिये।

वाग्भवकामराजोपासनाफलप्रकार:

तथा—

तथा वाग्भवकूटोत्था: शक्तय: संप्रपूजिता: । वाग्भवोपासनोक्तं हि फलं दास्यन्त्ययत्नत: ॥३॥
कामराजमहाकूटसम्भवा: शक्तय: क्रमात् । पूजिता: संप्रयच्छन्ति ह्यनायासेन तत्फलम् ॥४॥ इति।

इसी प्रकार वाग्भव कूटोत्थ शक्तियाँ भी पूजित होने पर वाग्भव उपासना के फल को अनायास ही प्रदान करती हैं। महाकामराज कूटसम्भूत शक्तियाँ भी क्रमश: पूजित होने पर अनायास ही फल प्रदान करती हैं।

त्रिकोणमध्ये ललितायजनम्

त्रिपुरार्णवे—

मध्यत्रिकोणे रेखासु नित्यानां मण्डलत्रयम् । पञ्च पञ्च विभागेन मध्ये श्रीललितां यजेत् ॥१॥
यद्दिने यां यजेत् तां तु सर्वावरणसंवृताम् । पूजयेत् सर्वसौभाग्यहेतवे ज्ञानसिद्धये ॥२॥ इति।

त्रिपुरार्णव में कहा गया है कि मध्यगत त्रिकोण की रेखाओं में पाँच-पाँच नित्याओं के तीन मण्डल बनाकर उसके मध्य में श्रीललिता की पूजा होती है। जिस दिन की जो नित्या होती है, उसके साथ सभी नित्याओं की पूजा समस्त आवरणों के सहित करने से सौभाग्य एवं ज्ञान की प्राप्ति होती है।

परमार्थस्वरूपादिप्रकाशे देवीप्रश्ना:

श्रीतन्त्रराजे (३६ प०)—

अथ षोडशनित्यानां विधानानि त्वयाधुना । कथितानि मया तानि श्रुतानि च महेश्वर ॥१॥
तासां तव तथान्येषां देवतानां यथार्थत: । स्वरूपं किं कथं विश्वं किमाकारं च दृश्यते ॥२॥
प्राणिनां पुण्यपापानि किंरूपाणि च कैस्तथा । तेषा जन्मानि केन स्यु: का मुक्ति: संसृतिश्च का ॥३॥
कस्य मुक्ति: कथं बन्ध: केन तस्य च मोचनम् । किं मूलं संसृतेरस्या: कानि तत्त्वानि का च धी: ॥४॥
कानीन्द्रियाणि के प्राणा: को जीव: क: परस्तथा । क: काल: के ग्रहा: सर्वं यथावन्मे वद प्रभो ॥५॥
येन वेदैश्च शास्त्रैश्च पुराणैरागमैरपि । कथ्यते तत् स्फुटं ब्रूहि नातिसङ्कोचविस्तरम् ॥६॥

श्रीतन्त्रराज में महेश्वर से पार्वती ने कहा है कि हे महेश्वर! आपने नित्याओं के जिस विधान को कहा, उसे मैंने सुना। उनके तथा अन्य देवताओं के स्वरूप क्या हैं? वे कैसे हैं? संसार में वे किस प्रकार के दीखते हैं? प्राणियों के पुण्य पापों का रूप क्या है? उनका जन्म कैसे होता है? मुक्ति और संसृति क्या है? किसकी मुक्ति और किसका बन्धन होता है? बन्धन का मोचन कैसे होता है? संसार का मूल क्या है? तत्त्व कौन है? बुद्धि क्या है? इन्द्रियाँ, प्राण, जीव और पर कौन हैं? काल कौन है? ग्रह कौन हैं? सबों को क्रम से कहिये। वेदों, शास्त्रों, पुराणों एवं आगमों में जो कथित हैं, उन्हें स्पष्ट करते हुये न अधिक विस्तार से और न ही अधिक सङ्कोच से कहिये।

देवीकृतप्रश्ननानामुत्तरकथनम्

यत्त्वया विंशतिविधः कृतः प्रश्नः शिवेऽधुना। तेषामुक्तक्रमेणैव कथयामितवोत्तरम् ॥७॥
यैरुत्तरैः स्वस्वरूपं लभ्यते सम्यगञ्जसा। यदितोऽन्यत्र सर्वत्र प्रोक्तं निह्नवचक्रतः ॥८॥
अत्राञ्जसा प्रोच्यते तद् दुर्वचं तु निदर्शनैः। तैर्मयोक्तक्रमाञ्जित्वा दुर्जयां वासनां शनैः ॥९॥
सत्यशुद्धस्फुटाशेषस्फुरत्तात्मा भवेद् ध्रुवम्। गुह्यं रहस्यं परमं गोपयेत् सर्वतः सदा ॥१०॥
यज्ज्ञानमिदमो ज्ञानं यज्ज्ञानमहमस्तथा। द्वयोरपि च यज्ज्ञानं तज्ज्ञानं विद्धि मे वपुः ॥११॥
तासां तव तथान्येषां चैतन्यात्मा यथार्थतः। लाभादेवं वासनाया विनाशादन्यथा तथा ॥१२॥
स्थित आत्मप्रकाशः स्यान्नित्योऽप्रतिभटो महान्। नित्याहृदयसंप्रोक्तस्फुटोपायेन वा भवेत् ॥१३॥

शिव ने कहा कि हे शिवे! तुम्हारे जो ये बीस प्रश्न हैं, तुम्हारे ही क्रम से उनके उत्तर कहता हूँ। इन उत्तरों के ज्ञान से अपना स्वरूप सम्यक् रूप से शीघ्र दिखायी पड़ता है; जिन्हें अन्यत्र सर्वत्र छिपाकर कहा गया है; उन्हें यहाँ स्पष्ट रूप में कहता हूँ। इस निदर्शित क्रम से दुर्जय वासना को धीरे-धीरे जीता जा सकता है। इसके ज्ञान से मनुष्य स्पष्ट रूप से तथ्यों का ज्ञाता हो जाता है। यह गुप्त रहस्य है, इसे सर्वत्र सदैव गुप्त ही रखना चाहिये। जो ज्ञान यह है और जो ज्ञान मैं हूँ, दोनों का जो ज्ञान है वही मेरा शरीर है। उसी प्रकार का तुम्हारा और दूसरों का चैतन्य आत्मा है। वासना से इनकी प्राप्ति होती है; अन्यथा विनाश होता है।

सादृश्यबुद्धेर्द्वैरूप्यात् प्रपञ्चस्य च दृश्यते। द्वैरूप्यमनयोरुक्तं सत्यासत्यमयत्वतः ॥१४॥
तेनैव प्राणिनां पुण्यपापकर्मसु वर्तनम्। यथात्मज्ञानतोऽर्थेषु व्यापारः पुण्यसंज्ञकः ॥१५॥
अनर्थेष्वर्थसङ्कल्पः पापाख्यो मनसा तथा। जन्मानि नानारूपाणि यैर्नित्यं क्लेशभाजनम् ॥१६॥
यथार्थज्ञानमर्थानां मुक्तिस्तद्विपरीततः। संसृतिर्मोचनं बुद्धेर्वासना बन्ध ईरितः ॥१७॥
कर्मक्षयात् सद्गुरोस्तु कटाक्षोक्तिविमर्शतः। मोचनं सर्वजन्तूनां नेतरैश्च कदाचन ॥१८॥
संसृतेः कन्दमुदितमविवेकः परो महान्। यदायत्तमिदं जीवभुवनं परिकीर्तितम् ॥१९॥
तत्त्वानि तत्त्वान्युक्तानि सर्वैः सर्वत्र सर्वदा। ज्ञातृज्ञानज्ञेयमयान्यन्यथान्यानि सर्वदा ॥२०॥
का च धीरिति यत्पृष्टं तद् दुर्वचमपि स्फुटम्। (कथयामि शृणु प्राज्ञे यदायत्ता च विंशतिः ॥२१॥
मनो बुद्धिरहङ्कारश्चित्तमित्यादिनामभिः। वस्तुभेदादभेदाच्च यदुक्तं सर्वतः सदा ॥२२॥
तदेकमक्षयं स्थूलं सूक्ष्मं दुर्ज्ञमतिस्फुटम्।) विषमं च समं विश्वं विश्वातीतमनामयम् ॥२३॥
अरूपं सर्वरूपं च सर्वक्लेशकरं हरम्। सर्वतृष्णाकरहरं सर्वेषां सर्वतः सदा ॥२४॥
सत्त्वरूपं रजोरूपं तमोरूपमतन्मयम्। संसाररूपमुत्तीर्णविग्रहं सुस्थिरं चलम् ॥२५॥
अपापं पापरूपं च जीवरूपं परात्मकम्। अतीन्द्रियं चेन्द्रियात्मा निर्दैवं सर्वदैवतम् ॥२६॥
सर्वक्षोभात्मकं सर्वशान्तिरूपं च निर्दयम्। सदयं चाविवेकात्मा विवेकपरमार्थकम् ॥२७॥
उत्तारकं पातनकृद् भङ्गरूपं जयात्मकम्। शोकात्मकं च निःशोकं सकौतुकमकौतुकम् ॥२८॥
निरुद्यमं सदोद्युक्तं सावलेपमगर्वकम्। अमर्षरूपमक्षोभ्यं सर्वक्षोभ्यं सुखासुखम् ॥२९॥
क्रोधलोभमदद्रोहमात्सर्यकामविग्रहम्। अस्पृष्टषड्गुणं षण्डं वनिता पुरुषस्तथा ॥३०॥
अपकृष्टं तथोत्कृष्टं स्वच्छाकारं तथाबिलम्। अगाधमतिगम्भीरमुदारं कृपणं तथा ॥३१॥
भाग्यरूपमभाग्यात्म निर्भयं सभयं तथा। अनिच्छमिच्छारूपं च कातरं वीरविग्रहम् ॥३२॥
निर्दोष सर्वदोषात्म सर्वविन्मूढविग्रहः। सङ्कोचरूपः सर्वेषां तथा सर्वप्रकाशकः ॥३३॥
अस्तेयरूपः स्तेयात्मा वश्योऽवश्यश्चरो मृदुः। सरसं विरसं क्रूरं सौम्यं तैर्बहुभिस्तु किम् ॥३४॥

सादृश्य बुद्धि की द्विरूपता से यह प्रपञ्च दिखायी पड़ता है। यह द्विरूपता सत्य-असत्य रूप है। उन्हीं से प्राणियों की पुण्य-पाप कर्मों में प्रवृत्ति होती है। आत्म ज्ञान के लिये जो कर्म होते हैं, उन्हें पुण्य कहते हैं। मनसा अनर्थों में अर्थ के सङ्कल्प को पाप कहते हैं। कर्मों के अनुसार जन्म होते हैं, जिनके विविधरूप हैं, जो क्लेश के कारण होते हैं। उसके विपरीत अर्थ के यथार्थ ज्ञान से मुक्ति मिलती है। संसृति एवं मोचन बुद्धि के कार्य हैं एवं वासना को ही बन्धन कहा गया है। सद्गुरु द्वारा कृपापूर्वक कही गई उक्तियाँ एवं प्रदत्त ज्ञान से कर्मों का क्षय होता है और प्राणियों को बन्धन से मुक्ति मिलती है; अन्यथा मुक्ति नहीं होती। संसृति के कन्द से उदित अविवेक अतिशय व्यापक है, जिससे इस संसार में जीव सदा भ्रमण करता रहता है। तत्त्वों को सदा-सर्वदा सबके द्वारा कहा गया है। ज्ञातृ-ज्ञान-ज्ञेय का विवेचन भी सदा-सर्वदा किया गया है। बुद्धि क्या है? इसे स्पष्ट रूप से कहता हूँ। मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त इत्यादि बीस नामों से एवं वस्तु के भेद-अभेद से बुद्धि का विवेचन किया गया है; वस्तुतः वह एक ही है; फिर भी कभी क्षय न होने वाली यह बुद्धि स्थूल-सूक्ष्म होने के कारण कठिनता से जानने योग्य है। विषम एवं सम विश्व है एवं विश्वातीत अनामय है। यह अरूप भी है एवं सरूप भी, सभी कष्टों को देने वाला भी है एवं हरण करने वाला भी, सभी जीवों में समस्त तृष्णाओं को उत्पन्न करने वाला भी है एवं हरण करने वाला भी है। यह सत्त्व-रज-तमस्वरूप भी है। संसारस्वरूप विग्रह के कारण यह सुस्थिर भी है एवं चलायमान भी है। यह निष्पाप, पापरूप, जीवरूप एवं परात्मक है। यह अतीन्द्रिय भी है और इन्द्रिय स्वरूप भी है, निर्दैव भी है और सभी देवतास्वरूप भी है। सर्वक्षोभात्मक, सर्वशान्तिरूप और निर्दय-सदय, अविवेक-विवेकरूप भी है। यह तारक, डुबोने वाला, भङ्गरूप एवं जयात्मक है। यही शोकात्मक-बिना शोक के एवं सकौतुक-अकौतुक भी है। निरुद्यम-उद्यमयुक्त, गर्वयुक्त-गर्वरहित, अमर्षरूप, अक्षोभ्य-सर्वक्षोभ्य, सुख और दुःखरूप भी है। यह क्रोध, लोभ, मद, द्रोह, मात्सर्य, कालस्वरूप भी है। यह षड्गुणों से रहित नपुंसक, नारी और पुरुषरूप है। यह अपकृष्ट-उत्कृष्ट, स्वच्छाकार तथा आवृत्त भी है। यह अगाध-अतिशय गम्भीर, उदार एवं कृपण है। वह भाग्यरूप-अभाग्यरूप, निर्भय और भययुक्त है। वह अनिच्छा-इच्छारूप कायर और वीर भी है। वह निर्दोष-समस्त दोषयुक्त, सर्वज्ञ और मूढ़ है। वह सबों का सङ्कोचनरूप भी है और सबों का प्रकाशक भी है। वह अस्तेय-स्तेय, वशीभूत करने वाला एवं वश में रहने वाला भी है। वह चर भी है एवं मृदु भी है। वह सरस, निरस, क्रूर, सौम्य आदि भेद से बहुत प्रकार का है।

त्वन्मयी धीः समाख्याता मन्मयी चिदुदीरिता। उभयैक्याद्विवेकात्मा जीवोऽन्यस्तद्विवेकवान्॥३५॥
तस्यास्तु बुद्धेर्यो वेत्ति याथात्म्यं विकृतीरपि। सामर्थ्यं स्वाविभेदित्वं सिद्धेः प्राप्यफलानि च॥३६॥
योगी स ब्रह्मविज्ञानी शिवयोगी तथात्मवित्। तेनैव विहितं सर्वं प्रपञ्चात्मैक्यविग्रहम्॥३७॥
स्वात्मनस्तु मनोवृत्त्या विषयग्रहणाय वै। सृष्टानि भूतशक्त्यात्मविग्रहाणीन्द्रियाणि तु॥३८॥
भूतात्मबुद्धिसंघातशक्तिचैतन्यजृम्भणम्। प्राणास्तत्साक्षिभूतो हि जीवस्तत्त्वात्मकः परः॥३९॥
कालस्तु पूर्वं बुद्धेर्यदुक्तं गुणसमस्तवान्। काल इत्यक्षरं द्वन्द्वाद् यद्वाच्यं तद्वपुर्मम॥४०॥
न शक्यतेऽञ्जसा वक्तुं था दर्शयितुं तव। तथापि तव यत्किञ्चिद् व्याकरोमि समञ्जसम्॥४१॥
अहोरात्रादिभेदस्तु चन्द्रार्कादिसमन्वयात्। तेन तन्मयतारूपकथनं नोचितं ततः॥४२॥
लवत्रुट्यादयो यत्तद्भाष्यन्ते खण्डकास्तु तत्। कालस्य रूपं तत् प्रोक्तं यदनाद्यन्तविग्रहम्॥४३॥
लवत्रुट्यादिकं ब्रूहि यैः कालो ज्ञायते मया। नलिन्या पत्रनिचये सूचीविद्धेऽथ तस्य वै॥४४॥
एकैकदलभेदोत्थावस्था लव उदाहृतः। तत् त्रिंशद्गुणितं प्रोक्तं त्रुटीत्यादिशरीरवान्॥४५॥
काल इत्युदितं तस्य स्वरूपं किं कथं भवेत्। इति पृष्टेन तद्वक्तुं शक्यते सुस्फुटं मया॥४६॥
स्वबुद्ध्या प्रोक्तमात्रस्य भावनाद् यत्तु लभ्यते। तत्तस्य वपुरुद्दिष्टं नान्यास्ति गतिरस्य वै॥४७॥
ग्रहास्तु चिन्मयाः काले क्वापि चक्रभ्रमात् पुनः। भूतादीनि समस्तानि विकृतानि वितन्वते॥४८॥
नानाविधास्तद्विकाराः प्रपञ्चो दृश्यते सदा। तैरेव तेषां नाशश्च मरुतेव हविर्भुजः॥४९॥

तुम बुद्धि हो और मैं चित्त हूँ। दोनों में ऐक्य की भावना रखने वाला जीव ही विवेकवान होता है। इस बुद्धि को जो यथार्थ रूप से एवं इसकी विकृतियों को भी जानता है, वही अपने सामर्थ्य से अविभेद को जानकर सिद्धियों के फल को प्राप्त करता है। वह योगी ही ब्रह्मज्ञानी, शिवयोगी और आत्मज्ञानी होता है। उसे ही सभी प्रपञ्च में ऐक्य की भावना होती है। अपनी मनोवृत्तियों द्वारा विषयों को ग्रहण करने के लिये भूतशक्त्यात्मविग्रह इन्द्रियों की सृष्टि की गई है। भूत आत्मा बुद्धिसंघात शक्ति चैतन्य जृम्भण ही प्राण है, उसका साक्षी है और वही जीव तत्त्वरूप से पर है। पूर्व में बुद्धि से उक्त समस्त गुणों से युक्त काल है। दो अक्षर के काल से जो वाच्य है, वही मेरा शरीर है। मैं उसे न तो ठीक तरह से कह सकता हूँ और न दिखा सकता हूँ तथापि स्पष्टतया कुछ कहता हूँ। दिन-रात के भेद, सूर्य-चन्द आदि का समन्वय होने से उनसे इसकी तन्मयता कहना उचित नहीं है। क्योंकि लव त्रुटि आदि उसके खण्ड हैं। काल का रूप अनादि और अनन्त है। लव-त्रुटि आदि से काल को जाना जाता है। कमलपत्रों में सूई चुभोने में जितना समय लगता है, उनमें से एक पत्र में जितनी देर में सूई छेद करती है, उसे लव कहते हैं। लव का तीस गुना त्रुटि होता है। इस प्रकार के उदित काल का कोई स्वरूप कैसे हो सकता है? तुमने इसे पूछा तो इससे अधिक स्पष्ट मैं कुछ नहीं कह सकता। अपनी बुद्धि से कथितमात्र में भावना करने से जो ज्ञात होता है, वही काल का वपु है। इसकी कोई अन्य गति नहीं होती। काल में ग्रह चिन्मय हैं। वे ही अपने चक्रवत् भ्रमण से सभी भूतों में विकृति उत्पन्न करते हैं। नाना प्रकार से उसके विकार ही प्रपञ्चरूप में दीखते हैं और उन्हीं से उनका नाश भी ठीक उसी प्रकार होता है, जैसे कि वायु ही हवि का भोक्ता होता है।

द्वादशविधप्रश्नाः

प्रश्नानामुत्तरं देव त्वया च कथितं विभो। तथापि मे प्रपञ्चात्मविवेकोऽभून्न मेऽधुना ॥५०॥
जननं मरणं चेति द्वयं कस्य कथं भवेत्। अरूपस्य विभोस्तस्य जीवश्चेत्तत्कथं स्थितिः ॥५१॥
कुतः स्थितिः कथं वा स्यात्तत्कालपरमात्मनोः। मुक्तो वा जायते किन्तु परे वा सम्भवन्ति किम् ॥५२॥
कथं वा पञ्चभूतानां स्थितिर्देहेषु वान्यतः। देहेषु जीवसंप्राप्तिः कीदृशीत्यादि मे वद ॥५३॥
येन श्रुतेन चित्ते मे शुश्रूषान्यस्य नो भवेत्। तथा मे सर्वसन्देहांश्छिन्धि पूर्णोपदेशतः ॥५४॥

पार्वती ने कहा कि हे देव! यद्यपि आपने प्रश्नों के अनुसार उत्तर को कहा, तथापि मुझे प्रपञ्चों के सम्बन्ध में आत्मविवेक नहीं हुआ। जन्म-मरण दोनों किसके होते हैं और कैसे होते हैं? वह अरूप जब जीव का रूप धारण करता है, तब उसकी स्थिति किस प्रकार की और कहाँ होती है। कैसे होती है? काल तो परमात्मा है। अतः मुक्त होने पर भी पुनः किस प्रकार वह सम्भूत होता है? पञ्चभूतों की स्थिति देह में या अन्यों में कैसी होती है? देह में जीव कैसे आता-जाता है? इन सबों को कहिये। जिसको जानकर मेरे मन में अन्य कुछ भी सुनने की इच्छा शेष न रहे और मेरे समस्त सन्देहों का निवारण हो जाय, वह समग्र उपदेश मुझे दें।

जन्ममरणकारणत्वम्

प्रागुक्तबुद्धिवैविध्यारब्धकर्मविपाकतः। जननं मरणं चेति द्वयं देहपरिग्रहात् ॥५५॥
प्रतप्तलोहपिण्डेऽग्निस्थितिवत् परविश्वयोः। अवस्था कालपरयोस्तादात्म्यादेव वर्तनम् ॥५६॥
मुक्तास्तु जीवा न कदाप्याविर्भूयुः कुतश्चन। न वापूर्वाः सम्भवन्ति बुद्धेः कृत्यमशेषतः ॥५७॥
मुद्रिकारूपमुद्रेव मधूच्छिष्टादिविग्रहम्। जीवादिरूपतो बुद्धिर्विशेषयति तत्परम् ॥५८॥
भूमेरेवास्फुटं स्थानं कुतश्चित् सुस्थिरं सदा। जलाग्न्योस्तत्र चान्यत्र व्यक्ताव्यक्ता स्थितिः सदा ॥५९॥
वायोः सर्वत्र सततमवस्थानं त्वनेकधा। व्योम सर्वगमेव स्यात् कालताद्रूप्यतः सदा ॥६०॥
देहेषु सुस्फुटं तेषामवस्थानं च पञ्चधा। जीवानामागतिर्देहे मातापित्रोस्तु वीर्यतः ॥६१॥
तादात्म्यं सङ्गतं तत्र जृम्भते सा चिदात्मना। तत्र प्रारब्धविरमान्मरणं निद्रया समम् ॥६२॥
सिद्धानां सर्वदा देहत्यागे भेदो न विद्यते। प्रागेव तस्य देहात्मविवेकान्मनसि स्वगे ॥६३॥

नेतरेषां तु साध्यानां साधकानां च कालतः। पौषादिषु तु मासेषु षट्सु राकोपकण्ठतः ॥६४॥
मरणं सुगतित्वस्य ज्ञापकं भवति स्फुटम्। सिद्धस्तु सर्वतो मुक्तो देहेन्द्रियमनःस्थिरः ॥६५॥
यतस्तेनास्य निधनं सर्वदा सर्वतस्तथा। सुगतित्वं व्यनक्त्येव जीवन्मुक्तो यतस्त्वयम् ॥६६॥

पूर्वोक्त बुद्धिवैविध्य के कारण आरब्ध कर्म के विपाक होने पर देह का जन्म-मरण होता है। प्रतप्त लौह पिण्ड में अग्नि की स्थिति के समान ही विश्व की अवस्था होती है। काल एवं पर में तादात्म्य होने पर ही इसका व्यवहार होता है। मुक्त जीवों का कहीं भी पुनर्जन्म नहीं होता। बुद्धि के पूर्णतः नष्ट हुए विना मुक्ति नहीं होती। मुद्रिका रूप मुद्रा और मोम की मूर्ति के समान जीवादि रूप बुद्धिविशेष से दीखते हैं। भूमि का अस्फुट स्थान ही कहीं पर सदा स्थिर रहता है। जल और अग्नि पृथिवी पर या अन्यत्र व्यक्त-अव्यक्त रूप में रहते हैं। वायु सर्वत्र सर्वदा अनेक रूपों में रहता है। आकाश सर्वव्याप्त है और काल उसी रूप में रहता है। शरीरों में उनके अवस्थान पाँच हैं। जीवों का देह में आगमन माता-पिता के वीर्य से होता है। तादात्म्य संगति से चिदात्मा जृम्भित रहता है। प्रारब्ध से निद्रा के समान उसका मरण होता है। सिद्धों के देहत्याग में कभी भी भेद नहीं होता। सिद्धों के आत्मदेह विवेक पहले ही मन में समा जाते हैं। अन्य साध्य-साधकों को यह विवेक नहीं होता। पौषादि छः महीनों में प्राण जब कण्ठ से निकलते हैं तो इससे उनका सुगतित्व स्पष्ट होता है। सिद्धों का देह मन इन्द्रिय स्थिर होता है; इसलिये उन्हें सर्वतः मुक्ति होती है। इसलिये इनका निधन सर्वदा सर्वतः सुगतित्व का बोधक होता है; क्योंकि वे स्वयं जीवन्मुक्त होते हैं।

बुद्धेर्वैविध्यकारणप्रश्नोत्तरम्

देहवत्त्वे समानेऽपि प्राणिनां सर्वतः सदा। बुद्धेर्वैविध्यरूपस्य कारणं किं वद प्रभो ॥६७॥
भूमिष्ठत्वे समानेऽपि तोयानां रसभेदवत्। जायते त्वाश्रयवशात् स च कर्मभिरेव वै ॥६८॥
यथाश्वत्थगतो वह्निरुपायैरितरैः क्वचित्। नोपलभ्यो भवेत् शुष्कमथनव्यापृतिं विना ॥६९॥
तथात्मज्ञानसंप्राप्तिः सद्गुरुप्राप्तितो विना। न कस्यापि भवेदेषा प्रतिज्ञा विश्वतोऽनिशम् ॥७०॥
खननाद्भूगतं तोयं यथा समुपलभ्यते। तथा सद्गुरुसंसेवां संप्राप्य स्वस्वरूपकम् ॥७१॥
सद्गुरोः पादसेवातः संप्राप्तात्मस्वरूपिणः। विशेषः को भवेदन्यदुर्लभः सत्यविग्रहः ॥७२॥

सभी प्राणियों का शरीर से समान होने पर भी उनकी बुद्धि में विविधता का कारण क्या है? इस प्रश्न के उत्तर में भगवान् शिव कहते हैं कि जैसे समस्त भूमि के एक होने पर भी रसभेद से जल कई प्रकार का होता है, वैसे ही आश्रयभेद से कर्म भी होते हैं। जैसे पीपल में रहने वाली अग्नि कुछ उपाय के बिना अन्यत्र लब्ध नहीं होती और लकड़ी सूखने पर मंथन से ही उत्पन्न होती है, वैसे ही आत्मज्ञान गुरु के विना प्राप्त नहीं होता है। संसार में किसी को भी सद्‌गुरु के विना आत्मज्ञान नहीं होता। कूप खोदने पर जैसे भूमिगत जल मिलता है, वैसे ही सद्‌गुरु की सेवा से अपने वास्तविक रूप की प्राप्ति होती है। सद्‌गुरु की सेवा से प्राप्त स्वरूप वाले सत्यविग्रह होते हैं; दूसरे प्रकार से यह विग्रह दुर्लभ है।

आत्मवतामेव सप्तचत्त्वारिंशल्लक्षणानि

आभिरूप्यमसन्देहः सन्तोषः परिपूर्णता। दयार्द्रचित्तता रागद्वेषाविषयचित्तता ॥७३॥
सुलभत्वमगर्वित्वं सदा नियतशीलता। कृतज्ञता सत्यता च परचिन्तानिवर्तनम् ॥७४॥
आर्जवं चावित्तलौल्यं विषयानतिसङ्गिता। अदैर्घ्यसूत्र्यमक्षौद्र्यं नातिगाधाशयात्मता ॥७५॥
वृथालापेष्वसक्तिश्च वृथाव्यापारवर्जनम्। वृथाविनोदराहित्यं जिह्मचित्तैरसङ्गतिः ॥७६॥
पुरुषार्थार्थकथनचिन्ताकरणकौतुकम्। अस्तेयशक्तिरास्तिक्यं परलोकानुचिन्तनम् ॥७७॥
देवतापूजनस्तोत्रवैभवालापशीलता। पापानां वर्जनं पुण्यकरणे कौतुकं सदा ॥७८॥
परस्तवननिन्दासु विरतिर्वीतरागिता। निःस्पृहत्वमलोलत्वमनाक्षेपोऽजडात्मता ॥७९॥

अगोपनं स्वभक्तानामभक्तानां च गोपनम्। गुरुविद्यागमाचारस्तवनं तत्प्रवर्तनम् ॥८०॥
सिद्धचिह्नानि चैतानि भवन्त्यात्मवतां ध्रुवम्। न भवन्तीतरेषां तु प्रद्विषन्त्येव तांश्च ते ॥८१॥

स्वरूपावस्थित असन्देह, सन्तोष, परिपूर्णता, दयार्द्रचित्तता, राग-द्वेष-विषय से राहित्यता, सुलभता, गर्वहीनता, नियतशीलता, कृतज्ञता, सत्यता, परचिन्ता-निवर्तन, आर्जव, धननिर्लोभता, विषयों से असङ्गति, अदीर्घसूत्रता, अक्षुद्रता नातिगाधाशयात्मता, वृथालापों में अनाशक्ति, व्यर्थ के व्यापार से उदासीनता, व्यर्थ के विनोद से राहित्यता, चित्तकुटिल से असङ्गति, पुरुषार्थ कथन चिन्ताकरण कौतुक, अस्तेय शक्ति में आस्तिक्य, परलोकानुचिन्तन, देवतापूजन, स्तोत्रपाठ एवं देववैभव वार्ता, पापों का वर्जन, सदा पुण्य कर्म में आसक्ति, दूसरों की प्रशंसा और निन्दा में विरक्ति, वीतरागिता, निःस्पृहता, अलोलत्त्व, अनाक्षेप, अजड़ात्मता, अपने भक्तों से अगोपन एवं अभक्तों से गोपन, गुरु-विद्या-आगम-आचार का स्तवन और प्रवर्तन—ये सभी आत्मज्ञानियों के लक्षण होते हैं। दूसरों में ये गुण नहीं होते, वे तो इन गुणों से द्वेष ही करते हैं।

आत्मवतां समाचारः

तत्कृत्यं शृणु वक्ष्येऽहं यो लब्धस्वात्मवैभवः। निरस्ताशेषसंसारमौर्ख्याज्ञानाविवेकवान् ॥८२॥
देशकालकुलाचारान् गुरुराजादिकल्पितान्। पालयन् सुस्मितमुखः पूज्यपूजनकौतुकी ॥८३॥
देहास्थैर्यं तथाज्ञानव्यापारान् कालतः क्षणात्। पतितान् बन्धुचित्ताज्ञादुर्लङ्घ्यान् स्वचयस्थितीन् ॥८४॥
स्वेन्द्रियाणां च सामर्थ्यं स्वकर्माणि कृतानि च। मुहुर्मुहुश्च विमृशेद्विरमेदशुभात्मनः ॥८५॥
वृथा न कालं गमयेद् द्यूतस्त्रीस्वापवादतः। गमयेद् देवतापूजाजपयोगस्तवादिना ॥८६॥
गुरोः कृपालापकथास्तोत्रागमविलोकनैः। गमयेदनिशं कालं न वदेत् परदूषणम् ॥८७॥
प्रत्यक्षे च परोक्षे च स्तुवीत प्रणमेद्गुरुम्। सद्गुणैस्तत्कृपाधिक्यैः पुण्यैः स्थैर्यैश्च सत्यतः ॥८८॥
रागलोभमदक्रौर्यपापपैशुन्यवर्जनैः। सन्तोषज्ञाननियमशान्तिज्ञानादिभिस्तथा ॥८९॥
मिताहारो मितालापो विविक्तः सर्ववर्जितः। नित्याचिन्ता स्वात्मशुद्धिः कृत्यमात्मवतां सदा ॥९०॥

आत्मवैभव-प्राप्त सिद्ध के कृत्य इस प्रकार होते हैं—सभी सांसारिक सुखों से रहित आत्मवैभवयुक्त सिद्ध मूर्खता एवं अज्ञान से परे विवेकवान होते हैं। देश-काल-कुलाचार एवं गुरु-राजादि से कल्पित आचार का वे पालन करते हैं। सदा प्रसन्न रहते हैं एवं पूज्य के पूजन में रत रहते हैं। देह की अस्थिरता, सांसारिक व्यापार काल से पतित, क्षणमात्र के लिये बन्धु चित्ताज्ञा से दुर्लंघ्य ध्यान और अपने में स्थिति होती है। अपनी इन्द्रियों के सामर्थ्य से वे अपने कर्म करते हैं। अशुभात्मा से तुरन्त दूर होते हैं। जुआ, स्त्री, शयन, वाद में व्यर्थ समय नहीं बिताते। देवता-पूजा, जप, योग में उनका समय व्यतीत होता है। उनका समय गुरु से शिष्ट वार्तालाप, कथा, स्तोत्र, आगम-विलोकन में व्यतीत होता है। दूसरों के अवगुणों के कहने में उनका समय नहीं जाता। प्रत्यक्ष या परोक्ष में भी गुरु को वे प्रणाम करते हैं। सद्गुण, कृपालुता, पुण्य कर्म, स्थिरता, सत्यता में उनकी दृढ़ता होती है। उनमें राग लोभ मद क्रूरता पाप चुगलखोरी नहीं होती। सन्तोष ज्ञान नियम शान्ति से वे युक्त होते हैं। वे मिताहारी, मितभाषी, विविक्त, सर्ववर्जित होते हैं। आत्मज्ञानी जन नित्याचिन्तन एवं स्वात्मशुद्धि में नित्य लगे रहते हैं।

जीवन्मुक्तानां ललितापूजाक्रमः

पूर्वोक्तद्वादशास्त्रस्य मध्ये कृत्वा यथाविधि। योनिं तन्मध्यतो देवीं ललितां पृष्ठतो गुरून् ॥९१॥
पार्श्वयोरायुधान्यष्टौ कोणेषु परितः क्रमात्। कामेश्वर्यादिकास्तिस्रस्तद्बहिर्द्वादशस्वपि ॥९२॥
द्वादशान्या यजेत् तत्तन्नित्याविद्याभिरेव वा। तन्नामविद्याभिर्वा ताः पूजयेत् सार्घ्यकल्पनम् ॥९३॥
सन्ध्यात्रयं षष्टिसंख्यं जपेत् तद्दिनविद्यया। नान्यत् कृत्यं भवेत्तस्य नित्यनैमित्तिकादिकम् ॥९४॥
तन्मध्ये नवयोनिं वा विधायात्र स्वशक्तिभिः। पूजयेत् प्राग्वदुभयप्रकारादेकयोगतः ॥९५॥

यावज्जीवं विधिस्त्वेष गदित: सिद्धये सदा। सिद्धानामपि सर्वेषां येनासौ स्वात्मवानभूत् ॥९६॥
(समस्तमेतत्तन्त्रं ते कथितं परमेश्वरि। यत्परामर्शतो भावस्त्वावयोरैक्यमश्नुते ॥९७॥
तद्द्यात् तन्त्रमेतत्तु नाभक्ताय कदाचन। नाशिष्याय न दम्भाय प्रच्छन्नानयशीलिने ॥९८॥
नायाचते नास्तिकाय न लुब्धाय न मानिने। न पापाय न वित्ताय नादक्षाय च भेदिने ॥९९॥
यस्तन्त्रमेतत् सफलं नित्याविद्यास्तु षोडश। शक्त्या संगृह्य विधिवद्भजते स मदंशक: ॥१००॥
शिवतत्त्वमयी व्याप्तिरिति सम्यक् समीरिता। अस्या निफालनाच्चित्ते तत्तत्त्वं स्वात्मसात्कृतम्) ॥१०१॥
अत्र अस्यार्थतत्त्वं गुरुतो बोद्धव्यम्।

जीवन्मुक्तों का ललिता पूजनक्रम—पूर्वोक्त द्वादशास्र बनाकर उसमें त्रिकोण बनाकर उसमें ललिता के पीछे गुरुओं की, पार्श्वों में उनके आठ आयुधों की एवं कोणों में कामेश्वरी आदि तीन की पूजा करे। उसके बाहर बारह पात्रों में अन्य बारह नित्याओं की पूजा उनके नामविद्या से अर्घ्यस्थापनपूर्वक करे। तीनों सन्ध्याओं में उस दिन की नित्या विद्या का जप साठ बार करे। अन्य नित्य-नैमित्तिक कर्म न करे। उसके मध्य में नवयोनि चक्र बनाकर उनकी शक्तियों की पूजा पूर्ववत् दोनों प्रकारों के योग से करे। इस विधि को आजीवन करने से सिद्धि मिलती है। सभी सिद्ध भी ऐसा करने से ही स्वात्मवान हुये हैं।

हे परमेश्वरि! इस प्रकार इस समस्त तन्त्र को आपसे कहा, जिसके अनुसार आचरण करने से साधक हम दोनों के ऐक्य का अनुभव करते हैं। इस तन्त्र को अभक्तों को नहीं देना चाहिये। साथ ही जो शिष्य न हो, दम्भी हो, स्वेच्छाचारी हो, अनीति पर चलने वाला हो, नास्तिक हो, अनिच्छुक हो, लोभी हो, घमण्डी हो, पापी हो, धनी हो, अकुशल हो, झगडालू हो, उसे भी यह नहीं देना चाहिये। जो इस तन्त्र के सोलह नित्या विद्या का भजन करते हैं, वे शक्तिसंग्रह करके मेरे अंश के रूप का ही भजन करते हैं। इस प्रकार शिवतत्त्वमयी व्याप्ति को सम्यक् रूप से कहा गया। चित्त में इसको धारण करने से शिवतत्त्व आत्मसात् होता है।

यन्त्रलेखने प्राग्विधि:

अथ यन्त्रविधिर्नानातन्त्रोक्त: प्रदर्श्यते। तत्र श्रीमातृकार्णवे—

अथ यन्त्रविधिं वक्ष्ये दृष्टादृष्टफलप्रदम्। शुभेऽह्नि पूजयेद्देवं स्वेष्टदेवं यतात्मवान् ॥१॥
प्रत्यहं मन्त्रजपवान् हविष्याशी जितेन्द्रिय:। इदं यन्त्रं विलिख्य मे भवेदिष्टमिति स्फुटम् ॥२॥
स्वप्ने मे कथय क्षिप्रमिति संप्रार्थ्य यत्नत:। अध:शायी त्रिरात्रं तु स्वप्ने यद्वदति स्फुटम् ॥३॥
तद्यन्त्रं विलिखेन्मन्त्री तत् कार्यं भवति ध्रुवम्। सिद्धारिकोष्ठके सम्यग्विचार्य च पुन: पुन: ॥४॥
अरियन्त्रं परित्यज्य विलिखेत् सिद्धकोष्ठगम्। तदा सिद्धिर्भवेन्नूनं नात्र कार्या विचारणा ॥५॥
प्रागुक्तयन्त्रमन्त्राणां विधिरेष प्रकीर्तित:। इति।

अस्यार्थ:—प्रथमत: शुभे दिने हविष्याशी जितेन्द्रिय: स्वेष्टमन्त्रमष्टोत्तरसहस्रं जपित्वा रात्रौ शुचिर्भूत्वा अध:शायी स्वप्येत, स्वापसमये भो देवाऽमुककार्यमुद्दिश्यामुकदेवतायन्त्रं लेखिष्यामि तदिष्टं भवति वा न वेति स्वप्ने मे तथ्यं कथयेति प्रार्थयेत्। तत: स्वप्ने यत्किञ्चित् यथा कथयति तथा विधेयम्। अथवा सिद्धसाध्यादिकोष्ठे विचार्य सिद्धसुसिद्धस्थाने यदायाति, तत् कर्तव्यं, अरिकोष्ठगं न कर्तव्यमित्यर्थ:।

यन्त्र-विधि—दृष्ट-अदृष्ट फलप्रद यन्त्रविधि का वर्णन करते हुये मातृकार्णव में कहा गया है कि व्रती साधक शुभ दिन में अपने इष्टदेव की पूजा करे। प्रतिदिन मन्त्र-जप करे। हविष्यान्न भोजन करके जितेन्द्रिय रहे। इस यन्त्र को लिखकर प्रार्थना करे कि मेरे इष्ट को स्फुट रूप से शीघ्र स्वप्न में कहें। इसके लिये हविष्याशी जितेन्द्रिय रहकर दिन में एक हजार आठ मन्त्रजप करे। रात में पवित्र होकर जमीन पर शयन करे। सोने के समय कहे कि हे देव! अमुक कार्य के लिये अमुक देवता के यन्त्र को लिख रहा हूँ, यह मेरे लिये हितकर होगा या नहीं—इसे स्वप्न में मुझसे कहें। तब स्वप्न में जो कुछ कहा जाय, वैसा

आचरण करे। अथवा सिद्ध-साध्यादि कोष्ठ में विचार करके सिद्ध सुसिद्ध स्थान में जो आये, उसे करे। शत्रु कोष्ठगत कार्य न करे। तीन रात तक जमीन पर शयन करे। स्वप्न में जो कहा जाय, वह करे। इस यन्त्र को लिखने से वह कार्य अवश्य सिद्ध होता है। पूर्वोक्त यन्त्र-मन्त्र की यही विधि कही गई है।

यन्त्रलेखनक्रमः

तथा—

यन्त्रे यदुक्तं यद्द्रव्यं तत् संपाद्य प्रयत्नतः। स्नातः शुक्लाम्बरधरो लिखेद्यन्त्रं रहस्यके ॥६॥
बीजस्योपरि षष्ठ्यन्तां साधकाख्यां समालिखेत्। पार्श्वयोः कुरुयुग्मं च मध्ये कार्यमधस्तथा ॥७॥
साध्यस्याख्यां द्वितीयान्तां सर्वयन्त्रेष्वयं क्रमः।

अत्रायमर्थः—यद्देवतायन्त्रं मध्ये तद्देवताबीजं लेखनीयं, तद्बीजशिरसि षष्ठ्यन्तं साधकनाम अमुकस्येति, बीजाधः साध्यनाम द्वितीयान्तं अमुकमिति, बीजगर्भे वशमाकर्षणम् इत्यादिकर्म, बीजपार्श्वयोः कुरु कुरु एवं लिखेदित्यर्थः।

यन्त्र-लेखन हेतु जो द्रव्य कहा गया हो, उसे यत्न से सम्पादित करे। स्नान करके श्वेत वस्त्र पहनकर रहस्ययन्त्र को लिखे। बीज के ऊपर षष्ठ्यन्त साध्य नाम लिखे। पार्श्वों में 'कुरु कुरु' लिखे। मध्य में कार्य लिखे। उसके नीचे द्वितीयान्त साध्य नाम लिखे। सभी यन्त्रों को लिखने का क्रम यही है। आशय यह है कि जिस देवता का यन्त्र हो, उसके मध्य में उस देवता का बीज लिखे। उस बीज के ऊपर षष्ठ्यन्त साधक नाम लिखे। बीज के नीचे द्वितीयान्त साध्य नाम लिखे। बीज के गर्भ में वश्य-आकर्षण इत्यादि कर्म लिखे। बीज के पार्श्वों में कुरु-कुरु लिखे।

तथा—

तत्प्रासादपराबीजं बीजस्याधो लिखेत् पुनः। ईशान्यादिषु कोणेषु हंसः सोऽहमिति न्यसेत् ॥९॥
एतत्प्राणमयं बीजं नेत्रे श्रोत्रे च विन्यसेत्।

हंस इति ईशाने आग्नेये च, सोऽहमिति वायव्ये नैर्ऋत्ये च लिखेदित्यर्थः। तथा—

लिखेद् दिक्पालबीजानि पूर्वादिदशदिक्षु च। तास्वेव यन्त्रगायत्रीवर्णान् न्यस्येत्त्रिशः क्रमात् ॥१०॥
तद्बहिर्मन्त्रगायत्रीवर्णांस्तु क्रमतस्तथा।

फिर उसके नीचे प्रासाद परा बीज लिखे। ईशान एवं आग्नेय कोण में 'हंसः' तथा वायव्य और नैर्ऋत्य कोण में 'सोऽहं' लिखे। इसके प्राणमय बीजों को नेत्र-श्रोत्र में लिखे। दिक्पालों के बीजों को पूर्वादि दशो दिशाओं में लिखे। इसी प्रकार यन्त्र-गायत्री वर्णों को तीन-तीन के क्रम से लिखे। उसके बाहर मन्त्रगायत्री के वर्णों को उसी क्रम से लिखे।

यन्त्रगायत्री

यन्त्रराजाय शब्दान्ते विद्महे पदमीरयेत् ॥११॥
वरप्रदाय चाभाष्य धीमहीति पदं वदेत्। तन्नो यन्त्रं समुच्चार्य ततश्चैव प्रचोदयात् ॥१२॥
प्रोक्ता तु यन्त्रगायत्री तत्तत्कल्पेषु मन्त्रगा।

यन्त्र गायत्री इस प्रकार है—यन्त्रराजाय विद्महे वरप्रदाय धीमहि तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्। यन्त्र गायत्री तत्तत् कल्पों में मन्त्रों की अनुगामिनी होती है।

यन्त्रलेखनानन्तरविधिः

प्राणप्रतिष्ठामन्त्रं तु बहिः सर्वत्र वेष्टयेत् ॥१३॥
भूर्जपत्रे तथा क्षौमे तालपत्रेऽथवा लिखेत्। स्वर्णपत्रे तारपत्रे ताम्रपत्रे च सुन्दरि ॥१४॥
यन्त्रं विलिख्य गुटिकां कृत्वा लोहत्रयेण च। लाक्षया तु समावेष्ट्य जप्त्वा होमं समाचरेत् ॥१५॥

संपातसिक्तं संवेष्ट्य लाक्षया स्वर्णरूप्यके। निक्षिप्य तत्तन्मन्त्रेण संपूज्य विधिवत् ततः ॥१६॥
गले वा मूर्ध्नि बाहौ वा धारयेदिष्टमाप्नुयात्।

प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र से उस यन्त्र को बाहर से वेष्टित करे। यन्त्र को भोजपत्र पर या रेशमी वस्त्र पर या ताड़पत्र पर लिखे। स्वर्णपत्र पर, रजतपत्र पर या ताम्रपत्र पर लिखे। यन्त्र लिखकर उसकी गोली बनावे। लौहत्रय के ताबीज में भरे और लाह से वेष्टित करे। उसे अभिमन्त्रित करके हवन करे। होम शिष्ट के सम्पात बून्दों से उसे सिक्त करे एवं लाह या सोने या चाँदी से वेष्टित करे। उसे रखकर उसके मन्त्र से विधिवत् पूजा करे। इसके बाद गले में या मूर्धा में या बाँह में धारण करने से इष्ट की प्राप्ति होती है।

वश्यकरयन्त्राणां विरचनक्रमः

अथ वश्यकरं यन्त्रं प्रोच्यते शैलसम्भवे ॥१७॥

कांस्यपात्रे लिखेदष्टदलं कर्णिकया युतम्। रोचनाचन्दनेनैव जातीकाष्ठसमुत्थया ॥१८॥
लेखन्या कर्णिकामध्ये साध्यनाम समालिखेत्। अष्टपत्रेष्वष्टवर्गान् केसरेषु स्वरांल्लिखेत् ॥१९॥
वृत्तत्रयेण संवेष्ट्य चान्तरालद्वये तथा। मातृकां विलिखेत् तद्वदनुलोमविलोमगाम् ॥२०॥
एवं विलिख्य यन्त्रं तु पूजयेदुपचारकैः। सप्ताहाद्वशमायान्ति नरनारीनराधिपाः ॥२१॥
भूर्जपत्रे समालिख्य लोहत्रयसुवेष्टितम्। धारयेद् बाहुमूले वै पूर्वोक्तफलभाग्भवेत् ॥२२॥

वश्यकर यन्त्र—वशीकरण यन्त्र कांसे के पात्र में कर्णिका-सहित अष्टपत्र बनाकर गोरोचन के घोल से जातीकाष्ठ की लेखनी से लिखे। कर्णिका के मध्य में साध्य का नाम लिखे। अष्टपत्रों में अकचटादि अष्ट वर्गों को लिखे। केसर में स्वरों को लिखे। इसे तीन वृत्तों से वेष्टित करने से दो अन्तराल बनते हैं। इन अन्तरालों में अनुलोम-विलोम मातृका लिखकर इसे वेष्टित करे। इस प्रकार यन्त्र बनाकर उपचारों से पूजा करे। ऐसा करने से एक सप्ताह में नर-नारी एवं नराधिप वश में होते हैं अथवा भोजपत्र पर लिखकर लौहत्रय के ताबीज में भरकर बाहुमूल में धारण करे तो पूर्वोक्त फल प्राप्त होता है।

वश्यकरयन्त्रान्तरम्

अथ वक्ष्येऽन्ययन्त्रं तु भूपुरं विलिखेद्बुधः। रेखाद्वयेन मध्ये तु साध्यनाम समालिखेत् ॥२३॥
हृल्लेखापुटितं चाथ तदुपर्य्यध आलिखेत्। मायाबीजचतुष्कं तु भूर्जे गन्धाष्टकेन च ॥२४॥
अनामारक्तयुक्तेन पूजयेद् वश्यकृद्भवेत्। कुमारीपूजनं कृत्वा रक्तपुष्पान्नसंयुतम् ॥२५॥
बलिं दद्याच्छागमांसं ततः सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम्। यन्त्रधारणमात्रेण क्रोधस्तम्भं भवेत् क्षणात् ॥२६॥

अन्य वशीकरण यन्त्र—दो रेखात्मक चतुरस्र भूपुर बनाकर उसके मध्य में साध्य नाम लिखे। उसे ह्रीं से पुटित करे। उसके ऊपर चार मायाबीज लिखे। यन्त्र को भोजपत्र पर अष्टगन्ध के अनामिका अंगुलीरक्तमिश्रित घोल से बनावे। इस यन्त्र का पूजन करे तो साध्य वशीभूत होता है। लाल फूल और अन्न से कुमारी-पूजन करके बकरे के मांस की बलि प्रदान करके इस यन्त्र को धारण करने मात्र से अवश्य सिद्धि होती है एवं तुरन्त क्रोध का स्तम्भन होता है।

अन्यद् यन्त्रं प्रवक्ष्यामि दक्षिणोत्तरगं तथा। रेखाद्वयं समालिख्य तदुपर्यध आलिखेत् ॥२७॥
तथैव रेखायुग्मं तु मध्ये साध्यं समालिखेत्। तारलक्ष्मीपुटं वामे दक्षिणे कोष्ठके तथा ॥२८॥
क्षकारं सर्गसंयुक्तं विलिख्योपर्यधस्तथा। कोष्ठत्रयं समालिख्य मध्यकोष्ठे क्षकारकम् ॥२९॥
सविसर्गं लिखेदेवं पार्श्वयोस्तु रमां लिखेत्। भूर्जे रोचनयालिख्य शरावद्वयसंपुटे ॥३०॥
दग्ध्वा तद्भस्म चादाय पिबेद् दुग्धेन चैव हि। स्वामी वश्यो भवेदस्य यावज्जीवं न संशयः ॥३१॥

अन्य वशीकरण यन्त्र—दक्षिण से उत्तर की ओर जाने वाली दो रेखा खींचे। उसके ऊपर-नीचे दो रेखा और खींचे। मध्य में साध्य नाम लिखे। उसके बाँयें-दाँयें ॐ श्रीं लिखे। ऊपर-नीचे क्षः लिखे। तीन कोष्ठ बनाकर मध्य कोष्ठ में क्षः लिखे।

पार्श्वों में 'श्रीं' लिखे। इस यन्त्र को भोजपत्र पर लिखकर शरावपुट में रखकर आग से जलावे एवं उस भस्म को दूध में मिलाकर पीये। इससे स्वामी आजीवन वश में होता है।

दिव्यस्तम्भनयन्त्रविधिः

अथान्यदपि वक्ष्यामि यन्त्रं परमदुर्लभम् । षट्कोणं विलिखेन्मध्ये बहिर्भूबिम्बमालिखेत् ॥३२॥
मध्ये साध्यं च तत्कर्म मायागर्भं लिखेत्ततः । मायाबीजं समालिख्य भूबिम्बे चाष्टदिक्षु च ॥३३॥
षट्कोणस्यान्तरालेषु कोणाग्रेष्वथ संलिखेत् । भूर्जपत्रे लिखेदेवं रोचनाकुङ्कुमेन च ॥३४॥
शरावसंपुटे क्षिप्त्वा पूजयित्वोपचारकैः । तदग्रे तु जपेन्मायां सहस्रं यतमानसः ॥३५॥
तद्यन्त्रं धारयेन्मूर्ध्नि दिव्यस्तम्भनमुत्तमम् ।

दिव्य स्तम्भन यन्त्र—अब परम दुर्लभ अन्य यन्त्र को कहता हूँ। षट्कोण बनाकर उसके बाहर चतुरस्र भूपुर बनावे। षट्कोण के मध्य में ह्रीं के गर्भ में साध्य का नाम और कर्म लिखे। भूपुर के आठों दिशाओं में 'ह्रीं' लिखे। षट्कोण के अन्तरालों में और कोणों में भी 'ह्रीं' लिखे। इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन-कुंकुम से लिखे। इसे मिट्टी के कशोरों में बन्द करे। उपचारों से पूजा करे। उसके सामने बैठकर एकाग्रता से एक हजार आठ मन्त्रजप करे। इस यन्त्र को मूर्धा पर धारण करे तो उत्तम दिव्य स्तम्भन होता है।

मोहनयन्त्रक्रमः

अथान्यदपि वक्ष्यामि यन्त्रं सुमहदद्भुतम् ॥३६॥
लिखेदष्टदलं पद्मं भूर्जपत्रे मनोहरे । चतुरस्रेण संवेष्ट्य माया भृगुर्विसर्गवान् ॥३७॥
एतद्बीजद्वयेनैव पुटितं साध्यमालिखेत् । कर्णिकायां ततश्चाष्टदले च विलिखेत् पुनः ॥३८॥
मायासंपुटितां बालातार्तीयं तच्छरावयोः । निक्षिप्य सर्वोपचारैः पूजयेत् प्रजपेत्तथा ॥३९॥
राजानं मोहयेत् सप्तरात्रादर्वाक् च साधकः ।

मोहन यन्त्र—अब महान् अद्भुत यन्त्र को कहता हूँ। भोजपत्र पर मनोहर अष्टदल कमल बनावे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर 'ह्रीं सौः' से उसे वेष्टित करे। इन दो बीजों 'ह्रीं सौः' से पुटित साध्य का नाम कर्णिका में लिखे। आठ दलों में भी 'ह्रीं सौः ह्रीं' लिखे। मिट्टी के दो कशोरों में इसे बन्द करे। सभी उपचारों से पूजा करे एवं एक हजार आठ जप करे। सात रातों तक ऐसा करने से राजा मोहग्रस्त हो जाता है।

मृत्युञ्जययन्त्ररचनाप्रकारः

मृत्युञ्जयाख्यं यन्त्रं तु वक्ष्ये रक्षाकरं परम् ॥४०॥
भूर्जपत्रद्वये चैव लिखेद्यन्त्रं पृथक्पृथक् । प्रथमं विलिखेन्मध्ये कर्णिकायां समाहितः ॥४१॥
उपर्युपरिभागेन भूपुराणां च सप्तकम् । वृत्तं तदुपरि न्यस्य तल्लग्नं रविपत्रकम् ॥४२॥
बहिर्भूपुरमालिख्य मध्ये साध्याख्यकर्म च । विलिख्य द्वादशदले षण्डस्वरविवर्जितान् ॥४३॥
द्वादशस्वरसंयुक्तान् लकारान् क्रमशो लिखेत् । तद्बहिश्चतुरस्रस्य कोणेषु त्रिशिखं न्यसेत् ॥४४॥
एतद्यन्त्रद्वयं योज्य क्वचित् संस्थाप्य यत्नतः । उपरिष्टाच्छिलां स्थाप्य तदुपर्य्युपविश्य च ॥४५॥
उदङ्मुखो जपेद्विद्यां मातृकां लोकमातरम् । एवमभ्यस्यतः पुंसो रोगमृत्युभयं कुतः ॥४६॥

मृत्युञ्जय यन्त्र—अब रक्षाकर मृत्युञ्जय नामक यन्त्र को कहता हूँ। दो भोजपत्रों पर अलग-अलग दो यन्त्र लिखे। पहले एक चतुरस्र बनाकर उसके बाहर छः चतुरस्र बनावे। कुल सात चतुरस्रों के बाहर वृत्त बनाकर उस पर द्वादशदल कमल बनावे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। मध्य में साध्य नाम-कर्म लिखे। बारह दलों में 'ऋ ॠ ऌ ॡ' चार को छोड़कर बारह स्वरों से युक्त ल अर्थात् लं लां लिं लीं लुं लूं लें लैं लों लौं लं लः लिखे। उसके बाहर चतुरस्र के कोणों में त्रिशूल बनावे। इन

दोनों यन्त्रों को मिलाकर कहीं रखे और उनपर पत्थर रखकर स्वयं उस पत्थर पर बैठे। ऊपर की ओर मुख करके मातृका विद्या का जप करे। इस प्रकार अभ्यास करने वाले को मृत्यु का भय नहीं होता।

विवादजयदयन्त्रम्

अथ वक्ष्ये महायन्त्रं विवादे विजयप्रदम्। रोचनाकुङ्कुमाभ्यां तु भूर्जपत्रे समालिखेत्॥४७॥
चतुर्दलं कर्णिकायां साध्याख्यायुक्तकर्म च। दलेषु मायां संलिख्य तद्यन्त्रं पयसि न्यसेत्॥४८॥
विवादे जयमाप्नोति सर्वथा नात्र संशयः।

विवाद में विजयप्रद यन्त्र—विवाद में विजय प्रदान करने वाला यन्त्र इस प्रकार लिखा जाता है। रोचना एवं कुंकुम से भोजपत्र पर यन्त्र लिखे। उसके चतुर्दल की कर्णिका में साध्य नाम के साथ कर्म लिखे। दलों में ह्रीं लिखकर उसे दूध में डाल दे। इससे निःसन्देह रूप से विवाद में जीत होती है।

धनिकवशीकरणयन्त्रम्

धनिकस्य वशीकृत्यै यन्त्रमन्यद्वदाम्यहम्॥४९॥
रोचनाकुङ्कुमाभ्यां तु भूर्जपत्रे समालिखेत्। षट्कोणं तु समालिख्य साध्याख्यां मध्यदेशके॥५०॥
कोणान्तराले काम्यांश्च कोणाग्रेषु च संलिखेत्। बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा मायया वेष्टयेद्बहिः॥५१॥
पूजयेत् सप्तदिवसैर्देवीमाहात्म्यमुत्तमम्। पठेत् तदग्रतो नित्यं कुमारीपूजनं चरेत्॥५२॥
होमं कृत्वा तु तद्यन्त्रं धारयेद्बाहुमूलके। यद्यद्धि याचते द्रव्यं तद् ददाति धनी पुनः॥५३॥
न याचते पुनर्द्रव्यं यन्त्रराजप्रभावतः।

धनी-वशीकरण यन्त्र—धनवान को वश में करने के लिये अन्य यन्त्र को कहता हूँ। गोरोचन कुङ्कुम से भोजपत्र पर षट्कोण बनाकर मध्य में साध्य का नाम लिखे। कोणों के अन्तरालों में और कोणाग्रों में काम्य कर्म लिखे। इसके बाहर दो वृत्त बनाकर अन्तराल में ह्रीं लिखकर वेष्टित करे। सात दिनों तक इसका पूजन करे और उसके सामने दुर्गासप्तशती का पाठ करे। नित्य कुमारी-पूजन करे। हवन करके उस यन्त्र को बाहुमूल में धारण करे। इसको धारण करने के बाद धनवान से जो भी द्रव्य माँगा जाय, उसे धनवान देता है। इसके बाद उसे पुनः याचना नहीं करनी पड़ती—यही इस यन्त्र का प्रभाव है।

दुष्टवश्ययन्त्रम्

राजान्तिके स्थितो दुष्टः पैशुन्यं कुरुते यदा॥५४॥
तदा तन्मोहनार्थं तु यन्त्रं कुर्वीत बुद्धिमान्। भूर्जे लिखेद्वसुदलं रक्तेन भुजगस्य च॥५५॥
कर्णिकायां साध्यनाम मायां वसुदलेष्वपि। अर्घीशयुग्भृगुं कोणचतुष्के संविलिख्य च॥५६॥
बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा पूजयित्वा जले क्षिपेत्। एकविंशद्दिनं यावद् दुष्टवश्यं भवेद् ध्रुवम्॥५७॥

दुष्टवश्य यन्त्र—राजा के निकट रहकर जो चुगलखोरी करता है, उसे मोहित करने के लिये यन्त्र लिखे। भोजपत्र पर सर्प के खून से अष्टपत्र कमल बनावे। उसकी कर्णिका में साध्य नाम लिखे। आठों दलों में ह्रीं लिखे। चारों कोणों में सौः लिखे। इसके बाहर वृत्त बनावे। यन्त्र की पूजा करके जल में छिपा दे। इससे इक्कीस दिनों में वह दुष्ट वशीभूत हो जाता है।

मानजयप्रदयन्त्रम्

अथाभिधास्ये जयदं यन्त्रं मानप्रदं शिवे। भूर्जपत्रे रोचनया चतुरस्रं तु मध्यके॥५८॥
तल्लग्नमष्टपत्राणि तद्बहिर्भूपुरं लिखेत्। मध्ये लिखेद्रमां हस्त्रीं दिग्दलेषु क्रमाल्लिखेत्॥५९॥
रोहरोधस्तम्भयेति कोणेषु विलिखेत् सुधीः। सविसर्गं च संवर्तं मध्ये मायाख्यया युतम्॥६०॥
शरावद्वयमध्यस्थं पूजयेदुपचारकैः। इन्द्रादिलोकपालेभ्यो बलिं दद्यात् समाहितः॥६१॥
विवादे व्यवहारे च राजद्वारे भयापहम्। मानदं तत् समाख्यातं यन्त्रमेतत् सुदुर्लभम्॥६२॥

मानद यन्त्र—अब जयमान-प्रद यन्त्र को कहता हूँ। भोजपत्र पर गोरोचन से चतुरस्र लिखे। उसके बाहर अष्टपत्र, उसके बाहर भूपुर बनावे। उसके मध्य में श्रीं लिखे। आठों दलों में 'हस्रीं' लिखे। भूपुर के कोणों में 'रोह रोध स्तम्भय ह्रीं' और नाम के बीच में क्षः लिखे। मिट्टी के दो कशोरों में इस यन्त्र को बन्द करके उपचारों से पूजा करे एवं इन्द्रादि दश लोकपालों को बलि प्रदान करे। इस यन्त्र के प्रभाव से विवाद, व्यवहार एवं राजद्वार में भय नहीं होता। यह दुर्लभ यन्त्र मानद नाम से विख्यात है।

यावज्जीववशप्रदयन्त्रम्

अन्यद्यन्त्रं प्रवक्ष्यामि यावज्जीववशप्रदम्। अलक्तकैरनामासृग्रोचनेभमदैः सह ॥६३॥
भूर्जे च जातिलेखन्या चतुरस्रं तु संलिखेत्। आद्यपङ्क्तौ सप्त लिखेद् बीजानि भुवनेशितुः ॥६४॥
मायाबीजानीत्यर्थः।

साध्यनामपुटत्वेन सृणिमायामनोभवैः। द्वितीयपंक्त्यामथ च पुटिता रत्नबीजतः ॥६३॥
माया तत्पुटितानङ्गस्तृतीयायां ततः परम्। मायाबीजचतुष्कं च चतुर्थ्यां विलिखेत्सुधीः ॥६४॥
चतुरस्राद्बहिर्दिक्षु त्यक्त्वा याम्यं गणेशितुः। क्षिप्रप्रसादनस्यापि दशबीजानि संलिखेत् ॥६५॥
गं क्षिप्रप्रसादनाय नमः इति।

एवं यन्त्रं समालिख्य कृष्णमृन्निर्मितस्य च। गणेशस्योदरे क्षेप्यं पूजयेदुपचारकैः ॥६६॥
तदग्रे प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं यतमानसः। देवदेव गणाध्यक्ष सुरासुरनमस्कृत ॥६७॥
देवदत्तं ममायत्तं यावज्जीवं कुरु प्रभो। एवं मन्त्रं प्रजप्याथ हस्तमात्रेऽवटे तथा ॥६८॥
संस्थाप्य च गणाध्यक्षं गर्तं संपूरेन्मृदा। यावज्जीवं वशीभूयात्स नरो नात्र संशयः ॥६९॥

आजीवन वश्यकर यन्त्र—अब आजीवन वश्यकर यन्त्र को कहता हूँ। आलता, अनामिका-रक्त, गोरोचन, हाथीमद के घोल से भोजपत्र पर जाती की लेखनी से चतुरस्र लिखे। प्रथम पंक्ति में सात ह्रीं लिखे। द्वितीय पंक्ति में क्रीं ह्रीं क्लीं से पुटित साध्य-नाम लिखे। चतुरस्र के बाहर दक्षिण दिशा को छोड़कर तीनों दिशाओं में 'गं क्षिप्रप्रसादनाय नमः' के दश अक्षरों को लिखे। काली मिट्टी से बनी गणेश मूर्ति के पेट में इस यन्त्र को रख दे एवं सभी उपचारों से उसकी पूजा करे। पुनः उसके आगे बैठकर एकाग्र चित्त से एक हजार आठ मन्त्रजप करे। मन्त्र है—

देवदेव गणाध्यक्ष सुरासुरनमस्कृत। देवदत्तं ममायत्तं यावज्जीवं कुरु प्रभो।।

मन्त्रजप के बाद गणेश की मूर्ति को हाथ भर के गड्ढे में रखकर मिट्टी से भर दे। ऐसा करने से साध्य आजीवन वश में रहता है।

वशयन्त्रान्तरविधिः

अथान्यदपि वक्ष्यामि यन्त्रं सुमहदद्भुतम्। कर्पूररोचनाभ्यां च श्रीखण्डागुरुसंयुतम् ॥७०॥
चतुर्दलाब्जं विलिखेद् भूर्जपत्रे मनोहरे। कर्णिकायां लिखेत्साध्यं ईकारं च ततः परम् ॥७१॥
ॐनमश्च तथा लेख्यं पूर्वपश्चिमपत्रयोः। अजिते इत्यपि लिखेद् दक्षिणोत्तरपत्रयोः ॥७२॥
त्रिदिनं पूजयेद्यन्त्रं चतुर्थेऽह्नि समाहितः। ब्राह्मणं भोजयित्वैवं यन्त्रं बाहौ च धारयेत् ॥७३॥
दर्शनादेव साध्योऽस्य वश्यो भवति निश्चितम्।

अन्य वशीकरण यन्त्र—अब अत्यन्त अद्भुत अन्य यन्त्र को कहता हूँ। कपूर, गोरोचन, श्रीखण्ड, चन्दन, अगर के घोल से भोजपत्र पर चतुर्दल कमल बनावे। कर्णिका में साध्य नाम के साथ 'ई' लिखे। पूर्व-पश्चिम दलों में 'ॐ नमः' लिखे। दक्षिण-उत्तर दलों में 'अजिते' लिखे। तीन दिनों तक यन्त्र की पूजा करे और चौथे दिन ब्राह्मणों को भोजन कराकर यन्त्र को बाँह में धारण करे। धारणकर्ता को देखते ही साध्य वश में हो जाता है।

भृत्यवशकरयन्त्रम्

भृत्यवश्यकरं यन्त्रं भूर्जे रोचनया लिखेत् ॥७४॥
चतुर्दलं कर्णिकायां साध्यं मायोदरे लिखेत्। हृल्लेखां तु दलेष्वेवं पूजयेद्विधिपूर्वकम् ॥७५॥
दधिमध्ये क्षिपेद्यन्त्रं भृत्यवश्यकरं भवेत्।

भृत्यवशकर यन्त्र—भोजपत्र पर गोरोचन से चतुर्दल लिखे। कर्णिका में ह्रीं के पेट में साध्य नाम लिखे। चारो दलों में ह्रीं लिखे। इसे दही में छिपा दे तो नौकर वश में रहता है।

दुष्टप्रभुवश्यकरयन्त्रम्

दुष्टं प्रभुं वशीकर्तुं चतुरस्रं विरच्य च ॥७६॥
साध्यनाम लिखेन्मायागर्भे मध्ये च यत्नतः। लिखेद्रोचनया भूर्जे दुष्टप्रभुवशंकरम् ॥७७॥
राजिकासाध्यपांशूत्थप्रतिमाया हृदि क्षिपेत्। उपचारैः सुसंपूज्य चुल्लीपार्श्वे निखातयेत् ॥७८॥
दिक्पालेभ्यो बलिं दद्यान्महाकालाय वै पुनः। अजारक्तेन संमिश्रं दुष्टभूपं वशं नयेत् ॥७९॥

दुष्ट स्वामी वश्यकर यन्त्र—चतुरस्र बनाकर उसके मध्य में ह्रीं के पेट में साध्य नाम लिखे। इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन से लिखे। राई के आटे से साध्य की प्रतिमा बनाकर उसके हृदय में यन्त्र को छिपा दे। उपचारों से पूजन कर खाना पकाने के चूल्हे के बगल में उसे गाड़ दे। तदनन्तर दिक्पालों को बलि देकर महाकाल को बलि बकरे के रक्त के साथ प्रदान करे। इससे दुष्ट राजा वश में होते हैं।

भर्तृवशीकरणयन्त्रम्

भर्तृवश्यकरं यन्त्रं स्त्रीणां दौर्भाग्यनाशनम्। रोचनाकुङ्कुमाभ्यां च भूर्जपत्रे मनोरमे ॥८०॥
चतुरस्रं लिखेन्मध्ये तल्लग्नाष्टदलानि च। कोणेषु विलिखेन्मायाबीजानां च त्रयं त्रयम् ॥८१॥
मध्ये नामार्णपुटितं मायाबीजत्रयं लिखेत्। पत्रेषु विलिखेन्मायाबीजानां च त्रयं त्रयम् ॥८२॥
यजेच्छुक्लत्रयोदश्यामुपचारैरुदङ्मुखः । निशि सप्ताहमेवं तु कृत्वान्ते भोजयेन्मुदा ॥८३॥
सुवासिनीः सप्तसंख्या ललिताप्रीतये पुनः। यन्त्रं धातुगतं धार्यं नारीणां भाग्यदायकम् ॥८४॥

पतिवश्यकर यन्त्र—यह यन्त्र स्त्रियों के लिये उनके दुर्भाग्य का नाशक है। गोरोचन, कुङ्कुम से भोजपत्र पर चतुरस्र बनावे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। चतुरस्र के कोणों में तीन-तीन 'ह्रीं' लिखे। मध्य में नामाक्षरों से पुटित तीन 'ह्रीं' लिखे। दलों में तीन-तीन ह्रीं लिखे। शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी को उत्तरमुख बैठकर रात में पूजा करे। ऐसा एक सप्ताह तक करे। अन्त में आठवें दिन सात सुवासिनियों को भोजन करावे। इससे ललिता प्रसन्न होती है। इस यन्त्र को सोने या चाँदी में भरकर धारण करे तो यह नारियों को सौभाग्यदायक होता है।

भर्तृवशीकरणयन्त्रान्तरम्

अथान्यदपि वक्ष्यामि भर्तृवश्यकरं परम्। रोचनाकुङ्कुमाभ्यां तु भूर्जपत्रे सुशोभने ॥८५॥
लिखेदष्टदलं पद्मं साकारपुटितं तथा। साध्यनाम च तन्मध्ये हृल्लेखां पत्रमध्यतः ॥८६॥
निशि संपूज्य यन्त्रं तु त्रिदिनं भोजयेत्ततः। सुवासिनीत्रयं पश्चाद्धारयेद् गलदेशके ॥८७॥
भर्तृवश्यकरं स्त्रीणां क्षिप्रमेव न संशयः।

अन्य भर्तृवश्यकर यन्त्र—भोजपत्र पर गोरोचन कुङ्कुम से अष्टदल कमल बनावे। अष्टदल के मध्य में साकार पुटित साध्य नाम लिखे। पत्रों में 'ह्रीं' लिखे। रात में यन्त्र की पूजा करे। तीन रात तक तीन-तीन सुवासिनियों को भोजन करावे। इसके बाद यन्त्र को गले में धारण करे। इससे पति स्त्रियों के वश में तुरन्त हो जाते हैं।

भर्तृवशीकरणयन्त्रान्तरम्

लिखेदष्टदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत् ॥८८॥
ह्स्त्रीं क्लीं भुवनेशी च बीजत्रयमतन्द्रितः। दलेष्वपि लिखित्वैव बीजानां च त्रयं त्रयम् ॥८९॥
भूर्जे रोचनयालिख्य पूजयेच्च दिनत्रयम्। हेममध्यगतं कृत्वा धारयेद्बाहुमूलके ॥९०॥
स्त्रीणां सौभाग्यदं प्रोक्तं भवेद् दौर्भाग्यनाशनम्।

पतिवश्यकर अन्य यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में 'हस्त्रीं क्लीं ह्रीं' लिखे। दलों में भी इन्हीं तीन बीजों को लिखे। भोजपत्र पर गोरोचन से इसे लिखे। तीन दिनों तक पूजा करे। इसे सोने के ताबीज में भरकर बाहुमूल में धारण करे तो यह स्त्रियों को सौभाग्यप्रद एवं दुर्भाग्य का विनाशक होता है।

आकर्षणयन्त्रम्

निजरक्तकुशीताभ्यां लिखेद्भूर्जे चतुर्दले ॥९१॥
क्रोधबीजं साध्यनामयुतं मध्ये दलेष्वपि। पूजयित्वा क्षिपेद्यन्त्रमाज्ये चाकृष्टिकारकम् ॥९२॥

आकर्षण यन्त्र—अपने रक्त और कुशीता से भोजपत्र पर चतुर्दल बनावे। उसके मध्य में हुं के साथ साध्य नाम लिखे। दलों में भी हुं के साथ साध्य नाम लिखे। पूजा करके यन्त्र को गाय के घी में डुबो दे तो साध्य का आकर्षण होता है।

त्रिपुरायाः आकर्षणयन्त्रम्

अथाकृष्टिकरं यन्त्रं त्रिपुराया वदाम्यहम्। भूर्जपत्रे रोचनया षट्कोणं विलिखेद् बुधः ॥९३॥
वाक्कामपुटितं साध्यनाम मध्ये समालिखेत्। बालातृतीयबीजं च कोणमध्येषु संलिखेत् ॥९४॥
पूजयेदुपचारैश्च घृतमध्ये निवेशयेत्। साध्यस्याकर्षणं भूयात् सप्ताहान्नात्र संशयः ॥९५॥

त्रिपुरा का आकर्षण यन्त्र—अब त्रिपुरा का आकर्षण यन्त्र कहता हूँ। भोजपत्र पर गोरोचन से षट्कोण लिखे। 'ऐं क्लीं' से पुटित साध्य नाम मध्य में लिखे। बाला के तृतीय बीज 'सौः' को कोणों में लिखे। सभी उपचारों से पूजा करके यन्त्र को घी में डुबो दे। इससे एक सप्ताह में साध्य का आकर्षण होता है।

वादिनः स्तम्भनयन्त्रम्

शिलायां विलिखेद्यन्त्रं हरिद्राया रसैः पुनः। कर्णिकायां साध्यनाम भूबीजोदरगं लिखेत् ॥९६॥
दलेष्वष्टसु भूबीजं पूजयेदुपचारकैः। पीतैरुपर्य्यधश्चापि शिलाभ्यां संपुटीकृतम् ॥९७॥
भूमौ खनित्वा संस्थाप्य शिलाभिः पूरयेन्मृदा। मुखस्तम्भो वादिनां च भवेत् क्षिप्रं न संशयः ॥९८॥
अत्र भूबीजं ग्लौमिति पिण्डबीजम्।

स्तम्भन यन्त्र—शिला पर अष्टपत्र हल्दी के घोल से यन्त्र लिखे। कर्णिका में 'ग्लौं' के उदर में साध्य नाम लिखे। आठों दलों में 'ग्लौं' लिखे। यन्त्र की उपचारों से पूजा करे। दो पत्थरों के बीच में इसे स्थापित करे। एक पत्थर पर यन्त्र रखकर उसके ऊपर दूसरा पत्थर रखे। जमीन में गड्ढा खोदकर उसमें पत्थर-पुटित यन्त्र को रखकर मिट्टी से दबा दे। इससे वादियों का मुखस्तम्भन होता है।

अग्नेर्निवर्तनयन्त्रम्

गोरोचनाचन्दनाभ्यां भूर्जपत्रे समालिखेत्। वृत्तं कृत्वा च तन्मध्ये साध्यनाम समर्चयेत् ॥९९॥
तद्बहिर्विलिखेद् दिक्षु वकाराणां चतुष्टयम्। तद्बहिर्भूपुरं लेख्यं लोहत्रयसुवेष्टितम् ॥१००॥
पूजितं धारयेद्बाहौ भयादग्नेर्निवर्तते। यस्मिन् गृहे स्थापयेत्तदग्निनाक्रम्यते न च ॥१०१॥

अग्निनिवर्तन यन्त्र—गोरोचन और चन्दन से भोजपत्र पर वृत्त बनावे। उसके मध्य में साध्य नाम लिखे। पूजा करे।

उसके बाहर पूर्वादि चारो दिशाओं में 'वं' लिखे। उसके बाहर भूपुर बनावे। लोहत्रय के ताबीज में भरकर यन्त्र की पूजा करे और बाहु में धारण करे। इस यन्त्र से अग्नि का भय नहीं होता और जिस घर में यह स्थापित रहता है, उसमें आग नहीं लगती।

विद्वेषणयन्त्रम्

अथ विद्वेषणं यन्त्रं वक्ष्यामि शृणु शैलजे। नक्षत्रयोनिक्षतजैर्लेखन्या काकपक्षया ॥१०२॥
श्मशानखर्परे लेख्यं वृत्तं तन्मध्यतो न्यसेत्। मायया पुटितं चैवमकारं बिन्दुसंयुतम् ॥१०३॥
तद्गर्भे विलिखेत् साध्यनाम कर्मसमन्वितम्। चतुर्दलेष्वपि तथा लेख्यं निशि च पूजयेत् ॥१०४॥
छागरक्तेन संमिश्रमोदनं विनिवेद्य च। सुवासिनीं प्रपूज्याथ श्मशाने वा शिवालये ॥१०५॥
निखातयेत् तदा शत्रोर्विद्वेषं जायते मिथः।

विद्वेषण यन्त्र—नामनक्षत्र वृक्ष के पिष्ट से काकपक्ष की लेखनी से श्मशान के खपड़े पर वृत्त बनावे। उसके मध्य में ह्रीं से पुटित 'मं' लिखे। मं के उदर में साध्य नाम के साथ कर्म लिखे। वृत्त के बाहर चतुर्दल कमल बनाकर दलों में भी उसी प्रकार लिखे। रात में पूजा करे। छागरक्त-मिश्रित भात का नैवेद्य अर्पण करे। सुवासिनी की पूजा करे। उस यन्त्र को शिवालय या श्मशान में गाड़ दे तो इससे शत्रुओं में विद्वेष हो जाता है।

मारणयन्त्रम्

नृकपाले लिखेद्यन्त्रं मेषरक्तविमिश्रितैः ॥१०६॥
विषैरष्टभिरालेख्यं लेखन्या काकपिच्छया। अस्त्रसंपुटितं साध्यं कर्णिकायां दलेष्वपि ॥१०७॥
दिग्गतेषु च हुंकारं कोणपत्रेषु फड्युतम्। तद्बहिर्वृत्तमालेख्यं वर्मणावेष्टयेच्च तत् ॥१०८॥
श्मशानभस्मनाच्छाद्य वह्निना ज्वालयेदमुम्। एकविंशद्दिनं यावच्छत्रुर्मृत्युप्रियो भवेत् ॥१०९॥

मारण यन्त्र—मनुष्य की खोपड़ी पर भेड़ के रक्त में आठ प्रकार के जहर मिलाकर काकपक्ष की लेखनी से अष्टदल कमल बनावे। कर्णिका में 'हुं' पुटित साध्य नाम लिखे। अष्टपत्र के पूर्वादि दलों में हुं लिखे। कोणपत्रों में 'फट्' लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर उसे 'हुं' से वेष्टित करे। इसे श्मशान भस्म से ढ़ककर आग से जलावे। ऐसा इक्कीस दिनों तक करने से शत्रु की मृत्यु हो जाती है।

उच्चाटनयन्त्रम्

काककौशिकरक्तेन भौमाहे भूर्जपत्रके। चतुर्दलं लिखेत् पद्मं कर्णिकागतसाध्यकम् ॥११०॥
मारुतं सर्गिसंयुक्तं दलेषु विलिखेद् बुधः। रक्तस्रग्गन्धभूषाद्यैर्निशि संपूज्य यत्नतः ॥१११॥
रक्तोपचारैराराध्य कुमारीं भोजयेत् तदा। एवं विंशद्दिनं कृत्वा चरमेऽह्नि तु यन्त्रकम् ॥११२॥
उच्छिष्टभक्ते संक्षेप्यं चूर्णीकृत्य प्रयत्नतः। तदोदनं वायसेभ्यो दद्याद् विकिरणेन च ॥११३॥
उच्चाटो जायते शत्रोः क्षिप्रमेव न संशयः।

उच्चाटन यन्त्र—मंगलवार को कौए और उल्लू के रक्त से भोजपत्र पर चतुर्दल कमल बनावे। कर्णिका में साध्य नाम लिखे। चारो दलों में 'यः' लिखे। रात में लाल फूलों की माला-आभूषणादि से उसकी पूजा करे। लाल उपचारों से कुमारियों की पूजा करके भोजन करावे। ऐसा बीस दिनों तक करे। अन्तिम दिन यन्त्र को चूर्णित करके जूठे भात में मिलाकर भात को विखेर कर कौओं को खिलावे। ऐसा करने से शत्रु का उच्चाटन शीघ्र होता है।

उपसर्गादिदोषशान्तिकरयन्त्रम्

चन्द्रचन्दनकस्तूरीरोचनाकुङ्कुमैः शुभे ॥११४॥
दिने भूर्जे लिखेद्यन्त्रं जातीकाष्ठसमुत्थया। लेखन्योदङ्मुखो भूत्वा प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोत्तरम् ॥११५॥
रेखाष्टकेन चैकोनपञ्चाशत्कोष्ठकानि च। बहिः प्राक्कोष्ठमारभ्य प्रादक्षिण्यक्रमेण तु ॥११६॥

अकारादिजकारान्तान् तदन्तःकोष्ठकादितः। झकारादिभकारान्तान् तदन्तःकोष्ठकादितः ॥११७॥
मकारादिसकारान्तान् हकारं मध्यकोष्ठके। प्रतिरेखं त्रिशूलानि प्रतिशूलमुपर्य्यधः ॥११८॥
अभ्यन्तरविभागेन हृल्लेखासप्तकं लिखेत्। एवं विलिख्य यन्त्रं तु देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ॥११९॥
पठन् यजेच्च त्रिदिनं ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः। लोहत्रयगतं कृत्वा बाहुमूले तु धारयेत् ॥१२०॥
उपसर्गादिका दोषा न भवन्ति कदाचन।

उपसर्ग-शान्तिकर यन्त्र—शुभ दिन में चन्दन कपूर कस्तूरी गोरोचन कुङ्कुम के घोल से भोजपत्र पर जातीकाष्ठ की लेखनी से उत्तरमुख बैठकर दक्षिण से उत्तर एवं पूर्व से पश्चिम समान दूरी पर समान लम्बाई की आठ रेखा खींचे। इस प्रकार उनचास कोष्ठ बनते हैं। पूर्व कोष्ठ से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से अ से ज तक के चौबीस अक्षरों को लिखे। इसके बाद 'झ' से 'भ' तक के सोलह वर्णों को लिखे। मध्य में बचे नव कोष्ठों में म से ह तक के नव वर्णों को लिखे। प्रत्येक रेखा के ऊपर-नीचे त्रिशूल बनावे। प्रत्येक त्रिशूल में ऊपर-नीचे आभ्यन्तर विभाग में सात 'ह्रीं' लिखे। इस प्रकार का यन्त्र बनाकर पूजा करे और दुर्गा सप्तशती का पाठ करे। ऐसा तीन दिनों तक करे। तीनों दिन ब्राह्मणों को भोजन करावे। त्रिलौह के ताबीज में इसे भरकर बाहुमूल में धारण करे। ऐसा करने से उपसर्गादि दोष कभी नहीं होते।

ग्रहभूतादिशान्तिकरयन्त्रम्

पूर्वोक्तैर्विलिखेद् द्रव्यैर्यन्त्रं भूर्जे मनोरमे ॥१२१॥
कर्णिकायां लिखेत् साध्यं दलेषु सर्गवान् भृगुः। पूर्ववत् पूजयेद्यन्त्रं कण्ठे बद्धं भुजे शिशोः ॥१२२॥
ग्रहभूतपिशाचादिभयेभ्यो मुच्यते क्षणात्।

ग्रहभूतादिशान्तिकर यन्त्र—पूर्वोक्त यन्त्र को पूर्वोक्त द्रव्यों से भोजपत्र पर लिखे। कोष्ठ मध्य कर्णिका में साध्य नाम के साथ 'सौः' लिखे। पूर्ववत् यन्त्र की पूजा करे। बालक के कण्ठ में या भुजा में यन्त्र को बाँध दे। ऐसा करने से ग्रह-भूत-पिशाचादि का भय क्षण भर में दूर हो जाता है।

ज्वरशान्तिकरयन्त्रम्

श्मशानखर्परे लेख्यं धत्तूरस्य रसेन च ॥१२३॥
कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यामष्टकोणं मनोहरम्। मध्ये साध्यं समालिख्य कोणाग्रेष्वन्तरालके ॥१२४॥
रेफान् षोडश चालिख्य चतुरस्रं लिखेद्बहिः। दिक्षु कोणेषु विलिखेद्रेफांस्तत् पूजयेन्निशि ॥१२५॥
निखातं पितृभवने ज्वरः सद्यो विमुञ्चति।

ज्वरशान्ति यन्त्र—श्मशान के खपड़े पर धत्तूर के रस से कृष्णाष्टमी या चतुर्दशी में अष्टकोण बनावे। मध्य में साध्य नाम लिखे। कोणाग्रों और अन्तरालों में सोलह 'रं' लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। दिशाओं और कोणों में 'रं' लिखे। रात में पूजा करे। इसे पितृभवन में गाड़ दे तो बुखार तुरन्त छूट जाता है।

सर्पभीतिहरयन्त्रम्

सुगन्धैर्विलिखेद् भूर्जे पद्मं वसुदलं ततः ॥१२६॥
कर्णिकायां साध्यनाम दलेष्वजपया युतम्। पूजितं विधृतं बाहौ सर्पभीतिः कदापि न ॥१२७॥

सर्पभीतिहर यन्त्र—सुगन्धि द्रव्यों से भोजपत्र पर अष्टदल कमल बनावे। कर्णिका में साध्य नाम लिखे। दलों में हंसः हंसः लिखे। पूजा करके इसे बाँह में धारण करने से सर्पों का भय नहीं होता।

बन्धमोक्षप्रदयन्त्रम्

अष्टगन्धैर्लिखेद् भूर्जे षोडशच्छदकाम्बुजम्। स्वरान् दलेषु संलिख्य द्वात्रिंशद्दलमम्बुजम् ॥१२८॥
बहिर्विलिख्य पत्रेषु द्वात्रिंशद्व्यञ्जनानि च। विलिख्य भूपुरेणैव वेष्टयेद् दिग्विदिक्षु च ॥१२९॥

हक्षौ विलिख्य तन्मध्ये साध्यं मायोदरे लिखेत्। अथवा कांस्यपात्रे तु लिखित्वा सप्तवासरान्॥१३०॥
पूजयेद् धारयेद्वापि बन्धमोक्षप्रदं भवेत्। इति।

बन्दी-मोक्षण यन्त्र—अष्टगन्ध से भोजपत्र पर षोडश दल कमल बनावे। दलों में सोलह स्वरों को लिखे। उसके बाहर बत्तीस दल वाला कमल बनावे। उसके पत्रों में बत्तीस व्यंजनों को लिखे। उसके बाहर भूपुर बनावे। दिशा-विदिशाओं में ह्क्षौं लिखे। यन्त्र के मध्य में 'ह्रीं' के उदर में साध्य नाम लिखे। अथवा कांस्य पात्र में सात दिनों तक लिखे और पूजन कर धारण करे तो बन्दी बन्धन से मुक्त हो जाता है।

रक्षाकरयन्त्रम्

शारदातिलके (२४ प०)—

अथ वक्ष्यामि यन्त्राणां भेदांस्तन्त्रेषु गोपितान्। यैः साधयन्ति सततं मन्त्रिणो निजवाञ्छितम्॥१॥
मार्णे लिखेत् सार्णयुतं स्वसाध्यं वर्गाष्टपत्रे स्वरकेसराब्जे।
बहिः सदीर्घैर्गगनैः प्रवीतं रक्षाकरं यन्त्रमिदं प्रदिष्टम्॥२॥

अस्यार्थः—भूर्जपत्रे प्रोक्तद्रव्यैरष्टदलकमलं विलिख्य, तत्कर्णिकायां मकारोदरे सकारं विलिख्य, तद्गर्भे साध्यनाम विलिख्य, पत्रेष्वष्टवर्गान् केसरेषु द्वन्द्वशः विलिख्य, बहिर्वृत्तं कृत्वा हांकारेण वेष्टयेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

रक्षाकर यन्त्र—शारदातिलक में कहा गया है कि अब मैं तन्त्रों में गोपित यन्त्रों के भेद कहता हूँ, जिनकी साधना करके मन्त्री सर्वदा निज वांछित प्राप्त करते हैं। भोजपत्र पर कथित द्रव्यों से अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में 'म'कार के उदर में 'स' लिखे। 'स'कार के मध्य में साध्य नाम लिखे। आठों पत्रों में कचटतपयशल अष्ट वर्गों को लिखे। पत्रकेसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर 'हां' से वेष्टित करे। यह यन्त्र रक्षाकारक होता है।

वश्यकरयन्त्रम्

तथा—

पुटीकृते भूमिपुरस्य युग्मे मायां लिखेन्मध्यगसाध्यसंज्ञाम्।
वकारकोणेन महीपुरेण संवेष्टितं वश्यकरं तदुच्चैः॥३॥

अस्यार्थः—अष्टकोणं विलिख्य मध्ये मायोदरे साध्यनाम विलिख्य, कोणेषु वकारं विलिख्य तदुपरि भूपुरेणावेष्टयेत् उक्तफलदं भवति।

वश्यकर यन्त्र—अष्टकोण बनाकर उसके मध्य में ह्रीं के उदर में साध्य नाम लिखे। कोणों में 'वं' लिखे। उसके बाहर भूपुर बनावे। इसे वश्यकर यन्त्र कहते हैं।

मृत्युञ्जययन्त्रम्

तथा—

(मध्ये सार्णविदर्भितं प्रपुटितं मृत्युञ्जयत्र्यक्षरैः क्षान्तःस्थं
निजसाध्यनाम विलिखेत् किञ्जल्कसंस्थान् स्वरान्।
पत्रेष्वष्टसु नाम मन्त्रपुटितं वर्गांस्तदग्रेष्वथो
यन्त्रं पद्मपुटीकृतं निगदितं मृत्युञ्जयाख्यं परम्॥४॥
विषज्वरशिरोरोगनाशनं श्रीजयप्रदम्। कान्तिपुष्टिप्रदं वश्यं सर्वकामार्थसाधकम्॥५॥)

अस्यार्थः—अष्टदलकमलं विलिख्य तत्कर्णिकायां साध्यनाम सकारेण विदर्भितं कृत्वा, मृत्युञ्जयत्र्यक्षरैः

संपुटितं कृत्वा सर्वं क्षकारोदरे यथा भवति तथा विलिख्य, केसरेषु स्वरान् विलिख्य पत्रेषु पत्राग्रेषु च नाम मन्त्रपुटितं वर्गाष्टकं द्विधा विलिख्य, बहिर्वृत्तं कृत्वा पद्मद्वयपुटितं कुर्यादुक्तफलदं भवति।

अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में साध्य नाम को 'स' से विदर्भित करे। मृत्युञ्जय अक्षरों से सम्पुटित करे। इन सबों को इस प्रकार लिखे कि सभी 'क्ष' के उदर में समा जायँ। केसरों में स्वरों को लिखे। पत्रों और पत्राग्रों में मन्त्रपुटित नाम वर्गाष्टक दो बार लिखे। इसके बाहर वृत्त बनावे। दो पद्मों से पुटित करे। यह मृत्युञ्जय नामक यन्त्र होता है। यह विषज्वर एवं शिरोरोग का नाशक तथा श्री एवं जयप्रदायक होता है। साथ ही कान्ति-पुष्टि का प्रदायक, वश्यकर एवं समस्त काम-अर्थ का साधक भी होता है।

ज्वरघ्नयन्त्रम्

तथा—

साध्याढ्यचिन्तामणिमग्निगेहे विलिख्य बाह्येऽनलगेहवीतम्।
प्रवेष्टयेत् तद्बहिरष्टवर्णान् मन्त्रेण यन्त्रं ज्वरशान्तिदं स्यात्॥६॥
संप्लवसः प्लावयेसा मन्त्रोऽष्टाक्षर ईरितः। एष एव भवेद् दक्षो विषज्वरविनाशने॥७॥
अस्यार्थस्तु सुगम एव।

ज्वरहर यन्त्र—क्रीं के उदर में साध्य नाम लिखकर उसके बाहर त्रिकोण बनाकर उसे 'रं' से वेष्टित करे। उसके बाहर 'संप्लवसः प्लावयेसा' मन्त्र के आठ अक्षरों को लिखकर वेष्टित करे। यह यन्त्र समस्त ज्वरों को शान्त करने वाला एवं विषज्वर के विनाश में दक्ष होता है।

भुजङ्गहारियन्त्रः

तथा—

तारठद्वययुतं कुरुकुल्ले मन्त्रमत्र हुतभुग्गृहयुग्मे।
मध्यकोणविवरेषु लिखेत्तद्यन्त्रमाशु विनिहन्ति भुजङ्गान्॥८॥

'ॐ कुरुकुल्ले स्वाहा' मन्त्र के सात अक्षरों में से ॐ को षट्कोण के मध्य में लिखे। शेष अक्षरों को कोणों में लिखे। यह यन्त्र सर्पों का विनाशक होता है।

भुजङ्गहारियन्त्रान्तरम्

ओंकारमायादिकमेखलेऽग्निवधूमनुं वह्निगृहस्य युग्मे।
मध्यादिकोणेषु विलिख्य भूर्जे यन्त्रं विदध्याद् रिपुनागहारि॥९॥

भोजपत्र पर षट्कोण बनाकर 'ॐ ह्रीं मेखले स्वाहा' के सात अक्षरों में से ॐ को मध्य में लिखे एवं शेष छः को कोणों में लिखे। यह यन्त्र शत्रु और सर्पों का विनाशक होता है।

शत्रुनिग्रहकारको धूमावतीयन्त्रः

शूलाङ्किते वह्निगृहस्य युग्मे धूमावतीमत्र लिखेत् क्रमेण।
मध्यादिकोणेषु मरुद्गृहस्थं यन्त्रं हुताशानिलवर्णवीतम्॥१०॥
दान्तौ सार्घीशबिन्द्वन्तौ बीजे धूमावती द्विठः। धूमावतीमनुः प्रोक्तः शत्रुनिग्रहकारकः॥११॥

षट्कोण बनाकर 'धूं धूं धूमावती स्वाहा' इस अष्टाक्षर मन्त्र के दो अक्षर धूं धूं को षट्कोण के मध्य में लिखे। शेष छः अक्षरों को कोणों में लिखे। षट्कोण के बाहर रं यं लिखकर वेष्टित करे। धूं धूं धूमावती स्वाहा' मन्त्र शत्रु का निग्रह-कारक कहा गया है।

शत्रूच्चाटनयन्त्रम्

विषेण कनकाम्भोभिः प्रेतकर्पटकल्पितम्। श्मशाने निखनेदेतच्छत्रूनुच्चाटयेद् ध्रुवम् ॥१२॥

उपरोक्त यन्त्र को धत्तूर के रस के साथ कारस्कर को पीसकर उसके पिष्ट से श्मशान के खपड़े पर लिखकर श्मशान में गाड़ने से शत्रु का उच्चाटन होता है।

भूतादिवैरियन्त्रम्

हुताशगेहद्वितये लिखित्वा वैवस्वताय द्विठमन्त्रवर्णान्।
मध्यान्तमाकल्पितमिन्दुबिम्बे यन्त्रं महाभूतपिशाचवैरि ॥१३॥

अत्र षट्कोणं विलिख्य मध्यादिषट्कोणेषु 'वैवस्वताय स्वाहा' इति सप्ताक्षराणि विलिख्य, बहिरिन्दुबिम्बेन वृत्तेन वेष्टयेत् इति।

'वैवस्वताय स्वाहा' मन्त्र के एक अक्षर को षट्कोण के मध्य में और शेष छः को कोणों में लिखकर षट्कोण के बाहर वृत्त बनावे तो यह यन्त्र महाभूत, पिशाच एवं वैरियों का विनाशक होता है।

विद्वेषणयन्त्रं घर्मटिकाविद्या च

तथा—

नामालिख्य मकारकोष्ठयुगले कोणेषु तस्यां लिखेत्मन्त्रज्ञो ङञणान् नकारसहितान् धूमावतीपत्रगान्।
वीतं घर्मटिकादिना वरमिदं वायुत्रिगेहावृतं यन्त्रं प्रान्तपरेतभूमिनिहितं विद्वेषणं स्याद् द्विषाम् ॥१४॥
पूर्वं घर्मटिकेयुग्मं ततो मर्कटिके युगम्। घोरे विद्वेषकारिणि विद्विषो द्वेषकारिणि ॥१५॥
अथ घोराघोरयोः स्यादमुकामुकयोस्ततः। विद्वेषयद्वयं हुंफट् विद्या घर्मटिकेरिता ॥१६॥

मन्त्रोद्धारः सुगमः। अत्र षट्कोणं विलिख्य तन्मध्ये पूर्वकोष्ठे चाग्नेयकोष्ठे च मकारमन्यकोष्ठचतुष्टये ङञणनान् विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तं विरच्य तल्लग्नान्यष्टपत्राणि विलिख्य, पत्रेषु धूमावतीमन्त्रस्यैकैकमक्षरं प्रतिपत्रं विलिख्य तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले घर्मटिकाविद्यया वेष्टयेत्, उक्तफलदं भवति।

पहले षट्कोण बनावे। मध्य में साध्य-साधक नाम लिखे। षट्कोण के पूर्व और आग्नेय कोणों में 'म' लिखे। शेष चार कोणों में ङ ञ ण न लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। दलों में 'धूं धूं धूमावती स्वाहा' मन्त्र के आठ अक्षरों के एक-एक करके लिखे। इसके बाहर दो वृत्त बनावे। वृत्तों के अन्तराल में इस मन्त्र को लिखे—घर्मटिके घर्मटिके मर्कटिके मर्कटिके घोरे विद्वेषकारिणि विद्विषो द्वेषकारिणि घोराघोरयोः अमुकामुकस्य विद्वेषय विद्वेषय हुं फट्। इस यन्त्र को भूमि में गाड़ने से वैरियों में परस्पर विद्वेष होता है।

प्रेतराजयन्त्रम्

तथा—

प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदग्विधिवदभिलिखेत् स्पष्टरेखाचतुष्कं
कोणोद्यच्छूलयुक्तं वलययुगयुतं मध्यपूर्वं तदन्तम्।
मन्त्रस्यार्णान् परस्ताद् वसुपदविवरेष्वष्टवर्णाँल्लिखित्वा
शूलोद्यद्द्वादशार्णं विधिवदभिहितं प्रेतराजस्य यन्त्रम् ॥१७॥

यमराजसदामेय यमेदासजरामय। यदयोनिरपक्षेप पक्षेपरनियोदय ॥१८॥
उक्तो धूमान्धकाराय स्वाहेत्यष्टाक्षरो मनुः। प्रणवोग्रं ततो दंष्ट्रा तत्परं विकृतं ततः ॥१९॥
आननाय वधूर्वह्नेर्मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः। विषवृक्षस्य फलके नृचर्मणि पटेऽथवा ॥२०॥

आलिख्याष्टविषैरेतत् श्मशाने निखनेन्निशि। ज्वरेण महताविष्टो मूर्च्छाकुलितमानसः ॥२१॥
रिपुर्गच्छति पक्षेण यमलोकं न संशयः।

अस्यार्थः—तत्र प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्च चतुःसूत्रनिपातनेन नवकोष्ठात्मकं चक्रं निर्माय, मध्यकोष्ठे साध्यनामयुक्तं यमराजेति वर्णचतुष्टयं विलिख्य, प्रागाद्यष्टसु कोष्ठेषु यममन्त्रस्य वर्णचतुष्टयं क्रमेण विलिख्य, चतुष्कोणेषु चत्वारि शूलानि मध्यगतरेखाग्रद्वये शूलद्वयमिति सम्भूय द्वादश शूलानि निष्पाद्य, शूलाग्रेषु द्वादशा-क्षरमन्त्रस्यैकैकं वर्णमालिख्य, तदुपरि वृत्तद्वयं निष्पाद्य तल्लग्नमष्टपत्राणि विरच्य, प्रतिदलमेकमेकं वर्णमष्टाक्षर-मन्त्रस्य विलिखेत्, उक्तफलदं भवति।

यम यन्त्र—कारस्कर वृक्ष के पटरे पर या नृचर्म पर या श्मशान के वस्त्र पर आठ प्रकार के विषों के घोल से पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर समान दूरी पर चार-चार रेखाओं को खींचकर नव कोणात्मक चक्र बनावे। मध्य कोष्ठ में साध्य नाम के साथ यमराज—यह चार वर्ण लिखे। पूर्वादि आठ कोष्ठों में यमराज मन्त्र के चार वर्णों को लिखे। मन्त्र है—यमराजसदामेय यमेदासजरामय, यदयोनिरपक्षेप पक्षेपरनियोदय।

चारो कोणों पर चार त्रिशूल एवं मध्यगत दो रेखाग्रों पर दो-दो त्रिशूल बनावे, इससे बारह त्रिशूल बनते हैं। त्रिशूलाग्रों पर द्वादशाक्षर मन्त्र—'उग्रदंष्ट्रा विकृताननाय स्वाहा' के एक-एक अक्षर को लिखे। इसके बाहर दो वृत्त बनावे, बाहरी वृत्त में अष्टदल कमल बनावे। प्रत्येक दल में अष्टाक्षर मन्त्र 'धूमान्धकाराय स्वाहा' के एक-एक अक्षर को लिखे। इस यन्त्र को श्मशान में रात में गाड़ दे। इससे शत्रु तेज बुखार से मूर्च्छाकुलित मन वाला होकर पन्द्रह दिनों में यमलोक चला जाता है अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

कालीयममन्त्रौ

तथा—

एकाशीतिपदेषु मध्यदहने साध्यं लिखेत् हूं पुनः
छूंक्षूंभ्रूमिति दिग्दलेषु विलिखेद् बीजानि पङ्क्तिष्वथ।
शिष्टेष्वीशनिशाचरादि विलिखेत् कालीमनुं पङ्क्तिश-
स्तद्बाह्ये यमवीतमग्निपवनावीतं च यन्त्रं लिखेत् ॥२२॥

कालीमार रमालीका लीनमोक्ष क्षमोनली। मामोदेत तदेमोमा रक्षतत्व त्वतक्षर ॥२३॥
कालीमनुरयं प्रोक्तः कालरात्रिः स्ववैरिणाम्। यमावाट टवामाय माटमोट टमोटमा ॥२४॥
वामोभूरि रिभूमोवा टटरीत्व त्वरीटट। यमात्मकोऽयमाख्यातः श्लोको वैरिविनाशनः ॥२५॥
लिखेदष्टविषाङ्गारनिम्बनिर्यासकज्जलैः। निग्रहाख्यमिदं यन्त्रं काकपक्षेण कर्पटे ॥२६॥
विभीतवृक्षे वल्मीके श्मशाने वा चतुष्पथे। दक्षिणस्थेऽनिले मन्त्री निखनेदर्धरात्रके ॥२७॥
सर्वथा शत्रुरेतेन सप्ताहान्मरणं व्रजेत्। निगृह्यते महारोगैः पतितो वा भवेदसौ ॥२८॥
शिलायामिष्टकायां वा चक्रमेतत् प्रकल्पितम्। मर्कटीविषदण्डीभिः समालिप्तमधोमुखम् ॥२९॥
यन्त्रं रात्रौ खनेत्तत्र भूयोभूयोऽशुभं भवेत्।

लिखेच्चतुष्षष्टिपदेषु कालीमीशादिकान्यादि यमात्मकेन।
श्लोकेन संवेष्ट्य कृशानुवायुबीजावृतं यन्त्रमिदं विदध्यात् ॥३०॥

लिप्तं विषमषीदण्डीमर्कटीभिरधोमुखम्। निखनेद्यत्र तत्र स्यान्नृणामुच्चाटनं सदा ॥३१॥
सस्यहानिमनावृष्टिं गवां नाशं करोति तत्।

एतद्यन्त्रद्वयोद्धारस्त्वरिताप्रकरणे (२१शे श्वासे) **द्रष्टव्यः।**

काली-यम मन्त्र—पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर समान दूरी पर दश-दश रेखाओं को खींचने से इक्यासी कोष्ठ बनते हैं। मध्य कोष्ठ में 'रं' के गर्भ में साध्य नाम लिखे। उसके पार्श्व वाले चार कोष्ठों में 'भ्रूं क्ष्रूं छ्रूं ह्रूं' को एक-एक कर लिखे। अन्दर से बाहर जाने के क्रम से काली अनुष्टुप् मन्त्र के बत्तीस अक्षरों को एक-एक करके लिखे। काली अनुष्टुप् मन्त्र है—

कालीमार रमालीका लोनमोक्ष क्षमोनली। मामोदेत तदेमोमा रक्षतत्त्व त्वतक्षर।।

इसके बाद यम अनुष्टुप् मन्त्र के बत्तीस अक्षरों को एक-एक करके लिखे। यम अनुष्टुप् मन्त्र है—

यमावाट टवामाय माटमोट टमोटमा। वामोभूरी रिभूमोवा टटरीत्व त्वरीटट।।

शेष कोष्ठों में लगातार यं रं लिखे। इसे अष्टविष काष्ठ के कोयले और निम्बनिर्यास काजल से काक पक्ष के कलम से श्मशान वस्त्र पर लिखे। इसे लिसोड़े के वृक्ष के नीचे या दीमकों के घर में या श्मशान में या चौराहे पर दक्षिणमुख होकर आधी रात में गाड़ दे। इससे एक सप्ताह में शत्रु की मृत्यु हो जाती है या उसे महारोग हो जाता है। इस यन्त्र को पत्थर या ईंट पर बनाकर मर्कटी विष दण्डी से अधोमुख लटकाकर गड्ढे में गाड़ दे तो अशुभ होता है। मनुष्यों का उच्चाटन होता है। फसल की हानि एवं अनावृष्टि होती है तथा गायों का नाश होता है।

वश्यविद्वेषणस्तम्भनादियन्त्राणि

तथा—

आख्यां तुम्बुरुमध्यतः स्मरगतामालिख्य जृम्भादिकां
विद्यां दिग्गतपत्रकेष्वथ लिखेद् देवीं दलेषु स्मरम्।
कोणस्थेषु सनामकं बहिरधः पाशाङ्कुशाभ्यां वृतं
यन्त्रं वश्यकरं ग्रहादिभयहृत् क्षुद्राभिचारापहम्।।३२।।

जृम्भे जृम्भिनि ठद्वन्द्वं मोहे मोहिनि ठद्वयम्। अन्धे अन्धिनि ठद्वन्द्वं रुन्धे रुन्धिनि ठद्वयम्।।३३।।
हित्वा कामं लिखेच्छान्तिं यन्त्रेऽस्मिन् नृकपालके। संध्यासु तापयेदेतदुच्चैः साध्यं वशं नयेत्।।३४।।
हित्वा शान्तिं लिखेद्वर्म फट् च वा नरचर्मणि। वह्निवायुगृहावीतं श्मशानस्थं रिपून् दहेत्।।३५।।
त्यक्त्वा वर्मालिखेदस्त्रं फलकेऽक्षतरूद्भवे। वह्निवायुयुतं नाम मेषोत्थरुधिरेण तत्।।३६।।
चत्वरे निखनेज्जप्तं विद्वेषं कुरुते मिथः। हित्वा रेफयकारौ द्वौ लकारं मध्यतो लिखेत्।।३७।।
(धरापुरेण वीतं तदिष्टकान्तर्निवेशितम्। सर्वेषां स्तम्भनं कुर्यान्नात्र कार्या विचारणा।।३८।।
हित्वा लकारं तन्मध्ये वायुबीजं समालिखेत्।) विषरक्तमषीकाकपुरीषैर्ध्वजवाससि ।।३९।।
श्मशाने निहितं कुर्यात् कुलोत्सादं स्ववैरिणाम्। मुक्त्वा वायुमयं बीजं तत्र फट्कारमालिखेत्।।४०।।
परेतवस्त्रे काकस्य रुधिरेण यथाविधि। ईप्सिते निखनेत् स्थाने विद्वेषं कुरुते द्विषाम्।।४१।।
अस्त्रबीजमपास्यास्मिन् ल्रकारं मार्णसंयुतम्। विलिखेद् यन्त्रमेतत्तु लोहत्रयसमावृतम्।।४२।।
सर्वरोगप्रशमनं कृत्याद्रोहादिशान्तिदम्। विहाय बीजं लंकारं ग्लौंकारं तत्र संलिखेत्।।४३।।
क्षकारेणावृतं बाह्ये पाशाङ्कुशवृतं पुनः। डकारेणावृतं भूयो भूमिमण्डलमध्यगम्।।४४।।
लकारैर्बिन्दुसंयुक्तैर्वेष्टितं तद्बहिः क्रमात्। सर्गान्तमातृकावीतं सर्वं वृत्तेन वेष्टितम्।।४५।।
कौशेयकर्पटे क्लृप्तमिष्टकाद्वयमध्यगम्। सेनाग्रे निखनेदेतत् स्तम्भनं कुरुते ध्रुवम्।।४६।।

उद्धारः सुगमः

अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में 'क्लीं' के मध्य में साध्य नाम-कर्म लिखे। उसे 'तुम्बुरु' के तीन अक्षरों से वेष्टित करे। अष्टपत्र के पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर दलों में जृम्भे-जृम्भिनि स्वाहा, मोहे-मोहिनि स्वाहा, अन्धे-अन्धिनि स्वाहा,

रुन्धे-रुन्धिनि स्वाहा को क्रमशः लिखे। अग्नि नैर्ऋत्य वायव्य ईशान कोणस्थ पत्रों में ह्रीं क्लीं को नामसहित लिखे। इसके बाहर वृत्त बनाकर उसमें आं क्रों लिखकर वेष्टित करे। यह यन्त्र वश्यकर, ग्रहादि भय का निवारक एवं क्षुद्र अभिचारों का नाशक होता है।

यन्त्रमध्य में 'क्लीं' के बदले 'ईं' नरकपाल में लिखे और सन्ध्याओं में उसे आग पर तपावे तो साध्य वश में होता है। शान्ति को छोड़कर यन्त्रमध्य में 'हुं फट्' नरचर्म पर लिखे और यं रं से वेष्टित करे। इसे श्मशान में रख दे तो शत्रु जल जाता है। हुं को छोड़कर अकवन के पटरे पर 'फट्' लिखे। 'फट्' में भेड़ के रक्त से यं रं लिखे। जप करे एवं चौराहे पर गाड़ दे तो विद्वेषण होता है। यं रं को छोड़कर मध्य में दो 'ल'कार लिखे। इसे भूपुर से वेष्टित करे। इस यन्त्र को दो ईंटों के मध्य में दबा दे। इससे सबों का स्तम्भन होता है। लकार को छोड़कर यन्त्रमध्य में यं लिखे। विषरक्त की स्याही में कौए का मल मिलाकर यन्त्र को झण्डे के वस्त्र पर लिखे और श्मशान में गाड़ दे तो शत्रु के कुल का नाश हो जाता है। वायुबीज 'यं' को छोड़कर वस्त्र पर 'फट्' कौए के रक्त से लिखे और साध्य व्यक्ति के स्थान में गाड़ दे तो परस्पर विद्वेषण होता है।

यन्त्र के मध्य में फट् वं ल्रं लिखे एवं लौहत्रय के ताबीज में भरकर धारण करे तो सभी रोगों का प्रशमन होता है तथा कृत्या द्रोह आदि की शान्ति होती है। यन्त्रमध्य में ल्रकार के स्थान में ग्लौं लिखे। क्षं से वेष्टित करे। बाहर आं क्रों से वेष्टित करे। उसके बाहर भूपुर बनाकर उसमें डकार लिखकर वेष्टित करे। उसके बाहर 'लं' से वेष्टित करे। उसके बाहर वृत्त बनाकर सविसर्ग मातृकाओं से वेष्टित करे। श्मशान के रेशमी वस्त्र पर यन्त्र को लिखे और। दो ईंटों के बीच में दबा दे। इसे शत्रुसेना के आगे गाड़ दे तो शत्रुसेना का स्तम्भन होता है।

गारुडयन्त्रम्

तथा—

मध्ये श्रीनरसिंहबीजमथ तद्बाह्ये स्वरान् केसरे
वारीट्चन्द्रयमेन्द्रदिक्षु विलिखेन्मध्ये मनुं गारुडम्।
अन्तःस्थान् मरुदग्निनिर्ऋतिशिवेष्वालिख्य वर्णावृतं
यन्त्रं सर्गिभिरष्टभिः परिवृतं संवर्तकैर्गारुडम् ॥४७॥
संवर्तको नेत्रयुतः पार्श्वस्तारोऽग्निसुन्दरी। गारुडो मनुराख्यातो विषद्वयविनाशनः ॥४८॥
स्मरन् गरुडमात्मानं मन्त्रमेनं जपेन्नरः। विषमालोकनेनैव हन्यान्नागकुलोद्भवम् ॥४९॥

गारुड़ यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर कर्णिका में श्रीं क्ष्रौं लिखे। पश्चिम-उत्तर-पूर्व-दक्षिण दिशा के पत्रों में स्वरों को लिखे। मध्य में गरुड़ मन्त्र 'क्षिप ॐ स्वाहा' लिखे। वायव्य, आग्नेय, नैर्ऋत्य, ईशान दिशा में व्यञ्जन वर्णों को लिखे। इसके बाहर वृत्त बनाकर सविसर्ग मातृकाओं से वेष्टित करे। 'क्षिप ॐ स्वाहा' गारुड़ मन्त्र दोनों प्रकार के प्रभावों का विनाशक है। गरुड़ का ध्यान करके इस मन्त्र का जप करे। इससे जापक की दृष्टिमात्र से नागकुल के विष का प्रभाव नष्ट हो जाता है।

सञ्जीवन-पिण्डयन्त्रतत्फलम्

मध्ये वर्णान् भृगुस्थान् विलिखतु विधिवत् साध्यनाम्ना समेतान्
किञ्जल्केषु स्वराः स्युः वसुदलविवरेष्वालिखेन्मध्यबीजम्।
काद्यार्णान् केसरेषु द्विगुणवसुदलेषु द्वयं मध्यबीजं
यन्त्रं सञ्जीवनाख्यं सलिलपुरगतं क्षुद्ररोगापहारि ॥५०॥
मध्ये पिण्डमचो दलादिषु लिखेद्वारीशताराधिप-
प्रेताधीश्वरशक्रदिक्षु विवरे मध्ये च वर्णांल्लिखेत्।
यादीन् मारुतवह्निराक्षसशिवेष्वर्णान् बहिर्वेष्टयेत्
काद्यैर्वामविलोचनेन कलितं पिण्डाख्ययन्त्रं परम् ॥५१॥

मनुस्वरेन्द्वजेशाग्निसंयुतश्चतुराननः । पिण्डबीजमिदं प्रोक्तं पुंसां सर्वार्थसाधनम् ॥५२॥
बीजेनानेन संजप्तं यन्त्रं रक्षाकरं परम् । आयुरारोग्यजननं लक्ष्मीसौभाग्यवश्यदम् ॥५३॥
चोरसर्पमृगव्याघ्रभूतामयनिकृन्तनम् । गर्भरक्षाकरं स्त्रीणां पुत्रदं क्षुद्रनाशनम् ॥५४॥
धृतं मूर्ध्नि करोत्येव लोकवश्यमनुत्तमम् ।

संजीवन यन्त्र—षोडशदल कमल बनावे। कर्णिका में 'स्व' से विदर्भित साध्य नाम लिखे। पत्रों के किञ्जल्क में स्वरों को लिखे। केसरों में 'क' से 'स' तक के व्यञ्जनों को लिखे। मध्य में 'स्व' बीज लिखे। इसके बाहर वृत्त बनावे। यह संजीवन यन्त्र क्षुद्र रोगों का विनाशक होता है।

पिण्डयन्त्र—अष्टदल कमल बनावे। पिण्डबीज ज्झ्रौं के मध्य में साध्य का नाम लिखे। पश्चिम-उत्तर-दक्षिण-पूर्व दलों में यं रं लं वं लिखे। वायव्य आग्नेय नैर्ऋत्य ईशान दलों में कां कीं कूं कैं लिखे। यह यन्त्र सर्वार्थ-साधक होता है। इस बीज के साथ मन्त्र का जप करने से रक्षा होती है। इससे आयु-आरोग्य-लक्ष्मी-सौभाग्य-वश्य की प्राप्ति होती है। यह यन्त्र चोर, सर्प, मृग, व्याघ्र के भूत, भय का विनाशक है। स्त्रियों के गर्भ का रक्षाकारक, पुत्रप्रद एवं क्षुद्र रोगनाशक है। मूर्धा पर धारण करने से यह उत्तम वश्यकर होता है।

मध्ये तोयगृहे लकारविवरे सार्णाढ्यसाध्यं लिखेत् पत्रेष्वष्टसु हंसमन्त्रमभितो हंसार्णसंवेष्टितम् ।
यन्त्रं भूमिगृहेण वेष्टितमिदं मूर्ध्ना सदा धारितं हन्यात् क्षुद्रमहाज्वरामयरिपून् दद्याद्यशः संपदः ॥५५॥

अष्टदल कमल बनावे। उसकी कर्णिका में वं के उदर में लं लिखे। उसके उदर में सं के साथ साध्य-साधक के नाम लिखे। आठ दलों में हंसं लिखे। उसके बाहर भूपुर बनाकर हं सं वर्णों से वेष्टित करे। इस यन्त्र को मूर्धा में धारण करने से क्षुद्र रोग, महाज्वर, महारोग और शत्रुओं का नाश होता है तथा महान् यश और सम्पदा की प्राप्ति होती है।

ईकारगर्भे विलिखेत् स्वसाध्यं तमष्टपत्रेषु पुनर्विलिख्य ।
संवेष्टयेत् तेन धरापुरस्थं यन्त्रं भवेद्वश्यकरं नराणाम् ॥५६॥
ताम्रपत्रे समालिख्य यन्त्रमेतत् प्रपूजयेत् । वशयेत् सकलान् मर्त्यान् नात्र कार्या विचारणा ॥५७॥

अष्टदल कमल बनाकर कर्णिका में 'ई'कार के गर्भ में साध्य नाम लिखे। अष्टपत्रों में 'ई' लिखे। उसके बाहर भूपुर बनाकर 'ई'कार से वेष्टित करे। इस यन्त्र से मनुष्य वश में होते हैं। इस यन्त्र को ताम्रपत्र पर लिखकर पूजा करे तो सभी प्राणी वश में होते हैं।

मध्ये भान्तं भृगुविनिहितं नामवर्णैः प्रवीतं टान्तं लान्तान्वित्तमथ लिखेदष्टपत्रेषु भूयः ।
भूबिम्बस्थं निगदितमिदं साधु सञ्जीवनाख्यं शस्त्रोद्भूतं भयमपहरेद्धार्यमाणं भुजेन ॥५८॥

अष्टदल कमल बनाकर कर्णिका में 'म' के उदर में 'स' के साथ साध्य नाम लिखे। ठं वं अष्टपत्रों में लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनावे। इस संजीवन नामक यन्त्र को भुजा में धारण करने से शस्त्रों का भय नहीं रहता।

ज्वरघ्नादियन्त्राणि

वर्णावृतं साध्ययुतं जकारं टान्ते लिखेदष्टदलेषु हंसम् ।
आवेष्टयेदम्बुगृहेण बाह्ये लान्तावृतं यन्त्रमिदं ज्वरघ्नम् ॥५९॥

ज्वरघ्न यन्त्र—अष्टदल बनाकर उसकी कर्णिका में 'वं' के उदर में 'टं' लिखे। इसके उदर में 'स' के साथ साध्य नाम लिखे। अष्टपत्रों में हंसं लिखे। लं से पुटित जलतत्त्व के वर्ण घ झ ढ ध भ व स ॠ ॠ औ से उसे वेष्टित करे। यह यन्त्र ज्वरविनाशक होता है।

टान्ते नाम लिखेत् क्षकारविवरे मृत्युञ्जयत्र्यक्षरैः रुद्धं तद्बहिरष्टपत्रविवरे साध्याह्वयं पूर्ववत्।
अच्किञ्जल्कयुते वसुद्वयदले पद्मे तथैवाह्वयं द्वात्रिंशद्दलपङ्कजेऽपि च तथा काद्यार्णयुक्केसरे ॥६०॥
ईकारेण समावीतं यन्त्रं मृत्युञ्जयाह्वयम्। सर्वरोगाभिचारघ्नं सर्वसौभाग्यसिद्धिदम् ॥६१॥

पहले अष्टदल बनाकर उसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर उसके बाहर बत्तीस दल कमल बनावे। कर्णिका में 'क्षं' के उदर में ठं लिखे। ठं के उदर में साध्यनाम लिखे। अष्टपत्रों में ॐ जूं स: लिखे। षोडशदल में सोलह स्वरों को लिखे। बत्तीस दलों में क से स तक के वर्णों को लिखे। इसके बाहर वृत्त बनाकर 'ई' से वेष्टित करे। इसे मृत्युञ्जय यन्त्र कहते हैं। यह यन्त्र सभी रोगों एवं अभिचारों का विनाशक तथा सर्व सौभाग्य की सिद्धि देने वाला है।

ग्लौंरुद्धं प्रणवद्वयं प्रविलिखेत् साध्यस्य नामान्वितं बाह्ये भूपुरमष्टवज्रविलसत्तारं लिखित्वा पुनः।
क्षं कोणेषु दिशासु लं प्रविलिखेत् पाशाङ्कुशत्र्यक्षरैर्वीतं स्तम्भनयन्त्रमावृतिलसज्जृम्भादिविद्याष्टकैः ॥६२॥
जृम्भे वह्निवधूः पूर्वं पश्चाज्जृम्भिनि ठद्वयम्। मोहे पावकजाया स्यात् पश्चान्मोहिनि ठद्वयम् ॥६३॥
अन्धे हुतभुजो जाया ततोऽप्यन्धिनि ठद्वयम्। रुन्धे कृशानुपत्नी स्याद्रुन्धिनि द्विठसंयुतम् ॥६४॥
उद्धारः सुगमः।

पहले ॐ ग्लौं ॐ के साथ साध्य नाम लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर चारो कोणों पर दो-दो वज्र बनावे और प्रत्येक में ॐ लिखे। उसके कोणों में क्षं लिखे। पूर्वादि दिशाओं में लं लिखे। पूर्व में आं ह्रीं क्रों जम्भे स्वाहा, आं ह्रीं क्रों जम्भिनि स्वाहा, आं ह्रीं क्रों मोहे स्वाहा, आं ह्रीं क्रों मोहिनि स्वाहा, आं ह्रीं क्रों अन्धे स्वाहा, आं ह्रीं क्रों अन्धिनि स्वाहा, आं ह्रीं क्रों रुन्धे स्वाहा, आं ह्रीं क्रों रुन्धिनि स्वाहा—इन आठों को आठों दिशाओं में लिखे तो इस यन्त्र से स्तम्भन होता है।

वाक्स्तम्भनादियन्त्राणि

तथा—

लान्ते नाम विलिख्य दिक्षु विलिखेद् भूयस्तमेवाष्टसु
क्षोणीबिम्बमथो नगेन्द्रभुजगावन्योन्यबद्धौ लिखेत्।
आख्यां तन्मुखयोर्विभीतफलके यन्त्रं समापादितं
निर्माल्ये निहितं सदा वितनुते वाचां द्विषां स्तम्भनम् ॥६५॥

चतुरस्र बनाकर उसके मध्य में क्षं के साथ नाम लिखे। चतुरस्र की आठो दिशाओं में वासुकी शङ्खपाल बनाकर उनके मुखों में भी 'क्षं' लिखे। यह यन्त्र लिसोड़े के पटरे पर गेरू से बनावे। इसे सर्वदा शिवनिर्माल्य में रखे तो वैरियों की वाणी का स्तम्भन होता है।

साध्याढ्यं कवचं लिखेद् बहिरथो दिक्पत्रमध्येषु तद्
ग्लौमन्येषु महीपुरस्य विलिखेत् कोणेषु रान्तान्वितम्।
वज्रेष्वष्टसु वर्म तोयपुरगं भूबिम्बमध्यस्थितं
यन्त्रं रात्रिविनायकान्तरगतं न्यस्येच्छरावद्वये ॥६६॥
रहस्यस्थाननिक्षिप्तं पूजितं प्रतिवासरम्। स्तम्भनं कुरुते वाचां सेनादीनां च वैरिणाम् ॥६७॥

अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में ठं के उदर में साध्यनाम लिखे। अष्टपत्रों में ग्लौं लिखे। भूपुर के कोणों में गं लिखे एवं भूपुर के आठ वज्रों में हुं लिखे। भूपुर में स्थित इस यन्त्र को शरावपुट में बन्द करके रहस्य स्थान में गाड़कर प्रतिदिन रात में पूजा करे। इससे शत्रुसेना एवं उसकी वाणी का स्तम्भन होता है।

कृत्वा रेखाष्टकमृजु पुनस्तिर्यगालिख्य षट्कं बाह्यावृत्त्या लिखतु विधिवद् बिन्दुयुक्तं क्षकारम्।
अन्तःपङ्क्तौ लिखतु धरणीं शिष्टकोष्ठत्रयान्तः कृत्वा नाम प्रथितमुदितं यन्त्रमेतज्ज्वरघ्नम् ॥६८॥

यन्त्रमेतत् समभ्यर्च्य दत्त्वा भूतबलिं ततः। साध्यस्य मूर्ध्नि बध्नीयात् सर्वज्वरविमुक्तये ॥६९॥

पूरब से पश्चिम आठ सरल रेखा खींचे। छः रेखा दक्षिण से उत्तर खींचे सबकी दूरी समान रखे। इससे पैंतीस कोष्ठ बनते हैं। ईशान कोण से प्रारम्भ करके बाहरी कोष्ठपंक्तियों में बीस कोष्ठों में 'क्षं' लिखे। इसके बाद बारह कोष्ठों में लं लिखे। मध्य में बचे तीन कोष्ठों में एक-एक करके साध्य का नाम लिखे। यह यन्त्र ज्वरनाशक होता है। इस यन्त्र की पूजा करके भूतबलि देकर साध्य के मूर्धा पर बाँधे तो सभी प्रकार के बुखार छूट जाते हैं।

तारं लिखेद् वह्निपुरस्य युग्मे तत्पार्श्वयोर्लार्णमथाग्निबीजम्।
कोणेषु पूर्वापरयोश्च यन्त्रं पाशाङ्कुशावीतमिदं ज्वरघ्नम् ॥७०॥
यन्त्रमभ्यर्च्य मन्त्रेण तारपाशाङ्कुशात्मना। निबध्नीयाज्ज्वरार्तस्य हस्तादौ ज्वरशान्तये ॥७१॥

षट्कोण बनाकर उसके मध्य में ॐ लं लिखे। कोणों में 'रं' लिखे। षट्कोण के बाहर वृत्त बनाकर उसमें आं क्रों लिखकर वेष्टित करने से यह ज्वरघ्न यन्त्र बनता है। यन्त्र का पूजन ॐ आं क्रों मन्त्र से करे। ज्वरग्रस्त के बाँह में इस यन्त्र को बाँधने से ज्वर छूट जाता है।

पिण्डे लिखेन्नाम ससर्गटान्तविदर्भितं सस्वरकेसराढ्यम्।
टान्ताष्टपत्रं वसुधापुरस्थं कान्तिप्रदं यन्त्रमिदं ज्वरघ्नम् ॥७२॥

ज्म्रौं के उदर में ठः से विदर्भित साध्य का नाम लिखे। अष्टपत्रों के केसरों में स्वरों को लिखे। पत्रों में ठः लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनावे। यह यन्त्र कान्तिप्रद और ज्वरनाशक होता है।

तारादिलुद्वयजलद्विठवर्णवीता टान्तान्तरे विलिखिता विधिनैव माया।
साध्यावृता बहिरथो वदनार्धचन्द्रैर्यन्त्रं शिरोर्तिनिचयं विनिहन्ति सद्यः ॥७३॥

ॐ लु लु वं स्वाहा के घेरे में ठं लिखे। ठं के उदर में ईं लिखे। साध्य नामाक्षरों से वेष्टित करे। इसके बाहर इसके नीचे अधोमुख अर्धचन्द्र बनावे। इसके बाहर वृत्त बनावे। इससे शिर के समस्त दुःखों से मुक्ति मिल जाती है।

व्योमार्णमालिख्य सबिन्दुमाख्याविदर्भितं यन्त्रमयुग्मकोणे।
वसुन्धरागेहयुगे निबद्धं यन्त्रं समस्तज्वरनाशनं स्यात् ॥७४॥

दो चतुरस्र एक के अन्दर दूसरा बनाकर हं से विदर्भित साध्य नाम मध्य में लिखे। कोणों में लुंलुंलुं लिखे तो यह यन्त्र सभी ज्वरों का विनाशक होता है।

सार्णं नामविदर्भितं परिलिखेद् बाह्येऽष्टपत्रे भृगुं पद्मं स्यादथ कादिषान्तलिपिमत् त्रिंशद्दलं बाह्यतः।
वीतं तोयपुरेण यन्त्रमुदितं भूर्जोदरे कल्पितं भूतव्याधिमहाज्वरप्रशमनं कृत्यापहं श्रीप्रदम् ॥७५॥

अष्टदल कमल बनाकर उसके मध्य में 'सां' लिखे। अष्टपत्रों के मूल में दो स्वरों को लिखे। दलों के बाहर 'सं' लिखे। इसे क से श तक के तीस वर्णों से वेष्टित करे। इस यन्त्र को भोजपत्र पर बनावे। यह यन्त्र भूत, व्याधि, महाज्वर, कृत्या ग्रह का विनाशक एवं श्रीप्रद कहा गया है।

चक्रे चतुःषष्टिपदे सबिन्दूनन्तःस्थवर्णान् क्रमशो विलिख्य।
रेखाशिरःकल्पितशूलयुक्ते यन्त्रे शयीत ज्वरशान्तिहेतोः ॥७६॥

पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर बराबर दूरी पर नव रेखाओं को खींचने से चौंसठ कोष्ठ बनते हैं। यह यन्त्र जमीन पर बनावे। इन चौंसठ कोष्ठों में यं रं लं वं इस प्रकार लिखे—यन्त्र के किनारे वाले अट्ठाईस कोष्ठों 'यं' लिखे। इसके भीतर वाले बीस कोष्ठों में 'रं' लिखे। इसके भीतर के बारह कोष्ठों में लं लिखे। मध्य वाले चार कोष्ठों में वं लिखे। सभी रेखाग्रों पर त्रिशूल बनावे। इस यन्त्र पर विस्तर बिछाकर शयन करे तो पीत ज्वर समाप्त हो जाता है।

पुटितभूमिपुरद्वयमध्यतः प्रविलिखेद् वनितां गिरिजापतेः ।
प्रणवमस्य लिखेद्वसुकोणगं ज्वरहरं परमेतदुदीरितम् ।।७७।।

एक के अन्दर दूसरा दो चतुरस्र बनावे। दोनों के अन्तराल में 'ह्रीं-ह्रीं' लिखकर वेष्टित करे। दोनों चतुरस्रों के आठ कोणों में ॐ लिखे। यह यन्त्र परम ज्वर-विनाशक होता है।

बार्णे लिखेन्नाम शशाङ्कमध्ये टान्तं बहिर्भूमिपुरं परस्तात् ।
वृत्तावृतं यन्त्रमिदं समुक्तं वश्याय नृणां सकलार्तिशान्त्यै ।।७८।।

चतुरस्र के बाहर वृत्त बनाकर मध्य में ठं के उदर में वं के साथ साध्य का नाम लिखे। वृत्त के बाहर ठं लिखकर इसे वेष्टित करे। इस यन्त्र से मनुष्य वश में होते हैं एवं सभी प्रकार के दुःखों की शान्ति होती है।

सस्वस्तिके दहनगेहयुगे ससाध्यां मायां लिखेल्ललितनागलतादलान्तः ।
पाशाङ्कुशावृतमिदं निशि तोयमध्ये मन्त्रं जपन् व्रजति तं स्वयमेव साध्यः ।।७९।।

षट्कोण के मध्य में स्वस्तिक चिह्न बनाकर उसमें ह्रीं के साथ साध्या का नाम लिखे। इसे पान के पत्ते पर लिखे। षट्कोण के कोणों में आं क्रों लिखे। जल में खड़े होकर मन्त्र जप करे तो साध्या कामातुर होकर साधक के समीप आ जाती है। दूसरे मत से पान के पत्ते पर लिखित यन्त्र को दीपशिखा पर तपाते हुए मन्त्रजप करे तो साध्या स्त्री कामातुर होकर समीप आ जाती है।

षट्कोणे निजसाध्यनामसहितां मायां लिखेन्मध्यत-
स्तत्कोणेषु विदर्भितामभिलिखेच्छक्तिं स्वसाध्याख्यया ।
बाह्ये भूमिपुरं सकोणमदनं ताम्बूलपत्रे कृतं
जप्तं खादयितुः प्रियां निशि भवेत् सा तस्य वश्या चिरम् ।।८०।।

षट्कोण के मध्य में साध्य नाम के साथ ह्रीं लिखे। उसके कोणों में अपनी साध्या के नामाक्षरों को 'ह्रीं' से विदर्भित करके लिखे। इसके बाहर भूपुर बनाकर कोणों में क्लीं लिखे। इसे पान के पत्ते पर बनावे और 'ह्रीं' के जप से मन्त्रित करके रात में प्रिया को खिलावे तो वह आजीवन वश में रहती है।

शक्तौ नाम लिखेच्चतुर्भिरभितो बीजैः समावेष्टयेद्
वीतं शक्तिमनोभवाङ्कुशमनुं ह्रींबीजकैः पिष्टजे ।
रूपे साध्यनरस्य जप्तपवने त्रिस्वादुनाभर्ज्य तत्
खादेत् तस्य वशं प्रयाति नियतं साध्यः सदा दासवत् ।।८१।।

अन्नपिष्ट से साध्य मनुष्य की प्रतिमा बनाकर प्राण-प्रतिष्ठा करे। उसके हृदय में ह्रीं के मध्य में साध्य-नाम लिखे। उसे ह्रीं क्लीं क्रों प्रों—इन चार बीजों से वेष्टित करे। इस प्रतिमा को दूध-चीनी एवं शहद में भूँज कर खा जाय। इससे साध्य उसके वश में दास के समान रहता है।

मन्मथयन्त्रम्

कामं लिखेत् साध्ययुतं सरोजे स्वरोल्लसत्केसरवर्गपत्रे ।
उदीरितं मन्मथयन्त्रमेतत् सौभाग्यलक्ष्मीविजयप्रदायि ।।८२।।

मन्मथ यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर उसके मध्य में क्लीं के साथ साध्य का नाम लिखे। पत्रों में स्वरों को लिखे। यह मन्मथ यन्त्र सौभाग्य, लक्ष्मी एवं विजय प्रदान करने वाला होता है।

यन्त्रलेखनद्रव्याणि

काश्मीररोचनालाक्षामृगेभगमदचन्दनै: । विलिखेद् हेमलेखन्या यन्त्राण्येतानि देशिक: ॥८३॥

यन्त्रलेखन द्रव्य—उपर्युक्त सभी यन्त्रों को केसर, गोरोचन, लाह, कस्तूरी, हस्तीमद, चन्दन के घोल से सोने की कलम से लिखना चाहिये।

यन्त्रधारणनिषेध:

भूमिस्पृष्टं शवस्पृष्टं दग्धं निर्माल्यसङ्गतम्। विशीर्णं लङ्घितं मन्त्री यन्त्रं जातु न धारयेत्॥८४॥ इति।

यन्त्रधारण का निषेध—भूमि पर गिरने पर, शव से छूने पर, दग्ध निर्माल्य से छूने पर, खण्डित होने पर, लंघित होने पर यन्त्र को धारण नहीं करना चाहिये।

शक्तिकूटवर्णोद्भवानां खण्डानां यन्त्राणाञ्च सङ्ख्या तत्फलानि

मातृकार्णवे—

विंशत्या शतखण्डानि शक्तिकूटोद्भवानि च। तेषां तावन्ति यन्त्राणि जायन्ते तत्फलानि च॥१॥
शृणु वक्ष्ये समासेन समाहितमनास्तत:। रोगकृत्याग्रहादीनां निरासो वश्यकर्म च॥२॥
जलार्णोद्भवखण्डानां फलं ज्ञेयं तत: पुन:। द्वितीयार्णसमुत्थानामुच्चाटनफलं स्मृतम्॥३॥
तृतीयार्णसमुत्थानां स्तम्भनं फलमीरितम्। चतुर्थाक्षरसंभूतखण्डानां कार्मणं फलम्॥४॥
पञ्चमार्णसमुत्थानां विद्वेषणमुदाहृतम्। चतुर्विंशतिसंख्यानि खण्डानि स्यु: पृथक्पृथक्॥५॥

मातृकार्णव में कहा गया है कि बीस-बीस के सौ खण्ड शक्तिकूट के होते हैं। उतने ही यन्त्र उनसे बनते हैं और फल भी उतने ही होते हैं। उनको संयुक्त रूप में कहता हूँ, सुनो। रोग-शान्ति, कृत्या-निवारण, ग्रहशान्ति एवं वशीकरण कर्म जलवर्ण खण्ड से होते हैं। द्वितीय वर्ण से उत्पन्न खण्ड से उच्चाटन कर्म होता है। तृतीय वर्ण खण्ड से स्तम्भन होता है। चतुर्थ वर्ण खण्ड से कार्मण फल होते हैं। पञ्चम वर्ण खण्ड से विद्वेषण होता है। चौबीस खण्ड अलग-अलग होते हैं।

विषमसमकोष्ठेषु विद्याकूटलेखनाद्यन्त्राणामानन्त्यम्

तन्त्रराजे तु—'नव षोडशकोष्ठानि संवर्ध्य विषमं समं' (३३, ९६) **इति। अत्र नव-पञ्चविंशति-ऊनपञ्चाशत्-एकाशीतिपदानि यन्त्राणि विषमाणि, अग्रेऽपि तथैव विषमरीत्या योजनीयानि, समानि तु षोडश-षट्त्रिंशच्चतुष्षष्टिपदक्रमेण योजितानि समयन्त्राणि ज्ञेयानि। अग्रेऽपि तथैवोपर्य्युपरि समरीत्या योजनीयानीत्यर्थ:। तथा तत्रैव—**

तेष्वङ्कानि समं कृत्वा पङ्क्तौ तेषु समालिखेत्। विद्यातृतीयभेदोत्थांस्तत्तदङ्कानुगुण्यत: ॥१॥
मनीषितं च संलिख्य तेषां मध्यस्थकोष्ठत:। विदध्यात् शान्तिकं सर्वं तैर्यन्त्रै: कल्पितैस्तथा॥२॥
वश्याकर्षणविद्वेषस्तम्भनोच्चाटनादिकम् । आयुरारोग्यविजयविभूत्याद्यं च सिद्ध्यति॥३॥
स्थापनाद्धारणाच्चान्यैरुपायै: साधकोऽनिशम्।

तै: कल्पितै: संवर्ध्य विषमं सममित्यादिरीत्या कल्पितैर्यन्त्रैरङ्कैश्च, अङ्कप्रकारस्तु 'प्राणाग्नीलाम्बुखात्मान:' इत्यादिना प्रतिभूतं दशदशवर्णक्रमेण क्रमागतवर्णजनिताङ्को ज्ञेय:।

तन्त्रराज में कहा है कि नव एवं सोलह कोष्ठों को बढ़ाने से सम-विषम यन्त्र होते हैं। अर्थात् नव, पच्चीस, उनचास, इक्यासी यन्त्र विषम एवं सोलह, छत्तीस, चौंसठ पद योजन से सम यन्त्र होते हैं। उनकी सम पंक्तियों में सम अंक लिखे जाते है। विद्या में तृतीय खण्डोत्पन्न अंकों को लिखा जाता है। कामना उनके मध्य कोष्ठ में लिखी जाती है। शान्ति, वश्य, आकर्षण, विद्वेषण, स्तम्भन, उच्चाटन आदि कर्मों के अनुसार यन्त्र कल्पित किये जाते हैं। इनसे आयु, आरोग्य, विजय, विभूति आदि की सिद्धि होती है। इनकी स्थापना से, इनके धारण से या अन्य उपायों से साधक सर्वदा काम्य कर्म सिद्ध करते हैं। कल्पित अंकों का तात्पर्य यह है कि अंक भी वायु, अग्नि, पृथ्वी, जल, आकाशात्मक होते हैं। इन पाँच तत्त्वों में दश-दश वर्ण होते हैं।

नवकोष्ठयन्त्रे अङ्कयोजने पदसङ्ख्या

अङ्कवृद्धिक्रमस्तु मातृकार्णवे—

नवकोष्ठात्मके यन्त्रे वदाम्यङ्कक्रमं शृणु। शक्तिकूटाद्यखण्डस्य प्रोक्तं व्यञ्जनपञ्चकम् ॥१॥
तस्याद्याद्ये क्रमोक्तानि ज्ञातव्यानि मनीषिभिः। प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्च चतुःसूत्रनिपातनात् ॥२॥
कोष्ठानि नव जायन्ते पंक्तित्रयविभेदतः। द्विनवाब्धिगिरीषुत्रिषट्चन्द्रवसुकोष्ठकैः ॥३॥
एकद्वित्रिचतुष्पञ्चषट्सप्ताष्टनव क्रमात्। पदसंख्यां विजानीयाद्वर्णाङ्कानां तु योजने ॥४॥
आद्यार्णोत्थचतुर्विंशत्खण्डानां परमेश्वरि। चतुर्विंशतिसंख्या स्यात् क्रमेणैकादितोऽम्बिके ॥५॥
एकाङ्कमाद्यकोष्ठे तु चाद्यखण्डस्य वै भवेत्। तथा द्वितीयखण्डस्य द्वयमाद्यपदे भवेत् ॥६॥
एवं तृतीयखण्डादौ त्र्यङ्कादि विलिखेत् तथा। चतुर्विंशतिकूटानां चतुर्विंशतिसंख्यया ॥७॥
यन्त्राणि देवि जायन्ते चाद्यवर्णोद्भवानि च। एवं द्वितीयवर्णोत्थभेदानां परमेश्वरि ॥८॥
पञ्चविंशतितोऽप्यष्टाचत्वारिंशत्तमावधि। ततोऽप्येवं क्रमेणैव तृतीयादिषु चोन्नयेत् ॥९॥
एवं प्रोक्तमहायन्त्रैर्नासाध्यं विद्यते भुवि।

अंक वृद्धिक्रम—मातृकार्णव में कहा गया है कि नव कोष्ठात्मक यन्त्र में अंकक्रम इस प्रकार रहता है। शक्ति कूट के आद्य खण्ड में पाँच व्यञ्जन होते हैं। उनके आद्याद्य खण्डों का ज्ञान विद्वानों से करना चाहिये। पूर्व से पश्चिम एवं दक्षिण से उत्तर चार-चार रेखाओं को खींचने से नव कोष्ठ बनते हैं। पदसंख्या जानकर इनमें अंकों को लिखना चाहिये। आद्य वर्णोत्थ चौबीस खण्डों में एक से चौबीस तक के अंक लिखे जाते हैं। आद्य कोष्ठ में एक अंक आद्य खण्ड का होता है। द्वितीय खण्ड के आद्य पद में दो अंक होता है। तृतीय खण्ड में पहला अंक तीन होता है। इसी प्रकार चौबीस कूटों में चौबीस अंक होते हैं। ये आद्य वर्णोद्भूत यन्त्र होते हैं। इसी प्रकार द्वितीय वर्णोत्थ भेद होते हैं। जलवर्णों से पच्चीस से अड़तालीस तक की संख्या में यन्त्र बनते हैं। इन यन्त्रों से संसार में कुछ भी असाध्य नहीं रहता।

षोडशकोष्ठयन्त्रविधिः

अथ षोडशकोष्ठानां यन्त्राणां च विधिं शृणु ॥१०॥
प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्च पञ्चसूत्रनिपातनात्। कोष्ठानि देवि जायन्ते षोडशात्र क्रमाल्लिखेत् ॥११॥
व्यञ्जनेष्वन्त्यवर्णानां सप्त सप्त समीरिताः। आदिमध्यस्थवर्णानां दश क्रमगताङ्ककम् ॥१२॥
विषमे विषमाङ्कं स्यात् समे चैव समाङ्ककम्। प्रतिपङ्क्ति यथासाम्यसङ्कसंकलनं तथा ॥१३॥
सम्यग्विचार्य संलेख्यं चतुस्त्रिंशत्समन्ततः। आद्यखण्डस्य विज्ञेयं षट्त्रिंशच्च ततः परम् ॥१४॥
अष्टत्रिंशत् ततश्चत्वारिंशदेव क्रमोत्तरम्। द्विवृद्ध्या च द्वितीयादिखण्डानां योजयेत् प्रिये ॥१५॥
विंशोत्तरं शततमं खण्डं यावच्च वर्धयेत्। एवं साम्येषु यन्त्रेषु सर्वेषु च समुन्नयेत् ॥१६॥
द्वित्र्यादिखण्डसंभूतवर्णाङ्कानां च मेलने। स्थूलयन्त्राणि कल्प्यानि फलानि प्राग्वदुन्नयेत् ॥१७॥
चतुर्विंशतिसंख्यानि खण्डान्याद्यार्णजानि च। शृणु वक्ष्ये क्रमेणैव यथावद्गिरिसम्भवे ॥१८॥

अब सोलह कोष्ठ की विधि सुनो। पूर्व से पश्चिम एवं दक्षिण से उत्तर बराबर दूरी पर पाँच रेखा खींचने से सोलह कोष्ठ बनते हैं। व्यञ्जन के अन्तिम वर्णों में सात-सात, आदि मध्य के वर्णों में दश क्रम गताङ्क अङ्कित होते हैं। विषम में विषम अंक और सम में सम अंक लिखे जाते हैं। प्रति पंक्ति यथासाम्य अंक-सङ्कलन होता है। सम का विचार करके चौंतीस तक अंक लिखा जाता है। आद्य खण्ड में छत्तीस से आगे के अंक होते हैं। अड़तीस से चौवालीस तक का क्रम इसके बाद है। द्वितीयादि खण्डों में दो-दो अंकों की वृद्धि होती है। एक सौ बीस खण्डों तक यह बढ़ाये जाते हैं। इस प्रकार साम्य यन्त्रों में लिखे।

आद्यवर्णजानि खण्डानि

एकद्वित्रिचतुष्पञ्च चैकत्रिद्विचतु:शरा: । एकाब्धिद्वित्रिबाणाश्च एकद्व्यब्धित्रिपञ्च च ॥१९॥
एकत्र्यब्धिद्विपञ्चैव एकवेदत्रियुक्शरा: । एकद्वित्रिशराब्धिश्च एकत्रिद्विशराब्धय: ॥२०॥
एवेषुत्रिद्विवेदाश्च एकत्रीषुद्विवेदका: । एकेषुद्वित्रिवेदाश्च एकद्वीषुगुणाब्धय: ॥२१॥
एकद्विवेदेषुगुणा एकाब्धिद्विशरत्रय: । एकेषुद्व्यब्धिदोषाश्च एकद्वीषुश्रुतित्रय: ॥२२॥
एकाब्धीषुद्वित्रयश्च एकेष्वब्धिद्विकालका: । एकत्र्यब्धीषुयुगलमेकाब्धित्रीषुयुग्मकम् ॥२३॥
एकेषुत्र्यब्धियुगलमेकत्रीष्वब्धियुग्मकम् । एकेष्वब्धित्रियुगलमेकाब्धीषुत्रियुग्मकम् ॥२४॥
एवं प्रोक्तानि खण्डानि चाद्यार्णादुद्भवानि च ।

प्रथमार्ण-समुत्थित खण्ड—एक-दो-तीन-चार-पाँच, एक-तीन-दो-चार-पाँच, एक-चार-दो-तीन-पाँच, एक-दो-चार-तीन-पाँच, एक-तीन-चार-दो-पाँच, एक-चार-तीन-दो-पाँच, एक-दो-तीन-पाँच-चार, एक-तीन-दो-पाँच-चार, एक-तीन-चार-दो-पाँच, एक-चार-तीन-दो-पाँच, एक-दो-तीन-पाँच-चार, एक-तीन-दो-पाँच-चार, एक-पाँच-तीन-दो-चार, एक-तीन-पाँच-दो-चार, एक-पाँच-दो-तीन-चार, एक-दो-पाँच-तीन-चार, एक-दो-चार-पाँच-तीन, एक-चार-दो-पाँच-तीन, एक-पाँच-दो-चार-तीन, एक-दो-पाँच-चार-तीन, एक-पाँच-तीन-चार-दो, एक-तीन-पाँच-चार-दो, एक-पाँच-चार-तीन-दो, एक-पाँच-चार-तीन-दो, एक-चार-पाँच-तीन-दो—इस प्रकार के खण्ड आद्य वर्ण से उत्पन्न कहे गये हैं।

द्वितीयवर्णजानि खण्डानि

द्वितीयार्णसमुत्थानि खण्डानि शृणु पार्वति ॥२५॥
द्व्येकत्र्यब्धिशराश्चैव द्वित्र्येकाब्धिशरास्तथा । द्व्यब्धित्र्येकशराश्चैव द्वित्र्यब्ध्येकशरास्तथा ॥२६॥
द्व्येकाब्धित्रीषवश्चैव द्व्यब्ध्येकत्रिशरास्तथा । द्विपञ्चैकत्रिवेदाश्च युग्मैकेषुत्रिसागरा: ॥२७॥
द्वित्रीष्वेकाब्धयश्चैव द्विपञ्चत्र्येकसागरा: । द्विचन्द्रत्रीषुवेदाश्च द्विवह्न्येकेषुसागरा: ॥२८॥
द्व्येकाब्धीष्वनलाश्चैव द्व्यब्ध्येकेषुगुणास्तथा । द्विपञ्चवेदैकगुणा द्व्यब्धीष्वेकत्रयस्तथा ॥२९॥
द्विपञ्चैकश्रुतिगुणा द्विचन्द्रेष्वब्धिवह्नय: । द्वित्र्यब्धिशरचन्द्राश्च द्व्यब्धित्रीष्वेककास्तथा ॥३०॥
द्विपञ्चवेदवह्नीन्दु द्विवेदेषुगुणेन्दव: । द्विवह्नीष्वब्धिचन्द्राश्च द्वीषुत्र्यब्धिसुधांशव: ॥३१॥
एवं प्रोक्तानि खण्डानि द्वितीयार्णोद्भवानि च ।

द्वितीयार्ण समुत्थित खण्ड—अब द्वितीयार्ण-समुत्थित खण्डों को सुनो। ये इस प्रकार हैं—दो-एक-तीन-चार-पाँच, दो-तीन-एक-चार-पाँच, दो-चार-तीन-एक-पाँच, दो-तीन-चार-पाँच, दो-एक-चार-तीन-पाँच, दो-चार-एक-तीन-पाँच, दो-पाँच-एक-तीन-पाँच, दो-एक-पाँच-तीन-चार, दो-तीन-पाँच-एक-चार, दो-पाँच-तीन-एक-चार, दो-एक-तीन-पाँच-चार, दो-तीन-एक-पाँच-एक, दो-एक-चार-पाँच-तीन, दो-चार-एक-पाँच-तीन, दो-पाँच-चार-उक-तीन, दो-चार-पाँच-एक-तीन, दो-पाँच-एक-चार-तीन, दो-एक-पाँच-चार-तीन, दो-तीन-चार-पाँच-एक, दो-चार-तीन-पाँच-एक, दो-पाँच-चार-तीन-एक्र, दो-चार-पाँच-तीन-एक, दो-तीन-पाँच-चार-एक, दो-पाँच-तीन-चार-एक। यह द्वितीय वर्णोद्भूत खण्ड है।

तृतीयवर्णजानि खण्डानि

तृतीयार्णसमुत्थानि खण्डानि शृणु शैलजे ॥३२॥
त्रिचन्द्रद्व्यब्धिभूतानि त्रिद्व्येकाब्धिशरास्तथा । त्रिवेदैकद्विभूतानि त्रिवेदद्व्येकसायका: ॥३३॥
वह्निद्विवेदचन्द्रेषु वह्न्येकाब्धिद्विसायका: । त्रिद्विचन्द्रेषुवेदाश्च त्रिद्विभूतेन्दुसागरा: ॥३४॥
त्रिपञ्चद्व्येकवेदाश्च त्रिपञ्चैकद्विसागरा: । वह्निचन्द्रेषुयुग्माब्धिर्वह्नीन्दुद्वीषुसागरा: ॥३५॥
त्रिवेदेषुद्विचन्द्राश्च त्रिवेदद्विशरेन्दव: । त्रिद्वीषुवेदचन्द्राश्च त्रिद्व्यब्धीषुधरास्तथा ॥३६॥

त्रिपञ्चाब्धिद्वीन्दवश्च त्रिपञ्चद्व्यब्धिचन्द्रकाः। त्रिवेदेष्वेकयुग्मानि त्रिपञ्चाब्धीन्दुयुग्मकम्॥३७॥
त्रिचन्द्रवेदेषुयुग्मं त्रिवेदेन्दुशरद्विकम्। त्रिपञ्चेन्द्वब्धियुग्मानि त्र्येकेष्वब्धियुगं तथा॥३८॥
एवं प्रोक्तानि खण्डानि तृतीयार्णोद्भवानि च।

तृतीयार्ण समुत्थित खण्ड—तृतीयार्ण-समुत्थित खण्ड हैं—तीन-एक-दो-चार-पाँच, तीन-दो-एक-चार-पाँच, तीन-चार-एक-दो-पाँच, तीन-चार-दो-एक-पाँच, तीन-दो-चार-एक-पाँच, तीन-एक-चार-दो-पाँच, तीन-दो-एक-पाँच-चार, तीन-दो-पाँच-एक-चार, तीन-पाँच-दो-एक-चार, तीन-पाँच-एक-दो-चार, तीन-एक-पाँच-दो-चार, तीन-एक-दो-पाँच-चार, तीन-चार-पाँच-दो-एक, तीन-चार-दो-पाँच-एक, तीन-दो-पाँच-चार-एक, तीन-दो-चार-पाँच-एक, तीन-पाँच-चार-दो-एक, तीन-पाँच-दो-चार-एक, तीन-चार-पाँच-एक-दो, तीन-पाँच-चार-एक-दो, तीन-एक-चार-पाँच-दो, तीन-चार-एक-पाँच-दो, तीन-पाँच-एक-चार-दो, तीन-एक-पाँच-चार-दो। यह तृतीय वर्णोद्भूत खण्ड है।

चतुर्थवर्णजानि खण्डानि

चतुर्थार्णसमुत्थानि खण्डानि शृणु पार्वति॥३९॥
वेदत्रिद्व्येकभूतानि वेदद्वित्रीन्दुसायकाः। वेदैकद्वित्रिभूतानि वेदद्व्येकत्रिसायकाः॥४०॥
वेदैकत्रिद्विभूतानि वेदत्र्येकद्विसायकाः। वेदेष्विन्दुद्व्यग्नयश्च वेदैकेषुद्विवह्नयः॥४१॥
वेदद्व्येकेषुवह्निश्च वेदैकद्वीषुवह्नयः। वेदद्विसायकेन्द्वग्निर्वेदेषुद्व्येकवह्नयः॥४२॥
वेदेष्विन्दुत्रियुग्मं च वेदैकेषुत्रियुग्मकम्। वेदेषुत्रीन्दुयुग्मं च वेदत्रीष्विन्दुयुग्मकम्॥४३॥
वेदैकत्रीषुयुग्मं च वेदत्र्येकेषुयुग्मकम्। वेदद्वित्रीषुचन्द्राश्च वेदत्रिद्वीषुचन्द्रमाः॥४४॥
वेदेषुत्रिद्विचन्द्राश्च वेदत्रीषुद्विचन्द्रमाः। वेदद्वीषुत्रिचन्द्राश्च वेदेषुद्वित्रिचन्द्रमाः॥४५॥
एवं प्रोक्तानि खण्डानि चतुर्थार्णोद्भवानि च।

चतुर्थ वर्णोत्पन्न खण्ड—चतुर्थ वर्णोत्पन्न खण्ड हैं—चार-तीन-दो-एक-पाँच, चार-दो-तीन-एक-पाँच, चार-एक-दो-तीन-पाँच, चार-दो-एक-तीन-पाँच, चार-एक-तीन-दो-पाँच, चार-तीन-एक-दो-पाँच, चार-पाँच-एक-दो-तीन, चार-एक-पाँच-दो-तीन, चार-दो-एक-पाँच-तीन, चार-एक-दो-पाँच-तीन, चार-दो-पाँच-एक-तीन, चार-पाँच-दो-एक-तीन, चार-पाँच-एक-तीन-दो, चार-एक-पाँच-तीन-दो, चार-पाँच-तीन-एक-दो, चार-तीन-पाँच-एक-दो, चार-एक-तीन-पाँच-दो, चार-तीन-एक-पाँच-दो, चार-दो-तीन-पाँच-एक, चार-तीन-दो-पाँच-एक, चार-पाँच-तीन-दो-एक, चार-तीन-पाँच-दो-एक, चार-दो-पाँच-तीन-एक, चार-पाँच-दो-तीन-एक। यह चतुर्थ वर्णोद्भूत खण्ड है।

पञ्चमवर्णजानि खण्डानि

पञ्चमार्णोत्थखण्डानि शृणु वक्ष्ये समासतः॥४६॥
इषुवेदत्रियुग्मैकं भूतत्र्यब्धिद्विचन्द्रमाः। भूताब्धिद्वित्रिचन्द्राश्च भूतद्व्यब्धित्रिचन्द्रमाः॥४७॥
भूतत्रिद्व्यब्धिचन्द्राश्च भूतद्वित्र्यब्धिचन्द्रमाः। भूताब्धित्र्येकयुग्मं च भूतत्र्यब्ध्येकयुग्मकम्॥४८॥
भूताब्ध्येकत्रियुग्मं च भूतैकाब्धित्रियुग्मकम्। भूतत्र्येकाब्धियुग्मं च भूतैकत्र्यब्धियुग्मकम्॥४९॥
इष्वब्धीन्दुद्विवह्निश्च भूतैकाब्धिद्विवह्नयः। भूताब्धिद्व्येकवह्निश्च भूतद्व्यब्धीन्दुवह्नयः॥५०॥
भूतद्व्येकाब्धिवह्निश्च भूतैकद्व्यब्धिवह्नयः। भूतैकद्वित्रिवेदाश्च भूतद्व्येकत्रिसागराः॥५१॥
भूतत्रिद्व्येकवेदाश्च भूतद्वित्र्येकसागराः। भूतत्रीन्दुद्विवेदाश्च भूतेन्दुत्रिद्विसागराः॥५२॥
एवं प्रोक्तानि खण्डानि पञ्चमार्णोद्भवानि च। इति।

पञ्चम वर्णोत्थ खण्ड—पञ्चम वर्णोत्थ खण्ड इस प्रकार होता है—पाँच-चार-तीन-दो-एक, पाँच-चार-दो-तीन-एक, पाँच-दो-चार-तीन-एक, पाँच-तीन-दो-चार-एक, पाँच-दो,तीन-चार-एक, पाँच-चार-तीन-एक-दो, पाँच-तीन-चार-

एक-दो, पाँच-चार-एक-तीन-दो, पाँच-एक-चार-तीन-दो, पाँच-तीन-एक-चार-दो, पाँच-एक-तीन-चार-दो, पाँच-चार-एक-दो-तीन, पाँच-एक-चार-दो-तीन, पाँच-चार-दो-एक-तीन, पाँच-दो-चार-एक-तीन, पाँच-दो-एक-चार-तीन, पाँच-एक-दो-चार-तीन, पाँच-एक-दो-तीन-चार, पाँच-दो-एक-तीन-चार, पाँच-तीन-दो-एक-चार, पाँच-दो-तीन-एक-चार, पाँच-एक, तीन-दो-चार—ये पञ्चम वर्णोत्थ खण्ड होते हैं।

षोडशकोष्ठयन्त्रेऽङ्कक्रमः

अत्र षोडशकोष्ठयन्त्रेष्वयं क्रमः—प्रथमार्णोत्थचतुर्विंशतिखण्डानामाद्यखण्डस्य चतुस्त्रिंशद्, द्वितीयस्य षट्त्रिंशत्, तृतीयस्याष्टात्रिंशत्, चतुर्थस्य चत्वारिंशत्, पञ्चमस्य द्विचत्वारिंशत्, षष्ठस्य चतुश्चत्वारिंशदेवं चतुर्विंशति यन्त्राणि द्व्यङ्कवृद्ध्याशीतिपर्यन्तमूह्यानि। ततो द्वितीयार्णोत्थखण्डानामपि द्व्यशीतिमारभ्य द्व्यङ्कवृद्ध्या चतुर्विंशति यन्त्राणि ऊह्यानि। एवमुत्तरोत्तरं फलान्यपि प्राक्प्रोक्तानि ज्ञेयानि। तथा वाग्भवकामराजकूटोत्थखण्डानामपि प्राक्प्रोक्तरीत्याङ्कानि कृत्वा विषमसमयन्त्राणामुद्धारं कृत्वा तत्तत्फलेषु योज्यानि। इति यन्त्रप्रकरणम्।

षोडश कोष्ठ वाले यन्त्रों का क्रम इस प्रकार होता है। प्रथम वर्णोत्थ चौबीस खण्डों के आद्य खण्ड का चौंतीस, द्वितीय का छत्तीस, तृतीय का अड़तीस, चतुर्थ का चालीस, पञ्चम का बयालीस, षष्ठ का चौवालीस—इन प्रकार दो-दो अंक की वृद्धि से अस्सी यन्त्र होते हैं। इसी प्रकार द्वितीय वर्णोत्थ खण्डों में भी बयासी से आरम्भ कर दो-दो अंक की वृद्धि से चौबीस यन्त्र होते हैं। क्रमशः इनके पूर्वकथित फलों को भी जानना चाहिये। साथ ही वाग्भव-कामराज कूटोत्थ खण्डों को भी पूर्वोक्त रीति से जानकर विषम-सम यन्त्रों का उद्धार करके फलों को जानना चाहिये।

श्रीविद्यापद्धतौ प्रातःकृत्यम्

ॐ अथास्मदाराध्यचरणैरुपदिष्टा श्रीविद्यापद्धतिर्लिख्यते। तत्र—

ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय ब्रह्मरन्ध्रे सिताम्बुजे। चिच्चन्द्रमण्डले शुद्धस्फटिकाक्षवराभये ॥१॥
दधानं रक्तया शक्त्याश्लिष्टं वामाङ्कसंस्थया। धारयन्त्योत्पलं दीर्घनेत्रत्रयविभूषितम् ॥२॥
प्रसन्नवदनं शान्तं स्मरेत् तन्नामपूर्वकम्। रक्तशुक्लात्मकं तस्य संस्मृत्य चरणद्वयम् ॥३॥
गुरुं च गुरुपत्नीं च देवं देवीं विभावयेत्। पादुकामन्त्रमुच्चार्य यथास्वस्वगुरूक्तितः ॥४॥

पादुकाविद्याः प्रागेवोक्ताः, तत्तद्विद्यायुक्तैर्गन्धाद्यैरुपचारैः संपूज्य प्रार्थयेत्।

प्रातः प्रभृति सायान्तं सायादि प्रातरन्ततः। यत्करोमि जगद्योने तदस्तु तव पूजनम् ॥५॥

इति प्रार्थ्य स्वगुरुं तन्नामपूर्वकं प्रणम्य नमस्कृत्य मूलादिब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तम्,

सूर्यकोटिप्रतीकाशां चन्द्रकोटिसमप्रभाम्। उद्यद्दिवाकरोद्द्योतां यावच्छ्वासं दृढासनः ॥६॥
ध्यात्वा तदैकरस्येन किञ्चित्कालं सुखी भवेत्।

अब मैं अपने आराध्यचरण श्री प्रगल्लभाचार्य के द्वारा उपदिष्ट श्रीविद्या की पद्धति को लिखता हूँ। ब्राह्म मुहूर्त में उठकर ब्रह्मरन्ध्र के श्वेत कमल में चित् चन्द्रमण्डल में शुद्ध स्फटिक की माला वर-अभय मुद्रा वामाङ्क में स्थित रक्त शक्ति से आलिङ्गित उत्पल लिये, दीर्घ नेत्रत्रय से विभूषित, प्रसन्न वदन, शान्त गुरु का नामपूर्वक स्मरण करे। उनके लाल श्वेत दोनों चरणों का स्मरण करे। गुरु और गुरुपत्नी के देव-देवी होने की भावना करे। अपने गुरु द्वारा कथित पादुका मन्त्र का उच्चारण करे। पादुका विद्या का उच्चारण करते हुये गन्धादि उपचारों से पूजन कर इस प्रकार प्रार्थना करे—

प्रातःप्रभृति सायान्तं सायादि प्रातरन्ततः। यत्करोमि जगद्योने नदस्तु तव पूजनम्।।

इस मन्त्र से प्रार्थना करके उनका नाम लेकर गुरु को प्रणाम-नमस्कार करे। इसके बाद मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक मूल विद्या की इस प्रकार भ्वना करते हुये ध्यान करे—

सूर्यकोटिप्रतीकाशां चन्द्रकोटिसमप्रभाम्। उद्यद्दिवाकरोद्द्योतां यावच्छ्वासं दृढ़ासनः।।

इस प्रकार ध्यान करके उसके साथ एकरसता का अनुभव करते हुये कुछ समय तक सुख का अनुभव करे।

अजपाजपसङ्कल्पः हंसरूपध्यानमजपानिवेदनञ्च

इत्युक्तरीत्या मूलविद्यां विभाव्य, तदाज्ञयाऽजपादिसंकल्पं कुर्यात्। अस्य श्रीअजपानामगायत्रीमन्त्रस्य शिरसि हंसऋषये नमः, मुखे अव्यक्तागायत्रीछन्दसे नमः, हृदि परमहंसाय देवतायै नमः, गुह्ये हंबीजाय नमः, पादयोः सः शक्तये नमः, नाभौ सोहं कीलकाय नमः, इति विन्यस्य मम समस्तपापक्षयार्थमद्याहोरात्रमध्ये श्वासोच्छ्वासरूपेण षट्शताधिकैकविंशतिसहस्रसंख्याकमजपानामगायत्रीजपमहं करिष्ये, इति सङ्कल्प्य मूलेन प्राणायामं करशुद्धिमङ्गुलीन्यासं च कुर्यात्। ह्सां सूर्यात्मने हृदयाय नमः, ह्सीं सोमात्मने शिरसे स्वाहा, ह्सूं निरञ्जनात्मने शिखायै वषट्, हसैं निराभासात्मने कवचाय हुम्, ह्सौं अतनुसूक्ष्मप्रबोधात्मने नेत्रत्रयाय वौषट्, हसः अव्यक्तप्रबोधात्मने अस्त्राय फट्, इति करषडङ्गन्यासं विधाय हंसरूपं विभावयेत्।

आत्मानमग्नीषोमाख्यपक्षयुक्तं शिवात्मकम्। हकारेण बहिर्यान्तं विशन्तं च सकारतः ॥७॥
हंसः सोहमिति स्मृत्वा सोहं व्यञ्जनहीनतः। पक्षौ संहृत्य चात्मानमण्डरूपं विभावयेत् ॥८॥
तारमभ्यस्य परेऽहन्यप्येवं कुर्यात्।

अजपा जप—उपर्युक्त रूप से मूल विद्या की भावना करके उनसे आज्ञा लेकर अजपा जप का सङ्कल्प करे। इस अजपा नामक गायत्री मन्त्र के ऋषि हंस, छन्द अव्यक्त गायत्री एवं देवता परमहंस हैं। समस्त पापक्षय के लिये इसका विनियोग किया जाता है। तदनन्तर इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि हंसऋषये नमः, मुखे अव्यक्तगायत्रीछन्दसे नमः, हृदि परमहंसाय देवतायै नमः, गुह्ये हं बीजाय नमः, पादयोः सः शक्तये नमः, नाभौ सोहं कीलकाय नमः। इसके बाद श्वासों की संख्या के अनुरूप इक्कीस हजार छः सौ जप करने का संकल्प करे। तब मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके करशुद्धि कर अंगुलिन्यास करे। हृदयादि न्यास इस प्रकार करे—ह्सां सूर्यात्मने हृदयाय नमः, ह्सीं सोमात्मने शिरसे स्वाहा, ह्सूं निरञ्जनात्मने शिखायै वषट्, ह्सैं निराभासात्मने कवचाय हुम्, ह्सौं अतनुसूक्ष्मप्रबोधात्मने नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्सः अव्यक्तप्रबोधात्मने अस्त्राय फट्। इसी प्रकार षडङ्ग करन्यास करके हंसरूप की भावना करे। शिवात्मक आत्मा के अग्नि और चन्द्र दो पंख हैं। यह हकार से बाहर जाता है और सकार से भीतर आता है। हंसः एवं सोहं का स्मरण करके सोहं व्यञ्जनहीन पंख को सटाकर स्वयं को अण्डरूप समझे। ॐ का अभ्यास करते हुये दूसरे दिन भी ऐसा ही करे।

भूगुरुप्रार्थनापूर्वं मन्त्रस्नानं विभूतिधारणञ्च

ततः पूर्वेद्युरहोरात्रमध्ये जातश्वासोच्छ्वासरूपषट्शताधिकैकविंशतिस-हस्रसंख्याकमजपानामगायत्रीजपं ब्रह्मरन्ध्रे सहस्रदलकमलकर्णिकामध्यवर्तिने श्रीगुरवे निवेदयामीति निवेद्य, स्वस्थाने गुरुमुद्वास्य बहिर्गत्वा यथाविधि शौचाचमनदन्तधावनं च निर्वर्त्य, उत्तराभिमुखो भूत्वा भूमिं गुरुं चाभ्यां मन्त्राभ्यां प्रार्थयेत्।

धारणं पोषणं त्वत्तो भूतानां देवि सर्वदा। तेन सत्येन मां पाहि पाशान्मोचय धारुणि ॥
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्। तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

एताभ्यां नमस्कृत्य वैदिकस्नानं विधाय मन्त्रस्नानं कुर्यात्। नाभिमात्रे जले स्थित्वा तीर्थं सूर्यमण्डलाद-ङ्कुशमुद्रया 'ऐं हृदयाय नमः' इति मन्त्रेणाकृष्य तीर्थे क्षिप्त्वा, शक्तिबीजं समुच्चरन् योनिमुद्रया संस्पृश्य पाणिभ्यां संछाद्यामृतेश्वरीं सप्तशो जपित्वा ध्यात्वा स्नायात्। तद्यथा 'ऐंह्रींक्लीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सांजूंजूंसः अमृतेश्वर्यै स्वाहा'

अमृतामृतरश्म्योघसंतर्पितचराचराम्। भवानि भवशान्त्यै त्वां भावयाम्यमृतेश्वरीम् ॥९॥
अन्तःशक्तिमभिध्यायन्नाधाराद् ब्रह्मरन्ध्रगाम्। तस्याः पीयूषवर्षेण स्नानमन्तः समाचरेत् ॥१०॥

इत्युक्तरीत्या ध्यात्वा निमज्ज्य मूलेन शिरसि पार्श्वयोः संप्रोक्ष्य मूलं सप्तवारमुच्चार्य, सप्तधातुस्थकल्मषं

शोधयामीति धिया सप्तवारमुन्मृज्य, कुम्भमुद्रया शिरसि मूलेन त्रिवारमभिषिच्य वशिन्याद्याभिरभिषिच्य संपत्कर्या चाभिषिच्य, तीरमागत्य बालया प्रोक्षिते धौते वाससी परिधायाचम्य, विभूतिं वामहस्ते निधाय दक्षहस्तेन पिधाय, जातवेदसेन० गायत्र्या० त्र्यम्बकेन० अग्निरिति० मानस्तोके० त्र्यायुषं जमदग्ने० इति षड्भि:। 'अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं ह वा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि भस्मानि भवन्ति'। ततो मूलविद्यया सप्तवारमभिमन्त्र्य, ईशान इति शिरसि। तत्पुरुषायेति वक्त्रे। अघोरेभ्य इति हृदये। वामदेवायेति गुह्ये। सद्योजातमिति पादयो:। श्रीविद्यया शिरसि। 'ऐं वद वद वाग्वादिनि ऐंक्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय क्लेदय महाक्षोभं कुरु कुरु क्लीं सौः मोक्षं कुरु हसौं:' अनया दीपिन्या मुखे। 'ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि देवदेवि सर्वभूतसंहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ह्रींह्रींहूं ररररररर ज्वालामालिनि हुं फट् स्वाहा' अनया वक्षसि। 'ॐ ह्रीं वह्निवासिन्यै नम:' इति नाभौ। 'ॐ सहस्रार हुं फट्' इत्यूर्वो:। 'ॐश्लीपशु हुं फट्' इति जङ्घयो:। 'ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर घोरतर तनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बन्धय बन्धय घातय घातय हुं फट्' इति पादयो:। 'ॐह्रीं वैष्णव्यै नम:' इति हृदये। अघोरविद्यया पृष्ठे। मातृकया सर्वसंधिषु। 'उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्' इति बाह्वो:। ॐक्ष्रौं नमो भगवते नृसिंहाय ज्वालामालिने दीप्तदंष्ट्रायाग्निनेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय सर्वभूतविनाशाय सर्वज्वरविनाशाय दह दह रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा। अनया ज्वालानृसिंहविद्यया च बाह्वो:। 'ॐ उत्तिष्ठ पुरुषाधार पिङ्गललोहिताक्ष देहि मे ददापय स्वाहा'। अनया वडवानलभैरव्या सर्वाङ्गे (भस्म) स्नानमाचरेत्।

एता एव महाविद्या विभूतेरभिमन्त्रणे। कथिताः सर्वरक्षार्थं सर्वापन्निवहापहा: ।।११।।
इति ज्ञात्वा विधानेन भस्मस्नानं समाचरेत्। सर्वाङ्गेष्वथ वा कुर्यात् केवलं मूलविद्यया ।।१२।।

इसके बाद पूर्व दिन-रात में गत श्वास-उच्छ्वास रूप इक्कीस हजार छ: सौ अजपा गायत्री जप को ब्रह्मरन्ध्र में सहस्र दल कमल कर्णिका-मध्यवर्ती श्री गुरु को निवेदित करे। गुरु का उद्वासन करके अपने स्थान से बाहर जाकर शौचाचमन एवं दन्तधावन आदि करे। तदनन्तर उत्तरमुख होकर भूमि एवं गुरु की क्रमश: इस प्रकार प्रार्थना करे—

धारणं पोषणं त्वत्तो भूतानां देवि सर्वदा। तेन सत्येन मां पाहि पाशान्मोचय धारुणि।।
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्। तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नम:।।

इसके बाद वैदिक स्नान करके मन्त्र स्नान करे। नाभि तक जल में खड़े होकर सूर्यमण्डल से अंकुश मुद्रा से तीर्थ का आवाहन करे। 'ऐं हृदयाय नम:' मन्त्र से आकर्षित करके उसे जल में मिला दे। ह्रीं कहकर योनिमुद्रा से स्पर्श करे। हाथ से छादन करे। अमृतेश्वरी विद्या का सात जप करे। अमृतेश्वरी विद्या है—ऐं ह्रीं क्लीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावण स्रावय सां जूं जूं स: अमृतेश्वर्यै स्वाहा। जप करने के पश्चात् अमृतेश्वरी का इस प्रकार ध्यान करे—

अमृतामृतरश्म्योघसन्ततर्पितचराचराम्। भवानि भवशान्त्यै त्वां भावयाम्यमृतेश्वरीम्।।

तदनन्तर मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक स्थित अन्त:शक्ति की अमृतवर्षा में स्नान करके मूल मन्त्र से शिर एवं पार्श्वों को पोंछे। पुन: मूल मन्त्र का उच्चारण सात बार करते हुये प्रत्येक मन्त्र के साथ कहे—'सप्तधातुस्थकल्मषं शोधयामि'। इस बुद्धि से सात बार मार्जन करे। कुम्भ मुद्रा से शिर पर मूल मन्त्र से तीन बार अभिषेक करे। वशिनी आदि का अभिषिञ्चन करे। सम्पत्करी का भी अभिषिञ्चन करे। तट पर आकर बाला मन्त्र से धोती का प्रोक्षण करके पहनकर आचमन करके बाँयें हाथ में विभूति लेकर दाँयें हाथ से ढककर जातवेदसे, गायत्री, त्र्यम्बक, अग्निरिति, मानस्तोके, त्र्यायुषं, जमदग्ने—इन छ: मन्त्रों से अभिमन्त्रित करे। तब कहे कि—अग्निरिति भस्म, वायुरिति भस्म, जलमिति भस्म, स्थलमिति भस्म, व्योमेति भस्म, सर्वं ह वा इदं भस्म। मन एतानि चक्षूंषि भस्मानि भवन्ति। तब मूल विद्या के सात जप से उसे अभिमन्त्रित करे। तदनन्तर ईशान मन्त्र से शिर पर,

तत्पुरुषाय से मुख पर, अघोरेभ्यो से हृदय पर, वामदेवाय से गुह्य पर, सद्योजातं से पैरों पर भस्म लगावे। श्रीविद्या से शिर पर लगावे। ऐं वद वद वाग्वादिनि ऐं क्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय क्लेदय महाक्षोभं कुरु कुरु क्लीं सौः मोक्षं कुरु ह्सौः— इस दीपिनी मन्त्र से मुख में भस्म बनावे। 'ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि देवदेवि सर्वभूतसंहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ह्रीं ह्रीं हूं रररररररर ज्वालामालिनि हूं फट् स्वाहा' से वक्षःस्थल पर लगावे। 'ॐ ह्रीं वह्निवासिन्यै नमः' से नाभि पर लगावे। 'ॐ सहस्रार हुं फट्' से ऊरुओं पर लगावे। 'ॐ श्लीं पशु हुं फट्' से जंघों पर लगावे। 'ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर घोरतर तनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बन्धय बन्धय घातय घातय हुं फट्' से पैरों पर भस्म लगावे। इसी प्रकार ॐ ह्रीं वैष्णव्यै नमः से हृदय में, अघोर विद्या से पीठ में, मातृकाओं से सभी सन्धियों में, 'उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्' से बाहुओं में, 'ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नृसिंहाय ज्वालामालिने दीप्तदंष्ट्राग्निनेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय सर्वभूतविनाशाय सर्वज्वरविनाशाय दह दह रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा' से भी बाहुओं में एवं 'ॐ उत्तिष्ठ पुरुषाधार पिङ्गललोहिताक्ष देहि मे ददापय स्वाहा' इस वड़वानल भैरव मन्त्र से सारे अंगों में भस्म लगावे।

विभूति को अभिमन्त्रित करने वाली ये महाविद्यायें सब प्रकार से रक्षा करने वाली एवं समस्त पापों की विनाशिका कही गई हैं। इसे जानकर विधिपूर्वक भस्म-स्नान करना चाहिये अथवा केवल मूल विद्या से सारे शरीर में भस्म लगाना चाहिये।

सन्ध्यावदनं तर्पणविधिर्विशेषाचमनञ्च

एवं भस्मधारणं विधाय संध्यावन्दनं कुर्यात्। तद्यथा—व्यस्तसमस्तमूलविद्यया बीजसहितैः स्वाहान्तैरात्म-तत्त्वादिभिर्जलं पीत्वा द्विरुन्मृज्य सकृत् स्पृष्ट्वा नासिके नयने शिरो हृदयं दक्षिणं कर्णं संस्पृशेत्, अयमाचमः। एवमाचम्य षोडशस्वरैः सबिन्दुभिर्मार्जयित्वा कादिमान्तैः स्पर्शवर्णैर्मूलविद्यासहितैर्जलं पीत्वा यादिवर्णैर्दशभिः पुनर्मार्जयित्वोत्थाय 'ऐं त्रिपुरादेव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौः तन्नः क्लिन्ना प्रचोदयात्' इति गायत्र्या त्रिरर्घ्यमुत्क्षिप्याचम्य,

यथाशक्ति जपेदेनां गायत्रीं त्रिपुराह्वयाम्। प्रातः संध्याविधिं वक्ष्ये मूलाधारस्थपङ्कजे ॥१३॥
वाग्भवं काञ्चनाकारं मध्ये बीजमनुस्मरेत्। दक्षनासापुटपथा विनिःसार्यार्कमण्डले ॥१४॥
आवाह्य देवतां सन्ध्यां कालरूपां विभावयेत्। पीतालङ्कारवसनां पुस्तकाक्षस्रगुज्ज्वलाम् ॥१५॥
एवं ध्यात्वा जपित्वा च गायत्रीं प्रणमेद्गुरुम्। वागीश्वरीं नमस्कृत्य सन्ध्यां स्वस्थानमानयेत् ॥१६॥
अथ मध्याह्नसंध्यायां मणिपूरे जपारुणम्। कामराजं हृदि ध्यात्वा बहिश्चेत् सूर्यमण्डले ॥१७॥
वराभययुतां रक्तवर्णां यौवनमास्थिताम्। कामेश्वरीं हृदि ध्यात्वा पुनः स्वस्थानमानयेत् ॥१८॥
अथ सायन्तने काले भ्रूमध्ये चन्द्रसन्निभम्। तार्तीयं भावयित्वाथ बाह्येऽप्यावाह्य पूर्ववत् ॥१९॥
भैरवीं श्वेतवर्णाभां वृद्धां मुकुटहारिणीम्। पाशाङ्कुशधरां ध्यात्वा पुनः स्वस्थानमानयेत् ॥२०॥
अथार्धरात्रसमये ब्रह्मरन्ध्रे महाप्रभम्। तुरीयं बीजमुच्चार्य ध्यात्वाकाशे पराह्वये ॥२१॥
चिच्चन्द्रमण्डले देवीं ध्यात्वा त्रितयरूपिणीम्। पाशाङ्कुशधनुर्बाणधारिणीं मूलविद्यया ॥२२॥
समाराध्य च चिद्रूपे स्वस्थाने च लयं नयेत्।

एवमुक्तकालचतुष्टये मार्जनपूर्वकमर्घ्यदानादिगायत्रीजपं कुर्यात्। संध्यालोपे द्विगुणं जपमाचरेत्।

जपेन दुरितं हन्ति सर्वं तत्परमास्तिकः। इति सन्ध्याविधिं कृत्वा ततस्तर्पणमाचरेत् ॥२३॥

यथा—जलान्तिके समुपविश्य प्राङ्मुख उदङ्मुखो वाचम्योपस्थानसहस्राक्षर्योपस्थाय, उपस्थानसहस्राक्षरी-मग्रे (३६ श्वा०) वक्ष्यामः। ॐऐंह्रींश्रीं वसुभ्यः स्वाहा नमः सूर्यायामितरुद्रेभ्यः, ४ँ रुद्रेभ्यः स्वाहा नमः सूर्यायामितरुद्रेभ्यः, ४ँ आदित्येभ्यः स्वाहा नमः सूर्यायामितरुद्रेभ्यः, ४ँ आङ्गिरसेभ्यः स्वाहा नमः सूर्या०, ४ँ ब्रह्मणे स्वाहा नमः

सूर्या०, ४ँ विष्णवे स्वाहा नमः सूर्या०, ४ँ रुद्राय स्वाहा नमः सूर्या०, ४ँ ग्रहेभ्यः स्वाहा नमः सूर्या०, ४ँ नक्षत्रेभ्यः स्वाहा नमः सूर्यायामितरुद्रेभ्यः, ४ँ राशिभ्यः स्वाहा नमः सू०, ४ँ योगेभ्यः स्वाहा नमः सू०, ४ँ करणेभ्यः स्वाहा नमः सू०, एतांश्चतुर्थीवह्निजायान्तान् देवतीर्थेन तर्पयेत्। ४ँ ऋषिभ्यो नमः, ४ँ मरीचये नमः, ४ँ अत्रये०, ४ँ पुलहाय०, ४ँ पुलस्त्याय०, ४ँ क्रतवे०, ४ँ वसिष्ठाय०, ४ँ भरद्वाजाय०, ४ँ गौतमाय०, ४ँ अगस्त्याय०, ४ँ लोपामुद्रायै०, ४ँ अहल्यायै०, ४ँ अनुसूयायै०, चतुर्थ्यन्तं नमोन्तं च प्रत्येकं द्विर्द्विस्तर्पयेत्। प्राचीनावीती। ४ँ अग्निष्वात्तेभ्यः स्वधा नमस्तर्पयामि, ४ँ बर्हिष्षद्भ्यः, ४ँ पितृभ्यः, पित्रादिस्वपितृक्रमं तर्पयेत्। 'त्रिः स्वधाहृदयान्तांश्च पितृतीर्थेन तर्पयेत्'। ततः ४ँ भैरवास्तृप्यन्तु, ४ँ क्षेत्रपालास्तृप्यन्तु, ४ँ कुमार्यस्तृप्यन्तु, ४ँ योगिनीगणास्तृप्यन्तु, ४ँ सर्वभूतानि तृप्यन्तु, इति तर्पयित्वा, ॐह्रांह्रींसः सूर्याय नमः, इति।

सूर्यायार्घ्यत्रयं दत्वा मूलबीजचतुष्टयैः। चतुस्तत्त्वान्तिकैः शोधयाम्यन्तैः सलिलं पिबेत् ॥२४॥
चतुर्विशेषाचमोऽयं देहतत्त्वविशोधकः।

भस्मधारण के बाद सन्ध्यावन्दन करे। जैसे—बीजसहित मूल विद्या के अन्त में स्वाहा लगाकर आत्मतत्त्वादि का शोधन करे। नासिका नयन शिर हृदय दाँयें कान का स्पर्श करे। इस प्रकार के आचमन के बाद सानुस्वार सोलह स्वरों से मार्जन करे एवं क से म तक स्पर्श वर्णों के साथ मूल विद्या से जलपान करे। य से ह तक के दश वर्णों से पुनः मार्जन करे। तदनन्तर उठकर 'ऐं त्रिपुरादेव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौः तन्नः क्लिन्ना प्रचोदयात्'—इस गायत्री से तीन बार अर्घ्यदान करे।

तदनन्तर आचमन कर उपर्युक्त त्रिपुरा गायत्री का यथाशक्ति जप करे। प्रातःसन्ध्या में मूलाधार स्थित पद्म के मध्य में स्वर्णाभ स्वर्णाकार वाग्भव बीज का स्मरण करे। दक्ष नासापुट के मार्ग से उसे निकाल कर सूर्यमण्डल में देवता का आवाहन करके सन्ध्या को कालरूप समझे। पीत वर्ण के आभूषण एवं वस्त्रों को धारण की हुई एवं हाथों में पुस्तक तथा माला धारण की हुई सन्ध्या का ध्यान करके गायत्री का जप करके गुरु को प्रणाम करे। तदनन्तर वागीश्वरी को नमस्कार करके सन्ध्या को अपने स्थान में ले आये।

मध्याह्न सन्ध्या में मणिपूर में अड़हुल के समान लाल कामराज कूट का ध्यान हृदय में करके बाहर निकाल कर सूर्यमण्डल में वर एवं अभय से युक्त, रक्त वर्ण वाली, युवावस्था में स्थित कामेश्वरी का हृदय में ध्यान करके सन्ध्या को पुनः अपने स्थान में ले आये।

सायंसन्ध्या में भ्रूमध्यस्थ आज्ञा चक्र में चन्द्राभ तृतीय कूट का स्मरण करे। बाहर पूर्ववत् आवाहन करे। तदनन्तर श्वेत वर्ण वाली, वृद्धावस्था को प्राप्त, मुकुट का हरण करने वाली तथा पाश-अंकुश धारण करने वाली भैरवी का ध्यान के बाद सन्ध्या को अपने स्थान में ले आये।

तुरीय सन्ध्या में आधी रात में ब्रह्मरन्ध्र में तुरीय बीज का उच्चारण करके पराकाश में देवता का आवाहन करे। चिच्चन्द्रमण्डल में पाश-अंकुश-धनुष-बाण धारण करने वाली देवी के तीनों रूपों का ध्यान करे एवं मूल विद्या से आराधन करके अपने स्थान में लय कर दे। इस प्रकार चारो सन्ध्याओं में मार्जन पूर्वक अर्घ्यदान करके गायत्री का जप करे। सन्ध्यालोप होने पर दुगुना जप करे।

जप से समस्त पापों का नाश होता है। इसलिये सभी आस्तिक इसमें लगे रहते हैं। इस प्रकार की सन्ध्या के बाद तर्पण करना चाहिये। एतदर्थ जल के निकट पूर्वमुख या उत्तरमुख बैठकर आचमन करे। उपस्थान सहस्राक्षरी से उपस्थान करे। इसके बाद मूलोक्त मन्त्रों से विधिपूर्वक तर्पण करना चाहिये।

तर्पण के पश्चात् सूर्य को तीन अर्घ्यदान करे। तब इन मन्त्रों को पढ़ते हुये जलपान करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आत्मतत्त्वं शोधयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं विद्यातत्त्वं शोध्यामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शिवतत्त्वं शोधयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वतत्त्वं शोधयामि। ये चार विशेष आचमन देहतत्त्व के शोधक कहे गये हैं।

श्रीचक्रावरणदेवतातर्पणक्रमः

ततः श्रीचक्रावरणदेवतातर्पणं कुर्यात्। तद्यथा—

सकलीकृत्य तां देवीं चित्सुधारसरूपिणीम्। पञ्चशक्तिचतुर्वह्निद्विपद्मत्रिमहीतले ॥२५॥
महाचक्रे सावरणां पूजामार्गेण वारिणि। विभाव्य तर्पयेदद्भिः सुधारूपाभिरन्वहम्॥२६॥
यद्वा भूगृहरेखादिनवयोन्यां प्रतर्पयेत्। पीठदेवीं यथाशक्ति साङ्गां नीत्वा गुरुक्रमम्॥२७॥
सकृत्समयविद्याश्च दत्त्वा पञ्चोपचारकम्। ततः समाहितो विद्यां जपेत् तर्पणसंख्यया॥२८॥
निष्कलीकृत्य हृदये देवीमुद्वास्य तत्कृताम्। सकलीकृत्य संहृत्य तीर्थं मार्तण्डमण्डले॥२९॥
कृत्वा षडङ्गमुत्तिष्ठेदस्त्रपञ्जरमध्यतः। न बाह्यान् भावमानस्तु न स्पृशन् नावलोकयन्॥३०॥

यागगृहं गच्छेदिति शेषः। अत्र पञ्चशक्तीत्यादि सृष्टिक्रमेण स्थितिरूपेण च तर्पणमुक्तम्। यद्वेत्यादिना संहारक्रमेणोक्तम्। अत्र येन क्रमेण चक्रपूजा क्रियते तेनैव क्रमेण वक्ष्यमाणावरणदेवताः सतर्प्य यथोक्तसंख्यं मूलदेवीं तर्पयेत्। इति संध्यावन्दनविधिः।

श्रीचक्रावरण देवता का तर्पण-क्रम—इससे बाद श्रीचक्र के आवरण देवताओं का तर्पण करे; जैसे—पाँच शक्ति, चार वह्नि, दो पद्म एवं तीन भूतल पर महाचक्र में स्थित चित्सुधारूपिणी उस देवी का आवरणसहित सकलीकरण करके पूजा की विधि से जल में अमृत की भावना करते हुये उस जल से प्रतिदिन तर्पण करे। अथवा भूपुर से नवयोनि तक संहारक्रम से तर्पण करे। अंगों सहित पीठदेवी एवं गुरुक्रम—सभी का पञ्चोपचार से पूजन करे। तब एकाग्रता से तर्पणसंख्या के बराबर विद्या का जप करे। सबों को निष्कलीकृत करके हृदय में देवी का उद्वासन करे। सकलीकृत तीर्थों का संहार मार्तण्डमण्डल में करे। षडङ्ग न्यास करके अस्त्रपञ्जरमध्य से उठकर न स्वयं के बाहर जाने की भावना करे, न बाहर का स्पर्श करे और न ही बाहर देखे। इस प्रकार सीधे यागगृह में जाय। यहाँ पाँच शक्तियों का तर्पण स्थिति-सृष्टि क्रम से करने का विधान है अथवा वक्ष्यमाण आवरण देवता का जिस क्रम से चक्र का पूजन किया जाता है, उसी क्रम से विहित आवरण देवताओं का तर्पण करके यथोक्त संख्या में मूल देवी का तर्पण किया जाता है।

मातृकाम्भोजे आधारशक्तिपूजादि

अथ शुचौ देशे विधिप्रोक्ते मृद्वासने ऐंबीजकर्णिकं स्वरयुग्मकिञ्जल्कं कचटतपयशक्षवर्गाष्टकदलं दिक्षु ठंबीजसहितं मातृकाम्बुजं ध्यात्वा, तत्र आधारशक्तिकमलासनाय नमः, इति पुष्पाक्षतादिभिरभ्यर्च्य, प्राङ्मुख उदङ्मुखो वोपविश्य भूमिं प्रार्थयेत्,

पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥३१॥

इति भूमिं प्रार्थ्य स्वशिरसि मातृकाम्बुजं ध्यात्वा दीपनाथं पूजयेत्। तद्यथा—वाराणस्यां ४ँ वं मेद आत्मकखड्गीशाय वर्णेशानन्दनाथायातिरक्तवर्णाय रक्तद्वादशशक्तियुक्तायास्मिन् क्षेत्रे इमां पूजां गृह्ण गृह्ण स्वाहा, इति दीपनाथमभ्यर्च्य गुर्वादिवन्दनं कुर्यात्। तद्यथा—हस्ताभ्यामञ्जलिं विधाय ४ँ शिवादिगुरुभ्यो नमः इति दक्षवामपार्श्वोर्ध्वाधोभागेषु विन्यस्य, अखण्डमण्डलाकारं० इति, चरणं पवित्रं० इत्यादिवैदिकैर्मन्त्रैर्गुरुपादुका-विद्यामुच्चार्य, अमुकानन्दनाथपादुकां पूजयामीति श्रीगुरुं संपूज्य,

अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भुवि संस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥३२॥

ॐश्लींपशु हुं फट् इति पाशुपतास्त्रेण नाराचमुद्रया विघ्नानुत्सार्य, सिद्धार्थाक्षतकुसुमैः पातालभून-भोलीनान् विघ्नान् क्रमेण वामपादपार्ष्णिघात-करास्फोट-समुदञ्चितवक्त्रैरुत्सार्य, उक्तपाशुपतास्त्रेण वामहस्ततलं द्विधा,

मणिबन्धं समारभ्य संस्पृष्टं दक्षपाणिना। प्रमृज्य दक्षिणं पाणिं सकृदेवोक्तमार्गतः॥३३॥

एवं षट् करशोधनं कृत्वा आनाभेरापादं हृदो नाभिपर्यन्तं शिरसो हृत्पर्यन्तं तेनैवास्त्रेण व्यापयित्वा

अन्तस्तालत्रयं बहिस्तालत्रयं कृत्वा दशदिग्बन्धनं विधाय, रं अग्निप्राकाराय नमः सुदर्शनाघोरास्त्राभ्यां पूर्वोक्ताभ्यां वाद्भिरेवाग्निप्राकारत्रयं कृत्वात्मरक्षां कुर्यात्।

तदनन्तर पवित्र स्थान में विधि-प्रोक्त मृदुल आसन पर ऐं बीज कर्णिका में, स्वरयुग्म किंजल्क में, कचटतपयश-क्षवर्ग अष्टपत्रों में एवं दिशाओं में ठं बीजसहित मातृका पद्म का ध्यान करके 'आधारशक्तिकमलासनाय नम:' से पुष्पाक्षतादि से आसन की पूजा करके उसपर पूर्वमुख या उत्तरमुख बैठकर इस प्रकार भूमि की प्रार्थना करे—

पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्।।

इस प्रकार भूमि की प्रार्थना के बाद अपने शिर पर मातृकाम्बुज का ध्यान करके 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं मेद आत्मक-खड्गीशाय वर्णेशानन्दनाथायातिरक्तवर्णाय रक्तद्वादशशक्तियुक्ताय अस्मिन् क्षेत्रे इमां पूजां गृह्ण गृह्ण स्वाहा' से दीपनाथ की पूजा करने के बाद विहित रीति से गुरु आदि की वन्दना करे। तदनन्तर निम्न मन्त्र से विघ्नोत्सारण करे—

अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भुवि संस्थिता:। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

उक्त मन्त्र का उच्चारण कर 'ॐ श्लीं पशुं हुं फट्'—इस पाशुपतास्त्र मन्त्र से नाराच मुद्रा दिखाते हुये विघ्नों का उत्सारण करे। तदनन्तर सरसो अक्षत फूल लेकर पातालभूत विघ्नों का उत्सारण क्रमश: बाँयीं एँड़ी के तीन आघात से चुटकी बजाकर क्रोध मुद्रा से करे। उक्त पाशुपतास्त्र से बाँयें करतल को दो बार मणिबन्ध से प्रारम्भ करके दाँयें हाथ से मले। इस प्रकार छ: करशोधन करके नाभि से पैरों तक, हृदय से नाभिपर्यन्त और हृदय से शिर तक स्पर्श करे। पूर्वोक्त प्रकार से अग्नि प्राकार बनाकर आत्मरक्षा करे।

गणेश-पञ्चमी-दुर्गा-विघ्न-शरभ-अघोर-सुदर्शनविद्याः

तदुक्तं लक्ष्मीकौलार्णवे—

त्रिरग्निवेष्टनं कृत्वा गणेशं पञ्चमीं ततः। दुर्गां विघ्नं च शरभमघोरं च सुदर्शनम्॥१॥

एताः समयविद्याश्च जपेत् प्रत्यूहशान्तये। एवं रक्षां पुरा कृत्वा भूतशुद्धिमथाचरेत्॥२॥ इति।

ॐश्रींह्रींक्लींग्लौंगं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वश्यमानय स्वाहा, (१)। ऐंग्लौंॐ नमो भगवति वार्तालि वार्तालि वाराहि वाराहि वराहमुखि वराहमुखि अन्धे अन्धिन्यै नमः रुन्धे रुन्धिन्यै नमः जम्भे जम्भिन्यै नमः मोहे मोहिन्यै नमः स्तम्भे स्तम्भिन्यै नमः सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरु कुरु शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ठः ठः ठः ठः ठः हुं फट् स्वाहा ग्लौं ऐं, (२)। उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं वा तन्मे भगवति शमय स्वाहा, (३)। ॐ ह्रीं वां वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं, (४)। ओं ह्रीं ह्रौं नमः शिवाय महाशरभाय, (५)। ॐ ह्रीं ह्रौं नमः शिवायै महाशरभ्यै, (६)। अघोरास्त्र-सुदर्शनास्त्रे प्रागुक्ते, (७-८)। समयविद्यास्तु प्रागेवोक्ता अग्रेऽपि वक्ष्यामः। एता विद्याः शांभवपाठत्वेन पठित्वा आत्मरक्षां कृत्वा भूतशुद्धिं कुर्यात्।

लक्ष्मीकौलार्णव में कहा गया है कि तीन अग्निवेष्टन करके गणेश, पञ्चमी, दुर्गा, विघ्न, शरभ, अघोर, सुदर्शन—इन समयविद्याओं का जप प्रत्यूह-शान्ति के लिये करना चाहिये इस प्रकार रक्षाविधान के बाद भूतशुद्धि करे। प्रत्यूह-शान्ति के लिये जप मन्त्र इस प्रकार हैं—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। यह गणेश मन्त्र है। ऐं ग्लौं ॐ नमो भगवति वार्तालि वार्तालि वाराहि वाराहि वराहमुखि वराहमुखि अन्धे अन्धिन्यै नम: रुन्धे रुन्धिन्यै नम: जम्मे जम्भिन्यै नम: मोहे मोहिन्यै नम: स्तम्भे स्तम्भिन्यै नम: सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाषिचत्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरु कुरु शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ठ: ठ: ठ: ठ: ठ: हु फट् स्वाहा ग्लौं ऐं—यह पञ्चमी का मन्त्र है। उत्तिष्ठ पुरुषि किं स्वपिषि भयं में समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं वा तन्मे भगवति शमय स्वाहा—यह दुर्गा का मन्त्र है। ॐ ह्रीं वां वटुकाय अपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं—यह वटुकभैरव का मन्त्र है। ॐ ह्रीं ह्रौं नम: शिवाय महाशरभाय—यह शरभ मन्त्र है एवं ॐ ह्रीं

ह्रौं नम: शिवायै महाशरभ्यै—यह शरभी का मन्त्र है। अघोरास्त्र एवं सुदर्शनास्त्र मन्त्र पूर्व में पठित हैं। इन विद्याओं का शाम्भव क्रम से पाठ करके आत्मरक्षा करने के पश्चात् भूतशुद्धि करनी चाहिये।

भूतशुद्धिप्रकार:

तद्यथा—कुम्भकयोगेन प्रणवद्वादशावृत्त्या नाडीशुद्धिं विधाय हृदिस्थं चैतन्यं हंस इति मन्त्रेण संघट्टमुद्रयोर्ध्वमुन्नीय, द्वादशान्तस्थिते परे तेजसि संयोज्यास्त्रेण रक्षां कृत्वा भूतानि शोधयेत्। पादादिजानुपर्यन्तं पृथिवीमण्डलं पीतवर्णं चतुष्कोणं वज्रलांछितं ब्रह्मदैवत्यं ध्यात्वा, लमिति बीजेन संशोध्याप्सु लयं नयेत्। जान्वादिनाभिपर्यन्तं जलमण्डलं धवलवर्णं धनुराकारं महोत्पललाञ्छितं विष्णुदैवस्यं ध्यात्वा, वमिति बीजेन संशोध्य तेजसि लयं नयेत्। नाभ्यादिवक्ष:पर्यन्तं तेजोमण्डलं रक्तवर्णं त्रिकोणाकारं स्वस्तिकलांछितं रुद्रदैवत्यं ध्यात्वा, रमिति बीजेन संशोध्य वायौ लयं नयेत्। हृदयादिभ्रूयुगान्तं वायुमण्डलं कृष्णवर्णं षट्कोणाकारं षड्बिन्दुलाञ्छितमीश्वरदैवत्यं ध्यात्वा, यमिति बीजेन संशोध्याकाशे लयं नयेत्। भ्रूयुगादिब्रह्मरन्ध्रान्तमाकाशमण्डलं नीलवर्णं वर्तुलाकारं नादरेखाङ्कितं सदाशिवदैवत्यं ध्यात्वा, हमिति बीजेन संशोध्य परशिवे लयं नयेत्।

षष्टिसंख्यां समारभ्य द्वादश द्वादश न्यसेत्। पृथिव्यादीनि भूतानि क्रमेण स्वस्वकारणे ॥३॥

अस्यार्थ:—भूतानां लयक्रमे पृथिवीशोधनं तद्बीजं षष्टिवारं जपेत्, तथोत्तरोत्तरं द्वादश द्वादश हित्वा जपेदित्यर्थ:। उत्पत्तिक्रमे तथैवाकाशबीजं षष्टिसंख्यं जपेत्, उत्तरोत्तरं द्वादश द्वादश हित्वा जपेत्। अयं क्रम: प्राणायाममयोगेनेति केचित्। एवं पञ्चमहाभूतानि परे तत्त्वे एकीभूतानि विचिन्त्य, प्राणायाममयोगेन योनिमुद्रां बद्ध्वा कुलकुण्डलिनीमुत्थाप्य षट् सरोजानि भित्त्वा जीवप्रदीपस्नेहरूपिणीं तां मातृकासमुदायेन सह परे तेजसि संयोज्य शोषणादि समाचरेत्। अत्र मातृकां तु संहारक्रमेण क्षकारं ळकारे, ळकारं हकारे, हकारं सकारे, एवमाकारमकारे विलाप्य तमकारं नवनीतनिभं कुण्डलिनीद्वारा ब्रह्मरन्ध्रं प्रापयेदित्यर्थ:।

भूतशुद्धि में कुम्भक योग से प्रणव के बारह जप से नाड़ी की शुद्धि करके हृदयस्थ चैतन्य हंस मन्त्र से संघट्ट मुद्रा से ऊपर ले आकर द्वादशान्त में स्थित परतेज से योजित करके अस्त्रमन्त्र से रक्षा करके भूतशुद्धि करे। पैर से जानु तक पृथ्वी मण्डल का पीत वर्ण, चतुष्कोण, वज्रलांछित ब्रह्मदैवत्य के रूप में ध्यान करके लंबीज से शोधन करके जल में विलीन करे। जानु से नाभि तक जलमण्डल का श्वेत वर्ण, धनुषाकार, महोत्पल, लांछित-विष्णु दैवत्य के रूप में ध्यान करके वं बीज से शोधन करके तेज में विलीन कर दे। नाभि से वक्ष तक तेजोमण्डल का लाल रंग, त्रिकोणाकार, स्वस्तिक लांछित रुद्रदैवत्य के रूप में ध्यान करके रं बीज से शोधन करने के पश्चात् वायु में विलीन कर दे। हृदय से भ्रुवों तक वायुमण्डल का कृष्ण वर्ण, षट्कोणाकार, छ: बिन्दुओं से लांछित ईश्वरदैवत्य के रूप में ध्यान करके यं बीज से शोधन करके आकाश में लय कर दे। भ्रूमध्य से ब्रह्मरन्ध्र तक आकाश मण्डल का नीला वर्ण वर्तुलाकार नाद-रेखांकित शिवदैवत्व रूप में ध्यान करके हं बीज से शोधन कर परशिव में इसका लय कर दे।

भूतों के लयक्रम में पृथिवी-शोधन करके उसके बीज 'लं' का साठ बार जप करे। उत्तरोत्तर बारह-बारह छोड़कर जप करे। उत्पत्तिक्रम में उसी प्रकार आकाश बीज का साठ जप करे, उत्तरोत्तर बारह-बारह छोड़कर जप करे। किसी के मत से यह क्रम प्राणायाम योग से करे। इस प्रकार पञ्च महाभूतों को पर तत्त्व में एकीभूत होने का चिन्तन करके प्राणायाम योगं से योनिमुद्रा बाँधकर कुलकुण्डलिनी को उठाकर छ: चक्रों का भेदन कराते हुए जीव प्रदीप स्नेहरूपिणी देवी को मातृकासमुदाय के साथ पर तेज से योजित करके शोषणादि करे। यहाँ मातृका को संहार क्रम से क्ष को ल में, ल को ह में, ह को स में विलीन करे। इसी क्रम का अनुसरण करते हुये अन्तत: आकार को अकार में विलीन करके उस नवनीत-सदृश अकार को कुण्डलिनी के द्वारा ब्रह्मरन्ध्र में स्थापित करे।

पापपुरुषध्यानं तत्सन्दहनञ्च

वामकुक्षिस्थितं पापपुरुषं कज्जलप्रभम्। ब्रह्महत्याशिरस्कं च स्वर्णस्तेयभुजद्वयम् ॥१॥
सुरापानहृदा युक्तं गुरुतल्पकटिद्वयम्। तत्संसर्गिपदद्वन्द्वमङ्गप्रत्यङ्गपातकम् ॥२॥
उपपातकरोमाणं रक्तश्मश्रुविलोचनम्। खड्गचर्मधरं क्रुद्धं कुक्षौ पापं विचिन्तयेत् ॥३॥

ततो वामनासापुटे वायुमण्डलं तद्बीजयुक्तं कादिमान्तैः स्पर्शवर्णैः संवीतं धूम्रवर्णं ध्यात्वा मात्रा षोडशकेन संपूर्य प्राणापानवायुभ्यां सह संयोज्य, तदुत्थितेनानिलेन च सह पापपुरुषं संशोष्य, चतुष्षष्टिमात्राभिः कुम्भयित्वा द्वात्रिंशन्मात्राभिः रेचयेत्। ततो दक्षनासापुटे वह्निमण्डलं तद्बीजयुक्तं यादिभिर्दशभिः संवीतं रक्तवर्णं सञ्चिन्त्य, प्राणापानवायुभ्यां सह संयोज्य तदुत्थितेनानलेन पापपुरुषं संदह्य प्राग्वत् षोडशमात्राभिः पूरकं चतुष्षष्टिमात्राभिः कुम्भकं द्वात्रिंशन्मात्राभी रेचनम्। ततो वामनासापुटे आप्यमण्डलं तद्बीजयुक्तं षोडशस्वरैः संवीतं धवलवर्णं सञ्चिन्त्य प्राग्वत् पूरकादिकं विधाय, मूलाधारगतेन वायुना वह्निकुण्डलिनीमुत्थाप्य तस्या ज्वालासमुदायेन विगलद्ब्रह्म-रन्ध्रेन्दुमण्डलादमृताप्लावनं, पूर्ववत् पूरककुम्भकरेचकाः। एवं शोषणदहनाप्लावनानि कृत्वा, परस्मिन् शाम्भवे ब्रह्मणि स्वशरीरं तत्सारूप्यप्रतिबिम्बितं बुद्बुदाकारं ध्यात्वा, पार्थिवबीजेन कठिनीकृत्य, व्योमबीजेन विभेद्य भूतोत्पत्तिं विचिन्तयेत्।

तदनन्तर काजल-सदृश कृष्ण वर्ण के ब्रह्महत्या को शिर पर धारण किये, सुवर्ण चोरी रूप दो भुजाओं वाले, सुरापानरूप हृदय से युक्त, गुरुतल्पगामी, अंग-प्रत्यंग में पापों से संयुक्त उपपातकरूप रोम वाले, खड्ग-चर्मधारी वामकुक्षि-स्थित पापपुरुष का चिन्तन करे।

तदनन्तर बीज युक्त क से म तक के स्पर्श वर्ण से संवीत धूम्र वर्ण वायुमण्डल का ध्यान करके सोलह मात्रा से वाम नासा से पूरक करके प्राण को अपान से मिलाये। इससे उत्थित वायु से पापपुरुष का शोषण करे। चौंसठ मात्रा से कुम्भक करे और बत्तीस मात्रा से रेचक करे। तब लाल वर्ण के वह्निमण्डल के बीजयुक्त य से क्ष तक के दशवर्णों का चिन्तन करके दक्ष नासापुट से पूरक करके प्राण को अपान से योजित करे और उससे उत्थित अग्नि से पापपुरुष को दग्ध करे। पूर्ववत् बत्तीस से कुम्भक और मात्रा से रेचक करे। तब जलमण्डल के बीजसहित धवल वर्ण के सोलह स्वरों का चिन्तन करके पूर्ववत् पूरकादि करके मूलाधारगत वायु से वह्निकुण्डलिनी को उठाकर ज्वालासमुदाय से स्रवित ब्रह्मरन्ध्र स्थित चन्द्रमण्डल से अमृताप्लावन करके पूर्ववत् पूरक, कुम्भक, रेचक करे। इस प्रकार शोषण-दहन-प्लावन करके परशम्भु ब्रह्म के साथ अपने शरीर का सारूप्य प्रतिबिम्बित बुदबुदाकार ध्यान करके पार्थिव बीज से कठिन कर व्योमबीज से विभेद करके भूतोत्पत्ति का चिन्तन करे।

भूतोत्पत्तिः प्राणप्रतिष्ठा प्राणशक्तिध्यानञ्च

अक्षरात् खं ततो वायुर्वायोस्तेजस्ततो जलम्। जलात् प्रसूता जगती जगत्यां जायते जगत् ॥१॥

इति क्रमेण द्वादशसंख्यां समारभ्य षष्टिपर्यन्तं वर्धयन् सोऽहमित्युच्चार्य ह्सौमिति शिवात्मानं बीजं षट्त्रिंशत्तत्त्वरूपं स्मरेत्। 'प्राणप्रतिष्ठां कुर्वीत वक्ष्यमाणप्रकारतः।'

अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य० शिरसि ब्रह्मविष्णुरुद्रेभ्य ऋषिभ्यो नमः, मुखे ऋग्यजुःसामाथर्वेभ्यश्छ-न्दोभ्यो नमः, हृदि प्राणशक्तये देवतायै नमः, गुह्ये आं बीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः, नाभौ क्रों कीलकाय नमः इति विन्यस्य मम प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, अं कं ५ आं पृथिव्यप्ते-जोवाय्वाकाशात्मने हृदयाय नमः। इं चं ५ ईं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने शिरसे स्वाहा। उं टं ५ ऊं त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणात्मने शिखायै वषट्। एं तं ५ ऐं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने कवचाय हुं। ओं पं ५ औं वचनादानगतिविसर्गानन्दात्मनं नेत्रत्रयाय वौषट्। अं यं १० अः बुद्धिमनोहंकारचित्तात्मनेऽस्त्राय फट्, इति हृदादिषडङ्गन्यासः। एवं करषडङ्गन्यासं विधाय,

यं त्वगात्मने नमः। रं असृगात्मने नमः। लं मांसात्मने नमः। वं मेद आत्मने नमः। शं अस्थ्यात्मने नमः। षं मज्जात्मने नमः। सं शुक्रात्मने नमः। हं प्राणात्मने नमः। ळं जीवात्मने नमः। क्षं परमात्मने नमः। इति व्यापकन्यासं कृत्वा, बीजत्रयेणैव व्यापकं कृत्वा ध्यायेत्।

रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढा कराब्जैः
पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमलिगुणमप्यङ्कुशं पञ्च बाणान्।
बिभ्राणासृक्कपालं त्रिनयनलसितापीनवक्षोरुहाढ्या
देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः ॥१॥

इति ध्यात्वा, ॐ आं ह्रीं क्रों हंसः सोहं यरलवशषसहों श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्याः प्राणा इह प्राणाः २५ँ जीव इह स्थितः २५ँ सर्वेन्द्रियाणि २५ँ वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य चिरं सुखं तिष्ठन्तु स्वाहा, इति हृदि हस्तं दत्त्वा त्रिवारं पठेत्। इति प्राणप्रतिष्ठा।

अक्षर से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से जगती और जगती से जगत् के होने की भावना करे। पहले बारह बार, तब चौबीस बार, तब छत्तीस बार, तब अड़तालीस बार, तब साठ बार 'सोहं' का जप करके प्राणायाम करे। 'ह्सौं' शिवबीज का छत्तीस तत्त्वों के रूप में स्मरण करे। तदनन्तर विहित प्रकार से प्राण-प्रतिष्ठा करे। इस प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा-विष्णु एवं रुद्र, छन्द ऋक्-यजुः-समय-अथर्व, देवता प्राणशक्ति, बीज आं, शक्ति ह्रीं एवं कीलक क्रों है। प्राणप्रतिष्ठा हेतु इसका विनियोग करके ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करे—शिरसि ब्रह्मविष्णुरुद्रेभ्य ऋषिभ्यो नमः, मुखे ऋग्यजुःसामाथर्वेभ्यश्छन्दोभ्यो नमः, हृदि प्राणशक्तये देवतायै नमः, गुह्ये आं बीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः, नाभौ क्रों कीलकाय नमः। इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करके प्राणप्रतिष्ठा हेतु विनियोग बोलकर इस प्रकार हृदयादि षडङ्ग न्यास करे—अं कं ५ आं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने हृदयाय नमः, इं चं ५ ईं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने शिरसे स्वाहा, उं टं ५ ऊं त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणात्मने शिखायै वषट्, एं तं ५ ऐं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने कवचाय हुं, ओं पं ५ औं वचनादानगतिविसर्गानन्दात्मनं नेत्रत्रयाय वौषट्, अं यं १० अः बुद्धिमनोहंकारचित्तात्मनेऽस्त्राय फट् इसी प्रकार करषडङ्ग न्यास करके यं त्वगात्मने नमः, रं असृगात्मने नमः, लं मांसात्मने नमः, वं मेदआत्मने नमः, शं अस्थ्यात्मने नमः, षं मज्जात्मने नमः, सं शुक्रात्मने नमः, हं प्राणात्मने नमः, ळं जीवात्मने नमः, क्षं परमात्मने नमः से व्यापक न्यास करके पुनः तीनों बीजों से व्यापक न्यास कर इस प्रकार ध्यान करे—

रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढा कराब्जैः पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमलिगुणमप्यङ्कुशं पञ्च बाणान्।
बिभ्राणासृक्कपालं त्रिनयनलसितापीनवक्षोरुहाढ्या देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः।।

इस प्रकार ध्यान करके अपने हृदय पर हाथ रखकर तीन बार यह मन्त्र पढे—ॐ आं ह्रीं क्रों हंसः सोहं यं रं लं वं शं षं सं हां श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्याः प्राणा इह प्राणाः २ँ५ जीव इह स्थितः, २ँ५ सर्वेन्द्रियाणि २ँ५ वाङ्गमनश्चक्षुः-श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य चिरं सुखं तिष्ठन्तु स्वाहा। इस प्रकार करने से प्राणप्रतिष्ठा सम्पन्न होती है।

अन्तर्बहिर्मातृकान्यासः

अथ मातृकान्यासः—

गुदात्तु द्व्यङ्गुलादूर्ध्वं सुषुम्नासूक्ष्मरन्ध्रगम्। वादिवेदार्णलसितं पङ्कजं कनकप्रभम् ॥२॥
तत्स्था विद्युल्लताकारां तेजोरूपामणीयसीम्। कुलकुण्डलिनीमूर्ध्वं नयेत् षट्चक्रभेदतः ॥३॥
द्वादशान्तस्य मध्यस्थं पूर्वोक्तं मातृकाम्बुजम्। नवनीतनिभं ध्यात्वा द्रुतं कुण्डलिनीत्विषा ॥४॥
तेजोऽञ्जलौ विनिःसार्य मातृकान्यासमाचरेत्।

अंआंइंईंउंऊं इति षट् स्वरान् दक्षवामकरतलतत्पृष्ठतत्करभतद्व्याप्तिक्रमेण न्यसेत्। अवशिष्टदशस्वरान् अङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं दशस्वङ्गुलीषु न्यसेत्। दक्षप्रदेशिनीमारभ्य वामकनिष्ठापर्यन्तं पर्वत्रयाग्रेषु चतुरश्चतुरः कादिसान्तान्

वर्णान् हलावङ्गुष्ठयोरन्यमङ्गुल्यग्रेषु न्यसेदिति मातृकाकरशुद्धिं विधाय, अस्या अन्तर्मातृकायाः शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः। मुखे गायत्र्यै छन्दसे नमः। हृदये श्रीमातृकासरस्वत्यै देवतायै नमः। गुह्ये हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः। पादयोः स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः। नाभौ अव्यक्ताय कीलकाय नमः। इति विन्यस्य मम शरीरशुद्ध्यर्थं विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, अंकं ५ आं हृदयाय नमः। इंचं ५ ईं शिरसे स्वाहा। उंटं ५ ऊं शिखायै वषट्। एंतं ५ ऐं कवचाय हुं। ओंपं ५ औं नेत्रत्रयाय वौषट्। अंयं १० अंः अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, विशुद्धे षोडशदलेषु स्वरान्, हृदये द्वादशदलेषु कादिठान्तान्, नाभौ दशदलेषु डादिफान्तान्, स्वाधिष्ठाने षड्दलेषु वादिलान्तान्, मूलाधारे चतुर्दलेषु वादिसान्तान् विन्यस्य ध्यायेत्।

आधारे लिङ्गनाभौ हृदयसरसिजे तालुमूले ललाटे
द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्धे चतुष्के।
वासान्ते बालमध्ये डफकठसहिते कण्ठदेशे स्वराणां
हंक्षं तत्त्वार्थयुक्तं सकलमुनिमतं वर्णरूपं नमामि॥१॥

अथ बहिर्मातृकान्यासः। तत्र प्राग्वदृष्यादिकं विन्यस्य ध्यायेत्।

पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोष्पादयुक्कुक्षिवक्षो-
देशां भास्वत्कपर्दाकलितशशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम्।
अक्षस्रक्कुम्भचिन्तालिखितवरकरां त्रीक्षणां पद्मसंस्था-
मच्छाकल्पामतुच्छस्तनजघनभरां भारतीं तां नमामि॥२॥

दक्षोर्ध्वकरमारभ्य दक्षाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम् इति ध्यात्वा,

काननवृत्तद्व्यक्षिश्रुतिनासागण्डोष्ठदन्तमूर्धास्ये। दोष्पत्संध्यग्रेषु च पार्श्वद्वयपृष्ठनाभिजठरेषु॥३॥
हृद्दोर्मूलापरगलकक्षेषु हृदादिपाणिपादयुगलेषु। जठराननयोर्व्यापकसंज्ञान् न्यसेदक्षरान् क्रमशः॥४॥

अत्र दशधातुषु यादीन् प्राग्वन्न्यसेत्। अयं मातृकान्यासस्त्रिविधः—शुद्धमातृका बिन्दुयुक्ता विसर्गयुक्ता चेति।

मातृका न्यास—गुदा से दो अंगुल ऊपर सुषम्ना के सूक्ष्म रन्ध्रगत वं शं षं सं—इन चार वर्णों से सुशोभित स्वर्णाभ पद्म में स्थित विद्युत् लता के आकार वाली तेजोरूपा कुलकुण्डलिनी को षट्चक्र भेदन कराते हुए द्वादशान्त मध्य में स्थित पूर्वोक्त नवनीत-सदृश मातृकाम्बुज में चिन्तन करते हुये कुण्डलिनी से प्राप्त तेज को अंजलि में ग्रहण कर मातृकान्यास करे।

अं आं इं ईं उं ऊं—इन छः स्वरों का न्यास दक्ष-वाम करतल-करपृष्ठ इस प्रकार क्रम से करे। शेष दश स्वरों का न्यास अंगूठा से कनिष्ठा तक दश अंगुलियों में करे। दक्ष तर्जनी से प्रारम्भ करके वाम कनिष्ठा तक के तीनों पर्वों में क से स तक के वर्णों का चार-चार के क्रम से न्यास करे। तदनन्तर का अंगूठों में तथा सभी अंगुल्यग्रों में न्यास करे।

तदनन्तर मातृका से करशुद्धि करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः, मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदये श्रीमातृकासरस्वत्यै देवतायै नमः, गुह्ये हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः, पादयोः स्वरेभ्यः नमः, नाभौ अव्यक्ताय कीलकाय नमः।

तदनन्तर अपनी शरीर शुद्धि के लिये विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः, इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा, उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्, एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुं। ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्, अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः अस्त्राय फट्। इस प्रकार कर-षडङ्ग न्यास करने के बाद विशुद्धि षोडश दल में स्वरों का, हृदय में द्वादश दल में क से ठ तक का, नाभि में दश दल में ड से फ तक का, स्वाधिष्ठान के छः दलों में ब से ल तक और मूलाधार के चार दलों में व से स तक के वर्णों का न्यास करे। इसके बाद इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

आधारे लिङ्गनाभौ हृदयसरसिजे तालुमूले ललाटे द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्धे चतुष्के।
वासान्ते बालमध्ये डफकठसहिते कण्ठदेशे स्वराणां हंक्षं तत्त्वार्थयुक्तं सकलमुनिमतं वर्णरूपं नमामि।।

बहिर्मातृका न्यास—पूर्ववत् ऋष्यादि न्यास करने के बाद इस प्रकार ध्यान करे—

पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोष्पादयुक्कुक्षिवक्षोदेशां भास्वत्कपर्दाकलितशशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम्।
अक्षस्रक्कुम्भचिन्तालिखितवरकरां त्रीक्षणां पद्मसंस्थामच्छाकल्पामतुच्छस्तनजघनभरां भारतीं तां नमामि।।

दाँयें ऊपर वाले हाथ से आरम्भ करके दाँयें नीचे वाले हाथ तक आयुध ध्यान करके मुखमण्डल, आँख, कान, नाक, गाल, ओठ, दाँत, मूर्धा, मुख, भुजा, सन्धियाँ, दोनों पार्श्व, पीठ, नाभि, पेट, हृदय, भुजमूल, गलकक्ष एवं हृदय से कराग्रों, पादाग्रों तक तथा पेट एवं मुख में न्यास करने के बाद व्यापक न्यास करे। दश धातुओं में य से क्ष तक के वर्णो का न्यास करे। यह मातृका न्यास तीन प्रकार का होता है—शुद्ध मातृका न्यास, बिन्दुयुक्त मातृका न्यास और विसर्गयुक्त मातृका न्यास।

दशधा मातृकाः

अन्तर्बहि(ष्ठा?:स्था) च कलायुता च श्रीकण्ठविष्ण्वादिसमन्विता च।
लज्जारमाकामपृथक्समूहा प्रपञ्चयागो दश मातृकाः स्युः ॥५॥

इति क्रमेण मातृकावैभवं प्रागेव वर्णितम्, सांप्रतमस्मदाराध्यचरणोपदिष्टक्रमेण संक्षेपतो भ्रमनिरासाय प्रोच्यते इति।

दश मातृकान्यासों का क्रम इस प्रकार है—अन्तर्बहिस्थ कला न्यास, श्रीकण्ठ, विष्वादि-समन्वित न्यास, ह्रीं श्रीं क्लीं समूह से पृथक्-पृथक् न्यास, प्रपञ्च याग न्यास करे। मातृकावैभव के इस क्रम को पहले भी कहा गया है। सम्प्रति श्री प्रगल्लभाचार्य-उपदिष्ट क्रम से संक्षेपरूप में भ्रम-निवारण के लिये इन न्यासों का यहाँ कथन किया जा रहा है।

कलामातृकान्यासः

अथ कलामातृकान्यासः। अस्य षडङ्गन्यासध्यानानि प्रागेवोक्तानि। ४ँ अं निवृत्तिकलायै नमः शिरसि। आं प्रतिष्ठाकलायै नमः मुखे। एवं इं विद्या० दक्षनेत्रे। ईं शान्ति० वामनेत्रे। उं इन्धिका० दक्षकर्णे। ऊं दीपिका० वामकर्णे। ऋं रेचिका० दक्षनसि। ॠं मोचिका० वामनसि। ऌं सूक्ष्मा० दक्षगण्डे। ॡं सूक्ष्मातीसा० वामगण्डे। एं अमृता० ऊर्ध्वोष्ठे। ऐं ज्ञाना० अधरोष्ठे। ओं व्योमरूपा० ऊर्ध्वदन्तेषु। औं आप्यायिनी० अधोदन्तेषु। अं व्यापिनी० ललाटे। अः अनन्तरूपा० जिह्वायां। इति विन्यस्य 'विष्णुर्योनिं०' जपेत्। ततः ४ँ अंआमित्यादि षोडश स्वरान् उच्चार्य भुक्तिमुक्तिप्रदनादजानन्तकलायै नमः इति मुखे व्यापकं न्यसेत्। ततः ४ँ कं सृष्टि० दक्षबाहुमूले। खं वृद्धि० कूर्परे। गं स्मृति० मणिबन्धे। घं मेधा० अङ्गुलिमूले। ङं कान्ति० अङ्गुल्यग्रे। चं लक्ष्मी० वामबाहुमूले। छं धृति० कूर्परे। जं स्थिरा० मणिबन्धे। झं स्थिति० अङ्गुलिमूले। ञं सिद्धि० अङ्गुल्यग्रे। इति विन्यस्य हंसः शुचिषदिति जपेत्। ततः कं १० सृष्टिप्रदाकारप्रभवब्रह्मकलायै नमः इति भुजयोर्व्यापकं न्यसेत्। ततः ४ँ टं जरा० दक्षपादमूले। ठं पालिनी० जानौ। डं शान्ति० गुल्फे। ढं ईश्वरी० अङ्गुलिमूले। णं रति० अङ्गुल्यग्रे। तं कामिका० वामपादमूले। थं वरदा० जानौ। दं ह्लादिनी० गुल्फे। धं प्रीति० अङ्गुलिमूले। नं दीर्घा० अङ्गुल्यग्रे। इति विन्यस्य प्रतद्विष्णुरिति जपेत्। ततः ४ँ टं १० स्थितिप्रदोकारप्रभवविष्णुकलाभ्यो नमः इति पादयोर्व्यापकं न्यसेत्। ततः ४ँ पं तीक्ष्णा० दक्षपार्श्वे। फं रौद्री० वामपार्श्वे। बं माया० पृष्ठे। भं निद्रा० नाभौ। मं तन्द्री० जठरे। यं क्षुधा० हृदि। रं क्रोधिनी० दक्षांसे। लं क्रिया० वामांसे। वं उत्कारी० ककुदि। शं मृत्यु० हृदादिदक्षपाण्यन्तम्। इति विन्यस्य त्र्यम्बकं यजामहे इति जपेत्। ततः पं १० संहृतिप्रदमकारप्रभवरुद्रकलाभ्यो नमः इति हृदयादिमध्ये व्यापकं न्यसेत्। ततः ४ँ षं पीता० हृदादि-वामपाण्यन्तम्। सं श्वेता० हृदादिदक्षपादान्तम्। हं अरुणा० हृदादिवामपादान्तम्। ळं असिता० पादादिनाभ्यन्तम्। क्षं

सिता० नाभ्यादिमूर्धान्तम्। इति विन्यस्य तत्सवितुरिति जपित्वा, ४ँ षं ५ तिरोधानप्रदबिन्दुप्रभवेश्वरकलाभ्यो नम: इति सर्वाङ्गे व्यापकं व्यापकं न्यसेत्। इति प्रणवोत्थकलामातृकान्यास:।

कलामातृका के षडङ्ग न्यास एवं ध्यान पूर्व में कवित हैं। शरीरस्थ तत्तत् अंगों में न्यास इस प्रकार किया जाता है— ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं निवृत्तिकलायै नम: (शिर पर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं प्रतिष्ठाकलायै नम: (मुख में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं विद्याकलायै नम: (दक्ष नेत्र में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं शान्तिकलायै नम: (वाम नेत्र में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं इन्धिकाकलायै नम: (दक्ष कर्ण में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं दीपिकाकलायै नम: (वाम कर्ण में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं रेचिकाकलायै नम: (दक्ष नासिका में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं मोचिकाकलायै नम: (वाम नासिका में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऌं सूक्ष्माकलायै नम: (दाहिने गाल पर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡं सूक्ष्मातीसाकलायै नम: (बाँयें गाल पर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं अमृताकलायै नम: (ऊपरी ओष्ठ में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ज्ञानाकलायै नम: (नीचे ओष्ठ में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं व्योमरूपाकलायै नम: (ऊपरी दाँतों में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं आप्यायिनीकलायै नम: (नीचले दाँतों में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं व्यापिनीकलायै नम: (ललाट में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं: अनन्तरूपाकलायै नम: (जिह्वा में)। इस प्रकार न्यास करके 'विष्णुर्योनिं०' मन्त्र का जप करे। तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इत्यादि सोलह स्वरों का उच्चारण करके भुक्तिमुक्तिप्रदनादजानन्तकलायै नम: मन्त्र से मुख में व्यापक न्यास करे। तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं सृष्टिकलायै नम: से दक्ष बाहुमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं वृद्धिकलायै नम: से कूर्पर में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं स्मृतिकलायै नम: से मणिबन्ध में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं मेधाकलायै नम: से अङ्गुलिमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं कान्तिकलायै नम: से अंगुलि के आगे, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं लक्ष्मीकलायै नम: से वाम बाहुमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं धृतिकलायै नम: से कूर्पर में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं स्थिराकलायै नम: से मणिबन्ध में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं स्थितिकलायै नम: से अङ्गुलिमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं सिद्धिकलायै नम: से अंगुलि के आगे न्यास करके 'हंस: शुचिषत्' मन्त्र का जप करे। तदनन्तर कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं सृष्टिप्रदाकारप्रभवब्रह्मकलायै नम: से दोनों भुजाओं में व्यापक न्यास करे। तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं जराकलायै नम: से दक्ष पादमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं पालिनीकलायै नम: से जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं शान्तिकलायै नम: से गुल्फ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं ईश्वरीकलायै नम: से अङ्गुलिमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं रतिकलायै नम: से अङ्गुलियों के आगे, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं कामिकाकलायै नम: से वाम पादमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं वरदाकलायै नम: से जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं ह्लादिनीकलायै नम: से गुल्फ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं प्रीतिकलायै नम: से अङ्गुलिमूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं दीर्घाकलायै नम: से अंगुलि के आगे न्यास करके 'प्रतद्विष्णु:' इस मन्त्र का जप करे। तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं णं नं तं थं दं धं नं स्थितिप्रदोकारप्रभवविष्णुकलाभ्यो नम: से दोनों पैरों व्यापक न्यास करे। तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं तीक्ष्णाकलायै नम: से दक्ष पार्श्व, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फं रौद्रीकलायै नम: से वाम पार्श्व में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बं मायाकलायै नम: से पृष्ठ पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भं निद्राकलायै नम: से नाभि में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं तन्द्राकलायै नम: से जठर में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं क्षुधाकलायै नम: से हृदय में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं क्रोधिनीकलायै नम: से दाहिने कन्धे पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं क्रियाकलायै नम: से बाँयें कन्धें पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं उत्कारीकलायै नम: से ककुद में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं मृत्युकलायै नम: से हृदय से दाहिने हाथ तक न्यास करके 'त्र्यम्बकं यजामहे' इस मन्त्र का जप करे। तदनन्तर पं भं बं भं मं यं रं लं वं शं संहृतिप्रदमकारप्रभवरुद्रकलाभ्यो नम: से हृदय के मध्य में व्यापक न्यास करे। तदन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं सं हं क्षं पीताकलायै नम: से हृदय से बाँयें हाथ के अन्त तक, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं श्वेताकलायै नम: से हृदय से दाहिने पैर के अन्त तक, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं अरुणाकलायै नम: से हृदय से वाम पैर के अन्त तक, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं असिताकलायै नम: से पैर से नाभि तक, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं सिताकलायै नम: से नाभि से मूर्धा तक न्यास करके 'तत्सवितु:' मन्त्र का जप करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं सं हं ळं क्षं तिरोधानप्रदबिन्दुप्रभवेश्वरकलाभ्यो नम: से सर्वाङ्ग में व्यापक न्यास करे।

श्रीकण्ठादिमातृकान्यास:

अथ श्रीकण्ठादिन्यास:। तत्रादौ तदङ्गशक्तिषडङ्गन्यास:—ॐह्रीं नमो भगवति ब्राह्मि रक्ष रक्ष पद्महस्तेन मां रक्ष रक्ष अंकं ५ आंहौंह्लींह्सौं संजीवनि हृदयाय नम:। ॐह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि रक्ष रक्ष त्रिशूलहस्तेन मां

रक्ष रक्ष इंचं ५ ईंहौंह्लींह्सौं ऊर्ध्वकेशिनि शिरसे स्वाहा। ॐह्रीं नमो भगवति कौमारि रक्ष रक्ष शक्तिहस्तेन मां रक्ष रक्ष उंटं ५ ऊंहौंह्लींह्सौं जटिलिनि शिखायै वषट्। ॐह्रीं नमो भगवति वैष्णवि रक्ष रक्ष चक्रहस्तेन मां रक्ष रक्ष एंतं ५ ऐंहौंह्लींह्सौं मायात्रैलोक्यरूपसहस्रपरिवर्तिनि कवचाय हुम्। ॐह्रीं नमो भगवति वाराहि रक्ष रक्ष दंष्ट्राहस्तेन मां रक्ष रक्ष ओं पं ५ औंहौंह्लींह्सौं तारकाक्षिणि नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐह्रीं नमो भगवति ऐन्द्रि रक्ष रक्ष वज्रहस्तेन मां रक्ष रक्ष अंयं १० अ:हौंह्लींह्सौं मारय मारय अस्त्राय फट्। ॐह्रीं नमो भगवति चामुण्डे रक्ष रक्ष पाशहस्तेन मां रक्ष रक्ष अंआं ५१ अंइंउंएंओं आंईंऊंऐंऔंअः हौंह्लींह्सौं मम सर्वाङ्गं रक्ष रक्ष सर्वाङ्गव्यापिनि स्वाहा, इति व्यापकम्। अस्य श्रीकण्ठादिमातृकान्यासस्य शिरसि अम्बरीष ऋषिः, मुखे अनुष्टुप् छन्दः, हृदि अर्धनारीश्वरो देवता, न्यासे विनियोगः। ॐह्रींह्लींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय अं श्रीकण्ठेशपूर्णोदरीभ्यां नमः, एवं सर्वत्र। आं अनन्तेशविरजाभ्यां०। इं सूक्ष्मेशशाल्मलीभ्यां०। ईं त्रिमूर्तीशलोलाक्षीभ्यां०। उं अमरेशवर्तुलाक्षीभ्यां०। ऊं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां०। ऋं भारभूतीशदीर्घमुखीभ्यां०। ॠं अतिथीशगोमुखीभ्यां०। लृं स्थाण्वीशदीर्घजिह्वा०। ॡं हरेशकुण्डोदरी०। एं झिण्टीशोर्ध्वकेशी०। ऐं भौतिकेशविकृतमुखी०। ओं सद्योजातेशज्वालामुखी०। औं अनुग्रहेशोल्कामुखी०। अं अक्रूरेशश्रीमुखी०। अः महासेनेशविद्यामुखी०। कं क्रोधीशमहाकाली०। खं चण्डीशसरस्वती०। गं पञ्चान्तकेशसर्वसिद्धिगौरी०। घं शिवोत्तमेशत्रैलोक्यविद्या०। ङं एकरुद्रेशमन्त्रशक्ति०। चं कूर्मेशात्मशक्ति०। छं एकनेत्रेशभूतमातृ०। जं चतुराननेशलम्बोदरी०। झं अजेशविद्राविणी०। ञं शर्वेशनागरी०। टं सोमेशखेचरी०। ठं लाङ्गलीशमञ्जरी०। डं दारुकेशरूपिणी०। ढं अर्धनारीश्वरेशवीरिणी०। णं उमाकान्तेशकाकोदरी०। तं आषाढीशपूतना०। थं दण्डीशभद्रकाली०। दं अद्रीशयोगिनी०। धं मीनेशशङ्खिनी०। नं मेषेशगर्जिनी०। पं लोहितेशकालरात्री०। फं शिखीशकूर्दिनी०। बं छगलाण्डेशकपर्दिनी०। भं द्विरण्डेशवज्रिणी०। मं महाकालेशजया०। यं त्वगात्मक-कापालीशसुमुखी०। रं असृगात्मकभुजङ्गीशरेवती०। लं मांसात्मकपिनाकीशमाधवी०। वं मेदात्मकखड्गीशवारुणी०। शं अस्थ्यात्मकबकेशवायवी०। षं मज्जात्मकश्वेतेशरक्षोपधारिणी०। सं शुक्रात्मक-भृग्वीशसहजा०। हं प्राणात्मक-नकुलीशमहालक्ष्मी०। ळं शक्त्यात्मकशिवेशव्यापिनीभ्यां नमः। ॐह्लींहौं नमः शिवाय क्षं शिवात्मक-संवर्तेशमहामायाभ्यां नमः, इति विन्यस्य ध्यायेत्।

बन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालां पाशाङ्कुशौ च वरदं निजबाहुदण्डैः।
बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि॥

इति ध्यायेत्। दक्षाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। इति श्रीकण्ठादिमातृकान्यासः।

श्रीकण्ठादि मातृका न्यास—श्रीकण्ठादि मातृका न्यास में प्रथमतः उसके अंगशक्तियों से इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐह्रीं नमो भगवति ब्राह्मि रक्ष रक्ष पद्महस्तेन मां रक्ष रक्ष अं कं खं गं घं ङं आंहौंह्लींह्सौं संजीवनि हृदयाय नमः, ॐह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि रक्ष रक्ष त्रिशूलहस्तेन मां रक्ष रक्ष इं चं छं जं झं ञं ईंहौंह्लींह्सौं ऊर्ध्वकेशिनि शिरसे स्वाहा, ॐह्रीं नमो भगवति कौमारि रक्ष रक्ष शक्तिहस्तेन मां रक्ष रक्ष उं टं ठं डं ढं णं ऊंहौंह्लींह्सौ जटिलिनि शिखायै वषट्, ॐह्रीं नमो भगवति वैष्णवि रक्ष रक्ष चक्रहस्तेन मां रक्ष रक्ष एं तं थं दं धं नं ऐंहौंह्लींह्सौं मायात्रैलोक्यरूपसहस्रपरिवर्तिनि कवचाय हुम्, ॐह्रीं नमो भगवति वाराहि रक्ष रक्ष दंष्ट्राहस्तेन मां रक्ष रक्ष ओं पं फं बं भं मं औंहौंह्लींह्सौं तारकाक्षिणि नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐह्रीं नमो भगवति ऐन्द्रि रक्ष रक्ष वज्रहस्तेन मां रक्ष रक्ष अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अःहौंह्लींह्सौं मारय मारय अस्त्राय फट्। तदनन्तर ॐह्रीं नमो भगवति चामुण्डे रक्ष रक्ष पाशहस्तेन मां रक्ष रक्ष अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं भं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अंइंउंएंओं आंईंऊंऐंऔंअः हौंह्लींह्सौं मम सर्वाङ्गं रक्ष रक्ष सर्वाङ्गव्यापिनि स्वाहा से व्यापक न्यास करे।

इस श्रीकण्ठादि मातृका न्यास के ऋषि अम्बरीष, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता अर्द्धनारीश्वर भगवान् शिव कहे गये हैं। इसका न्यास के लिये विनियोग किया जाता है। इस प्रकार विनियोग करने के बाद ॐह्रींह्लींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय अं

श्रीकण्ठेशपूर्णोदरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय आं अनन्तेशविरजाभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय इं सूक्ष्मेशशाल्मलीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकायभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ईं त्रिमूर्तीशलोलाक्षीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय उं अमरेशवर्तुलाक्षीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ऊं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ऋं भारभूतीशदीर्घमुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ॠं अतिथीशगोमुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ऌं स्थाण्वीशदीर्घजिह्वाभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ॡं हरेशकुण्डोदरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय एं झिण्टीशोर्ध्वकेशीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ऐं भौतिकेशविकृतमुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ओं सद्योजातेशज्वालामुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय औं अनुग्रहेशोल्कामुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय अं अक्रूरेशश्रीमुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय अः महासेनेशविद्यामुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय कं क्रोधीशमहाकालीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय खं चण्डीशसरस्वतीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय गं पञ्चान्तकेशसर्वसिद्धिगौरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय घं शिवोत्तमेशत्रैलोक्यविद्याभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ङं एकरुद्रेशमन्त्रशक्तिभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय चं कूर्मेशात्मशक्तिभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय छं एकनेत्रेशभूतमातृभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय जं चतुराननेशलम्बोदरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय झं अजेशविद्राविणीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ञं शर्वेशनागरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय टं सोमेशखेचरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ठं लाङ्गलीशमञ्जरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय डं दारुकेशरूपिणीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ढं अर्धनारीश्वरेशवीरिणीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय णं उमाकान्तेशकाकोदरीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय तं आषाढीशपूतनाभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय थं दण्डीशभद्रकालीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय दं अद्रीशयोगिनीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय धं मीनेशशङ्खिनीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय नं मेषेशगर्जिनीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय पं लोहितेशकालरात्रीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय फं शिखीशकूर्दिनीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय बं छगलाण्डेशकपर्दिनीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय भं द्विरण्डेशवज्रिणीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय मं महाकालेशजयाभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय यं त्वगात्मककापालीशसुमुखीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय रं असृगात्मकभुजङ्गीशरेवतीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय लं मांसात्मकपिनाकीशमाधवीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय वं मेदात्मकखड्गीशवारुणीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय शं अस्थ्यात्मकबकेशवायवीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय षं मज्जात्मकश्वेतेशरक्षोपधारिणीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय सं शुक्रात्मकभृग्वीशसहजाभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय हं प्राणात्मकनकुलीशमहालक्ष्मीभ्यां नमः, ॐ ह्रींह्रींह्सौं मम सर्वाङ्गरक्षकाय ळं शक्त्यात्मकशिवेशव्यापिनीभ्यां नमः, ॐ ह्रींहौं नमः शिवाय क्षं शिवात्मकसंवर्तेशमहामायाभ्यां नमः से न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

बन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालां पाशाङ्कुशौ च वरदं निजबाहुदण्डैः।
बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि॥

केशवादिमातृकान्यासः

अथ केशवादिमातृकान्यासः। अस्याः केशवादिमातृकायाः शिरसि ब्रह्मा ऋषिः, मुखे गायत्री छन्दः, हृदये श्रीपरमात्मा केशवो देवता, न्यासे विनियोगः। तत्र कामराजबीजेन षड्दीर्घयुक्तेन षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

हस्तैर्दधानां नवनीरदाभां शङ्खं च चक्रं च गदां च पद्मम्।
कीर्त्यादियुक्तामतिसुन्दरीं तां श्रीकेशवीं संततमाश्रयेऽहम्॥

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय अं केशवकीर्तिभ्यां नमः। एवं सर्वत्र। आं नारायणकान्ति०। इं माधवतुष्टि०। ईं गोविन्दपुष्टि०। उं विष्णुधृति०। ऊं मधुसूदनशान्ति०। ऋं त्रिविक्रमक्रिया०। ॠं वामनदया०। ऌं श्रीधरमेधा०। ॡं हृषीकेशहर्षा०। एं पद्मनाभश्रद्धा०। ऐं दामोदरलज्जा०। ओं वासुदेवलक्ष्मी०। औं सङ्कर्षणसरस्वती०।

अं प्रद्युम्नप्रीति०। अंः अनिरुद्धरति०। कं चक्रिजया०। खं गदिदुर्गा०। गं शार्ङ्गिप्रभा०। घं खड्गिसत्या०। ङं शङ्खिचण्डिका०। चं हलिवाणी०। छं मुसलिविलासिनी०। जं शूलिविजया०। झं पाशिविरजा०। ञं अङ्कुशिविश्वा०। टं मुकुन्दविनदा०। ठं नन्दजसुतदा०। डं नन्दिस्मृति०। ढं नरऋद्धि०। णं नरकजित्समृद्धि०। तं हरिशुद्धि०। थं कृष्णभुक्ति०। दं सत्यबुद्धि०। धं सात्वतमति०। नं शौरिक्षभा०। पं शूररमा०। फं जनार्दनोमा०। बं भूधरक्लेदिनी०। भं विश्वमूर्तिक्लिन्ना०। मं वैकुण्ठवसुदा०। यं त्वगात्मक-पुरुषोत्तमवसुधा०। रं असृगात्मकबलिपरा०। लं मांसात्मक-बलानुजपरायणा०। वं मेदआत्मकबालसूक्ष्मा०। शं अस्थ्यात्मकवृषघ्नसंध्या०। षं मज्जात्मकवृषभप्रज्ञा०। सं शुक्रात्मकहंसप्रभा०। हं प्राणात्मकवराहनिशा०। ळं शिवशक्त्यात्मकविमलामोघा०। क्षं परात्मकनृसिंहविद्युताभ्यां नमः। इति केशवादिमातृकान्यासः।

केशवादि मातृका न्यास—इस केशवादि मातृका न्यास के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता श्री परमात्मा केशव हैं। इसका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—शिरसि ब्रह्मणे नमः मुखे गायत्री छन्द से नमः, हृदये श्रीपरमात्मने देवतायै नमः। न्यास हेतु विनियोग करके षड् दीर्घ कामराज बीज से कर-षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

हस्तैर्दधानां नवनीरदाभां शङ्खं च चक्रं च गदां च पद्मम्।
कीर्त्यादियुक्तामतिसुन्दरीं तां श्रीकेशवीं संततमाश्रयेऽहम्।।

ध्यान के पश्चात् इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय अं केशवकीर्तिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय आं नारायणकान्तिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय इं माधवतुष्टिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ईं गोविन्दपुष्टिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय उं विष्णुधृतिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ऊं मधुसूदनशान्तिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ऋं त्रिविक्र-मक्रियाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ॠं वामनदयाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय लृं श्रीधरमेधाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय लॄं हृषीकेशहर्षाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय एं पद्मनाभश्रद्धाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ऐं दामोदरलज्जाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ओं वासुदेवलक्ष्मीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय औं सङ्कर्षणसरस्वतीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय अं प्रद्युम्नप्रीतिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय अः अनिरुद्धरतिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय कं चक्रिजयाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय खं गदिदुर्गाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय गं शार्ङ्गिप्रभाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय घं खड्गिसत्याभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ङं शङ्खिचण्डिकाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय चं हलिवाणीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय छं मुसलिविलासिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय जं शूलिविजयाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय झं पाशिविरजाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ञं अङ्कुशिविश्वाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय टं मुकुन्दविनदाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ठं नन्दजसुतदाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय डं नन्दिस्मृतिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ढं नरऋद्धिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय णं नरकजित्समृद्धिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय तं हरिशुद्धिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय थं कृष्णभुक्तिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय दं सत्यबुद्धिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय धं सात्वतमतिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय नं शौरिक्षमाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय पं शूररमाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय फं जनार्दनोमाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय बं भूधरक्लेदिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय भं विश्वमूर्तिक्लिन्नाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय मं वैकुण्ठवसुदाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय यं त्वगात्मकपुरुषोत्तमवसुधाभ्यां नमः, ॐ ऐं

ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय रं असृगात्मकबलिपराभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय लं मांसात्मकबलानुजपरायणाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय वं मेद-आत्मकबालसूक्ष्माभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय शं अस्थ्यात्मकवृषघ्नसंध्याभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय षं मज्जात्मकवृषभप्र ाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय सं शुक्रात्मकहंसप्रभाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय हं प्राणात्मकवराहनिशाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय ळं शिवशक्त्यात्मकविमलामोघाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ नमो नारायणाय क्षं परात्मकनृसिंहविद्युताभ्यां नम:।

लज्जाबीजादिमातृकान्यास:

अथ लज्जाबीजादिमातृकान्यास:। तत्र शक्तिर्ऋषि:, देवीगायत्री छन्द:, सकलप्रपञ्चमूलरूपिणी शक्तिर्देवता न्यासे विनियोग:। तत: षड्दीर्घयुक्तमायाबीजेन करषडङ्गं विधाय ध्यायेत्।

उद्यद्भास्वत्समाभां विजितनवजपामिन्दुखण्डावनद्ध-
द्योतन्मौलिं त्रिनेत्रां विविधमणिलसत्कुण्डलां पद्मगां च।
हारग्रैवेयकाञ्चीगुणमणिवलयाद्यैर्विचित्राम्बराढ्या-
मम्बां पाशाङ्कुशाद्याभयवरदकराम्म्बिकां तां नमामि॥

इति ध्यात्वा ह्रींअंह्रीं इत्यादिक्रमेण न्यसेत्। इति शक्तिमातृकान्यास:।

लज्जाबीजादि मातृका न्यास—इस न्यास के ऋषि शक्ति, छन्द गायत्री एवं देवता सकल प्रपञ्चमूलरूपिणी शक्ति हैं। न्यास हेतु इसका विनियोग करने के पश्चात् ह्रां-ह्रीं इत्यादि छ: दीर्घ बीजों से कर-षडङ्ग न्यास करने के उपरान्त इस प्रकार ध्यान करे—

उद्यद्भास्वत्समाभां विजितनवजपामिन्दुखण्डावनद्धद्योतन्मौलिं त्रिनेत्रां विविधमणिलसत्कुण्डलां पद्मगां च।
हारग्रैवेयकाञ्चीगुणमणिवलयाद्यैर्विचित्राम्बराढ्याममम्बां पाशाङ्कुशाद्याभयवरदकराम्म्बिकां तां नमामि।।

इस प्रकार का ध्यान करके ह्रीं अं ह्रीं इत्यादि क्रम से मातृका न्यास करे।

रमाबीजादिमातृकान्यास:

अथ रमाबीजादिमातृकान्यास:। तत्र भार्गव ऋषि:, गायत्री छन्द:, रमा देवता न्यासे विनियोग:। श्रांश्रीमित्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यायेत्।

वामे करे तदितरे च तथोपरिष्टात् पात्रं सुधारसयुतं वरमातुलुङ्गम्।
खेटं गदां च दधतीं भवतीं भवानीं ध्यायन्ति येऽरुणनिभां कृतिनस्त एव॥

इति ध्यात्वा श्रींअंश्रीमित्यादि न्यसेत्। इति लक्ष्मीमातृकान्यास:।

रमाबीजादि मातृका न्यास—इस न्यास के ऋषि भार्गव, छन्द गायत्री एवं देवता रमा हैं। न्यास के लिये इसका विनियोग किया जाता है। तदनन्तर श्रां-श्रीं इत्यादि से कर-षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

वामे करे तदितरे च तथोपरिष्टात् पात्रं सुधारसयुतं वरमातुलुङ्गम्।
खेटं गदां च दधतीं भवतीं भवानीं ध्यायन्ति येऽरुणनिभां कृतिनस्त एव।।

उपर्युक्त ध्यान के पश्चात् श्रीं अं श्रीं इत्यादि के क्रम से मातृका न्यास किया जाता है।

कामबीजादिमातृकान्यास:

अथ कामबीजादिमातृकान्यास:। तत्र सम्मोहन ऋषि:, गायत्री छन्द:, कामेश्वरी देवता न्यासे विनियोग:। क्लांक्लीमित्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यायेत्।

त्रिनेत्रां सुस्मितमुखीमरुणाम्बरभूषणाम्। पाशाङ्कुशधनुर्वाणधरां कामेश्वरीं भजे॥

इति ध्यात्वा क्लींअंक्लीमित्यादि न्यसेत्। इति काममातृकान्यासः।

कामबीजादि मातृका न्यास—इस न्यास के ऋषि सम्मोहन, छन्द गायत्री एवं देवता कामेश्वरी कहे गये हैं। न्यास हेतु इसका विनियोग किया जाता है। तदनन्तर क्लां-क्लीं इत्यादि छ: दीर्घ बीजों से कर-षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

त्रिनेत्रां सुस्मितमुखीमरुणाम्बरभूषणाम्। पाशाङ्कुशधनुर्वाणधरां कामेश्वरीं भजे ।।

उपर्युक्त रूप से ध्यान के बाद क्लीं अं क्लीं इत्यादि क्रम से मातृका न्यास करना चाहिये।

त्रिशक्तिमातृकान्यासः

अथ त्रिशक्तिमातृकान्यासः। तत्र ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, त्रिशक्तिर्देवता न्यासे विनियोगः। लज्जारमा-कामबीजत्रयद्विरावृत्त्या करषडङ्गन्यासं विधाय प्राग्वत् ध्यात्वा ह्रींश्रींक्लींअं नमः इत्यादि न्यसेत्। इति त्रिशक्ति-मातृकान्यासः।

त्रिशक्ति मातृका न्यास—इस न्यास के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता त्रिशक्ति हैं। न्यास हेतु विनियोग करके लज्जा = ह्रीं, रमा = श्रीं एवं काम = क्लीं—इन तीन बीजों की दो-दो आवृत्ति से कर-षडङ्ग न्यास करके पूर्ववत् ध्यान करके ह्रीं श्रीं क्लीं अं नम: इत्यादि क्रम से मातृका न्यास करना चाहिये।

प्रपञ्चयागमातृकान्यासः

अथ प्रपञ्चयागमातृकान्यासः।

अथ प्रपञ्चयागस्य विधानमभिधीयते ; येन निर्धूतकलुषो ब्रह्मभूयं समश्नुते ॥

अस्य परब्रह्म ऋषिः, परमा गायत्री छन्दः, परमात्मा देवता न्यासे विनियोगः। स्वाहा हृदयाय नमः। सोऽहं शिरसे स्वाहा। हंसः शिखा०। ह्रीं कवचा०। ॐ नेत्रा०। हरिहर अस्त्राय०। मूलमन्त्रेण त्रिधा व्यापकं कृत्वा ध्यायेत्।

तारादिपञ्चमनुभिः परिचीयमानं मानैरगम्यमनिशं जगदेकमूलम्।
सच्चित्समस्तगमनश्वरमच्युतं तत्तेजः परं भजत सान्द्रसुधाम्बुराशिम्॥

इति ध्यात्वा ॐह्रींअं हंसः सोहं स्वाहा, ॐह्रींआं हंसः सोहं स्वाहा, इत्यादि न्यसेत्। इति प्रपञ्चयाग-मातृकान्यासः। इति साधारणतो दशविधमातृकान्यासः सर्वमन्त्रसाधारणः।

प्रपञ्चयाग मातृका न्यास—अब प्रपञ्चयाग न्यास का विधान कहता हूँ, जिससे मनुष्य कलुषरहित होकर ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। इस न्यास के ऋषि परब्रह्म, छन्द परमा गायत्री एवं देवता परमात्मा हैं। न्यास हेतु इसका विनियोग करके इस प्रकार हृदयादि षडङ्ग न्यास किया जाता है—स्वाहा हृदयाय नम:, सोऽहं शिरसे स्वाहा, हंस: शिखायै वषट्, ह्रीं कवचाय हुं, ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्, हरिहर अस्त्राय फट्। तदनन्तर मूल मन्त्र से तीन बार व्यापक न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

तारादिपञ्चमनुभि: परिचीयमानं मानैरगम्यमनिशं जगदेकमूलम्।
सच्चित्समस्तगमनश्वरमच्युतं तत्तेज: परं भजत सान्द्रसुधाम्बुराशिम्।।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद ॐ ह्रीं अं हंस: सोहं स्वाहा, ॐ ह्रीं आं हंस: सोहं स्वाहा इत्यादि क्रम से मातृका न्यास करे। यह दशविध मातृका न्यास सामान्यतया सभी मन्त्रों में प्रयुक्त होता है।

बालामातृकान्यासः

अथ मातृकाविशेषाः। तत्रादौ बालामातृकान्यासः। तत्र दक्षिणामूर्तिः ऋषिः, पङ्क्तिः छन्दः, बालावागीश्वरी देवता न्यासे विनियोगः। ततो बालात्रिबीजद्विरावृत्त्या करषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

आधारे तरुणार्कबिम्बरुचिरं हेमप्रभं वाग्भवं बीजं मान्मथमिन्द्रगोपसदृशं हृत्पङ्कजे संस्थितम्।
चक्रे भालमये शशाङ्कसदृशं बीजञ्च तार्तीयकं ये ध्यायन्ति पदत्रयं तव शिवे ते यान्ति सौख्यास्पदम्॥
इति ध्यात्वा ऐंक्लींसौ:अं नम: इत्यादि न्यसेत्। इति बालामातृकान्यास:।

बाला मातृका न्यास—इस न्यास के ऋषि दक्षिणामूर्ति, छन्द पंक्ति एवं देवता बाला वागीश्वरी हैं। तदनन्तर हाथ जोड़कर न्यास-हेतु विनियोग बोलकर बालाबीज = ऐं क्लीं सौं की दो आवृत्ति से कर-षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् ध्यान किया जाता है—

आधारे तरुणार्कबिम्बरुचिरं हेमप्रभं वाग्भवं बीजं मान्मथमिन्द्रगोपसदृशं हृत्पङ्कजे संस्थितम्।
चक्रे भालमये शशाङ्कसदृशं बीजञ्च तार्तीयकं ये ध्यायन्ति पदत्रयं तव शिवे ते यान्ति सौख्यास्पदम्।।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद ऐं क्लीं सौ: अं नम: इत्यादि क्रम से मातृका न्यास करना चाहिये।

श्रीविद्यामातृकान्यास:

अथ श्रीविद्यामातृकान्यास:। तत्र शिरसि दक्षिणामूर्तिर्ऋषि:, मुखे पङ्क्ति: छन्द:, हृदि महात्रिपुरसुन्दरी देवता न्यासे विनियोग:। ऐंह्रींश्रींऐं सर्वज्ञताशक्त्यै हृदयाय नम:। ३ँ क्लीं नित्यतृप्तिताशक्त्यै शिरसे स्वाहा। ३ँ सौ: अनादिबोधशक्त्यै शिखायै०। ३ँ ऐं स्वतन्त्रताशक्त्यै कवचाय०। ३ँ क्लीं नित्यमलुप्तताशक्त्यै नेत्र०। ३ँ सौ: अनन्तशक्त्यै अस्त्रा०। इति विन्यस्य ध्यायेत्।

अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं धृतपाशाङ्कुशपुष्पबाणचापाम्।
अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम्॥

इति ध्यात्वा मूलविद्यासंपुटितमातृकां न्यसेत्। इति श्रीविद्यामातृकान्यास:।

श्रीविद्या मातृका न्यास—इस न्यास के ऋषि दक्षिणामूर्ति छन्द पंक्ति एवं देवता महा त्रिपुरसुन्दरी हैं। इनका क्रमश शिर, मुख एवं हृदय में न्यास करने के पश्चात् न्यास-हेतु विनियोग बोलकर इस प्रकार हृदयादि षडङ्ग न्यास करना चाहिये— ऐं ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञताशक्त्यै हृदयाय नम:, ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नित्यतृप्तिताशक्त्यै शिरसे स्वाहा, ऐं ह्रीं श्रीं सौ: अनादिबोधशक्त्यै शिखायै वषट्, ऐं ह्रीं श्रीं ऐं स्वतन्त्रताशक्त्यै कवचाय हुम्, ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नित्यमलुप्तताशक्त्यै नेत्रत्रयाय वौषट्, ऐं ह्रीं श्रीं सौ: अनन्तशक्त्यै अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी सम्पन्न करके निम्नवत् ध्यान करे—

अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं धृतपाशाङ्कुशपुष्पबाणचापाम्। अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम्।।

इस प्रकार के ध्यान के बाद मूल विद्या सम्पुटित मातृकाओं से न्यास करना चाहिये।

परामातृकान्यास:

अथ परामातृकान्यास:। तत्र हंस ऋषि:, अव्यक्तगायत्री छन्द:, परा देवता न्यासे विनियोग:। सौ: हृदयाय नम:। सौ: शिरसे०। इत्यादि करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यायेत्।

अकलङ्कशशाङ्काभां त्र्यक्षां चन्द्रकलावतीम्। मुद्रापुस्तलसद्बाहुं प्रणमामि परां कलाम्॥

इति ध्यात्वा सौ:अंसौ: इत्यादि न्यसेत्। इति परामातृकान्यास:।

परामातृका न्यास—इस परामातृका न्यास के ऋषि हंस, छन्द अव्यक्त गायत्री एवं देवता परा हैं। न्यास हेतु इसका विनियोग किया जाता है। सौ: हृदयाय नम:, सौ: शिरसे स्वाहा, सौ: शिखायै वषट्, सौ: कवचाय हुम्, सौ: नेत्रत्रयाय वौषट्, सौ: अस्त्राय फट्—इस प्रकार हृदयादि न्यास करके इन्हीं मन्त्रों से करन्यास भी सम्पन्न कर इस प्रकार ध्यान करे—

अकलङ्कशशाङ्काभां त्र्यक्षां चन्द्रकलावतीम्। मुद्रापुस्तलसद्बाहुं प्रणमामि परां कलाम्।।

तदनन्तर सौ: अं सौ: इत्यादि क्रम से मातृका न्यास करे।

कामरतिन्यासः

अथ कामरतिन्यासः। अस्य ब्रह्म ऋषिः, गायत्रं छन्दः, परमात्मा देवता न्यासे विनियोगः। बालया षडङ्गं विधाय ध्यायेत्।

श्यामाङ्गकान् वरान् सर्वान् सर्वाभरणभूषितान्। सशक्तिकान् स्मरेत् कामान् पञ्चाशद्वर्णभावने॥

इति ध्यात्वा ॐऐंह्रींश्रींक्लींअं कामेश्वररतिभ्यां नमः, एवं सर्वत्र। आं कामदप्रीति०। इं कान्तकामिनी०। ईं कान्तिमन्मोहिनी०। उं कामगकमला०। ऊं कामचारविलासिनी०। ऋं कामिकल्पलता०। ॠं कामुकश्यामा०। ऌं कामवर्धनशुचिस्मिता०। ॡं वामविस्मिता०। एं रामविशालाक्षी०। ऐं रमणलेलिहाना०। ओं रतिनाथदिगम्बरा०। औं रतिप्रियवामा०। अं रात्रिनाथकुब्जिका०। अः रमाकान्तकान्ता०। कं रमणनित्या०। खं निशाचरकुल्या०। गं नन्दकभोगिनी०। घं नन्दनकामदा०। ङं नन्दिसुलोचना०। चं नन्दयितृसुलापिनी०। छं पञ्चबाणमर्दिनी०। जं रतिसखकलहप्रिया०। झं पुष्पधन्ववराक्षी०। ञं महाधनुःसुमुखी०। टं भ्रामणनलिनी०। ठं भ्रमणजटिनी०। डं भ्रममाणपालिनी०। ढं भ्रमशिवा०। णं भ्रान्तमुग्धा०। तं भ्रामकरमा०। थं भृङ्गभ्रमा०। दं भ्रान्तचारलोला०। धं भ्रमावहचञ्चला०। नं मोहनदीर्घजिह्वा०। पं मोहकरतिप्रिया०। फं मोहलोलाक्षी०। बं मोहवर्धनभृङ्गिणी०। भं मदनपाटला०। मं मन्मथमदना०। यं मातङ्गमाला०। रं भृङ्गनायकहंसिनी०। लं गायकविश्वतोमुखी०। वं गीतिजगदानन्दिनी०। शं नर्तकरमणी०। षं खेलककान्ति०। सं उन्मत्तकलकण्ठी०। हं मत्तकवृकोदरी०। ळं विलासिमेघश्यामा०। क्षं लोभवर्धनलोभवर्धनीभ्यां नमः।

एतान् पौण्ड्रेक्षुकोदण्डपुष्पपञ्चकसायकान्। रतिभिः स्वर्णवर्णाभिस्ताम्बूलं च कुशेशयम्॥
धारयन्तीभिराश्लिष्टान् सर्वाभरणभूषितान्। सहकारमशोकं च केतकी नवमल्लिका॥
नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः।

इति कामरतिन्यासः।

कामरति न्यास—इस न्यास के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता परमात्मा हैं। न्यास-हेतु विनियोग बोलकर बालाबीज 'ऐं क्लीं सौः' से षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

श्यामाङ्गकान् वरान् सर्वान् सर्वाभरणभूषितान्। सशक्तिकान् स्मरेत् कामान् पञ्चाशद्वर्णभावने।।

उपर्युक्त रूप से ध्यान करने के बाद इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं कामेश्वररतिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं आं कामदप्रीतिभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं इं कान्तकामिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ईं कान्तिमन्मोहिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं उं कामगकमलाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऊं कामचारविलासिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऋं कामिकल्पलताभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॠं कामुकश्यामाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऌं कामवर्धनशुचिस्मिताभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॡं वामविस्मिताभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं एं रामविशालाक्षीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं रमणलेलिहानाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ओं रतिनाथदिगम्बराभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं औं रतिप्रियवामाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं रात्रिनाथकुब्जिकाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अः रमाकान्तकान्ताभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कं रमणनित्याभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं खं निशाचरकुल्याभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं गं नन्दकभोगिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं घं नन्दनकामदाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ङं नन्दिसुलोचनाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं चं नन्दयितृसुलापिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं छं पञ्चबाणमर्दिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं जं रतिसखकलहप्रियाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं झं पुष्पधन्ववराक्षीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ञं महाधनुःसुमुखीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं टं भ्रामणनलिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ठं भ्रमणजटिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं डं भ्रममाणपालिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ढं भ्रमशिवाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं णं भ्रान्तमुग्धाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं तं भ्रामकरमाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं थं भृङ्गभ्रमाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं दं भ्रान्तचारलोलाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं धं भ्रमावहचञ्चलाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं

नं मोहनदीर्घजिह्वाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं पं मोहकरतिप्रियाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं फं मोहलोलाक्षीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं बं मोहवर्धनभृङ्गिणीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं भं मदनपाटलाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं मं मन्मथमदनाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं यं मातङ्गमालाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं रं भृङ्गनायकहंसिनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं लं गायकविश्वतोमुखीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं वं गीतिजगदानन्दिनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं शं नर्तकरमणीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं षं खेलककान्तिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सं उन्मत्तकलकण्ठीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हं मत्तकवृकोदरीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ळं विलासिमेघश्यामाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं क्षं लोभवर्धनलोभवर्धनीभ्यां नम:।

पौण्ड्र-इक्षु-को दण्ड-पुष्पादि पाँच बाणों ताम्बूल एवं कुशेशय को धारण करने वाली स्वर्णवर्ण वाली रति आदि से आश्लिष्ट कामेश्वर आदि देवताओं के पञ्च बाण के सायक हैं—आम्र, अशोक, केतकी, नवमल्लिका एवं नीलकमल।

अष्टात्रिंशत्कलान्यासः

अथाष्टात्रिंशत्कलान्यासः। तत्रेशानादिपञ्चब्रह्मणः ईशतत्पुरुषाग्निवामदेवहरा ऋषयः, अनुष्टुब्गायत्र्य-नुष्टुप्कृत्यनुष्टुभः छन्दांसि, ईशानादयो देवताः पञ्चब्रह्मन्यासे विनियोगः। ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं सर्वज्ञाय हृदयाय नमः। बीजपञ्चकं सर्वत्र। ५ँ अमृते तेजोज्वालामालिने नित्यतृप्ताय शिरसे०। ५ँ ज्वलितशिखिशिख अनादिबोधाय शिखायै०। ५ँ वज्रिणे वज्रधराय स्वतन्त्राय कवचाय०। ५ँ ॐ स्हौं हसौं नित्यमलुप्तशक्तये नेत्रत्रयाय०। ५ँ ॐ श्लींपशुहुं फट् अनन्तशक्तयेऽस्त्राय०। ततः हों ईशानाय नम हें तत्पुरुषाय नमः। हुं अघोराय नमः। हिं वामदेवाय नमः। हं सद्योजाताय नमः। एवं पञ्चब्रह्ममन्त्रान् ऊर्ध्वपूर्वदक्षिणोत्तरपश्चिमवक्त्रेषु विन्यस्याष्टात्रिंशत् कला न्यसेत्। तद्यथा—ॐ ईशानः सर्वविद्यानां शशिन्यै नमः ऊर्ध्ववक्त्रे। ईश्वरः सर्वभूतानां अङ्गदायै नमः पूर्ववक्त्रे। ब्रह्मा-धिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः ब्रह्मष्टादायै नमः दक्षवक्त्रे। ब्रह्मा शिवो मे अस्तु मरीच्यै नमः उत्तरवक्त्रे। सदाशिवों अंशुमा-लिन्यै नमः पश्चिमवक्त्रे। इति समुष्टयङ्गुष्ठेन न्यसेत्। तत्पुरुषाय विद्महे शान्त्यै नमः पूर्ववक्त्राधः। महादेवाय धीमहि विद्यायै नमः दक्षिणवक्त्राधः। तन्नो रुद्रः प्रतिष्ठायै नमः उत्तरवक्त्राधः। प्रचोदयात् निवृत्त्यै नमः पश्चिमवक्त्राधः। इत्यङ्गुष्ठतर्जनीयोगेन न्यस्तव्याः। अघोरेभ्यस्तमाकलायै नमः हृदि। अथघोरेभ्यो मोहायै नमो ग्रीवायां। घोर-क्षमायै नमः दक्षांसे। घोरतरेभ्यो निद्रायै नमो वामांसे। सर्वतः शर्व व्याधिकलायै नमः नाभौ। सर्वेभ्यो मृत्युकलायै नमः कुक्षौ। नमस्ते अस्तु क्षुधायै नमः पृष्ठे। रुद्ररूपेभ्यस्तृष्णायै नमः वक्षसि। इत्यङ्गुष्ठमध्यमायोगेन न्यस्तव्याः। वामदेवाय नमो रजायै नमो गुह्ये। ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रक्षायै नमः लिङ्गे। रुद्राय नमो रत्यै नमः दक्षोरौ। कालाय नमो मालिन्यै नमः वामोरौ। कलविकरणाय नमः काम्यायै नमः दक्षजानुनि। विकरणाय नमः शशिन्यै नमः वामजानुनि। बलविकरणाय नमः क्रियायै नमः दक्षजङ्घायां। विकरणाय नमः सिद्ध्यै नमः वामजङ्घायां। बलाय नमः स्थिरायै नमः दक्षस्फिचि। बलप्रमथनाय नमो रात्र्यै नमः वामस्फिचि। सर्वभूतदमनाय नमो भ्रामिण्यै नमः कट्यां। मनोन्मनाय नमो मोहिन्यै नमः दक्षपार्श्वे। उन्मनाय नमो जरायै नमः वामपार्श्वे। इत्यङ्गुष्ठानामिकायोगेन न्यस्तव्याः। सद्योजातं प्रपद्यामि सिद्ध्यै नमः दक्षपादतले। सद्योजाताय वै नमः ऋद्ध्यै नमः वामपादतले। भवे लक्ष्म्यै नमः दक्षहस्ततले। भवे धृत्यै नमः वामहस्ततले। नातिभवे मेधायै नमः नासिकायां। भवस्व मां प्रज्ञायै नमः शिरसि। ॐ भव प्रभायै नमः दक्षबाहौ। उद्भवाय नमः सुधायै नमः वामबाहौ। इत्यङ्गुष्ठकनिष्ठिकायोगेन न्यस्तव्याः।

प्रणवाद्याश्चतुर्थ्यन्ताः कलाः सर्वा नमोन्तिकाः। अष्टात्रिंशत्कलाः प्रोक्ताः पञ्चब्रह्मपरादिकाः ॥
इति विन्यस्तदेहोऽसौ भवेद्गङ्गाधरः स्वयम्।

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे पञ्चत्रिंशत्तमः श्वासः॥३५॥

●

अष्टात्रिंशत् कला न्यास—ईशानादि पाँच ब्रह्ममन्त्र के क्रमशः ईश-तत्पुरुष-अग्नि-वामदेव-हर ऋषि हैं, अनुष्टुप्-गायत्री-अनुष्टुप्-कृती-अनुष्टप् छन्द हैं एवं ईशान-तत्पुरुष-अघोर-वामदेव-सद्योजातं देवता हैं। पञ्चब्रह्मन्यास के लिये इसका विनियोग किया जाता है। विनियोग करके इस प्रकार हृदयादि षडङ्ग न्यास किया जाता है—ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं सर्वज्ञाय हृदयाय नमः, ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं अमृते तेजोज्वालामालिने नित्यतृप्ताय शिरसे स्वाहा, ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं ज्वलितशिंखिशिख अनादिबोधाय शिखायै वषट्, ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं वज्रिणे वज्रधराय स्वतन्त्राय कवचाय हुं, ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं ॐ स्हौं हसौं नित्यमलुप्तशक्तये नेत्रत्रयाय वौषट्, ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौं ॐश्लींपशुहुं फट् अनन्तशक्तयेऽस्त्राय फट्। तदनन्तर हों ईशानाय नमः, हें तत्पुरुषाय नमः, हुं अघोराय नमः, हिं वामदेवाय नमः, हं सद्योजाताय नमः—इस प्रकार पाँच ब्रह्म मन्त्रों का ऊपर, पूर्व, दक्षिण, उत्तर, पश्चिम मुखों में न्यास करके अढ़तीस कलाओं का इस प्रकार न्यास करे—ॐ ईशानः सर्वविद्यानां शशिन्यै नमः (ऊपरी मुख में), ईश्वरः सर्वभूतानां अङ्गदायै नमः (पूर्व मुख में), ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः ब्रह्मष्टादायै नमः (दक्षिण मुख में), ब्रह्मा शिवो मे अस्तु मरीच्यै नमः (उत्तर मुख में), सदाशिवों अंशुमालिन्यै नमः (पश्चिम मुख में)। पाँचों मुखों में यह न्यास अंगूठे को मुट्ठी में बाँधकर करे। इसके बाद अंगूठा तथा तर्जनी के योग से पाँचों मुखों के नीचे इन मन्त्रों से न्यास करे—तत्पुरुषाय विद्महे शान्त्यै नमः (पूर्व मुख के नीचे), महादेवाय धीमहि विद्यायै नमः (दक्षिण मुख के नीचे), तन्नो रुद्रः प्रतिष्ठायै नमः (उत्तर मुख के नीचे), प्रचोदयात् निवृत्त्यै नमः (पश्चिम मुख के नीचे)। इसके बाद अंगूठा तथा मध्यमा के योग से इन मन्त्रों से न्यास करे—अघोरेभ्यस्तमाकलायै नमः (हृदय में), अथघोरेभ्यो मोहायै नमः (ग्रीवा में), घोरक्षमायै नमः (दाहिने कन्धे पर), घोरतरेभ्यो निद्रायै नमः (बाँयें कन्धे पर), सर्वतः शर्व व्याधिकलायै नमः (नाभि में), सर्वेभ्यो मृत्युकलायै नमः (कुक्षि में), नमस्ते अस्तु क्षुधायै नमः (पृष्ठ पर), रुद्ररूपेभ्यस्तृष्णायै नमः (वक्षःस्थल पर)। तदनन्तर अंगूठा तथा अनामिका को मिलाकर इन मन्त्रों से न्यास करे—वामदेवाय नमो रजायै नमः (गुह्य में), ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रक्षायै नमः (लिङ्ग में), रुद्राय नमो रत्यै नमः (दाहिने ऊरु में), कालाय नमो मालिन्यै नमः (बाँयें ऊरु में), कलविकरणाय नमः काम्यायै नमः (दाहिने जानु में), विकरणाय नमः शशिन्यै नमः (बाँयें जानु में), बलविकरणाय नमः क्रियायै नमः (दाहिनी जांघ में), विकरणाय नमः सिद्ध्यै नमः (बाँयीं जांघ में), बलाय नमः स्थिरायै नमः (दाहिने स्फिच में), बलप्रमथनाय नमो रात्र्यै नमः (बाँयें स्फिच में), सर्वभूतदमनाय नमो भ्रामिण्यै नमः (कमर में), मनोन्मनाय नमो मोहिन्यै नमः (दाहिने बगल में), उन्मनाय नमो जरायै नमः (बाँयें बगल में)। तदनन्तर अंगूठा तथा कनिष्ठा के योग से इन मन्त्रों से न्यास करे—सद्योजातं प्रपद्यामि सिद्ध्यै नमः (दाहिने पैर के तलवे में), सद्योजाताय वै नमः ऋद्ध्यै नमः (बाँयें पैर के तलवे में), भवे लक्ष्म्यै नमः (दाहिनी हथेली में), भवे धृत्यै नमः (बाँयीं हथेली में), नातिभवे मेधायै नमः (नासिका में), भवस्व मां प्रज्ञायै नमः (शिर पर), ॐ भव प्रभायै नमः (दाहिनी भुजा में), उद्भवाय नमः सुधायै नमः (बाँयीं भुजा में)।

इन समस्त कलाओं के चतुर्थ्यन्त नाम के पूर्व प्रणव एवं पश्चात् नमः लगाकर अपने शरीर में न्यास करने से साधक स्वयं साक्षात् शिवस्वरूप हो जाता है। इस प्रकार न्यास करके तीन प्राणायाम करे। तत्पश्चात् गणेश, पञ्चमी, दुर्गा, वटुक, क्षेत्रपाल, अन्नपूर्णा, अश्वारूढ़ मन्त्रों का क्रमशः पाठ करे।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र की कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में पञ्चत्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ षट्त्रिंशः श्वासः

मालिनीन्यासः

अथ मालिनीन्यासः। अस्य श्रीमालिनीन्यासस्य परशम्भुः ऋषिः, गायत्री छन्दः, मूलशक्तिर्मालिनी देवता न्यासे विनियोगः। नफक्षमलवरयां हृदयाय नमः, नफक्षमलवरयीं शिरसे, एवं षड्दीर्घयुक्तेन करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यायेत्।

रक्तवस्त्रधरां देवीं पञ्चवक्त्रधरां शिवाम्। निवृत्त्यादिकलायुक्तां प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम्॥
पाशाङ्कुशधरां देवीं सुधासिक्तकपालिनीम्। इच्छादित्रयसंयुक्तां शूलं दक्षकरे धराम्॥
रक्तपङ्कजमध्यस्थां मालिनीं भावयेच्छिवाम्।

इति ध्यात्वा—

परासंपुटितां कुर्यान्मालिनीं मातृकामपि। मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं (हृद्बीजं मदनात्मना॥
ब्रह्मरन्ध्रादिमूलान्तं) स्मरेदात्मपरामपि।

सौः अं कं ५ आं सौः हृदयाय०। सौः इं चं ५ ईं सौः शिरसे०। सौः उं टं ५ ऊं सौः शिखायै०। सौः एं तं ५ ऐं सौः कवचा०। सौः ओं पं ५ औं सौः नेत्र०। सौः अं यं १० अः सौः अस्त्राय०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, सौः नं नादिन्यै नमः सौः शिखायां। सौः ॠं निवृत्त्यै नमः सौः पश्चिमवक्त्रे। सौः ॠं प्रतिष्ठायै नमः सौः उत्तरवक्त्रे। सौः लृं विद्यायै नमः सौः दक्षिणवक्त्रे। सौः लॄं शान्तायै नमः सौः पूर्ववक्त्रे। सौः थं ग्रसन्यै नमः सौः ऊर्ध्ववक्त्रे। सौः चं चामुण्डायै नमः सौः ललाटनेत्रे। सौः धं प्रियदर्शनायै नमः सौः नेत्रयोः। सौः ईं गुह्यशक्तये नमः सौः नासिकायां। सौः णं नारायिण्यै नमः सौः कर्णयोः। सौः उं मोहिन्यै नमः सौः दक्षकर्णमुद्रायां। सौः ऊं प्रज्ञायै नमः सौः वामकर्णमुद्रायां। सौः बं वज्रिण्यै नमः सौः मुखे। सौः कं कङ्कटायै नमः सौः ऊर्ध्वदन्तेषु। सौः खं कालिकायै नमः सौः अधोदन्तेषु। सौः गं शिवायै नमः सौः ऊर्ध्वोष्ठे। सौः घं घोरघोरायै नमः सौः अधरोष्ठे। सौः ङं खिविरायै नमः सौः (जिह्वाग्रे)। सौः इं मायायै नमः सौः जिह्वायां। सौः अं वागीश्वर्यै नमः सौः वाचि। सौः वं शिखिबाहिन्यै नमः सौः कण्ठे। सौः भं भीषण्यै नमः सौः दक्षस्कन्धे। सौः यं वायुवेगायै नमः सौः वामस्कन्धे। सौः डं लामायै नमः सौः दक्षभुजे। सौः ढं विनायिक्यै नमः सौः वामभुजे। सौः ठं पूर्णिमायै नमः सौः हस्तयोः। सौः झं झङ्कर्यै नमः सौः दक्षहस्ताङ्गुलिषु। सौः ञं कूर्दनायै नमः सौः वामहस्ताङ्गुलिषु। सौः जं जयन्त्यै नमः सौः शूले। सौः रं दीपिन्यै नमः सौः दण्डे। सौः टं कपालिन्यै नमः सौः कपाले। सौः पं पावन्यै नमः सौः हृदये। सौः छं छगल्यै नमः सौः दक्षस्तने। सौः लं पूतनायै नमः सौः वामस्तने। सौः आं आमोटन्यै नमः क्षीरे। सौः सं परमायै नमः सौः आत्मनि। सौः अः इच्छाशक्तये नमः सौः प्राणात्मनि। सौः हं अम्बिकायै नमः सौः प्राणे। सौः षं लम्बिकायै नमः सौः उदरे। सौः क्षं संहारिकायै नमः सौः नाभौ। सौः मं महाकाल्यै नमः सौः नितम्बे। सौः शं कुसुमायुधायै नमः सौः गुह्ये। सौः अं शुक्रादेव्यै नमः सौः दक्षोरौ। सौः तं तारायै नमः सौः वामोरौ। सौः एं ज्ञानशक्तये नमः सौः दक्षजानौ। सौः ऐं क्रियाशक्तये नमः सौः वामजानौ। सौः ओं गायत्र्यै नमः सौः दक्षजङ्घायां। सौः औं सावित्र्यै नमः सौः वामजङ्घायां। सौः दं दहन्यै नमः सौः दक्षपादे। सौः फं फेट्कार्यै नमः सौः वामपादे। सौः नफक्षमलवरयीं सौः श्रीमालिन्यै नमः सौः हृदि। सौः ऐंह्रींश्रीं सौः मातृकायै नमः सौः शिरसि। सौः नफक्षमलवरयां सौः हृदयाय नमः, इत्यादिषड्दीर्घयुक्तेन मालिनीबीजेन करषडङ्गन्यासं कृत्वा प्राग्वत् ध्यायेत्। इति मालिनीन्यासः।

मालिनी न्यास—नफक्षमलवरयां हृदयाय नमः, नफक्षमलवरयीं शिरसे स्वाहा, नफक्षमलवरयूं शिखायै वषट्, नफक्षमलवरयैं कवचाय हुं, नफक्षमलवरयौं नेत्रत्रयाय वौषट्, नफक्षमलवरयः अस्त्राय फट्। इस प्रकार कर-षडङ्ग न्यास करके निम्नवत् ध्यान करे—

रक्तवस्त्रधरां देवीं पञ्चवक्त्रधरां शिवाम्। निवृत्त्यादिकलायुक्तां प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ।।
पाशाङ्कुशधरां देवीं सुधासिक्तकपालिनीम्। इच्छादित्रयसंयुक्तां शूलं दक्षकरे धराम् ।।
रक्तपङ्कजमध्यस्थां मालिनीं भावयेच्छिवाम्।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद परा-सम्पुटित मालिनी मातृकाओं से मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक और ब्रह्मरन्ध्र से मूलाधार तक ह्रीं-क्लींरूपिणी मालिनी का स्मरण आत्मपरारूप में करे। तदनन्तरं सौः अं कं खं गं घं ङं आं सौः हृदयाय नमः, सौः इं चं छं जं झं ञं ईं सौः शिरसे स्वाहा, सौं उं टं ठं डं ढं णं ऊं सौः शिखायै वषट्, सौः एं तं थं दं धं नं ऐं सौं कवचाय हुं, सौः ओं पं फं बं भं मं औं सौः नेत्रत्रयाय वौषट्, सौः अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः सौः अस्त्राय फट्—इस प्रकार हृदयादि न्यास करके करन्यास भी करे। न्यास के बाद इस प्रकार मालिनी न्यास करे—सौः नं नादिन्यै नमः सौः से शिखमें, सौः ॠं निवृत्त्यै नमः सौः से पश्चिम मुख में, सौः ॠं प्रतिष्ठायै नमः सौः से उत्तर मुख में, सौः ऌं विद्यायै नमः सौः से दक्षिण मुख में, सौः ॡं शान्तायै नमः सौः से पूर्व मुख में, सौः थं ग्रसन्यै नमः सौः से ऊपरी मुख में, सौः चं चामुण्डायै नमः सौः से ललाटस्थित नेत्र में, सौः धं प्रियदर्शनायै नमः सौः से दोनों नेत्रों में, सौः ईं गुह्यशक्तये नमः सौः से नासिका में, सौः णं नारायिण्यै नमः सौः से दोनों कानों में, सौः उं मोहिन्यै नमः सौः से दाहिने कर्णमुद्रा में, सौः ऊं प्रज्ञायै नमः सौः से बाँयें कर्णमुद्रा में, सौः बं वज्रिण्यै नमः सौः से मुख में, सौः कं कङ्कटायै नमः सौः से ऊपरी दाँतों में, सौः खं कालिकायै नमः सौः से नीचले दाँतों में, सौः गं शिवायै नमः सौः से ऊपरी ओष्ठ में, सौः घं घोरघोरायै नमः सौः से नीचले ओष्ठ में, सौः ङं खिविरायै नमः सौः से जिह्वा के आगे, सौः इं मायायै नमः सौः से जिह्वा में, सौः अं वागीश्वर्यै नमः सौः से मुख में, सौः वं शिखिबाहिन्यै नमः सौः से कण्ठ में, सौः भं भीषण्यै नमः सौः से दाहिने कन्धे पर, सौः यं वायुवेगायै नमः सौः से बाँयें कन्धे पर, सौः डं लामायै नमः सौः से दाहिनी भुजा में, सौः ढं विनायिक्यै नमः सौः से बाँयीं भुजा में, सौः ठं पूर्णिमायै नमः सौः से हाथों में, सौः झं झङ्कर्यै नमः सौः से दाहिने हाथ की अंगुलियों में, सौः ञं कूर्दनायै नमः सौः से बाँयें हाथ की अंगुलियों में, सौः जं जयन्त्यै नमः सौः से शूल में, सौः रं दीपिन्यै नमः सौः से दण्ड में, सौः टं कपालिन्यै नमः सौः से कपाल में, सौः पं पावन्यै नमः सौः से हृदय में, सौः छं छगल्यै नमः सौः से दाहिने स्तन पर, सौः लं पूतनायै नमः सौः से बाँयें स्तन पर, सौः आं आमोटन्यै नमः से क्षीर में, सौः सं परमायै नमः सौः से आत्मा में, सौः अः इच्छाशक्तये नमः सौः से प्राणात्मा में, सौः हं अम्बिकायै नमः सौः से प्राण में, सौः षं लम्बिकायै नमः सौः से उदर में, सौः क्षं संहारिकायै नमः सौः से नाभि में, सौः मं महाकाल्यै नमः सौः से नितम्ब पर, सौः शं कुसुमायुधायै नमः सौः से गुह्य में, सौः अं शुक्रादेव्यै नमः सौः से दाहिने ऊरु में, सौः तं तारायै नमः सौः से बाँयें ऊरु में, सौः एं ज्ञानशक्तये नमः सौः से दाहिने जानु में, सौः ऐं क्रियाशक्तये नमः सौः से बाँयें जानु में, सौः ओं गायत्र्यै नमः सौः से दाहिने जांघ में, सौः औं सावित्र्यै नमः सौः से बाँयें जांघ में, सौः दं दहन्यै नमः सौः से दाहिने पैर में, सौः फं फेट्कार्यै नमः सौः से बाँयें पैर में। तदनन्तर सौः नफक्षमलवरयीं सौः श्रीमालिन्यै नमः सौः हृदि, सौः ऐंह्रींश्रीं सौः मातृकायै नमः सौः से शिरसि, सौः नफक्षमलवरयां सौः हृदयाय नमः इत्यादि छः दीर्घ मालिनीबीज से कर-षडङ्गन्यास करके पूर्ववत् ध्यान करे।

लिङ्गकरशुद्धिन्यासौ

ततः प्राणायामत्रयं कृत्वा लिङ्गन्यासं कुर्यात्। ॐ ऐं स्वयंभूलिङ्गाय नमः आधारे। ॐ ईं बाणलिङ्गाय नमः हृदये। ॐ औं इतरलिङ्गाय नमः भ्रूमध्ये। ॐ ऐंईंऔं परलिङ्गाय नमः ब्रह्मरन्ध्रे। कनकपटलनिभं तत्समष्टिरूपं तेजो विचिन्त्य वहन्नासापुटाध्वना कराञ्जलौ संक्रम्य, अंआंसौः इति बीजत्रयं मध्यमानामिकाकनिष्ठाङ्गुष्ठतर्जनीकरतलेषु विन्यस्येत्। इति करशुद्धिन्यासः। नाभेरापादं हृदो नाभिपर्यन्तं शिरसो हृत्पर्यन्तं तदेव बीजत्रयं बालया वा व्यस्तसमस्तक्रमेण विन्यस्य, ह्रीँऐंक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष हृदयाय नमः इति क्रमेण षडङ्गन्यासं कृत्वा, आधारहृत्-

शिरसु चतुर्दलद्वादशदलषोडशदलमण्डलानि विभाव्य तेषु क्रमेण वह्निसूर्यसोमात्म-कतया मूलविद्याखण्डत्रयं तेजोरूपं विचिन्त्य, करयोर्मूलमध्याग्रेषु मूलहृद्बिन्दुषु च न्यसेत्।

इसके बाद तीन प्राणायाम करके इस प्रकार लिङ्गन्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं स्वयंभूलिङ्गाय नम: आधारे, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं बाणलिङ्गाय नम: हृदये, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं इतरलिङ्गाय नम: भ्रूमध्ये, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ईं औं परलिङ्गाय नम: ब्रह्मरन्ध्रे। तदनन्तर स्वर्णपटल-सदृश उसके समष्टिरूप तेज का चिन्तन करके प्रवहमान नासापुट के मार्ग से बाहर कराञ्जलि में लाकर अं आं सौ:—इस तीन बीज का मध्यमा अनामिका कनिष्ठा अंगुष्ठ तर्जनी करतल में न्यास करे।

तदनन्तर नाभि से पादाग्रों तक, हृदय से नाभि तक, शिर से हृदय तक उन्हीं तीनों बीजों 'अं आं सौ:' या बालाबीज 'ऐं क्लीं सौ' से व्यस्त समस्त क्रम से न्यास करके 'ह्रीं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष हृदयाय नम:, ह्रीं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष शिर से स्वाहा, ह्रीं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरसुन्दरि आत्मान रक्ष रक्ष शिखायै वषट्, ह्रीं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष कवचाय हुं, ह्रीं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्रीं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष अस्त्राय फट्—इस प्रकार षडङ्ग न्यास करके आधार, हृदय एवं शिर में चतुर्दल, द्वादश दल, षोडश दल मण्डल का चिन्तन करते हुये उनमें क्रमश: अग्नि-सूर्य-सोमात्मक रूप में मूल विद्या के तीन कूटों का तेजोरूप का चिन्तन करे। तदनन्तर हाथ के मूल-मध्य-अग्र भाग में एवं मूलाधार, हृदय और आज्ञा में उनका न्यास करे।

नवासनन्यास:

मूलविद्यात्रयावृत्त्या तुर्येण ब्रह्मरन्ध्रके। द्वादशान्तेन्दुविगलत् पीयूषेणात्मनस्तनुम्॥
संभाव्य तन्मयो भूत्वा न्यसेत् पश्चान्नवासनम्।

ॐ अंआंसौ: त्रिपुरामृतार्णवासनाय नम:। ॐ ऐंक्लींसौ: त्रिपुरेश्वरीरक्तपोताम्बुजासनाय नम:। ॐ ह्रींक्लींसौ: त्रिपुरसुन्दरीदेव्यात्मासनाय नम:। ॐ हैं-ह्क्लीं-हसौ: त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनाय नम:। ॐ हसैं-हसक्लीं-हसौ: त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नम:। ॐ ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नम:। ॐ ह्रींश्रींसौ: त्रिपुरासिद्धासिताम्बुजासनाय नम:। ॐ हस्रैं-हसकलरीं-हस्रौ: त्रिपुराम्बापर्यङ्कपीठासनाय नम:। ॐ हसकलरडैं-हसकलरडीं-हसकलरडौ: त्रिपुरभैरवीसदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नम:।

एतांस्तु पादजानूरुजघनापानलिङ्गके। नाभिहृद्ब्रह्मरन्ध्रेषु विन्यसेत् क्रमत: सुधी:॥

नव आसन न्यास—मूल विद्या के तीन जप से मूलाधार-हृदय-भ्रूमध्य में और चतुर्थ जप से ब्रह्मरन्ध्र के द्वादशान्त में न्यास करे। उससे चन्द्रविगलित पीयूष वर्षा से अपने शरीर को भिगोकर तन्मय होकर इस प्रकार नव आसन न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं सौ: त्रिपुरामृतार्णवासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अंआंसौ: त्रिपुरामृतार्णवासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंक्लींसौ: त्रिपुरेश्वरीरक्तपोताम्बुजासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींसौ: त्रिपुरसुन्दरीदेव्यात्मासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हैं-ह्क्लीं-हसौ: त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसैं-हसक्लीं-हसौ: त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रींसौ: त्रिपुरासिद्धासिताम्बुजासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्रैं-हसकलरीं-हस्रौ: त्रिपुराम्बापर्यङ्कपीठासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसकलरडैं-हसकलरडीं-हसकलरडौ: त्रिपुरभैरवीसदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नम:। इन नव आसनों का न्यास पाद, जानु, ऊरु, जंघा, गुदा, लिङ्ग, नाभि, हृदय एवं ब्रह्मरन्ध्र में करे।

परान्यास:

अथ परान्यास:। ब्रह्मरन्ध्रेऽरुणाधोमुखसहस्रदलकमलकर्णिकायामरुणपूर्णचिच्चन्द्रमण्डलं विभाव्य तन्मध्ये उदितादित्यसंकाशं स्वशिखामूलाग्रं शृङ्गाटं ध्यात्वा, तन्मध्ये अकथादिक्रमेण समस्ताक्षरमयमकुलासनं वाग्भवं ध्यात्वा, तन्मध्ये हक्षपार्श्वमादिवर्णकदम्बकं दीप्तमवर्णरूपमनुत्तरमनच्कतरहात्मकं सञ्चिन्त्य, तन्मध्यादुद्यन्तीं हार्धकलारूपाममृत-कुण्डलिनीं मूलशृङ्गाटमध्यपर्यन्तमविच्छिन्नां बिसतन्तुनिभां सितां कुण्डलिनीं महाकामकलात्मिकां ध्यात्वा, मूलाधारे

चतुर्दलपद्मकर्णिकायामपि वह्निमण्डले त्रिकोणस्याग्रकोणाग्रे शृङ्गाटं पूर्ववत् ध्यात्वा, तदन्तः कुलासनं, तत्र च वाग्भवं सञ्चिन्त्य, तत्र प्राग्वत् कामकलां ज्वलदग्निरूपां ध्यात्वा तन्मध्यादुद्यन्तीं सपरार्धकलामयीमग्निकुण्डलिनीं लिङ्गाकारतया योनिरूपसुधाकुण्डलिनीमध्यमार्गमनुप्रवेश्य षड्ग्रन्थिसञ्चयं भित्त्वा तदकुलपदावध्यूर्ध्वं प्राप्तां ध्यात्वा, अकुलाम्बुधि-मध्यगतदण्डाकारतरदण्डलिङ्गेन प्रवेशयित्वा तयोरमृतानलकुण्डलिन्योर्योनिलिङ्गरूपयोर्मथनसंभवैर्निरन्तरनिबिडस्रव-दरुणामृतवर्षैरात्मानं सिक्तं ध्यात्वा तयोः सामरस्यात् तदेकनादरूपिणीं परां शक्तिं भावयेत्। इति परान्यासः।

परान्यास—ब्रह्मरन्ध्र में अधोमुख अरुण सहस्रदल कमल कर्णिका में अरुणपूर्ण चित् चन्द्रमण्डल का चिन्तन करे। उसके मध्य में उदीयमान सूर्य के समान अपनी शिखा के मूलाग्र-सदृश शृङ्गाट (पर्वत) का ध्यान करे। उसके मध्य में अकथ आदि क्रम से समस्त अक्षरमय कुलासन में वाग्भव का ध्यान करे। उसके मध्य में ह-क्ष के पार्श्व में आदि वर्ण कदम्बक दीप्त वर्णरूप अनुत्तरमन च्कतरहात्मक का चिन्तन करे। उसके मध्य में उदीयमान हार्धकलारूपा अमृतकुण्डलिनी का शृङ्गाट के मूल से मध्य तक अविच्छिन्ना विसतन्तु के समान श्वेत वर्णा महाकामकला रूप में चिन्तन करे। मूलाधार में चतुर्दल पद्म की कर्णिका में भी वह्निमण्डल त्रिकोण के अग्रकोण में शृङ्गाट का पूर्ववत् ध्यान करे। उसके भीतर कुलासन पर वाग्भव का चिन्तन करे। वहीं पर पूर्ववत् प्रज्वलित अग्निरूपा कामकला का ध्यान करे। उसके मध्य से उदीयमान सपरार्ध कलामयी अग्नि कुण्डलिनी को लिङ्गाकारतया योनिरूप सुधाकुण्डलिनी-मध्य मार्ग में प्रविष्ट करे। तदनन्तर षड्ग्रन्थिचय को भेदकर अकुलपद-पर्यन्त ऊर्ध्व में स्थित ध्यान करके अकुल अम्बुधि मध्यगत दण्डाकारतर दण्डलिङ्ग के रूप में प्रविष्ट कराकर उनके अमृत-अनल कुण्डलिनी के योनिलिङ्ग रूप में मथन से उत्पन्न निरन्तर निषिड स्रवित अमृत वर्षा से अपने को सिक्त होने का ध्यान करे एवं उन दोनों के सामरस्य से एक नादरूपिणी परा शक्ति की भावना करे।

पश्यन्तीन्यासः

अथ पश्यन्तीन्यासः। स्वशिरसि अकुलपद्मे आत्माग्रं त्रिकोणं ब्रह्मरसभरिताद्यवर्णकदम्बकं ध्यात्वा तत्सामरस्यादेकादशशक्त्यात्मकं पश्यन्त्यवस्थारसभरितं सञ्चिन्त्य अग्रादिवामावर्तेन त्रिरेखासु त्रिकं पञ्चकं त्रिकं च पश्यन्तीकलाकदम्बकं न्यसेदिति। प्रथमरेखायां ४ँ वामायै नमः। ४ँ ज्येष्ठायै नमः। रौद्र्यै नमः। द्वितीयरेखायां ४ँ अम्बिकायै नमः। ४ँ इच्छायै नमः। ४ँ ज्ञानायै०। ४ँ क्रियायै०। ४ँ शान्तायै०। तृतीयरेखायां ४ँ अकारात्मिकायै नमः। ४ँ हकारात्मिकायै०। ४ँ अक्षरात्मिकायै०। इति न्यसेत्। इति पश्यन्तीन्यासः।

पश्यन्ती न्यास—अपने शिर के अकुल पद्म में आत्मा के आगे त्रिकोणाकार ब्रह्मरस से पूरित आद्य वर्णकदम्बक का ध्यान करे। उनके सामरस्य से एकादश शक्त्यात्मक पश्यन्ती अवस्था रसभरित का चिन्तन करके आगे से वामावर्त क्रम से तीन रेखाओं में तीन, पाँच, तीन पश्यन्ती कला कदम्बकों का न्यास करे। प्रथम रेखा में इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वामायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ज्येष्ठायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रौद्र्यै नमः। द्वितीय रेखा में—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अम्बिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इच्छायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ज्ञानायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रियायै नमः, शान्तायै नमः। तृतीय रेखा में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अकारात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हकारात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षकारात्मिकायै नमः।

मध्यमान्यासः

अथ मध्यमान्यासः। ४ँ अनच्कात्मने अविकृतनादाय नमो ब्रह्मरन्ध्रे। ४ँ अकारात्मने शून्यनादाय नमः ललाटे। ४ँ बिन्दुद्वयात्मने स्पर्शनादाय नमः भ्रूमध्ये। ४ँ षट्कोणरेखात्मने नादनादाय नमः लम्बिकाग्रे। ४ँ अर्धचन्द्रात्मने ध्वनिनादाय नमः विशुद्धौ। वृत्तात्मने बिन्दुनादाय नमः अनाहते। एकारात्मने शक्तिनादाय नमः मणिपूरके। द्वन्द्वात्मने बीजनादाय नमः स्वाधिष्ठाने। हंसरूपात्मने अक्षरनादाय नमः आधारे। इति मध्यमान्यासः।

मध्यमा न्यास—मध्यमा न्यास ब्रह्मरन्ध्र, ललाट, भ्रूमध्य, जिह्वाग्र, विशुद्धि चक्र, अनाहत चक्र, मणिपुर चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र एवं आधार चक्र में क्रमशः इन मन्त्रों से करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अनच्कात्मने अविकृतनादाय नमः ॐ ऐं ह्रीं

श्रीं अकारात्मने शून्यनादाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बिन्दुद्वयात्मने स्पर्शनादाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षट्कोणरेखात्मने नादनादाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अर्धचन्द्रात्मने ध्वनिनादाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वृत्तात्मने बिन्दुनादाय नमः, एकारात्मने शक्तिनादाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्रात्मने बीजनादाय नमः, हंसरूपात्मने अक्षरनादाय नमः। यह मध्यमा न्यास स्थूल एवं सूक्ष्म के भेद से दो प्रकार का होता है। यहाँ सूक्ष्म न्यास का विवेचन किया गया है। स्थूल न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ ऐं ह्रीं अं इं उं ऋं लृं नमः (शिर में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं ऐं ओं औं नमः (ललाट में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं ळं नमः (भ्रूमध्य में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं ञं णं नं मं नमः (जिह्वा के अग्रभाग में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं छं ठं थं फं नमः (विशुद्धि में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं झं ढं धं भं नमः (नाभि में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं बं डं दं बं नमः (स्वाधिष्ठान में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं नमः (मूलाधार में)।

वैखरीन्यासः

अथ वैखरीन्यासः। षडाधारं गुणत्रयेण त्रिधा विभज्य बीजत्रयसङ्गतं कृत्वा वस-बलाब्जयोस्तडिदाभं मूलवाग्भवं, डफ-कठाब्जयोरलक्तकनिभं शुद्धकामराजं, स्वरहक्षयोः चन्द्रसन्निभं शुद्धतार्तीयं शिवशक्तिबीज-संगतं कृत्वा न्यसेत्। तद्यथा—मूलाधारे पूर्वादिचतुर्दले (स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन) वंहसैं, शंहसैं, षंहसैं, संहसैं। स्वाधिष्ठाने बंहसैं, भंहसैं, मंहसैं, यंहसैं, रंहसैं, लंहसैं। मणिपूरे डंहसीं, ढंहसीं, णंहसीं, तंहसीं, थंहसीं, दंहसीं, धंहसीं, नंहसीं, पंहसीं, फंहसीं। अनाहते द्वादशदलेषु पूर्वादि कंहसीं, खंहसीं, गंहसीं, घंहसीं, ङंहसीं, चंहसीं, छंहसीं, जंहसीं, झंहसीं, ञंहसीं, टंहसीं, ठंहसीं। ततो विशुद्धौ षोडशदलेषु अंहसौः आंहसौः इत्यादि अःहसौः इत्यन्तं विन्यस्य, आज्ञायां हंहसौः, क्षंहसौः इति विन्यसेदिति वैखरीन्यासः। (अन्तःसुधासिक्तं पद्मरागप्रभं वर्णकदम्बकं ध्यायेत्)

वैखरी न्यास—षडाधार को गुणत्रय से तीन भाग करके बीजत्रय से संयुक्त करके वस-बलाब्ज में विद्युताभ मूल वाग्भव कूट का न्यास करे। डफ-कठाब्ज में आलता के रंग के शुद्ध कामराज कूट का न्यास करे एवं स्वर ह क्ष में चन्द्राभ शुद्ध तार्तीय शक्तिकूट का शिव-शक्ति बीज से संयुक्त करके न्यास करे। जैसे—मूलाधार के चार दलों में पूर्वादि क्रम से अपने से प्रदक्षिण क्रम से वं ह्सैं, शं ह्सैं, षं ह्सैं, सं ह्सैं का न्यास करे। स्वाधिष्ठान में बं ह्सैं, भं ह्सैं, मं ह्सैं, यं ह्सैं, रं ह्सैं, लं ह्सैं का न्यास करे। मणिपूर में डं ह्सीं, ढं ह्सीं, णं ह्सीं, तं ह्सीं, थं ह्सीं, दं ह्सीं, धं ह्सीं, नं ह्सीं, पं ह्सीं, फं ह्सीं का न्यास करे। अनाहत में द्वादश दल में कं ह्सीं, खं ह्सीं, गं ह्सीं, घं ह्सीं, ङं ह्सीं, चं ह्सीं, छं ह्सीं, जं ह्सीं, झं ह्सीं, ञं ह्सीं, टं ह्सीं, ठं ह्सीं का पूर्वादि क्रम से न्यास करे। तदनन्तर विशुद्धि के षोडशदल में अं ह्सौं, आं ह्सौं इत्यादि रूप में सोलह स्वरों का न्यास करे। द्विदल आज्ञा में—हं ह्सौं, क्षं ह्सौं का न्यास करे। तदनन्तर हृदय में सुधासिक्त पद्मराग-सदृश वर्णकदम्बक का ध्यान करे।

कामकलान्यासः

अथ कामकलान्यासः। तत्र ईंकारोर्ध्वगतबिन्दुमात्मनो वक्त्रं परिकल्प्य ऐं परावक्त्राय नमः इति मुखे व्यापकत्वेन विन्यस्य, तदधः सपरार्धरूपं बिन्दुद्वययुक्तं स्तनद्वयं ध्यात्वा क्लीं सपरार्धबिन्द्वात्मकस्तनयुग्माय नमः। इति व्यापकं कृत्वा, सौः सपरार्धाभिव्यञ्जकरेखात्मयोन्यै नमः इति लिङ्गे व्यापकं, नासां ललाटं चक्षुषी कर्णौ वदनं च मुखबिन्दौ, भुजचतुष्टयं वक्षोजद्वयं स्तनबिन्दौ, चरणद्वयं योनिबिन्दौ ध्यात्वा,समष्टिभूतमकुलाक्षरं सर्वावयवसंपूर्णं परमसौन्दर्यमयं कामेश्वराङ्कस्थितमात्मानं ध्यात्वायुधन्यासं कुर्यात्। ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां जृम्भणकामेश्वरकामेश्वरीबाणेभ्यो नमः स्वदक्षिणाधःकरे। ॐ धं (थं) संमोहनकामेश्वरकामेश्वरीधनुर्भ्यां नमः स्ववामाधःकरे। ॐ ओं आं ह्रीं वशीकरण कामेश्वरकामेश्वरीपाशाभ्यां नमः स्वदक्षिणोर्ध्वकरे। ॐ क्रों क्रों स्तम्भनकामेश्वरकामेश्वर्यङ्कुशाभ्यां नमः स्ववामोर्ध्वकरे।

कामकला न्यास—'ईं' के ऊपर स्थित बिन्दु अपने मुख की कल्पना करके उसमें 'ऐं परावक्त्राय नमः' से व्यापक न्यास करे। उसके नीचे सपरार्धरूप बिन्दुद्वय युक्त स्तनद्वय का ध्यान करके वहीं पर 'क्लीं सपरार्धबिन्द्वात्मकस्तनयुग्माय नमः' से व्यापक न्यास करके 'सौः सपरार्धाभिव्यंजकरेखात्मयोन्यै नमः' लिङ्ग में व्यापक न्यास करे। नासा, ललाट, आँख, कान,

वदन का मुखबिन्दु में; चार भुजा एवं स्तनद्वय का स्तनबिन्दु में एवं चरणद्वय का योनिबिन्दु में ध्यान करके समष्टिभूत अकुल, अक्षर सर्वावयव-सम्पूर्ण परम सौन्दर्यमय स्वयं का कामेश्वरांक में स्थित ध्यान करके इस प्रकार आयुध न्यास करे—अपने दाहिने नीचले हाथ में—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स: यां रां लां वां शां जृम्भणकामेश्वरकामेश्वरीबाणेभ्यो नम:। बाँयें नीचले हाथ में—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं थं सम्मोहनकामेश्वरकामेश्वरीधनुर्भ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं आं ह्रीं वशीकरणकामेश्वरकामेश्वरीपाशाभ्यां नम:—दाहिने ऊपरी हाथ में। वाम ऊपरी हाथ में—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रों क्रों स्तम्भनकामेश्वरकामेश्वर्यंकुशाभ्यां नम:। तब तत्तत् मुद्राओं को दिखाकर पञ्चदशी विद्या से तीन बार व्यापक न्यास करे।

कलालिकान्यास:

एवं तत्तन्मुद्रा: प्रदर्श्य पञ्चदश्या त्रिर्व्यापकं कृत्वा (मातृकास्थानेषु) कलालिकान्यासं कुर्यात्। ४ँ अं कामिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, एवं सर्वत्र। आं मोदिनी त्रि०। इं मदना त्रि०। ईं उन्मादिनी त्रि०। उं द्राविणी त्रि०। ऊं खेचरी त्रि०। ऋं घण्टिका त्रि०। ॠं कलावती त्रि०। ऌं क्लेदिनी त्रि०। ॡं शिवदूती त्रि०। एं सुभगा त्रि०। ऐं भगा त्रि०। ओं विद्येश्वरी त्रि०। औं महालक्ष्मी त्रि०। अं कौलिनी त्रि०। अ: सुरेश्वरी त्रि०। कं कुलमालिनी त्रि०। खं व्यापिनी त्रि०। गं भगावहा त्रि०। घं वागीश्वरी त्रि०। ङं वषट्कारिणी त्रि०। चं पिङ्गला त्रि०। छं भगसर्पिणी त्रि०। जं सुन्दरी त्रि०। झं नीलपताका त्रि०। ञं त्रिपुरा त्रि०। टं सिद्धेश्वरी त्रि०। ठं अमोघा त्रि०। डं रत्नमालिनी त्रि०। ढं मङ्गला त्रि०। णं भगमालिनी त्रि०। तं नित्या त्रि०। थं रौद्री त्रि०। दं व्योमेश्वरी त्रि०। धं अम्बिका त्रि०। नं अट्टहासा त्रि०। पं आप्यायिनी त्रि०। फं वज्रेश्वरी त्रि०। बं क्षोभिणी त्रि०। भं शांभवी त्रि०। मं स्तम्भिनी त्रि०। यं अनामा त्रि०। रं रक्ता त्रि०। लं शुक्ला त्रि०। वं अपराजिता त्रि०। शं संवर्तिका त्रि०। षं विमला त्रि०। सं अघोरा त्रि। हं घोरा त्रि०। ळं बिन्दुभैरवी त्रि०। क्षं सर्वाकर्षिणी त्रि०। इति कलालिकान्यास:।

इसके बाद मातृकान्यासस्थानों में कलालिका न्यास इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कामिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, आं मोदिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, इं मदना त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ईं उन्मादिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, उं द्राविणी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऊं खेचरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऋं घण्टिका त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ॠं कलावती त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऌं क्लेदिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ॡं शिवदूती त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, एं सुभगा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ऐं भगा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ओं विद्येश्वरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, औं महालक्ष्मी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, अं कौलिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, अ: सुरेश्वरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, कं कुलमालिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, खं व्यापिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, गं भगावहा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, घं वागीश्वरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ङं वषट्कारिणी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, चं पिङ्गला त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, छं भगसर्पिणी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, जं सुन्दरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, झं नीलपताका त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ञं त्रिपुरा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, टं सिद्धेश्वरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ठं अमोघा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, डं रत्नमालिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ढं मङ्गला त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, णं भगमालिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, तं नित्या त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, थं रौद्री त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, दं व्योमेश्वरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, धं अम्बिका त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, नं अट्टहासा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, पं आप्यायिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, फं वज्रेश्वरी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, बं क्षोभिणी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, भं शांभवी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, मं स्तम्भिनी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, यं अनामा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, रं रक्ता त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, लं शुक्ला त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, वं अपराजिता त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, शं संवर्तिका त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, षं विमला त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, सं अघोरा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, हं घोरा त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ळं बिन्दुभैरवी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:, क्षं सर्वाकर्षिणी त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

कामकलान्यास:

अथ कामकलान्यास:। क्लीं श्रद्धायै नम: दक्षपादे। क्लीं प्रीत्यै नम: जङ्घायां। क्लीं रत्यै नम: जानुनि। क्लीं स्मृत्यै नम: ऊरौ। क्लीं कान्त्यै नम: वक्षसि। क्लीं मनोरमायै नम: बाहौ। क्लीं मनोहरायै नम: मुखे। क्लीं मनोरथायै नम: मूर्ध्नि। एवं दक्षभागे विन्यस्य वामभागे विलोमेन। क्लीं मनोन्मन्यै नम: मूर्ध्नि। क्लीं मोदिन्यै नम: आस्ये। क्लीं दीपिन्यै नम: बाहौ। क्लीं शोषिन्यै नम: वक्षसि। क्लीं वशंकर्यै नम: ऊरौ। क्लीं राजस्यै नम: जानौ। क्लीं सुभगायै नम: जङ्घायां। क्लीं प्रियदर्शिन्यै नम: पादे। इति कामकलान्यास:।

कामकला न्यास—क्लीं श्रद्धायै नम: (दाहिना पैर), क्लीं प्रीत्यै नम: (जांघ), क्लीं रत्यै नम: (जानु), क्लीं स्मृत्यै नम: (दोनों ऊरु), क्लीं कान्त्यै नम: (वक्ष:स्थल), क्लीं मनोरमायै नम: (बाहु), क्लीं मनोहरायै नम: (मुख), क्लीं मनोरथायै नम: (मूर्धा)। इस प्रकार दाहिने भाग में न्यास करके बाँयें भाग में विपरीत क्रम से अग्रलिखित मन्त्रों से तत्तत् स्थानों में न्यास करे—क्लीं मनोन्मन्यै नम: (मूर्धा), क्लीं मोदिन्यै नम: (मुख), क्लीं दीपिन्यै नम: (बाहु), क्लीं शोषिन्यै नम: (वक्ष:स्थल), क्लीं वशंकर्यै नम: (ऊरु), क्लीं राजस्यै नम: (जानु), क्लीं सुभगायै नम: (जङ्घा), क्लीं प्रियदर्शिन्यै नम: (पैर)।

सोमकलान्यास:

अथ सोमकलान्यास:। सं पूषायै नम: पृष्ठवंशे। सां यशस्विन्यै नम: अंसपृष्ठे। सिं सुमनसे नम: ग्रीवापृष्ठे। सीं रत्यै नम: कर्णे। सुं प्रीत्यै नम: नेत्रे। सूं धृत्यै नम: नासाबिले। सृं ऋद्ध्यै नम: ललाटे। सॄं सौम्यायै नम: मस्तके। एवं दक्षभागे विन्यस्य वामभागे विलोमत:। स्ऌं मरीच्यै नम: मस्तके। स्ॡं अंशुमालिन्यै नम: ललाटे। सें अम्बिकायै नम: नासाबिले। सैं शशिन्यै नम: नेत्रे। सों छायायै नम: कर्णे। सौं संपूर्णमण्डलायै नम: ग्रीवापृष्ठे। सं तुष्ट्यै नम: अंसपृष्ठे। स: अमृतायै नम: पृष्ठवंशे। इति सोमकलान्यास:। 'एवं सोमकलान्यासस्त्राणद: परिकीर्तित:'।

सोमकला न्यास—सोमकला न्यास शरीर के दाहिने भाग के तत्तत् स्थानों में इन मन्त्रों से किया जाता है—सं पूषायै नम: (पृष्ठवंश), सां यशस्विन्यै नम: (अंसपृष्ठ), सिं सुमनसे नम: (ग्रीवा के पीछे), सीं रत्यै नम: (कान), सुं प्रीत्यै नम: (आँख), सूं धृत्यै नम: (नासाछिद्र), सृं ऋद्ध्यै नम: (ललाट), सॄं सौम्यायै नम: (मस्तक)। इसी प्रकार बाँयें भाग के स्थानों में विपरीत क्रम से इन मन्त्रों से न्यास करे—स्ऌं मरीच्यै नम: (मस्तक), स्ॡं अंशुमालिन्यै नम: (ललाट), सें अम्बिकायै नम: (नासाछिद्र), सैं शशिन्यै नम: (आँख), सों छायायै नम: (कान), सौं संपूर्णमण्डलायै नम: (ग्रीवा के पीछे), सं तुष्ट्यै नम: (कन्धे के पीछे), स: अमृतायै नम: (पृष्ठवंश)। इस सोमकला न्यास को शरीर की रक्षा करने वाला कहा गया है।

योगपीठन्यास:

अथ योगपीठन्यास:। तत्रांसद्वयोरुद्वयकल्पितपादचतुष्टयं मुखनाभिपार्श्वद्वयकल्पितगात्रचतुष्टयं योग- पीठं निजदेहे ध्यात्वा न्यसेत्। मूलाधारे ४ँ महाकालाय रक्तवर्णाय मण्डूकाधाराय नम:। उपरि स्वाधिष्ठानपर्यन्तं ४ँ पञ्चवक्त्रदशभुजाय रक्तकृष्णवर्णवामदक्षिणपार्श्वाय कालाग्निरुद्राय नम:। तदुपरि नाभिपर्यन्तं ४ँ बन्धूकरुचिरायै मूलप्रकृतये नम:। तदुपरि हृदयपर्यन्तं ४ँ शरच्चन्द्रप्रभायै पङ्कजद्वयधारिण्यै आधारशक्तये नम:। तदुपरि हृदय एव कूर्माय०। अनन्ताय०। वराहाय०। पृथिव्यै०। अमृतार्णवाय०। ४ँ अंआं इत्यादिक्षान्तं मातृकामुच्चार्य नवखण्डविराजिताय नवरत्नमयद्वीपाय नम:। तत्रैव नवखण्डेषु नवरत्नानि न्यसेत् ईशानादिमध्यान्तं प्रादक्षिण्यक्रमेण। ३ँ पुष्परागरत्नाय०। ३ँ नीलरत्नाय०। ३ँ वैदूर्यरत्नाय०। ३ँ विद्रुमरत्नाय०। ३ँ मौक्तिकरत्नाय०। ३ँ मरकतरत्नाय०। ३ँ वज्ररत्नाय०। ३ँ गोमेदरत्नाय०। ३ँ मध्ये पद्मरागरत्नाय०। तत्रैव ३ँ सुवर्णपर्वताय०। ३ँ नन्दनोद्यानाय०। ३ँ कल्पकोद्यानाय०। तत्रैव ३ँ वसन्तादिषड्तुभ्यो नम:। पश्चिमे ३ँ इन्द्रियाश्वेभ्यो नम:। पूर्वे ३ँ इन्द्रियार्थगजेभ्यो नम:। ३ँ विचित्ररत्नभूमिकायै नम:। तत्र पश्चिमादिमध्यान्तं विलोमेन नव चक्राणि न्यसेत्। ३ँ कालचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नम:। ३ँ मुद्राचक्रेश्वरी०। ३ँ मातृचक्रेश्वरी०। ३ँ रत्नचक्रेश्वरी०। ३ँ देशचक्रेश्वरी। ३ँ गुरुचक्रेश्वरी०। ३ँ तत्त्वचक्रेश्वरी०। ३ँ ग्रहचक्रेश्वरी०।

मध्ये ३ँ मूर्तिचक्रेश्वरी०।(३ँ कारणतोयपरिधये०। ३ँ माणिक्यमण्डपाय०। तस्य नैर्ऋत्यादिकोणेषु ३ँ देशरूपिणीशक्तिश्री०। ३ँ कालरूपिणीशक्तिश्री०। ३ँ आकाररूपिणीशक्ति०। ३ँ शब्दरूपिणीशक्ति०।) मध्ये ३ँ संगीतयोगिनीरूपिणीशक्ति०। तन्मध्ये ३ँ समस्तगुप्तप्रकटयोगिनीशक्ति०। तन्मध्ये ३ँ कल्पतरुभ्यो०। तदधः ३ँ रत्नवेदिकायै०। ३ँ श्वेतच्छत्राय०। ३ँ रत्नसिंहासनाय०। एवं हृदये विन्यस्य रत्नसिंहासनत्वेन स्वदेहं ध्यायन् सिंहासनदेवता न्यसेत्। दक्षांसे ३ँ रक्तवर्णाय वृषभरूपाय धर्माय नमः। वामांसे ३ँ श्यामवर्णाय सिंहरूपाय ज्ञानाय नमः। वामोरौ ३ँ पीतवर्णाय भूताकाराय वैराग्याय नमः। दक्षोरौ ३ँ इन्द्रनीलप्रभाय गजरूपाय ऐश्वर्याय नमः। एते सिंहासनपादरूपिणः। मुखे ३ँ अधर्माय नमः। वामपार्श्वे ३ँ अज्ञानाय नमः। नाभौ ३ँ अवैराग्याय नमः। दक्षपार्श्वे ३ँ अनैश्वर्याय नमः। एते सिंहासनगात्ररूपिणः। मध्ये ३ँ मायायै नमः। ३ँ विद्यायै नमः। तदुपरि आनन्दकन्दाय नमः। ३ँ संविन्नालाय०। ३ँ प्रकृतिमयपत्रेभ्यः०। ३ँ विकृतिमयकेसरेभ्यो०। ३ँ पञ्चाशद्वर्णबीजाढ्यसर्वतत्त्वरूपायै कर्णिकायै०। तस्यां ३ँ अं अर्कमण्डलाय०। ३ँ उं सोममण्डलाय०। ३ँ रं वह्निमण्डलाय०। ३ँ सं सत्त्वाय०। ३ँ रं रजसे०। ३ँ तं तमसे०। तदुपरि पूर्वादिदिक्षु मध्ये च ३ँ ज्ञानतत्त्वात्मने०। ३ँ मायातत्त्वात्मने०। ३ँ कलातत्त्वात्मने०। ३ँ विद्यातत्त्वात्मने०। मध्ये ३ँ परतत्त्वात्मने०। तत्र ३ँ आं आत्मने०। ३ँ अं अन्तरात्मने०। ३ँ पं परमात्मने०। ३ँ ह्रीं ज्ञानात्मने०। ततः केसरेषु पूर्वाद्यष्टदिक्षु मध्ये च प्रादक्षिण्येन नव शक्तीर्न्यसेत्। ३ँ दूतर्यम्बाश्री०। ३ँ सुन्दर्यम्बा०। ३ँ सुमुख्यम्बा०। ३ँ विरूपाम्बा०। ३ँ विमलाम्बा०। ३ँ अन्तर्यम्बा०। ३ँ बदर्यम्बा०। ३ँ पुरन्दर्यम्बा०। मध्ये ३ँ पुष्पमर्दिन्यम्बा०। तदुपरि ३ँ क्लीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः। इति पीठमन्त्रं विन्यस्य तदुपरि श्रीचक्रं ध्यात्वा, समस्तप्रकटगुप्तगुप्ततर-संप्रदायकुलकौलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्ययोगिनीश्रीचक्रदेवतापादुकाभ्यो नमः। इति व्यापकत्वेन विन्यस्य, हृदि त्रिकोणं विभाव्य, तन्मध्ये ३ँ बालामूलपञ्चदशीविद्यामुच्चार्य त्रिकोणरक्तवर्णोड्यानपीठश्री०। त्रिकोणस्याग्रे ३ँ बालामूलयोर्वाग्भवद्वयमुच्चार्य, चतुरस्रपीतवर्णकामरूपपीठश्री०। दक्षकोणे ३ँ कामराजद्वयमुच्चार्य, अर्धचन्द्रनिभश्वेत-वर्णजालन्धरपीठश्री०। वामकोणे ३ँ शक्तिबीजद्वयमुच्चार्य, षड्बिन्दुलाञ्छितवृत्तधूम्रवर्णपूर्णगिरिपीठश्री०। इति चतुष्पीठं विन्यस्य, पुनर्बैन्दवे आग्नेयादिकोणेषु ४ँ लांह्लां ब्रह्मणे पृथिव्यधिपतये नमो ब्रह्मप्रेतासनश्री०। ४ँ वांह्रीं विष्णवे अपामधिपतये नमो विष्णुप्रेतासनश्री०। ४ँ रांहूं रुद्राय तेजोधिपतये नमो रुद्रप्रेतासनश्री०। ४ँ यांह्रैं ईश्वराय वाय्वधिपतये नम ईश्वरप्रेतासनश्री०। ४ँ ह्सौं वियदधिपतये पञ्चवक्त्राय सदाशिवाय नमः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनश्री०। इति पञ्चप्रेतासनं विन्यस्य, तदुपरि रक्तपद्मकर्णिकायां चतुरस्रगर्भषट्कोणपीठे षडासनानि विन्यसेत्। ४ँ अंआंसौः त्रिपुरासुधार्णवासनाय नमः। ४ँ ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरीपोताम्बुजासनाय नमः। ४ँ ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीदेव्यात्मासनाय नमः। ४ँ हैं हक्लीं ह्सौः त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनाय नमः। ४ँ ह्सैं ह्सक्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नमः। ४ँ ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नमः। इति षडस्रेषु षडासनानि विन्यस्य, मध्ये चतुरस्रे चतुष्पीठसहितं चतुरासनं न्यसेत्। ईशाने ३ँ वाग्भवद्वयमुच्चार्य, अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रेशनाथात्मके जाग्रद्दशाधिष्ठायके इच्छाशक्त्यात्मकरुद्रशक्तिश्रीकामेश्वरीदेवीह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीदेव्यात्मासनाय नमः। वायव्यकोणे ३ँ कामराज-द्वयमुच्चार्य, सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठेशनाथात्मके स्वप्नदशाधिष्ठायके ज्ञानशक्त्यात्मकविष्णुशक्तिश्रीवज्रेश्वरी देवी हैंहक्लींह्सौः त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनाय नमः। नैर्ऋतकोणे ३ँ शक्तिबीजद्वयमुच्चार्य, सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके सुषुप्तिदशाधिष्ठायके क्रियाशक्त्यात्मकब्रह्मात्मकशक्तिश्रीभगमालिनीदेवी ह्सैं ह्सक्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नमः। आग्नेये ३ँ समस्तद्वयमुच्चार्य, ब्रह्मचक्रे श्रीमदुड्यानपीठे चर्यानाथात्मके तुरीय-तुरीयातीतदशाधिष्ठायके परब्रह्मशक्त्यात्मकश्रीत्रिपुरसुन्दरीदेवी ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नमः। मध्ये त्रितारबालापञ्चदशीमुच्चार्य, श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीसर्वमन्त्रासनाय नमः। इति विन्यस्य, ४ँ समस्तमातृकामुच्चार्य, शिवशक्तिसदाशिवेश्वरशुद्धविद्यामायाकलाविद्यारागकालनियतिपुरुषप्रकृत्यहंकारबुद्धिमनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणवाक्पा-

णिपादपायूपस्थशब्दस्पर्शरूपरसगन्धाकाशवायुवह्निसलिलपृथिव्यात्मने श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीयोगपीठात्मने नमः। इति व्यापकं कृत्वा, मूलमुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीपादुकां पूजयामि नमः। इति षट्त्रिंशत्तत्त्वात्मके देहमये महायोगपीठे स्वेष्टदेवतां हृदि विन्यसेत्। 'इति देहमये पीठे चिन्तयेत्परदेवताम्।' इति योगपीठन्यासः।

योगिनीपीठ न्यास—दो कन्धा, दो ऊरु के साथ पैर वाले एवं मुख, नाभि, दो पार्श्व के साथ गात्रचतुष्टय स्वरूप योगपीठ का अपने शरीर में ध्यान करके इस प्रकार न्यास करे—मूलाधार में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं महाकालाय रक्तवर्णाय मण्डूकाधाराय नमः, उसके ऊपर स्वाधिष्ठानपर्यन्त ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पञ्चवक्त्रदशभुजाय रक्तकृष्णवर्णवामदक्षिणपार्श्वाय कालाग्निरुद्राय नमः—उसके ऊपर तदुपरि नाभिपर्यन्त ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बन्धूकरुचिरायै मूलप्रकृतये नमः, उसके ऊपर हृदयपर्यन्त ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शरच्चन्द्रप्रभायै पङ्कजद्वयधारिण्यै आधारशक्तये नमः, उसके ऊपर हृदय में ही कूर्माय नमः, अनन्ताय नमः, वराहाय नमः, पृथिव्यै नमः अमृतार्णवाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं नवखण्डविराजिताय नवरत्नमयद्वीपाय नमः। उसी स्थान पर नव खण्डों में नव रत्नों का प्रदक्षिण क्रम से ईशान कोण से प्रारम्भ करके मध्य तक में इस प्रकार न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं पुष्परागरत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं नीलरत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वैदूर्यरत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विद्रुमरत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं मौक्तिकरत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं मरकतरत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वज्ररत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं गोमेदरत्नाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं मध्ये पद्मरागरत्नाय नमः। वहीं पर ऐं ह्रीं श्रीं सुवर्णपर्वताय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं नन्दनोद्यानाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं कल्पकोद्यानाय नमः से भी न्यास करे। पुनः ऐं ह्रीं श्रीं वसन्तादिषड्तुभ्यो नमः, पश्चिम दिशा में ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्रियाश्वेभ्यो नमः, पूर्व दिशा में ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्रियार्थगजेभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विचित्ररत्नभूमिकायै नमः। वहीं पर पश्चिम से आरम्भ करके मध्य तक में विलोम क्रम से नव चक्रों का न्यास करे। ऐं ह्रीं श्रीं कालचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं मुद्राचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं मातृचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं रत्नचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रींदेशचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं गुरुचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं तत्त्वचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ग्रहचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः। मध्य में ऐं ह्रीं श्रीं मूर्तिचक्रेश्वरीपादुकां पूजयामि नमः, मध्य में ऐं ह्रीं श्रींसंगीतयोगिनीरूपिणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। उसके मध्य में ऐं ह्रीं श्रीं समस्तगुप्तप्रकटयोगिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। उसके मध्य में ऐं ह्रीं श्रीं कल्पतरुभ्यो नमः। उसके नीचे ऐं ह्रीं श्रीं रत्नवेदिकायै नमः, ऐं ह्रीं श्रीं श्वेतच्छत्राय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं रत्नसिंहासनाय नमः। इस प्रकार हृदय में न्यास करके अपने शरीर का रत्नसिंहासन के रूप में ध्यान करते हुये सिंहासनदेवता का इन मन्त्रों से न्यास करे—दाहिने कन्धे पर ऐं ह्रीं श्रीं रक्तवर्णाय वृषभरूपाय धर्माय नमः, बाँयें कन्धें पर ऐं ह्रीं श्रीं श्यामवर्णाय सिंहरूपाय ज्ञानाय नमः, बाँयें ऊरु में ऐं ह्रीं श्रीं पीतवर्णाय भूताकाराय वैराग्याय नमः, दाहिने ऊरु में ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्रनीलप्रभाय गजरूपाय ऐश्वर्याय नमः। ये न्यास सिंहासन के चार पैर स्वरूप होते हैं। इसके बाद मुख में ऐं ह्रीं श्रीं अधर्माय नमः, बाँयीं बगल में ऐं ह्रीं श्रीं अज्ञानाय नमः, नाभि में ऐं ह्रीं श्रीं अवैराग्याय नमः, दाहिनी बगल में ऐं ह्रीं श्रीं अनैश्वर्याय नमः—इन मन्त्रों से न्यास करे। ये न्यास सिंहासन के शरीर रूप होते है। तदनन्तर सिंहासन के मध्य में ऐं ह्रीं श्रीं मायायै नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विद्यायै नमः; सिंहासन के ऊपर ऐं ह्रीं श्रीं आनन्दकन्दाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं संविन्नालाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं प्रकृतिमयपत्रेभ्यः नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विकृतिमयकेसरेभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं पञ्चाशद्वर्णबीजाढ्यसर्वतत्त्वरूपायै कर्णिकायै नमः, सिंहासन में ऐं ह्रीं श्रीं अं अर्कमण्डलाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं उं सोममण्डलाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं रं वह्निमण्डलाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सं सत्त्वाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं रं रजसे नभः, ऐं ह्रीं श्रीं तं तमसे नमः मन्त्रों से न्यास करे। तदनन्तर सिंहासन के ऊपर, पूर्व आदि दिशाओं तथा मध्य में इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं ज्ञानतत्त्वात्मने नमः, ऐं ह्रीं श्रीं मायातत्त्वात्मने नमः, ऐं ह्रीं श्रीं कलातत्त्वात्मने नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विद्यातत्त्वात्मने नमः, ऐं ह्रीं श्रीं परतत्त्वात्मने नमः। वहीं पर पुनः इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं आं आत्मने नमः, ऐं ह्रीं श्रीं अं अन्तरात्मने नमः, ऐं ह्रीं श्रीं पं परमात्मने नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। तदनन्तर केसरों के पूर्वादि आठ दिशाओं तथा मध्य में प्रदक्षिण क्रम से नव शक्तियों का न्यास इस प्रकार करे—ऐं ह्रीं श्रीं दूतर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सुन्दर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सुमुख्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विरूपाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विमलाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं अन्तर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं बदर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं पुरन्दर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि

नमः। मध्ये ऐं ह्रीं श्रीं पुष्पमर्दिन्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। उसके ऊपर 'ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः' इस पीठमन्त्र से न्यास करके उसके ऊपर श्रीचक्र का ध्यान कर 'समस्तप्रकटगुप्तगुप्ततरसंप्रदायकुलकौलनिगर्भरहस्यातिरहस्य-परापररहस्ययोगिनीश्रीचक्रदेवतापादुकाभ्यो नमः' इससे व्यापक न्यास कर हृदय में त्रिकोण का ध्यान करके उसके मध्य में ऐं ह्रीं श्रीं, बाला मूलमन्त्र एवं पञ्चदशी विद्या का उच्चारण कर त्रिकोणरक्तवर्णोड्यानपीठश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, त्रिकोण के आगे ऐं ह्रीं श्रीं, बालामूल मन्त्र एवं वाग्भव का उच्चारण कर चतुरस्रपीतवर्णकामरूपपीठश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, दक्ष कोण में ऐं ह्रीं श्रीं, कामराजद्वय का उच्चारण कर अर्धचन्द्रनिभश्वेतवर्णजालन्धरपीठश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, वाम कोण में ऐं ह्रीं श्रीं शक्तिबीजद्वय उच्चारण कर षड्बिन्दुलाञ्छितवृत्तधूम्रवर्णपूर्णगिरिपीठश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः—इस प्रकार चारों पीठ का न्यास कर पुनः बैन्दव चक्र के आग्नेयादि कोणों में ऐं ह्रीं श्रीं लांह्लां ब्रह्मणे पृथिव्यधिपतये नमो ब्रह्मप्रेतासनश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वांह्रीं विष्णवे अपामधिपतये नमो विष्णुप्रेतासनश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रांह्रूं रुद्राय तेजोधिपतये नमो रुद्रप्रेतासनश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यांह्रौं ईश्वराय वाय्वधिपतये नम ईश्वरप्रेतासनश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं वियदधिपतये पञ्चवक्त्राय सदाशिवाय नमः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः—इस प्रकार पाँच प्रेतासनों का न्यास करके उसके ऊपर रक्त पद्मकर्णिका में चतुरस्र के भीतर कोणगत पीठों में छः आसनों का न्यास इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अंआंसौः त्रिपुरासुधार्णवासनाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरीपोताम्बुजासनाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीदेव्यात्मासनाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हैं हक्लीं ह्सौः त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्सैं ह्सक्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नमः। इस प्रकार षडस्र में उन छः आसनों का न्यास करके चतुरस्र के मध्य में चारों पीठ सहित चार आसनों का न्यास करे—ईशान में ऐं ह्रीं श्रीं, वाग्भवद्वय, अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रेशनाथात्मके जाग्रद्दशाधिष्ठायके इच्छाशक्त्यात्मकरुद्रशक्तिश्रीकामेश्वरीदेवीह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीदेव्यात्मासनाय नमः, वायव्य कोण में ऐं ह्रीं श्रीं कामराजद्वय, सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठेशनाथात्मके स्वप्नदशाधिष्ठायके ज्ञानशक्त्यात्मकविष्णुशक्तिश्रीवज्रेश्वरी देवी हैंहक्लींह्सौः त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनाय नमः, नैर्ऋत्य कोण में ऐं ह्रीं श्रीं शक्तिबीजद्वय, सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके सुषुप्तिदशाधिष्ठायके क्रियाशक्त्यात्मकब्रह्मात्मकशक्तिश्रीभगमालिनीदेवी ह्सैं ह्सक्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नमः, आग्नेय कोण में ऐं ह्रीं श्रीं समस्तद्वयमुच्चार्य, ब्रह्मचक्रे श्रीमदुड्यानपीठे चर्यानाथात्मके तुरीयतुरीयातीतदशाधिष्ठायके परब्रह्मशक्त्यात्मकश्रीत्रिपुरसुन्दरीदेवी ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नमः। मध्य में त्रितार-बाला-पञ्चदशी का उच्चारण कर श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीसर्वमन्त्रासनाय नमः। इस प्रकार न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं के बाद समस्त मातृकाओं का उच्चारण कर शिवशक्तिसदाशिवेश्वरशुद्धविद्यामायाकलाविद्यारागकालनियतिपुरुषप्रकृत्यहंकारबुद्धिमनस्त्वक्चक्षुः-श्रोत्रजिह्वाघ्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थशब्दस्पर्शरूपरसगन्धाकाशवायुवह्निसलिलपृथिव्यात्मने श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीयोगपीठात्मने नमः से व्यापक न्यास करके मूल मन्त्र का उच्चारण कर श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीपादुकां पूजयामि नमः से षट्त्रिंशत्तत्त्वात्मक शरीरस्वरूप महायोग पीठ के हृदय में अपने इष्ट देवता का न्यास करे।

गणेशन्यासः

अथ षोढान्यासः—अस्य गणेशन्यासस्य गणक ऋषिः, निचृद्गायत्री छन्दः, श्रीगणेशो देवता, न्यासे विनियोगः। ४ँ गां शक्त्यानन्दाय हृदयाय नमः। ४ँ श्रींगीं मुखेन्दुरूपाय शिरसे स्वाहा। ४ँ ह्रूंगूं राजच्चन्द्राय शिखायै०। ४ँ क्लींगैं मदोत्कटाय कवचाय०। ४ँ ग्लौंगौं प्रमोदाय नेत्रत्र०। गंगः सर्वमन्त्रात्मने आमोदाय अस्त्राय०। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

तरुणारुणसंकाशान् गजवक्त्रांस्त्रिलोचनान्। पाशाङ्कुशवराभीतिलसच्छक्तिसमन्वितान् ॥

एवं ध्यात्वैव पञ्चाशच्छक्तियुग्गणपान् न्यसेत्।

वामोर्ध्वकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। शक्तीनां वामकरे कमलम्।

(तास्तु सिन्दूरवर्णाभाः सर्वालंकारशोभिताः। एकहस्तधृताम्भोजा इतरालिङ्गितप्रियाः ॥)

४ँ गंअं विघ्नेशनाथश्रीअम्बाभ्यां नम:। एवं सर्वत्र। आं विघ्नराजह्रीभ्यां०। इं विनायकपुष्टि०। ईं शिवोत्तमशान्ति०। उं विघ्नकृत्सरस्वती०। ऊं विघ्नहृद्रति०। ऋं विघ्नराट्स्वाहा०। ॠं गणनायकमेधा०। लृं एकदन्तभूति०। ॡं द्विदन्तकामिनी०। एं गजवक्त्रमोहिनी०। ऐं निरञ्जनजटा०। ओं कपर्दितीव्रा०। औं दीर्घमुखज्वालिनी०। अं शङ्कुकर्णनन्दा०। अं: वृषध्वजयशस्विनी०। कं गणनाथकामरूपिणी०। खं गजेन्द्रोग्रा०। गं शूर्पकर्णतेजोवती०। घं त्रिलोचनसती०। ङं लम्बोदरविघ्नेशी०। चं महानन्दस्वरूपिणी०। छं चतुर्मूर्तिकामदा०। जं सदाशिवमदविह्वला०। झं आमोदकान्ति०। ञं दुर्मुखधूम्रा०। टं सुमुखसिता०। ठं प्रमोदरमा०। डं एकपादमहिषी०। ढं द्विजिह्वनाथध्वजिनी०। णं शूरविकर्णा०। तं वीरभ्रुकुटी०। थं षण्मुखलज्जा०। दं वरददीर्घघोणा०। धं मत्तवाहनधनुर्धरा०। नं वक्रतुण्डपाशिनी०। पं द्विरण्डरात्रि०। फं सेनानीकामान्धा०। बं ग्रामणीशशिप्रभा० भं मत्तलोलाक्षी०। मं विमत्तचञ्चला०। यं मत्तवाहनदिति०। रं जटिसुभगा०। लं मुण्डिदुर्भगा०। वं खड्गिशिवा०। शं वरेण्यदुर्गा०। षं वृषकेतुभगिनी०। सं भक्ष्यप्रियभोगिनी०। हं गणेशगणप्रिया०। ळं मेघनादकालिका०। क्षं गणेश्वरकालजिह्वा०। इति गणेशन्यास:।

१. गणेश न्यास—षोढ़ा न्यासान्तर्गत इस गणेश न्यास के ऋषि गणक, छन्द निचृद् गायत्री एवं देवता गणेश कहे गये हैं। न्यास हेतु इसका विनियोग करके उस प्रकार हृदयादि न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गां शक्त्यानन्दाय हृदयाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं गीं मुखेन्दुरूमाय शिरसे स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हूं गूं राजच्चन्द्राय शिखायै वषट्, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं गैं मदोत्कटाय कवचाय हुं, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ग्लौं गौं प्रमोदाय नेत्रत्रयाय वौषट्, गं ग: सर्वमन्त्रात्मने आमोदाय अस्त्राय फट्। इस प्रकार कर-षडङ्ग न्यास करके निम्नवत् ध्यान करे—

तरुणारुणसंकाशान् गजवक्त्रांस्त्रिलोचनान्। पाशाङ्कुशवराभीतिलसच्छक्तिसमन्वितान्।।

इस प्रकार का ध्यान करके पचास शक्ति से युक्त गणेश का न्यास करे। वे समस्त शक्तियाँ सिन्दूर वर्ण की हैं एवं समस्त आभूषणों से अलंकृत हैं। वे अपने एक हाथ में कमल धारण की हुई हैं एवं दूसरे हाथ से अपने स्वामी को आलिङ्गित सी हुई हैं। इनका न्यास इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं अं विघ्नेशनाथश्रीअम्बाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं आं विघ्नराज-ह्रीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं इं विनायकपुष्टिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ईं शिवोत्तमशान्तिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं उं विघ्नकृत्सरस्वतीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ऊं विघ्नहृद्रतिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ऋं विघ्नराट्स्वाहाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ॠं गणनायकमेधाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं लृं एकदन्तभूतिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ॡं द्विदन्तकामिनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं एं गजवक्त्रमोहिनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ऐं निरञ्जनजटाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ओं कपर्दितीव्राभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं औं दीर्घमुखज्वालिनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं अं शङ्कुकर्णनन्दाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं अं: वृषध्वजयशस्विनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं कं गणनाथकामरूपिणीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं खं गजेन्द्रोग्राभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं गं शूर्पकर्णतेजोवतीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं घं त्रिलोचनसतीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ङं लम्बोदरविघ्नेशीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं चं महानन्दस्वरूपिणीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं छं चतुर्मूर्तिकामदाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं जं सदाशिवमदविह्वलाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं झं आमोदकान्तिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ञं दुर्मुखधूम्राभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं टं सुमुखसिताभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ठं प्रमोदरमाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं डं एकपादमहिषीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ढं द्विजिह्वनाथध्वजिनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं णं शूरविकर्णाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं तं वीरभ्रुकुटीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं थं षण्मुखलज्जाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं दं वरददीर्घघोणाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं धं मत्तवाहनधनुर्धराभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं नं वक्रतुण्डपाशिनीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं पं द्विरण्डरात्रिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं फं सेनानीकामान्धाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं बं ग्रामणीशशिप्रभाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं भं मत्तलोलाक्षीभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं मं विमत्तचञ्चलाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं यं मत्तवाहनदितिभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं रं जटिसुभगाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं लं मुण्डिदुर्भगाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं वं खड्गिशिवाभ्यां नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं शं वरेण्यदुर्गाभ्यां

नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं षं वृषकेतुभगिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं सं भक्ष्यप्रियभोगिनीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं हं गणेशगणप्रियाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं ळं मेघनादकालिकाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं क्षं गणेश्वरकालजिह्वाभ्यां नमः।

ग्रहन्यासः

अथ ग्रहन्यासः। ४ँ अं १६ माणिक्यात्मने सूर्याय भगवते रेणुकाम्बायै नमः हृदयाधः। ४ँ यंरंलंवं मुक्तात्मने चन्द्राय भगवते अमृताम्बायै नमः ललाटे। ४ँ कं ५ विद्रुमात्मने लोहिताय मङ्गलाय भगवते मेधाम्बायै नमः नेत्रत्रये। ४ँ चं ५ वज्रात्मने शुक्राय भगवते ज्ञानाम्बायै नमः हृदये। ४ँ टं ५ मरकतात्मने बुधाय भगवते यशस्विन्यम्बायै नमः हृदयोपरि। ४ँ तं ५ पुष्परागात्मने बृहस्पतये भगवते शाङ्कर्यम्बायै नमः कण्ठे। ४ँ पं ५ नीलात्मने शनैश्चराय भगवते शक्त्यम्बायै नमः नाभौ। ४ँ शं ४ गोमेदात्मने राहवे भगवते कृष्णाम्बायै नमः मुखे। ४ँ ळंक्षं वैदूर्यात्मभ्यः केतुभ्यो भगवद्भ्यो धूम्राम्बायै नमः पादयोः।

कामरूपधरान् सर्वान् सर्वाभरणभूषितान्। वामोरुन्यस्तहस्तांश्च दक्षहस्ताभयावहान्॥
(शक्तयोऽपि तथा ध्येया वराभयकराम्बुजाः। स्वस्वप्रियाङ्कनिलयाः सर्वाभरणभूषिताः)॥

भावयेदिति शेषः। इति ग्रहन्यासः।

२. ग्रहन्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः माणिक्यात्मने सूर्याय भगवते रेणुकाम्बायै नमः (हृदय के नीचे), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यंरंलंवं मुक्तात्मने चन्द्राय भगवते अमृताम्बायै नमः (ललाट में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं विद्रुमात्मने लोहिताय मङ्गलाय भगवते मेधाम्बायै नमः (नेत्रत्रय में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं वज्रात्मने शुक्राय भगवते ज्ञानाम्बायै नमः (हृदय में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं मरकतात्मने बुधाय भगवते यशस्विन्यम्बायै नमः (हृदय के ऊपर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं पुष्परागात्मने बृहस्पतये भगवते शाङ्कर्यम्बायै नमः (कण्ठ में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं नीलात्मने शनैश्चराय भगवते शक्त्यम्बायै नमः (नाभि में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं गोमेदात्मने राहवे भगवते कृष्णाम्बायै नमः (मुख में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं क्षं वैदूर्यात्मभ्यः केतुभ्यो भगवद्भ्यो धूम्राम्बायै नमः (पैरों में)—इस प्रकार ग्रहन्यास करके के बाद ध्यान करे कि ये सभी ग्रह इच्छानुसार रूप धारण करने वाले हैं एवं समस्त आभरणों से सुसज्जित हैं। ये अपने बाँयें हाथ को ऊरुओं पर रखे हैं एवं दाहिने हाथ में अभय धारण किये रहते हैं। अपनी-अपनी हाथों में वर एवं अभय धारण करने वाली समस्त आभूषणों से भूषित इनकी शक्तियाँ इनकी गोद में बैठी हैं।

नक्षत्रन्यासः

अथ नक्षत्रन्यासः। ४ँ अंआं अश्विन्यै नमो भाले। ४ँ इंईं भरण्यै नमः दक्षनेत्रे। ४ँ उंऊं कृत्तिकायै नमः वामनेत्रे। ४ँ ऋंॠंऌंॡं रोहिण्यै नमः दक्षकर्णे। ४ँ एं मृगशिरसे नमः वामकर्णे। ४ँ ऐं आर्द्रायै नमः दक्षनासापुटे। ४ँ ओंऔं पुनर्वसवे नमः वामनासापुटे। ४ँ कं पुष्याय नमः कण्ठे। ४ँ खंगं अश्लेषायै नमः दक्षस्कन्धे। ४ँ घंङं मघायै नमः वामस्कन्धे। ४ँ चं पूर्वाफाल्गुन्यै नमः दक्षकूर्परे। ४ँ छंजं उत्तराफाल्गुन्यै नमः वामकूर्परे। ४ँ झंञं हस्ताय नमः दक्षमणिबन्धे। ४ँ टंठं चित्रायै नमः वाममणिबन्धे। ४ँ डं स्वात्यै नमः दक्षहस्ते। ४ँ ढंणं विशाखायै नमः वामहस्ते। ४ँ तंथंदं अनुराधायै नमः नाभौ। ४ँ धं ज्येष्ठायै नमः दक्षकट्यां। ४ँ नंपंफं मूलायै नमः वामकट्यां। ४ँ बं पूर्वाषाढायै नमः दक्षोरौ। ४ँ भं उत्तराषाढायै नमः वामोरौ। ४ँ मं श्रवणाय नमः दक्षजानुनि। ४ँ यंरं धनिष्ठायै नमः वामजानुनि। ४ँ लं शतभिषायै नमः दक्षजङ्घायां। ४ँ वंशं पूर्वाभाद्रपदायै नमः वामजङ्घायां। ४ँ षंसंहं उत्तराभाद्रपदायै नमः दक्षपादे। ४ँ अंअःळंक्षं रेवत्यै नमः वामपादे।

ज्वलत्कालानलप्रख्या वरदाभयपाणयः। नतिपाण्योऽश्विनीपूर्वा ध्येया मुक्ताविभूषणाः॥

दक्षाद्यधःकरयोर्वराभये, ऊर्ध्वयोर्नतिमुद्रे। इत्यायुधध्यानम्। इति नक्षत्रन्यासः।

३. नक्षत्र न्यास—शरीर में नक्षत्रों का न्यास तत्तत् अंगों में इस प्रकार किया जाता है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं अश्विन्यै नमो (ललाट में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इंईं भरण्यै नम: (दाहिने नेत्र में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं ऊं कृत्तिकायै नम: (वाम नेत्र में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋंॠंलृंलॄं रोहिण्यै नम: (दक्ष कर्ण में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं मृगशिरसे नम: (वाम कर्ण में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं आर्द्रायै नम: (दक्ष नासाछिद्र में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओंऔं पुनर्वसवे नम: (वाम नासाछिद्र में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं पुष्याय नम: (कण्ठ में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खंगं अश्लेषायै नम: (दाहिने कन्धे में), ॐ ऐं ह्रीं श्री घंङं मघायै नम: (बाँयें में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं पूर्वाफाल्गुन्यै नम: (दक्ष कूर्पर में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छंजं उत्तराफाल्गुन्यै नम: (वाम कूर्पर में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झंञं हस्ताय नम: (दक्ष मणिबन्ध में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टंठं चित्रायै नम: (वाम मणिबन्ध में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं स्वात्यै नम: (दाहिने हाथ में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढंणं विशाखायै नम: (बाँयें हाथ में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तंथंदं अनुराधायै नम: (नाभि में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं ज्येष्ठायै नम: (दाहिनी कमर में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नंपंफं मूलायै नम: (बाँयीं कमर में) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बं पूर्वाषाढायै नम: (दक्ष ऊरु में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भं उत्तराषाढायै नम: (वाम ऊरु में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं श्रवणाय नम: (दक्ष जानु में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यंरं धनिष्ठायै नम: (वाम जानु में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं शतभिषायै नम: (दक्ष जङ्घा में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वंशं पूर्वाभाद्रपदायै नम: (वाम जङ्घा में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षंसंहं उत्तराभाद्रपदायै नम: (दक्ष पाद में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अंअ:ळंक्षं रेवत्यै नम: (वाम पाद में)।

ये अश्विनी आदि नक्षत्र दीप्तिमान कालानल-सदृश स्वरूप वाले दाँयें निचले हाथों में वर-अभय मुद्रा एवं ऊपर वाले हाथों में नमस्कार मुद्रा धारण करने वाले तथा आभूषणों से सर्वथा रहित है, ऐसा ध्यान करना चाहिये।

योगिनीन्यास:

अथ योगिनीन्यास:। (१) विशुद्धस्थाने षोडशदलकमलकर्णिकायां ४ँ डांडींडूं डमलवरयूं डाकिनि मां रक्ष रक्ष मम त्वग्धातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रींसः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे डरलकसहैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नमः अं १६ विशुद्धपीठस्थे विशुद्धडाकिनि विशुद्धनाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इत्यङ्गुष्ठानामिकाभ्यां विन्यस्य, तद्दलेषु ४ँ अं अमृतायै नमः। एवं आं आकर्षिण्यै। इं इन्द्राण्यै। ईं ईशान्यै। उं उमायै। ऊं ऊर्ध्वकेश्यै। ऋं ऋद्धिदायै। ॠं ॠषायै। लृं लृकारायै। लॄं लॄषायै। एं एकपादायै। ऐं ऐश्वर्यात्मिकायै। ओं ओंकारिण्यै। औं ओषधात्मिकायै। अं अम्बिकायै। अंः अक्षरात्मिकायै। इति प्रादक्षिण्येन विन्यस्य ध्यायेत्।

ग्रीवाकूपे विशुद्धे नृपदलकमले रक्तवर्णां त्रिनेत्रां
सत्खट्वाङ्गं त्रिशूलं चषकमपि महाचर्म संधारयन्तीम्।
वक्त्रेणैकेन युक्तां पशुजनभयदां पायसान्ने प्रसक्तां
त्वक्स्थां वन्देऽमृताद्यैः परिवृतवपुषं डाकिनीं वीरवन्द्याम्॥

दक्षोर्ध्वाधः शूलखट्वाङ्गे, वामोर्ध्वाधः खेटचषके। इत्यायुधध्यानम्।

अथामृतादिशक्तीनां डाकिनीसदृशं वपुः। तत्समानायुधादीनि न्यासपूजनचिन्तने॥

४. योगिनी न्यास—विशुद्धि स्थान-स्थित षोड़श दल कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डां डीं डूं डमलवरयूं डाकिनि मां रक्ष रक्ष मम त्वग्धातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं स: परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नम: चामुण्डे डरलकसहैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नम: अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अ: विशुद्धपीठस्थे विशुद्धडाकिनि विशुद्धनाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि नम:—इस मन्त्र से अंगूठा-अनामिका से न्यास करे। तदनन्तर विशुद्धि पद्म के सोलह दलों में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृतायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं आकर्षिण्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं इन्द्राण्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं ईशान्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं उमायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ऊर्ध्वकेश्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ऋद्धिदायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ॠषायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लृं लृकारायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लॄं लॄषायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं एकपादायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ऐश्वर्यात्मिकायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं ओंकारिण्यै नम:, ॐ

ऐं ह्रीं श्रीं औं ओषधात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अम्बिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अः अक्षरात्मिकायै नमः मन्त्रों से प्रादक्षिण्य क्रम से न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

ग्रीवाकूपे विशुद्धे नृपदलकमले रक्तवर्णां त्रिनेत्रां सत्खट्वाङ्गं त्रिशूलं चषकमपि महाचर्म संधारयन्तीम्।
वक्त्रेणैकेन युक्तां पशुजनभयदां पायसान्ने प्रसक्तां त्वक्स्थां वन्देऽमृताद्यैः परिवृतवपुषं डाकिनीं वीरवन्द्याम्।।

दाहिने ऊपर-नीचे वाले हाथों में शूल इनके खट्वाङ्ग और बाँयें ऊपर-नीचे वाले हाथों में खेट चषक है। उनकी अमृतादि शक्तियों की आकृति भी डाकिनी के समान है एवं उसी के समान उनके आयुध आदि भी होते हैं। न्यास-पूजन में ऐसा ही चिन्तन करना चाहिये।

(२) ततोऽनाहतचक्रे हृदये द्वादशदलकमलकर्णिकायां, ४ँ रांरींरूं रमलवरयूं राकिणि मां रक्ष रक्ष मम रक्तधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरीत्यादि शेषं समानं। कं १२ अनाहतपीठस्थे अनाहतराकिणि अनाहत-नाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजामि नमः। इति विन्यस्य, तद्दलेषु ४ँ कं कालरात्र्यै नमः। एवं खं खातीतायै। गं गायत्र्यै। घं घण्टाधारिण्यै। ङं ङार्णात्मिकायै। चं चण्डायै। छं छायायै। जं जयायै। झं झांकारिण्यै। ञं ञार्णात्मिकायै। टं टंकहस्तायै। ठं ठंकारिण्यै। इति विन्यस्य ध्यायेत्। अथ ध्यानम्—

हृत्पद्मे भानुपत्रे द्विवदनविलसद्दंष्ट्रिणीं श्यामवर्णा-
मब्जं शूलं कपालं डमरुमपि भुजैर्धारयन्तीं त्रिनेत्राम्।
रक्तस्थां कालरात्रिप्रभृतिपरिवृतां शुद्धभक्ते प्रसक्तां
श्रीमद्वीरेन्द्रवन्द्याममभिमतफलदां भावयेद्राकिणीं ताम्॥

दक्षाधःकरमारभ्य दक्षोर्ध्वकरपर्यन्तमायुधध्यानम्।

कालरात्र्यादिका रक्ताश्चतुर्हस्ता नमस्क्रियाम्। द्वाभ्यां भुजाभ्यां दधतीर्द्वाभ्यां हेतिद्वयं क्रमात्॥
कपालासी वराभीती पुस्तकाक्षरमालिके। घण्टाखड्गौ सृणिगुणौ खड्गखेटौ वराभये॥
कदलीकलशौ शूलवेतालौ वरदाभये। कुठारहरिणौ पश्चात् त्रिशूलडमरू अपि॥

हृदयस्थित अनाहत चक्र की द्वादश दल कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रां रीं रूं रमलवरयूं राकिणि मां रक्ष रक्ष मम रक्तधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे हरलकस हैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नमः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं टं ठं अनाहतपीठस्थे अनाहतराकिणि अनाहतनाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि नमः से न्यास करे। तदनन्तर उसके बारह दलों में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं कालरात्र्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं खातीतायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं गायत्र्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं घण्टाधारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं ङार्णात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं चण्डायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं छायायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं जयायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं झांकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं ञार्णात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं टंकहस्तायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं ठंकारिण्यै नमः—इस प्रकार न्यास करने के बाद निम्नवत् ध्यान करे—

हृत्पद्मे भानुपत्रे द्विवदनविलसद्दंष्ट्रिणीं श्यामवर्णामब्जं शूलं कपालं डमरुमपि भुजैर्धारयन्तीं त्रिनेत्राम्।
रक्तस्थां कालरात्रिप्रभृतिपरिवृतां शुद्धभक्ते प्रसक्तां श्रीमद्वीरेन्द्रवन्द्याममभिमतफलदां भावयेद्राकिणीं ताम्।।

कालरात्रि आदि रक्तवर्ण, चार हाथों वाली, दो हाथों से नमस्कार मुद्रा बनाये, शेष दो हाथों में क्रमशः कपाल-खड्ग, वर-अभय, पुस्तक-अक्षमाला, घण्टा-खड्ग, सृणि-गुण, खड्ग-खेटक, वर-अभय, कदली-कलश, शूल-वेताल, वर-अभय, कुठार-हरिण एवं त्रिशूल-डमरूरूपी अस्त्र धारण की हुई हैं।

(३) मणिपूरकचक्रे नाभौ दशदलकमलकर्णिकायां, ४ँ लांलींलूं लमलवरयूं लाकिनि मां रक्ष रक्ष मम मांसधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि-इत्यादि शेषं प्राग्वत्, डं १० मणिपूरकपीठस्थे मणिपूरकलाकिनि मणिपूरक-

नाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इति विन्यस्य, तद्दलेषु ४ँ डं डामर्यै नमः। एवं ढं ढंकारिण्यै०। णं णकारिण्यै०। तं तामस्यै०। थं स्थापिन्यै०। दं दाक्षायण्यै०। धं धात्र्यै०। नं नन्दायै०। पं पार्वत्यै०। फं फट्कारिण्यै०। इति विन्यस्य ध्यायेत्।

नाभौ दिक्पत्रपद्मे त्रिवदनविलसत्त्रीक्षणां कृष्णवर्णां
शक्तिं दम्भोलिदण्डौ वरदमपि भुजैर्धारयन्तीं महोग्राम्।
डामर्याद्यैश्च वीतां पशुजनभयदां मांसधात्वेकनिष्ठां
गौडान्ने सक्तचित्तां सकलसुखकरीं संस्मरेल्लाकिनीं ताम्॥

लाकिन्याः कथितायास्तु दशसंख्या मरीचयः। कपालशूलधारिण्यः कृष्णाश्च नतिसंयुताः॥
किरीटहारकेयूरकाञ्चीनूपुरभूषिताः।

नाभिस्थित मणिपूर चक्र की दश दल कमल-कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लां लीं लूं लमलवरयूं लाकिनि मां रक्ष रक्ष मम मांसधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे हरलकसहैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नमः डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं मणिपूरकपीठस्थे मणिपूरकलाकिनि मणिपूरकनाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि नमः से न्यास करके उसके दशो दलों में क्रमशः ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं डामर्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं ढंकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं णकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं तामस्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं स्थापिन्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं दाक्षायण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं धात्र्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं नन्दायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं पार्वत्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फटकारिण्यै नमः—इन मन्त्रों से इनकी शक्तियों का न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

नाभौ दिक्पत्रपद्मे त्रिवदनविलसत्त्रीक्षणां कृष्णवर्णां शक्तिं दम्भोलिदण्डौ वरदमपि भुजैर्धारयन्तीं महोग्राम्।
डामर्याद्यैश्च वीतां पशुजनभयदां मांसधात्वेकनिष्ठां गौडान्ने सक्तचित्तां सकलसुखकरीं संस्मरेल्लाकिनीं ताम्॥

इस लाकिनी की दश किरणों कृष्ण वर्ण वाली, कपाल-शूल एवं नमस्कार मुद्रा धारण करके वाली तथा किरीट-हार-केपूर-काञ्ची एवं नूपुर से अलंकृत होती हैं।

(४) स्वाधिष्ठानचक्रे षड्दलकमलकर्णिकायां ४ँ कांकींकूं कमलवरयूं काकिनि मां रक्ष रक्ष मम मेदोधातुं रक्ष रक्ष शेषं पूर्ववत्, बं ६ स्वाधिष्ठानपीठस्थे स्वाधिष्ठानकाकिनि स्वाधिष्ठाननाथदेवयुग्मश्री० इति विन्यस्य, तद्दलेषु ४ँ बं बन्धिन्यै नमः। एवं भं भद्रकाल्यै०। मं मायायै०। यं यशस्विन्यै०। रं रक्षायै०। लं लम्बोष्ठ्यै०। इति विन्यस्य ध्यायेत्।

स्वाधिष्ठानाख्यपद्मे रसदललसिते वेदवक्त्रां त्रिनेत्रां
पीताभां धारयन्तीं त्रिशिखसृणिकपालाभयान्यात्तगर्वाम्।
मेदोधातुप्रतिष्ठामलिमदमुदितां बन्धिनीत्यादिवीतां
दध्यन्ने सक्तचित्तामभिमतफलदां काकिनीं भावयेत्ताम्॥

दक्षोर्ध्वकरमारभ्य दक्षाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। 'बन्धिन्याद्यास्तु पीताभा वराभीनतिसंयुताः'॥

स्वाधिष्ठान चक्र के षड्दल कमल की कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कां कीं कूं कमलवरयूं काकिनि मां रक्ष रक्ष मम मेदोधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे हरलकसहैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नमः बं भं मं यं रं लं स्वाधिष्ठानपीठस्थे स्वाधिष्ठानकाकिनि स्वाधिष्ठान-देवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि से न्यास करके उसके दलों में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बं बन्धिन्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भं भद्रकाल्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं मायायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं यशस्विन्यै नमः, रं रक्षायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं लम्बोष्ठ्यै नमः से न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

स्वाधिष्ठानाख्यपद्मे रसदललसिते वेदवक्त्रां त्रिनेत्रां पीताभां धारयन्तीं त्रिशिखसृणिकपालाभयान्यात्तगर्वाम्।
मेदोधातुप्रतिष्ठामलिमदमुदितां बन्धिनीत्यादिवीतां दध्यन्ने सक्तचित्तामभिमतफलदां काकिनीं भावयेत्ताम्।।

दाहिने ऊर्ध्व हाथ से आरम्भ करके दाँयें नीचले हाथ तक आयुध ध्यान करे। इनकी बन्धिनी आदि शक्तियाँ पीत वर्ण वाली एवं वर-अभय तथा नमस्कार मुद्रा से युक्त रहती हैं।

(५) मूलाधारचक्रे चतुर्दलकमलकर्णिकायां, ४ँ सांसींसूं समलवरयूं साकिनि मां रक्ष रक्ष मम अस्थिधातुं रक्ष रक्ष शेषं प्राग्वत्, वंशंषंसं मूलाधारपीठस्थे मूलाधारसाकिनि मूलाधारनाथदेवयुग्मश्री० इति विन्यस्य, तद्दलेषु ४ँ वं वरदायै नमः। एवं शं श्रियै०। षं षण्डायै०। सं सरस्वत्यै०। इति विन्यस्य ध्यायेत्।

मूलाधारस्थपद्मे श्रुतिदललसिते पञ्चवक्त्रां त्रिनेत्रां
स्वर्णाभामस्थिसंस्थां सृणिमपि कमलं पुस्तकं ज्ञानमुद्राम्।
बिभ्राणां बाहुदण्डैः सुललितवरदाद्याभिवीतां मनोज्ञां
मुद्गान्ने सक्तचित्तां मधुमदमुदितां भावयेत् साकिनीं ताम्॥
रक्तपीतासितश्वेताश्चतस्रो वरदादयः। नत्यक्षमालावरदैर्विराजितचतुर्भुजाः ॥

मूलाधार चक्र की चतुर्दल कमल की कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सां सीं सूं समलवरयूं साकिनि मां रक्ष रक्ष मम अस्थिधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे हरलकसहैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नमः वं शं षं सं मूलाधारपीठस्थे मूलाधारसाकिनि मूलाधारनाथदेवयुग्मश्री पादुकां पूजयामि से न्यास करके उसके चार दलों में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं वरदायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं श्रियै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं षण्डायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं सरस्वत्यै नमः से क्रमशः न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

मूलाधारस्थपद्मे श्रुतिदललसिते पञ्चवक्त्रां त्रिनेत्रां स्वर्णाभामस्थिसंस्थां सृणिमपि कमलं पुस्तकं ज्ञानमुद्राम्।
बिभ्राणां बाहुदण्डैः सुललितवरदाद्याभिवीतां मनोज्ञां मुद्गान्ने सक्तचित्तां मधुमदमुदितां भावयेत् साकिनीं ताम्।।

इनकी वरदा आदि शक्तियाँ लाल पीले-काले-उजले वर्ण वाली तथा नमस्कार-अक्षमाला-वर मुद्रायुक्त चतुर्भुजी हैं।

(६) भ्रूमध्ये आज्ञाचक्रे द्विदलकमलकर्णिकायां, ४ँ हां हीं हूं हमलवरयूं हाकिनि मां रक्ष रक्ष मम मज्जाधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्वेति प्राग्वत्, हं क्षं आज्ञापीठस्थे आज्ञाहाकिनि आज्ञानाथदेवयुग्मश्री० इति विन्यस्य, तद्दलयोः ४ँ हं हंसवत्यै नमः। ४ँ क्षं क्षमावत्यै नमः। इति विन्यस्य ध्यायेत्।

भ्रूमध्ये बिन्दुपद्मे द्विदलसुललिते शुक्लवर्णां कराब्जै-
र्बिभ्राणां ज्ञानमुद्रां डमरुकसहितामक्षमालां कपालम्।
षड्वक्त्रां मज्जसंस्थां त्रिनयनलसितां हंसवत्यादियुक्तां
हारिद्रान्ने प्रसक्तां सकलसुखकरीं हाकिनीं भावयेत्ताम्॥
दक्षाद्यूर्ध्वयोराद्ये, तदधःस्थयोरन्ये। इत्यायुधध्यानम्।
श्वेता हंसवती ध्येया त्रिशूलवरधारिणी। रक्ता क्षमा वराभीतिनतिमुद्रालसत्करा॥

भ्रूमध्य स्थित आज्ञा चक्र के द्विदल कमल-कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हां हीं हूं हमलवरयूं हाकिनि मां रक्ष रक्ष मम मज्जाधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे हरलकस हैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नमः हं क्षं आज्ञापीठस्थे आज्ञाहाकिनि आज्ञानाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि से न्यास करके उसके दलों में क्रमशः ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं हंसवत्यै नमः एवं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्ष क्षमावत्यै नमः से न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

भ्रूमध्ये बिन्दुपद्मे द्विदलसुललिते शुक्लवर्णां कराब्जैर्बिभ्राणां ज्ञानमुद्रां डमरुकसहितामक्षमालां कपालम्।
षड्वक्त्रां मज्जसंस्थां त्रिनयनलसितां हंसवत्यादियुक्तां हारिद्रान्ने प्रसक्तां सकलसुखकरीं हाकिनीं भावयेत्ताम्।।

इनकी हंसवती शक्ति श्वेत वर्णा एवं त्रिशूल-वर-नमस्कार मुद्रायुक्त तथा क्षमावती रक्तवर्णा वर-अभय-नमस्कार मुद्रायुक्त है।

(७) ब्रह्मरन्ध्रे सहस्रदलकमलकर्णिकायां, यां यीं यूं यमलवरयूं याकिनि मां रक्ष रक्ष मम शुक्रधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्वेत्यादि पूर्ववत्, ४ँ अं ५० ब्रह्मरन्ध्रपीठस्थे ब्रह्मरन्ध्रयाकिनि ब्रह्मरन्ध्रनाथदेवयुग्मश्री० इति विन्यस्य, तद्दलेषु ४ँ अं अमृतायै नमः। इत्यादि क्षमावत्यन्तं न्यसेत्। अथ ध्यानम्—

मुण्डव्योमस्थपद्मे दशशतदलके याकिनीं भैरवीं ताम्
अक्षान्ताढ्यां समस्तायुधलसितकरां सर्ववर्णां समष्टिम्।
डादीनां सर्ववक्त्रां सकलसुखकरीं सर्वधातुस्थरूपां
सर्वान्ने सक्तचित्तां परशिवरसिकां भावयेत् सर्वरूपाम्॥

इति योगिनीन्यासः।

ब्रह्मरन्ध्र-स्थित सहस्रदल कमल कर्णिका में यां यीं यूं यमलवरयूं याकिनि मां रक्ष रक्ष मम शुक्रधातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशंकरि देव्यागच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐ घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे डरलकसहैं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि वरदे विच्चे देवि नमः ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं ब्रह्मरन्ध्रपीठस्थे ब्रह्मरन्ध्रयाकिनि ब्रह्मरन्ध्रनाथदेवयुग्मश्रीपादुकां पूजयामि से न्यास करके उसके दलों में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृतायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं आकर्षिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं इन्द्राण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं ईशान्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं उमायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ऊर्ध्वकेश्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ऋद्धिदायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ॠषायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लृं लृकारायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लॄं लॄषायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं एकपादायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ऐश्वर्यात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं ओंकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं ओषधात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अम्बिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अः अक्षरात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं कालरात्र्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं खातीतायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं गायत्र्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं घण्टाधारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं ङार्णात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं चण्डायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं छायायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं जयायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं झांकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं ञार्णात्मिकायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं टंकहस्तायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं ठंकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं डामर्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं ढंकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं णकारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं तामस्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं स्थापिन्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं दाक्षायण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं धात्र्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं नन्दायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं पार्वत्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फं फट्कारिण्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बं बन्धिन्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भं भद्रकाल्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं मायायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं यशस्विन्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं रक्षायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं लम्बोष्ठ्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं वरदायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं श्रियै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं षण्डायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं सरस्वत्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं हंसवत्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं क्षमावत्यै नमः मन्त्रों से न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

मुण्डव्योमस्थपद्मे दशशतदलके याकिनीं भैरवीं ताम् अक्षान्ताढ्यां समस्तायुधलसितकरां सर्ववर्णां समष्टिम्।
डादीनां सर्ववक्त्रां सकलसुखकरीं सर्वधातुस्थरूपां सर्वान्ने सक्तचित्तां परशिवरसिकां भावयेत् सर्वरूपाम्।।

राशिन्यासः

अथ राशिन्यासः। ४ँ अं आं इं ईं मेषराशये नमः दक्षपादे। ४ँ उं ऊं वृषराशये नमः दक्षवृषणे। ४ँ ऋं ॠं

लं लॄं मिथुनराशये नमः दक्षकुक्षौ। ४ँ एं ऐं कर्कटराशये नमः दक्षोरसि। ४ँ ओं औं सिंहराशये नमः दक्षकरे। ४ँ अं अः शं षं सं हं कन्याराशये नमः दक्षशिरसि। ४ँ कं ५ तुलाराशये नमः वामशिरसि। ४ँ चं ५ वृश्चिकराशये नमः वामकरे। ४ँ टं ५ धनूराशये नमः वामोरसि। ४ँ तं ५ मकरराशये नमः वामकुक्षौ। ४ँ पं ५ कुम्भराशये नमः वामवृषणे। ४ँ यं रं लं वं ळं क्षं मीनराशये नमः वामपादे।

स्वस्वनामसमाकाराः कन्याकुम्भौ समाकृती। क्रमाद् रक्तश्वेतहरित्पाटलाधूम्रपाण्डुराः ॥
चित्रकृष्णस्वर्णपिङ्गकर्पूरस्वच्छकान्तयः ।

इति राशिन्यासः।

५. राशिन्यास—राशियों का न्यास शरीर के तत्तत् स्थानों में इस प्रकार किया जाता है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं मेषराशये नमः (दक्ष पाद में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं ऊं वृषराशये नमः (दक्ष वृषण में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ॠं लृं लॄं मिथुनराशये नमः (दक्ष कुक्षि में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं ऐं कर्कटराशये नमः (दक्ष हृदय में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं औं सिंहराशये नमः (दक्ष हस्त में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अः शं षं सं हं कन्याराशये नमः (दक्ष शिर में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं तुलाराशये नमः (वाम शिर में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं वृश्चिकराशये नमः (वाम हस्त में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं धनूराशये नमः (वाम हृदय में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं मकरराशये नमः (वाम कुक्षि में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं कुम्भराशये नमः (वाम वृषण में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं ळं क्षं मीनराशये नमः (वाम पाद में)। ये सभी राशियाँ अपने-अपने नाम के सदृश आकार वाली हैं। कन्या एवं कुम्भ राशियाँ एक ही आकार की हैं। क्रमशः रक्त-श्वेत-हरित-पाटल-धूम्र-पाण्डुर-चित्र-कृष्ण-पिङ्ग-कर्पूर एवं स्वच्छ कान्ति वाली होती हैं।

पीठन्यासः

अथ पीठन्यासः मातृकास्थानेष्वेव। ४ँ अं कामरूपपीठाय नमः शिरसि। ४ँ आं वाराणसी०। इं नेपाल०। ईं पौण्ड्रवर्धन०। उं पुरस्थिर०। ऊं कान्यकुब्ज०। ऋं पूर्णगिरि०। ॠं अर्बुद०। लृं आम्रातकेश्वर०। लॄं एकाम्र०। एं तिस्रोतःपी०। ऐं कामकोट०। ओं कैलास०। औं भृगुनगर०। अं केदार०। अः चन्द्रपुर०। कं श्रीपीठ०। खं एकवीर०। गं जालन्धर०। घं मालव०। ङं कुलान्तक०। चं देवीकोट०। छं गोकर्ण०। जं मारुतेश्वर०। झं अट्टहास०। ञं विरज०। टं राजगृह०। ठं महापथ०। डं कोल्हापुर०। ढं फलापुर०। णं ओंकार०। तं जयन्तिका०। थं उज्जयिनी०। दं विचित्रक०। धं क्षीरपुर०। नं हस्तिनापुर०। पं उड्डीश०। फं प्रयाग०। वं विश्वपुर०। भं मायापुर०। मं जलेश्वर०। यं मलयगिरि०। रं श्रीगिरि०। लं मेरुगिरि०। वं गिरिवर०। शं महेन्द्रगिरि०। षं वामनपुर०। सं हिरण्यपुर०। हं महालक्ष्मीपुर०। ळं उड्यान०। क्षं छायाछत्रपीठाय नमः। इति पीठन्यासः।

६. पीठ न्यास—मातृका स्थानों में ही इस प्रकार पीठ न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कामरूपपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं वाराणसीपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं नेपालपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं पौण्ड्रवर्धनपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं पुरस्थिरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं कान्यकुब्जपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं पूर्णगिरिपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं अर्बुदपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लृं आम्रातकेश्वरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लॄं एकाम्रपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं तिस्रोतःपीपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं कामकोटपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं कैलासपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं भृगुनगरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं केदारपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अः चन्द्रपुरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं श्रीपीठपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं एकवीरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं जालन्धरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं मालवपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं कुलान्तकपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं देवीकोटपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं गोकर्णपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं मारुतेश्वरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं अट्टहासपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं विरजपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं राजगृहपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं महापथपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं कोल्हापुरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं फलापुरपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं ओंकारपीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं जयन्तिकापीठाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं

उज्जयिनीपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं विचित्रकपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं क्षीरपुरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं हस्तिनापुरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं उड्डीशपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फं प्रयागपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं विश्वपुरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भं मायापुरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं जलेश्वरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं मलयगिरिपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं श्रीगिरिपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं मेरुगिरिपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं गिरिवरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं महेन्द्रगिरिपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं वामनपुरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं हिरण्यपुरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं महालक्ष्मीपुरपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं उड्यानपीठाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं छायाछत्रपीठाय नम:।

एते पीठा: समादिष्टा मातृकारूपमास्थिता: । एवं षोढा पुरा कृत्वा श्रीचक्रन्यासमाचरेत् ॥
य: षोढान्यस्तगात्रस्तु स स्वयं परमेश्वर: । षोढान्यासविहीनं यं प्रणमेदेष पार्वति ॥
सोऽचिरान्मृत्युमाप्नोति नरकं प्रतिपद्यते । नास्त्यस्य पूज्यो लोकेषु पितृमातृमुखो जन: ॥

(तथा मत्स्यपुराणे—
प्रयागे ललिता देवी विन्ध्ये विन्ध्यनिवासिनी । वाराणस्यां विशालाक्षी तारा किष्किन्धपर्वते ॥)
इति षोढान्यास:।

ये सभी पीठ मातृकारूप में स्थित हैं। इस प्रकार षोढ़ा न्यास करके श्रीचक्र न्यास करे। अपने शरीर में जो षोढ़ा न्यास कर लेता है, वह स्वयं परमेश्वर हो जाता है। षोढ़ान्यास-विहीन जिस व्यक्ति को यह प्रणाम करता है, उसकी मृत्यु अल्प काल में ही हो जाती है और वह नरक में जाता है। इनके लिये संसार में कोई भी पूज्य नहीं होता। मत्स्यपुराण में कहा है प्रयाग में ललिता देवी, विघ्याचल में विन्ध्यवासिनी, वाराणसी में विशालाक्षी और किष्किन्धा पर्वत में तारा निवास करती है।

श्रीचक्रे संहारक्रमत: प्रथमावरणन्यास:

अथ श्रीचक्रन्यास:।

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्याश्चक्रन्यासं शृणु प्रिये । यत्र कस्यचिदाख्यातं तनुशुद्धिकरं परम् ॥

स्वहृत्पीठे बिन्दुमये परितस्त्रिकोणे यथाविधि कामकलोक्तप्रकारेण ध्यात्वा, तत्र देवीं मानसोपचारै: संपूज्य, वाङ्मायाकमलाबीजान्ततो बालां समुद्धरेत्। ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौ: समस्तप्रकटगुप्तगुप्ततरसंप्रदायकुलकौलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्ययोगिनीश्रीपादुकाभ्यो नम:। इति त्रिधा व्यापकं कृत्वा, आत्मानं कामकलास्वरूपमेव भावयन् चक्रन्यासं कुर्यात्। ४ँ त्रैलोक्यमोहनचक्राय नम:, चतुरस्राद्यरेखायै नम:, इति सर्वाङ्गे व्यापकं। ४ँ अणिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नम: दक्षांसपृष्ठे। ४ँ लघिमासिद्धि० दक्षकराग्रे। ४ँ महिमासिद्धि० दक्षजानुनि। ४ँ ईशित्वसिद्धि० दक्षपादाग्रे। ४ँ वशित्वसिद्धि० वामपादाग्रे। ४ँ प्राकाम्यसिद्धि० वामजानुनि। ४ँ भुक्तिसिद्धिश्री० वामकराग्रे। ४ँ इच्छासिद्धि० वामांसपृष्ठे। ४ँ रससिद्धि० शिरसि। ४ँ मोक्षसिद्धि० शिर:पृष्ठे। इति सिद्धिदशकं विन्यस्य, चतुरस्रमध्यरेखायै नम:, इति व्यापकं कृत्वा, ४ँ आं ब्रह्माणीश्री० पादाङ्गुष्ठयो:। ४ँ ईं माहेश्वरीश्री० दक्षपार्श्वे। ४ँ ऊं कौमारीश्री० शिरसि। ४ँ ॠं वैष्णवीश्री० वामपार्श्वे। ४ँ ॡं वाराहीश्री० वामजानुनि। ४ँ ऐं इन्द्राणीश्री० दक्षजानुनि। ४ँ औं चामुण्डाश्री० दक्षांसे। ४ँ अं: महालक्ष्मीश्री० वामांसे। चतुरस्रान्तरेखायै नम:, इति व्यापकं कृत्वा, ४ँ द्रां सर्वसंक्षोभिणीमुद्राशक्तिश्री० पादाङ्गुष्ठद्वये। द्रीं सर्वविद्राविणीमुद्राशक्तिश्री० दक्षपार्श्वे। क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्राशक्तिश्री० शिरसि। ब्लूं सर्ववशंकरीमुद्राशक्तिश्री० वामपार्श्वे। स: सर्वोन्मादिनीमुद्राशक्तिश्री० वामजानुनि। क्रों सर्वमहाङ्कुशामुद्राशक्तिश्री० दक्षजानुनि। हसखफ्रें सर्वखेचरीमुद्राशक्तिश्री० दक्षांसे। ऐं क्लीं सौ: सर्वत्रिखण्डामुद्राशक्तिश्री० वामांसे। हसौ सर्वबीजमुद्राशक्तिश्री० शिरसि। ऐं सर्वयोनिमुद्राशक्तिश्री० पादयो:। एवं विन्यस्य, ४ँ अं आं सौ: त्रिपुराचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पू०। इति हृदये विन्यस्य, एता: प्रकटयोगिन्य: त्रैलोक्यमोहने चक्रे समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: संपूजितास्तुष्टा: सन्तु। द्रामिति सर्वसंक्षोभिणीमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति प्रथमावरणन्यास:।

श्रीचक्र न्यास—हे प्रिये! अब श्रीमत् त्रिपुरसुन्दरी के चक्रन्यास को सुनो। शरीर शुद्धि के लिये इससे बढ़कर और कोई न्यास नहीं है। बिन्दुमय अपने हृदय पीठ में त्रिकोण के मध्य में यथाविधि कामकला में उक्त प्रकार से ध्यान करके वहाँ पर देवी की पूजा मानसोपचारों से करके वाङ् (ऐं), माया (ह्रीं), कमला (श्रीं) एवं बाला बीज (ऐं क्लीं सौः) का क्रमश उद्धार करे। तदनन्तर ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः समस्तप्रकटगुप्तगुप्ततरसंप्रदायकुलकौलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्ययोगिनीश्रीपादुकाभ्यो नमः—इस मन्त्र से तीन बार व्यापक न्यास करके स्वयं अपने को कामकलास्वरूप मानकर इस प्रकार चक्रन्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं त्रैलोक्यमोहनचक्राय नमः, चतुरस्राद्यरेखायै नमः से सम्पूर्ण अंगों में व्यापक न्यास करे। तदनन्तर विभिन्न अंगों में इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अणिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दाहिने कन्धे के पीछे)। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लघिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दाहिने हाथ के आगे), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं महिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दाहिना जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईशित्वसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दाहिने पैर का अग्र भाग), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वशित्वसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (बाँयें पैर का अग्र भाग), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्राकाम्यसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (बाँयाँ जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भुक्तिसिद्धिश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (बाँयाँ हाथ का अग्रभाग), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (बाँयें कन्धें के पीछे), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रससिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (शिर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मोक्षसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (शिर के पीछे)। इस प्रकार दस सिद्धियों का न्यास करके चतुरस्रमध्यरेखायै नमः से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं ब्रह्माणी-श्रीपादुकां पूजयामि नमः (पैर के अंगुष्ठों में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं माहेश्वरीश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दाहिने बगल में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं कौमारीश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (शिर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं वैष्णवीश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (बाँयें बगल में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡं वाराहीश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (वाम जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं इन्द्राणीश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दक्ष जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं चामुण्डाश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दाँयाँ कन्धा), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अंः महालक्ष्मीश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नमः (बाँयाँ कन्धा) इन मन्त्रों से उपरोक्त अंगों में न्यास करने के बाद चतुरस्रान्तरेखायै नमः से व्यापक न्यास करे। तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रां सर्वसंक्षोभिणीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दोनों पैर के अंगुठों में), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रीं सर्वविद्राविणीमुद्राशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि नमः (दक्ष पार्श्व), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (शिर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ब्लूं सर्ववशंकरीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (वाम पार्श्व), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सः सर्वोन्मादिनीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (वाम जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रों सर्वमहाङ्कुशामुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दक्ष जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें सर्वखेचरी-मुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दाहिना कन्धा), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः सर्वत्रिखण्डामुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (बाँयाँ कन्धा), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ सर्वबीजमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (शिर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं सर्वयोनिमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः (दोनों पैर)—इस प्रकार न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं सौः त्रिपुराचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से हृदय में न्यास करके एताः प्रकटयोगिन्यः त्रैलोक्यमोहने चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टाः सन्तु बोलकर द्रां से सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा दिखावें यही प्रथम आवरण का न्यास होता है।

श्रीचक्रे संहारक्रमतः द्वितीयावरणन्यासः

अथ द्वितीयावरणन्यासः। ४ँ सर्वाशापूरकचक्राय नमः। ४ँ षोडशदलकमलचक्राय नमः। इति व्यापकं विन्यस्य, ४ँ अं कामाकर्षिणीनित्याकलाश्री० दक्षश्रोत्रपृष्ठे। ४ँ आं बुद्ध्याकर्षिणीनित्या० दक्षांसपृष्ठे। ४ँ इं अहंकाराकर्षिणीनित्या० दक्षकूपरे। ४ँ ईं शब्दाकर्षिणीनित्या० दक्षकरपृष्ठे। ४ँ उं स्पर्शाकर्षिणीनित्या० दक्षोरौ। ४ँ ऊं रूपाकर्षिणीनित्या० दक्षजानौ। ४ँ ऋं रसाकर्षिणीनित्या० दक्षगुल्फे। ४ँ ॠं गन्धाकर्षिणीनित्या० दक्षपादे। ४ँ लं चित्ताकर्षिणीनित्या० वामपादे। ४ँ ॡं धैर्याकर्षिणीनित्या० वामगुल्फे। ४ँ एं स्मृत्याकर्षिणीनित्या० वामजानुनि। ४ँ ऐं नामाकर्षिणीनित्या० वामोरौ। ४ँ ओं बीजाकर्षिणीनित्या० वामकरपृष्ठे। ४ँ औं आत्माकर्षिणी-नित्या० वामकूपरे। ४ँ अं अमृताकर्षिणीनित्या० वामांसे। ४ँ अः शरीराकर्षिणीनित्या० वामश्रोत्रपृष्ठे। एवं विन्यस्य, ४ँ ऐंक्लींसौः त्रिपुरेशीचक्रेश्वरीश्री० इति विन्यस्य, एता गुप्तयोगिन्यः सर्वाशापूरके समुद्रा इत्यादिना समर्प्य द्रींमिति सर्वविद्राविणीमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति द्वितीयावरणम्।

द्वितीय आवरण में शरीर के तत्तत् अंगों में इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाशापूरकचक्राय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षोडशदलकमलचक्राय नम: से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कामाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिने कान के पीछे), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं बुद्ध्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिने कन्धे के पीछे), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं अहंकाराकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिना कूर्पर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं शब्दाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिने हाथ के पीछे), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं स्पर्शाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिना ऊरु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं रूपाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिना जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं रसाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिना गुल्फ), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं गन्धाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (दाहिना पैर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऌं चित्ताकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयाँ पैर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡं धैर्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयाँ गुल्फ), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं स्मृत्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयाँ जानु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नामाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयाँ ऊरु), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं बीजाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयें हाथ के पीछे), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं आत्माकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयाँ कूर्पर), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृताकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयाँ कन्धा), ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं: शरीराकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: (बाँयें कान के पीछे)। न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंक्लींसौ: त्रिपुरेशीचक्रेश्वरीश्रीकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: इति विन्यस्य, एता गुप्तयोगिन्य: सर्वाशापूरके समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: संपूजितास्तुष्टा: सन्तु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये द्रीं से सर्वविद्राविणी मुद्रा दिखावे। यह न्यास द्वितीय आवरण में किया जाता है।

श्रीचक्रे संहारक्रमत: तृतीयावरणन्यास:

अथ तृतीयावरणन्यास:। तत: ४ँ सर्वसंक्षोभणचक्राय नम:। ४ँ अष्टदलचक्राय नम:। इति व्यापकं कृत्वा, ४ँ कं ५ अनङ्गकुसुमादेवीश्री० दक्षशङ्खे। ४ँ चं ५ अनङ्गमेखलादेवी० दक्षजानौ। ४ँ टं ५ अनङ्गमदनादेवी० दक्षोरौ। ४ँ तं ५ अनङ्गमदनातुरादेवी० दक्षगुल्फे। ४ँ पं ५ अनङ्गरेखादेवी० वामगुल्फे। ४ँ यं ४ अनङ्गवेगिनीदेवी० वामोरौ। ४ँ शं ४ अनङ्गांकुशादेवी० वामजानौ। ४ँ ळंक्षं अनङ्गमालिनीदेवी० वामशङ्खे। एवं विन्यस्य, ४ँ ह्रींक्लींसौ: त्रिपुरसुन्दरीचक्रेश्वरीनित्याश्री० इति हृदये विन्यस्य, एता गुप्ततरयोगिन्य: सर्वसंक्षोभकारके चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य क्लीमित्याकर्षिणीमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति तृतीयावरणम्।

तदनन्तर इस प्रकार तृतीय आवरण में न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभणचक्राय नम:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अष्टदलचक्राय नम: से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं अनङ्गकुसुमादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दक्ष शङ्ख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं अनङ्गमेखलादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दक्ष जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं अनङ्गमदनादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दक्ष ऊरु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं अनङ्गमदनातुरादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दक्ष गुल्फ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं अनङ्गरेखादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से वाम गुल्फ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं अनङ्गवेगिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से वाम ऊरु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं अनङ्गांकुशादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से वाम जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं क्षं अनङ्गमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से वाम शङ्ख में न्यास करने के बाद ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींसौ: त्रिपुरसुन्दरीचक्रेश्वरीनित्याश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नम: ये हृदय में न्यास करके एता गुप्ततरयोगिन्य: सर्वसंक्षोभकारके चक्रे समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: संपूजितास्तुष्टा: सन्तु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये क्लीं से आकर्षिणी मुद्रा दिखावे।

श्रीचक्रे संहारक्रमत: चतुर्थावरणन्यास:

अथ चतुर्थावरणन्यास:। तत: ४ँ सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशारचक्राय नम: इति व्यापकं कृत्वा, ४ँ अं सर्वसंक्षोभिणीशक्तिश्री० दक्षभागशिर:पृष्ठे। ४ँ इं सर्वविद्राविणीशक्तिश्री० दक्षललाटे। ४ँ उं सर्वाकर्षिणीशक्ति० दक्षगण्डस्थले। ४ँ ऋं सर्वाह्लादिनीशक्ति० दक्षांसे। ४ँ ऌं सर्वसम्मोहिनीशक्ति० दक्षपार्श्वे। ४ँ एं सर्वस्तम्भिनीशक्ति०

दक्षोरौ। ४ँ ऐं सर्वजृम्भिणीशक्ति० दक्षजङ्घायां। ४ँ ओं सर्ववशंकरीशक्ति० वामजङ्घायां। ४ँ औं सर्वरञ्जिनीशक्ति० वामोरौ। ४ँ हं सर्वोन्मादिनीशक्ति० वामपार्श्वे। ४ँ यं सर्वार्थसाधनीशक्ति० वामांसे। ४ँ रं सर्वसंपत्प्रपूरणीशक्ति० वामगण्डस्थले। ४ँ लं सर्वमन्त्रमयीशक्ति० वामललाटे। ४ँ वं सर्वद्वन्द्वक्षयंकरीशक्ति० वामभागशिर:पृष्ठे। इति विन्यस्य, ४ँ हैं हक्लीं हसौः श्रीत्रिपुरवासिनीचक्रेश्वरीनित्याश्री०। इति विन्यस्य, एताः संप्रदाययोगिन्यः सर्वसौभाग्यदायके चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य ब्लूं इति सर्ववशंकरीमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति चतुर्थावरणन्यासः।

तृतीय आवरण का न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार चतुर्थ आवरण का न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायक-चतुर्दशारचक्राय नम: से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं सर्वसंक्षोभिणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से शिर के पीछे दाहिने भाग में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं सर्वविद्राविणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से ललाट के दाहिने, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं सर्वाकर्षिणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने गाल पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं सर्वाह्लादिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने कन्धे पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लृं सर्वसम्मोहिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाँयें बगल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं सर्वस्तम्भिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने ऊरु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं सर्वजृम्भिणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिनी जङ्घा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं सर्ववशंकरीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयीं जङ्घा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं सर्वरञ्जिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें ऊरु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं सर्वोन्मादिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयीं बगल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं सर्वार्थसाधनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें कन्धे पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं सर्वसंपत्प्रपूरणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें गाल पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं सर्वमन्त्रमयीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से ललाट के बाँयें, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं सर्वद्वन्द्वक्षयंकरीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नम: से शिर के पीछे बाँयें भाग में न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हैं हक्लीं हसौ: श्रीत्रिपुरवासिनीचक्रेश्वरीनित्याश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से न्यास कर एता: संप्रदाययोगिन्य: सर्वसौभाग्यदायके चक्रे समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: संपूजितास्तुष्टा: सन्तु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये ब्लूं से सर्ववशंकरी मुद्रा प्रदर्शित करे।

श्रीचक्रे संहारक्रमतः पञ्चमावरणन्यासः

अथ पञ्चमावरणन्यासः। ततः ४ँ सर्वार्थसाधकबहिर्दशारचक्राय नमः इति व्याप्य, ४ँ तं सर्व-सिद्धिप्रदा० दक्षनेत्रे। ४ँ थं सर्वसंपत्प्रदा० नासामूले। ४ँ दं सर्वप्रियंकरी० वामनेत्रे। ४ँ धं सर्वमङ्गलकारिणी० कुक्षिपूर्वे। ४ँ नं सर्वकामप्रदा० कुक्षिवायव्ये। ४ँ टं सर्वदु:खविमोचिनी० वामजानुनि। ४ँ ठं सर्वमृत्युप्रशमनी० दक्षजानुनि। ४ँ डं सर्वविघ्नविनाशिनी० गुदे। ४ँ ढं सर्वाङ्गसुन्दरी० कुक्षिनैर्ऋते। ४ँ णं सर्वसौभाग्यदायिनी० कुक्ष्याग्नेये। ४ँ हसैं हसक्लीं हसौः त्रिपुराश्रीचक्रेश्वरीश्री० इति हृदि विन्यस्य, एताः कुलकौलयोगिन्यः सर्वार्थसाधके चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य सः इति सर्वोन्मादिनीमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति पञ्चमावरणन्यासः।

तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वार्थसाधकबहिर्दशारचक्राय नम: से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं सर्वसिद्धिप्रदाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिनी आँख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं सर्वसंपत्प्रदाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से नासिकामूल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं सर्वप्रियंकरीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयीं आँख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं सर्वमङ्गलकारिणीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से कुक्षि के पूर्व दिशा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं सर्वकामप्रदाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से कुक्षि के वायव्य कोण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं सर्वदु:खविमोचिनीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं सर्वमृत्युप्रशमनीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं सर्वविघ्नविनाशिनीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से गुदा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं सर्वाङ्गसुन्दरीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से कुक्षि के नैर्ऋत्य कोण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं सर्वसौभाग्यदायिनीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से कुक्षि के आग्नेय कोण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसैं हसक्लीं हसौ: त्रिपुराश्रीचक्रेश्वरीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से हृदय में न्यास करके एता: कुलकौलयोगिन्य: सर्वार्थसाधके चक्रे समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: संपूजितास्तुष्टा: सन्तु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये स: से सर्वोन्मादिनी मुद्रा प्रदर्शित करे।

श्रीचक्रे संहारक्रमत: षष्ठावरणन्यास:

अथ षष्ठावरणन्यास:। तत: ४ँ सर्वरक्षाकरान्तर्दशारचक्राय नम: इति व्यापकं कृत्वा, ४ँ चं सर्वज्ञा-देवीश्री० दक्षनासिकायां। ४ँ छं सर्वशक्तिदेवीश्री० दक्षसृक्विणि। ४ँ जं सर्वैश्वर्यप्रदादेवी० दक्षस्तने। ४ँ झं सर्वज्ञानमयीदेवी० दक्षवृषणे। ४ँ ञं सर्वव्याधिविनाशिनीदेवी० सीवन्यां। ४ँ कं सर्वाधारस्वरूपादेवी० वामवृषणे। ४ँ खं सर्वपापहरादेवी० वामस्तने। ४ँ गं सर्वानन्दमयीदेवी० वामसृक्विणि। ४ँ घं सर्वरक्षास्वरूपिणीदेवी० वामनासिकायां। ४ँ ङं सर्वेप्सितफलप्रदादेवी० नासाग्रे। ४ँ ह्लींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीचक्रेश्वरीनित्याश्री० इति हृदि। एता निगर्भयोगिन्य: सर्वरक्षाकरे चक्रे समुद्रा इत्यादिना व्याप्य (समर्प्य) क्रोमिति सर्वमहाङ्कुशामुद्रां प्रदर्शयेत्। इति षष्ठावरणन्यास:।

तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरक्षाकरान्तर्दशारचक्राय नम: से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं सर्वज्ञादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिनी नासिका में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं सर्वशक्तिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने नितम्ब पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं सर्वैश्वर्यप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने स्तन पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं सर्वज्ञानमयीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने वृषण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं सर्वव्याधिविनाशिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से सीवनी में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं सर्वाधारस्वरूपादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें वृषण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं सर्वपापहरादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें स्तन में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं सर्वानन्दमयीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें नितम्ब पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं सर्वरक्षास्वरूपिणीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयीं नासिका में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं सर्वेप्सितफलप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से नासिका के आगे, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीचक्रेश्वरीनित्याश्रीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से हृदय में न्यास करके एता निगर्भयोगिन्य: सर्वरक्षाकरे चक्रे समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: संपूजितास्तुष्टा: सन्तु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये क्रों से सर्वमहाङ्कुशा मुद्रा प्रदर्शित करे।

श्रीचक्रे संहारक्रमत: सप्तमावरणन्यास:

अथ सप्तमावरणन्यास:। तत: ४ँ सर्वरोगहराष्टारचक्राय नम: इति व्याप्य, ४ँ अं १६ ब्लूँ वशिनीवाग्देवताश्री० दक्षचिबुके। ४ँ कं ५ कलह्रीं कामेश्वरीवाग्देवताश्री० दक्षकण्ठे। ४ँ चं ५ नवलीं मोदि-नीवाग्देवताश्री० दक्षहृदि। ४ँ टं ५ य्लूँ विमलावाग्देवताश्री० नाभिदक्षिणे। ४ँ तं ५ ज्म्रीं अरुणावाग्देवताश्री० नाभिवामे। ४ँ पं ५ हसलवयूँ जयिनीवाग्देवता० हृद्वामे। ४ँ यं ४ झमरयूँ सर्वेश्वरीवाग्देवता० वामकण्ठे। ४ँ शं ४ क्षमरीं कौलिनीवाग्देवता० वामचिबुके। ४ँ ह्रींश्रींसौ: त्रिपुरासिद्धाचक्रेश्वरीनित्याश्री० इति हृदये। एता रहस्ययोगिन्य: सर्वरोगहरे चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य हसखफ्रें इति खेचरीमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति सप्तमावरणन्यास:।

तदनन्तर सप्तम आवरण के न्यास में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरोगहराष्टारचक्राय नम: से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अ: ब्लूँ वशिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने ठोढ़ी पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं कलह्रीं कामेश्वरीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने कण्ठ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं नवलीं मोदिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से दाहिने हृदय में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं य्लूँ विमलावाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से नाभि के दाहिनी ओर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं ज्म्रीं अरुणावाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से नाभि के बाँयीं ओर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं हसलवयूँ जयिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयें हृदय में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं झमरयूँ सर्वेश्वरीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से कण्ठ के बाँयें, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं क्षमरीं कौलिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से बाँयी ठोढ़ी में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रींसौ: त्रिपुरासिद्धाचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम: से हृदय में न्यास करके एता रहस्ययोगिन्य: सर्वरोगहरे चक्रे समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: संपूजितास्तुष्टा: सन्तु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये हसखफ्रें से खेचरी मुद्रा प्रदर्शित करे।

श्रीचक्रे संहारक्रमतोऽष्टमावरणन्यासः

अथाष्टमावरणन्यासः। ततः ४ँ सर्वसिद्धिप्रदान्तरालचक्राय नमः इति व्याप्य, ४ँ द्रांद्रींक्लींब्लूंसः यांरांलांवांशां जं जृम्भणकामेश्वरकामेश्वरीबाणेभ्यो नमः हृदयाग्रे। ४ँ थांधां मोहनकामेश्वरकामेश्वरीधनुर्भ्यां नमः हृदयेशाने। ४ँ आंह्रीं वशीकरणकामेश्वरकामेश्वरीपाशाभ्यां नमः हृदयनैर्ऋते। ४ँ क्रोंक्रों स्तम्भनकामेश्वरकामेश्वरीअङ्कुशाभ्यां नमः हृदयवायव्ये। ४ँ अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रेशनाथात्मके जाग्रद्दशाधिष्ठायके इच्छाशक्त्यात्मकरुद्रात्मकशक्ति-श्रीकामेश्वरीदेवीश्री० हृदि त्रिकोणाग्रे। ४ँ सूर्यचक्रे जालंधरपीठे षष्ठेशनाथात्मके स्वप्नदशाधिष्ठायके ज्ञानशक्त्या-त्मकविष्णवात्मकशक्तिश्रीवज्रेश्वरीदेवीश्री० हृदयदक्षिणे। ४ँ सोमचक्रे पूर्णगिरिगह्वरे उड्डीशनाथात्मके सुषुप्तिदशाधिष्ठायके क्रियाशक्त्यात्मकब्रह्मात्मकशक्तिश्रीभगमालिनीदेवीश्री० हृत्त्रिकोणवामभागे। हस्रैं हसकलरीं हस्रौः त्रिपुराम्बाचक्रे-श्वरीनित्याश्री० इति हृदये विन्यस्य, एता अतिरहस्ययोगिन्यः सर्वसिद्धिमये चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य हसौं इति सर्वबीजमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति अष्टमावरणन्यासः।

इसके बाद अष्टम आवरण में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदान्तरालचक्राय नमः से व्यापक न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रांद्रींक्लींब्लूंसः यांरांलांवांशां जं जृम्भणकामेश्वरकामेश्वरीबाणेभ्यो नमः से हृदय के आगे, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थांधां मोहनकामेश्वरकामेश्वरीधनुर्भ्यां नमः से हृदय के ईशान कोण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आंह्रीं वशीकरणकामेश्वरकामेश्वरीपाशाभ्यां नमः से हृदय के नैर्ऋत्य कोण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रोंक्रों स्तम्भनकामेश्वरकामेश्वरीअङ्कुशाभ्यां नमः से हृदय के वायव्य कोण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अग्निचक्रे कामगि-र्यालये मित्रेशनाथात्मके जाग्रद्दशाधिष्ठायके इच्छाशक्त्यात्मकरुद्रात्मकशक्तिश्रीकामेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः से हृदय में त्रिकोण के आगे, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सूर्यचक्रे जालंधरपीठे षष्ठेशनाथात्मके स्वप्नदशाधिष्ठायके ज्ञानशक्त्यात्मकविष्णवात्मकशक्तिश्री-वज्रेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः से हृदय के दक्षिण भाग में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरिगह्वरे उड्डीशनाथात्मके सुषुप्ति-दशाधिष्ठायके क्रियाशक्त्यात्मकब्रह्मात्मकशक्तिश्रीभगमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः से हृदयस्थ त्रिकोण के वाम भाग में, हस्रैं हसकलरीं हस्रौः त्रिपुराम्बाचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से हृदय में न्यास करके एता अतिरहस्ययोगिन्यः सर्वसिद्धिमये चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टाः सन्तु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये हसौं से सर्वबीज मुद्रा प्रदर्शित करे।

श्रीचक्रे संहारक्रमतः नवमावरणन्यासः

ततो नवमावरणन्यासः। ततः ४ँ सर्वानन्दमयबैन्दवचक्राय नमः इति व्यापकं विन्यस्य, तारत्रयबाला-श्रीविद्यामुच्चार्य ब्रह्मचक्रे श्रीमदुड्याणपीठे चर्यानन्दनाथात्मके तुरीयदशाधिष्ठायके ब्रह्मशक्त्यात्मकपरब्रह्मात्म-कशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवीश्री० इति मध्ये। ४ँ हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौः श्रीमहात्रिपुरभैरवीचक्रे-श्वरीनित्याश्री० इति हृदये विन्यस्य, एषा परापररहस्ययोगिनी सर्वानन्दमये बैन्दवे चक्रे (सर्वचक्रेश्वरी-सर्वमन्त्रेश्वरी-सर्वपीठेश्वरी-सर्वविद्येश्वरी-सर्ववागीश्वरी-सर्वसिद्धीश्वरी-सर्वजगदुत्पत्तिमातृका) सचक्रमुद्रा ससिद्धिदा सायुधा सवाहना सशक्तिका सालंकारा सपरिवारा सर्वोपचारैः संपूजिता तुष्टा भवतु इति समर्प्य ऐं इति योनिमुद्रां प्रदर्शयेत्। इति नवमावरणन्यासः। इति श्रीचक्रन्यासः।

एवमेतावत्करणाशक्तौ प्रागुक्तश्रीचक्रन्यासकवचं पठेत्। अयं तु संहारक्रमः। तथा, बिन्दुचक्रादिचतुरस्रान्तरेखान्तं न्यसेदिति सृष्टिक्रमः।

तदनन्तर नवम आवरण के न्यास में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वानन्दमयबैन्दवचक्राय नमः से व्यापक न्यास करके त्रितारी एवं बाला विद्या का उच्चारण करके ब्रह्मचक्रे श्रीमदुड्याणपीठे चर्यानन्दनाथात्मके तुरीयदशाधिष्ठायके ब्रह्मशक्त्यात्मकपरब्रह्मात्म-कशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः से मध्य में एवं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौः श्रीमहात्रिपुरभैरवीचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से हृदय में न्यास करके एषा परापररहस्ययोगिनी सर्वानन्दमये बैन्दवे चक्रे

(सर्वचक्रेश्वरी-सर्वमन्त्रेश्वरी-सर्वपीठेश्वरी-सर्वविद्येश्वरी-सर्ववागीश्वरी-सर्वसिद्धीश्वरी-सर्वजगदुत्पत्तिमातृका) सचक्रमुद्रा ससिद्धिदा सायुधा सवाहना सशक्तिका सालंकारा सपरिवारा सर्वोपचारैः संपूजिता तुष्टा भवतु बोलकर न्यास का समर्पण करते हुये ऐं से योनि मुद्रा प्रदर्शित करे।

इस चक्रन्यास को करने में अशक्त होने पर पूर्वोक्त श्रीचक्रन्यास कवच का पाठ करे। यह संहारक्रम का न्यास होता है। सृष्टि क्रम न्यास से बिन्दुचक्र से प्रारम्भ करके भूपुर की अन्तिम रेखा तक न्यास होता है।

स्थितिश्रीचक्रे विद्यान्यास:

अथ स्थितिश्रीचक्रन्यासः। स च विद्याचक्रचक्रेश्वरीत्यङ्गत्रयात्मकः संप्रदायात्। तत्र प्राग्वत् करशोधनविद्यया करशुद्धिं विधाय आत्मरक्षाविद्ययात्मरक्षां कृत्वा, श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीरूपमात्मानं ध्यात्वा स्थितिन्यासं समाचरेत्। तत्रादौ विद्यान्यासः।

मूर्ध्नि गुह्ये च हृदये नेत्रत्रितय एव च। कर्णयोर्युगले देवि मुखे च भुज एव च॥
पृष्ठे जान्वोश्च नाभौ च मूलविद्यां न्यसेत् क्रमात्।

इति कूटाक्षरभेदेन व्यस्ताव्यस्तां मूलविद्यां न्यसेत्।

स्थिति श्रीचक्र न्यास—सम्प्रदाय के अनुसार यह न्यास विद्या, चक्र एवं चक्रेश्वरी के भेद से तीन प्रकार का होता है। पूर्ववत् करशुद्धि एवं आत्म रक्षा करके अपने को श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी-स्वरूप मानकर स्थितिन्यास करे। उसमें पहले मूर्धा, गुह्य, हृदय, त्रिनेत्र, कर्णयुगल, मुख, भुजाओं, पीठ, जानुओं और नाभि में कूटाक्षर भेद से व्यस्ताव्यस्त मूल विद्या का न्यास करे।

कूटन्यास:

ॐ वाग्भवकूटाय नमः मूर्ध्नि। ॐ कामराजं गुह्ये। एवं शक्तिकूटं हृदये, वाग्भवं दक्षनेत्रे, कामराजं वामनेत्रे, शक्तिकूटं भालनेत्रे, वाग्भवं दक्षकर्णे, कामराजं वामकर्णे, शक्तिकूटं मुखे, वाग्भवं दक्षभुजे, कामराजं वामभुजे, शक्तिकूटं पृष्ठे, वाग्भवं दक्षजानौ, कामराजं वामजानौ, शक्तिकूटं नाभौ, ॐ वाग्भवं (समस्तविद्यां) मूर्ध्नि, कामराज एव गुह्ये, एवं प्राग्वत् न्यसेत्। इति कूटन्यासः।

कूटन्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवकूटाय नम: से मूर्धा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कामराजकूटाय नम: से गुह्य में, शक्तिकूटकूटाय नम: से हृदय में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवकूटाय नम: से दक्ष नेत्र में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कामराजकूटाय नम: से वाम नेत्र में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शक्तिकूटाय नम: से तृतीय नेत्र में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवकूटाय नम: से दक्ष कर्ण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कामराजकूटाय नम: से वाम कर्ण में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शक्तिकूटाय नम: से मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवकूटाय नम: से दाहिनी भुजा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कामराजकूटाय नम: से वाम भुजा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शक्तिकूटाय नम: से पृष्ठ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवकूटाय नम: से दक्ष जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कामराजकूटाय नम: से वाम जानु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शक्तिकूटाय नम: से नाभि में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवकूटाय नम: से (समस्त विद्या का) मूर्धा में, कामराजकूटाय नम: से गुह्य में से न्यास करे।

अक्षरन्यास:

अथाक्षरन्यासः। तत्र श्रीविद्यायाः पञ्चदशाक्षराणि एकैकं बिन्द्वन्तं पञ्चदशसु स्थानेषु न्यसेत्। तद्यथा— प्रथमं मूर्ध्नि, द्वितीयं गुह्ये, तृतीयं हृदि, चतुर्थं दक्षनेत्रे, पञ्चमं वामनेत्रे, षष्ठं भालनेत्रे, सप्तमं दक्षकर्णे, अष्टमं वामकर्णे, नवमं मुखे, दशमं दक्षभुजे, एकादशं वामभुजे, द्वादशं पृष्ठे, त्रयोदशं दक्षजानुनि, चतुर्दशं वामजानुनि, पञ्चदशं नाभौ। इत्यक्षरन्यासः। ततः 'कण्ठस्थाने प्रविन्यस्येन्नित्यामन्त्रांस्तु षोडश' इति क्रमेण कण्ठे षोडशदलेषु षोडश नित्या न्यसेत्।

अक्षर न्यास—श्रीविद्या के पन्द्रह अक्षरों पर क्रमशः अनुस्वार लगाते हुये मूर्धा, गुह्य, हृदय, दायाँ नेत्र, बाँयाँ नेत्र,

भालनेत्र, दक्ष-वाम कर्ण, मुख, दक्ष-वाम भुजा, पृष्ठ, दक्ष-वाम जानु एवं नाभि—इन पन्द्रह स्थानों में क्रमशः न्यास करे। क्रमशः तदनन्तर कण्ठ में षोडशदल में सोलह नित्याओं के मन्त्रों का न्यास करे।

नवयोनिन्यासः

अथ बालाबीजत्रयेण नवयोनिन्यासं कुर्यात्।

श्रोत्रयोश्चिबुके देवि शङ्खास्येषु दृशोर्नसि। अंसद्वये च हृदये विन्यसेत् करकुक्षिषु ॥
जान्वन्धुकुक्षिपादेषु पार्श्वयोर्हृदयाम्बुजे। स्तनद्वये कण्ठदेशे नवयोनीर्न्यसेत् क्रमात् ॥

इति नवयोनिन्यासः।

तत्पश्चात् बालाबीजत्रय से नवयोनि न्यास करे। नवयोनि का न्यास कानों, चिबुक, शङ्ख, मुख, आँख, नाक, कन्धों, हृदय, हाथ, कुक्षि, जानुओं, कुक्षि, पैरों, पार्श्वों, हृदय कमल, दोनों स्तनों एवं कण्ठ में क्रम से किया जाता है।

शृङ्खलान्यासः

अथ शृङ्खलान्यासः। बालया शृङ्खलान्यासस्तु 'शिखायां चिबुके वक्त्रे, वक्त्रे कण्ठे चिबुके, चिबुके हृदये कण्ठे, कण्ठे नाभौ तथा हृदि, हृदि लिङ्गे च नाभौ, च नाभौ (मूलाधारे स्वाधिष्ठाने, स्वाधिष्ठाने ऊर्वोः आधारे, आधारे जानुनोः ऊर्वोः, ऊर्वोः) पादे च जानुनोः' इति शृङ्खलान्यासः। ततो वक्ष्यमाणं 'ततः श्रीचक्रमारुढामिति ध्यात्वा' नवमुद्राः प्रदर्श्य अंआंसौः नमः पादयोः। ऐंक्लींसौः नमः जङ्घयोः। ह्रींक्लींसौः नमः जान्वोः। हैं हक्लीं हसौः नमः ऊर्वोः। हसैं हसक्लीं हसौः नमः स्फिचोः (गुदपार्श्वयोः)। ह्रींक्लींब्लें नमः स्वाधिष्ठाने। ह्रींश्रींसौः नमः मूलाधारे। हस्रैं हसकलरीं हस्रौः नमः पूर्वन्यस्तविद्योपरि। हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौः नमः सर्वाङ्गे। इति नवचक्रेश्वरीविद्यान्यासः।

शृंखला न्यास—बालाबीजों से शिखा-चिबुक-वक्त्र, वक्त्र-कण्ठ-चिबुक, चिबुक-हृदय-कण्ठ, कण्ठ-नाभि-हृदय, हृदय-लिङ्ग-नाभि, नाभि-मूलाधार-स्वाधिष्ठान, स्वाधिष्ठान-ऊरु-आधार, आधार-जानु-ऊरु, ऊरु-पैरों-जानुओं के क्रम से शृंखला न्यास किया जाता है। तदनन्तर श्रीचक्रमारूढ़ विहित रीति से देवी का ध्यान करके नव मुद्रायें दिखाकर इस प्रकार नवचक्रेश्वरी विद्या का न्यास करे—अं आं सौः नमः (दोनों पैर)। ऐं क्लीं सौः नमः (दोनों जंघा)। ह्रीं क्लीं सौः नमः (दोनों जानु)। हैं ह क्लीं ह्सौः नमः (दोनों ऊरु)। ह्सैं ह्सक्लीं ह्सौं नमः (गुदा के पार्श्वों), ह्रीं क्लीं ब्लें नमः (स्वाधिष्ठान), ह्रीं श्रीं सौः नमः (मूलाधार), ह्स्रैं हरुकलरीं ह्स्रौं नमः (पूर्व न्यस्त विद्या के ऊपर) एवं हसकलरडैं, हसकलरडीं हसकलरडौः नमः (सर्वांग में)।

नवचक्रन्यासः

अथ नवचक्रन्यासः। त्रैलोक्यसंमोहनचक्राय नमः अकुलपद्मे। (गुदमूलाधारमध्यस्थरक्तसहस्रदलक-मलचक्रे)। सर्वाशापरिपूरकचक्राय नमः मूलाधारे। सर्वसंक्षोभणचक्राय नमः स्वाधिष्ठाने। सर्वसौभाग्यदायकचक्राय नमः मणिपूरके। सर्वार्थसाधकचक्राय नमः अनाहते। सर्वरक्षाकरचक्राय नमः विशुद्धे। सर्वरोगहरचक्राय नमः लम्बिकापद्मे। सर्वसिद्धिप्रदचक्राय नमः भ्रूमध्ये। सर्वानन्दमयचक्राय नमः ब्रह्मरन्ध्रे। एतेषु स्थानेषु प्रागुक्तनवचक्रेश्वरीर्न्यसेत्। इति स्थितिश्रीचक्रन्यासः।

नवचक्र न्यास—नवचक्र न्यास अकुल पद्म, मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, लम्बिकापद्म, भ्रूमध्य एवं ब्रह्मरन्ध्र में इस प्रकार किया जाता है—त्रैलोक्यसंमोहनचक्राय नमः (अकुल पद्म में), सर्वाशापरिपूरकचक्राय नमः (मूलाधार में), सर्वसंक्षोभणचक्राय नमः (स्वाधिष्ठान में), सर्वसौभाग्यदायकचक्राय नमः (मणिपूर में), सर्वार्थसाधकचक्राय नमः (अनाहत में), सर्वरक्षाकरचक्राय नमः (विशुद्ध में), सर्वरोगहरचक्राय नमः (लम्बिका पद्म में), सर्वसिद्धिप्रदचक्राय नमः (भ्रूमध्य में), सर्वानन्दमयचक्राय नमः (ब्रह्मरन्ध्र में)। इन स्थानों में पूर्वोक्त नव चक्रेश्वरियों का न्यास करे।

अष्टाष्टकन्यास:

अथाष्टाष्टकन्यास:। ४ँ प्रयागक्षेत्रे वेसिनीपुर्यां कामरूपपीठे वटवृक्षे पद्ममुद्रायां व्योममण्डले मेरुसन्तानावल्यां आंक्षां मङ्गलाम्बायै नम:, अंक्षं मङ्गलनाथाय, आंक्षां ब्रह्माण्यै, अंक्षं असिताङ्गभैरवाय, कं ५ सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम त्वगाधारचक्रे दिव्यक्रीडारतां पूजयामि घोरेऽघोरे अमोघे वरदे विच्चे नम: इत्याधारचक्रे विन्यस्य, परितोऽष्टदलेषु ४ँ क्षंक्षां अक्षोभ्यां नम:, क्षिंक्षीं रूक्षकर्णाभ्यां नम:, क्षुंक्षूं राक्षसाभ्यां नम:, क्षृं क्षॄं क्षपणाभ्यां नम:, क्ष्लृंक्ष्लॄं क्षपाभ्यां नम:, क्षेंक्षैं पिङ्गलाक्षीभ्यां नम:, क्षोंक्षौं अक्षयाभ्यां नम:, क्षंक्ष: क्षमाभ्यां नम:, इत्याधारे।

४ँ वाराणसीक्षेत्रे शौण्डिनीपुर्यां मलयगिरिपीठे श्लेष्मातकवृक्षे लिङ्गमुद्रायां वायुमण्डले महेन्द्रावल्यां ईंलां चर्चिकाम्बायै नम:, इंलं चर्चिकनाथाय, ईंलां माहेश्वर्यै, इंलं रुरुभैरवाय, चं ५ सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम रक्तनितम्बचक्रे दिव्यक्रीडारतां पूजयामि इति पद्मकर्णिकायां घोरेऽघोरे वरदे विच्चे नम: इति सर्वत्र, नितम्बचक्रे पद्मदलेषु ३ँ लंलां लीलाभ्यां नम:, लिंलीं लोलाभ्यां नम:, लुंलूं लुत्याभ्यां नम:, लृंलॄं लृताभ्यां नम:, ल्लृंल्लॄं ल्लृताभ्यां नम:, लेंलैं लङ्केश्वराभ्यां नम:, लोंलौं लोलसाभ्यां नम:, लंल: विमलाभ्यां नम:, इति नितम्बे।

४ँ कौलापुरीक्षेत्रे कैवर्तिनीपुर्यां पूर्णगिरिपीठे उडम्बरवृक्षे सुरभिमुद्रायां वह्निमण्डले चन्द्रशिलातला-वल्यां ऊंहां योगीशाम्बायै नम:, उंहं योगीशनाथाय, ऊंहां कौमार्यै, उंहं चण्डभैरवाय, टं ५ सर्वद्वीपेत्यादि मम मांसचक्रे नाभिस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामीति नाभिपद्मकर्णिकायां विन्यस्य, तद्दलेषु ३ँ हंहां हुताशनाभ्यां नम:, हिंहीं विशालाक्षीभ्यां नम:, हुंहूं वडवामुखीभ्यां नम:, हृंहॄं हर्षाभ्यां नम:, ह्लृंह्लॄं हारयाभ्यां नम:, हेंहैं महाक्रोधाभ्यां नम:, होंहौं क्रोधिनीभ्यां नम:, हंह: स्वरयाभ्यां नम:, इति नाभौ।

४ँ अट्टहासक्षेत्रे कुटिनीपुर्यां कुलान्तकपीठे अश्वत्थवृक्षे क्षोभिणीमुद्रायां सलिलमण्डले शांबरभेदावल्यां ऋृंसां हरसिद्धाम्बायै नम:, ऋृंसं हरसिद्धनाथाय, ऋृंसां वैष्णव्यम्बायै, ऋृंसं क्रोधभैरवनाथाय, तं ५ सर्वद्वीपेत्यादि मम स्नायुचक्रे हृदयस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामि इति हृदयचक्रकर्णिकायां विन्यस्य, तद्दलेषु ३ँ संसां संख्यापीठसिद्धाभ्यां नम:, सिंसीं तरलाभ्यां नम:, सुंसूं ताराभ्यां नम:, सृंसॄं हृष्टाभ्यां नम:, स्लृंस्लॄं हृल्लेखाभ्यां नम:, सेंसैं दशकन्दराभ्यां नम:, सोंसौं सारसाभ्यां नम:, संस: रससंग्राहिणीभ्यां नम:, इति हृदये।

४ँ जयन्तिकाक्षेत्रे गण्डकीपुर्यां चौहारपीठे विभीतकवृक्षे द्राविणीमुद्रायां पृथिवीमण्डले अम्बरयोगावल्यां लृंषां भद्राम्बायै नम:, लृंषं भद्रनाथाय, लॄंषां वाराह्यै, लृंषं उन्मत्तनाथाय, पं ५ सर्वद्वीपेत्यादि मम अस्थिचक्रस्थाने कण्ठे दिव्यक्रीडारतां पूजयामि इति कण्ठपद्मकर्णिकायां, तद्दलेषु षंषां तालजङ्घाभ्यां नम:, षिंषीं रक्ताक्षीभ्यां, षुंषूं विद्युज्जिह्वाभ्यां, षृंषॄं करङ्काभ्यां, ष्लृंष्लॄं मेघनादाभ्यां, षेंषैं प्रचण्डौघाभ्यां, षोंषौं कालकर्णाभ्यां, षंष: बलप्रदाभ्यां, इति कण्ठे।

४ँ चारित्रक्षेत्रे रजनीपुर्यां जालन्धरपीठे निम्बवृक्षे अङ्कुशमुद्रायां अग्निमण्डले कुलिशभेदावल्यां ऐंशां किलिकिलाम्बायै नम:, एंशं किलिकिलिनाथाय, ऐंशां इन्द्राण्यै, एंशं कपालिभैरवाय, यं ४ सर्वद्वीपेत्यादि मम मज्जस्थचक्रे मुखस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामि इति मुखपद्मकर्णिकायां, तद्दलेषु शंशां शम्पाभ्यां, शिंशीं चम्पावलीभ्यां, शुंशूं प्रवायाभ्यां, शृंशॄं शूलसादिकाभ्यां, श्लृंश्लॄं पिचुवक्त्राभ्यां, शेंशैं पिशाचाक्षीभ्यां, शोंशौं पिशिताशनाभ्यां, शंश: लोलुपाभ्यां, इति मुखे।

४ँ एकाम्रक्षेत्रे शिल्पिनीपुर्यां उड्यानपीठे करञ्जवृक्षे लेलिहानमुद्रायां व्यापिकामण्डले रक्तवर्णावल्यां औंवां कालरात्र्यम्बायै नम:, ओंवं कालरात्रिनाथाय, औंवां चामुण्डायै, ओंवं भीषणभैरवनाथाय, शंषंसंहं सर्वद्वीपेत्यादि

मम शुक्रचक्रे नासापुटस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामीति नासापुटकर्णिकायां, तद्दलेषु वंवां वामनासाभ्यां, विंवीं वानराभ्यां, वुंवूं वासनाभ्यां, वृंवॄं विकटास्याभ्यां, व्लृंव्लॄं वायुवेगाभ्यां, वेंवैं बृहत्कलाभ्यां, वोंवौं विकनाभ्यां, वंवः विश्वरूपिणीभ्यां, इति नासिकायाम्।

४ँ देवीकोटक्षेत्रे सटीनापुर्यां देवीकोटपीठे कदम्बवृक्षे भेकिमुद्रायां शिवमण्डले लम्पटावल्यां अःयां विभीषकाम्बायै नमः, अंयं विभीषकनाथाय, अःयां महालक्ष्म्यै, अंयं संहारभैरवाय, ळंक्षं सर्वद्वीपेत्यादि मम क्रोधललाटचक्रे दिव्यक्रीडारतां पूजयामीति ललाटपद्मकर्णिकायां, तद्दलेषु यंयां यमजिह्वाभ्यां, यिंयीं जयन्तीभ्यां, युंयूं दुर्जयाभ्यां, यृंयॄं यमान्तकाभ्यां, य्लृंय्लॄं बिडालाभ्यां, येंयैं रेवतीभ्यां, योंयौं पूतनाभ्यां, यंयः विजयाभ्यां नमः, इति ललाटे। 'शान्तिके पौष्टिके चैव कुर्यादष्टाष्टकं बुधः'। इत्ययं न्यासः काम्यः।

अष्टाष्टक न्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रयागक्षेत्रे वेसिनीपुर्यां कामरूपपीठे वटवृक्षे पद्ममुद्रायां व्योममण्डले मेरुसन्तानावल्यां आंक्षां मङ्गलाम्बायै नमः, अंक्षं मङ्गलनाथाय नमः, आंक्षां ब्रह्माण्यै नमः, अंक्षं असिताङ्गभैरवाय नमः, कं खं गं घं ङं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम त्वगाधारचक्रे दिव्यक्रीडारतां पूजयामि घोरेऽघोरे अमोघे वरदे विच्चे नमः इस मन्त्र से आधार चक्र में न्यास करके उसके चारों ओर अष्टदल कमल के आठों दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षंक्षां अक्षोभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षिंक्षीं रूक्षकर्णाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षुंक्षूं राक्षसाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षृंक्षॄं क्षपणाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्ष्लृंक्ष्लॄं क्षपाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षेंक्षैं पिङ्गलाक्षीभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षोंक्षौं अक्षयाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षंक्षः क्षमाभ्यां नमः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाराणसीक्षेत्रे शौण्डिनीपुर्यां मलयगिरिपीठे श्लेष्मातकवृक्षे लिङ्गमुद्रायां वायुमण्डले महेन्द्रावल्यां ईंलां चर्चिकाम्बायै नमः, इंलं चर्चिकनाथाय नमः, ईंलां माहेश्वर्यै नमः, इंलं रुरुभैरवाय नमः, चं छं जं झं ञं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम रक्तनितम्बचक्रे दिव्यक्रीडारतां पूजयामि मन्त्र से कमल कर्णिका में न्यास करके नितम्ब चक्र के आठ दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—घोरेऽघोरे वरदे विच्चे नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लंलां लीलाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लिंलीं लोलाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लुंलूं लुत्याभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लृंलॄं लृताभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ल्लृंल्लॄं ल्लृताभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लेंलैं लङ्केश्वराभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लोंलौं लोलसाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं लंलः विमलाभ्यां नमः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कौलापुरीक्षेत्रे कैवर्तिनीपुर्यां पूर्णगिरिपीठे उडम्बरवृक्षे सुरभिमुद्रायां वह्निमण्डले चन्द्रशिलातलावल्यां ऊंहां योगीशाम्बायै नमः, उंहं योगीशनाथाय नमः, ऊंहां कौमार्यै नमः, उंहं चण्डभैरवाय नमः, टं ठं डं ढं णं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम मांसचक्रे नाभिस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामि मन्त्र से नाभिस्थित कमल कर्णिका में न्यास करके उसके आठ दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं हंहां हुताशनाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हिंहीं विशालाक्षीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हुंहूं वडवामुखीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हृंहॄं हर्षाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ह्लृंह्लॄं हारयाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हेंहैं महाक्रोधाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं होंहौं क्रोधिनीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं हंहः स्वरयाभ्यां नमः।

हृदय-स्थित कमल कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अट्टहासक्षेत्रे कुटिनीपुर्यां कुलान्तकपीठे अश्वत्थवृक्षे क्षोभिणीमुद्रायां सलिलमण्डले शांबरभेदावल्यां ॠंसां हरसिद्धाम्बायै नमः, ऋंसं हरसिद्धनाथाय नमः, ॠंसां वैष्णव्यम्बायै नमः, ऋंसं क्रोधभैरवनाथाय नमः, तं थं दं धं नं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम स्नायुचक्रे हृदयस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामि से न्यास करके उसके आठ दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं संसां संख्यापीठसिद्धाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सिंसीं तरलाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सुंसूं ताराभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सृंसॄं हृष्टाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं स्लृंस्लॄं हृल्लेखाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सेंसैं दशकन्दराभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं सोंसौं सारसाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं संसः रससंग्राहिणीभ्यां नमः।

कण्ठ-स्थित कमल कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जयन्तिकाक्षेत्रे गण्डकीपुर्यां चौहारपीठे विभीतकवृक्षे द्राविणीमुद्रायां

पृथिवीमण्डले अम्बरयोगावल्यां ऌंषां भद्राम्बायै नमः, ऌंषं भद्रनाथाय नमः, ॡंषां वाराह्यै नमः, ऌंषं उन्मत्तनाथाय नमः, पं फं बं भं मं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम अस्थिचक्रस्थाने कण्ठे दिव्यक्रीडारतां पूजयामि मन्त्र से न्यास करके उसके आठ दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं षंषां तालजङ्घाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं षिंषीं रक्ताक्षीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं षुंषूं विद्युज्जिवह्वाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं षृंषॄं करङ्काभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं ष्लृंष्लॄं मेघनादाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं षेंषैं प्रचण्डौघाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं षोंषौं कालकर्णाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं षंषः बलप्रदाभ्यां नमः।

मुख-स्थित कमल कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चारित्रक्षेत्रे रजनीपुर्यां जालन्धरपीठे निम्बवृक्षे अङ्कुशमुद्रायां अग्निमण्डले कुलिशभेदावल्यां ऐंशां किलिकिलाम्बायै नमः, एंशं किलिकिलिनाथाय नमः, ऐंशां इन्द्राण्यै नमः, एंशं कपालिभैरवाय नमः, यं रं लं वं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम मज्जस्थचक्रे मुखस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामि मन्त्र से न्यास करके उसके आठ दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं शंशां शम्पाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं शिंशीं चम्पावलीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं शुंशूं प्रवायाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं शृंशॄं शूलसादिकाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं श्लृंश्लॄं पिचुवक्त्राभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं शेंशैं पिशाचाक्षीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं शोंशौं पिशिताशनाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं शंशः लोलुपाभ्यां नमः।

नासिकापुट-स्थित कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एकाम्रक्षेत्रे शिल्पिनीपुर्यां उड्यानपीठे करञ्जवृक्षे लेलिहानमुद्रायां व्यापिकामण्डले रक्तवर्णावल्यां औंवां कालरात्र्यम्बायै नमः, ओंवं कालरात्रिनाथाय नमः, औंवां चामुण्डायै नमः, ओंवं भीषण-भैरवनाथाय नमः, शंषंसंहं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम शुक्रचक्रे नासापुटस्थाने दिव्यक्रीडारतां पूजयामि मन्त्र से न्यास करके उनके आठ दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं वंवां वामनासाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं विंवीं वानराभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वुंवूं वासनाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वृंवॄं विकटास्याभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं व्लृंव्लॄं वायुवेगाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वेंवैं बृहत्कलाभ्यां, वोंवौं विकनाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वंवः विश्वरूपिणीभ्यां नमः।

ललाट-स्थित कमल कर्णिका में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं देवीकोटक्षेत्रे सटीनापुर्यां देवीकोटपीठे कदम्बवृक्षे भेकिमुद्रायां शिव-मण्डले लम्पटावल्यां अःयां विभीषकाम्बायै नमः, अंयं विभीषकनाथाय नमः, अःयां महालक्ष्म्यै नमः, अंयं संहारभैरवाय नमः, ळंक्षं सर्वद्वीपनाथाय सर्वद्वीपनाथाम्बायै मम क्रोधललाटचक्रे दिव्यक्रीडारतां पूजयामि मन्त्र से न्यास करके उसके आठ दलों में इन मन्त्रों से न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं यंयां यमजिह्वाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं यिंयीं जयन्तीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं युंयूं दुर्जयाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं यृंयॄं यमान्तकाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं य्लृंय्लॄं बिडालाभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं येंयैं रेवतीभ्यां नमः, ऐं ह्रीं श्रीं योंयौं पूतनाभ्यां, यंयः विजयाभ्यां नमः। शान्तिक एवं पौष्टिक कार्य में अष्टाष्टक न्यास करना चाहिये—इस उक्ति के अनुसार यह काम्य न्यास होता है।

वशिन्याद्यष्टकन्यासः

अथ वशिन्याद्यष्टकन्यासश्चक्रन्यासेऽवलोक्यः।
शिरोललाटभ्रूमध्यकण्ठहृन्नाभिगुह्यके । आधारे व्यूहके चैव वशिन्याद्यष्टकं न्यसेत्॥
इति यथाक्रमं न्यसेदिति।

वशिन्यादि अष्टक न्यास—वशिन्यादि आठ का न्यास शिर ललाट भ्रूमध्य कण्ठ हृदय नाभि गुह्य एवं आधारचक्र में किया जाता है।

भूषणन्यासः

अथ भूषणन्यासः। ॐ अं शिरसि, आं भाले, इंईं भ्रूयुगे, उंऊं कर्णयुगे, ऋंॠं नेत्रयोः, ऌं नासिकायां, ॡंएंऐं गण्डयोः, ओं ओष्ठयोः, औंअं दन्तपङ्क्तौ, अः मुखे, कं चिबुके, खं गले, गं कण्ठे, घंङं पार्श्वयोः, चं स्तनयुग्मे, छंजं दोर्मूलयोः, झंञं कूर्परयोः, टंठं पाण्योः, डं पाणिपृष्ठे, ढं नाभौ, णं गुह्ये, तंथं ऊर्वोः, दंधं जान्वोः,

नंपं जङ्घयोः, फंबं स्फिचोः, भंमं पादतलयोः, यंरं पादाङ्गुष्ठयोः, लं कण्ठके, वं काञ्च्यां, शं ग्रैवेये, षं मुकुटे, संहं कर्णकुण्डलयोः, ळं हृदये, क्षं गुह्याधः, त्रितारादिनमोऽन्तः।

भूषण न्यास—भूषण न्यास शरीर के तत्तत् अंगों में इस प्रकार किया जाता है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं से शिर पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं से ललाट में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इंईं से भ्रूयुगल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उंऊं से दोनों कानों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋंॠं से दोनों नेत्रों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऌं से नासिका में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡंएंऐं से गालों पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं से ओष्ठों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औंअं से दन्तपंक्तियों पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अः से मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं से चिबुक पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं से गले में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं से कण्ठ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घंङं से दोनों बगल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं से दोनों स्तनों पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छंजं से दोनों भुजाओं पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झंञं से दोनों कूर्परों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टंठं से दोनों हाथों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं से हाथों के पीछे, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं से नाभि में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं से गुह्य में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तंथं से ऊरुओं में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दंधं से दोनों जानुओं में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नंपं से दोनों जङ्घाओं में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फंबं से दोनों स्फिचों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भंमं से दोनों पैर के तलुओं में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यंरं से दोनों पादाङ्गुष्ठों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं से कण्ठ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं से करधनी में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं से ग्रैवेयक में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षं से मुकुट में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं संहं से कर्णकुण्डलों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं से हृदय में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं से गुह्य के नीचे।

षडङ्गन्यासः

अथ षडङ्गन्यासः। ॐ ऐं वदवद वाग्वादिनि ऐं हृदयाय नमः, ॐ क्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय क्लेदय महाक्षोभं कुरु क्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ सौः मोक्षं कुरु कुरु हसौंः शिखायै वषट्, पुनस्तैरेव कवचनेत्रास्त्रेषु न्यसेत्।

षडङ्ग न्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं वदवद वाग्वादिनि ऐं हृदयाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय क्लेदय महाक्षोभं कुरु क्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौः मोक्षं कुरु कुरु हसौंः शिखायै वषट्, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं वदवद वाग्वादिनि ऐं कवचाय हुं, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय क्लेदय महाक्षोभं कुरु क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौः मोक्षं कुरु कुरु हसौंः अस्त्राय फट्।

तत्त्वचतुष्टयन्यासः

अथ श्रीविद्याबीजैस्तत्त्वचतुष्टयन्यासः। ॐ वाग्भवद्वयमुच्चार्य आत्मतत्त्वाय नमः नाभेरापादान्तं। ॐ कामराजद्वयमुच्चार्य विद्यातत्त्वाय नमः हृदो नाभिपर्यन्तं। ॐ शक्तिद्वयमुच्चार्य शिवतत्त्वाय नमः शिरसो हृत्पर्यन्तं। ॐ समस्तमुच्चार्य सर्वतत्त्वाय नमः सर्वाङ्गे व्यापकं न्यसेत्।

तत्त्वचतुष्टय न्यास—श्रीविद्या-बीजों से तत्त्वचतुष्टय न्यास नाभि से पैर तक, हृदय से नाभि तक, शिर से हृदय तक मूलोक्त मन्त्र से करने के पश्चात् सम्पूर्ण मन्त्र से सर्वाङ्ग में व्यापक न्यास किया जाता है।

अमठन्यासः

अथामठन्यासः। अस्यामठन्यासस्य लक्ष्मीनारायण ऋषिः ककुप् छन्दः सर्वजनवशंकरी श्रीमहालक्ष्मीः देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं मम सर्वजनवश्यार्थे न्यासे विनियोगः। ऐं वागीश्वर्यै नमः केशान्ते, ह्रीं पार्वत्यै नमः भ्रूमध्ये, अं अर्कमण्डलाय नमः दक्षनेत्रे, मं वह्निमण्डलाय नमः वामनेत्रे, ठं चन्द्रमण्डलाय नमः मुखे, मण्डलीकृत्य तृतीयनेत्रे, श्रीं श्रियै नमः जिह्वाग्रे, स्वां दन्तिन्यै नमः दक्षगण्डे, हां दन्तिन्यै नमः वामगण्डे, आं पाशाय नमः दक्षकर्णे, क्रों अंकुशाय नमः वामकर्णे, क्लीं कामदेवाय नमः चिबुके। एवमेकादशवारं कर्तव्यः। इति अमठन्यासः।

अमठ न्यास—इस अमठ न्यास के ऋषि लक्ष्मीनारायण, छन्द ककुप् देवता सर्वजन को वश में करने वाली महालक्ष्मी, बीज आं, शक्ति ह्रीं एवं कीलक क्रों है। समस्त लोगों को वश करने के लिये इसका विनियोग किया जाता है।

तदनन्तर इस प्रकार न्यास किया जाता है—ऐं वागीश्वर्यै नम: (केशान्त में), ह्रीं पार्वत्यै नम: (भ्रूमध्य में), अं अर्कमण्डलाय नम: (दक्ष नेत्र में), मं वह्निमण्डलाय नम: (वाम नेत्र में), ठं चन्द्रमण्डलाय नम: (मुख में), मण्डलीकरण करके तृतीय नेत्र में, श्रीं श्रियै नम: (जिह्वा के आगे), स्वां दन्तिन्यै नम: (दाहिने गाल पर), हां दन्तिन्यै नम: (बाँयें गाल पर), आं पाशाय नम: (दाहिने कान में), क्रों अंकुशाय नम: (बाँयें कान में), क्लीं कामदेवाय नम: (चिबुक में)। इसी प्रकार ग्यारह बार न्यास करना चाहिये।

ऊर्ध्वाम्नायन्यासक्रम:

अथोर्ध्वाम्नायन्यासक्रम:। आदौ महाषोढान्यासस्ततो मन्त्रन्यास:। ऊर्ध्वाम्नायमन्त्रास्तु—

चरणं नवनाथाश्च मूलविद्याश्च षोडश। आधारषट्कं देवेशि संविद्देव्य उदाहृता:॥

तथा—

पञ्चाम्बा नवनाथाश्च मूलविद्याश्च षोडश। षडाधारादिविद्याश्च चरणाद्या: क्रमादिह॥

चरणं विश्रान्तिचरणं शम्भुचरणं चेति। अत्रोर्ध्वाम्नाये पञ्चाम्बा दिव्यौघा:, द्विधा नवनाथा: आकाशाख्यनवनाथा: आत्मानन्दादिनवनाथाश्चेति। तत्राकाशाख्या: सिद्धौघा:, परमात्मानन्दाद्या मानवौघा:। ते च चरणगुरुपंक्तिमूलविद्याषडाधारविद्याख्या: चत्वारो मन्त्रन्यासा:। चरणचतुष्टयीत्रयोविंशतिनाथषोडशमूलविद्या: षडाधारविद्या: पराप्रासाददशप्रणवाश्च(?)इत्येकपञ्चाशदूर्ध्वाम्नायमन्त्रा:।

ऊर्ध्वाम्नाय न्यास क्रम—इसमें पहले षोढ़ा न्यास तब मन्त्र न्यास करना चाहिये। चार चरण, तेईस नाथ, सोलह मूल विद्या, छ: आधार विद्या, परा विद्या एवं प्रासाद विद्या—इस प्रकार इक्यावन ऊर्ध्वाम्नाय मन्त्र होते हैं।

महाषोढान्यास:

तत्र प्रथमं महाषोढान्यास: कुलप्रकाशतन्त्रे—

प्रपञ्चो भुवनं मूर्तिर्मन्त्रदैवतमातर:। महाषोढाह्वयो न्यास: सर्वन्यासोत्तमोत्तम:॥

तत्र प्रथमं शिरसि संघट्टमुद्रया ४ँ हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं हंस: शिव: हसौ: सोहं हसक्षमलवरयूं अमुकानन्दनाथनिजगुरुश्रीपादुकां पूजयामि, इति श्रीगुरुपादुकामन्त्रं ब्रह्मरन्ध्रे विन्यस्य ध्यायेत्।

सहस्रदलपङ्कजे सकलशीतरश्मिप्रभं वराभयकराम्बुजं विमलगन्धपुष्पाम्बरम्।
प्रसन्नवदनेक्षणं सकलदेवतारूपिणं स्मरे शिरसि हंसगं तदभिधानपूर्वं गुरुम्॥

इति ध्यात्वा, मानसैरुपचारै: संपूज्य षडङ्गन्यासं कुर्यात्। तदुक्तं यामले—

ईशतत्पुरुषाघोरवामसद्योभवात्मन:। पञ्चाङ्गुलीषु विन्यस्य मूर्ध्नि वक्त्रेषु विन्यसेत्॥
पराप्रासादबीजेन षडङ्गान्येवमाचरेत्।

अस्य श्रीपराप्रासादमन्त्रस्य परशम्भु: ऋषि:, अव्यक्तागायत्री छन्द:, मन्त्रेश्वरी परा देवता, हसांस्हां बीजं हसींस्हीं शक्ति: हसूंस्हूं कीलकं श्रीपरादेवताप्रसादसिद्ध्यर्थे विनियोग:। शिरोमुखहृदयगुह्यजानुपादेषु विन्यस्य, हसांस्हां हृदयाय नम: इत्यादि करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौंहौं ईशानाय नम: अङ्गुष्ठयो:। ५ँ हें तत्पुरुषाय नम: तर्जन्यो:। ५ँ हुं अघोराय नम: मध्यमयो:। ५ँ हिं वामदेवाय नम: अनामिकयो:। ५ँ हं सद्योजाताय नम: कनिष्ठिकयो:। इति विन्यस्य, ५ँ हों ईशानाय नम: ऊर्ध्ववक्त्रे, मूर्ध्नि अङ्गुष्ठेन न्यस्येत्। ५ँ हैं तत्पुरुषाय नम: पूर्ववक्त्रे, मुखे तर्जन्या। ५ँ हुं अघोराय नम: दक्षिणवक्त्रे, कर्णप्रदेशे मध्यमया। ५ँ हिं वामदेवाय नम: उत्तरवक्त्रे, वामकर्णप्रदेशेऽनामिकया। ५ँ हं सद्योजाताय नम: पश्चिमवक्त्रे, कन्धरोपरि शिर:पृष्ठाधोभागे कनिष्ठया। इति पञ्चवक्त्रन्यास:।

अथ मूर्तिषडङ्गन्यासः। ५ँ हों ईशानाय हृदयाय नमः। ५ँ हें तत्पुरुषाय शिरसे स्वाहा। ५ँ हुं अघोराय शिखायै वषट्। ५ँ हिं वामदेवाय कवचाय हुं। ५ँ हं सद्योजाताय नेत्रत्रयाय वौषट्। ५ँ हः पञ्चवक्त्राय अस्त्राय फट्।

अस्य श्रीमहाषोढान्यासस्य परब्रह्म ऋषिः जगती छन्दः, शिवशक्त्यात्मस्वरूपी सदाशिवो देवता, न्यासे विनियोगः। मूर्ध्नि वक्त्रे च हृदि ॐ नम इति विन्यस्य, ततः पराप्रासादषड्दीर्घैः षडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यायेत्।

पञ्चवक्त्रं चतुर्बाहुं सर्वाभरणभूषितम्। चन्द्रसूर्यसहस्राभं शिवशक्त्यक्षरं भजे॥
अन्तःषोढां महेशानि कुर्यादुक्तस्य वर्त्मना। ततः कुर्यान्महान्यासं महाषोढाह्वयं परम्॥
वक्ष्यमाणप्रकारेण देवताभावसिद्धये। यस्य कस्यापि नैवोक्तं तव स्नेहाद्वदाम्यहम्॥

महाषोढ़ा न्यास—कुलप्रकाश तन्त्र में कहा गया है कि महाषोढ़ा न्यास में प्रपञ्च न्यास, भुवन न्यास, मूर्ति न्यास, मन्त्र न्यास, दैवत न्यास, मातृन्यास—ये छः न्यास होते हैं। इसीलिये इसे सर्वश्रेष्ठ न्यास कहा जाता है। पहले अपने शिर पर संघट्ट मुद्रा से 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्सखफ्रें, सक्षमलवरयूं हंसः शिवः हसौः सोहं हसक्षमलवरयूं अमुकानन्दनाथनिजगुरुश्रीपादुकां पूजयामि' इस गुरुपादुका मन्त्र से ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

सहस्रदलपङ्कजे सकलशीतरश्मिप्रभं वराभयकराम्बुजं विमलगन्धपुष्पाम्बरम्।
प्रसन्नवदनेक्षणं सकलदेवतारूपिणं स्मरे शिरसि हंसगं तदभिधानपूर्वं गुरुम्।।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा करके षडङ्ग न्यास करे। यामल में कहा है कि ईशान-तत्पुरुष-अघोर-वामदेव-सद्योजात मन्त्रों से अपनी पाँचों अंगुलियों में न्यास करे। तब मूर्धा एवं मुख में न्यास करे। पराप्रासाद बीज से षडङ्ग न्यास किया जाता है। न्यास करने के पूर्व सर्वप्रथम विनियोग करे। इस पराप्रासाद मन्त्र के ऋषि परशम्भु, छन्द अव्यक्ता गायत्री, देवता मन्त्रेश्वरी परा, बीज हसां स्हां, शक्ति हसीं स्हीं एवं कीलक हसूं स्हूं है। श्रीपरा देवता की प्रसाद सिद्धि हेतु इसका विनियोग किया जाता है। तदनन्तर शिर मुख हृदय गुहा जानु पैर में न्यास करके 'ह्सां स्हां हृदयाय नमः' इत्यादि रूप में करन्यास और षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौंहौं ईशानाय नमः से दोनों अङ्गुष्ठों में, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हें तत्पुरुषाय नमः से दोनों तर्जनियों में, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हुं अघोराय नमः से दोनों मध्यमाओं में, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हिं वामदेवाय नमः से दोनों अनामिकाओं में, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हं सद्योजाताय नमः से दोनों कनिष्ठिकाओं में न्यास करके इस प्रकार पञ्चवक्त्र न्यास करे—ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हों ईशानाय नमः से ऊपरी मुख के लिये मूर्धा में अंगूठे से, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हैं तत्पुरुषाय नमः से पूर्व मुख के लिये मुख में तर्जनी से, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हुं अघोराय नमः से दक्षिण मुख के लिये कर्ण प्रदेश में मध्यमा से, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हिं वामदेवाय नमः से उत्तर मुख के लिये वाम कर्ण प्रदेश में अनामिका से एवं ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हं सद्योजाताय नमः से पश्चिम मुख के लिये कन्धे के ऊपर शिर के पीछे निम्न भाग में कनिष्ठा से पञ्चवक्त्र न्यास करे।

तदनन्तर ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हों ईशानाय हृदयाय नमः, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हें तत्पुरुषाय शिरसे स्वाहा, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हुं अघोराय शिखायै वषट्, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हिं वामदेवाय कवचाय हुं, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हं सद्योजाताय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐऐंह्रींश्रींहसौंस्हौं हः पञ्चवक्त्राय अस्त्राय फट्—इस प्रकार मूर्तिषडङ्ग न्यास करे।

इस महाषोढ़ा न्यास के परब्रह्म ऋषि, जगती छन्द एवं शिव-शक्त्यात्मस्वरूप सदाशिव देवता हैं। न्यास हेतु इसका विनियोग किया जाता है। तदनन्तर मूर्धा मुख हृदय में 'ॐ नमः' से न्यास करके छः दीर्घ पराप्रासाद से षडङ्ग न्यास करने के बाद इस प्रकार ध्यान करे—

पञ्चवक्त्रं चतुर्बाहुं सर्वाभरणभूषितम्। चन्द्रसूर्यसहस्राभं शिवशक्त्यक्षरं भजे।

इस प्रकार अन्तःषोढ़ा न्यास करके देवताभाव सिद्धि के लिये इस प्रकार महाषोढ़ा न्यास करे। इसे जिस-किसी को नहीं बतलाना चाहिये; केवल तुम्हारे स्नेहवश मैं इसे कहता हूँ।

प्रपञ्चन्यासः

अथ प्रपञ्चन्यासः। ४ँ हसौः अं प्रपञ्चरूपायै श्रियै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ। एवं बीजसंपुटं सर्वत्र। आं द्वीपरूपायै मायायै। इं अब्धिरूपायै कमलायै। ईं गिरिरूपायै विष्णुवल्लभायै। उं पत्तनरूपायै पद्मधारिण्यै। ऊं पीठरूपायै समुद्रतनयायै। ऋं क्षेत्ररूपायै लोकधात्र्यै। ॠं वनरूपायै कमलवासिन्यै। लृं आश्रयरूपायै इन्दिरायै। लॄं गुहारूपायै मायायै। एं नदीरूपायै रमायै। ऐं चतुररूपायै पद्मायै। ओं उद्भिज्जरूपायै नारायणप्रियायै। औं जरायुजरूपायै राज्यलक्ष्म्यै। अं अण्डजरूपायै नारायण्यै। अः स्वेदजरूपायै सिद्धलक्ष्म्यै। कं लवरूपायै आर्यायै। खं त्रुटिरूपायै उमायै। गं कलारूपायै चण्डिकायै। घं काष्ठारूपायै दुर्गायै। ङं निमेषरूपायै शिवायै। चं श्वासरूपायै अपर्णायै। छं घटिकारूपायै अम्बिकायै। जं मुहूर्तरूपायै सत्यै। झं प्रहररूपायै ईश्वर्यै। ञं दिवसरूपायै शाम्भव्यै। टं संध्यारूपायै ईशान्यै। ठं रात्रिरूपायै पार्वत्यै। डं तिथिरूपायै सर्वमङ्गलायै। ढं वाररूपायै दाक्षायण्यै। णं नक्षत्ररूपायै हैमवत्यै। तं योगरूपायै महामायायै। थं करणरूपायै माहेश्वर्यै। दं पक्षरूपायै मृडान्यै। धं मासरूपायै रुद्राण्यै। नं राशिरूपायै शर्वाण्यै। पं ऋतुरूपायै परमेश्वर्यै। फं अयनरूपायै काल्यै। बं वत्सररूपायै कात्यायन्यै। भं युगरूपायै गौर्यै। मं प्रलयरूपायै भवान्यै। यं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाख्यपञ्चभूतरूपायै ब्राह्मयै। रं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धतन्मात्ररूपायै वागीश्वर्यै। लं वाक्पाणिपादपायूपस्थाख्यपञ्चकर्मेन्द्रियरूपायै वाण्यै। वं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणाख्यपञ्चज्ञानेन्द्रियरूपायै वाक्प्रदायै नमः। शं प्राणापानव्यानोदानसमानाख्यपञ्चप्राणरूपायै गायत्र्यै। षं सत्त्वरजस्तम आख्यगुणत्रयरूपायै सावित्र्यै। सं मनोबुद्ध्यहंकारचित्ताख्यान्तःकरणचतुष्टयरूपायै सरस्वत्यै। हं जाग्रत्स्वप्नसुषुप्ततुरीयाख्यावस्थाचतुष्टयरूपायै शारदायै। ळं त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राख्यसप्तधातुरूपायै भारत्यै। ४ँ क्षं वातपित्तश्लेष्माख्यदोषत्रयरूपायै विद्यात्मिकायै पञ्चभूतव्यापिकाधीश्वर्यै नमः। इति प्रपञ्चादीनि मातृकास्थानेषु विन्यस्य, ४ँ आदिक्षान्तमुक्तसकलप्रपञ्चरूपायै पराम्बादेव्यै नमः इति व्यापकं कुर्यात्। इति प्रपञ्चन्यासः।

प्रपञ्च न्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः अं प्रपञ्चरूपायै श्रियै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः आं द्वीपरूपायै मायायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः इं अब्धिरूपायै कमलायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ईं गिरिरूपायै विष्णुवल्लभायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः उं पत्तनरूपायै पद्मधारिण्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ऊं पीठरूपायै समुद्रतनयायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ऋं क्षेत्ररूपायै लोकधात्र्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ॠं वनरूपायै कमलवासिन्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः लृं आश्रयरूपायै इन्दिरायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्री हसौः लॄं गुहारूपायै मायायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः एं नदीरूपायै रमायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ऐं चतुररूपायै पद्मायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ओं उद्भिज्जरूपायै नारायणप्रियायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः औं जरायुजरूपायै राज्यलक्ष्म्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः अं अण्डजरूपायै नारायण्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः अः स्वेदजरूपायै सिद्धलक्ष्म्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्री हसौः कं लवरूपायै आर्यायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः खं त्रुटिरूपायै उमायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः गं कलारूपायै चण्डिकायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः घं काष्ठारूपायै दुर्गायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ङं निमेषरूपायै शिवायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः चं श्वासरूपायै अपर्णायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः छं घटिकारूपायै अम्बिकायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः जं मुहूर्तरूपायै सत्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः झं प्रहररूपायै ईश्वर्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ञं दिवसरूपायै शाम्भव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः टं संध्यारूपायै ईशान्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ठं रात्रिरूपायै पार्वत्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः डं तिथिरूपायै सर्वमङ्गलायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः ढं वाररूपायै दाक्षायण्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः णं नक्षत्ररूपायै हैमवत्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौः तं योगरूपायै महामायायै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ,

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: थं करणरूपायै माहेश्वर्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: दं पक्षरूपायै मृडान्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: धं मासरूपायै रुद्राण्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: नं राशिरूपायै शर्वाण्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: पं ऋतुरूपायै परमेश्वर्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: फं अयनरूपायै काल्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: बं वत्सररूपायै कात्यायन्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: भं युगरूपायै गौर्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: मं प्रलयरूपायै भवान्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: यं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाख्यपञ्चभूतरूपायै ब्राह्म्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: रं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धतन्मात्ररूपायै वागीश्वर्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: लं वाक्पाणिपादपायूपस्थाख्यपञ्चकर्मेन्द्रियरूपायै वाण्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: वं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणाख्यपञ्चज्ञानेन्द्रियरूपायै वाक्प्रदायै नम: नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: शं प्राणापानव्यानोदानसमानाख्यपञ्चप्राणरूपायै गायत्र्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: षं सत्त्वरजस्तम आख्यगुणत्रयरूपायै सावित्र्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: सं मनोबुद्ध्यहंकारचित्ताख्यान्त:करणचतुष्टयरूपायै सरस्वत्यै नम: स्हौ: श्रीं-ह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: हं जाग्रत्स्वप्नसुषुप्ततुरीयाख्यावस्थाचतुष्टयरूपायै शारदायै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: ळं त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राख्यसप्तधातुरूपायै भारत्यै नम: स्हौ: श्रींह्रींऐंॐ, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: क्षं वातपित्तश्लेष्माख्य-दोषत्रयरूपायै विद्यात्मिकायै पञ्चभूतव्यापिकाधीश्वर्यै नम:—इस प्रकार मातृकास्थानों में प्रपञ्च आदि का न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आदिक्षान्तमुक्तसकलप्रपञ्चरूपायै पराम्बादेव्यै नम: मन्त्र से व्यापक न्यास करे।

भुवनन्यास:

अथ भुवनन्यास:। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: अं आं इं अतललोकनिलयशतकोटिगुह्याद्ययोगिनीमूलदेवता-युताधारशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ पादयो:। एवं बीजसंपुटं सर्वत्र। इं उं ऊं वितललोकनिलयशतकोटि-गुह्यतमयोगिनीमूलदेवतायुतालिप्तपराशक्त्यम्बादेव्यै नम: गुल्फयो:। ऋं ॠं ऌं सुतललोकनिलयशतकोटिपरम-गुह्यतमयोगिनीमूलदेवतायुताचिन्त्यपराशक्त्यम्बादेव्यै नम: जङ्घयो:। ॡं एं ऐं महातललोकनिलयशतकोटिमहागुह्य-योगिनीमूलदेवतायुतस्वारम्भशक्त्यम्बादेव्यै नम: जान्वो:। ओं औं तलातललोकनिलयशतकोटिपरमगुह्ययोगिनी-मूलदेवतायुतेच्छाशक्त्यम्बादेव्यै नम: ऊर्वो:। अंअ: रसातललोकनिलयशतकोटिरहस्ययोगिनीमूलदेवतायुतज्ञानश-क्त्यम्बादेव्यै नम: गुह्यके। कं ५ पाताललोकनिलयशतकोटिरहस्यतमयोगिनीमूलदेवतायुतक्रियाशक्त्यम्बादेव्यै नम: मूलाधारे। चं ५ भूर्लोकनिलयशतकोटिअतिरहस्ययोगिनीमूलदेवतायुतडाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्वाधिष्ठाने। टं ५ भुवर्लोकनिलयशतकोटिपरमरहस्ययोगिनीमूलदेवतायुतराकिणीशक्त्यम्बादेव्यै नम: नाभिदेशे। तं ५ स्वर्लोक-निलयशतकोटिपरमरहस्ययोगिनीमूलदेवतायुतलाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: हृदये। पं ५ महर्लोकनिलयशतकोटिगुप्त-योगिनीमूलदेवतायुतकाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: कण्ठदेशे। यं ४ जनलोकनिलयशतकोटिगुप्ततरयोगिनीमूलदेवता-युतशाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: आज्ञायाम्। शं ४ तपोलोकनिलयशतकोट्यतिगुप्तयोगिनीमूलदेवतायुतहाकिनी-शक्त्यम्बादेव्यै नम: ललाटे। ळं क्षं सत्यलोकनिलयशतकोटिमहागुप्तयोगिनीमूलदेवतायुतयाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: ब्रह्मरन्ध्रे। ४ँ अं ५१ चतुर्दशभुवनाधिपायै श्रीपराम्बादेव्यै नम:। इति व्यापकं न्यसेत्। इति भुवनन्यास:।

भुवन न्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: अं आं इं अतललोकनिलयशतकोटिगुह्याद्ययोगिनीमूलदेवतायुताधारशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से पैरों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: इं उं ऊं वितललोकनिलयशतकोटिगुह्यतमयोगिनीमूलदेवतायुतालिप्त-पराशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से गुल्फों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: ऋं ॠं ऌं सुतललोकनिलयशतकोटिपरमगुह्यतमयोगिनीमूल-देवतायुताचिन्त्यपराशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से जांघों में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ; ॡं एं ऐं महातललोकनिलयशतकोटिमहागुह्य-योगिनीमूलदेवतायुतस्वारम्भशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से जानुओं में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: ओं औं तलातललोकनिलयशत-कोटिपरमगुह्ययोगिनीमूलदेवतायुतेच्छाशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से ऊरुओं में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: अंअ: रसातल-लोकनिलयशतकोटिरहस्ययोगिनीमूलदेवतायुतज्ञानशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से गुह्य में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: कं

खं गं घं ङं पाताललोकनिलयशतकोटिरहस्यतमयोगिनीमूलदेवतायुतक्रियाशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से मूलाधार में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: चं छं जं झं ञं भूर्लोकनिलयशतकोट्यतिरहस्ययोगिनीमूलदेवतायुतडाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से स्वाधिष्ठान में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: टं ठं डं ढं णं भुवर्लोकनिलयशतकोटिपरमरहस्ययोगिनीमूलदेवतायुत-राकिणीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से नाभि में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: तं थं दं धं नं स्वर्लोकनिलयशतकोटिपरमरहस्य-योगिनीमूलदेवतायुतलाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से हृदय में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: पं फं बं भं मं महर्लोक-निलयशतकोटिगुप्तयोगिनीमूलदेवतायुतकाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से कण्ठ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: यं रं लं वं जनलोकनिलयशतकोटिगुप्ततरयोगिनीमूलदेवतायुतशाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से आज्ञाचक्र में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: शं षं सं हं तपोलोकनिलयशतकोट्यतिगुप्तयोगिनीमूलदेवतायुतहाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से ललाट में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: ळं क्षं सत्यलोकनिलयशतकोटिमहागुप्तयोगिनीमूलदेवतायुतयाकिनीशक्त्यम्बादेव्यै नम: स्हौ: श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अ: कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं चतुर्दशभुवनाधिपायै श्रीपराम्बादेव्यै नम: से व्यापक न्यास करे।

मूर्तिन्यासः

अथ मूर्तिन्यासः। ४ँ हसौं अं केशवाक्षयाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ ललाटे। एवं बीजसंपुटं सर्वत्र। आं नारायणाद्याभ्यां दक्षमुखे। इं माधवेष्टदाभ्यां दक्षस्कन्धे। ईं गोविन्देशानाभ्यां दक्षकुक्षौ। उं विष्णूग्राभ्यां दक्षोरौ। ऊं मधुसूदनोर्ध्वनयनाभ्यां दक्षजानौ। ऋं त्रिविक्रमऋद्धिभ्यां दक्षजङ्घायां। ॠं वामनरूपिणीभ्यां दक्षपादे। ऌं श्रीधरलुप्ताभ्यां वामपादे। ॡं हृषीकेशलूनदोषाभ्यां वामजङ्घायाम्। एं पद्मनाभैकनायिकाभ्यां वामजानौ। ऐं दामोदरैंकारिणीभ्यां वामोरौ। ओं वासुदेवौघवतीभ्यां वामकुक्षौ। औं सङ्कर्षणौर्वकामाभ्यां वामस्कन्धे। अं प्रद्युम्नाञ्जनप्रभाभ्यां वाममुखे। अः अनिरुद्धास्थिमालाधराभ्यां वाममस्तके। कंभं भवकरभद्राभ्यां दक्षपादे। खं बं शर्वखगबलाभ्यां वामपादे। गं फं रुद्रगरिमादिफलप्रदाभ्यां दक्षपार्श्वे। घं पं पशुपतिघर्मप्रशमनीभ्यां वामपार्श्वे। ङं नं उग्रपङ्क्तिनासाभ्यां दक्षबाहौ। चं धं महादेवचन्द्रार्धधारिणीभ्यां वामबाहौ। छं दं भीमच्छन्दोमयीभ्यां कण्ठे। जं थं ईशानजगत्स्थानाभ्यां ऊर्ध्ववक्त्रे। झं तं तत्पुरुषप्रताराभ्यां पूर्ववक्त्रे। ञं णं अघोरज्ञानदाभ्यां दक्षास्ये। टं ढं सद्योजातटङ्कधराभ्यां पश्चिमास्ये। ठं डं वाम-देवठङ्कारडामरीभ्यां वाममुखे। यं ब्रह्मयक्षिणीभ्यां मूलाधारे। रं प्रजापतिरञ्जनीभ्यां स्वाधिष्ठाने। लं वेधोलक्ष्मीभ्यां मणिपूरे। वं परमेष्ठिवज्रिणीभ्यां अनाहते। शं पितामहशक्तिधारिणीभ्यां विशुद्धे। षं विधातृषडाधारालयाभ्यां आज्ञायाम्। सं विरिञ्चिसर्वनायिकाभ्यां इन्दौ, हं सृष्टृहरिताननाभ्यां बिन्दौ, ळं चतुराननललिताभ्यां नादे, क्षं हिरण्यगर्भक्षमाभ्यां नादान्ते, ४ँ अं ५१ हरिहरब्रह्मत्रिमूर्त्यात्मिकायै श्रीपराम्बादेव्यै नमः, इति व्यापकं न्यसेत्। इति मूर्तिन्यासः।

मूर्तिन्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं अं केशवाक्षयाभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से ललाट में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं आं नारायणाद्याभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिने मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं इं माधवेष्टदाभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिने कन्धे पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ईं गोविन्देशानाभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ दाहिनी कुक्षि में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं उं विष्णूग्राभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिने ऊरु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ऊं मधुसूदनोर्ध्वनयनाभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिने जानु पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ऋं त्रिविक्रमऋद्धिभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिने जांघ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ॠं वामनरूपिणीभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिने पैर पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ऌं श्रीधरलुप्ताभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें पैर पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ॡं हृषीकेशलूनदोषाभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें जांघ पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं एं पद्मनाभैकनायिकाभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें जानुओं पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ऐं दामोदरैंकारिणीभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें ऊरु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ओं वासुदेवौघवतीभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें कुक्षि में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं औं सङ्कर्षणौर्वकामाभ्यां नम: स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें कन्धे पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं अं

प्रद्युम्नाञ्जनप्रभाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं अं: अनिरुद्धास्थिमालाधराभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से मस्तक के बाँयें, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं कंभं भवकरभद्राभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिने पैर पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं खं बं शर्वखगबलाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयें पैर पर, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं गं फं रुद्रगरिमादिफलप्रदाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिनी बगल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं घं पं पशुपतिघर्मप्रशमनीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयी बगल में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ङं नं उग्रपङ्क्तिनासाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दाहिनी भुजा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं चं धं महादेवचन्द्रार्धधारिणीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बाँयीं भुजा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं छं दं भीमच्छन्दोमयीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से कण्ठ में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं जं थं ईशानजगत्स्थानाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से ऊपरी मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं झं तं तत्पुरुषप्रताराभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से पूर्व मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ञं णं अघोरज्ञानदाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से दक्षिण मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं टं ढं सद्योजातटङ्कधराभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से पश्चिम मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ठं डं वामदेवठङ्कारडामरीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से वाम मुख में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं यं ब्रह्मयक्षिणीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से मूलाधार में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं रं प्रजापतिरञ्जनीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से स्वाधिष्ठान में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं लं वेधोलक्ष्मीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से मणिपूर में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं वं परमेष्ठिवज्रिणीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से अनाहत में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं शं पितामहशक्तिधारिणीभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से विशुद्ध में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं षं विधातृषडाधारालयाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से आज्ञा में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं सं विरिञ्चिसर्वनायिकाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से इन्दु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं हं सृष्टृहरितानानाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से बिन्दु में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं ळं चतुराननललिताभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से नाद में, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं क्षं हिरण्यगर्भक्षमाभ्यां नमः स्हौं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ से नादान्त में न्यास करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं हरिहरब्रह्मत्रिमूर्त्यात्मिकायै श्रीपराम्बादेव्यै नमः से व्यापक न्यास करे।

मन्त्रन्यासः

अथ मन्त्रन्यासः। प्रथमोक्तबीजसंपुटं सर्वत्र। ॐऐंह्रींश्रींहसौः अंआंइं एकलक्षकोटिभेदप्रणवाद्येकाक्षरात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै एककूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ मूलाधारे। ईंउंऊं द्विलक्षकोटिभेदहंसादिद्विकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै द्विकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः लिङ्गे। ऋंॠंऌं त्रिलक्षकोटिभेदवह्न्यादित्रिकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै त्रिकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः नाभौ। ॡंएंऐं चतुर्लक्षकोटिभेदचन्द्रादिचतुष्कूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै चतुष्कूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः हृदये। ओंऔंअंअः पञ्चलक्षकोटिभेदसूर्यादिपञ्चकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै पञ्चकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः कण्ठे। कंखंगं षड्लक्षकोटिभेदस्कन्धादिषट्कूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै षट्कूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः मुखे। घंङंचं सप्तलक्षकोटिभेदगणेशादिसप्तकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै सप्तकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः नेत्रयोः। छंजंझं अष्टलक्षकोटिभेदवटुकाद्यष्टकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै अष्टकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः आज्ञायाम्। ञंटंठं नवलक्षकोटिभेदब्रह्मादिनवकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै नवकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः इन्दौ। डंढंणं दशलक्षकोटिभेदविष्ण्वादिदशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै दशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः बिन्दौ। तंथंदं एकादशलक्षकोटिभेदरुद्राद्येकादशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै एकादशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः कलायां। धंनंपं द्वादशलक्षकोटिभेदवाण्यादिद्वादशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै द्वादशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः उन्मन्याम्। फंबंभं त्रयोदशलक्षकोटिभेदलक्ष्म्यादित्रयोदशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै त्रयोदशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः शिरोवृत्ते। मंयंरं चतुर्दशलक्षकोटिभेदगौर्यादिचतुर्दशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै चतुर्दशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः नादे। लंवंशं पञ्चदशलक्षकोटिभेददुर्गादिपञ्चदशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै

सकलफलप्रदायै पञ्चदशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः नादान्ते। षंसंहं षोडशलक्षकोटिभेदत्रिपुरादिषोडशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै षोडशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः ब्रह्मरन्ध्रे। ४ँ अं ५१ सर्वमन्त्रात्मिकायै पराम्बादेव्यै नमः, इति व्यापकं न्यसेत्। इति मन्त्रन्यासः।

मन्त्रन्यास—ॐऐंह्रींश्रींहसौः अंआंइं एकलक्षकोटिभेदप्रणवाद्येकाक्षरात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै एककूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से मूलाधार में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ईंउंऊं द्विलक्षकोटिभेदहंसादिद्विकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै द्विकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से लिङ्ग पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ऋंॠंऌं त्रिलक्षकोटिभेदवह्न्यादित्रिकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै त्रिकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से नाभि पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ॡंएंऐं चतुर्लक्षकोटिभेदचन्द्रादिचतुष्कूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै चतुष्कूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से हृदय में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ओंऔंअंअः पञ्चलक्षकोटिभेदसूर्यादिपञ्चकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै पञ्चकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से कण्ठ में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः कंखंगं षड्लक्षकोटिभेदस्कन्धादिषट्कूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै षट्कूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से मुख में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः घंङंचं सप्तलक्षकोटिभेदगणेशादिसप्तकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै सप्तकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से नेत्र में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः छंजंझं अष्टलक्षकोटिभेदवटुकाद्यष्टकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै अष्टकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से आज्ञा में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ञंटंठं नवलक्षकोटिभेदब्रह्मादिनवकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै नवकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से इन्दु में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः डंढंणं दशलक्षकोटिभेदविष्ण्वादिदशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै दशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बिन्दु में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः तंथंदं एकादशलक्षकोटिभेदरुद्राद्येकादशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै एकादशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से कला में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः धंनंपं द्वादशलक्षकोटिभेदवाण्यादिद्वादशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै द्वादशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से उन्मनी में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः फंबंभं त्रयोदशलक्षकोटिभेदलक्ष्म्यादित्रयोदशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै त्रयोदशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से शिरोवृत्त में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः मंयंरं चतुर्दशलक्षकोटिभेदगौर्यादिचतुर्दशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै चतुर्दशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रीं ह्रींऐंॐ से नाद में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः लंवंशं पञ्चदशलक्षकोटिभेददुर्गादिपञ्चदशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै पञ्चदशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से नादान्त में एवं ॐऐंह्रींश्रींहसौः षंसंहं षोडशलक्षकोटिभेदत्रिपुरादिषोडशकूटात्मकाखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलफलप्रदायै षोडशकूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करके ॐऐंह्रींश्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं सर्वमन्त्रात्मिकायै पराम्बादेव्यै नमः से व्यापक न्यास करे।

दैवतन्यासः

अथ दैवतन्यासः। ॐऐंह्रींश्रींहसौः अंआं सहस्रकोटियोगिनीकुलसेवितायै निवृत्त्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ दक्षपादाङ्गुष्ठे। एवं बीजसंपुटं सर्वत्र। इंईं सहस्रकोटियोगिनीकुलसेवितायै प्रतिष्ठाम्बादेव्यै नमः दक्षगुल्फे। उंऊं सहस्रकोटितपस्विनीकुलसेवितायै विद्याम्बादेव्यै नमः दक्षजङ्घायां। ऋंॠं सहस्रकोटिऋषिकुलसेवितायै शान्त्यम्बादेव्यै नमः दक्षजानौ। ऌंॡं सहस्रकोटिमुनिकुलसेवितायै शान्त्यतीताम्बादेव्यै नमः दक्षोरौ। एंऐं सहस्रकोटिदेवकुलसेवितायै हृल्लेखाम्बादेव्यै नमः दक्षकट्यां। ओंऔं सहस्रकोटिराक्षसकुलसेवितायै गगनाम्बादेव्यै नमः दक्षपार्श्वे। अंअः सहस्रकोटिविद्याधरकुलसेवितायै रक्ताम्बादेव्यै नमः दक्षस्तने। कंखं सहस्रकोटिसिद्धकुलसेवितायै महोच्छुष्माम्बादेव्यै नमः दक्षकक्षे। गंघं सहस्रकोटिसाध्यकुलसेवितायै करालाम्बादेव्यै नमः दक्षकरे। ङंचं सहस्रकोटि अप्सरःकुलसेवितायै जयाम्बादेव्यै नमः दक्षस्कन्धे। छंजं सहस्रकोटिगन्धर्वकुलसेवितायै विजयाम्बादेव्यै नमः दक्षकर्णे। झंञं सहस्रकोटिगुह्यककुलसेवितायै अजिताम्बादेव्यै नमः दक्षशिरसि। टंठं सहस्रकोटियक्षःकुलसेवितायै अपराजिताम्बादेव्यै नमः वामशिरसि। डंढं सहस्रकोटिकिन्नरकुलसेवितायै वामाम्बादेव्यै नमः वामकर्णे। णंतं सहस्रकोटिपन्नगकुलसेवितायै

ज्येष्ठाम्बादेव्यै नमः वामस्कन्धे। थंदं सहस्रकोटिपितृकुलसेवितायै रौद्र्यम्बादेव्यै नमः वामकरे। धंनं सहस्रकोटिगणेशकुलसेवितायै मायाम्बादेव्यै नमः वामकक्षे। पंफं सहस्रकोटिभैरवकुलसेवितायै कुण्डलिन्यम्बादेव्यै नमः वामस्तने। बंभं सहस्रकोटिवटुककुलसेवितायै काल्यम्बादेव्यै नमः वामपार्श्वे। मंयं सहस्रकोटिक्षेत्रेशकुलसेवितायै कालरात्र्यम्बादेव्यै नमः वामकट्यां। रंलं सहस्रकोटिप्रमथकुलसेवितायै भगवत्यम्बादेव्यै नमः वामोरौ। वंशं सहस्रकोटिब्रह्मकुलसेवितायै सर्वैश्वर्यम्बादेव्यै नमः वामजानौ। षंसं सहस्रकोटिविष्णुकुलसेवितायै सर्वज्ञाम्बादेव्यै नमः वामजङ्घायां। हंळं सहस्रकोटिरुद्रकुलसेवितायै सर्वकर्त्र्यम्बादेव्यै नमः वामगुल्फे। क्षं सहस्रकोटिचराचरकुलसेवितायै शक्त्यम्बादेव्यै नमः वामपादाङ्गुष्ठे। ४ँ अं ५१ समस्तदेवतात्मिकायै श्रीपराम्बिकादेव्यै नमः इति सर्वाङ्गे व्यापकं न्यसेत्। इति दैवतन्यासः।

दैवत न्यास—ॐऐंह्रींश्रींहसौः अंआं सहस्रकोटियोगिनीकुलसेवितायै निवृत्त्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिने पैर के अंगुष्ठ में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः इंईं सहस्रकोटियोगिनीकुलसेवितायै प्रतिष्ठाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिने गुल्फ में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः उंऊं सहस्रकोटितपस्विनीकुलसेवितायै विद्याम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिनी जङ्घा में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ऋंॠं सहस्रकोटिऋषिकुलसेवितायै शान्त्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिने जानु में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ऌंॡं सहस्रकोटिमुनिकुलसेवितायै शान्त्यतीताम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिने ऊरु में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः एंऐं सहस्रकोटिदेवकुलसेवितायै हृल्लेखाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिनी कमर में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ओंऔं सहस्रकोटिराक्षसकुलसेवितायै गगनाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिने पार्श्व में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः अंअः सहस्रकोटिविद्याधरकुलसेवितायै रक्ताम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रीं-ऐंॐ से दाहिने स्तन पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः कंखं सहस्रकोटिसिद्धकुलसेवितायै महोच्छुष्माम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिनी कुक्षि में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः गंघं सहस्रकोटिसाध्यकुलसेवितायै करालाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिनी हाथ में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः ङंचं सहस्रकोटि अप्सरःकुलसेवितायै जयाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिने कन्धे पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः छंजं सहस्रकोटिगन्धर्वकुलसेवितायै विजयाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से दाहिने कान में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः झंञं सहस्रकोटिगुह्यककुलसेवितायै अजिताम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से शिर के दाँयें, ॐऐंह्रींश्रींहसौः टंठं सहस्रकोटियक्षःकुलसेवितायै अपराजिताम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से शिर के बाँयें, ॐऐंह्रींश्रींहसौः डंढं सहस्रकोटिकिन्नरकुलसेवितायै वामाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयें कान पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः णंतं सहस्रकोटिपन्नगकुलसेवितायै ज्येष्ठाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयें कन्धे पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः थंदं सहस्रकोटिपितृकुलसेवितायै रौद्र्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयें हाथ में, ॐऐंह्रीं-श्रींहसौः धंनं सहस्रकोटिगणेशकुलसेवितायै मायाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयीं कुक्षि में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः पंफं सहस्रकोटिभैरवकुलसेवितायै कुण्डलिन्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयें स्तन पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः बंभं सहस्रकोटिवटुककुलसेवितायै काल्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयें पार्श्व में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः मंयं सहस्रकोटिक्षेत्रेशकुलसेवितायै कालरात्र्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयीं कमर में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः रंलं सहस्रकोटिप्रमथकुलसेवितायै भगवत्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयीं ऊरु में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः वंशं सहस्रकोटिब्रह्मकुलसेवितायै सर्वैश्वर्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयें जानु में, ॐऐंह्रींश्रींहसौः षंसं सहस्रकोटिविष्णुकुलसेवितायै सर्वज्ञाम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयीं जाङ्घ पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः हंळं सहस्रकोटिरुद्रकुलसेवितायै सर्वकर्त्र्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयीं गुल्फ पर, ॐऐंह्रींश्रींहसौः क्षं सहस्रकोटिचराचरकुलसेवितायै शक्त्यम्बादेव्यै नमः स्हौः श्रींह्रींऐंॐ से बाँयें पैर के अंगूठे पर न्यास करके ॐऐंह्रींश्रीं अं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं समस्तदेवतात्मिकायै श्रीपराम्बिकादेव्यै नमः मन्त्र से सम्पूर्ण अंग में न्यास करे।

मातृकान्यासः

अथ मातृकान्यासः—ॐऐंश्रीं मू० कं ५ अनन्तकोटिभूचरीकुलसेवितायै आंक्षां मङ्गलाम्बादेव्यै आंक्षां ब्रह्माण्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिभूतकुलसहिताय अंक्षं मङ्गलनाथाय अंक्षं असिताङ्गभैरवनाथाय नमः आधारे। त्रितारमूलं

तु सर्वत्र। चं ५ अनन्तकोटिखेचरीकुलसेवितायै ईंळां चर्चिकाम्बादेव्यै ईंळां माहेश्वर्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिवेतालकुलसहिताय इंळं चर्चिकनाथाय (इंळं वेतालभैरवनाथाय) इंळं रुरुभैरवनाथाय नमः स्वाधिष्ठाने। टं ५ अनन्तकोटिपाताल-चरीकुलसेवितायै ऊंहां योगीश्वर्यम्बादेव्यै ऊंहां कौमार्यम्बादेव्यै नमः अनन्तकोटिपिशाचकुलसहिताय उंहं योगीश्वरनाथाय उंहं चण्डभैरवनाथाय नमः मणिपूरे। तं ५ अनन्तकोटिदिक्चरीकुलसेवितायै ॠंसां हरसिद्धाम्बादेव्यै ॠंसां वैष्णव्यम्बादेव्यै अनन्तकोट्यपस्मारकुलसहिताय ऋंसं हरसिद्धनाथाय ऋंसं क्रोधराजभैरवनाथाय नमः अनाहते। पं ५ अनन्त-कोटिसहचरीकुलसेवितायै लॄंषां भट्टिन्यम्बादेव्यै लॄंषां वाराह्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिब्रह्मराक्षसकुलसहिताय लृंषं भट्टनाथाय लृंषं उन्मत्तभैरवनाथाय नमः विशुद्धे। यं ४ अनन्तकोटिगिरिचरीकुलसेवितायै ऐंशां किलिकिलाम्बादेव्यै ऐंशां इन्द्राण्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिवटुककुलसहिताय एंशं किलिकिलनाथाय एंशं कपालिभैरवनाथाय नमः आज्ञायां। शं ४ अनन्तकोटिवनचरीकुलसेवितायै औंवां कालरात्र्यम्बादेव्यै औंवां चामुण्डाम्बादेव्यै अनन्तकोटिप्रेतकुलसहिताय ओंवं कालरात्रिनाथाय ओंवं भीषणभैरवनाथाय नमः ललाटे। लंक्षं अनन्तकोटिकुलचरीकुलसेवितायै अःलां भीषणाम्बादेव्यै अःलां महालक्ष्म्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिशाकिनीकुलसहिताय अंलं भीषणनाथाय अंलं संहारभैरवाय नमः इति व्यापकं न्यसेत्। इति मातृकान्यासः। इति महाषोढान्यासः।

मातृका न्यास—ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र कं खं गं घं ङं अनन्तकोटिभूचरीकुलसेवितायै आंक्षां मङ्गलाम्बादेव्यै आंक्षां ब्रह्माण्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिभूतकुलसहिताय अंक्षं मङ्गलनाथाय अंक्षं असिताङ्गभैरवनाथाय नमः से आधार में, ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र चं छं जं झं ञं अनन्तकोटिखेचरीकुलसेवितायै ईंळां चर्चिकाम्बादेव्यै ईंळां माहेश्वर्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिवेतालकुलसहिताय इंळं चर्चिकनाथाय इंळं रुरुभैरवनाथाय नमः से स्वाधिष्ठान में, ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र टं ठं डं ढं णं अनन्तकोटिपातालचरीकुलसेवितायै ऊंहां योगीश्वर्यम्बादेव्यै ऊंहां कौमार्यम्बादेव्यै नमः अनन्तकोटिपिशाचकुलसहिताय उंहं योगीश्वरनाथाय उंहं चण्डभैरवनाथाय नमः से मणिपूर में, ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र तं थं दं धं नं अनन्तकोटिदिक्चरीकुलसेवितायै ॠंसां हरसिद्धाम्बादेव्यै ॠंसां वैष्णव्यम्बादेव्यै अनन्तकोट्यपस्मारकुलसहिताय ऋंसं हरसिद्धनाथाय ऋंसं क्रोधराजभैरवनाथाय नमः से अनाहत में, ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र पं फं बं भं मं अनन्तकोटिसहचरीकुलसेवितायै लॄंषां भट्टिन्यम्बादेव्यै लॄंषां वाराह्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिब्रह्मराक्षसकुलसहिताय लृंषं भट्टनाथाय लृंषं उन्मत्तभैरवनाथाय नमः से विशुद्ध में, ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र यं रं लं वं अनन्तकोटिगिरिचरीकुलसेवितायै ऐंशां किलिकिलाम्बादेव्यै ऐंशां इन्द्राण्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिवटुककुलसहिताय एंशं किलिकिलनाथाय एंशं कपालिभैरवनाथाय नमः से आज्ञा में, ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र शं षं सं हं अनन्तकोटिवनचरीकुलसेवितायै औंवां कालरात्र्यम्बादेव्यै औंवां चामुण्डाम्बादेव्यै अनन्तकोटिप्रेतकुलसहिताय ओंवं कालरात्रिनाथाय ओंवं भीषणभैरवनाथाय नमः से ललाट में मातृकाओं का न्यास करके ॐऐंश्रीं मूल मन्त्र लंक्षं अनन्त-कोटिकुलचरीकुलसेवितायै अःलां भीषणाम्बादेव्यै अःलां महालक्ष्म्यम्बादेव्यै अनन्तकोटिशाकिनीकुलसहिताय अंलं भीषणनाथाय अंलं संहारभैरवाय नमः मन्त्र से व्यापक न्यास करे। इस प्रकार महाषोढ़ा न्यास सम्पन्न होता है।

विश्रान्ति-प्रकाशचरणन्यासौ

अथ मूलमन्त्रन्यासः—तत्रादौ विश्रान्तिचरणन्यासः। शिरसि संघट्टमुद्रां विधाय ॐऐंह्रींश्रीं हंसः शिवः हसौः सोऽहं तुरीयविद्यामुच्चार्य सच्चिदानन्दज्योतिरहं, ॐऐंह्रींश्रीं हंसः शिवः हसौः सोहं तुर्यविद्यामुच्चार्य सच्चिदानन्दज्योतिरहमेव, ॐएंह्रींश्रीं हंसः शिवः हसौः सोहं तुर्यविद्यामुच्चार्य सच्चिदानन्दज्योतिरहमेवास्मि। ततः क्षणं विश्राम्य तत्रैव प्रकाशचरणं न्यसेत्। ॐऐंह्रींश्रीं हंसः शिवः हसौः सोहं योऽहमस्मि अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि सोऽहं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहाप्रकाशपरिपूर्णानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। इति प्रकाशचरणन्यासः।

विश्रान्ति एवं प्रकाशचरण न्यास—पहले विश्रान्ति चरण न्यास करे। एतदर्थ शिर पर संघट्ट मुद्रा बाँधकर इस प्रकार कहे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः शिवः ह्सौः सोऽहं, तुरीय विद्या सच्चिदानन्द ज्योतिरहं, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः शिवः ह्सौः सोहं तुरीय विद्या सच्चिदानन्दज्योतिरहमेव, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः शिवः ह्सौः सोहं तुर्यविद्या सच्चिदानन्दज्योतिरहमेवास्मि। तब

क्षण भर विश्राम करके वहीं पर प्रकाश चरण न्यास इस प्रकार करे—ॐ हं ह्रीं श्रीं हंस: शिव: ह्सौ: सोहं योऽहस्मि अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि सोऽहं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहाप्रकाशपरिपूर्णानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि।

पञ्चाम्बान्यास:

तत: स्वात्मानं सकलप्रपञ्चोत्तीर्णं संविदेकस्वभावं आनन्दमयं विचिन्त्य कृतकृत्यो निश्चितान्तरतम: पञ्चाम्बान्यासं कुर्यात्। तत्र शिरसि संघट्टमुद्रया ४ँ ह्रींश्रीं श्रीआदिनाथव्योमातीताम्बाश्री०। ४ँ ह्रींश्रीं श्रीअनादिनाथव्योमेश्वर्यम्बाश्री०। ४ँ ह्रीं श्रीं श्रीअनामयनाथव्योमगाम्बाश्री०। ४ँ ह्रीं श्रीं अनन्तनाथव्योमचारिण्यम्बाश्री०। ४ँ ह्रीं श्रीं श्रीचिदाभास-नाथव्योमस्थाम्बाश्री०। इति पञ्चाम्बान्यास:।

पञ्चाम्बा न्यास—तदनन्तर स्वयं को सभी प्रपञ्च से अलग संविदेक स्वभाव आनन्दमय मानकर कृतकृत्य हो भक्त: में निश्चिन्त होकर पञ्चाम्बा न्यास इस प्रकार करे—शिर पर संघट्ट मुद्रा से ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रीं श्रीआदिनाथव्योमातीताम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रीं श्रीअनादिनाथव्योमेश्वर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं श्रीअनामयनाथ-व्योमगाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं अनन्तनाथव्योमचारिण्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं श्रीचिदाभासनाथव्योमस्थाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

नवाकाशनाथ-पूज्यनवनाथ-स्वपारम्पर्यन्यासा:

अथ नवाकाशनाथन्यास:। शिरसि ४ँ हं उन्मनाकाशनाथश्री०। ४ँ सं समनाकाशनाथश्री०। ४ँ क्षं व्यापकाकाशनाथश्री०। ४ँ मं शक्त्याकाशनाथश्री०। ४ँ लं ध्वन्याकाशनाथश्री०। ४ँ वं ध्वनिमात्राकाशनाथश्री०। ४ँ रं अनाहताकाशनाथश्री०। ४ँ यं इन्द्वाकाशनाथश्री०। ४ँ ऊं बिन्द्वाकाशनाथश्री०। इति संघट्टमुद्रां शिरसि न्यसेत्। इत्याकाशनाथन्यास:।

अथ पूज्यनवनाथन्यास:। अत्र नाथानुपूर्वकानन्दशब्दप्रयोग:—४ँ परमात्मानन्दनाथश्री०, ४ँ शाम्भवान-न्दनाथश्री०, ४ँ चिन्मुद्रानन्दनाथश्री०, ४ँ वाग्भवानन्दनाथश्री०, ४ँ लीलानन्दनाथश्री०, ४ँ संभ्रमानन्दनाथश्री०, ४ँ चिदानन्दानन्दनाथश्री०, ४ँ प्रसन्नानन्दनाथश्री०, ४ँ विश्वानन्दनाथश्री०। अत्रोर्ध्वाम्नाये पञ्चाम्बा दिव्यौघा:। नवा-काशनाथा: सिद्धौघा:। परमात्मादिनाथा मानवौघा:। इति नवनाथन्यास:।

अथ स्वपारम्पर्यन्यास:—४ँ यज्ञेश्वरानन्दनाथश्री०। ४ँ संविदानन्दनाथश्री०। ४ँ स्वात्मानन्दनाथश्री०। ४ँ चिदानन्दनाथश्री०। ४ँ संविदानन्दनाथश्री०। ४ँ (चिदानन्दनाथश्री०। ४ँ संविदानन्दनाथश्री०।) ४ँ ब्रह्मानन्दनाथश्री०। ४ँ संविदानन्दनाथश्री०। ४ँ पूर्णानन्दनाथश्री०। ४ँ संविदानन्दनाथश्री०। तत: स्वगुरुं शिरसि संघट्टमुद्रया स्वपारम्पर्यं विन्यस्य, स्वनाम (स्वगुरुकृतं) मूलाधारे न्यसेत्। इति गुरुपङ्क्तिन्यास:।

नवाकाशनाथ न्यास—शिर पर संघट्ट मुद्रा से अपने गुरु के शिर पर नव आकाशनाथों का इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं उन्मनाकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं समनाकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं व्यापकाकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं शक्त्याकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं ध्वन्याकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं ध्वनिमात्राकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं अनाहताकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं इन्द्वाकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं बिन्द्वाकाशनाथश्रीपादुकां पूजयामि। ये नव आकाशनाथ सिद्धौघ होते हैं।

पूज्यनवनाथ न्यास—मानवौघ स्वरूप पूज्य नवनाथों का अपने गुरु के शिर पर संघट्ट मुद्रा से इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं परमात्मानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शाम्भवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चिन्मुद्रानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लीलानन्दनाथश्रीपादुकां

पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं संभ्रमानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चिदानन्दानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रसन्नानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं विश्वानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि।

स्वपारम्पर्य न्यास—पूज्य नवनाथ न्यास के बाद अपने गुरु के शिर पर संघट्ट मुद्रा से इस प्रकार न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यज्ञेश्वरानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं संविदानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वात्मानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चिदानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं संविदानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्मानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं संविदानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पूर्णानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं संविदानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। तत्पश्चात् गुरु द्वारा प्रदत्त अपने नाम का मूलाधार में न्यास करे।

षोडशमूलविद्यान्यास:

अथ षोडशमूलविद्यान्यास:। शिरसि (१) ॐऐंह्रींश्रीं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहासिद्धविद्याकुलयोगिनी ह्रीं कुलयोगिनीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि। (२) ४ँ हसौ: स्वात्मानं बोधय बोधय हसौ: प्रसादपराम्बामूलविद्याश्री०। (३) ४ँ ऐंक्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि महामदद्रवे क्लींक्लीं मोहय मोहय क्लीं नम: स्वाहा अतिरहस्ययोगिनीमूलविद्याश्री०। (४) ४ँ हंस: स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा हसौं हसौं शाम्भवीमूलविद्याश्री०। (५) ४ँ ह्रीं नित्यस्फुरत्ताचैतन्यानन्दमयि महाबिन्दुव्यापकमातृस्वरूपिणि ऐंह्रींश्रींईं हल्लेखामूलविद्याश्री०। (६) ४ँ स्वच्छप्रकाशात्मिके ह्रीं कुलमहामालिनि ऐं कुलगर्भमातृके ह्रीं समयविमले श्रीं समयविमलामूलविद्याश्री०। (७) ४ँ हंस: नित्यप्रकाशात्मिके कुलकुण्डलिनि आज्ञासिद्धिमहाभैरवि आत्मानं बोधय बोधय अम्बे भगवति ह्रीं हुं परबोधिनीमूलविद्याश्री०। (८) ४ँ ॐ मोक्षं कुरु कुलपञ्चाक्षरीमूलविद्याश्री०। (९) ४ँ लोपामुद्रापञ्चदशाक्षरीमुच्चार्य चैतन्यत्रिपुरामूलविद्याश्री०। (१०) ४ँ ऐं शुद्धसूक्ष्मनिराकारनिर्विकल्पपरब्रह्मस्वरूपिणि क्लीं परानन्दशक्ति सौ: शाम्भवानन्दनाथानुत्तरकौलिनीमूलविद्याश्री०। (११) ४ँ हंस: सोऽहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा गुरूत्तमविमर्शिनीमूलविद्याश्री०। (१२) ४ँ अनामाख्याव्योमातीतनाथपरापरव्योमातीतव्योमेश्वर्यम्बानामाख्यामूलविद्याश्री०। (१३) ४ँ ऐंईंऔं सङ्केतसारामूलविद्याश्री०। (१४) ४ँ ह्रीं भगवति विच्चे वाग्वादिनि क्लीं महाह्रदमहामातङ्गिनि ऐं क्लिन्ने ब्लूंस्त्रीं अनुत्तरवाग्वादिनीमूलविद्याश्री०। (१५) ४ँ हसौ: हसखफ्रें हसकलरीं हसौ: अनुत्तरशांकरीमूलविद्याश्री०। (१४) ४ँ ह्रीं भगवति विच्चे वाग्वादिनि क्लीं महाह्रदमहामातङ्गिनि ऐं क्लिन्ने ब्लूंस्त्रीं अनुत्तरवाग्वादिनीमूलविद्याश्री०। (१५) ४ँ हसौ: हसखफ्रें हसकलरीं हसौ: अनुत्तरशांकरीमूलविद्याश्री०। (१६) त्रयोदशाक्षरमूलतुरीयविद्यामुच्चार्य सर्वानन्दमये चक्रे बैन्दवे परब्रह्मस्वरूपिणी परामृतशक्ति: सर्वमन्त्रेश्वरी सर्वविद्येश्वरी सकलजगदुत्पत्तिमातृका सचक्रा सशक्ति: समुद्रा ससिद्धि: सायुधा सपरिवारा सर्वोपचारै: संपूजितास्तु शून्याशून्यविवर्जितशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीमूलविद्याश्री०। इति संघट्टमुद्रया शिरसि विन्यसेत्। इति षोडशमूलविद्यान्यास:।

षोडशी मूलविद्या न्यास—षोडशी मूलविद्याओं का न्यास संघट्ट मुद्रा से शिर पर इस प्रकार करे—

१. ॐऐंह्रींश्रीं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहासिद्धविद्याकुलयोगिनी ह्रीं कुलयोगिनीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

२. ॐऐंह्रींश्रीं हसौ: स्वात्मानं बोधय बोधय हसौ: प्रसादपराम्बामूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

३. ॐऐंह्रींश्रीं ऐंक्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि महामदद्रवे क्लींक्लीं मोहय मोहय क्लीं नम: स्वाहा अतिरहस्ययोगिनीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

४. ॐऐंह्रींश्रीं हंस: स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा हसौं हसौं शाम्भवीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

५. ॐऐंह्रींश्रीं ह्रीं नित्यस्फुरत्ताचैतन्यानन्दमयि महाबिन्दुव्यापकमातृस्वरूपिणि ऐंह्रींश्रींईं हल्लेखामूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

६. ॐऐंह्रींश्रीं स्वच्छप्रकाशात्मिके ह्रीं कुलमहामालिनि ऐं कुलगर्भमातृके ह्रीं समयविमले श्रीं समयविमलामूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

७. ॐऐंह्रींश्रीं हंसः नित्यप्रकाशात्मिके कुलकुण्डलिनि आज्ञासिद्धिमहाभैरवि आत्मानं बोधय बोधय अम्बे भगवति ह्रीं हुं परबोधिनीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

८. ॐऐंह्रींश्रीं ॐ मोक्षं कुरु कुलपञ्चाक्षरीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

९. ॐऐंह्रींश्रीं लोपामुद्रापञ्चदशाक्षरीमुच्चार्य चैतन्यत्रिपुरामूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

१०. ॐऐंह्रींश्रीं ऐं शुद्धसूक्ष्मनिराकारनिर्विकल्पपरब्रह्मस्वरूपिणि क्लीं परानन्दशक्ति सौः शाम्भवानन्दनाथानुत्तरकौलिनी-मूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

११. ॐऐंह्रींश्रीं हंसः सोऽहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा गुरूत्तमविमर्शिनीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

१२. ॐऐंह्रींश्रीं अनामाख्याव्योमातीतनाथपरापरव्योमातीतव्योमेश्वर्यम्बानामाख्यामूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

१३. ॐऐंह्रींश्रीं ऐंईऔं सङ्केतसारामूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

१४. ॐऐंह्रींश्रीं ह्रीं भगवति विच्चे वाग्वादिनि क्लीं महाह्रदमहामातङ्गिनि ऐं क्लिन्ने ब्लूंस्त्रीं अनुत्तरवाग्वादिनीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

१५. ॐऐंह्रींश्रीं हसौः हसखफ्रें हसकलरीं हसौः अनुत्तरशांकरीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

१६. त्रयोदशाक्षरमूलतुरीयविद्यामुच्चार्य सर्वानन्दमये चक्रे बैन्दवे परब्रह्मस्वरूपिणी परामृतशक्तिः सर्वमन्त्रेश्वरी सर्वविद्येश्वरी सकलजगदुत्पत्तिमातृका सचक्रा सशक्तिः समुद्रा ससिद्धिः सायुधा सपरिवारा सर्वोपचारैः संपूजितास्तु शून्याशून्यविवर्जितशक्ति-श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीमूलविद्याश्रीपादुकां पूजयामि।

षडाधारविद्यान्यासः

अथ षडाधारविद्यान्यासः। ४ँ हंसः स्वच्छानन्दविभूत्यै स्वाहा मूलाधारविद्याश्री०, मूलाधारे। ४ँ सोहं परमहंसविभूत्यै स्वाहा स्वाधिष्ठानविद्याश्री०, स्वाधिष्ठाने। ४ँ हंसः सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा मणिपूरकविद्याश्री०, मणिपूरके। ४ँ हंसः सोहं स्वात्मानं बोधय बोधय परात्मानन्दनाथ अनाहतविद्याश्री०, अना-हते। ४ँ सोहं परमात्मानं बोधय बोधय स्वात्मानन्दनाथ विशुद्धविद्याश्री०, विशुद्धौ। ४ँ हंसः सोहं स्वच्छानन्दचित्प्र-काशामृतहेतवे स्वाहा आज्ञाविद्याश्री०, आज्ञायां। इति विन्यस्य पुनः संघट्टमुद्रया शम्भुचरणमात्रविन्यासः। ४ँ हंसः शिवः हसौः सोहं योहमस्मि अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि सोहं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहाप्रकाशपरिपूर्णानन्दनाथश्री०। इति ब्रह्मरन्ध्रे न्यसेत्। इति षडाधारविद्यान्यासः। (इति चरणादिन्यासः।)

षडाधार विद्या न्यास—मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि एवं आज्ञाचक्र में क्रमशः इन छः आधार विद्याओं का न्यास करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः स्वच्छानन्दविभूत्यै स्वाहा मूलाधारविद्याश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सोहं परमहंसविभूत्यै स्वाहा स्वाधिष्ठानविद्यापादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा मणिपूर-कविद्याश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सोहं स्वात्मानं बोधय बोधय परात्मानन्दनाथ अनाहतविद्याश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सोहं परमात्मानं बोधय बोधय स्वात्मानन्दनाथ विशुद्धविद्याश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सोहं स्वच्छा-नन्दचित्प्रकाशामृतहेतवे स्वाहा आज्ञाविद्याश्रीपादुकां पूजयामि। इस प्रकार न्यास करके पुनः शिर पर संघट्ट मुद्रा से शम्भुचरण न्यास करे। तदनन्तर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः शिवः हसौः सोहं योहमस्मि अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि सोहं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहाप्रकाश-परिपूर्णानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि से ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करे।

मुद्रा

ततो हसां हसीमित्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय पराप्रासादमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा दश मुद्राः प्रदर्शयेत्। तदुक्तं तत्रैव—

ततः संदर्शयेन्मुद्रादशकं परमेश्वरि। योनिं लिङ्गं च सुरभिं हेतिमुद्राचतुष्टयम्॥
वनमालां नभोमुद्रां महामुद्रामिति क्रमात्। इति।

हेतिमुद्राः कपालज्ञानशूलपुस्तकाख्याः। नभोमुद्रा खेचरीमुद्रा। तथा संघट्टमुद्राया अपि लक्षणमुक्तं 'शिवशक्त्यात्मनोर्योगे सैव संघट्टमुद्रिका'। शिवशक्त्यात्मनोर्दक्षिणवामयोरित्यर्थः। तयोश्चाङ्गीभूतयोर्वा हंसीभूतयोर्वा तत्त्वात्मनोर्वा संप्रदायभेदाद् यथागुरूपदेशं कार्यमिति। अथ ध्यानम्—

एवं न्यस्ततनुर्देवि ध्यायेद् देवमनन्यधीः। अमृतार्णवमध्योद्यत्स्वर्णद्वीपे मनोरमे ॥१॥
कल्पवृक्षवनान्तःस्थे नवमाणिक्यमण्डपे। नवरत्नमयश्रीमत् सिंहासनगताम्बुजे ॥२॥
त्रिकोणान्तः समासीनं चन्द्रसूर्यसमप्रभम्। अर्धाम्बिकासमायुक्तं प्रविभक्तविभूषणम् ॥३॥
कोटिकन्दर्पलावण्यं सदा षोडशवार्षिकम्। मन्दस्मितमुखाम्भोजं त्रिनेत्रं चन्द्रशेखरम् ॥४॥
दिव्याम्बरस्रगालेपं दिव्याभरणभूषितम्। पानपात्रं च चिन्मुद्रां त्रिशूलं पुस्तकं करैः ॥५॥
विद्यासंसिद्धिं बिभ्राणं सदानन्दमुखेक्षणम्। महाषोढोदिताशेषदेवतागणसेवितम् ॥६॥
एवं चित्ताम्बुजे ध्यायेदर्धनारीश्वरं शिवम्। पुंरूपं वा स्मरेद् देवि स्त्रीरूपं वा विचिन्तयेत् ॥७॥
अथवा निष्कलं ध्यायेत् सच्चिदानन्दलक्षणम्। सर्वतेजोमयं ध्यायेत् सचराचरविग्रहम् ॥८॥

अत्र पुंरूपध्याने 'त्रिकोणान्तः समासीनं चन्द्रकोटिसमप्रभ'मित्यादि शुभ्रवर्णत्वं पुंभूषणादिकमूह्यम्। स्त्रीरूपध्याने 'सूर्यकोटिसमप्रभ'मित्यादि रक्तवर्णत्वादिस्त्रीप्रत्ययान्तपदमूहनीयमिति। आयुधादिकं तु समानम्। इति ध्यात्वा मानसोपचारैराराध्य, पराप्रासादमन्त्रं जपित्वा यथाशक्ति चरणषोडशमूलविद्याषडाधारविद्याश्च जपेत्। ततः शिरसि गुरुं ध्यात्वा तत्पादुकाविद्यां च जपेत्। ततो जपं समर्प्य तदभेदेन स्वेष्टदेवतां मत्वा 'बालार्कमण्डलाभासा'मित्यादि श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीं ध्यात्वा मूलविद्यां यथाशक्ति जपित्वा जपं समर्प्य प्रणमेत्। तदुक्तं—

यथाशक्ति जपेन्मूलमन्त्रं श्रीपादुकामपि। मूर्ध्नि सञ्चिन्तयेद् देवि श्रीगुरुं शिवरूपिणम् ॥ इति।

महाषोढान्यासफलं तु प्रागुक्तं बोध्यम्। 'ऊर्ध्वाम्नायप्रवेशश्च पराप्रासादचिन्तनम्। महाषोढाह्वयो न्यासो नाल्पस्य तपसः फलम्' इति।

दश मुद्रायें—इसके बाद ह्सां ह्सीं इत्यादि से कर-षडङ्ग न्यास करके परा प्रासाद मन्त्र से तीन प्राणायाम करने के बाद योनि, लिङ्ग, सुरभि, हेति (कपाल-ज्ञान-शूल-पुस्तक), वनमाला, नभोमुद्रा, महामुद्रा—इन दश मुद्राओं को क्रमशः प्रदर्शित करे।

इस प्रकार अपने शरीर में न्यास करके साधक अमृत सागर के मध्य निकले हुये मनोरम स्वर्णद्वीप पर स्थित कल्पवृक्ष के वन-मध्य-स्थित नूतन मणिक्यमण्डप में नवरत्नमय सिंहासनस्थ कमल के त्रिकोण पर आसीन चन्द्र-सूर्य सदृश कान्ति वाले, अधाङ्ग में अम्बिका को बैठाये हुये, समस्त आभूषणों से भूषित, करोड़ों कामदेव के समान लावण्ययुक्त, सदा षोडश वर्णीय, मन्द-मन्द मुस्कानयुक्त मुखकमल वाले, तीन नेत्र वाले, माथे पर चन्द्रमा को धारण किये, दिव्य वस्त्र, माला एवं लेप लगाये, दिव्य आभरणों से भूषित, हाथों में पानपात्र, चिन्मुद्रा, त्रिशूल एवं पुस्तक धारण किये, विद्यासंसद में भ्रममाण, सदा आनन्द पूर्ण मुख एवं आँख वाले, महाषोढ़ा में कथित समस्त देवताओं से सेवित अर्धनारीश्वर शिव के पुरुषरूप, स्त्रीरूप अथवा सदानन्द लक्षणयुक्त, सर्वतेजोमय, चराचरविग्रहस्वरूप निष्कल स्वरूप का अपने हृदय में ध्यान करे।

पुरुष रूप ध्यान में भगवान् शिव का शुभ्रवर्ण एवं पुरुष आभूषण से युक्त एवं स्त्रीरूप ध्यान में रक्त वर्ण एवं स्त्रियोचित आभूषण का ध्यान करना चाहिये। आयुधादि दोनों के समान हैं। ऐसा ध्यान करके मानसोपचार पूजा करके पराप्रासाद मन्त्र का जप कर यथाशक्ति चरण, षोडश, मूलविद्या और आधार विद्या का जप करे। तब शिर में गुरु का ध्यान करके गुरुपादुका विद्या का जप करे। तदनन्तर जप का समर्पण करके गुरु और इष्टदेवता में अभेद मानकर 'बालार्कमण्डलाभासां' इत्यादि से श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी का ध्यान कर मूल विद्या का यथाशक्ति जप करने के बाद जप-समर्पण करके प्रणाम करे। कहा भी है कि यथाशक्ति मूल मन्त्र का जप करके श्रीपादुका का भी जप करने के बाद मूर्धा में शिवरूप गुरु का चिन्तन करे।

मण्डपार्चनविधिः

अथ रक्तामृताब्धिमध्यस्थरत्नद्वीपे मदनोन्मादनं नाम पुष्पलताकुलं कूजत्कोकिलपिकवाचालविपिनगह्वरं जातीपुंनागपाटलोत्फुल्लाशेषसुमनोभिरलंकृतं ह्रींकारमुखरभ्रमद्भ्रमरकलकलाकुलं मलयपवननर्तितलताजालं नन्दनोद्यानं ध्यात्वा, तदन्तरुदितादित्यसंकाशं स्वर्णप्राकारपरिक्षिप्तरत्नसोपानमण्डितं सतोरणद्वारदेशं कृष्णागुरुधूपोद्गारसुरभितककुभं सेवासमुत्सुकानेककोटिदेवतागणसेवितं दिव्यमण्डपं ध्यात्वा, तन्मध्ये समकालसमुदितसहस्रसवितृमण्डलसंकाशं रत्नचतुस्तम्भसंराजितरक्तपटवितानवतीं कर्पूरशकलमध्यवर्तिकाप्रवर्तितदीपाङ्कुराङ्कितकोणदेशां मणिमयीं वेदिकां ध्यात्वा, तन्मध्ये ४ँ अमृतार्णवासनाय नमः। ४ँ रत्नद्वीपाय नमः। मणिमण्डपस्य परितः प्रादक्षिण्येन—४ँ पुष्परागखण्डाय नमः। ४ँ वैडूर्यखण्डाय नमः। ४ँ विद्रुमखण्डाय नमः। ४ँ मौक्तिकखण्डाय०। ४ँ मरकतखण्डाय०। ४ँ वज्रखण्डाय०। ४ँ गोमेधखण्डाय०। ४ँ पद्मरागखण्डाय०। ४ँ षड्ऋतुभ्यो०। ४ँ इन्द्रियाश्वेभ्यो०। ४ँ इन्द्रियार्थगजेभ्यो०। मण्डपस्य परितः प्रादक्षिण्येन—४ँ कालचक्रेश्वर्यै०। ४ँ मुद्राचक्रेश्वर्यै०। ४ँ मातृकाचक्रेश्वर्यै०। ४ँ देशचक्रेश्वर्यै०। ४ँ गुरुचक्रेश्वर्यै०। ४ँ तत्त्वचक्रेश्वर्यै०। ४ँ ग्रहचक्रेश्वर्यै०। मध्ये ४ँ मूर्तिचक्रेश्वर्यै०। ४ँ करुणातोयपरिखायै०। ४ँ वज्रालंकृतस्वर्णप्राकाराय०। तत्पूर्वद्वारदक्षिणवामशाखयोः ४ँ गं गणपतये नमः। ४ँ क्षां क्षेत्रपालाय०। तदूर्ध्वोदुम्बरशाखयोः—४ँ सं सरस्वत्यै नमः। ४ँ दुं दुर्गायै नमः। तन्मध्ये ४ँ श्रीं श्रियै नमः। ४ँ दें देहल्यै नमः। ततो दक्षपादपुरःसरमन्तः प्रविश्य प्राकारस्याग्नेयादिकोणकेषु—ॐश्रीह्रींक्लींग्लौंगं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। ऐंग्लौं नमो भगवति वातालि वातालि वाराहि वाराहि वराहमुखि वराहमुखि अन्धे अन्धिन्यै नमः रुन्धे रुन्धिन्यै नमः जम्भे जम्भिन्यै नमः मोहे मोहिन्यै नमः स्तम्भे स्तम्भिन्यै नमः सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरु कुरु शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ठःठःठःठः हुंफट् स्वाहा ग्लौंऐं। उत्तिष्ठ पुरुषे किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं वा तन्मे भगवति शमय स्वाहा। ॐह्रींवां वटुकायापदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं। इति गणेश-पञ्चमीदुर्गावटुकानाग्नेयादिकोणचतुष्केषु पूजयेत्। तदन्तः ४ँ कदम्बवनाय नमः। तन्मध्ये ४ँ रत्नमण्डपाय नमः। तस्य पश्चिमादिवामावर्तेन ४ँ देशरूपिण्यै नमः। ४ँ कालरूपिण्यै नमः। ४ँ आकाशरूपिण्यै नमः। ४ँ शब्दरूपिण्यै नमः। मण्डपस्य वामदक्षिणशाखयोः ४ँ ह्रींश्रींह्रीं विरिगणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। ४ँ ऐं क्लींसौः ॐ नमो भगवति श्रीमातङ्गेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वसत्त्ववशंकरि सर्वलोकवशंकरि सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौःक्लींऐं श्रींह्रींऐं इति शक्तिगणेशं मातङ्गीं च संपूज्य, तन्मध्ये—हसखफ्रें लं लक्ष्मीभैरव्यै नमः। इति द्वारलक्ष्मीं संपूज्य, दें देहल्यै नमः। अपसर्पन्तु इति, पाशुपतास्त्रेण च देहल्यां पुष्पाणि निक्षिप्य, वामपादपुरःसरं देहलीमस्पृशन् अन्तःप्रविश्य, तद्द्वारदक्षवामशाखयोः ४ँ शं शंखनिधये नमः। ४ँ पं पद्मनिधये नमः। वायवीं दिश-मारभ्य नैर्ऋत्यान्तद्वारमुन्मृज्य पङ्क्त्या समुपविष्टा वेणावतीर्गायन्तीः सरस्वत्यादिगायिका यजेत्। ४ँ सं सरस्वत्यै नमः। ४ँ श्रीं श्रियै नमः। ४ँ दुं दुर्गायै नमः। ४ँ भं भद्रकाल्यै नमः। ४ँ स्वं स्वस्त्यै नमः। ४ँ स्वां स्वाहायै नमः। ४ँ शुं शुभङ्कर्यै नमः। ४ँ गौं गौर्यै नमः। ४ँ लों लोकधात्र्यै नमः। ४ँ वां वागीश्वर्यै नमः।

मण्डपार्चन—लाल अमृत सागर के मध्य में स्थित रत्न द्वीप में मदनोन्मादन नामक पुष्पलता से व्याप्त, कूजन करते कोयल एवं शहद करते भ्रमरों से गुञ्जायमान झाडियों में जाती, पुन्नाग, पाटल आदि समस्त विकसित पुष्पों से अलंकृत, ह्रींकार-मुखर भ्रमर के कलकलों से व्याप्त, मलयानिल से झूलती लताओं वाले नन्दन उद्यान का ध्यान करके उसके अन्दर उदीयमान सूर्य के समान, स्वर्णप्राकार से घिरे रत्न के सोपान से मण्डित तोरणद्वार वाले काला अगर एवं धूप के धूँयें से सुगन्धित दिशाओं वाले, सेवा के लिये उत्सुक अनेक कोटि देवतागण से सेवित दिव्य मण्डप का ध्यान करके उसके मध्य में एक ही साथ उदित सहस्र सूर्यमण्डल के समान, चार रत्नस्तम्भ पर टिके रक्त पट वितानयुक्त, कपूरखण्डों के मध्य में वर्तिका वाले दीप से आलोकित देश में मणिमयी वेदी का ध्यान करे। उसके मध्य में ॐ ह्रं ह्रीं श्रीं अमृतार्णवासनाय नमः एवं ॐ ह्रं ह्रीं श्रीं रत्नद्वीपाय नमः से आसन की पूजा करे। मणिमण्डप के चारों ओर प्रादक्षिण्य क्रम से इनकी पूजा करे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अमृतार्णवासनाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रत्नद्वीपाय नम:। मणिमण्डप के चारों ओर प्रदक्षिण क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पुष्परागखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वैडूर्यखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं विद्रुमखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मौक्तिकखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मरकतखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वज्रखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गोमेधखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पद्मरागखण्डाय नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षड्ऋतुभ्यो नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्रियाश्वेभ्यो नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्रियार्थगजेभ्यो नम:। मण्डप के चारो प्रदक्षिण क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कालचक्रेश्वर्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मुद्राचक्रेश्वर्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मातृकाचक्रेश्वर्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं देशचक्रेश्वर्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गुरुचक्रेश्वर्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तत्त्वचक्रेश्वर्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ग्रहचक्रेश्वर्यै नम:। मध्य में इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मूर्तिचक्रेश्वर्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं करुणातोयपरिखायै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वज्रालंकृतस्वर्णप्राकाराय नम:। मण्डप के पूर्व द्वार पर दक्षिण वाम शाखाओं में इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं गणपतये नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षां क्षेत्रपालाय नम:। मण्डप के ऊपर वृक्ष शाखाओं पर इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं सरस्वत्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै नम:। उसके मध्य में इनसे पूजन करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रियै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दें देहल्यै नम:।

तब दाँयाँ पैर आगे बढ़ाकर अन्दर प्रवेश करके प्राकार के आग्नेयादि कोणों में ॐश्रीह्रींक्लींग्लौंगं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा, ऐंग्लौं नमो भगवति वातालि वातालि वाराहि वाराहि वराहमुखि वराहमुखि अन्धे अन्धिन्यै नम: रुन्धे रुन्धिन्यै नम: जम्भे जम्भिन्यै नम: मोहे मोहिन्यै नम: स्तम्भे स्तम्भिन्यै नम: सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरु कुरु शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ठ:ठ:ठ:ठ: हुंफट् स्वाहा ग्लौऐं, उत्तिष्ठ पुरुषे किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं यदि शक्यमशक्यं वा तन्मे भगवति शमय स्वाहा, ॐह्रींवां वटुकायापदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं मन्त्रों से गणेश, पञ्चमी, दुर्गा एवं वटुक का आग्नेयादि चारों कोणों में पूजन करे।

इसके बाद उसके भीतर ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कदम्बवनाय नम:, उसके मध्य में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रत्नमण्डपाय नम:, उसके बाद पश्चिम आदि दिशाओं में वामावर्त क्रम से ॐ ऐं ह्रीं श्रीं देशरूपिण्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कालरूपिण्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आकाशरूपिण्यै नम:, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शब्दरूपिण्यै नम: का पूजन करके मण्डप के वाम-दक्षिण शाखा में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रींह्रीं विरिगणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लींसौ: ॐ नमो भगवति श्रीमातङ्गेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वसत्त्ववशंकरि सर्वलोकवशंकरि सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा सौ:क्लींऐं श्रींह्रींऐं से शक्तिगणेश एवं मातङ्गी का पूजन करके उसके मध्य में 'हसख्फ्रें लं लक्ष्मीभैरव्यै नम:' से द्वारलक्ष्मी की पूजा करे। 'दें देहल्यै नम:' से देहली की पूजा करे। 'अपसर्पन्तु' इस पाशुपतास्त्र मन्त्र से देहली पर फूलों को निक्षिप्त करे। बाँयाँ पैर आगे बढ़ाकर देहली को स्पर्श न करते हुए अन्दर प्रवेश करे। अन्दर जाकर उसके दाहिने एवं बाँयें द्वारशाखा में ॐ हं ह्रीं श्रीं शं शङ्खनिधये नम: एवं ॐ हं ह्रीं श्रीं पं पद्मनिधये नम: से पूजा करे। वायवी दिशा से आरम्भ कर नैर्ऋत्यन्त द्वार की पूजा करके पंक्ति में बैठी वीणा बजाती मायन्ती सरस्वती आदि मायिका की पूजा करे। इस प्रकार ॐ हं ह्रीं श्रीं सं सरस्वत्यै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रियै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं भं भद्रकाल्यै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं स्वं स्वस्त्यै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं स्वां स्वाहायै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं शुभंकर्यै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं गौर्यै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं लों लोकधात्र्यै नम:, ॐ हं ह्रीं श्रीं वां वागीश्वर्यै नम:।

मण्डपान्तरभित्त्यां प्रागादिदशदिक्षु—४ँ लं इन्द्राय सुराधिपतये पीतवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नम:। ४ँ रं अग्नये तेजोधिपतये पिङ्गलवर्णाय साङ्गायेत्यादि०। ४ँ टं यमाय प्रेताधिपतये कृष्णवर्णाय साङ्गाय०। ४ँ क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये धूम्रवर्णाय०। ४ँ वं वरुणाय जलाधिपतये शुक्लवर्णाय०। ४ँ यं वायवे प्राणाधिपतये धूम्रव०। ४ँ सं सोमाय नक्षत्राधिपतये श्वेतवर्णाय०। ४ँ हौं ईशानाय विद्याधिपतये स्फटिकवर्णाय०। ४ँ आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये पद्मवर्णाय०। ४ँ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये श्यामवर्णायेत्यादि। ततो मण्डपस्योर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमद्वारेषु ४ँ हौं शान्त्यतीताकलाद्वारायै नम:। ४ँ हैं शान्ताकलाद्वारायै नम:। ४ँ

हूं विद्याकलाद्वारायै नमः। ४ँ ह्रीं निवृत्तिकलाद्वारायै नमः। ४ँ ह्रां प्रतिष्ठाकलाद्वारायै नमः। ४ँ ईं नमस्त्रैलोक्यमोहिनि महामाये सकलपशुजनमनश्चक्षुस्तिरस्करणं कुरु कुरु स्वाहा, इति तिरस्करिणीं संपूज्य,

मुक्तकेशीं विवसनां मदघूर्णितलोचनाम्। स्वयोनिदर्शनान्मुह्यत्पशुवर्गां स्मराम्यहम्॥

इति ध्यात्वा, तस्या दूतीश्चतुर्द्वारिषु प्रागादि द्वे द्वे शूलकपालधारिण्यौ श्यामवर्णे शक्ती पूजयेत्। ४ँ क्लीं सुन्दरीसुमुखीभ्यां नमः। ४ँ क्लीं विरूपाविमलाभ्यां नमः। ४ँ क्लीं अन्तरीविनोदिनीभ्यां नमः। ४ँ क्लीं पुरन्दरीपुष्पमर्दिनीभ्यां नमः। एवं भावनया मण्डपार्चनं विधाय, ४ँ ॐह्रींहौं नमः शिवाय महाशरभाय, ४ँ ॐह्रींहौं नमः शिवायै महाशरभ्यै, इति विघ्नशान्तये शरभद्वयमभ्यर्च्य, स्वपुरतश्चन्दनादिपीठे कुङ्कुमादिना श्रीयन्त्रराजं समुद्धृत्य, अथवा रत्नादिनिर्मितं यन्त्रं संस्थाप्य, नमः इत्यभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनं कुर्यात्।

तब मण्डप के अन्दर भित्ति पर पूर्वादि दशो दिशाओं में दश दिक्पालों की पूजा इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं इन्द्राय सुराधिपतये पीतवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं अग्नये तेजोधिपतये पिङ्गलवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं यमाय प्रेताधिपतये कृष्णवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये धूम्रवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं वरुणाय जलाधिपतये शुक्लवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं वायवे प्राणाधिपतये धूम्रवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं सोमाय नक्षत्राधिपतये श्वेतवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हौं ईशानाय विद्याधिपतये स्फटिकवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये पद्मवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये श्यामवर्णाय साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय योषिद्रूपधराय नमः। तदनन्तर मण्डप के पूर्व-दक्षिण-उत्तर-पश्चिम द्वारों के ऊपर क्रमशः इनकी पूजा करे—ॐ हं ह्रीं श्रीं हौं शान्त्यातीताकलाद्वारायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं है शान्ताकलाद्वारायै नमः, हूं विद्याकलाद्वारायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ह्रीं निवृत्तिकलाद्वारायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ह्रां प्रतिष्ठाकलाद्वारायै नभः। तदनन्तर ॐ हं ह्रीं श्रीं ईं नमस्त्रैलोक्यमोहिनि महामाये सकलपशुजनमनचक्षुस्तिरस्करणं कुरु कुरु स्वाहा—इस मन्त्र से तिरस्करिणी की पूजा करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान करे—

मुक्तकेशीं विवसनां मदघूर्णितलोचनाम्। स्वयोनिदर्शनान्मुह्यत्पशुवर्गां स्मराभ्यहम्।।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद इसके शूल-कपाल धारिणी श्याम वर्ण वाली दो-दो दूतियों को चारो द्वारों पर पूजा इस प्रकार करे एवं ॐ हं ह्रीं श्रीं सुन्दरीसुमुखीभ्यां नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं क्लीं विरूपाविमलाभ्यां नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं क्लीं अन्तरीविनोदिनीभ्यां नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं क्लीं पुरन्दरीपुष्पमर्दिनीभ्यां नमः। इस प्रकार की भावना से मण्डप की पूजा करके ॐ हं ह्रीं श्रीं ॐ ह्रीं ह्रौं नमः शिवाय महाकरभाय एवं ॐ ह्रीं ह्रौं नमः शिवायै महाशरभ्यै—इन दो मन्त्रों से विघ्नशान्ति के लिये शरभद्वय की पूजा करे। तदनन्तर अपने सामने चन्दनादि पीठ पर कुङ्कुमादि से निर्मित श्रीयन्त्र अथवा रत्नादि से निर्मित यन्त्र को स्थापित कर 'नमः' से उसकी पूजा करके अर्घ्यादि का स्थापन करे।

अर्घ्यस्थापनक्रमः

श्रीचक्रात्मनोर्मध्ये वहन्नाडीहस्तेन मत्स्यमुद्रया मायाङ्कितभूबिम्बवृत्तत्रिकोणात्मकं मण्डलं विरच्य, सव्याङ्गुष्ठेनावष्टभ्य वामेन पुष्पाक्षतैर्बालया व्यस्ताव्यस्तक्रमेण संपूज्य, मध्येऽस्त्रप्रक्षालितमाधारं वाग्भवेन प्रतिष्ठाप्य रं वह्निमण्डलाय नमः, इति संपूज्य, कामराजेन शङ्खं संस्थाप्य हं सूर्यमण्डलाय नमः, इति संपूज्य, गन्धादिकं निक्षिप्य तार्तीयेन शुद्धोदकेन पूरयित्वा, सं सोममण्डलाय नमः, इति संपूज्य गन्धादिकं निक्षिप्य, हसौं वरुणदेव हसौं नमः, इति सप्तवारं जपित्वा तज्जलेन दक्षिणे भूबिम्बवृत्तषट्कोणत्रिकोणात्मकं मण्डलं विरच्य शङ्खमुद्रया दक्षकरेणावष्टभ्य

व्यस्ताव्यस्तक्रमेण बालया षट्कोणं त्रिकोणं मध्यं च संपूज्य, भूबिम्बे अग्निशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च षडङ्गानि संपूज्य षडासनानि च संपूज्य, त्रिकोणेषु मध्ये पीठचतुष्टयं संपूज्यास्त्रप्रक्षालितमाधारं वाग्भवेन श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्याधारं स्थापयामि नमः, इत्याधारं संस्थाप्य, ॐ रांरींरूं धर्मप्रददशकलात्मने वह्निमण्डलाय श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्याधाराय नमः इति संपूज्य, तदुपरि प्रादक्षिण्येन—यं धूम्रार्चिषे नमः। रं ऊष्मायै नमः। लं ज्वलिन्यै नमः। वं ज्वालिन्यै नमः। शं विस्फुलिङ्गिन्यै नमः। षं सुश्रियै नमः। सं स्वरूपायै नमः। हं कपिलायै नमः। ळं हव्यवाहायै नमः। क्षं कव्यवाहायै नमः। इति दश वह्निकलाः संपूज्य, तदुपरि सौवर्णं राजतं ताम्रं विश्वामित्र(कपाल)मयं पात्रमस्त्रप्रक्षालितं सुधूपितं श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यपात्रं स्थापयामि नमः इति संस्थाप्य, ॐ हसक्षमलवरयऊं वसुप्रदद्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यपात्राय नमः रमलवरयूं इति संपूज्य। तदुपरि प्रादक्षिण्येन—ॐ कंभं तपिन्यै नमः। ॐ खंबं तापिन्यै०। ॐ गंफं धूम्रायै०। ॐ घंपं मरीच्यै०। ॐ ङंनं ज्वालिन्यै०। ॐ चंधं रुच्यै०। ॐ छंदं सुषुम्नायै०। ॐ जंथं भोगदायै०। ॐ झंतं विश्वायै०। ॐ ञंणं बोधिन्यै०। ॐ टंढं धारिण्यै०। ॐ ठंडं क्षमायै नमः। इति द्वादशकलाः संपूज्य, श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यामृतं पूजयामि नमः, मूलविद्याविलोममातृकयार्घ्यमापूर्य, कामराजेन द्वितीयं निक्षिप्यामृतेश्वरीविद्यया त्रिधावलोड्य, तत्रत्यदोषजालं वायुबीजेन संशोष्याग्निबीजेन संदह्य, अमृतबीजेनामृतीकृत्य, ॐ सांसींसूंसमलवरयऊं सं कामप्रदषोडशकलात्मने चन्द्रमण्डलाय श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यामृताय नमः, इति संपूज्य, तत्र प्रादक्षिण्येन ॐ अं अमृतायै नमः। ॐ आं मानदायै०। ॐ इं पूषायै०। ॐ ईं तुष्ट्यै०। ॐ उं पुष्ट्यै०। ॐ ऊं रत्यै०। ॐ ऋं धृत्यै०। ॐ ॠं शशिन्यै०। ॐ ऌं चन्द्रिकायै०। ॐ ॡं ज्योत्स्नायै०। ॐ एं कान्त्यै०। ॐ ऐं श्रियै०। ॐ ओं प्रीत्यै०। ॐ औं अङ्गदायै०। ॐ अं पूर्णायै०। ॐ अः पूर्णामृतायै०। इति षोडश कलाः संपूज्य, सर्वासां कलानां प्राणप्रतिष्ठामपि विधाय, तत्र क्रमत्रयमपि संभाव्य, तत्र चतुर्दिक्षु मध्ये च ग्लूं गगनरत्नाय नमः। स्लूं स्वर्गरत्नाय नमः। प्लूं पातालरत्नाय नमः। म्लूं मर्त्यरत्नाय नमः। न्लूं नागरत्नाय नमः। तन्मध्ये अकथादित्रिरेखं हळक्षगतकोणकं वर्णकदम्बकं विलिख्य, ऐंक्लींसौः अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सांजूं जूं सः अमृतेश्वर्यै स्वाहा, इत्यमृतेश्वरीं त्रिशो जप्त्वा, जातवेदसे गायत्रीं त्र्यम्बकं च जपेत्। ततः शांशींशूंशैंशौंशः इति शुक्रशापविमोचिन्याभिमन्त्र्य पुनरमृतेश्वरीं स्मृत्वा,

ऐं अखण्डैकरसानन्दकरे वरसुधात्मनि। स्वच्छन्दस्फुरणार्थाय निधेह्यमृतरूपिणि॥

हसक्षमलवरयऊं आनन्दभैरवाय वौषट्, सहक्षमलवरयीं सुधादेव्यै वौषट्, इत्यर्घ्यमध्ये आनन्दभैरवमिथुनं तद्बिन्दुभिरेव संतर्प्य,

ऐं क्लीं अकुलस्थामृताकारे सिद्धिज्ञानकरे परे। अमृतत्वं निधेह्यस्मिन् वस्तुनि क्लिन्नरूपिणि॥

पुनरानन्दभैरवमिथुनं सन्तर्प्य,

सौः तद्रूपेणैकरस्यं त्वं दत्त्वार्घ्ये तत्स्वरूपिणी। भूत्वा परामृताकारे मयि चित्स्फुरणं कुरु॥

पुनरानन्दभैरवं संतर्प्य, मूलेन सप्तधाभिमन्त्र्यास्त्रेण संरक्ष्य कवचेनावगुण्ठ्यामृतबीजेनामृतीकृत्य धेनुमुद्रां प्रदर्शयेत्।

श्रीचक्र एवं अपने मध्य में प्रवहमान नासाछिद्र की ओर के हाथ से मत्स्य मुद्रा से त्रिकोण के बाहर वृत्त और उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसके मध्य में ह्रीं लिखे। बाँयें अंगूठे को दबाकर बाँयें हाथ से बाला मन्त्र से पुष्पाक्षत चढ़ावे। व्यस्त-अव्यस्त क्रम से पूजा करे। उस पर फट् से प्रक्षालित आधार 'ऐं' से रखे। रं वह्नि मण्डलाय नमः से पूजा करे। क्लीं से शंख-स्थापन करे। हं सूर्यमण्डलाय नमः से पूजा करे। उसमें गन्धादि डालकर तार्तीय से शुद्ध जल भरे। सं सोमण्डलाय नमः से पूजा करके गन्धादि डाले। ह्सौं वरुणदेव ह्सौं नमः का जप सात बार करे। उस जल से दाँयें भाग में चतुरस्र में वृत्त, वृत्त में षट्कोण एवं षट्कोण में त्रिकोण मण्डल बनावे। शङ्खमुद्रा से दाँयें हाथ से उसे स्पर्श कर व्यस्त-अव्यस्तक्रम से बाला

मन्त्र से षट्कोण-त्रिकोण मध्य की पूजा करे। भूपुर में अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य मध्य और दिशाओं में षडङ्ग पूजा करे। षडासन पूजन करे। त्रिकोण में पीठचतुष्टय की पूजा करे। फट् से आधार को धोकर ऐं से 'श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्याधारं स्थापयामि नमः' कहकर आधार को स्थापित करे। ॐ हं ह्रीं श्रीं रां रीं रूं धर्मप्रददशकलात्मने वह्निमण्डलाय श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्याधाराय नमः' से उस आधार की पूजा करे। उसके ऊपर प्रदक्षिणक्रम से इन वह्निकलाओं की पूजा करे—यं धूम्रार्चिषे नमः, रं ऊष्मायै नमः, लं ज्वलिन्यै नमः, वं ज्वालिन्यै नमः, शं विस्फुलिङ्गिन्यै नमः, षं सुश्रियै नमः, सं स्वरूपायै नमः, हं कपिलायै नमः, ळं हव्यवाहायै नमः, क्षं कव्यवाहायै नमः। इस प्रकार दश वह्नि कला की पूजा करके आधार पर सोना, चाँदी, ताम्बा या कपालमय पात्र को प्रक्षालित एवं धूपित करके 'श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यपात्रं स्थापयामि नमः' से स्थापित कर ॐ हं ह्रीं श्रीं हसक्षमलवरयऊं वसुप्रदद्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यपात्राय नमः रमलवरयूं' से पूजा करे। उसके ऊपर प्रदक्षिण क्रम से द्वादश सूर्यकलाओं की पूजा इस प्रकार करे—ॐ हं ह्रीं श्रीं कंभं तपिन्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं खं बं तापिन्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं गं फं धूम्रायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं घं पं मरीच्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ङं नं ज्वालिन्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं चंधं रुच्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं छं दं सुषुम्नायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं जं थं भोगदायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं झं तं विश्वायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ञं णं बोधिन्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं टं डं धारिण्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ठं डं क्षमायै नमः। तब 'श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यामृतं पूजयामि' नमः, एवं मूल विद्या विलोम मातृका से उसमें जल भरे। क्लीं से दो बार निक्षिप्त करके अमृतेश्वरी विद्या से तीन बार आलोडन करे। उसके दोषों को यं से शोषित करे एवं रं से दहन करे। अमृतबीज से अमृतीकरण करे। ॐ हं ह्रीं श्रीं सां सीं सूं स्मलवरयऊं सं कामप्रदषोडशकलात्मने चन्द्रमण्डलाय श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्या अर्घ्यामृताय नमः' से पूजा करे। इसके बाद प्रदक्षिणक्रम से इनकी पूजा करे—ॐ हं ह्रीं श्रीं अं अमृतायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं आं मानदायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं इं पूषायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ईं तुष्ट्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं उं पुष्ट्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ऊं रत्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ॠं धृत्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ॠं शशिन्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ऌं चान्द्रिकायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ॡं ज्योत्स्नायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ऐं कान्त्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ऐं श्रियै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं ओं प्रीत्यै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं औं अङ्गदायै नमः, ॐ हं ह्रीं श्रीं अं पूर्णायै नमः। ॐ हं ह्रीं श्रीं अः पूर्णामृतायै नमः। इन सोलह कलाओं की पूजा के बाद सबों की प्राण-प्रतिष्ठा करके वहीं पर तीन-तीन का क्रम बनाकर चारो दिशाओं और मध्य में इनकी पूजा करे—ग्लूं गगनरत्नाय नमः, स्लूं स्वर्गरत्नाय नमः, प्लूं पातालरत्नाय नमः, म्लूं मर्त्यरत्नाय नमः एवं न्लूं नागरत्नाय नमः। उसके मध्य में अकथादि त्रिरेखात्मक हळक्ष गत कोण में वर्णकदम्बक लिखे। ऐं क्लीं सौः अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सां जूं सां जूं सः अमृतेश्वर्यै स्वाहा—इस अमृतेश्वरी मन्त्र का तीन जप करे। जातवेदसे गायत्री एवं त्र्यम्बक मन्त्र का भी जप करे। तब 'शां शीं शूं शैं शौं शः' इस शुक्र शाप विमोचनी से मन्त्रित करके पुनः अमृतेश्वरी का स्मरण करके प्रार्थना करे—

ऐं अखण्डैकरसानन्दकरे वरसुधात्मनि। स्वच्छन्दस्फुरणार्थाय निधेह्यमृतरूपिणी।।

हसक्षमलवरयऊं आनन्दभैरवाय वौषट्, सहक्षमलवरयीं सुधादेव्यै वौषट्—इन दो मन्त्रों से अर्घ्यजल में आनन्दभैरव मिथुन का जल-बिन्दु से तर्पण करे। 'ऐं क्लीं अकुलस्थामृताकारे सिद्धिज्ञानकरे परे। अमृतत्वं निधेह्यस्मिन् वस्तुनि क्लिन्नरूपिणि' इस मन्त्र से आनन्दभैरव आनन्दभैरवी का पुनः तर्पण करे। 'सौः तद्रूपेणैकरस्यं त्वं दत्त्वार्घ्ये तत्स्वरूपिणी। भूत्वा परामृताकारे मयि चित्स्फुरणं कुरु' इस मन्त्र से पुनः आनन्द भैरव का तर्पण करे। मूल मन्त्र के सात जप से आभिमन्त्रित करे। फट् से संरक्षण करे। कवच से अवगुण्ठन करे। अमृतबीज से अमृतीकरण करे एवं धेनुमुद्रा दिखावे।

पूजोपकरणशुद्धिपूर्वमात्मपूजनम्

एवमर्घ्यस्थापनं विधायान्यान्यपि पात्राणि यथासंख्यं संस्थाप्यार्घ्यजलेनात्मानं पूजोपकरणानि चाभ्युक्ष्य, ह्रींबीजेन संशोध्यात्मपूजां कुर्यात्। तद्यथा—शिरःपीठे सौः शिवशक्तिसदाशिवेश्वरशुद्धविद्यामायाकलाविद्याराग-कालनियतिपुरुषप्रकृत्यहङ्कारबुद्धिमनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थशब्दस्पर्शरूपरसगन्धाकाशवाय्वग्नि-सलिलभूम्यात्मने श्रीयोगपीठाय नमः, इति संपूज्य स्वमूलाधारादिषडाधारेषु योगिनीन्यासमन्त्रोक्तरीत्याधारदेवता-स्तदावृतीश्च संपूज्य, पुनस्तत्तेजस्त्रिपुष्कररूपेण त्रिधा कृत्वा, ऐं स्वयम्भूलिङ्गाय नमः। ईं बाणलिङ्गाय नमः। औं

इतरलिङ्गाय नमः। ऐंईऔं परलिङ्गाय नमः। इत्याधारहृदयभ्रूमध्यमूर्धसु वह्निसूर्यसोमतत्समष्टिरूपतयानुसन्धाय, पुनस्तत्तेजो निष्कलीकृत्य,

स्वरद्वयपुटान्तःस्थमनच्कद्वयसंश्रयम् । तेजो दण्डमयं ध्यायेत् कुलाकुलनियोजनात्।।

इति क्रमेण संतर्प्य पूर्वोक्तपीठे सौः इति परां कलां विभाव्य, तां परां कलां 'अकलङ्कशशाङ्काभा त्र्यक्षा चन्द्रकलावती। मुद्रापुस्तलसद्बाहुः पातु मां परमा कला' इति सावयवां सञ्चिन्त्य मानसोपचारैः संपूज्य, शिरोबिन्दोः परितः त्रिकोणपञ्चारवृत्तचतुर्दलपञ्चारचतुष्टयचतुरस्रात्मकं षट्त्रिंशत्तत्त्वात्मकं (मण्डलं) विरच्य तदनुज्ञया रश्मिपूजां कुर्यात्। आदौ बाह्यचतुरश्रेऽष्टदिक्षु—अं असिताङ्गभैरवाय नमः। आं ब्राह्म्यै०। इं रुरुभैरवाय०। ईं माहेश्वर्यै०। उं चण्डभैरवाय०। ऊं कौमार्यै०। ऋं क्रोधभैरवाय०। ॠं वैष्णव्यै०। लं उन्मत्तभैरवाय०। लूं वाराह्यै०। एं कपालिभैरवाय०। ऐं इन्द्राण्यै०। ओं भीषणभैरवाय०। औं चामुण्डायै०। अं संहारभैरवाय०। अः महालक्ष्म्यै०। ततो बाह्यपञ्चारे— सौः पृथिवीतत्त्वश्रीपा०। एवं पराबीजादि सर्वत्र। अप्तत्त्व०। तेजस्तत्त्व०। वायुतत्त्व०। आकाशतत्त्व०। तदन्तरपञ्चारे गन्धरसरूपस्पर्शशब्दतत्त्व०। तदन्तरपञ्चारे—उपस्थतत्त्व०। पायुतत्त्व०। पादतत्त्व०। पाणितत्त्व०। वाक्तत्त्व०। तदन्तरपञ्चारे—घ्राणतत्त्व०। जिह्वातत्त्व०। श्रोत्रतत्त्व०। चक्षुस्तत्त्व०। त्वक्तत्त्व०। तदन्तरचतुर्दले—मनस्तत्त्व०। बुद्धितत्त्व०। अहङ्कारतत्त्व०। प्रकृतितत्त्व०। तदन्तरवृत्ते—पुरुषतत्त्व०। नियतितत्त्व०। रागतत्त्व०। कालतत्त्व०। विद्यातत्त्व०। मायातत्त्व०। तदन्तरपञ्चारे—शुद्धविद्यातत्त्व०। ईश्वरतत्त्व०। सदाशिवतत्त्व०। शक्तितत्त्व०। शिवतत्त्व०। तदन्तस्त्रिकोणे—ऐं सत्त्वगुणाय नमः। क्लीं रजोगुणाय०। सौः तमोगुणाय०। तद्रेखासु—ऐं इच्छाशक्तिश्री०। क्लीं ज्ञानशक्तिश्री०। सौः क्रियाशक्तिश्री०। सौः परशक्त्यम्बाश्री०। इति मध्ये यथाशक्ति मानसोपचारैः सन्तर्पयेत्। ततो 'रागद्वेषपशून् हत्वा तर्पयेच्च रसामृतैः' इति द्वादशान्ते बिन्दुभिः संतर्प्य, पुनस्तन्निष्कलीकृत्य बिन्दुत्रयेण विभाव्य, शुक्लं त्रिशूलेन संयोज्य तद्विसर्गे लयं नयेत्। इत्यनुसन्धाय, प्रकाशविमर्शचरणाभ्यां संपूज्य तदनन्तरं तत्र 'तत्त्वे विश्रामयेन्मुहु'रिति रीत्यात्मानं देवीरूपं विभाव्य मिश्रचरणविद्यया संपूज्य, 'चराचरमिदं विश्वं तदीयं वाचकं स्मेरदि'-त्युक्तरीत्या जगत्सर्वं तत्र च लीनं विभाव्य, बहुशोऽभ्यस्यानन्दस्वरूपमात्मानं विभाव्य, ऐं आत्मतत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु। ईं विद्यातत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु। अः शिवतत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु। सौः सर्वतत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु। इति संतर्प्य, मूलाधारे त्रिकोणकुण्डं विभाव्य,

प्रकाशाकाशहस्ताभ्यामवलम्ब्योन्मनीस्रुचम्। धर्माधर्मकलास्नेहपूर्णामग्नौ जुहोम्यहं स्वाहा ॥
धर्माधर्महविर्दीप्ते आत्माग्नौ मनसा स्रुचा। सुषुम्नावर्त्मना नित्यमक्षवृत्तीर्जुहोम्यहं स्वाहा।।

मूलाधारे सर्वभूतानि तृप्यन्तु। रोमकूपे चतुःषष्टियोगिन्यस्तृप्यन्तु। इति सन्तर्प्य, तत्त्वचतुष्टयशोधनेन विगलित-भवबन्धमात्मानं परमशिवात्मानमनुसन्धाय,

मायान्ततत्त्वे सदहं शिवोऽहं शक्त्यन्ततत्त्वे चिदहं शिवोऽहम्।
शिवान्ततत्त्वे सुखदः शिवोऽहमतः परं पूर्णमनुत्तरोऽहम् ॥
देशिकवागुपदेशविनश्यद् देहमरुन्मयशून्यविकल्पः।
अद्वयबोधविमर्शसुखः सन्नद्य शिवोऽस्मि शिवोऽस्मि शिवोऽस्मि ॥

इत्यनुसन्धाय, विगलिताखिलबन्धः परमशिवभट्टारको भूत्वा जीवन्मुक्तः सुखी विश्रामयेत्। इति आत्मपूजा।

इस प्रकार से अर्घ्य-स्थापन के बाद संख्यानुसार अन्य पात्रों की स्थापन करके अर्घ्य जल से अपना और पूजा उपकरणों का अभ्युक्षण करे। ह्रीं बीज से संशोधित करके इस प्रकार आत्मपूजा करे—शिरःपीठ पर 'सौः शिवशक्तिसदाशिवेश्वरशुद्ध-विद्यामायाकलाविद्यारागकालनियतिपुरुषप्रकृत्यहंकारबुद्धिमनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थशब्दस्पर्शरूपरसगन्धाकाशवाय्वग्निसलि-

लभूम्यात्मने श्रीयोगपीठाय नमः से पूजा करके अपने मूलाधारादि छः आधारों में योगिनी न्यास मन्त्रोक्त रीति से आधार देवता और उनके आवृति की पूजा करे। फिर उनके तेज को त्रिपुष्कर रूप में तीन रूप में करके—ऐं स्वयम्भूलिङ्गाय नमः, ईं बाणलिङ्गाय नमः, औं इतरलिङ्गाय नमः, ऐं ईं औं परलिङ्गाय नमः मन्त्रों से मूलाधार हृदय भ्रूमध्य मूर्धा में अग्नि सूर्य चन्द्र एवं सबके समष्टि रूप का अनुसन्धान करके पुनः उस तेज को निष्कलीकृत करके दो स्वरों के मध्य में स्थित अनच्कद्वय-संश्रित एवं कुल-अकुल क्रम से नियोजित तेज का दण्डरूप ध्यान करके पूर्वोक्त पीठ में परा कला 'सौः' की भावना करे। उस निष्कलंक चन्द्र की कान्ति-सदृश, तीन आँखों वाली, चन्द्रकला से युक्त, मुद्रा-पुस्तक धारण करने वाली परा कला का अवयवसहित चिन्तन करके मानसोपचार पूजा करके शिरोबिन्दु के चारो ओर त्रिकोण, पञ्चार, वृत्त, चतुर्दल, चार पञ्चार, चतुरस्रात्मक, षट्त्रिशंततत्त्वात्मक मण्डल बनाकर उनकी आज्ञा पाकर रश्मि पूजा करे।

बाहरी चतुरस्र की आठो दिशाओं में इनकी पूजा करे—अं असिताङ्गभैरवाय नमः, आं ब्राह्म्यै नमः, इं रुरुभैरवाय नमः, ईं माहेश्वर्यै नमः, उं चण्डभैरवाय नमः, ऊं कौमार्यै नमः, ऋं क्रोधभैरवाय नमः, ॠं वैष्णव्यै नमः, ऌं उन्मत्तभैरवाय नमः, ॡं वाराह्यै नमः, एं कपालिभैरवाय नमः, ऐं इन्द्राण्यै नमः, ओं भीषणभैरवाय नमः, औं चामुण्डायै नमः, अं संहारभैरवाय नमः, अः महालक्ष्म्यै नमः।

तब बाह्य पञ्चार में इनसे पूजा करे—सौः पृथिवीतत्त्वश्रीपादुकां पूजयामि, सौः अप्तत्त्वश्रीपादुकां पूजयामि, सौः तेजस्तत्त्वश्रीपादुकां पूजयामि, सौः वायुतत्त्वश्रीपादुकां पूजयामि, सौः आकाशतत्त्वश्रीपादुकां पूजयामि। इसके बाद भीतरी पञ्चार में गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्दतत्त्व की पूजा करे। उसके भीतरी पञ्चार में उपस्थ तत्त्व, पायुतत्त्व, पादतत्त्व, पाणितत्त्व एवं वाक्तत्त्व की पूजा करे। उसके अन्दर वाले पञ्चार में जिह्वातत्त्व, श्रोत्रतत्त्व, चक्षुतत्त्व, घ्राणतत्त्व एवं त्वक् तत्त्व की पूजा करे। उसके अन्दर चतुर्दल में मनस्तत्त्व, बुद्धितत्त्व, अहंकारतत्त्व एवं प्रकृतितत्त्व की पूजा करे। उसके अन्दर वाले वृत्त में पुरुषतत्त्व, नियतितत्त्व, रागतत्त्व, कालतत्त्व, विद्यातत्त्व एवं मायातत्त्व की पूजा करे। उसके अन्दर वाले पञ्चार में शुद्धविद्यातत्त्व, ईश्वर-तत्त्व, सदाशिव तत्त्व, शक्तितत्त्व एवं शिवतत्त्व की पूजा करे। उसके अन्दर वाले त्रिकोण में ऐं सत्त्वगुणाय नमः, क्लीं रजो-गुणाय नमः, सौः तमोगुणाय नमः से पूजा करे। त्रिकोण की रेखाओं में ऐं इच्छाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः क्लीं ज्ञानशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि नमः, सौः क्रियाशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, सौः परशक्त्याम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजन करे। मध्य में यथाशक्ति मानसोपचारों से तर्पण करे। तब राग-द्वेष-पशु को मारकर रसामृत बिन्दु से द्वादशान्त में तर्पण करे। पुनः उसे निष्कृलीकृत करके तीन बिन्दुओं के रूप में भावना करके शुक्ल को त्रिशूल से योजित करके उसका विसर्ग में लय कर दे।

इस प्रकार अनुसन्धान करके प्रकाश विमर्शचरणों की पूजा करके क्षणभर विश्राम कर अपने को देवी रूप मानकर मिश्र चरण विद्या से पूजा करके उसी में सारे संसार के विलीन होने की भावना करे। अपने को अतिशय आनन्द स्वरूप मानकर इन मन्त्रों से तर्पण करे—ऐं आत्मतत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु, ईं विद्यातत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु, अः शिवतत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु, सौः सर्वतत्त्वाधिपतिः श्रीपरा तृप्यतु। इस प्रकार तर्पण करने के बाद मूलाधार में त्रिकोण कुण्ड कल्पित करके—

प्रकाशाकाशहस्ताभ्यामवलम्ब्योन्मनीस्रुचम्। धर्माधर्मकलास्नेहपूर्णामग्नौ जुहोम्यहं स्वाहा।।
धर्माधर्महविर्दीप्ते आत्माग्नौ मनसा स्रुचा। सुषुम्नावर्त्मना नित्यमक्षवृत्तीर्जुहोम्यहं स्वाहा।।

इन मन्त्रों का उच्चारण करते हुये मूलाधारे सर्वभूतानि तृप्यन्तु, रोमकूपे चतुःषष्टियोगिन्यस्तृप्यन्तु—इस प्रकार तर्पण करने के बाद चार तत्त्वों के शोधन से भवबन्धन से मुक्त स्वयं को परमशिव की आत्मा समझते हुये—

मायान्ततत्त्वे सदहं शिवोऽहं शक्त्यन्ततत्त्वे चिदहं शिवोहम्।
शिवान्ततत्त्वे सुखदः शिवोऽहमतः परः पूर्णमनुत्तरोऽहम्।।
देशिकवागुपदेशविनश्यद् देहमरुन्मयशून्यविकल्पः।
अद्वयबोधविमर्शसुखः सन्नद्यः शिवोऽस्मि शिवोऽस्मि।।

इस प्रकार अनुसन्धान करके सभी बन्धनों से मुक्त परमशिवभट्टारक होकर जीवन्मुक्त हो सुखी होकर विश्राम करे।

पादुकास्मरणम्

ततः पादुकास्मरणं कुर्यात्। ऐं पराश्री०। क्लीं अपराश्री०। सौः परापराश्री०। ४ँ ऐं अनङ्गनाथदेवश्री० अनङ्गनाथदेवीश्री०। क्लीं अवतरनाथश्री० अवतरनाथदेवीश्री०। सौः सिद्धनाथदेवश्री० सौः सिद्धनाथदेवीश्री०। इति समयपादुकाः सप्त।

४ँ ऐं क्लीं सौः निजगुरुनाथसदाशिवनाथश्री०। ७ँ अमृतानन्दनाथसदाशिवश्री०। ७ँ नकुलीशनाथसदा-शिवश्री०। ७ँ मृगपर्यङ्कनाथसदाशिवश्री०। ७ँ चन्द्रार्कनाथसदाशिवश्री०। ७ँ शंखपालनाथसदाशिवश्री०। ७ँ आदिनाथसदाशिवश्री०। इति सङ्केतपादुकाः सप्त।

४ँ परप्रकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ परशिवानन्दनाथश्री०। ४ँ परशक्त्यम्बाश्री०। ४ँ कौलेश्वरानन्दनाथश्री०। शुक्रदेव्यम्बाश्री०। ४ँ कुलेश्वरानन्दनाथश्री०। कामेश्वर्यम्बाश्री० इति सप्त दिव्यौघाः।

४ँ भोगानन्दनाथश्री०। ४ँ क्लिन्नानन्दनाथश्री०। ४ँ सहजानन्दनाथश्री०। ४ँ समयानन्दनाथश्री०। इति चत्वारः सिद्धौघाः।

४ँ गगनानन्दनाथश्री०। ४ँ विश्वानन्दनाथ०। ४ँ विमलानन्दनाथ०। ४ँ मदनानन्दनाथ०। ४ँ भुवनानन्द-नाथ०। ४ँ लीलानन्दनाथ०। ४ँ स्वात्मानन्दनाथ०। ४ँ प्रियानन्दनाथ०। ४ँ सहजानन्दनाथ०। ४ँ स्वच्छन्दा-नन्दनाथ०। ४ँ प्रकाशानन्दनाथ०। ४ँ अमृतानन्दनाथ०। इति द्वादश मानवौघाः।

तदनन्तर इस प्रकार पादुका-स्मरण करे—ऐं पराश्रीपादुकां पूजयामि, क्लीं अपराश्रीपादुकां पूजयामि, सौः परापराश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं अनङ्गनाथदेवश्रीपादुकां पूजयामि, अनङ्गनाथदेवीश्रीपादुकां पूजयामि, क्लीं अवतरनाथश्रीपादुकां पूजयामि, अवतरनाथदेवीश्रीपादुकां पूजयामि, सौः सिद्धनाथदेवश्रीपादुकां पूजयामि, सौः सिद्धनाथदेवीश्रीपादुकां पूजयामि। यह सात समयपादुकायें होती हैं।

सात संकेत पादुकाओं का स्मरण इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः निजगुरुनाथसदाशिवनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः अमृतानन्दनाथसदाशिवश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः नकुलीशनाथसदाशिवश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः मृगपर्यङ्कनाथसदाशिवश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः चन्द्रार्कनाथसदाशिवश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः शंखपालनाथसदाशिवश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः आदिनाथसदाशिवश्रीपादुकां पूजयामि।

सात दिव्यौघों का स्मरण इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं परप्रकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पर-शिवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं परशक्त्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कौलेश्वरानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शुक्रदेव्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कुलेश्वरानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कामेश्वर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि।

चार सिद्धौघों का स्मरण इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भोगानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लिन्ना-नन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सहजानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं समयानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि।

बारह मानवौघों का स्मरण इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गगनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं विश्वा-नन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं विमलानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मदनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भुवनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लीलानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वात्मानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रियानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सहजानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वच्छ-न्दानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीांमृतानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि।

ऊर्ध्वाम्नायक्रमे चरणविद्याः

अथोर्ध्वाम्नायक्रमः। तत्र बालया षडङ्गं विधाय पात्रं संशोध्य सुधयात्मानं सानन्दीकृत्य संविद्देवतागणं स्मरेत्। 'चरणं नवनाथाश्च मूलविद्याश्च षोडश। आधारषट्कं देवेशि संविद्देव्य उदाहृताः'। तत्रादौ चरणविद्याः—४ँ ॐ योऽहमस्मि सोऽहमस्मि अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि ब्रह्म सोऽहं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहाकाशपरिपूर्णानन्दनाथश्री०। (४ँ अनादिनाथव्योमेश्वर्यम्बाश्री०) ४ँ कुलीशनाथव्योमव्यापिन्यम्बाश्री०। ४ँ अनामयनाथव्योमगाम्बाश्री०। ४ँ अनन्तनाथव्योमचारिण्यम्बाश्री०। ४ँ चिदाभासानन्दनाथव्योमस्थाम्बाश्री०। इति दिव्यौघाः।

४ँ हं उन्मनाकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ सं समनाकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ क्षं व्यापकाकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ मं शक्त्याकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ लं ध्वन्याकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ वं ध्वनिमात्राकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ रं नादाकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ यं बिन्द्वाकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ ऊं व्यस्ताकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ हः समस्ताकाशानन्दनाथश्री०। इति सिद्धौघाः।

४ँ आत्मानन्दनाथश्री०। ४ँ परमानन्दनाथश्री०। ४ँ शाम्भवानन्दनाथश्री०। ४ँ वाग्भवानन्दनाथश्री०। ४ँ नीलकण्ठानन्दनाथश्री०। ४ँ चिदानन्दानन्दनाथश्री०। ४ँ स्वच्छप्रकाशानन्दनाथश्री०। ४ँ निजप्रकाशानन्द-नाथश्री०। ४ँ अमृतानन्दनाथश्री०। इति मानवौघाः।

ऊर्ध्वाम्नाय क्रम—बाला मन्त्र से षडङ्ग न्यास करके पात्र शोधन करे। अमृत से स्वयं को आनन्दित करके संविद् देवताओं का स्मरण करे। संविद् देवता में चरण देवता, नव नाथ, सोलह मूल विद्या एवं छः आधार आते हैं। उनमें चरण विद्या है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ योऽहमस्मि सोऽहमस्मि अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि ब्रह्म सोऽहं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहाकाशपरिपूर्णानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कुलीशनाथव्योमव्यापिन्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अनामयनाथव्योमगाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अनन्तनाथव्योमचारिण्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चिदाभासानन्दनाथव्योमस्थाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि। ये दिव्यौघ कहलाते हैं।

नव नाथ इस प्रकार है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं उन्मनाकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं समनाकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं व्यापकाकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मं शक्त्याकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं ध्वन्याकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं ध्वनिमात्राकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं नादाकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं बिन्द्वाकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं व्यस्ताकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हः समस्ताकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। ये सिद्धौघ कहलाते हैं।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आत्मानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं परमानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शाम्भवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वाग्भवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नीलकण्ठानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चिदानन्दानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वच्छप्रकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं निजप्रकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अमृतानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। ये मानवौघ कहलाते हैं।

षोडशमूलविद्याः

(१) ह्रींश्रीं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहासिद्धविद्याकुलयोगिनीह्रींश्रींश्रीं०। इति कुलयोगिनीमूलविद्या। (२) हसौं स्वात्मानं बोधय बोधय हसौं श्रीं०। इति प्रासादपरा। (३) ४ँ ऐंब्लूं क्लिन्ने क्लेदिनि महामदद्रवे क्लीं क्लेदय क्लांक्लीं मोहय मोहय क्लीं नमः स्वाहा श्री०। इत्यतिरहस्यविद्या। (४) ४ँ हंसः स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा हसौं श्री०। इति शाम्भवीविद्या। (५) ४ँ ह्रीं नित्यस्फुरत्ताचैतन्यानन्दमयी-महाबिन्दुव्यापकमात्रस्वरूपिणी ह्रींऐंश्रींह्रींश्रीपा०। इति हृल्लेखाविद्या। (६) ४ँ स्वच्छप्रकाशात्मिके ह्रीं कुलमहामालिनि कुलगर्भमातृके ऐं समयविमले श्री०। इति समयविमलामूलविद्या। (७) ४ँ हंसः नित्यप्रकाशात्मिके कुलकुण्डलिनि आज्ञासिद्धिमहाभैरवि आत्मानं

बोधय बोधय अम्बे भगवति ह्रींहुंश्री०। इति परबोधिनी मूलविद्या। (८) ४ँ ॐ मोक्षं कुरु श्री०। इति कुलपञ्चाक्षरीविद्या। (९) ४ँ नवमी लोपामुद्रा श्रीविद्या चैतन्यत्रिपुरसुन्दरीश्री०। (१०) ४ँ ऐं शुद्धसूक्ष्मनिराकारनिर्विकल्पपरब्रह्मस्वरूपिणी क्लीं परमानन्दशक्तिः सौः शाम्भवानन्दनाथश्री०। इत्यनुत्तरकौलिनी। (११) ४ँ हंसः सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा। इति गुरूत्तमविमर्शिनीमूलविद्या। (१२) ४ँ अनामाख्यव्योमातीतनाथपरापरव्योमातीतव्योमेश्वर्यम्बाश्री०। इत्यनामामूलविद्या। (१३) ४ँ ऐंईऔंश्री०, इति संकेतसारविद्या। (१४) ४ँ ह्रीं भगवति विच्चे वाग्वादिनी क्लौंक्लीं महाह्रदमायामातङ्गिनि ऐं क्लिन्ने ब्लूंस्त्रींश्री०। इत्यनुत्तरवाग्वादिनीयम्। (१५) ४ँ ह्रींश्रीं हसखफ्रें हसकलरीं सौः श्री०। इत्यनुत्तरशाङ्करी। (१६) ४ँ ह्रींश्रीं हसकल-हसकहल-सकलह्रीं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि सर्वानन्दमये बैन्दवे चक्रे परब्रह्मस्वरूपिणी परमात्मशक्तिः सर्वमन्त्रेश्वरी सर्वविद्येश्वरी सर्वपीठेश्वरी सर्ववीरेश्वरी सर्वयोगीश्वरी सर्ववागीश्वरी सर्वसिद्धीश्वरी सकलजगदुत्पत्तिमातृका सचक्रा सदेवता समुद्रा ससिद्धिः सायुधा सवाहना सपरिवारा सशक्तिका सालङ्कारा सर्वोपचारैः संपूजिताऽस्तु श्री०। इति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी मूलविद्या। एता विद्याः स्वशिरसि संस्मृत्य षडाधारविद्यास्तर्पयेत्। ४ँ सं सर्वानन्दविभूत्यै स्वाहा, मूलाधारे। ४ँ रं सोहं परमविभूत्यै स्वाहा, स्वाधिष्ठाने। ४ँ हंसः सोहं स्वच्छन्दानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा, नाभौ। ४ँ हंसः स्वात्मानं बोधय बोधय परमानन्दनाथश्री०, अनाहते। ४ँ सोहं परमात्मानं बोधय बोधय स्वात्मानन्दनाथश्री०, विशुद्धौ। ४ँ ह्रींश्रीं हंसः सोहं स्वच्छानन्दचित्प्रकाशामृतहेतवे स्वाहा, आज्ञायां। ततश्चरणविद्यां द्वादशान्ते तर्पयेत्।

सोलह मूल विद्यायें—कुलयोगिनी मूल विद्या है—ह्रींश्रीं स्वच्छप्रकाशपरिपूर्णपरापरमहासिद्धविद्याकुलयोगिनी-ह्रींश्रींश्रीपादुकां पूजयामि। **प्रासादपरा विद्या** है—हसौं स्वात्मानं बोधय बोधय हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। **अतिरहस्य विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंब्लूं क्लिन्ने क्लेदिनि महामदद्रवे क्लीं क्लेदय क्लांक्लीं मोहय मोहय क्लीं नमः स्वाहा श्रीपादुकां पूजयामि। **शाम्भवी विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा हसौं श्रीपादुकां पूजयामि। **हृल्लेखा विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नित्यस्फुरत्ताचैतन्यानन्दमयीमहाबिन्दुव्यापकमात्रस्वरूपिणी ह्रींऐंश्रींह्रींश्रीपादुकां पूजयामि। **समयविमला मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वच्छप्रकाशात्मिके ह्रीं कुलमहामालिनि कुलगर्भमातृके ऐं समयविमले श्रीपादुकां पूजयामि। **परबोधिनी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः नित्यप्रकाशात्मिके कुलकुण्डलिनि आज्ञासिद्धिमहाभैरवि आत्मानं बोधय बोधय अम्बे भगवति ह्रींहुंश्रीपादुकां पूजयामि। **कुलपञ्चाक्षरी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ मोक्षं कुरु श्रीपादुकां पूजयामि। **चैतन्यत्रिपुरसुन्दरी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नवमी लोपामुद्रा श्रीविद्या चैतन्यत्रिपुरसुन्दरीश्रीपादुकां पूजयामि। **अनुत्तरकौलिनी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं शुद्धसूक्ष्मनिराकारनिर्विकल्पपरब्रह्मस्वरूपिणी क्लीं परमानन्दशक्तिः सौः शाम्भवानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। **गुरूत्तमविमर्शिनी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा। **अनामा मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अनामाख्यव्योमातीतनाथपरापरव्योमातीतव्योमेश्वर्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि। **संकेतसार विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंईऔंश्रीपादुकां पूजयामि। **अनुत्तरवाग्वादिनी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं भगवति विच्चे वाग्वादिनी क्लौंक्लीं महाह्रदमायामातङ्गिनि ऐं क्लिन्ने ब्लूंस्त्रींश्रीपादुकां पूजयामि। **अनुत्तरशांकरी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रीं हसखफ्रें हसकलरीं सौः श्रीपादुकां पूजयामि। **श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी मूल विद्या** है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रीं हसकल-हसकहल-सकलह्रीं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि सर्वानन्दमये बैन्दवे चक्रे परब्रह्मस्वरूपिणी परमात्मशक्तिः सर्वमन्त्रेश्वरी सर्वविद्येश्वरी सर्वपीठेश्वरी सर्ववीरेश्वरी सर्वयोगीश्वरी सर्ववागीश्वरी सर्वसिद्धीश्वरी सकलजगदुत्पत्तिमातृका सचक्रा सदेवता समुद्रा ससिद्धिः सायुधा सवाहना सपरिवारा सशक्तिका सालङ्कारा सर्वोपचारैः संपूजिताऽस्तु श्रीपादुकां पूजयामि। इन विद्याओं का अपने शिर पर स्मरण करके छः आधार विद्या से मूलाधार, स्वाधिष्ठान, नाभि, अनाहत, विशुद्धि एवं आज्ञाचक्र में क्रमशः इन मन्त्रों से तर्पण करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सं सर्वानन्दविभूत्यै स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं सोहं परमविभूत्यै स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सोहं स्वच्छन्दानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः स्वात्मानं बोधय बोधय परमानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सोहं परमात्मानं बोधय बोधय स्वात्मानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रीं हंसः सोहं स्वच्छानन्दचित्प्रकाशामृतहेतवे स्वाहा। तदनन्तर चरण विद्या से द्वादशान्त में तर्पण करे।

शुक्लरक्तचरणविद्ये

अथ चरणविद्या:। ॲ क० ह० स० ह्रीं हंस: शिव: ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हंस: हसौं शुक्लविद्यामहापीठशुक्लपुष्पशुक्लमण्डलमहापीठशुक्लचरुकमहापीठशुक्लमन्त्रमहापीठशुक्लदीप-शुक्लमुद्रामहापीठशुक्लनतिशुक्लमहाप्रकाशात्मकपरमशिवश्रीपादुकां पूजयामि हसौं हंस: हसक्षमलवरयूं हंस: सोहं स्वच्छचिदानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा, ॲ त्रिपुरसुन्दरीब्रह्मविद्याश्रित-अमुकशक्तियुक्तश्रीपरमेष्ठिगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तश्रीपरमगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तश्रीगुरु-अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नम:। इति शुक्लचरणम्। ॲ क० ह० स० ह्रीं सोहं शिव: ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं सोहं हंस: श्रीरक्तविद्यामहापीठरक्तपुष्परक्तमण्डलमहापीठरक्तचरुकरक्तमन्त्रमहापीठरक्तदीपरक्तमुद्रामहापीठरक्तनतिरक्तमहा-विमर्शात्मकपरशक्त्यम्बाश्री०। ॲ स्ह्रीं सोहं सहक्षमलवरयीं सहक्षमलवरयूं हसखफ्रें श्रीह्रींऐंऐंह्रींश्रीं हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हंस: सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा इंह्रीं त्रिपुरसुन्दरि ब्रह्मविद्याश्रितामुकशक्तियुक्तपरमेष्ठिगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तपरमगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तश्रीगुरु-अमुकानन्दनाथश्री०। इति रक्तचरणम्।

शुक्ल चरण विद्या—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क० ह० स० ह्रीं हंस: शिव: ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हंस: हसौं शुक्लविद्यामहापीठशुक्लपुष्पशुक्लमण्डलमहापीठशुक्लचरुकमहापीठशुक्लमन्त्रमहापीठशुक्लदीपशुक्लमुद्रामहा-पीठशुक्लनतिशुक्लमहाप्रकाशात्मकपरमशिवश्रीपादुकां पूजयामि हसौं हंस: हसक्षमलवरयूं हंस: सोहं स्वच्छचिदानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरसुन्दरीब्रह्मविद्याश्रित-अमुकशक्तियुक्तश्रीपरमेष्ठिगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तश्रीपरमगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तश्रीगुरु-अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

रक्त चरण विद्या—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क० ह० स० ह्रीं सोहं शिव: ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं सोहं हंस: श्रीरक्तविद्यामहापीठरक्तपुष्परक्तमण्डलमहापीठरक्तचरुकरक्तमन्त्रमहापीठरक्तदीपरक्तमुद्रामहापीठरक्तनतिरक्तमहाविमर्शात्म-कपरशक्त्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि एवं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्ह्रीं सोहं सहक्षमलवरयीं सहक्षमलवरयूं हसखफ्रें श्रीह्रींऐंऐंह्रींश्रीं हसक्षम-लवरयूं सहक्षमलवरयीं हंस: सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा इंह्रीं त्रिपुरसुन्दरि ब्रह्मविद्याश्रितामुकशक्तियुक्तपरमेष्ठिगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तपरमगुरु-अमुकानन्दनाथामुकशक्तियुक्तश्रीगुरु-अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि।

मिश्रचरणविद्या

ॲ क० ह० स० ह्रीं हंस: सोऽहं श्रीह्रींऐंऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हंस: सोहं हस्त्रीं सहरीं मिश्रविद्यामहापीठमिश्रपुष्पमिश्रमण्डलमहापीठमिश्रचरुकमिश्रमन्त्रमहापीठमिश्रदीपमिश्रमुद्रामहापीठमिश्रनति-मिश्रमहाप्रकाशविमर्शात्मकपरमशिवपरशक्त्यम्बाश्री०। स्ह्रींहस्त्रीं सोहं हंस: सहक्षमलवरयीं हसक्षमलवरयूं हसखफ्रें श्रींहीं ऐंऐं ह्रींश्रीं हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हंस: सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा इंह्रींश्रीं महा-त्रिपुरसुन्दरीब्रह्मविद्याश्रित-अमुकशक्तियुक्तपरमेष्ठिगुरु-अमुकानन्दनाथ-अमुकशक्तियुक्तपरमगुरु-अमुकानन्दनाथ-अमुकशक्तियुक्तश्रीगुरु-अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नम:। इति मिश्रचरणम्।

मिश्र चरण विद्या—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क० ह० स० ह्रीं हंस: सोऽहं श्रींह्रींऐंऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्ष-मलवरयीं हंस: सोहं हस्त्रीं सहरीं मिश्रविद्यामहापीठमिश्रपुष्पमिश्रमण्डलमहापीठमिश्रचरुकमिश्रमन्त्रमहापीठमिश्रदीपमिश्रमुद्रा-महापीठमिश्रनतिमिश्रमहाप्रकाशविमर्शात्मकपरमशिवपरशक्त्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नम: एवं स्ह्रींहस्त्रीं सोहं हंस: सहक्षमलवरयीं हसक्षमलवरयूं हसखफ्रें श्रींहीं ऐंऐं ह्रींश्रीं हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हंस: सोहं स्वच्छानन्दपरमहंसपरमात्मने स्वाहा इंह्रींश्रीं महात्रिपुरसुन्दरीब्रह्मविद्याश्रित-अमुकशक्तियुक्तपरमेष्ठिगुरु-अमुकानन्दनाथ-अमुकशक्तियुक्तपरमगुरु-अमुकानन्दनाथ-अमुकशक्तियुक्तश्रीगुरु-अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

पीठपूजाविधिः

एवं सर्वं स्वशिरसि संघट्टमुद्रया विन्यस्य पीठपूजामारभेत्। ४ँ मण्डूकाय नमः। एवं ४ँ कालाग्निरुद्राय नमः। मूलप्रकृत्यै०। आधारशक्त्यै०। कूर्माय०। अनन्ताय०। वराहाय०। पृथिव्यै०। इत्यादि परतत्त्वान्तं न्यासोक्तरीत्या संपूज्य, ४ँ श्रीचक्रराजाय नमः। ४ँ तत्र समस्तप्रकटगुप्तगुप्ततरसंप्रदायकुलकौलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्य-योगिनीश्रीचक्रदेवताश्री०। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, भूबिम्बवृत्तयोर्मध्ये वायव्यादीशानान्तं ४ँ मित्रेशनाथश्री०। ४ँ उड्डीशनाथश्री०। ४ँ षष्ठीशनाथश्री०। ४ँ चर्यानाथश्री०। इति युगनाथानभ्यर्च्य, चक्रस्येशानादिचतुष्कोणेषु—४ँ गां गणपतिनाथश्री०। ४ँ वां वटुकनाथश्री०। ४ँ क्षां क्षेत्रपालनाथश्री०। चतुरश्रे ४ँ योगिनीश्री०। ४ँ अंआंसौः त्रिपुरा-मृतार्णवासनश्री०। पद्मद्वये—४ँ ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरीपोताम्बुजासनश्री०। चतुर्दशारे ४ँ ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरी-देव्यात्मासनश्री०। दशारद्वये—४ँ हैं हक्लीं ह्सौः त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनश्री०। अष्टारे—४ँ हसैं ह्सक्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनश्री०। त्रिकोणे—४ँ ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनश्री०। एवं षडासनानि चतुरश्रे पद्मद्वये चतुर्दशारे दशारद्वये अष्टारे त्रिकोणे च क्रमेण संपूज्य, ४ँ ऐं कामरूपपीठश्री०। ४ँ क्लीं पूर्णगिरिपीठश्री०। ४ँ सौः जालन्धरपीठश्री०। ४ँ ऐंक्लींसौः उड्याणपीठश्री०। इति त्रिकोणाग्रदक्षवाममध्येषु संपूज्य, ४ँ ह्लां पृथिव्य-धिपतिब्रह्मप्रेतपा०। ४ँ ह्रीं जलाधिपतिविष्णुप्रेतपा०। ४ँ हुं तेजोधिपतिरुद्रप्रेतपा०। ४ँ स्हीं वाय्वधिपतीशानप्रेतपा०। ४ँ क्लीं आकाशाधिपतिसदाशिवप्रेतपा०। इति मध्यपीठस्याग्नेयादिपादचतुष्टये मध्ये च पञ्चप्रेतासनानि संपूज्य, ४ँ प्रसून-तूलिकापा०। ४ँ महापद्मवनपा०। ४ँ ह्रींश्रींसौः कामेश्वरकामेश्वरीपा०। ततो देव्या मूर्तिं कामेश्वराङ्कोपविष्टां ध्यात्वा—

ध्यायेत् परशिवाङ्कस्थां पाशाङ्कुशधनुःशरैः। भासमानचतुर्बाहुमरुणामरुणांशुकाम् ॥

इति ध्यात्वा, ऐंह्रींश्रीं 'प्रकटाद्याश्च योगिन्यो महावीराः परापराः। सान्निध्यं कुलयागेऽस्मिन् कुर्वन्त्वद्य शिवाज्ञया' इति देवीमूर्तौ पुष्पाञ्जलिं ध्यात्वा त्रिखण्डामुद्रां बद्ध्वा, ४ँ ह्सैं ह्क्लीं ह्सौः इति पञ्चकूटविद्यया द्वादशान्ततश्चैतन्मयमयीं परां देवीं वहन्नासापुटाध्वना पुष्पाञ्जलावानीय,

एह्येहि देवदेवेशि त्रिपुरे देवपूजिते। परामृतमये शीघ्रं सान्निध्यं कुरु सिद्धिदे ॥
महापद्मवनान्तःस्थे कारणानन्दविग्रहे। सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि ॥

अस्मिन्मण्डले सान्निध्यं कुरु कुरु नमः। इति पूर्वसङ्कल्पिते देवीमूर्तौ चैतन्यमावाह्यावाहन-स्थापन-सन्निधापन-सन्निरोधनमुद्राः प्रदर्श्यावगुण्ठनमुद्रयावगुण्ठ्य, शिरसि धेनुमुद्रयामृतीकृत्य, देव्यङ्गे षडङ्गमन्त्रैः सकलीकृत्य परमीकरणमुद्रया परमीकृत्य,

मूलमन्त्रेण दीपिन्या मालिन्याऽर्घ्योदकेन च। त्रिवारं प्रोक्षयेदेवं देवशुद्धिरितीरिता ॥
इति क्रमेण संप्रोक्ष्य ध्यायेत्।

पीठपूजा—इस प्रकार अपने शिर पर संघट्ट मुद्रा से सबका न्यास करके अग्रांकित क्रम से पीठपूजा आरम्भ करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मण्डूकाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कालाग्निरुद्राय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मूलप्रकृत्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आधारशक्त्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कूर्माय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अनन्ताय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वराहाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पृथिव्यै नमः— इस प्रकार परतत्त्व तक न्यासोक्त रीति से पूजन करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीचक्रराजाय नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तत्र समस्तप्रकटगुप्त-गुप्ततरसंप्रदायकुलकौलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्ययोगिनीश्रीचक्रदेवताश्रीपादुकां पूजयामि से पुष्पाञ्जलि प्रदान कर भूबिम्ब वृत्त के मध्य में वायव्य कोण से ईशान कोण पर्यन्त ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मित्रेशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उड्डीशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं षष्ठीशनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चर्यानाथश्रीपादुकां पूजयामि—इस प्रकार युगनाथों का अर्चन करके चक्र के ईशान आदि चार कोणों में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गां गणपतिनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वां वटुकनाथश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षां क्षेत्रपालनाथश्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करके चतुरस्र में ॐ

ऐं ह्रीं श्रीं योगिनीश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अंआंसौः त्रिपुरामृतार्णवासनश्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करे। पद्मद्वय में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरीपोताम्बुजासनश्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करे। चतुर्दशार में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीदेव्यात्मासनश्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करे।

दशारद्वय में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हक्लीं हसौः त्रिपुरवासिनीसर्वचक्रासनश्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करे। अष्टार में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसैं ह्सक्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनश्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करे। त्रिकोण में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनश्रीपादुकां पूजयामि से पूजन करे। इस प्रकार छः आसन, चतुरस्र, पद्मद्वय, चतुर्दशार, दशारद्वय, अष्टार एवं त्रिकोण में क्रमशः पूजन करके त्रिकोण के आगे, दाहिने, बाँयें एवं मध्य में इनसे पूजन करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं कामरूपपीठश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं पूर्णगिरिपीठश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौः जालन्धरपीठश्रीपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंक्लींसौः उड्याणपीठश्रीपादुकां पूजयामि।

तदनन्तर मध्य पीठ के आग्नेयादि चारपाद एवं मध्य में पाँच प्रेतासनों का इनसे पूजन करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रां पृथिव्यधिपतिब्रह्मप्रेतपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं जलाधिपतिविष्णुप्रेतपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हुं तेजोधिपतिरुद्रप्रेतपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्हीं वाय्वधिपतीशानप्रेतपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं आकाशाधिपतिसदाशिवप्रेतपादुकां पूजयामि। तदनन्तर इस प्रकार पूजन करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रसूनतूलिकापादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं महापद्मवनपादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींश्रींसौः कामेश्वरकामेश्वरीपादुकां पूजयामि।

इसके बाद पाश-अंकुश-धनुष एवं बाण से सुशोभित भुजाओं वाली अरुण वर्ण सूर्य के समान कान्ति वाली देवी का कामेश्वर के अंक में अवस्थित रूप में ध्यान करके देवीमूर्ति में 'प्रकटाद्याश्च योगिन्यो महावीराः परापराः सान्निध्यं कुलयागेस्मिन् कुर्वन्त्वद्य शिवाज्ञया' मन्त्र पुष्पाञ्जलि का ध्यान करके त्रिखण्डा मुद्रा बाँधकर '४ ह्सैं ह्क्लीं ह्सौः' इस पञ्चकूटा विद्या से द्वादशान्त से चैतन्यमयी परादेवी को प्रवहमान नासापुटमार्ग से पुष्पाञ्जलि में ले आये और यह मन्त्र पढ़े—

एह्येहि देवदेवेशि त्रिपुरे देवपूजिते। परामृतमये शीघ्रं सान्निध्यं कुरु सिद्धदे।।
महापद्मवनान्तःस्थे कारणानन्दविग्रहे। सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि।।

अग्निमण्डले सान्निध्यं कुरु कुरु नमः—इस मन्त्र से पूर्व संकल्पित मूर्ति में चैतन्य का आवाहन करके आवाहन स्थापन सन्निधापन सन्निरोधन मुद्रा दिखावे। अवगुण्ठन मुद्रा से अवगुण्ठन करे। शिर में धेनुमुद्रा दिखाकर अमृतीकरण करे। देवी के अंगों में षडङ्ग मन्त्रों से सकलीकरण करे। परमीकरण मुद्रा से परमीकरण करे। मूलमन्त्र दीपिनी और मालिनी मन्त्र से अर्घ्य जल से तीन बार देवी का प्रोक्षण करे। यह देवशुद्धि होती है। इस प्रकार क्रमशः प्रोक्षण करके देवी त्रिपुर सुन्दरी का ध्यान करना चाहिये।

महात्रिपुरसुन्दरीध्यानम्

तद्यथा—

ततः श्रीचक्रमारूढां ध्यायेत् त्रिपुरसुन्दरीम्। ततः पद्मनिभां ध्यायेद्बालार्ककिरणारुणाम्।।१।।
जपाकुसुमसङ्काशां दाडिमीकुसुमप्रभाम्। पद्मरागप्रतीकाशां कुङ्कुमोदरसन्निभाम्।।२।।
स्फुरन्मुकुटमाणिक्यकिङ्किणीजालमण्डिताम्। कालालिकुलसङ्काशकुटिलालकपल्लवाम्।।३।।
प्रत्यग्रारुणसंकाशवदनाम्भोजमण्डलाम्। किञ्चिदर्धेन्दुकुटिलललाटमृदुपट्टिकाम्।।४।।
पिनाकिधनुराकारभ्रूलतां परमेश्वरीम्। आनन्दमुदितोल्लोललीलान्दोलितलोचनाम्।।५।।
स्फुरन्मयूखसङ्घातविलसद्धेमकुण्डलाम्। स्वगण्डमण्डलाभोगाजितेन्द्वमृतमण्डलाम्।।६।।
विश्वकर्माविनिर्माणसूत्रसुस्पष्टनासिकाम्। ताम्रविद्रुमबिम्बाभरक्तोष्ठीममृतोपमाम्।।७।।
दाडिमीबीजवद्राभदन्तपङ्क्तिविराजिताम्। रत्नद्वी(दी)पसमुद्भासिजिह्वां मधुरभाषिणीम्।।८।।

स्मितमाधुर्यविजितमाधुर्यरससागराम् । अनौपम्यगुणोपेतचिबुकोद्देशशोभिताम् ॥९॥
कम्बुग्रीवां महादेवीं मृणाललतितैर्भुजैः । मणिकङ्कणकेयूरभूषणैः परिशोभिताम् ॥१०॥
रक्तोत्पलदलाकारसुकुमारकराम्बुजाम् । कराम्बुजनखज्योत्स्नाविराजितनभस्तलाम् ॥११॥
मुक्ताहारलतोपेतसमुन्नतपयोधराम् । पीनवृत्तोन्नतकुचां तनुमध्येन शोभिताम् ॥१२॥
त्रिवलीवलनायुक्तमध्यदेशसुशोभिताम् । लावण्यसरिदावर्ताकारनाभिविभूषिताम् ॥१३॥
अनर्घरत्नखचितकाञ्चीयुक्तनितम्बिनीम् । नितम्बबिम्बद्विरदरोमराजिवराङ्कुशाम् ॥१४॥
कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुमीश्वरीम् । लावण्यकदलीतुल्यजङ्घायुगलमण्डिताम् ॥१५॥
गूढगुल्फपदद्वन्द्वप्रपदाजितकच्छपाम् । नूपुरैर्विलसत्पादपङ्कजातिमनोहराम् ॥१६॥
ब्रह्मविष्णुशिरोरत्ननिर्घृष्टचरणाम्बुजाम् । तनुदीर्घाङ्गुलीभास्वन्नखचन्द्रविराजिताम् ॥१७॥
शीतांशुशतसङ्काशकान्तिसन्तानहासिनीम् । लौहित्यजितसिन्दूरजपादाडिमरागिणीम् ॥१८॥
रक्तवस्त्रपरीधानां पाशाङ्कुशकरोद्यताम् । रक्तपुष्पनिविष्टां तु रक्ताभरणभूषिताम् ॥१९॥
चतुर्बाहुं त्रिनेत्रां च पञ्चबाणधनुर्धराम् । कर्पूरशकलोन्मिश्रताम्बूलापूरिताननाम् ॥२०॥
महामृगमदोद्दामकुङ्कुमारुणविग्रहाम् । सर्वशृङ्गारवेषाढ्यां सर्वाभरणभूषिताम् ॥२१॥
जगदाह्लाजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम् । जगदाकर्षणकरीं जगत्स्थापनरूपिणीम् ॥२२॥
सर्वमन्त्रमयीं देवीं सर्वसौभाग्यसुन्दरीम् । सर्वलक्ष्मीमयीं नित्यां परमानन्दनन्दिताम् ॥२३॥
महात्रिपुरमुद्रां तु स्मृत्वावाहनरूपया । विद्ययावाह्य सुभगे नमस्तारिणियुक्तया ॥२४॥
पूर्वोक्तया साधकेन्द्रो महात्रिपुरसुन्दरीम् । चक्रमध्ये तु सञ्चिन्त्य ततः पूजनमारभेत् ॥२५॥ इति।

तदनन्तर श्रीचक्रारूढ़ त्रिपुरसुन्दरी का ध्यान करने के पश्चात् कमलसदृश बाल सूर्य की किरणों के समान अरुण वर्ण वाली, जपापुष्प-सदृश, दाडिमपुष्प-सदृश कान्तिमान, पद्मरागमणि-सदृश मनोहर, उदर में कुङ्कुम का लेप लगाये, मणिक्यनिर्मित मुकुट से दीप्यमान किरणों से मण्डित, भ्रमरों के समान कुटिल केशकुन्तल वाली, लाल होठों से सुशोभित मुख वाली, कुछ-कुछ अर्द्धचन्द्र-सदृश पट्टी ललाट पर बाँधी हुई, धनुष एवं बाण के सदृश भ्रूलताओं वाली, अतिशय आनन्द से निमीलित नयनों वाली, किरणें विखेरती कुण्डलों से अलंकृत, अपने गण्डस्थल से अमृत मण्डल को भी विजित करती हुई, विश्वकर्मा की अद्भुत कृतिस्वरूप सुस्पष्ट नासिका वाली, ताम्र विद्रुम बिम्बसदृश रक्त ओष्ठ वाली, दाडिम-बीज के सदृश दन्तपंक्तियों से सुशोभित, रत्नद्वीप से निकलती जिह्वा से मधुर वाणी बोलने वाली, अपने स्मित माधुर्य से माधुर्य रससागर को भी पराजित करने वाली, अनुपम चिबुक से सुशोभित, कम्बुग्रीवा एवं मृणालसदृश भुजाओं वाली, मणिनिर्मित कंकण एवं केयूर से भूषित, रक्तकमल-सदृश हाथों वाली, हाथ के नखों से आकाश को भी अभिभूत करने वाली, स्तनों पर मुक्ताहार धारण की हुई, त्रिवली से युक्त शरीर के मध्य भाग वाली, लावण्य के सागरस्वरूप नाभिप्रदेश वाली, बहुमूल्य रत्नों से निर्मित करधनी को नितम्ब पर धारण की हुई, केले के समान जांघों वाली, कच्छपसदृश पैरों वाली, चरणों में नूपुर धारण की हुई, ब्रह्मा एवं विष्णु द्वारा जिसके चरणों पर मुकुट समर्पित किये जाते हैं, बड़ी-बड़ी अंगुलियों वाली, सैकड़ों चन्द्रमाओं की कान्ति को हरण करने वाली, लालिमा से सिन्दूररज, जपा एवं दाडिम को भी पराजित करने वाली, रक्तपुष्प एवं रक्त आभूषण धारण की हुई, चार भुजायें, तीन नेत्र एवं पाँच बाणयुक्त धनुष धारण करने वाली, कर्पूरखण्ड से सुवासित ताम्बूल भक्षण की हुई, महामृग के मद से उद्दाम कुङ्कुमसदृश लाल शरीर वाली, समस्त शृंगार एवं आभूषणों से भूषित, जगत् को आह्लादित एवं रञ्जित करने वाली, जगत् को स्थापित एवं आकर्षित करने वाली, समस्त मन्त्रों के आकरस्वरूप, सम्पूर्ण सौभाग्य से सम्पन्न होने के फलस्वरूप अनिन्द्य सुन्दरी, पूर्ण लक्ष्मीस्वरूपा, परमानन्द से आनन्दित महात्रिपुर मुद्रा का स्मरण करके आवाहनरूप विद्या से आवाहन करे। तदनन्तर चक्रमध्य में नमः एवं तारिणी से समन्वित महात्रिपुरसुन्दरी का चिन्तन करते हुये पूजा का आरम्भ करे।

आन्तरयजनविधिः

ज्ञानार्णवे—

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि यजनं चान्तरं महत्। मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं बिसतन्तुतनीयसीम् ॥१॥
उद्यत्सूर्यसहस्राभां विद्युत्कोटिसमप्रभाम्। चन्द्रकोटिप्रभार्द्राभां त्रैलोक्यैकप्रभामयीम् ॥२॥
अशेषजगदुत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणीम्। ध्यायेन्मनो यदा देवि निश्चलं जायते तदा ॥३॥
सहजानन्दसंदोहमन्दिरं भवति क्षणात्। मनो निश्चलतां प्राप्तं शिवशक्तिप्रभावतः ॥४॥
समाधिर्जायते तत्र संज्ञाद्वयविजृम्भितः। स्वयं प्रज्ञातनामैको ह्यसंप्रज्ञातनामधृक् ॥५॥
स्वयं प्रज्ञातभेदस्तु शिवाधिक्येन जायते। असंप्रज्ञातसंज्ञस्तु शक्त्याधिक्येन वै भवेत् ॥६॥
स्वयं प्रज्ञातभेदस्तु तीव्रस्तीव्रतरो भवेत्। असंप्रज्ञातभेदस्तु मन्दो मन्दतरस्तथा ॥७॥
हास्यरोदनरोमाञ्चकम्पस्वेदादिलक्षितः। तीव्रस्तीव्रतरो देवि समाधिरुपलक्षितः ॥८॥
शाम्भवेन तु वेधेन सुखीभूयान्निरन्तरम्। अन्तर्यागविधिं कृत्वा बहिर्यागं समारभेत् ॥९॥

आन्तर पूजन-विधि—ज्ञानार्णव में आन्तर यजन का विवेचन करते हुये कहा गया है कि मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक बिसतन्तु-सदृश, हजार उदित सूर्य की आभा के समान, करोड़ों विद्युत्प्रभा के समान, कोटि चन्द्र के समान शीतल त्रैलोक्यप्रभारूप, अशेष जगत् की उत्पत्ति-स्थिति-संहारकारिणी देवी का ध्यान एकाग्र मन से करे। तब साधक सहजानन्द मन्दिर हो जाता है। शिवशक्ति के प्रभाव से उसका मन निश्चल हो जाता है। संज्ञाद्वय-विजृम्भित समाधि लग जाती है। यह सम्प्रज्ञात समाधि होती है। शिव के आधिक्य से स्वयं प्रज्ञात भेद होता है। असम्प्रज्ञात में शक्ति का अधिक्य रहता है। सम्प्रज्ञात के दो भेद तीव्र और तीव्रतर होते हैं तथा असम्प्रज्ञात के भेद मन्द और मन्दतर होते हैं। हास्य रुदन रोमाञ्च कम्प स्वेदादि तीव्र-तीव्रतर समाधि के लक्षण हैं। इस प्रकार समाधि-सम्पन्न होकर शाम्भव वेध से निरन्तर सुखी होते हुये अन्तर्याग करके बहिर्याग का सम्पादन आरम्भ करना चाहिये।

बहिर्यागध्यानान्तरम्

एवं विन्यस्तदेहः सन् सर्वात्मा साधकोत्तमः। ध्यायेन्निरामयं वस्तु जगत्त्रयविमोहिनीम् ॥१०॥
अशेषव्यवहाराणां साधिनीं संविदं पराम्। उद्यत्सूर्यसहस्राभां दाडिमीकुसुमप्रभाम् ॥११॥
जपाकुसुमसंकाशां पद्मरागमणिप्रभाम्। स्फुरत्पद्मनिभां तप्तकाञ्चनाभां परेश्वरीम् ॥१२॥
रक्तोत्पलदलाकारपादपल्लवराजिताम्। अनर्घरत्नखचितमञ्जीरचरणद्वयाम् ॥१३॥
पादाङ्गुलीयकस्वर्णतेजोराशिविराजिताम्। कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुमण्डलाम् ॥१४॥
नितम्बबिम्बविलसद्रक्तवस्त्रपरिष्कृताम्। मेखलावज्रमाणिक्यकिङ्किणीनादविभ्रमाम् ॥१५॥
अलक्ष्यमध्यमां निम्ननाभियुक्तोदरीं पराम्। रोमराजिलताभूतमहाकुचफलान्विताम् ॥१६॥
सुवृत्तनिबडोत्तुङ्गकुचमण्डलराजिताम्। नवरत्नप्रभाराजद्ग्रैवेयवरभूषणाम् ॥१७॥
श्रुतिभूषामनोरम्यकपोलस्थलमञ्जरीम्। उद्यदादित्यसंकाशताटङ्कसुमुखप्रभाम् ॥१८॥
पूर्णचन्द्रमुखीं पद्मवदनां मीनलोचनाम्। स्फुरन्मदनकोदण्डसुभ्रुवं पद्मलोचनाम् ॥१९॥
ललाटपट्टसंराजद्रत्नाढ्यतिलकप्रभाम्। मुक्तामाणिक्यघटितमुकुटस्थलकिङ्किणीम् ॥२०॥
स्फुरच्चन्द्रकलाराजन्मुकुटां लोचनत्रयाम्। प्रवालवल्लीविलसद्बाहुवल्लीचतुष्टयाम् ॥२१॥
इक्षुकोदण्डपुष्पेषुपाशाङ्कुशचतुर्भुजाम्। सर्ववेदमयीमम्बां सर्वसौभाग्यसुन्दरीम् ॥२२॥
सर्वतीर्थमयीं देवीं (सर्वकामप्रपूरणीम्। सर्वक्षेत्रमयीं दिव्यां सर्वदेवस्वरूपिणीम् ॥२३॥

सर्वशास्त्रमयीं देवीं सर्वागमनमस्कृताम् । सर्वज्ञानमयीं देवी) सर्वदानवसेविताम् ॥२४॥
सर्वानन्दमयीं ज्ञानगह्वरां संविदं पराम् । एवं ध्यात्वा परामम्बां वहन्नाडीपुटक्रमात् ॥२५॥
आवाह्य चक्रमध्ये तु मुद्रया हि त्रिखण्डया । संस्थितां पूजयेत् तत्र श्रीपीठान्तर्निवासिनीम् ॥२६॥
मुद्राः संदर्शयेत् तत्र तर्पणैस्तु त्रिधा यजेत् । लयाङ्गं कल्पयेद् देहे देव्यास्तु परमेश्वरि ॥२७॥
गन्धपुष्पाक्षतादीनि देव्यै सम्यग् निवेदयेत् । उपचारैः षोडशभिः संपूज्य परदेवताम् ॥२८॥
तर्पणानि पुनर्दद्यात् त्रिवारं मूलविद्यया: । इति।

बहिर्याग में ध्यान—अपने शरीर में न्यास करके सर्वात्मस्वरूप होकर साधक जगत्त्रयविमोहिनी निरामय शक्ति का ध्यान करे। वह सभी व्यवहारों की साधिनी परासंवित् है। उदित हजारों सूर्य की आभा से युक्त है एवं अनार के फूल के समान उसकी कान्ति है। अड़हुल के फूल के वर्ण के समान एवं पद्मरागमणि की प्रभा के समान प्रभा वाली है। वह परमेश्वरी प्रस्फुटित कमल के समान और तप्त सोने के सदृश आभा वाली है। उसके चरण लाल कमल के समान हैं। पैरों में अमूल्य रत्नजटित मञ्जीर है। पैरों की अंगुलियों में सोने की अंगूठियाँ तेज से समन्वित हैं। केले के स्तम्भ के समान सुन्दर उसका ऊरुमण्डल है। लाल वस्त्र से सुशोभित उसका नितम्ब है। हीरा माणिक किङ्किणी-युक्त मेखला कटि में है। पतली कमर एवं निम्न नाभियुक्त उस परा देवी का उदर है। उसमें रोमराजिलतायें महाकुच-फलान्वित हैं। गोल घने उच्च कुचमण्डल शोभित हैं। नवरत्न प्रभा से राजित ग्रैवेयक और भूषण है। मनोरम कान तक फैला कपोलस्थल है। उदित सूर्य की प्रभा से युक्त सुन्दर कर्णफूल हैं। पूर्ण चन्द्रमा के समान उसका मुख है, कमल के समान ओष्ठ हैं एवं मछली के आकार की आँखें हैं। नयन कमलों के ऊपर भ्रुव कामदेव के धनुष के समान है। ललाट में सुन्दर रत्नाढ्य तिलक है। मोती माणिक्य जटित मुकुट में किङ्किणी है। प्रस्फुटित चन्द्रकला के समान सुन्दर मुकुट और तीन नेत्र हैं। प्रवालवल्ली के समान सुन्दर चार भुजाएँ हैं। चारो हाथों में ईख का धनुष, पुष्पबाण, पाश और अंकुश सुशोभित हैं। वह सभी वेदमयी, अम्बा, सर्वसौभाग्यसुन्दरी है। वह देवी सर्वकामप्रपूरणी एवं सर्वतीर्थमयी है। वह सर्वक्षेत्रमयी, दिव्य एवं सर्व देवस्वरूपिणी है। वह सर्वशास्त्रमयी एवं सभी आगमों से नमस्कृत है। वह सर्वज्ञानमयी एवं समस्त दानवों से सेवित है। वह सर्वानन्दमयी, ज्ञान के भाण्डारस्वरूपा एवं परा संविद् है। इस प्रकार पराम्बा का ध्यान करके प्रवहमान नासिकाछिद्र से पुष्पों में लाकर चक्र के मध्य में त्रिखण्डा मुद्रा से स्थापित करके उस पीठ पर पूजा करके मुद्राओं का प्रदर्शन करे एवं तर्पण करे। देवी के देह में लयाङ्ग कल्पित करे। गन्धाक्षत पुष्प सम्यक् रूप से निवेदित करे। परदेवता का पूजन षोडशोपचारों से करे। मूल विद्या से तीन बार तर्पण करे।

आसनाद्युपचारपूजा

ततो मूलविद्यान्ते श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामीति त्रिः पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा तर्पयाम्यन्तं सन्तर्प्य, बालान्ते श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एतत्ते आसनं नमः। एवं स्वागतं नमः। एतत्ते पाद्यं नमः। एष तेऽर्घ्यः स्वाहा। एतत्ते आचमनीयं सुधा। एष ते मधुपर्कः सुधा। एतत्ते आचमनीयं सुधा। इति समर्प्य, द्रांद्रींक्लींब्लूंसः हसखफ्रें क्रोंहसौंऐं इति नवबीजैर्नव मुद्राः प्रदर्श्य, स्वर्णपादुके उपनीयोत्तरतः स्नानमण्डपमानीय, रत्नसिंहासने संस्थाप्याघ्र्यादिचन्दनान्तान् उपचारान् निवेद्य, केशप्रसाधनमभ्यङ्गं गन्धामलकोद्वर्तनमुष्णोदकस्नानं पञ्चगव्यस्नानं पञ्चामृतस्नानं समाप्याङ्गप्रोञ्छनं केशसंस्कारं चिकुरशोधनं कृत्वा, भगवति एतत्ते स्नानीयं नमः। ततः एतत्ते वस्त्रयुग्मं नमः। इति वस्त्रयुग्मं परिधाप्य, नीराजनादिमङ्गलाचारान् विधाय भूषणमण्डले रत्नसिंहासने समुपवेश्य, मुकुटरत्नताटङ्कनासामौक्तिकग्रैवेयहारकेयूर-कङ्कणाङ्गुलीयकरत्नबन्धनमध्यबन्धनकाञ्चीकलापपादकटकनूपुरपादाङ्गुलीयकादिनानाजातीयनानादेशीयविविध-भूषणैर्भूषयित्वा, सर्वाङ्गे महामृगमदलेपनं कृत्वा, कण्ठे कह्लारमालां बद्ध्वा, चक्षुषोर्दिव्याञ्जनं रक्षाञ्जनं भाले आदर्श-दर्शनं छत्रचामरे समर्प्य, पूजामण्डपमानीय, पुनः कामेश्वराङ्के समुपवेश्य सर्वोपचारैः संपूज्य यथोपचारं प्रथमादिभिः सतर्प्य, पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा नैवेद्यताम्बूलान्तानि निवेद्य प्रार्थयेत्।

संविन्मये परे देवि परामृतरसप्रिये । अनुज्ञां देहि देवेशि परिवारार्चनाय मे ॥

इति पुष्पाञ्जलिपुरःसरमनुज्ञां प्राप्य श्रीचक्रात्मनोर्मध्ये त्रिकोणवृत्तचतुरस्रमण्डलं विलिख्य, तत्र तिथिमयीर्नित्याः पूजयेत्।

आसनादि उपचार पूजा—तदनन्तर 'कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि' मन्त्र से तीन पुष्पाञ्जलि देकर मूल मन्त्र के साथ तर्पयामि जोड़कर तर्पण करे। तदनन्तर ऐं क्लीं सौः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एतत्ते आसनं नमः, ऐं क्लीं सौः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एतत्ते स्वागतं नमः, ऐं क्लीं सौः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एतत्ते पाद्यं नमः, ऐं क्लीं सौः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एष ते अर्घ्यः स्वाहा, ऐं क्लीं सौः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एतत्ते आचमनीयं सुधा, ऐं क्लीं सौः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एष ते मधुपर्कः सुधा, ऐं क्लीं सौः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि एतत्ते आचमनीयं सुधा—इन मन्त्रों से क्रमशः आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, मधुपर्क एवं आचमनीय समर्पित करे। इसके बाद द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः हसख्फ्रें क्रों ह्सौं ऐं—इन नव बीजों से नव मुद्राओं को दिखावे। इसके बाद स्वर्णपादुका लेकर सबको क्रमशः स्नानमण्डप में ले आये।

रत्नसिंहासन पर बैठाकर अर्घ्यादि से लेकर चन्दनादि तक उपचार निवेदित करे। केशप्रसाधन, अभ्यङ्ग, गन्ध आमला-उबटन लगाकर गरम जल से स्नान पञ्चगव्य स्नान, पञ्चामृत स्नान कराकर अंगप्रोञ्छन, केशसंस्कार, चिकुर शोधन करे। तदनन्तर भगवति एतत्ते स्नानीयं नमः, एतत्ते वस्त्रयुग्मं नमः मन्त्रों से वस्त्रयुग्म धारण करावे। इसके बाद नीराजनादि मंगलाचार देकर भूषण मण्डप में लाकर रत्नसिंहासन पर बैठाकर मुकुट, रत्नकर्णफूल, नासामौक्तिक, ग्रैवेय, हार, केयूर, कङ्कण, अंगूठी, रत्नबन्धन, मध्यबन्धन, काञ्ची, कलाप, पादकटक, नूपुर, पैरों की अंगुलियों में अंगूठी आदि नाना प्रकार के नाना देशीय विविध भूषणों से भूषित करके सर्वांग में मृगमद का लेपन करे। कण्ठ में कल्हार की माला पहनावे। आँखों में दिव्य अंजन लगावे। रक्षा के लिये अंजन का टीका भाल में लगावे। दर्पण दिखावे। छत्र-चामर समर्पित करे। तदनन्तर पूजा मण्डप में लाकर पुनः कामेश्वर के अंक में बैठाकर सभी उपचारों से पूजा करे। यथा उपचारों से प्रथमादि से तर्पण करे। पुष्पाञ्जलि देकर नैवेद्य ताम्बूलादि देकर इस प्रकार प्रार्थना करे—

संविन्मये परे देवि परामृतरसप्रिये। अनुज्ञां देवि देवेशि परिवारार्चनाय मे।।

इस प्रकार पुष्पाञ्जलि के साथ आज्ञा प्राप्त करके श्रीचक्र और अपने मध्य में त्रिकोण वृत्त चतुरस्र मण्डल लिखे। उसमें तिथिनित्या की पूजा करे।

तिथिनित्याद्यर्चनक्रमः

प्रतिपत्प्रभृतिपूर्णिमापर्यन्तं कामेश्यादिनित्याः पूजयेत्। त्रिकोणमध्ये प्रधानदेवतात्वेन तत्तिथिनित्यां पूजयेत्। तद्रेखासु शेषाः पूज्याः, एवं शुक्लपक्षे। कृष्णपक्षे तु प्रतिपदादिदर्शान्तं चित्रादिकामेश्यन्तं पूजनीयम्। एता नित्याः प्रागेवोद्धृता ज्ञातव्याः। मध्ये श्रीविद्यामुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीश्रीपादुकां पूजयामि०। ततो मध्यबिन्दोरभितः अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु षडङ्गानि संपूज्य, मध्यत्रिकोणप्राक्त्रिकोणयोर्मध्ये देव्याः पृष्ठभागे त्रिपंक्त्या दिव्यौघसिद्धौघमानवौघान् संपूज्य, चरणत्रयविघया मानवौघान्ते स्वगुरुक्रमं संपूज्य, मध्यत्रिकोणरेखात्रये पञ्चपञ्च क्रमेण स्वरानुद्धाव्य, प्रागुक्तमन्त्रैः पञ्चदश नित्याः संपूज्य, विसर्गयुक्तमूलविद्यया मध्ये मूलदेवीं यष्ट्वा नवावरणपूजां कुर्यात्।

प्रतिपदा से पूर्णिमा तक कामेशी आदि नित्याओं का क्रम से पूजन करे। त्रिकोण के मध्य में प्रधान देवता के रूप में तिथिनित्या की पूजा करे। त्रिकोण की रेखाओं में शेष नित्याओं की पूजा करे। कृष्ण पक्ष में प्रतिपदा से अमावस्या तक चित्रा से प्रारम्भ करके कामेशी तक की पूजा करे। मध्य में श्रीविद्या का उच्चारण करके 'श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीश्रीपादुकां पूजयामि नमः' से पूजन करे। तब मध्य बिन्दु के चारो ओर आग्नेय ईशान नैर्ऋत्य वायव्य में मध्य में चारो दिशाओं में षडङ्ग पूजा करे। मध्य त्रिकोण एवं प्राक् त्रिकोण के मध्य में देवी के पीछे तीन पंक्तियों में दिव्यौघ, सिद्धौघ, मानवौघ गुरुओं की पूजा करे। चरणत्रय विद्या से मानवौघों की पूजा के बाद अपने गुरु की पूजा करे। मध्य त्रिकोण की तीनों रेखाओं में पाँच-पाँच के क्रम से स्वरों के साथ पूर्वोक्त मन्त्रों से पन्द्रह नित्याओं की पूजा करके विसर्गयुक्त मूल विद्या से मध्य में मूल देवी का पूजन करके नवावरण पूजा करे।

नवावरणपूजाविधानम्

तत्र भूबिम्बे प्रथमरेखायां पश्चिमादिदिक्षु वायव्यादिविदिक्षु च अणिमादिदशसिद्धिदेवता यजेत्। तत्रादौ ४ँ त्रैलोक्यमोहनचक्राय नमः। चतुरस्त्ररेखायै नमः। इति पुष्पं दत्त्वा। ४ँ अणिमासिद्धिदेवीश्री०। ४ँ लघिमासिद्धिदेवीश्री०। ४ँ महिमासिद्धिदेवीश्री०। ४ँ ईशित्वसिद्धिदेवीश्री०। ४ँ वशित्वसिद्धिदेवीश्री०। ४ँ प्राकाम्यसिद्धिश्री०। ४ँ भुक्तिसिद्धिश्री०। ४ँ इच्छासिद्धिश्री०। ४ँ रससिद्धिश्री०। ४ँ मोक्षसिद्धिश्री०। इति दशकं संपूज्य, चतुरस्त्रमध्यरेखायै नमः। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, आं ब्रह्माणीश्री०। ईं माहेश्वरीश्री०। ऊं कौमारीश्री०। ॠं वैष्णवीश्री०। लॄं वाराहीश्री०। ऐं इन्द्राणीश्री०। औं चामुण्डाश्री०। अः महालक्ष्मीश्री०। एताः पश्चिमादिद्वारेषु वायव्यादिकोणेषु च पूजयेत्। ततश्चतुरस्त्रान्त्यरेखायै नमः। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, ४ँ द्रां सर्वसंक्षोभणीमुद्राशक्तिश्री०। ४ँ द्रीं सर्वविद्राविणी०। ४ँ क्लीं सर्वाकर्षिणी०। ४ँ ब्लूं सर्ववशंकरी०। ४ँ सः सर्वोन्मादिनी०। ४ँ क्रों सर्वमहाङ्कुशा०। ४ँ हसखफ्रें सर्वखेचरी०। ४ँ हसौं सर्वबीजमुद्रा०। ४ँ ऐं सर्वयोनिमुद्रा०। ४ँ ऐंक्लींसौः सर्वत्रिखण्डामुद्रा०। अंआंसौः त्रिपुराचक्रेश्वरीनित्यश्री०। एताः प्रकटयोगिन्यस्त्रैलोक्यमोहनचक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा द्रामिति सर्वसंक्षोभिणीमुद्रां दर्शयेत्। ततः श्रीपात्रस्थबिन्दुना बिन्दौ प्रधानदेवतां त्रिवारं संतर्प्य योनिमुद्रां प्रदर्श्य पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥

इति समर्प्य द्वितीयावरणं पूजयेत्। अत्र तु त्रैलोक्यमोहनादिचक्रत्रये शङ्खोदकेन सर्वसौभाग्यदायकादिषट्चक्रे श्रीपात्रस्थजलेनाथवा शङ्खस्थवारिणैवेति सर्वत्र संप्रदायः। इति प्रथमावरणम्।

आवरण पूजा—प्रथम आवरण में भूपुर की प्रथम रेखा में पश्चिमादि दिशाओं एवं वायव्यादि कोणों में अणिमादि दश सिद्धिदेवताओं की पूजा करे। सर्वप्रथम ॐ ऐं ह्रीं श्रीं त्रैलोक्यमोहनचक्राय नमः, चतुरस्त्ररेखायै नमः से पुष्प प्रदान करके ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अणिमासिद्धदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लघिमासिद्धिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं महिमासिद्धिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईशित्वसिद्धिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वशित्व-सिद्धिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्राकाम्यसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भुक्तिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रससिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मोक्षसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः मन्त्रों से दश सिद्धिदेवियों का पूजन करके चतुरस्त्रमध्यरेखायै नमः से पुष्पाञ्जलि करे। तदनन्तर आं ब्रह्माणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ईं माहेश्वरीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऊं कौमारीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॠं वैष्णवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, लॄं वाराहीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ऐं इन्द्राणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, औं चामुण्डाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, अः महालक्ष्मीश्रीपादुकां पूजयामि नमः—इन मन्त्रों से मन्त्रोक्त देवियों का पश्चिम आदि द्वारों एवं वायव्यादि कोणों में पूजन करे। तदनन्तर चतुरस्त्रान्त्यरेखायै नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान कर इन मन्त्रों से पूजन करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रां सर्वसंक्षोभणीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रीं सर्वविद्राविणीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ब्लूं सर्ववशंकरीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सः सर्वोन्मादिनीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्रों सर्वमहाङ्कुशामुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें सर्वखेचरीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसौं सर्वबीजमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं सर्वयोनिमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंक्लींसौः सर्वत्रिखण्डामुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, अंआंसौः त्रिपुराचक्रेश्वरीनित्यश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर एताः प्रकटयोगिन्यस्त्रैलोक्यमोहनचक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु से पुष्पाञ्जलि प्रदान कर द्रां बीज से सर्वसंक्षो-भिणी मुद्रा दिखावे। तब श्रीपात्रस्थ जल से बिन्दु में प्रधान देवता का तीन बार तर्पण करे। योनि मुद्रा दिखाकर पुष्पाञ्जलि देकर प्रथम आवरण पूजा का मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं' इत्यादि श्लोक से पूजन का समर्पण करे।

अथ द्वितीयावरणम्। ४ँ सर्वाशापूरकषोडशदलचक्राय नमः। इति। पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा पश्चिमादिवामावर्तेन पूजयेत्। ४ँ अं कामाकर्षिणीनित्याकलाश्री०। एवं ४ँ आं बुद्ध्याकर्षिणी०। ४ँ इं अहंकाराकर्षिणी०। ४ँ ईं शब्दाकर्षिणी०। ४ँ उं स्पर्शाकर्षिणी०। ४ँ ऊं रूपाकर्षिणी०। ४ँ ऋं रसाकर्षिणी०। ४ँ ॠं गन्धाकर्षिणी०। ४ँ ऌं चित्ताकर्षिणी०। ४ँ ॡं धैर्याकर्षिणी०। ४ँ एं स्मृत्याकर्षिणी०। ४ँ ऐं नामाकर्षिणी०। ४ँ ओं बीजाकर्षिणी०। ४ँ औं आत्माकर्षिणी०। ४ँ अं अमृतामर्षिणी०। ४ँ अः शरीराकर्षिणी०। ४ँ ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरीचक्रेश्वरीनित्याश्री०। एता गुप्तयोगिन्यः सर्वाशापूरके चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य, द्रींमिति सर्वविद्राविणीं मुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहीति द्वितीयावरणार्चनम्' इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। इति द्वितीयावरणम्।

द्वितीय आवरण के पूजन में षोडश दल में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाशापूरकषोडशदलचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके पश्चिम दिशा से आरम्भ कर वामावर्त क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कामाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं बुद्ध्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं अहंकाराकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ईं शब्दाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं स्पर्शाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऊं रूपाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं रसाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॠं गन्धाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऌं चित्ताकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॡं धैर्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं स्मृत्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नामाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं बीजाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं आत्माकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृतामर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अः शरीराकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरीचक्रेश्वरीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर 'एता गुप्तयोगिन्यः सर्वाशापूरके चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु' बोलकर पूजा का समर्पण करके द्रीं से सर्वविद्राविणी मुद्रा प्रदर्शित करते हुये मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं मे' श्लोक बोलकर पुष्पाञ्जलि प्रदान करे।

अथ तृतीयावरणम्। ४ँ सर्वसंक्षोभणाष्टदलचक्राय नमः। अनङ्गकुसुमाद्यास्तु पूर्वादिदिक्षु अग्नेयादिविदिक्षु च पूजयेत्। ४ँ कं ५ अनङ्गकुसुमादेवीश्री०। ४ँ चं ५ अनङ्गमेखला०। ४ँ टं ५ अनङ्गमदना०। ४ँ तं ५ अनङ्गमदनातुरा०। ४ँ पं ५ अनङ्गरेखा०। ४ँ यं ४ अनङ्गवेगिनी०। ४ँ शं ४ अनङ्गाङ्कुशा०। ४ँ ळं क्षं अनङ्गमालिनी०। ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीचक्रेश्वरीनित्याश्री०। एता गुप्ततरयोगिन्यः सर्वसंक्षोभणे चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य, क्लीमित्याकर्षिणीमुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टिसिद्धिं मे देहीत्यादि तृतीयावरणार्चनम्' इति पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत्। इति तृतीयावरणम्।

तृतीय आवरण में अष्टदल कमल में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभणाष्टदलचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके पूर्व आदि दिशाओं तथा आग्नेयादि कोणों में अनंगकुसुमा आदि पूजन इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं अनङ्गकुसुमादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं अनङ्गमेखलादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं अनङ्गमदनादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं अनङ्गमदनातुरादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं अनङ्गरेखादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं अनङ्गवेगिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं अनङ्गाङ्कुशादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ळं क्षं अनङ्गमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर एता गुप्ततरयोगिन्यः सर्वसंक्षोभणे चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु' बोलकर पूजा का समर्पण करके क्लीं से आकर्षिणी मुद्रा दिखाकर मूलोक्त 'अभीष्टिसिद्धिं मे' श्लोक से पुष्पाञ्जलि समर्पित कर तृतीय आवरण की पूजा का समापन करे।

अथ चतुर्थावरणम्। पश्चिमादिवामावर्तेन पूजयेत्। ४ँ सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशारचक्राय नमः। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, ४ँ अं सर्वसंक्षोभिणीश्री०। ४ँ इं सर्वविद्राविणी०। ४ँ उं सर्वाकर्षिणी०। ४ँ ऋं सर्वाह्लादिनी०। ४ँ लृं सर्वसंमोहिनी०। ४ँ एं सर्वस्तम्भिनी०। ४ँ ऐं सर्वजृम्भिणी०। ४ँ ओं सर्ववशंकरी०। ४ँ औं सर्वरञ्जिनी०। ४ँ हं सर्वोन्मादिनी०। ४ँ यं सर्वार्थसाधनी०। ४ँ रं सर्वसंपत्प्रपूरणी०। ४ँ लं सर्वमन्त्रमयी०। ४ँ वं सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी०। इति संपूज्य, ऐंह्लींश्रीं हैं हक्लीं हसौः त्रिपुरवासिनीचक्रेश्वरीनित्याश्री०। एताः संप्रदाययोगिन्यः सर्वसौभाग्यदायके चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य, ब्लूं सर्ववशंकरीमुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहीत्यादि चतुर्थावरणार्चनम्' इति पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत्। इति चतुर्थावरणम्।

चतुर्थ आवरण के पूजन में चतुर्दशार चक्र में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशारचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके पश्चिम दिशा से वामावर्त क्रम से इनका पूजन करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं सर्वसंक्षोभिणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इं सर्वविद्राविणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उं सर्वाकर्षिणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऋं सर्वाह्लादिनीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लृं सर्वसंमोहिनीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं एं सर्वस्तम्भिनीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं सर्वजृम्भिणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ओं सर्ववशंकरीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं औं सर्वरञ्जिनीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हं सर्वोन्मादिनीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं सर्वार्थसाधनीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रं सर्वसंपत्प्रपूरणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लं सर्वमन्त्रमयीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वं सर्वद्वन्द्वक्षयंकरीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इस प्रकार पूजन करके ऐंह्रींश्रीं हैं हक्लीं हसौः त्रिपुरवासिनीचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से त्रिपुरवासिनी चक्रेश्वरी नित्या का पूजन करके 'एताः संप्रदाययोगिन्यः सर्वसौभाग्यदायके चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु' बोलकर पूजा का समर्पण करके ब्लूं से सर्ववशंकरी मुद्रा प्रदर्शित करते हुये मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं मे' श्लोक को बोलते हुये पुष्पाञ्जलि प्रदान चतुर्थ आवरण की पूजा समाप्त करे।

अथ पञ्चमावरणम्। (बहिर्दशारचक्रे) पश्चिमादिवामावर्तेन पूजयेत्। तत्र ४ँ सर्वार्थसाधकबहिर्दशारचक्राय नमः। इति पुष्पं दत्त्वा, ४ँ तं सर्वसिद्धिप्रदादेवीश्री०। ४ँ थं सर्वसंपत्प्रदा०। ४ँ दं सर्वप्रियङ्करी०। ४ँ धं सर्वमङ्गलकारिणी०। ४ँ नं सर्वकामप्रदा०। ४ँ टं सर्वदुःखविमोचिनी०। ४ँ ठं सर्वमृत्युप्रशमनी०। ४ँ डं सर्वविघ्नविनाशिनी०। ४ँ ढं सर्वाङ्गसुन्दरी०। ४ँ णं सर्वसौभाग्यदायिनी०। ४ँ हसैं हसक्लीं हसौः त्रिपुराश्री। चक्रेश्वरीनित्याश्री०। एताः कुलकौलयोगिन्यः सर्वार्थसाधके चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य, सः इति सर्वोन्मादिनीमुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहीत्यादि पञ्चमावरणार्चनम्' इति पुष्पाञ्जलिं निवेदयेत्। इति पञ्चमावरणम्।

पञ्चम आवरण की पूजा में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वार्थसाधकबहिर्दशारचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके बहिर्दशार चक्र में पश्चिम से प्रारम्भ कर वामावर्त क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं सर्वसिद्धिप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं थं सर्वसंपत्प्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दं सर्वप्रियङ्करीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं धं सर्वमङ्गलकारिणीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नं सर्वकामप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं सर्वदुःखविमोचिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ठं सर्वमृत्युप्रशमनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं डं सर्वविघ्नविनाशिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ढं सर्वाङ्गसुन्दरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं णं सर्वसौभाग्यदायिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसैं हसक्लीं हसौः त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नमः, चक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर एताः कुलकौलयोगिन्यः सर्वार्थसाधके चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु' बोलकर पूजा का समर्पण करके सः से सर्वोन्मादिनी मुद्रा दिखाते हुये मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं मे' इत्यादि श्लोक बोलकर पुष्पाञ्जलि समर्पित करके पञ्चम आवरण की पूजा का समापन करे।

अथ षष्ठावरणम्। अन्तर्दशारचक्रे पश्चिमादिविलोमेन पूजयेत्। ४ँ सर्वरक्षाकरान्तर्दशारचक्राय नमः। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, ४ँ चं सर्वज्ञादेवीश्री०। ४ँ छं सर्वशक्ति०। ४ँ जं सर्वैश्वर्यप्रदा०। ४ँ झं सर्वज्ञानमयी०। ४ँ ञं सर्वव्याधिविनाशिनी०। ४ँ कं सर्वाधारस्वरूपा०। ४ँ खं सर्वपापहरा०। ४ँ गं सर्वानन्दमयी०। ४ँ घं सर्वरक्षास्वरूपिणी०। ४ँ ङं सर्वेप्सितफलप्रदा०। ४ँ ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीचक्रेश्वरीनित्या०। एता निगर्भयोगिन्यः सर्वरक्षाकरे चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य, क्रों इत्यङ्कुशमुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहीत्यादि तत्षष्ठावरणार्चनम्' इति पुष्पाञ्जलिं निवेदयेत्। इति षष्ठावरणम्।

षष्ठ आवरण के पूजन क्रम में अन्तर्दशार चक्र में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरक्षाकरान्तर्दशारचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके पश्चिम से आरम्भ कर विलोम क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं सर्वज्ञादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं छं सर्वशक्तिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं जं सर्वैश्वर्यप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं झं सर्वज्ञानमयीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ञं सर्वव्याधिविनाशिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं सर्वाधारस्वरूपादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं खं सर्वपापहरादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं गं सर्वानन्दमयीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं घं सर्वरक्षास्वरूपिणीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ङं सर्वेप्सितफलप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनीचक्रेश्वरीनित्यादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर एता निगर्भयोगिन्यः सर्वरक्षाकरे चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु' बोलकर पूजा का समर्पण करके क्रों अङ्कुश मुद्रा दिखाते हुये मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं मे' श्लोक का उच्चारण कर पुष्पाञ्जलि प्रदान करके षष्ठ आवरण की पूजा का समापन करे।

अथ सप्तमावरणम्। अष्टारचक्रे प्रागादिवामावर्तेन वशिन्याद्याः पूजयेत्। तत्र ४ँ सर्वरोगहराष्टारचक्राय नमः। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, ४ँ अं १६ ब्लूँ वशिनीवाग्देवताश्री०। ४ँ कं ५ कलह्रीं कामेश्वरीवाग्देवताश्री०। ४ँ चं ५ नवलीं मोदिनीवाग्देवता०। ४ँ टं ५ य्लूं विमलावाग्देवताश्री०। ४ँ तं ५ जम्रीं अरुणावाग्देवताश्री०। ४ँ पं ५ हसलवयूँ जयिनीवाग्देवता०। ४ँ यं ४ झमरयूँ सर्वेश्वरीवाग्देवता०। ४ँ शं ४ क्ष्म्रीं कौलिनीवाग्देवता०। ह्रींश्रींसौः त्रिपुरासिद्धाचक्रेश्वरीनित्याश्री०। एता रहस्ययोगिन्यः सर्वरोगहरे चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य, हसखफ्रें इति सर्वखेचरीमुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहीत्यादि सप्तमावरणार्चनम्' इति पुष्पाञ्जलिं निवेदयेत्। इति सप्तमावरणम्।

सप्तम आवरण के पूजन क्रम में अष्टार चक्र में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरोगहराष्टारचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके पूर्व से आरम्भ कर वामावर्त क्रम से वशिनी आदि की पूजा इस प्रकार करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः ब्लूँ वशिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं कलह्रीं कामेश्वरीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं नवलीं मोदिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं य्लूं विमलावाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं जम्रीं अरुणावाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पं फं भं बं मं हसलवयूँ जयिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं झमरयूँ सर्वेश्वरी-वाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं क्ष्म्रीं कौलिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर ह्रींश्रींसौः त्रिपुरासिद्धाचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजन करके एता रहस्ययोगिन्यः सर्वरोगहरे चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु' बोलकर पूजा का समर्पण करके हसखफ्रें से सर्वखेचरी मुद्रा दिखाते हुये मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं मे' इत्यादि श्लोक का उच्चारण करते हुये पुष्पाञ्जलि निवेदित करके सप्तम आवरण की पूजा का समापन करे।

अथाष्टमावरणम्। त्रिकोणाग्रदक्षवामकोणेषु तद्बहिरन्तरालचक्रे। तत्र ४ँ सर्वसिद्धिप्रदान्तरालचक्राय नमः। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, द्रांद्रींक्लींब्लूंसः यांरांलांवांशां जं जृम्भणेभ्यः कामेश्वरकामेश्वरीबाणेभ्यो नमः। ४ँ द्रां ५ यां

५ धंथं समोहनकामेश्वरकामेश्वरीधनुर्भ्यां नमः। ४ँ द्रां ५ यां ५ आंह्रीं वशीकरणकामेश्वरकामेश्वरीपाशाभ्यां नमः। ४ँ द्रां ५ यां ५ क्रोंह्रीं स्तम्भनकामेश्वरकामेश्वर्यङ्कुशाभ्यां नमः। ४ँ ऐं अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रेशनाथात्मके जाग्रद्दशाधिष्ठायके इच्छाशक्त्यात्मकरुद्रात्मकशक्तिश्रीकामेश्वरीदेवी०। ४ँ क्लीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके स्वप्नदशाधिष्ठायके ज्ञानशक्त्यात्मकविष्ण्वात्मकशक्तिश्रीवज्रेश्वरीदेवीश्री०। ४ँ सौः सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके सुषुप्तिदशाधिष्ठायके क्रियाशक्त्यात्मकब्रह्मात्मकशक्तिश्रीभगमालिनीदेवी०। ४ँ हस्त्रैं हसकलरीं हस्त्रौंः त्रिपुराम्बा-चक्रेश्वरीनित्याश्री०। एता अतिरहस्ययोगिन्यः सर्वसिद्धिप्रदे चक्रे समुद्रा इत्यादिना समर्प्य, हसौं इति सर्वबीजमुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहीत्यादि अष्टमावरणार्चनम्' इति निवेदयेत्। इत्यष्टमावरणम्।

अष्टम आवरण के पूजन क्रम में त्रिकोण के आगे दक्ष-वाम कोणों में एवं उसके बाहर अन्तराल चक्र में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदान्तरालचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके इन युगलों का पूजन करे—द्रांद्रींक्लींब्लूंसः यांरांलांवांशां जं जृम्भणेभ्यः कामेश्वरकामेश्वरीबाणेभ्यो नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्रीं द्रुं द्रैं द्रौं यां यीं यूं यैं यौं धंथं समोहनकामेश्वरकामेश्वरीधनुर्भ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्रीं द्रुं द्रैं द्रौं यां यीं यूं यैं यौं आंह्रीं वशीकरणकामेश्वरकामेश्वरीपाशाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्रीं द्रुं द्रैं द्रौं यां यीं यूं यैं यौं क्रोंह्रीं स्तम्भनकामेश्वरकामेश्वर्यङ्कुशाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रेशनाथात्मके जाग्रद्दशाधिष्ठायके इच्छाशक्त्यात्मकरुद्रात्मकशक्तिश्रीकामेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके स्वप्नदशाधिष्ठायके ज्ञानशक्त्यात्मकविष्ण्वात्मकशक्तिश्रीवज्रेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौः सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके सुषुप्तिदशाधिष्ठायके क्रियाशक्त्यात्पकब्रह्मात्मकशक्तिश्रीभगमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्त्रैं हसकलरीं हस्त्रौंः त्रिपुराम्बाचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर एता अतिरहस्ययोगिन्यः सर्वसिद्धिप्रदे चक्रे समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः संपूजितास्तुष्टा वरदाः सन्तु' बोलकर पूजा का समर्पण करके हसौं से सर्वबीज मुद्रा प्रदर्शित करते हुये मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं मे' इत्यादि श्लोक का उच्चारण करके पुष्पाञ्जलि निवेदित कर अष्टम आवरण की पूजा का समापन करे।

अथ नवमावरणम्। ऐंक्लींसौः मूलं सर्वानन्दमयबैन्दवचक्राय नमः। इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, ब्रह्मचक्रे श्रीमदुड्याणपीठे चर्यानन्दनाथात्मके तुरीयदशाधिष्ठायके परब्रह्मात्मकशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीश्री०। ४ँ हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौः त्रिपुरभैरवीचक्रेश्वरीनित्याश्री०। एषा परापररहस्ययोगिनी सर्वानन्दमये बैन्दवे चक्रे सर्वचक्रेश्वरी सर्वमन्त्रेश्वरी सर्वपीठेश्वरी सर्वविद्येश्वरी सर्ववागीश्वरी सर्वसिद्धीश्वरी सर्वजगदुत्पत्तिमातृका सचक्रा ससिद्धिः सायुधा सवाहना सशक्तिका सालङ्कारा सपरिवारा सर्वोपचारैः संपूजिता तुष्टा वरदास्तु इति समर्प्य, ऐं इति सर्वयोनिमुद्रां प्रदर्श्य 'अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं नवमावरणार्चनम्' इति निवेदयेत्। इति नवमावरणम्।

नवम आवरण के पूजन क्रम में बिन्दु चक्र में ऐंक्लींसौः मूलं सर्वानन्दमयबैन्दवचक्राय नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करके क्रमशः इनका पूजन करे—ब्रह्मचक्रे श्रीमदुड्याणपीठे चर्यानन्दनाथात्मके तुरीयदशाधिष्ठायके परब्रह्मात्मकशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौः त्रिपुरभैरवीचक्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर एषा परापररहस्ययोगिनी सर्वानन्दमये बैन्दवे चक्रे सर्वचक्रेश्वरी सर्वमन्त्रेश्वरी सर्वपीठेश्वरी सर्वविद्येश्वरी सर्ववागीश्वरी सर्वसिद्धीश्वरी सर्वजगदुत्पत्तिमातृका सचक्रा ससिद्धिः सायुधा सवाहना सशक्तिका सालङ्कारा सपरिवारा सर्वोपचारैः संपूजिता तुष्टा वरदास्तु से पूजा समर्पण करके ऐं से सर्वयोनि मुद्रा दिखाते हुये मूलोक्त 'अभीष्टसिद्धिं मे' इत्यादि श्लोक बोलकर पुष्पाञ्जलि निवेदित करके पूजा का समापन करे।

समयदेवतार्चनम्

४ँ ऐंक्लींसौः आंईंऊंयांरांलांवांशां कामेश्वरीच्छाकामफलप्रदे सर्वसत्त्ववशंकरि जगत्क्षोभकरि हूं ३

द्रांद्रींक्लींब्लूंसः हसौं क्लीं ऐं कामेश्वरीसमयदेवताश्री०। इति विद्यया देव्या मूलाधारे पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत्। ४ँ ह्रीं सर्वकार्यसाधके वज्रपञ्जरमध्यगते ह्रीं क्लिन्ने ऐंक्रों नित्यमदद्रवे ह्रीं वज्रेश्वरीसमयदेवताश्री०। इति देव्या हृदि पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत्। ४ँ भगमालिनीविद्यामुच्चार्य भगमालासमयदेवताश्री०। इति बिन्दौ पुष्पाञ्जलिः। ४ँ क्लीं भगवति ब्लूं नित्याकामेश्वरि स्त्रीं सर्वसत्त्ववशंकरि सः त्रिपुरभैरवि ऐं विच्चे त्रिपुरसुन्दरीसमयदेवताश्री०। इति शिरसि पुष्पाञ्जलिः। ४ँ मूलविद्यया सप्तधा शिरसि संतर्प्य, ४ँ ऐंक्लींसौः श्रीविद्याषोडशाक्षरीमुच्चार्य सप्तदशीं कलां यष्ट्वा प्रागुक्तां कामकलां भावयेत्। 'कलारूपमिदं देवि प्रोक्तमेतत् परात्परम्' इत्युक्तरीत्या स्मृत्वा, वटुकयोगिनीगणपतिक्षेत्रपालेभ्यो बलीनुत्सृज्य सर्वभूतबलिं तन्मन्त्रेणोत्सृज्य, ततो नैवेद्यपात्रं साधारं सान्नं संस्थाप्य धूपदीपौ प्रदर्शयेत्, अस्त्रेण संप्रोक्ष्य गन्धादिभिरभ्यर्च्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य 'ऐं जगद्ध्वनिमन्त्रमातः स्वाहा' इति घण्टां संपूज्य वामकरे गृहीत्वा वादयन् नीचैर्धूपं समर्पयेत्।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः आं ईं ऊं यां रां लां वां शां कामेश्वरि इच्छाकामफलप्रदे सर्वसत्त्ववशंकरि जगत्क्षोभकरि हूं ऐं क्लीं सौः द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः ह्सौं क्लीं ऐं कामेश्वरीसमयदेवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः—इस विद्या से देवी को मूलाधार में पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं सर्वकार्यसाधिके वज्रेश्वरि वज्रपंजरमध्यगते ह्रीं क्लिन्ने ऐं क्रों नित्यमदद्रवे ह्रीं वज्रेश्वरीसमयदेवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः—इस मन्त्र से हृदय में देवी को पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भगमालिनी विद्या कहकर भगमालासमयदेवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः—इससे बिन्दु (आज्ञा चक्र) में देवी को पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं भगवति ब्लूं नित्याकामेश्वरि स्त्रीं सर्वसत्त्ववशंकरि सः त्रिपुरभैरवि ऐं विच्चे त्रिपुरसुन्दरीसमयदेवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः—इससे शिर पर पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मूल विद्या को सात बार कहकर शिर पर तर्पण करे। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौं षोडशाक्षरी श्रीविद्या का उच्चारण करके सप्तदशी कला का यजन कर पूर्वोक्त कामकला की भावना करे। इस प्रकार स्मरण करके वटुक, योगिनी, गणपति, क्षेत्रपाल को बलिप्रदान करे। तब सर्वभूत बलि मन्त्र से समस्त भूतों को बलि प्रदान करे। तब नैवेद्य को आधार पर अन्नसहित रखकर धूप-दीप दिखावे। अस्त्र मन्त्र से प्रोक्षण करे। गन्धादि से पूजा करे। धेनुमुद्रा दिखावे। 'ऐं जगद्ध्वनिमन्त्रमातः स्वाहा' से घण्टा की पूजा करे एवं बाँयें हाथ से घंटी बजाते हुए मन्त्रपूर्वक धूप समर्पित करे।

मूलदेव्यै धूपदीपनैवेद्यादि आरात्रिकदानम्

वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥
इति पठित्वा समर्पयेत्।

सुप्रकाशो महादीपः सर्वत्र तिमिरापहः। सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

इत्युच्चैर्दीपं समर्पयेत्। ततो नैवेद्यमस्त्रेण संप्रोक्ष्य, त्रिशूलमुद्रया संरक्ष्य, वाय्वादिबीजैः शोषणादिकं विधाय, सुरभिमुद्रयामृतीकृत्य, गन्धाद्यैरलंकृत्य महत्तरनैवेद्यं स्वाहान्तेन मूलेन समर्पयेत्।

नैवेद्यं षड्रसोपेतं पञ्चभक्ष्यसमन्वितम्। सुधारसमहोदारं शिवेन सह गृह्यताम्॥

इत्यङ्गुष्ठशिरसि कनिष्ठानामायोगात्। तत्र वामकरेण विकचोत्पलनिभां ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य दक्षहस्तेन प्राणादिमुद्राः प्रदर्शयेत्। प्राणाय स्वाहा, इत्यादिना समर्प्य स्वगुरूक्तक्रमेण तत्त्वत्रयमन्त्रैः आत्मतत्त्वाधिपतिः श्रीकामेश्वरी तृप्यतु। एवं विद्यातत्त्वाधिपतिः, शिवतत्त्वाधिपतिः, सर्वतत्त्वाधिपतिः। ततः कामेश्वरस्तृप्यतु इत्यादि चतुस्तत्त्वैः संतर्प्य, ऐं परायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नैवेद्यं स्वाहा। क्लीं परायै०। सौः परायै०। इति नैवेद्यं समर्प्य, 'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' इत्युक्त्वा प्राणादिमुद्राः प्रदर्श्य, प्राणाय स्वाहा इत्यादि पञ्चाहुतीर्निवेद्य, जवनिकामधः कृत्वा मूलमन्त्रं स्मरन् यावत् तृप्तिभोजनं तावदाकाङ्क्षमाणः क्षणं विश्रमेत्। अत्र वटुकादिबलिर्नैवेद्यात् पूर्वमित्यस्मत्संप्रदायः। केचित्तु नैवेद्योत्तरं वदन्ति। तत्तु यथासंप्रदायं कार्यमिति। मध्ये पानीयमुत्तरापोशनं करशुद्ध्यादिमुखवाससमर्पणान्तं

कुर्यात्। अत्र नैवेद्यसमर्पणानन्तरं नित्यहोमं कृत्वा बलितर्पणादि कुर्यात्। ततः कुलदीपं निवेदयेत्। शालिगोधूमादिपिष्टेन गुडेन सजीरकेण शालिद्वितीयेन सार्धं त्रिकोणाकारान् डमरुकरूपेण नव पञ्च त्रीन् वा विधाय घृतेन पाचयित्वा, ताम्रादिभाजनेऽष्टदलादि तत्संख्यया मण्डलं विधाय, अष्टदलं चेद्वशिन्याद्यष्टकं मध्ये देवीं यष्ट्वा, पञ्च चेत् कामेश्वर्यादि भैरवीर्यजेत्। त्रिकोणं चेद् गुणत्रयात्मिकां परेश्वरीं यजेत्। गुह्यमालिनीविद्यया फलपुष्पताम्बूलसुवर्णादीनि निक्षिपेत्। 'ऐं महादीपतेजोवति अमोघाज्ञाप्रभामालिनि भगा' इयं गुह्यमालिनी। ततो रत्नेश्वर्याभिमन्त्र्य पूजयित्वा दीपभाजनमुद्धृत्य सामयिकश्लोकद्वयं पठन् देव्युपरि नवधा पञ्चधा त्रिधा वा भ्रामयेत्।

अन्तस्तेजो बहिस्तेज एकीकृत्य निरन्तरम्। अध ऊर्ध्वक्रमेणैव कुलदीपं निवेदयेत्॥
समस्तचक्रचक्रेशीयुते देवि नवात्मिके। आरात्रिकमिदं भद्रे गृहाण मम सिद्धये॥

इत्याभ्यां श्लोकाभ्यां लवणनिम्बपत्रादिना दृष्टिमुत्तार्य चतुस्तत्पिण्डादिभिरपि। ततो मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, अस्याः—शिरसि आनन्दभैरवाय ऋषये नमः। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीत्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः। गुह्ये वाग्भवकूटबीजाय नमः। पादयोः शक्तिकूटशक्तये नमः। नाभौ कामराजकूटकीलकाय नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, बालाबीजत्रयद्विरावृत्त्या पञ्चदशीकूटत्रय-द्विरावृत्त्या महाषोडशीखण्डत्रयद्विरावृत्त्या च त्रिधा षडङ्गन्यासत्रयं विधाय, सर्वज्ञायै हृदयाय नमः इत्यादिमन्त्रैरपि षडङ्गन्यासं विधाय मूलविद्यान्यासान् कुर्यात्।

मूल देवी को धूप समर्पित करने का मन्त्र इस प्रकार है—

वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

उपर्युक्त मन्त्र से धूप समर्पित करने के पश्चात् निम्न मन्त्र पढ़ते हुये दीप समर्पण करे—

सुप्रकाशो महादीपः सर्वत्र तिमिरापहः। सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

तदनन्तर नैवेद्य को फट् से प्रोक्षण करके त्रिशूल मुद्रा से संरक्षण करे। वाय्वादि बीज यं आदि से शोषणादि करे। सुरभि मुद्रा से अमृतीकरण करे। गन्धादि से अलंकृत करके इस महत्तर नैवेद्य को मूल मन्त्र के साथ स्वाहा जोड़कर अंगुष्ठ के ऊपर कनिष्ठा एवं अनामा के योग से समर्पित करते हुये निम्न मन्त्र का उच्चारण करे—

नैवेद्यं षड्रसोपेतं पञ्चभक्ष्यसमन्वितम्। सुधारसमहोदारं शिवेन सह गृह्यताम्।।

तदनन्तर बाँयें हाथ से विकच उत्पल के समान ग्रास मुद्रा दिखाकर दाँयें हाथ से प्राणादि पाँच मुद्रा दिखावे। प्राणाय स्वाहा इत्यादि से समर्पित करे। गुरु के उपदेशानुसार तत्त्वत्रय मुद्रा से आत्मतत्त्वाधिपतिः श्रीकामेश्वरी तृप्यतु, विद्या-तत्त्वाधिपतिः श्रीकामेश्वरी तृप्यतु, शिवतत्त्वाधिपतिः श्रीकामेश्वरी तृप्यतु, सर्वतत्त्वाधिपतिः श्रीकामेश्वरी तृप्यतु कहकर तर्पण करे। तब कामेश्वरस्तृप्यतु इत्यादि से चार तत्त्वों का तर्पण करे। 'ऐं परायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नैवेद्यं स्वाहा, क्लीं परायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नैवेद्यं स्वाहा, सौ परायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नैवेद्यं स्वाहा से नैवेद्य समर्पित करे। 'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' कहकर प्राणादि मुद्रा दिखावे। प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा से पञ्चाहुती निवेदित करे। देवी को परदे के अन्दर करके मूल मन्त्र का स्मरण करते हुये तृप्तिपर्यन्त भोजन तक क्षण भर विश्राम करे। यहाँ पर नैवेद्य-समर्पण के पूर्व बटुकादि को बलि प्रदान करे—यह हम लोगों का सम्प्रदाय है। कुछ लोग नैवेद्य के बाद ऐसा करने को कहते हैं। यहाँ पर यथासम्प्रदाय बलि प्रदान करना चाहिये। मध्य में जल उत्तरापोशन करशुद्धि मुखवस्त्र आदि समर्पण करे। नैवेद्य समर्पण के बाद नित्य होम करके बलि प्रदान करे। इसके बाद कुलदीप निवेदित करे। कुलदीप को चावल-गेहूँ के पिष्ट, गुड़, जीरा से एक; शालिपिष्ट से द्वितीय, साढ़े तीन कोणाकार डमरू रूप के नव, पाँच या तीन दीपक बनाकर घी से भरे। ताम्बे आदि के पात्र में दीपक की संख्या के बराबर मण्डल बनावे। अष्टदल के मध्य में वशिन्यादि के मध्य देवी का पूजन कर कामेश्वरी आदि पाँच भैरवियों की पूजा करे। यदि त्रिकोण हो तो गुणत्रयात्मिका परमेश्वरी की पूजा करे। गुह्यमालिनी विद्या से फल-फूल,

पान-सुवर्णादि निक्षिप्त करे। 'ऐं महादीपतेजोवति अमोघाज्ञाप्रभामालिनि भगा'—यह गुह्यमालिनी मन्त्र है। तब रत्नेश्वरी विद्या से अभिमन्त्रित करके पूजा करके दीपपात्र को लेकर निम्नांकित सामयिक श्लोकद्वय का पाठ करते हुए देवी के ऊपर नव, पाँच या तीन बार घुमावे—

अन्तस्तेजो बहिस्तेज एकीकृत्य निरन्तरम्। अध ऊर्ध्वक्रमेणैव कुलदीपं निवेदयेत्।।
समस्तचक्रचक्रेशीयुते देवि नवात्मिके। आरात्रिकमिदं भद्रे गृहाणा मम सिद्धये।।

इन दोनों श्लोकों से नमक, नीम की पत्ती आदि से दृष्टिदोष उतार कर आरती करे। उसके बाद पिण्ड के चारो ओर भी आरती करे। तब मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। तदनन्तर शिरसि आनन्द भैरवाय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदये श्रीत्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः, गुह्ये वाग्भवकूटबीजाय नमः, पादयोः शक्तिकूटशक्तये नमः, नाभौ कामराजकूटकीलकाय नमः से न्यास करके अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर बाला बीजत्रय की दो आवृत्ति, पञ्चदशी कूटत्रय की दो आवृत्ति एवं महाषोडशी खण्डत्रय की दो आवृत्ति से तीन बार षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर सर्वज्ञायै हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्रों से भी षडङ्ग न्यास करके मूल विद्या से न्यास करे।

विद्याजपार्थं मन्त्रन्यासः

ज्ञानार्णवे—'ततो न्यासादिकं कुर्यात् संनाहं नु शरीरके' इत्यारभ्य 'कुमार्या त्रिपुरेशान्याः षडङ्गानि च पूर्ववत्' इत्यन्तमुक्त्वा,

अथ वक्ष्ये महेशानि श्रीविद्यान्यासमुत्तमम्। संपूर्णां चिन्तयेद्विद्यां ब्रह्मरन्ध्रेऽरुणप्रभाम् ॥१॥
स्रवत्सुधाषोडशार्णां महासौभाग्यदां न्यसेत्। वामांसदेशे सौभाग्यदण्डिनीं भ्रामयेत् ततः ॥२॥
रिपुजिह्वाग्रहां मुद्रां पादमूले प्रविन्यसेत्। त्रैलोक्यस्य त्वहं कर्ता ध्यात्वैवं तिलकं न्यसेत् ॥३॥
संपूर्णामेव वदने वेष्टनत्वेन विन्यसेत्। पुनः पूर्णां च वदने गलोर्ध्वे विन्यसेत् ततः ॥४॥
पुनः संपूर्णया देहे वेष्टनेन च विन्यसेत्। व्यापकान्ते योनिमुद्रां मुखे क्षिप्त्वाभिवन्द्य च ॥५॥
श्रीविद्यापूर्णरूपोऽयं न्यासः सौभाग्यवर्धनः। ब्रह्मरन्ध्रे क्षिपेद् देवि मणिबन्धे न्यसेत् ततः ॥६॥
ललाटेऽनामिकां कुर्यातोडशार्णां स्मरन् बुधः। त्रैलोक्यस्य तु कर्ताहमिति सम्यग् विभावयेत् ॥७॥
संमोहनाख्यो देवेशि न्यासोऽयं क्षोभकारकः। त्रैलोक्यमरुणं ध्यायन् श्रीविद्यां मनसि स्मरन् ॥८॥
पादयोर्जङ्घयोर्जान्वोः कट्योरन्धुनि मस्तके। नाभौ पार्श्वद्वये चैव स्तनयोरंसयोस्तथा ॥९॥
कर्णयोर्ब्रह्मरन्ध्रे च वदनेऽन्धुनि पार्वति। ततः कर्णप्रदेशे तु करवेष्टनयोः क्रमात् ॥१०॥
संहारोऽयं महान्यासो बीजैः षोडशभिः क्रमात्। श्रीविद्यायाः षोडशार्णैर्न्यासैर्विश्वेश्वरो भवेत् ॥११॥

इत्यादिरीत्या मन्त्रन्यासान् विधाय ध्यात्वा, प्रागुक्तकुरुकुल्लादिस्मरणपूर्वकं शतादिसंख्यया मूलविद्यां जप्त्वा गुह्यातिगुह्येति च निवेदयेत्। भूयोऽपि मुद्रानवकं प्रदश्य सहस्राक्षर्या पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा स्तोत्रैः स्तुत्वा बहुशः प्राणायामादिभिः प्रार्थयेत्।

ज्ञानार्णव में कहा गया है कि श्रीविद्या का न्यास इस प्रकार करना चाहिये—सम्पूर्ण विद्या का ब्रह्मरन्ध्र में अरुण प्रभायुक्त रूप में चिन्तन करे। अमृत बरसाते हुये महासौभाग्यप्रद सोलह वर्णों से न्यास करे। तदनन्तर बाँयें कंधे पर सौभाग्यदण्डिनी को घुमावे। रिपुजिह्वा महामुद्रा का न्यास पैरों में करे। 'तीनों लोकों को बनाने वाला मैं ही हूँ' ऐसा सोचकर तिलक लगावे। सारे मुख में वेष्टन के समान न्यास करे। पुनः मुख में पूर्णा का न्यास करके गला के ऊपर न्यास करे। पुनः सारे शरीर में वेष्टन के रूप में पूर्णा विद्या से न्यास करे। व्यापक न्यास करके मुख में योनि मुद्रा दिखाकर वन्दना करे। सम्पूर्ण श्रीविद्या से किया गया यह न्यास सौभाग्यवर्धक होता है। ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करके मणिबन्ध में न्यास करे। ललाट में अनामिका से सोलह वर्ण का स्मरण करते हुये न्यास करे। ऐसी भावना करे कि मैं ही तीनों लोकों का कर्ता हूँ। सम्मोहन नामक यह

न्यास क्षोभकारक होता है। लाल वर्ण के तीनों लोकों का ध्यान करके श्रीविद्या का स्मरण मन में करे। तब सोलह बीजों से संहार न्यास करे। सोलह वर्णों को देह के सोलह स्थानों—पैरों, जंघों, घुटनों, कटि, नाभि, मस्तक, नाभि, पार्श्वों, स्तनों, कन्धों, कानों, ब्रह्मरन्ध्र एवं मुख में न्यस्त करे। तब कर्णप्रदेश में करवेष्टन के रूप में न्यास करे। इन सोलह बीजों के न्यास को संहार क्रम का न्यास कहते हैं। श्रीविद्या के सोलह वर्णों से न्यास करने वाला साक्षात् विश्वेश्वर हो जाता है।

इस प्रकार मन्त्रन्यास करके पूर्ववत् ध्यान करके पूर्वोक्त कुरुकुल्ला आदि का स्मरण करके मूल विद्या का एक सौ आठ जप करके 'गुह्यातिगुह्य' श्लोक से उसे निवेदित करे। पुन: नव मुद्राओं को दिखाकर सहस्राक्षरी विद्या से पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। स्तोत्रों से स्तुति करके प्राणायामादि करके प्रार्थना करे।

चतुराम्नायपूजाक्रम:

तत: श्रीचक्रं चतुराम्नायत्वेन विभाव्य तत्तदाम्नायविद्याभिर्व्यस्तसमस्तबालया वा पूजयेत्। तद्यथा— चतुरश्रषोडशाष्टदलमण्डलं सृष्ट्यात्मकं पूर्वाम्नायं विभाव्य, तदीश्वरीं रुद्रशक्तिं यजेत्। मन्वश्रं द्विदशारं स्थितिरूपं दक्षिणाम्नायं मत्वा तदीश्वरीं रुद्राणीं यजेत्। अष्टारं त्र्यश्रं संहाररूपं पश्चिमाम्नायं मत्वा तदीश्वरीं कुब्जिकां यजेत्। बिन्दुचक्रात्मकमनाख्यात्वेन विभाव्य उत्तराम्नायं मत्वा तदीश्वरीं कालसङ्कर्षिणीं यजेत्।

चतुराम्नाय के रूप में श्रीचक्र का पूजा आम्नाय के मन्त्रों से करे या व्यस्त समस्त बाला मन्त्र से पूजा करे। चतुरस्र, षोडश दल, अष्टदल मण्डल को सृष्ट्यात्मक पूर्वाम्नाय समझे। इसकी शक्ति रुद्रेश्वरी की पूजा करे। चतुर्दशार, बहिर्दशार, अन्तर्दशार को स्थितिरूप दक्षिणाम्नाय मानकर उसकी ईश्वरी रुद्राणी की पूजा करे। अष्टार एवं त्र्यस्र को संहाररूप पश्चिमाम्नाय मानकर उसकी ईश्वरी कुब्जिका की पूजा करे। बिन्दु-चक्रात्मक अनाख्य को उत्तराम्नाय मानकर उसकी ईश्वरी कालसङ्कर्षिणी की पूजा करे।

षड्दर्शनार्चनक्रम:

ततश्च षड्दर्शनात्मकमनुसन्धाय तत्तन्मन्त्रैरर्चयेत्। भूगेहत्रयं बौद्धजैनचार्वाकदर्शनरूपं मत्वा तदीश्वरीं वज्रतारां यजेत्। 'ॐ तरि तुतारे तुरे स्वाहा'। इयं वज्रतारा। षोडशाष्टदलं वैदिकदर्शनं मत्वा सचतुर्थपादां सशिखां गायत्रीं यजेत्। मन्वश्रं सौरदर्शनं विभाव्य सौराष्टाक्षरेण सूर्यं यजेत्। द्विदशारं वैष्णवदर्शनं मत्वा नारायणाष्टाक्षरेण विष्णुं यजेत्। अष्टारं शाक्तदर्शनं मत्वा बालया यजेत्। त्रिकोणं सान्तरालं शैवदर्शनमनुसंधाय 'हौं नम: शिवाय हसौं नम:' इत्यनेन शिवं यजेत्।

तदनन्तर मन्त्र का षड्दशर्नात्मक अनुसन्धान करके उन-उन मन्त्रों से पूजा करे। तीनों भूपूर रेखा को बौद्ध-जैन-चार्वाक दर्शनरूप मानकर उसकी ईश्वरी वज्रतारा की पूजा करे। 'ॐ तारे तुतारे तुरे स्वाहा'—यह वज्रतारा मन्त्र है। षोड़शदल-अष्टदल को वैदिक दर्शन मानकर चौथे पद और शिखा के साथ गायत्री की पूजा करे। चतुर्दशार को सौर दर्शन मानकर सूर्य के अष्टाक्षर मन्त्र से सूर्य की पूजा करे। बहिर्दशार-अन्तर्दशार को वैष्णव दर्शन मानकर नारायण के अष्टाक्षर मन्त्र से विष्णु की पूजा करे। अष्टार को शाक्त दर्शन मानकर बाला मन्त्र से पूजा करे। त्रिकोण को अन्तराल के साथ शैव दर्शन मानकर 'ह्रौं नम: शिवाय ह्सौं नम:' मन्त्र से शिव की पूजा करे।

सिद्धान्तविद्याभिरर्चनविधि:

तत: श्रीचक्रं सिद्धान्तरूपं मत्वा तत्तत्सिद्धान्तविद्याभिरर्चयेत्। त्रैलोक्यमोहनचक्रं सृष्टिसृष्ट्यात्मकं मत्वा चार्वाकसिद्धान्तं यजेत्। चांचींचूं चमलवरयूं चार्वाकदर्शनाधिदेवतायै श्रीचण्डिकायै नम:। सर्वाशापूरचक्रं सृष्टिस्थित्यात्मकं मत्वा बौद्धसिद्धान्तमर्चयेत्। तद्यथा—ॐ नवसहकछलहरीं बौद्धदर्शनाधिदेवतायै तारायै नम:। सर्वसंक्षोभणं चक्रं सृष्टिसंहारात्मकं मत्वा जैनसिद्धान्तमर्चयेत्। तद्यथा—आंत्रौंक्रौंछ्रौंझ्रौंत्रौं जैनदर्शनाधिदेवतायै अर्हन्तायै नम:। सर्वसौभाग्यदायकं चक्रं स्थितिसृष्ट्यात्मकं मत्वा सांख्यसिद्धान्तमर्चयेत्। ॐ अइउऋऌ सांख्य-दर्शनाधिदेवतायै

श्रीमूलप्रकृत्यै नमः। सर्वार्थसाधकं चक्रं स्थितिरूपं मत्वा प्राक् गायत्र्या वैदिकसिद्धान्तमर्चयेत्। 'परो रजसेसावदोम्' इति चतुर्थः पादः। सर्वरक्षाकरं चक्रं स्थितिसंहाररूपं मत्वा सौरसिद्धान्तमर्चयेत्। श्रींह्रींक्लीं ॐऐंह्रींश्रीं ॐक्लींह्रींश्रीं। सर्वरोगहरं चक्रं संहारसृष्टिरूपं ध्यात्वा ॐ नमो नारायणायेति वैष्णवसिद्धान्तं यजेत्। सर्वसिद्धिप्रदं चक्रं संहारस्थित्यात्मकं शाक्तसिद्धान्तं बालया शक्तिदर्शनाधिदेवतायै श्रीत्रिपुरायै नमः इति यजेत्। सर्वानन्दमयचक्रं संहारसंहृतिरूपं मत्वा शैवदर्शनं यजेत्। प्रासादपुटितषडक्षर्या शैवदर्शनाधिदेवतायै श्रीब्रह्मविद्यायै नमः। बिन्दौ व्योम्नि महार्थानाख्याभासाचक्रे सर्वात्मनि शिवाद्वयमनुसन्धाय ज्ञानदर्शनं यजेत्। ४ँ हसखफ्रें महाचण्डयोगेश्वराय संविदद्वैतसमयाधिदेवतायै कालसंकर्षिण्यै नमः। इति प्रदक्षिणनमस्कारादिभिः परितोष्य, जानुभ्यामवनिं गत्वा स्वाभिमतं प्रार्थ्य पञ्चमुद्राभिर्नुत्वा,

चतुरश्रं च मत्स्यं च मुद्गरं गोमुखं तथा। योनिमुद्रेति पञ्चैता गुरुदेवाभिवन्दने ॥ इति।

ततः—

रश्मिरूपा महादेव्या अत्र पूजितदेवताः। श्रीसुन्दर्यङ्गलीनास्ताः सन्तु सर्वसुखावहाः ॥

इति देव्यै पुष्पाञ्जलिं दत्वा, संहारमुद्रया,

गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि। यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम् ॥

इति पुष्पं गृहीत्वाघ्राय ब्रह्मरन्ध्रं नीत्वा

तिष्ठ तिष्ठ परे स्थाने स्वस्थाने परमेश्वरि। यत्र ब्रह्मादयो देवाः सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि ॥

इति पुष्पं हृदयपर्यन्तं नीत्वा मुञ्चेदिति देवतां स्वहृद्युद्वास्य, प्राग्वत् पात्रोद्वासनमपि विधाय श्रीगुरुं प्रणमेत्। ततो ब्रह्मार्पणमन्त्रेण जलं भूमौ निक्षिप्य, ऐशान्यां दिशि नैवेद्यशेषं निर्माल्यपुष्पं निक्षिप्य 'क्लीं नमः उच्छिष्टचण्डालि मातङ्गि सर्ववशङ्करि स्वाहा' इति तत्र जलमुत्क्षिप्य,

व्योमचक्रसमारूढे भुवनान्तरचारिणि। चरुकं देहि मे देवि प्रसादं कुरु सिद्धिदे ॥

इत्यनेन सचरुकं दीपं गृहीत्वा

देस्थाखिलदेवता गजमुखाः क्षेत्रेश्वरा भैरवा योगिन्यो वटुकाश्च यक्षपितरो वेतालकाश्चेटकाः।
अन्ये दिक्षुचरास्तथैव खचरा भूताः पिशाचा ग्रहास्तृप्ताः स्युः कुलपुत्रकस्य पिबतः पानं सदीपं चरुम् ॥

इत्यनेन मूलमन्त्रमुच्चरन् तदात्मसात् कुर्यात्। ततो योगिनीयोगिभिर्वृतः किञ्चित्कालं नीत्वा मिश्रचरण-विद्यया स्वात्मानं सच्चिदानन्दमयं परामृश्य सुखीभूयात् इति श्रीविद्यापद्धतिः।

सिद्धान्तरूप में श्रीचक्र का ध्यान करके सिद्धान्त मन्त्र से अर्चन करे। त्रैलोक्य मोहन चक्र को सृष्टि-सृष्टिरूप मानकर चार्वाक सिद्धान्त की पूजा करे। चार्वाक मन्त्र है—चां चीं चूं चमलवरयूं चार्वाकदर्शनाधिदेवतायै श्रीचण्डिकायै नमः। सर्वाशापरिपूरक चक्र को सृष्टि-स्थित्यात्मिक मानकर बौद्धसिद्धान्त की पूजा इस मन्त्र से करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नवसहकछलहरीं बौद्धदर्शनाधिदेवतायै तारायै नमः। सर्वसंक्षोभण चक्र को सृष्टिसंहारात्मक मानकर जैन सिद्धान्त का अर्चन इस मन्त्र से करे—आं ज्रौं क्रौं क्ष्रौं ज्रौं जैनदर्शनाधिदेवतायै अर्हन्तायै नमः। सर्वसौभाग्यदायक चक्र को सृष्टिस्थित्यात्मक मानकर सांख्य सिद्धान्त का पूजन इस मन्त्र से करे—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अ उ ऋ लृ सांख्यदर्शनाधिदेवतायै श्रीमूलप्रकृत्यै नमः। सर्वार्थसाधक चक्र को स्थितिरूप मानकर गायत्री के साथ चतुर्थ पाद (परो रजसेसावदोम्) लगाकर वैदिक सिद्धान्त का अर्चन करे। सर्वरक्षाकर चक्र को स्थिति-संहाररूप मानकर सौर सिद्धान्त का अर्चन इस मन्त्र से करे—श्रीं ह्रीं क्लीं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं। सर्वरोगहर चक्र को संहार-सृष्टिरूप मानकर 'ॐ नमो नारायणाय' मन्त्र से वैष्णव सिद्धान्त की पूजा करे। सर्वसिद्धप्रद चक्र को संहार-स्थित्यात्मक मानकर शक्ति सिद्धान्त की पूजा 'ऐं क्लीं सौः शक्तिदर्शनाधिदेवतायै त्रिपुराय नमः' से करे। सर्वानन्दमय चक्र को संहार-संहृतिरूप मानकर शैवदर्शन की पूजा 'हौं ॐ नमः शिवाय हौं शैवदर्शनाधिदेवतायै श्रीब्रह्मविद्यायै नमः' से करे। बिन्दु व्योम में महार्थानाख्य भासाचक्र में सर्वात्मा में शिवद्वय का अनुसन्धान करके ज्ञान दर्शन की पूजा 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हस्खफ्रें

महाचण्डयोगेश्वराय संविदद्वैतसमयाधिदेवतायै कालसङ्कर्षिण्यै नम:' से करे। 'प्रदक्षिणा मनस्कारादि से संतुष्ट करे। जमीन पर ठेहुना पर बैठकर अपनी मनोकामना-पूर्ति के लिये प्रार्थना कर चतुरस्र, मत्स्य, मुद्गर, गोमुख और योनिमुद्रा से नमन करे। तदनन्तर इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि प्रदान करे—

रश्मिरूपा महादेव्या अत्र पूजितदेवता: । श्रीसुन्दर्यङ्गलीनास्ता: सन्तु सर्वसुखावहा: ।।

तदनन्तर संहारमुद्रा से पुष्प को लेकर उसे सूँघकर देवी को ब्रह्मरन्ध्र में स्थापित करते हुये निम्न मन्त्र पढ़े—

गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि। यत्र ब्रह्मादयां देवा ननिदु: परमं पदं।।

तदनन्तर उस फूल को हृदय तक लाकर छोड़ दे और निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुये देवता का उद्वासन करे—

तिष्ठ तिष्ठ परे स्थाने स्वस्थाने परमेश्वरि। यत्र ब्रह्मादयो देवा: सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि।।

इस प्रकार देवता का हृदय में उद्वासन करके पूर्ववत् पात्रोत्सादन करे। श्रीगुरु को प्रणाम करे। तब ब्रह्मार्पण मन्त्र से भूमि पर जल गिरावे। ईशान दिशा में नैवेद्यशेष एवं निर्माल्य पुष्प रखकर 'क्लीं नम: उच्छिष्टचण्डालि मातङ्गि सर्ववशंकरि स्वाहा' कहकर जल छोड़े और निम्न मन्त्र से चरुसहित दीप ग्रहण करे—

व्योमचक्रसमारूढ़े भुवनान्तरचारिणि। चरुकं देहि मे देवि प्रसादं कुरु सिद्धिदे।।

तदनन्तर निम्न श्लोक के साथ मूल मन्त्र पढ़ते हुये उसे आत्मसात् करे—

देहस्थाखिलदेवता गजमुखा: क्षेत्रेश्वरा भैरवा योगिन्यो वटुकाश्च यक्षपितरो वेतालकाश्चेटका:।
अन्ये दिक्षुचरास्तथैव खचरा भूता: पिशाचा ग्रहास्तृप्ता: स्यु: कुलपुत्रकस्य पिबत: पानं सदीपं चरुम्।।

तदनन्तर योगी-योगिनियों से आवृत कुछ देर तक चरण विद्या से अपनी आत्मा को सच्चिदानन्दमय मानकर सुख का अनुभव करे।

उपस्थानसहस्राक्षरी

अथ सहस्राक्षर्यो लिख्यन्ते। तास्तु यामलमहार्णवोक्तभेदेन नानाविधा: सन्ति। तत्रादावुपस्थानसहस्राक्षरी। ऐं नमो भगवति त्रिपुरसुन्दरि दुर्गतितारिणि क्ष्मरीं प्रीं कर कर विसर विसर नृत्य नृत्य वद वद वाग्वादिनि स्वाहा ह्रीं नम: क्लीं नम: श्रींप्लींक्लीं नम: सुरासुरवन्दिते सकलजनक्षोभिणि श्रींश्रींश्रीं कारिणि द्रांद्रां द्राविणि मोंमों मोहिनि स्तंस्तं स्तम्भिनि आंआं आकर्षिणि परमसुभगे नम: कमलवासिनि रस रस वरवर्तिनि ह्रां ह्रां ह्रां करि ह्रीं ह्रीं ह्रीं कारि ह्रां ह्रां ह्रां कारिके कांकां काकिनि रांरां राकिणि डां डां डाकिनि हांहां हाकिनि ऐं शाङ्करि गन गन किश किश भ्रम भ्रम वदवद सत्यसत्य उत उत मालिनि महामाये तत्त्वविग्रहे अरूपे अमले विमलेऽजिते अपराजिते मर्द मर्द हर हर संहर संहार ॐह्रींऐं कुरु कुरु लेप लेप किटि ॐजूंस: सौ:क्लीं ऐंश्रीं नद नद नादबीजे त्रांत्रींत्रूंत्रैंत्रौंत्र: प्रांप्रींप्रूंप्रैंप्रौंप्र: ग्रांग्रींग्रूंग्रैंग्रौंग्र: रंरींरूंरैंरौंर: ल्रांल्रींल्रूंल्रैंल्रौंल्र: व्रांव्रींव्रूंव्रैंव्रौंव्र: श्रांश्रींश्रूंश्रैंश्रौंश्र: प्रांप्रींप्रूंप्रैंप्रौंप्र: स्रांस्रींस्रूंस्रैंस्रौंस्र: ह्रांह्रींह्रूंह्रैंह्रौंह्र: क्षांक्षींक्षूंक्षैंक्षौंक्ष: गौरि रुद्रदयिते वज्रिणि वज्रनायिके कपालमालाधरे प्रेतासननिवासिनि सर्वतत्त्वावतारे अवतर अवतर गर्ज गर्ज शोषय शोषय सर्वमन्त्रान् ग्रस ग्रस सर्वदुष्टान् मर्द मर्द सर्वयन्त्रान् भञ्ज भञ्ज सर्वदुखं तपतप तापय तापय तारे तारिणि परविद्यां छिन्धि छिन्धि परकायं प्रविश प्रविश वज्रिणि गोंगों गोचरि खेंखें खेचरि भूंभूं भूचरि हंसवाहे हस हस तिष्ठ तिष्ठ बन्धय बन्धय धारय धारय ऊ(तू)र्णामणि मोचय मोचय विमोचय विमोचय विमोचनि पश्य पश्य हुंरावे मेरुमन्दरसंकाशे महाविद्येश्वरि वाचं नियच्छ आच्छादिनि सरस्वति महाश्वेते किणिविद्ये अर्ककोटिसहस्रमालिनि पुरपुर द्रुम द्रुम अनन्तक्षोभकारिणि रणे वज्रादिकर्तरि विद्याविनोदिनि त्वर त्वर त्वरिते वह वह क्रन्दय क्रन्दय संक्रामय संक्रामय मदिरानन्दघूर्णिते कामेश्वरि गांगींगूंगैंगौंग: कन्दर्पमदविह्वले स्फुरद्योनिचक्रे भगवति भगमालिनि ईश्वरचक्रकपालडमरुकधारिणि महाभैरवि वसुधारे वसुमति धरिणिधरे वशय वशय कर्मधारिणि कामेशि जिह्वया वद वद मनसा रम रम क्रन्द वस वस बिन्दुप्रिये हूं ५ रद शारदशशांकनिकाशे शारदे विद्यादान-

विशारदे क्लीं गणनायिके आनन्दमयविग्रहे गृहीतपूर्णकपाले ज्वलज्जिह्वे ह्लादिनि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा सौंसौंक्षूं सरस्वत्यै नमः मदिरे मधुमति मदाभोगसुभगे भगमाले मुरु मुरु चुरु चुरु धुन धुन स्फुर स्फुर स्फोटय स्फोटय घण्टारवेण निरन्तरपरबलभेदिनि फ्रें कुब्जिकायै ह्रांह्रीं नञणङमे अघोरमुखि किणि किणि विच्चे ऐंह्रींश्रींफ्रें ह्रींहुंफट् सर्वज्ञे जम्भ जम्भ जन्मजरामरणदारिद्र्यघातिनि सर्वसिद्धिनिधाने महाभयधारिणि ॐहंसः हुंफट् विद्येश्वरि ज्रांज्रींज्रूंज्रैंज्रौंज्रः ल्रींप्रींसौः स्त्रौंक्ष्रौं क्षुद्रविद्राविणि विद्रुतविद्रुमप्रभे क्षम्रीं हस्रौः चण्डि चण्डेश्वरि ब्रह्माण्डमालाधारिणि बन्धूकशोणाधरे त्रैलोक्यसत्ये नमः प्रसीद प्रसीद ऐंश्रींफ्रेंसौः ऐंह्रींश्रींश्रीमहात्रिपुरसुन्दरि स्वाहा। इति त्रिपुरसुन्दर्युपस्थानसहस्राक्षरी। (त्रैपुरीविद्यापठितसिद्धा शुभदा साधकानाम्।)

सहस्राक्षरी मन्त्र—त्रिपुरसुन्दरी के सहस्राक्षरी मन्त्र यामल एवं महार्णव में कथित भेद से अनेक प्रकार के होते हैं। उसमें से उपस्थान सहस्राक्षरी मन्त्र इस प्रकार है—ऐं नमो भगवति त्रिपुरसुन्दरि दुर्गतितारिणि क्षमरीं प्रीं कर कर विसर विसर नृत्य नृत्य वद वद वाग्वादिनि स्वाहा ह्रीं नमः क्लीं नमः श्रींप्लींक्लीं नमः सुरासुरवन्दिते सकलजनक्षोभिणि श्रींश्रींश्रीं कारिणि द्रांद्रां द्राविणि मोंमों मोहिनि स्तंस्तं स्तम्भिनि आंआं आकर्षिणि परमसुभगे नमः कमलवासिनि रस रस वरवर्तिनि ह्रां ह्रां ह्रां करि ह्रीं ह्रीं ह्रीं कारि ह्रां ह्रां ह्रां कारिके कांकां काकिनि रांरां राकिणि डां डां डाकिनि हांहां हाकिनि ऐं शाङ्करि गन गन किश किश भ्रम भ्रम वदवद सत्यसत्य उत उत मालिनि महामाये तत्त्वविग्रहे अरूपे अमले विमलेऽजिते अपराजिते मर्द मर्द हर हर संहर संहार ॐह्रीऐं कुरु कुरु लेप लेप किटि ॐजूंसः सौःक्लीं ऐंश्रीं नद नद नादबीजे त्रांत्रींत्रूंत्रैंत्रौंत्रः प्रांप्रींप्रूंप्रैंप्रौंप्रः ग्रांग्रींग्रूंग्रैंग्रौंग्रः रींरींरूंरैंरौंरः ल्रांल्रींल्रूंल्रैंल्रौंल्रः व्रांव्रींव्रूंव्रैंव्रौंव्रः श्रांश्रींश्रूंश्रैंश्रौंश्रः प्र्रांप्र्रींप्र्रूंप्र्रैंप्र्रौंप्र्रः स्त्रांस्त्रींस्त्रूंस्त्रैंस्त्रौंस्त्रः ह्रांह्रींह्रूंह्रैंह्रौंह्रः क्ष्रांक्ष्रींक्ष्रूंक्ष्रैंक्ष्रौंक्ष्रः गौरि रुद्रदयिते वज्रिणि वज्रनायिके कपालमालाधरे प्रेतासननिवासिनि सर्वतत्त्वावतारे अवतर अवतर गर्ज गर्ज शोषय शोषय सर्वमन्त्रान् ग्रस ग्रस सर्वदुष्टान् मर्द मर्द सर्वयन्त्रान् भञ्ज भञ्ज सर्वदुखं तपतप तापय तापय तारे तारिणि परविद्यां छिन्धि छिन्धि परकायं प्रविश प्रविश वज्रिणि गोंगों गोचरि खेंखें खेचरि भूंभूं भूचरि हंसवाहे हस हस तिष्ठ तिष्ठ बन्धय बन्धय धारय धारय ऊ(तू)र्णामणि मोचय मोचय विमोचय विमोचय विमोचनि पश्य पश्य हुंरावे मेरुमन्दरसंकाशे महाविद्येश्वरि वाचं नियच्छ आच्छादिनि सरस्वति महाश्वेते किणिविद्ये अर्ककोटिसहस्रमालिनि पुरपुर द्रुम द्रुम अनन्तक्षोभकारिणि रणे वज्रादिकर्तरि विद्याविनोदिनि त्वर त्वर त्वरिते वह वह क्रन्दय क्रन्दय संक्रामय संक्रामय मदिरानन्दघूर्णिते कामेश्वरि गांगींगूंगैंगौंगः कन्दर्पमदविह्वले स्फुरद्योनिचक्रे भगवति भगमालिनि ईश्वरचक्रकपालडमरुकधारिणि महाभैरवि वसुधारे वसुमति धरिणिधरे वशय वशय कर्मधारिणि कामेशि जिह्वया वद वद मनसा रम रम क्रन्द वस वस बिन्दुप्रिये हूंहूंहूंहूंहूं रद शारदशशांकनिकाशे शारदे विद्यादान-विशारदे क्लीं गणनायिके आनन्दमयविग्रहे गृहीतपूर्णकपाले ज्वलज्विह्वे ह्लादिनि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा सौंसौंक्षूं सरस्वत्यै नमः मदिरे मधुमति मदाभोगसुभगे भगमाले मुरु मुरु चुरु चुरु धुन धुन स्फुर स्फुर स्फोटय स्फोटय घण्टारवेण निरन्तरपरबलभेदिनि फ्रें कुब्जिकायै ह्रांह्रीं नञणङमे अघोरमुखि किणि किणि विच्चे ऐंह्रींश्रींफ्रें ह्रींहुंफट् सर्वज्ञे जम्भ जम्भ जन्मजरामरणदारिद्र्यघातिनि सर्वसिद्धिनिधाने महाभयधारिणि ॐहंसः हुंफट् विद्येश्वरि ज्रांज्रींज्रूंज्रैंज्रौंज्रः ल्रींप्रींसौः स्त्रौंक्ष्रौं क्षुद्रविद्राविणि विद्रुतविद्रुमप्रभे क्षम्रीं हस्रौः चण्डि चण्डेश्वरि ब्रह्माण्डमालाधारिणि बन्धूकशोणाधरे त्रैलोक्यसत्ये नमः प्रसीद प्रसीद ऐंश्रींफ्रेंसौः ऐंह्रींश्रींश्रीमहात्रिपुरसुन्दरि स्वाहा।

प्रस्तारसहस्राक्षरी

अथ प्रस्तारसहस्राक्षरी। तत्र—

मनुश्चन्द्रः कुबेरश्च लोपामुद्राथ मन्मथः। अगस्त्यो नन्दिसूर्यौ च इन्द्रः स्कन्दः शिवस्तथा॥
क्रोधभट्टारको देव्या द्वादशैते उपासकाः। सर्वप्रस्तारसहिता सहस्रार्णाधुनोच्यते॥
श्रीविद्याजपसंपत्त्यै सर्वकामफलाप्तये।

सुरासुरवन्दितचरणारबिन्दे जपाकुसुमनिभे योगिनीगणसेविते मधुमदमुदितमानसे संध्यावर्णदुकूलवसने सततमुदितमहामदे माणिक्यकिरणारुणे मन्त्रपवित्रविग्रहे बिन्दुनादरूपिणि सच्चिन्मात्रस्वरूपे हसौं हसकलरीं हसौः स्हौः क्वौं हसौः हसकएईलह्रीं हसकएईलह्रीं सहकएईलह्रीं नमो देवि आगच्छ सन्निधिं कुरु कुरु सर्वतो मां रक्ष

रक्ष वर्धय वर्धय नन्दय नन्दय स्थापय स्थापय प्रापय प्रापय सर्वकार्याणि मम साधय पोषय हस्रांहस्रींहस्रूंहस्रैंहस्रौंहस्रः सकलहएईलऐंह्रीं हसकएईलह्रीं नमो भगवति भगरूपे पापापहारिणि राजानं मे वशमानय विपदो दलय स्त्रीराकर्षयाकर्षय क्लेदय क्लेदय मनांसि क्षोभय क्षोभय मादय मादय उल्लासयोल्लासय सौभाग्यं मे संपादय संपादय सौन्दर्यं मे जनय फट् हसहरैं हसहरीं हसहरौं हसहरैं हसहरीं हसहरौं ४ँ कएईलह्रीं हसकलह्रीं नमः कल्याणकारिणि लाक्षाभरणप्रभारञ्जितशरीरे रक्ताम्बुजनिषण्णे पाशाङ्कुशेक्षुचापकुसुमबाणधारिणि चतुर्भुजे चन्द्रशेखरे चतुरङ्गे चतुर्वर्गफलप्रदे दिव्यमालालङ्कृतदिव्यदेहे मम सकलसमीहितानि साधय साधय स्फारय स्फारय स्थिरय स्थिरय हसकलरैं हसकलरीं हसकलरौं हसकलरैं हसकलरीं हसकलरौं ४ँ सहकलह्रीं सहकलरीं सहकलह्रीं नमो वरदे रेते सुरेते सत्ये नित्ये निरञ्जने जगत्क्षोभ(करे क्षोभ)कारिणि कमले कमनीयाङ्गे कलावति सुखानि मे परिपूरय राज्यं प्रयच्छ प्रयच्छ कीर्तिं वितारय वितारय परसैन्यं स्तंभय स्तंभय भेदय भेदय मर्दय मर्दय च्छेदय च्छेदय उत्सादयोत्सादय हसकलह्रैं हसकलह्रीं हसकलह्रौं सकलह्रैं सकलह्रीं सकलह्रौं ५ सहसकलह्रीं सकलह्रीं नमः परमेश्वरि परमात्मस्वरूपे करुणामृतवर्षिणि द्रांद्रींक्लींब्लूंसः मनोज्ञे मुशलायासे मणिकङ्कणपरिचित्रितकुण्डलिनि कोमलाङ्गे अङ्कुशेनाकर्षयाकर्षय पाशेन बन्धय बन्धय चापेन मोहय मोहय बाणेन भिन्धि भिन्धि च्छिन्धि च्छिन्धि डां डीं डूं डैं डौं डः सहकलरडैं सहकलरडीं सहकलरडौं सहकलरीं सहकलरीं सहकलह्रीं नमस्त्रिपुरे वादय वादय त्रिपुरेश्वरि विघ्नेश्वरि वीरवन्दिते विद्याधरवीज्यमानचामरे विद्यादानविशारदे मदोदयाघूर्णनेत्रे विनेत्रे श्रीत्रिपुरसुन्दरि डांडींडूंडैंडौंडः हसकलडैं हसकलडीं हसकलडौः हसकलडैं हसकलडीं हसकलडौः सकलह्रीं सकलह्रीं नमः त्रिपुरवासिनि त्रिपुराश्रि देवि प्रपद्ये संप्रपद्ये सदा प्रपद्ये शरणं प्रपद्ये शरण्ये शरणागतवत्सले मदने मदनदेहे सर्वजनहृदयहारिणि सर्वतत्त्वहृदयङ्गमे सर्वभूतवशंकरि मम सर्वभूतानि वशमानयानय कामान् पूरय पूरय कीर्तिं दापय दापय दुरितं खण्डय खण्डय क्लेशं नाशय नाशय शत्रून् त्रोटय त्रोटय बन्धं छेदय छेदय मोक्षं कुरु कुरु ऐंह्रींश्रीं हसकलरडरहैं हसकलरडरहीं हसकलरडरहौः सहकलरडरहैं सहकलरडरहीं सहकलरडरहौः हसकलह्रीं हसकलह्रीं हसकलह्रीं ॐनमस्त्रिपुरमालिनि चिन्तितार्थ-विद्याविधायिनि वित्तदे ब्रह्मविष्णुरुद्रशङ्करसदाशिवपूजिते सुपूज्ये मम मनोरथान् पूरय पूरय समुद्रादुत्तारय उत्तारय अरिष्टं भञ्जय भञ्जय राजनीतिं स्थापय स्थापय दुष्कर्माणि कृन्त कृन्त कृत्यां कर्तय कर्तय ऐंह्रींश्रीं हसकलरडरहरैं, हसकलरडरहरीं, हसकलरडरहरौः हसकलरडरसहरीं ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौः त्रिपुरसिद्धे त्रिपुरानन्दयोगेश्वरि कुलाकुल-महारूपे अरुणावृतमहारूपे हसक्षमलवरयीं सकलनृपवशङ्करि सर्वसंपत्तिकारिणि सर्वैश्वर्यप्रदे सर्वदुःखविदारिणि सर्वज्ञे हसकलरडसहरडैं, हसकलरडसहरडीं, हसकलरडसहरडौः, हसकलरडसरडौः, हसकलरडसरडीं हसकलरडसरडैं, कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सर्वानन्दमये बिन्दुचक्रस्थे परब्रह्मस्वरूपिणि परमात्मशक्तिसर्वचक्रेश्वरि सर्वमन्त्रेश्वरि सर्वयोगीश्वरि सर्वजगदुत्पत्तिमातृके सर्वविद्यामयि महाभैरवि कवलीकृतसर्वतत्त्वात्मिके बिन्दुसर्वात्मिके महाश्रीत्रिपुरसुन्दरि नमः ऐंईऔः ॐऐंह्रींऐं ऐंह्रींश्रींऔं नमः शिवाय नमः शिवायै। इति प्रस्तारसहस्राक्षरी।

प्रस्तार सहस्राक्षरी—देवी के बारह उपासक मनु, चन्द्र, कुबेर, लोपामुद्रा, कामदेव, अगस्त्य, नन्दि, सूर्य, इन्द्र, स्कन्द, शिव एवं दुर्वासा हैं। समस्त प्रस्तारसहित सहस्राक्षरी श्रीविद्या के जप से सम्पत्ति और सभी मनोरथ प्राप्त होते हैं। प्रस्तार सहस्राक्षरी इस प्रकार है—सुरासुरवन्दितचरणारबिन्दे जपाकुसुमनिभे योगिनीगणसेविते मधुमदमुदितमानसे संध्यावर्णदुकूलवसने सततमुदितमहामदे माणिक्यकिरणारुणे मन्त्रपवित्रविग्रहे बिन्दुनादरूपिणि सच्चिन्मात्रस्वरूपे हसौं हसकलरीं हसौः स्हौः क्वौं हसौः हसकएईलह्रीं हसकएईलह्रीं सहकएईलह्रीं नमो देवि आगच्छ सन्निधिं कुरु कुरु सर्वतो मां रक्ष रक्ष वर्धय वर्धय नन्दय नन्दय स्थापय स्थापय प्रापय प्रापय सर्वकार्याणि मम साधय पोषय हस्रांहस्रींहस्रूंहस्रैंहस्रौंहस्रः सकलहएईलऐंह्रीं हसकएईलह्रीं नमो भगवति भगरूपे पापापहारिणि राजानं मे वशमानय विपदो दलय स्त्रीराकर्षयाकर्षय क्लेदय क्लेदय मनांसि क्षोभय क्षोभय मादय मादय उल्लासयोल्लासय सौभाग्यं मे संपादय संपादय सौन्दर्यं मे जनय फट् हसहरैं हसहरीं हसहरौं हसहरैं हसहरीं हसहरौं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं हसकलह्रीं नमः कल्याणकारिणि लाक्षाभरणप्रभारञ्जितशरीरे रक्ताम्बुजनिषण्णे पाशाङ्कुशेक्षुचापकुसुमबाणधारिणि

चतुर्भुजे चन्द्रशेखरे चतुरङ्गे चतुर्वर्गफलप्रदे दिव्यमालालङ्कृतदिव्यदेहे मम सकलसमीहितानि साधय साधय स्फारय स्फारय स्थिरय स्थिरय हसकलरैं हसकलरीं हसकलरौं हसकलरैं हसकलरीं हसकलरौं ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सहकलह्रीं सहकलरीं सहकलह्रीं नमो वरदे रेते सुरेते सत्ये नित्ये निरञ्जने जगत्क्षोभ(करे क्षोभ)कारिणि कमले कमनीयाङ्गे कलावति सुखानि मे परिपूरय राज्यं प्रयच्छ प्रयच्छ कीर्तिं वितारय वितारय परसैन्यं स्तंभय स्तंभय भेदय भेदय मर्दय मर्दय च्छेदय च्छेदय उत्सादयोत्सादय हसकलह्रैं हसकलह्रीं हसकलह्रौं सकलह्रैं सकलह्रीं सकलह्रौं सकलह्रौं सकलह्रौं सकलह्रौं सकलह्रौं सहसकलह्रीं सकलह्रीं नमः परमेश्वरि परमात्मस्वरूपे करुणामृतवर्षिणि द्रांद्रींक्लींब्लूंसः मनोज्ञे मुशलायासे मणिकङ्कणपरिचित्रितकुण्डलिनि कोमलाङ्गे अङ्कुशेनाकर्षयाकर्षय पाशेन बन्धय बन्धय चापेन मोहय मोहय बाणेन भिन्धि भिन्धि च्छिन्धि च्छिन्धि डां डीं डूं डैं डौं डः सहकलरडैं सहकलरडीं सहकलरडौं सहकलरीं सहकलरीं सहकलह्रीं नमस्त्रिपुरे वादय वादय त्रिपुरेश्वरि विघ्नेश्वरि वीरवन्दिते विद्याधरवीज्यमानचामरे विद्यादानविशारदे मदोदयाघूर्णनेत्रे विनेत्रे श्रीत्रिपुरसुन्दरि डांडींडूंडैंडौंडः हसकलडैं हसकलडीं हसकलडौः हसकलडैं हसकलडीं हसकलडौः सकलह्रीं सकलह्रीं नमः त्रिपुरवासिनि त्रिपुराश्रि देवि प्रपद्ये संप्रपद्ये सदा प्रपद्ये शरणं प्रपद्ये शरण्ये शरणागतवत्सले मदने मदनदेहे सर्वजनहृदयहारिणि सर्वतत्त्वहृदयङ्गमे सर्वभूतवशंकरि मम सर्वभूतानि वशमानयानय कामान् पूरय पूरय कीर्तिं दापय दापय दुरितं खण्डय खण्डय क्लेशं नाशय नाशय शत्रून् त्रोटय त्रोटय बन्धं छेदय छेदय मोक्षं कुरु कुरु ऐंह्रींश्रीं हसकलरडरहैं हसकलरडरह्रीं हसकलरडरहौः सहकलरडरहैं सहकलरडरहीं सहकलरडरहौः हसकलह्रीं हसकलह्रीं हसकलह्रीं ॐनमस्त्रिपुरमालिनि चिन्तितार्थविद्याविधायिनि वित्तदे ब्रह्मविष्णुरुद्रशङ्करसदाशिवपूजिते सुपूज्ये मम मनोरथान् पूरय पूरय समुद्राद्युत्तारय उत्तारय अरिष्टं भञ्जय भञ्जय राजनीतिं स्थापय स्थापय दुष्कर्माणि कृन्त कृन्त कृत्यां कर्तय कर्तय ऐंह्रींश्रीं हसकलरडरहरैं, हसकलरडरहरीं, हसकलरडरहरौः हसकलरडरसहरीं ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसौः त्रिपुरसिद्धे त्रिपुरानन्दयोगेश्वरि कुलाकुलमहारूपे अरुणावृतमहारूपे हसक्षमलवरयीं सकलनृपवशङ्करि सर्वसंपत्तिकारिणि सर्वैश्वर्यप्रदे सर्वदुःखविदारिणि सर्वज्ञे हसकलरडसहरडैं, हसकलरडसहरडीं, हसकलरडसहरडौः, हसकलरडसरडौः, हसकलरडसरडीं हसकलरडसरडैं, कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सर्वानन्दमये बिन्दुचक्रस्थे परब्रह्मस्वरूपिणि परमात्मशक्तिसर्वचक्रेश्वरि सर्वमन्त्रेश्वरि सर्वयोगीश्वरि सर्वजगदुत्पत्तिमातृके सर्वविद्यामयि महाभैरवि कवलीकृतसर्वतत्त्वात्मिके बिन्दुसर्वात्मिके महाश्रीत्रिपुरसुन्दरि नमः ऐंईऔंः ॐऐंह्रींऐं ऐंह्रींश्रींऔं नमः शिवाय नमः शिवायै।

आवरणसहस्राक्षरी

अथावरणसहस्राक्षरी। ॐऐंह्रींश्रीं हंसः ॐ नमो भगवति अक्षोभ्ये रूक्षकर्णे राक्षसिपक्षत्रणे क्षपे पिङ्गलाक्षि अरुणे क्षये लीले लोले ललिते लूते लुलिते लम्बिके लङ्केश्वरि लासे विमले हताशनि विशालाक्षि हूंकारे वडवामुखि महारवे महाक्रोडक्रोधिनि खरास्ये सर्वज्ञे तरले तारे दृष्टिहृष्टे खगकन्धरे सारसि रससंग्रहिणि तालजङ्घे करङ्किणि मेघनादे प्रचण्डोग्रे कालकर्णि चेलप्रदे चम्पे चम्पावति प्रचम्पे प्रलयान्तकि पितृवक्त्रे पिशाचाक्षि पिशुनि लोलुपे वानति वानरि वामविकृतास्ये वायुवेगे बृहत्कुक्षिविकृते विश्वरूपिणि यमजिह्वे जये दुजये पुमन्तकि बिडालरेवति पूतने विजये अनन्ते क्रन्दिनि चण्डि रेकर्णि (सर्वसंक्षोभिणि सर्वविद्राविणि सर्वाकर्षिणि सर्ववशंकरि) सर्वोन्मादिनि सर्वमहांकुशे खेचरि (खचक्रधारिणि) सर्वबीजरूपे महायोनिरूपे त्रिखण्डे, अनङ्गब्राह्मि अनङ्गमाहेश्वरि अनङ्गकौमारि अनङ्गवैष्णवि अनङ्गवाराहि अनङ्गइन्द्राणि अनङ्गचामुण्डे अनङ्गमहालक्ष्मि प्रकटयोगिनीशि चार्वाकदर्शनाङ्गि त्रैलोक्यमोहनचक्रस्वामिनि, कामाकर्षिणि (बुद्ध्याकर्षिणि अहङ्काराकर्षिणि शब्दाकर्षिणि स्पर्शाकर्षिणि रूपाकर्षिणि रसाकर्षिणि गन्धाकर्षिणि चित्ताकर्षिणि धैर्याकर्षिणि स्मृत्याकर्षिणि नामाकर्षिणि बीजाकर्षिणि आत्माकर्षिणि) अमृताकर्षिणि शरीराकर्षिणि गुप्तयोगिनीशि बौद्धदर्शनाङ्गि सर्वाशापूरकचक्रस्वामिनि, अनङ्गकुसुमे अनङ्गमेखले अनङ्गमदने अनङ्गमदनातुरे अनङ्गरेखे अनङ्गवेगिनि अनङ्गाङ्कुशे अनङ्गमालिनि अतिगुप्तयोगिनीशि रौद्रदर्शनाङ्गि सर्वसंक्षोभणचक्रस्वामिनि पूर्वाम्नायेशि सृष्टिप्रदे, सर्वसंक्षोभिणि सर्वविद्राविणि सर्वाकर्षिणि सर्वाह्लादिनि सर्वसंमोहनि सर्वस्तंभनि सर्वजृम्भिनि सर्ववशंकरि सर्वरञ्जनि सर्वोन्मादिनि सर्वार्थसाधनि सर्वसम्पत्प्रपूरणि सर्वमन्त्रमयि सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करि संप्रदाययोगिनीशि सर्वदर्शनाङ्गि सर्वसौभाग्यदायकचक्रस्वामिनि, सर्वसिद्धिप्रदे सर्वसंपत्प्रदे सर्वप्रियंकरि सर्वमङ्गलकारिणि

सर्वकामप्रदे सर्वदु:खविमोचनि सर्वमृत्युप्रशमनि सर्वविघ्ननिवारणि सर्वाङ्गसुन्दरि सर्वसौभाग्यदायिनि कुलकौलयोगिनीशि सर्वार्थसाधकचक्रस्वामिनि, सर्वज्ञे सर्वशक्ते सर्वैश्वर्यप्रदायिनि सर्वज्ञानमयि सर्वव्याधिविनाशिनि सर्वाधारस्वरूपे सर्वपापहरे सर्वानन्दमयि सर्वरक्षास्वरूपे सर्वेप्सितफलप्रदे निगर्भयोगिनीशि सर्वरक्षाकरचक्रस्वामिनि दक्षिणाम्नायेशि स्थितिप्रदे, ब्लूँ वशिनि कलह्रीं कामेशि न्ब्लूं मोदिनि य्लूं विमले ज्म्रीं अरुणे हसलवयूं जयिनि झमरयूं सर्वेश्वरि क्ष्म्रीं कौलिनि रहस्ययोगिनीशि शाक्तदर्शनाङ्गि सर्वरोगहरचक्रस्वामिनि, द्रां क्लिन्ने मोहनकामबाण द्रीं शोषणकामबाण क्लीं नित्यसंदीपनकामबाण ब्लूं मंदसंतापनकामबाण स: द्रवे उन्मादनकामबाण द्रांद्रींक्लींब्लूंस: जम्भिनि जम्भय जम्भय मोहिनि मोहय मोहय आं आकर्षिणि आकर्षय आकर्षय स्तंभिनि स्तंभय स्तंभय ऐं कामेशि क्लीं वज्रेशि सौ: भगमाले अतिरहस्ययोगिनीशि सर्वसिद्धिमयचक्रस्वामिनि, कामराजविद्यामहात्रिपुरसुन्दरीमात: परापररहस्ययोगिनीशि सौगतदर्शनाङ्गि सर्वानन्दमयचक्रस्वामिनि पश्चिमाम्नायेशि अंआंसौ: त्रिपुरे ऐंक्लींसौ: त्रिपुरेश्वरि ह्रींक्लींसौ: त्रिपुरसुन्दरि हैं हक्लींहसौ: त्रिपुरवासिनि हसैंहसक्लींहसौ: त्रिपुराश्रि ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनि ह्रींश्रींसौ: त्रिपुरासिद्धे हस्रैं हसकलरीं हस्रौं: त्रिपुराम्बे हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौ: महात्रिपुरभैरवि अं कामेशि आं भगमाले इं नित्यक्लिन्ने ईं भीरुण्डे उं वह्नि वासिनि ऊं महावज्रेश्वरि ऋं शिवदूति ॠं त्वरिते लृं कुलसुन्दरि लॄं नित्ये एं नीलपताके ऐं विजये ओं सर्वमङ्गले औं ज्वालामालिनि अं विचित्रे अ: कामेश्वरि विद्यामालिनि अकुले कुलाकुलमहाकुले सर्वोत्तरपञ्चार्थज्ञानप्रदे सर्वदर्शनाङ्गमयि सर्वदर्शनोत्तीर्णस्वरूपिणि सर्वाध्वशोधनि कालकालेशवर्णे नवाक्षरि बालविद्या षोडशाधिका च नवकूटद्वयं सहखफ्रें आनन्देश्वरि घोरकालिनि अम्बाश्रीपादुकां पूजयामि हंस: श्रींह्रींऐं। इत्यावृत्तिसहस्राणांविद्या त्रैलोक्यपूजिता।

आवरण सहस्राक्षरी—तीनों लोकों में पूजित आवरण सहस्राक्षरी विद्या इस प्रकार है—ॐऐंह्रींश्रीं हंस: ॐ नमो भगवति अक्षोभ्ये रूक्षकर्णे राक्षसिपक्षत्रणे क्षपे पिङ्गलाक्षि अरुणे क्षये लीले लोले ललिते लूते लुलिते लम्बिके लङ्केश्वरि लासे विमले हताशनि विशालाक्षि हूंकारे वडवामुखि महारवे महाक्रोडक्रोधिनि खरास्ये सर्वज्ञे तरले तारे दृष्टिहृष्टे खगकन्धरे सारसि रससंग्रहिणि तालजङ्घे करङ्किणि मेघनादे प्रचण्डोग्रे कालकर्णि चेलप्रदे चम्पे चम्पावति प्रचम्पे प्रलयान्तकि पितृवक्त्रे पिशाचाक्षि पिशुनि लोलुपे वानति वानरि वामविकृतास्ये वायुवेगे बृहत्कुक्षिविकृते विश्वरूपिणि यमजिह्वे जये दुजये पुमन्तक्रि बिडालरेवति पूतने विजये अनन्ते क्रन्दिनि चण्डि रेकर्णि (सर्वसंक्षोभिणि सर्वविद्राविणि सर्वाकर्षिणि सर्ववशंकरि) सर्वोन्मादिनि सर्वमहांकुशे खेचरि (खचक्रधारिणि) सर्वबीजरूपे महायोनिरूपे त्रिखण्डे, अनङ्गब्राह्मि अनङ्गमाहेश्वरि अनङ्गकौमारि अनङ्गवैष्णवि अनङ्गवाराहि अनङ्गइन्द्राणि अनङ्गचामुण्डे अनङ्गमहालक्ष्मि प्रकटयोगिनीशि चार्वाकदर्शनाङ्गि त्रैलोक्य-मोहनचक्रस्वामिनि, कामाकर्षिणि (बुद्ध्याकर्षिणि अहङ्काराकर्षिणि शब्दाकर्षिणि स्पर्शाकर्षिणि रूपाकर्षिणि रसाकर्षिणि गन्धाकर्षिणि चित्ताकर्षिणि धैर्याकर्षिणि स्मृत्याकर्षिणि नामाकर्षिणि बीजाकर्षिणि आत्माकर्षिणि) अमृताकर्षिणि शरीराकर्षिणि गुप्तयोगिनीशि बौद्धदर्शनाङ्गि सर्वाशापूरकचक्रस्वामिनि, अनङ्गकुसुमे अनङ्गमेखले अनङ्गमदने अनङ्गमदनातुरे अनङ्गरेखे अनङ्गवेगिनि अनङ्गाङ्कुशे अनङ्गमालिनि अतिगुप्तयोगिनीशि रौद्रदर्शनाङ्गि सर्वसंक्षोभणचक्रस्वामिनि पूर्वाम्नायेशि सृष्टिप्रदे, सर्वसंक्षोभिणि सर्वविद्राविणि सर्वाकर्षिणि सर्वाह्लादिनि सर्वसंमोहनि सर्वस्तंभनि सर्वजृम्भिनि सर्ववशंकरि सर्वरञ्जनि सर्वोन्मादिनि सर्वार्थसाधनि सर्वसम्पत्त्रपूरणि सर्वमन्त्रमयि सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करि संप्रदाययोगिनीशि सर्वदर्शनाङ्गि सर्वसौभाग्यदायकचक्रस्वामिनि, सर्वसिद्धिप्रदे सर्वसंपत्प्रदे सर्वप्रियंकरि सर्वमङ्गलकारिणि सर्वकामप्रदे सर्वदु:खविमोचनि सर्वमृत्युप्रशमनि सर्वविघ्ननिवारणि सर्वाङ्गसुन्दरि सर्वसौभाग्यदायिनि कुलकौलयोगिनीशि सर्वार्थसाधकचक्रस्वामिनि, सर्वज्ञे सर्वशक्ते सर्वैश्वर्यप्रदायिनि सर्वज्ञानमयि सर्वव्याधिविनाशिनि सर्वाधारस्वरूपे सर्वपापहरे सर्वानन्दमयि सर्वरक्षास्वरूपे सर्वेप्सितफलप्रदे निगर्भयोगिनीशि सर्वरक्षाकरचक्रस्वामिनि दक्षिणाम्नायेशि स्थितिप्रदे, ब्लूँ वशिनि कलह्रीं कामेशि न्ब्लूं मोदिनि य्लूं विमले ज्म्रीं अरुणे हसलवयूं जयिनि झमरयूं सर्वेश्वरि क्ष्म्रीं कौलिनि रहस्ययोगिनीशि शाक्तदर्शनाङ्गि सर्वरोगहरचक्रस्वामिनि, द्रां क्लिन्ने मोहनकामबाण द्रीं शोषणकामबाण क्लीं नित्यसंदीपनकामबाण ब्लूं मंदसंतापनकामबाण स: द्रवे उन्मादनकामबाण द्रांद्रींक्लींब्लूंस: जम्भिनि जम्भय जम्भय मोहिनि मोहय मोहय आं आकर्षिणि आकर्षय आकर्षय स्तंभिनि स्तंभय स्तंभय ऐं कामेशि क्लीं वज्रेशि

सौः भगमाले अतिरहस्ययोगिनीशि सर्वसिद्धिमयचक्रस्वामिनि, कामराजविद्यामहात्रिपुरसुन्दरीमातः परापररहस्ययोगिनीशि सौगतदर्शनाङ्गि सर्वानन्दमयचक्रस्वामिनि पश्चिमाम्नायेशि अंआंसौः त्रिपुरे ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरि ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरि हैं हक्लींहसौः त्रिपुरवासिनि हसैंहसक्लींहसौः त्रिपुराश्रि ह्रींक्लींब्लें त्रिपुरमालिनि ह्रींश्रींसौः त्रिपुरासिद्धे हस्रैं हसकलरीं हस्रौः त्रिपुराम्बे हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौः महात्रिपुरभैरवि अं कामेशि आं भगमाले इं नित्यक्लिन्ने ईं भीरुण्डे उं वह्नि वासिनि ऊं महावज्रेश्वरि ऋं शिवदूति ॠं त्वरिते ऌं कुलसुन्दरि ॡं नित्ये एं नीलपताके ऐं विजये ओं सर्वमङ्गले औं ज्वालामालिनि अं विचित्रे अः कामेश्वरि विद्यामालिनि अकुले कुलाकुलमहाकुले सर्वोत्तरपञ्चार्थज्ञानप्रदे सर्वदर्शनाङ्गमयि सर्वदर्शनोत्तीर्णस्वरूपिणि सर्वाध्वशोधनि कालकालेशवर्णे नवाक्षरि बालविद्या षोडशाधिका च नवकूटद्वयं सहखफ्रें आनन्देश्वरि घोरकालिनि अम्बाश्रीपादुकां पूजयामि हंसः श्रींह्रींऐं।

अन्त्ययागविधिः

कुलार्णवे—

अथाभिधास्ये संक्षेपादन्त्ययागविधिक्रमम्। साधकानां च सिद्धानां दीक्षितानां शिवागमे ॥१॥
दीक्षितास्त्रिविधाः प्रोक्ता उत्तमाधममध्यमाः। तत्रोत्तमस्य नान्त्येष्टिः सर्वोत्तीर्णात् स्वदर्शनात् ॥२॥
अधमस्यापि नान्त्येष्टिर्मोचिका सामयं जगत्। पारिशेषदथान्त्येष्टिर्मध्यमस्येति नः स्थितिः ॥३॥
अथवा श्रद्धया कुर्यात् सर्वेषामुत्तमो गुरुः। स्वात्मशुद्ध्यर्थमेकत्र·······रूपयैव·······हि(?)॥४॥
साक्षात् करन्ध्रमध्येन ब्रह्मरन्ध्रविनिर्गतः। उत्तमो मध्यमस्त्वास्यश्रोत्रनासादिमार्गतः ॥५॥
अधमः पायुलिङ्गाभ्यां केवलं नारकी हि सः। पैशाचलोकमाप्नोति पायुमार्गविनिर्गतः ॥६॥
आस्येन देवलोकस्थो नासया नरलोकभाक्। श्रोत्रेण पितृलोकः स्याद् देवलोकस्तु चक्षुषा ॥७॥
करन्ध्रेण शिवस्थानमिति लोकस्य निर्णयः। मृतानां कृपयान्त्येष्टिः कतव्या देशिकेन तु ॥८॥
परीक्ष्य कालं विधिवद् देशिको मृत्यहात् पुरा। सप्ताहे वाथ पञ्चाहे त्र्यहे वाथ कुशार्पणम् ॥९॥
विधाय गात्रमानीय भैरवान् योगिनीस्तथा। समभ्यर्च्य गुरुं पश्चादीशानं योगविष्टरे ॥१०॥
कृत्वा च प्रणतिं सम्यक् पुष्पाञ्जलिपुरःसरम्। इति विज्ञापयेद् दीनो जानुभ्यामवनीं गतः ॥११॥
देवदेव महादेव करुणालय शङ्कर। नित्यानन्द निराधार निराकुल निरञ्जन ॥१२॥
आज्ञया तव देवेशि सिद्ध्यत्येव ममेप्सितम्। तथापि शिव सर्वज्ञ यानि दुश्चरितानि मे ॥१३॥
प्रमादादथवा ज्ञानात् तानि सर्वाणि सर्वदा। क्षमस्व परमेशान दासोऽहं तव चाव्यय ॥१४॥
इति विज्ञाप्य गुरवे दिव्यागमपुरःसरम्। स्वार्जितद्रव्यजातं यत्तत् सर्वं विनिवेदयेत् ॥१५॥
त्वदाज्ञयार्जिता ह्येते त्वदर्थं विनियोजिताः। इत्युक्त्वा प्रणमेद् भूयो गुरुभक्तिपरायणः ॥१६॥
गुरौ व्याप्ते प्रतिष्ठाप्य पादुकां तस्य पीठतः। समभ्यर्च्य यथान्यायं सर्वं तत्र समाचरेत् ॥१७॥
पुत्रशिष्यादिभिः कार्यं कारयित्वा विचक्षणः। स्वयं कर्तुमशक्तश्चेत् सर्वदा तद्दिने पुनः ॥१८॥
तत्प्रसादं महायत्नात् स्वीकर्तव्यं मनीषिभिः। अवशिष्टं तु यद्वस्तु चतुर्धा च विभज्य तत् ॥१९॥
औरसाय स्वपुत्राय दद्याद्भागद्वयं पुनः। गोत्रिभ्य एकमेकं तु स्वस्यान्तेष्ट्यर्थमादिशेत् ॥२०॥
श्रीचक्रं पूजयेत् तावद्यावत् पञ्चत्वमाप्नुयात्। उत्क्रान्तिकाले तत्कर्णे जपेत् तद्गुरुपादुकाम् ॥२१॥
चरणत्रयमन्त्रं च वदेच्चैवमथो गुरुः। तत्तत्समयनिष्ठानां तत्तन्मन्त्रं जपेद्गुरुः ॥२२॥
यस्मिन् निष्ठा परा तस्य तत्कर्णे सर्वथा जपेत्। अनुसन्धानबाहुल्यात् तत्र चित्तलयो भवेत् ॥२३॥

कुलार्णव में कहा गया है कि अब मैं संक्षेप में शिवागम में दीक्षित साधकों एवं सिद्धों के लिये उपयोगी अन्त्ययाग विधि को कहता हूँ। दीक्षित तीन प्रकार के होते हैं—उत्तम, मध्यम एवं अधम। उत्तम साधकों की अन्त्येष्टि नहीं होती; क्योंकि आत्म दर्शन से वे सर्वोत्तीर्ण होते हैं। अधमों की भी अन्त्येष्टि नहीं होती। शेष मध्यम की अन्त्येष्टि होती है अथवा श्रद्धा से

सबों में उत्तम गुरु स्वात्मशुद्धि के लिये एक साथ ही सभी क्रिया करता है। ब्रह्म का साक्षात् करने वाले उत्तम ब्रह्मरन्ध्र-मध्य से शरीर त्याग करते हैं। मध्यमों का मुख कान नाक मार्ग से बहिगर्मन होता है। अधमों के प्राण गुदालिङ्ग से निकलते हैं, वे नरकगामी होते हैं। पायु मार्ग से विनिर्गत प्राण वाले पैशाच लोक में जाते हैं।

जिनके प्राण मुख से निकलते हैं, वे देवलोकवासी होते हैं। नासा से जिनके प्राण निकलते हैं, वे मनुष्य लोक के वासी होते हैं। कान से जिनके प्राण निकलते हैं, उन्हें पितृलोक प्राप्त होता है। जिनके प्राण आँखों से निकलते हैं, वे देवलोक प्राप्त करते हैं। जिनके प्राण का बहिर्गमन ब्रह्मरन्ध्र से होता है, वे शिवलोक में वास करते हैं। मृतकों की अन्त्येष्टि करना देशिक का कर्तव्य होता है। मृत्युकाल निकट देखकर देशिक मृत्यु से सात, पाँच या तीन दिन पूर्व कुशार्पण करते हैं। भैरव-योगिनी की पूजा के पश्चात् गुरु की पूजा करके ईशान में योगासन पर पुष्पाञ्जलि-पूर्वक प्रणाम करके घुटनों के बल जमीन पर बैठकर इस प्रकार निवेदन करते हैं—

देवदेव महादेव करुणात्मय शङ्कर। नित्यानन्द निराधार निराकुल निरञ्जन।।
आज्ञया तव देवेशि सिद्ध्यत्येव ममेप्सितम्। तथापि शिव सर्वज्ञ यानि दुश्चरितानि मे।।
प्रमादादथवा ज्ञानात् तानि सर्वाणि सर्वदा। क्षमस्व परमेशान दासोऽहं तव चाव्यय।।

इस प्रकार निवेदन करके दिव्य-आगमसहित स्वार्जित समस्त द्रव्यों को गुरु को निवेदित कर दे एवं 'त्वदाज्ञयार्जिता ह्येते त्वदर्थं विनियोजिता:' अर्थात् आप ही की आज्ञा से यह सब मैंने प्राप्त किया था और आप ही को समर्पित कर दिया— यह कहकर गुरुभक्ति-परायण होकर प्रणाम करे। गुरु से व्याप्त पादुका को पीठ पर स्थापित करके यथान्याय अर्चन कर समस्त आचरण करे। स्वयं अशक्त होने पर यह कार्य पुत्र, शिष्य आदि से सम्पन्न करावे और उसका प्रसाद ग्रहण करे। अवशिष्ट वस्तु का चार भाग करके दो भाग अपने औरस पुत्र को एवं एक भाग सगोत्रीय को प्रदान करे तथा शेष एक भाग अपनी अन्त्येष्टि के लिये संरक्षित कर दे। जीवनपर्यन्त श्रीचक्र का अर्चन करे। उत्क्रान्ति काल में उसके कान में गुरुपादुका मन्त्र का जप करे। गुरुचरणत्रय मन्त्र का उच्चारण करे। समयनिष्ठों के प्रति उनके मन्त्र का जप करे। जिसमें जिसकी निष्ठा हो, उसी परामन्त्र का जप उसके कान में करे। अनुष्ठान की बहुलता से उसी में चित्त का लय हो जाता है।

निष्कलब्रह्मविद्या

श्रीभूतिराजलब्धानि श्रीशम्भुवदनाम्बुजात्। वाक्यानि ब्रह्मविद्यायाः प्रणवैः पुटितानि च ।।२४।।
अथोच्यते ब्रह्मविद्या सद्यः प्रत्ययकारिका। शिवः श्रीभूतिराजो यां सुविद्यां विन्यवेदयत् ।।२५।।
सर्वेषामेव भूतानां मरणे समुपस्थिते। यया पठितयोत्क्रम्य जीवो याति निरञ्जनम् ।।२६।।
या ज्ञानिनोऽपि संपूर्णकृत्यस्यापि श्रुता सती। प्राणविच्छेदजां मृत्युव्यथां सद्यो व्यपोहति ।।२७।।
यामाकर्ण्य महामोहविवशोऽपि क्रमागतः। प्रबोधं वक्तृसांमुख्यमभ्येति रभसात् स्वयम् ।।२८।।
तारो माया वेदकलो मातृतारो नवात्मकः। प्रतिवाक्यं यदाद्यन्ते योजिता परिपठ्यते ।।२९।।
ॐ ह्रीं हूं फ्रें हसक्षमलवरयूं—इति निष्कलब्रह्मविद्या।

निष्कल ब्रह्मविद्या—प्रणवपुटित ब्रह्मविद्या वाक्य को श्रीभूतिराज ने श्रीशिव के मुखकमल से सुना था। तुरन्त विश्वास दिलाने वाली ब्रह्मविद्या को कहता हूँ। श्रीशिव ने इस विद्या को भूतिराज से कहा था। इस विद्या का पाठ मृत्यु के समय करने से जीव सभी भूतों का उत्क्रमण करके निरञ्जन हो जाता है। ज्ञानी भी इसे सुनकर प्राणविच्छेद के समय मृत्युव्यथा का अनुभव नहीं करते। महामोह से विवश भी इसे कहने वाले के समक्ष अकस्मात् स्वयं ही ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। यह निष्कल ब्रह्मविद्या इस प्रकार है—ॐ ह्रीं हूं फ्रें हसक्षमलवरयूं।

निष्कलसम्पुटिता ब्रह्मविद्या

एतां तु वक्ष्यमाणेषु आद्यन्ते विनियोजयेत्।
ॐह्रींहूं फ्रें हसक्षमलवरयूं—परमपदात् त्वमिहागाः सनातनस्त्वं जहिहि देहान्तम्।

पादाङ्गुष्ठादि विभो निबन्धनं बन्धनं ह्युग्रम्। हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ॥१॥

५ँ गुल्फान्ते जानुगतं जत्रुस्थं बन्धन तथा मेढ्रे।
जहिहि पुरमुग्रमध्यं हृत्पद्मात् त्वं समुत्तिष्ठ ५ँ॥२॥
५ँ हंस हयग्रीव विभो सदाशिवस्त्वं परोऽसि जीवाख्यः।
रविसोमवह्निसंघट्टं बिन्दुं देवं हहह समुत्क्राम ५ँ॥३॥
५ँ हंसमहामन्त्रमयः सनातनस्त्वं शुभाशुभोपेक्षी।
मण्डलमध्यनिविष्टः शक्तिमहासेतुकारणमहार्थः ५ँ॥४॥
५ँ कमलोभयनिविष्टः प्रबोधमायाहि देवतादेव।
अज्ञानात् त्वं बद्धः प्रबोधितोत्तिष्ठ देवादे ५ँ॥५॥
५ँ व्रज तालुमाह्वयान्तं ह्यौडुम्बरघट्टितं महाद्वारम्।
प्राप्य प्रयाहि हंहो हंहो वा वामदेव पदम् ५ँ॥६॥
५ँ ग्रन्थीश्वर परमात्मन् सान्त महातालुरन्ध्रमासाद्य।
उत्क्राम हे देहेश्वर निरञ्जनं शिवपदं प्रयाह्याशु ५ँ॥७॥
५ँ आक्रम्य मध्यमार्गं प्राणापानौ समाहृत्य।
धर्माधर्मौ त्यक्त्वा नारायण प्रयाहि शान्तान्तम् ५ँ॥८॥
५ँ हे ब्रह्मन् हे विष्णो हे रुद्र शिवोऽसि वासुदेवस्त्वम्।
अग्नीषोम सनातन मृत्पिण्डं जहिहि हे महाकाश ५ँ॥९॥
५ँ अङ्गुष्ठमात्रमलमावरणं जहिहि हे महासूक्ष्म ५ँ॥१०॥
५ँ पुरुषस्त्वं प्रकृतिमयैर्बद्धोऽहङ्कारतन्तुना बन्धैः।
अभवाभव नित्योदित परमात्मंस्त्यज सरागमध्वानम् ५ँ॥११॥
५ँ ह्रींहूंमन्त्रशरीरमविलम्बमाशु त्वमेहि देहान्तम् ५ँ॥१२॥
५ँ तदिदं गुणभूतमयं त्यज स्वं षाट्कोशिकं पिण्डम् ५ँ॥१३॥
५ँ मा देहं भूतमयं प्रगृह्यतां शाश्वतं महादेहम् ५ँ॥१४॥
५ँ मण्डलममलमनन्तं त्रिधा स्थितं गच्छ भित्त्वैतत् ५ँ॥१५॥

इति श्रीब्रह्मविद्या।

निष्कल सम्पुटित ब्रह्म विद्या—ब्रह्म विद्या के प्रत्येक वाक्य के पहले और बाद में निष्कल ब्रह्म विद्या को जोड़कर पाठ करना चाहिये। पाठ का क्रम इस प्रकार है—

ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं परमपदात्त्वं मिहागाः सनातनस्त्वं जहिहि देहान्तम्।
पादांगुष्ठादि विभो निबन्धनं ह्युग्रम् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं गुल्फान्ते जानुगतं जत्रुस्थं बन्धन तथा मेढ्रे।
जहिहि पुरमुग्रमध्यं हृत्पद्मात् त्वं समुत्तिष्ठ हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं हंस हयग्रीव विभो सदाशिवस्त्वं परोऽसि जीवाख्यः।
रविसोमवह्निसंघट्टं बिन्दुं देवं हहह समुत्क्राम हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं हंसमहामन्त्रमयः सनातनस्त्वं शुभाशुभोपेक्षी।
मण्डलमध्यनिविष्टः शक्तिमहासेतुकारणमहार्थः हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।

ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं कमलोभयनिविष्ट: प्रबोधमायाहि देवतादेव।
अज्ञानात् त्वं बद्धः प्रबोधितोत्तिष्ठ देवादे हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं व्रज तालुमाह्वयान्तं ह्यौडुम्बरघट्टितं महाद्वारम्।
प्राप्य प्रयाहि हंहो हंहो वा वामदेव पदम् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं ग्रन्थीश्वर परमात्मन् सान्त महातालुरन्ध्रमासाद्य।
उत्क्राम हे देहेश्वर निरञ्जनं शिवपदं प्रयाह्याशु हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं आक्रम्य मध्यमार्गं प्राणापानौ समाहृत्य।
धर्माधर्मौ त्यक्त्वा नारायण प्रयाहि शान्तान्तम् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं हे ब्रह्मन् हे विष्णो हे रुद्र शिवोऽसि वासुदेवस्त्वम्।
अग्नीषोम सनातन मृत्पिण्डं जहिहि हे महाकाश हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं अङ्गुष्ठमात्रमलमावरणं जहिहि हे महासूक्ष्म हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं पुरुषस्त्वं प्रकृतिमयैर्बद्धोऽहङ्कारतन्तुना बन्धैः।
अभवाभव नित्योदित परमात्मंस्त्यज सरागमध्वानम् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं ह्रींहूंमन्त्रशरीरमविलम्बमाशु त्वमेहि देहान्तम् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं तदिदं गुणभूतमयं त्यज स्वं षाट्कोशिकं पिण्डम् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं मा देहं भूतमयं प्रगृह्यतां शाश्वतं महादेहम् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।
ॐह्रींहूंफें हसक्षमलवरयूं मण्डलममलमनन्तं त्रिधा स्थितं गच्छ भित्त्वैतत् हसक्षमलवरयूं फ्रेंहूंह्रींॐ।

अन्त्येष्टिकर्तुः कृत्यानि

ज्ञातं चेत् स्वयमेवासून् नियम्य प्रजपेत् तदा। अन्यथा श्रृणुयाद्वापि तदेकाग्रमना भवेत् ॥१॥
निर्बाणविद्यानिरतो निर्वाणपदभाग्भवेत्। श्रुत्वैतस्मिंस्तथान्त्येष्टिकर्ता स शिवसंयुतः ॥२॥
स्नात्वा सम्यगलंकृत्य नित्यकृत्यं यथाविधि। विधायानन्दसंपूर्णः कृत्वा न्यासादिकं तनौ ॥३॥
अभिमन्त्र्य जलं पश्चात् पञ्चप्रणवैर्गुरूक्तितः। पिण्डं संशोधयेद्विद्वानथ वासरपञ्चके ॥४॥

ज्ञात हो तो स्वयं ही प्राणों को नियन्त्रित करके इसका जप करे। अथवा इन ब्रह्मवाक्यों का एकाग्रमन से श्रवण करे। निर्वाण विद्या में निरत व्यक्ति निर्वाण पद प्राप्त करता है। इसे सुनने से एवं अन्त्येष्टिकर्ता शिवयुत होता है। स्नान करके सम्यक् अलंकृत होकर यथाविधि नित्य कृत्य करके सानन्द न्यासादि करे। गुरु से उपदिष्ट पाँच प्रणवों से जल को मन्त्रित करके पाँच दिनों तक विद्वान् अपने शरीर का शोधन करे।

दीपिनी-ज्वालामालिनीविद्या

अथवा दीपिनीमुक्त्वा ज्वालामालिन्यनन्तरम्। व्योमषष्ठस्वरार्धेन्दुहंसफडन्तको मनुः ॥५॥
मायाबीजान्तिकः प्रोक्तः शोधकः सर्वदेहिनाम्। आकृष्य स्थापयेत् प्रेतपिण्डे तु गुरुवाक्यतः ॥६॥

ॐह्रीं हसखफ्रें अं हसक्षमलवरयूं ऐं। दीपिनी, ज्वालामालिनी। हूंहंसः फट् ह्रीं हसक्षमलवरयूं हसखफ्रें ह्रीं ॐ। इति दीपिन्यादिविधिः।

अथवा ॐ ह्रीं हसखफ्रे अं हसक्षमलवरयूं ऐं दीपिनी, ज्वालामालिनी, हूं हंसः फट् ह्रीं दसक्षमलवरयूं हसखफ्रें ह्रीं ॐ—मन्त्र से आकृष्ट करके गुरुवाक्य के अनुसार प्रेतपिण्ड को स्थापित करे।

भयभक्षिणीमन्त्रः

एवं विशोधिते देहे शक्तिचालनयोगतः। नेत्ररन्ध्रादिमार्गेण लोकोत्तरविनिर्मि(र्ग)तः ॥७॥

वियद्वह्निभृग्वारूढं बिन्दुमुच्चार्य मोक्षदे। चक्षुरादिपदान्ते तु प्रेतनाम तथोच्चरेत् ॥८॥
आवाहयामीत्यनेन सपञ्चप्रणवेण वै।

५ँ ह्रंः मोक्षदे चक्षुराद्यवयववन्तमावाहयामि ५ँ।

मन्त्रेणावाहयेत् प्रेतं सर्गादिभ्यो निराकुलम्। अमुष्येत्यादिमन्त्रेण प्रतिष्ठाप्य समीरणम् ॥९॥
अङ्गं सङ्कल्पयेत् पश्चान्मायाषड्दीर्घजातिभिः। एकसूत्राभिसंवीतं प्रतिष्ठाप्य घटं पुनः ॥१०॥
अभ्यर्च्योक्तेन मार्गेण पिण्डं संस्थापयेत्ततः। आदाय पूजितां पक्ष्या वार्धानीमस्त्ररूपिणीम् ॥११॥
सर्वतीर्थमनुं स्मृत्वा तत्तोयैरभिषेचयेत्। भस्मस्नानं ततः कुर्यात् परमेष्ठिमनुं स्मरेत् ॥१२॥
पिण्डं दक्षिणमूर्धानं न्यस्तं दर्भास्तरे पुनः। नववस्त्रस्रगालेपैरलंकृत्याथ भूषणैः ॥१३॥
तस्मिन् पिण्डे न्यसेत् पश्चान्मन्त्रराजमशेषतः। अभ्यर्च्य क्रममुद्वास्य समाप्तिं गुरुपादुकाम् ॥१४॥
सम्यग्विमानं सङ्कल्प्य संस्थाप्य तं विचक्षणः। ग्रामं प्रदक्षिणीकृत्य शङ्खभेर्यादिनिःस्वनैः ॥१५॥
प्रेतस्थानं प्रविश्याथ दक्षिणोत्तरमायताम्। उपलिप्य समां भूमिं लाजाक्षततिलानपि ॥१६॥
विकीर्य सर्षपान् प्रोक्ष्य विमानं तत्र विन्यसेत्। सस्थाप्य तत्र चित्याग्निं परिस्तीर्य विलोमतः ॥१७॥
पात्राण्यासाद्य विधिवद् दक्षिणे विष्णुदेवतम्। प्रणीतापात्रमासाद्य संपूज्य कुसुमादिभिः ॥१८॥
दर्भैराच्छादितं धीमान् वह्निकोणे प्रविन्यसेत्। दक्षभागे यजेद् देवं भैरवं मण्डले क्रमात् ॥१९॥
पूर्वोक्तेन विधानेन कृत्वा जिह्वादिकल्पनाम्। तिलतण्डुलसंमिश्रं पायसं चरुकं पुनः ॥२०॥
मृत्युञ्जयेन संमन्त्र्य पञ्चश्लोकैर्विशेषतः। साज्येन चरुणा पश्चात् पञ्चरत्नैर्विशेषतः ॥२१॥
ब्रह्माण्यां न्याससंप्रोक्तैः स्वाहान्तैः सुसमाहितः। मूलविद्याद्वयं जप्त्वा प्रत्येकं सप्तसप्तकम् ॥२२॥
हुनेत् क्रमात् सावरणं विलोमेन विधानतः। एवं विलोमतो होमान्न्यस्तमन्त्रान् गुरोस्तनौ ॥२३॥
क्रमेण विलयं कुर्यात् सूक्ष्मपुर्यष्टकात्मनि। हुत्वा वाग्भवमन्त्रेण स्वाहान्तेन विचक्षणः ॥२४॥
पुनश्च विद्यया हुत्वा ततस्तत्त्वलयात्मिकाम्। इष्टिं संन्यासिनां कुर्यात् क्रमेण व्याप्तिभाजनम् ॥२५॥
ततस्तत्त्वानि सूक्ष्माणि विलोमेन विधानतः। तत्रार्थे शेषं संयोज्य सर्वमात्मनि योजयेत् ॥२६॥
सूक्ष्मरूपेणात्मगतपुण्यपापे सदा ह्ययम्। नाशयेत् कर्म शिष्यस्य भयभक्षिणिहोमतः ॥२७॥

५ँ खटंकसखवरयूं हुं फट् शिशोः खहुं पुण्यपापानां नाशयामि स्वाहा ५ँ।

एवं स्थूलक्रमं हुत्वा सूक्ष्मलीनं विभावयेत्। विलोमेन क्रमेणैव सूक्ष्मं चापि परं तथा ॥२९॥
एवं विभौ समायोज्यं शिष्यं क्षीणमलत्रयम्। पूर्णाहुतिप्रयोगेण योजयेत् परमे पदे ॥३०॥
शिवशक्त्यात्मके शुद्धे पुनरावृत्तिवर्जिते। संवित्सुखमये साक्षात् तत्त्वातीते निजे पदे ॥३१॥

इस प्रकार शोधित देह में शक्तिचालन योग से नेत्ररन्ध्रादि मार्ग से लोक से बाहर निकले। ॐ ह्रीं हूं फ्रें हसक्षमलवरयूं ह्रः मोक्षदे चक्षुराद्यवयवन्तमावाहयामि हसक्षमलवरयूं फ्रें हूं ह्रीं ॐ मन्त्र से प्रेत का आवाहन करे। अमुष्य इत्यादि मन्त्र से प्राणप्रतिष्ठा करे। ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं हः से षडङ्ग की कल्पना करे। एक धागे से आवृत घट का स्थापन करे एवं उक्त विधि से पिण्ड स्थापित करे। उसकी पूजा एक पक्ष या एक सप्ताह तक करे। सर्वतीर्थ मन्त्र का स्मरण करके उस जल से अभिषेक करे। परमेष्ठि मन्त्र का स्मरण करके भस्मस्नान करे। नया वस्त्र पहन कर लेप और भूषणों से युक्त हो जाय। उस पिण्ड में पूरे मन्त्रराज का न्यास करे। पूजा करे और गुरुपादुका से उद्वासन करे। सम्यक् विमान बनाकर संकल्प करके उसे स्थापित करे। ढोल शङ्ख आदि बजाते हुए ग्राम की प्रदक्षिणा करे। श्मशान में जाकर दक्षिण से उत्तर की ओर विस्तृत भूमि को लीप कर उस पर लावा अक्षत तिल छींटे। सरसों छींटकर विमान को उस पर रखे। स्थापित करके वहाँ चित्याग्नि को विलोम रूप में परिस्तरण करे। पात्रों को लेकर विष्णु देवता के दक्षिण में स्थापित करे। प्रणीतापात्र की पूजा पुष्पादि से करे। कुशाच्छादन करके अग्नि कोण में उसे रखे। उसके दाँयें भाग में भैरव की पूजा मण्डलक्रम से करे। पूर्वोक्त विधान से अग्निजिह्वादि की कल्पना करके तिल-चावल मिश्रण, पायस, चरु को मृत्युञ्जय मन्त्र के पाँच श्लोकों से विशेषतः मन्त्रित करे। घी सहित चरु

से पञ्चरत्न से ब्रह्माणी न्यास मन्त्र में स्वाहा जोड़कर हवन करे। मूल विद्याद्वय का जप सात-सात बार करे। विलोम क्रम से आवरण देवताओं का हवन करे। इस प्रकार के विलोम हवन तीन अस्त्रमन्त्रों से करे। गुरु के शरीर में क्रम से विलय करे। सूक्ष्म पुर्याष्टक आत्मा का हवन करे। यह हवन वाग्भव मन्त्र के बाद स्वाहा जोड़कर करे। पुन: विद्या से तत्त्वलयात्मक रूप में हवन करे। संन्यासी क्रम से व्याप्तिभाजन इष्टि करे। सूक्ष्म तत्त्वों का हवन विलोमत: विधिवत् करे। शेष आधे से सबको संयुक्त कर सबों को स्वयं से जोड़े। सूक्ष्म रूप में शिष्य आत्मगत पुण्य-पापों का हवन भयभक्षिणी मन्त्र से करे— ह्रीं हूं फ्रें हसक्षमलवरयूं खटं-कसखवरयूं हुं फट् शिशो: खहुं पुण्यपापानां नाशयामि स्वाहा हसक्षमलवरयूं फ्रें हूं ह्रीं ३०। इस प्रकार स्थूल क्रम से हवन के बाद सूक्ष्म में लीन होने की भावना करे। विलोम क्रम से सूक्ष्म को पर में लीन करे। इसी प्रकार विभु में जोड़कर को शिष्य पूर्णाहुति योग से परम पद में योजित कर दे। यह परम पद शिव-शक्त्यात्मक है, जिसमें पुनर्जन्म नहीं होता; यह संवित् सुखमय एवं तत्त्वातीत कहा गया है।

योजनिकानन्तरं शेषकर्तव्यता

इति संयोजिते साक्षाद् गुरुणा परमे पदे। संत्यज्य मलकालुष्यं शुभं वा चावकल्पके (?)॥३२॥
आज्येन जुहुयात् पञ्चश्लोकैस्तत्त्वैरघोरत:। अनुलोमविधानेन प्रायश्चित्ताय चास्तिक:॥३३॥
देहमानेन शिष्यस्य शयनं परिकल्पयेत्। बहिर्दक्षिणदिग्भागे कुलवृक्षसमुद्भवै:॥३४॥
शङ्कुभिर्दक्षिणावर्तसमिद्भिर्वाथ पिङ्गलै:। दर्भैश्च: शयनं कृत्वा त्रिगुणीकृत्य तन्तुना॥३५॥
नवकृत्वो वेष्टयित्वा चन्दनागुरुपूर्वकै:। कृत्वा चितिं पुन: काष्ठैर्नववस्त्रेण वेष्टयेत्॥३६॥
पद्मं त्रिकोणषट्कोणकर्णिकं साष्टपत्रकम्। सद्विरेखं विधायात्र पुष्पाणि विनिसार्य च॥३७॥
प्रेतं दक्षिणमूर्धानं विन्यस्य जिह्मदृष्टिक:। रक्षां मन्त्रेण सङ्कल्प्य ज्वालामालिनिविद्यया॥३८॥
प्रज्वाल्याघोरमन्त्रेण तथा पाशुपतेन वा। यावद्भस्मीभवत्येतत् तावद्धोमो विधीयते॥३९॥
प्राप्ता ये गोत्रिणस्तत्र सर्वत्र च समागता:। स्तोत्रं मन्त्रजपं कुर्यु: प्रयुतायुतकर्मणा॥४०॥
विभाव्य क्रमत: प्रेतं भक्षितं योगिनीगणै:। विद्याद्वयजपं कुर्यान्त्रिश्चलेनान्तरात्मना॥४१॥
स्तुत्वा पश्चाद्यथाशास्त्रं स्वक्रमं सम्यगर्चयेत्। रक्षयेच्च चितावह्निं यावदस्थिसमुच्चयम्॥४२॥
दिवसे सप्तमे वह्निं घृतेन पयसाथवा। निर्वाप्यास्थीनि पादाद्यं नवधा मस्तकावधि॥४३॥
क्रमात् संगृह्य नि:क्षिप्य पात्रे संवेष्ट्य वाससा। नवेन भस्म प्रक्षिप्य नद्यां तोयालयेऽपि वा॥४४॥
देवमातृगृहे वाथ स्वगृहे वास्थिभाजनम्। खात्वा निधाय तस्योच्चैर्मेखलात्रयसंयुतम्॥४५॥
पीठं सङ्कल्प्य शिष्यो वा कनिष्ठोऽणुविधानवित्। त्रिसंध्यमर्चयेत् पीठे विधिवद्गुरुमण्डलम्॥४६॥
एकादशे दिने कृत्वा सायमुत्सवमास्तिक:। सम्यक्पात्रं प्रतिष्ठाप्य हेतुनापूर्य सादरम्॥४७॥
स्वर्णरत्नादिकं तत्र विनि:क्षिप्य यथाबलम्। समयाचारसंपन्नं नित्यपूजापरायणम्॥४८॥
योग्यं मान्त्रिकमानीय संपूज्यास्मै निवेदयेत्। पर्वपूजां मृताहेऽपि प्रतिमासं सम'ाचरेत्॥४९॥
संपूर्णे वत्सरे कुर्यान्महोत्सवमतन्द्रित:। अस्थिभाजनमुद्धृत्य पश्चाद् देशिकपुङ्गव:॥५०॥
नद्यां समुद्रगामिन्यां निक्षिपेन्निखनेत्तु वा। नदीतीरेऽथवान्यत्र तत्र वृक्षान् प्ररोपयेत्॥५१॥
अथवा प्रतिमां वापि कृत्वा शिल्पिभिरन्वित:। पादुकां वा शुभे देशे सुलग्ने सुमुहूर्तके॥५२॥
पूर्वोक्तेन विधानेन संयोज्य परमे पदे। भावयेन्मनसा पश्चात् शम्भुत्वं तस्य चान्तिके॥५३॥
ये केचित् पशुमार्गस्था गुप्ताचारा: कुलागमे। तेषामपि मृते कुर्याद् दर्भै: पञ्चाशता गुरु:॥५४॥
विधाय कूर्चमावाह्य तत्र प्रेतं विधानत:। पूर्वोक्तेन विधानेन तत्र सर्वं समाचरेत्॥५५॥
जोषयेदन्यशिष्याणामन्यथा कृपया गुरु:। कुर्याद्वा तेन प्रतिमामन्त्येष्टिं कुलशासने॥५६॥
सर्वलक्षणसम्पन्नं शालिपिष्टमयं शुभम्। देहं कृत्वा समावाह्य शिष्यात्मानं विधानत:॥५७॥
तस्मिन् पिण्डे न्यसेत् पूर्वं मन्त्रं पूर्ववदेव तु। पश्चाद्विलोममार्गेण हुत्वा स्थूलक्रमं बुध:॥५८॥
परे क्रमे निवेश्याथ पिण्डं पिष्टमयं तत:। स्रुचि नि:क्षिप्य जुहुयात् स्रुवेणाच्छाद्य देशिक:॥५९॥

पूर्णाहुतिप्रयोगेण प्राणाद्यैरेव पञ्चभिः । गुरुमुद्दिश्य कर्तव्या शिष्यैर्हुतिभिरेव वा ॥६०॥
अन्त्येष्टिः सर्वदा कार्या मृतानाममृतेन तु । साक्षात् शाम्भवसिद्धानामन्ययोगो विधीयते ॥६१॥
तथापि कुर्यात् सिद्धार्थमात्मनः सर्वमास्तिकः । अथवा मनसा कुर्यादेकान्ते स्वयमास्तिकः ॥६२॥
मानसं परमुत्कृष्टं योगिनामपि न स्थितिः । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन मानसं क्रममाचरेत् ॥६३॥

इत्यन्त्येष्टिविधिः।

श्रीनाथांघ्रिसरोजकल्पकमहाशाख्येकनानाबिलश्रीमत्तन्त्रकदम्बकाकलनतो विद्यार्णवाख्यं परम् ।
विद्यारण्ययतिश्चकार सुमहत् तन्त्रं सतां प्रीतये श्रीविद्यानगरेऽम्बदेवनृपतौ सन्नीतितः शासति ॥

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे षट्त्रिंशत्तमः श्वासः॥३६॥

●

इस प्रकार गुरुपद में संयोजित करने से शिष्य मल-कालुष्य-रहित होकर शुद्ध हो जाता है। अघोर पाँच श्लोकों से आज्य से हवन करे। प्रायश्चित्त के लिये अनुलोम क्रम से हवन करे। देहमान से शिष्य के शयन की कल्पना करे। उसके दक्षिण दिशा में कुलवृक्ष-समुद्भूत शङ्कु दक्षिणावर्त या समिधा से या जल से कुश से शय्या करे। चिति को पुनः काष्ठ से नये वस्त्र से ढक दे। त्रिकोण षट्कोण अष्टपत्र दो भूपुर से मण्डल बनावे। उस पर फूल बिखेर दे। शव को दक्षिण तरफ शिर करके रखे। रक्षामन्त्र से संकल्प करे। ज्वालामालिनी विद्या से अग्नि प्रज्वलित करे। तदनन्तर अघोर और पाशुपत से तब तक हवन करे जब तक वह भस्मीभूत न हो जाय। समागत उसके गोत्र वाले स्तोत्र मन्त्र का जप प्रयुत या अयुत संख्या में करें। प्रेत को योगिनी गणों ने खा लिया—ऐसी भावना करके निश्चल अन्तरात्मा से दोनों विद्याओं का जप करे। यथाशास्त्र स्तुति करके अपने क्रम से अर्चन करे। चिता की अग्नि का रक्षण अस्थिसञ्चय होने तक करे। सातवें दिन घी या दूध से अग्नि को बुझाकर पैरों से लेकर मस्तक तक की नव हड्डियों को क्रम से ग्रहण करे। पात्र में रखकर नये वस्त्र में लपेट कर उसे नदी के जल में डाल दे अथवा देवालय में या अपने घर में गड्ढा खोदकर अस्थिभाजन को रखकर उसके ऊपर तीन मेखलायुक्त पीठ बनावे। तब शिष्य या कनिष्ठ गुरुभाई तीनों सन्ध्याओं में उसकी पूजा करे। विधिवत् गुरुमण्डल की पूजा करे। ग्यारहवें दिन शाम में उत्सव आदि करे। सम्यक् पात्र स्थापित करके आदरसहित हेतु से भरे। वहाँ पर यथाशक्ति सोना-रत्नादि रखे। समयाचार-सम्पन्न साधक नित्य पूजा करे एवं योग्य मान्त्रिक को बुलाकर पूजा करके वह सब उसे प्रदान कर दे। पर्वपूजा मृत्युदिन में प्रत्येक महीने में करे। वर्ष पूरा होने पर निरालस होकर महोत्सव करे एवं अस्थिपात्र को लेकर देशिकपुंगव समुद्रगामिनी नदी में प्रवाहित कर दे। नदीतट पर या अन्यत्र वृक्षारोपण करे। अथवा शिल्पी से प्रतिमा बनवाकर या पादुका को शुभ देश में सुलग्न में शुभ मूहुर्त में पूर्वोक्त विधान से परम पद में योजित होने की भावना करे। मानसिक चिन्तन करे कि शम्भुत्व प्राप्त हो गया। जो पशुमार्ग गुप्ताचार कुलमार्ग में हों उनके मरने पर गुरु पचास कुशों से कूर्च बनाकर प्रेत का उसमें आवाहन करे एवं पूर्वोक्त विधान से सभी कर्म करे। अन्य शिष्यों में गुरु इसे न करे। कुलशासन के अनुरूप उनकी अन्त्येष्टि करे। शालिपिष्ट से सर्व लक्षणयुक्त प्रतिमा बनाकर उसमें विधान से शिष्य की आत्मा का आवाहन करे। उस पिण्ड में पूर्ववत् मन्त्रन्यास करे। इसके बाद स्थूल मार्ग से विलोम क्रम से हवन करे। परा क्रम में पिष्टमय पिण्ड में श्रुति का निक्षेप करके स्रुव से आच्छादन करके हवन करे। पूर्णाहुति प्रयोग से पाँचों प्राणों से आहुति प्रदान करे। गुरु के उपदेशानुसार शिष्य को आहुति करनी चाहिये। मृतकों की अन्त्येष्टि सर्वदा अमृत से करे। साक्षात् शाम्भव सिद्धों के लिये अन्य योग कहता हूँ। आत्मसिद्धि के लिये आस्तिक को सब कुछ करना चाहिये। अथवा आस्तिक एकान्त में मनसा स्वयं करे। मानस क्रम परम उत्कृष्ट है और यह योगियों द्वारा भी ज्ञेय नहीं है। इसलिये सभी यत्नों से मानस क्रम का आचरण करे।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र की कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में षट्त्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

समाप्तोऽयं श्रीविद्यार्णवः । शुभमस्तु पाठकोपासकेभ्यः

पुस्तक परिचय

'श्रीविद्या' शब्द श्रीत्रिपुरसुन्दरी के मन्त्र एवं उसके अधिष्ठात्री देवता—इन दोनों का बोधक है। सामान्यतया 'श्री' शब्द 'लक्ष्मी' अर्थ में प्रसिद्ध है; परन्तु हारितायन संहिता, ब्रह्माण्डपुराण-उत्तरखण्ड आदि पुराणेतिहासों में वर्णित आख्यायिकाओं के अनुसार 'श्री' शब्द का मुख्य अर्थ 'महात्रिपुरसुन्दरी' ही है। श्री महालक्ष्मी ने महात्रिपुरसुन्दरी की चिरकाल-पर्यन्त आराधना कर जो अनेक वरदान प्राप्त किये हैं, उनमें एक वरदान 'श्री' की आख्या से लोक में ख्याति प्राप्त करने का भी है। अस्तु; 'श्री' शब्द का 'महालक्ष्मी' अर्थ तो गौण ही है; मुख्य अर्थ है—'श्री' अर्थात महात्रिपुरसुन्दरी की प्रतिपादिका विद्या—मन्त्र = 'श्रीविद्या'। वाच्य एवं वाचक का अभेद मानकर इस मन्त्र की अधिष्ठात्री देवता भी 'श्रीविद्या' ही सिद्ध होती है। इस श्रीविद्या के उपासकों को लौकिक फल तो प्राप्त होते ही है; आत्मज्ञानी को प्राप्त होने वाला शोकोत्तीर्णतारूप फल भी श्रीविद्यापासकों को निश्चित रूप से प्राप्त होता है; साथ ही यही फल ब्रह्मविद्या से भी प्राप्त होता है; अतः फलैक्य होने के कारण श्रीविद्या ही ब्रह्मविद्या है—यह निर्विवाद सत्य प्रतिष्ठापित होता है।

'श्रीविद्या' का साङ्गोपाङ्ग विवेचन करने वाला सर्वप्रामाणिक महनीय ग्रन्थ 'श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्' न केवल श्री विद्या; अपितु दश महाविद्याओं के विशद् विवेचन के साथ-साथ शैव, शाक्त, गाणपत्य, वैष्णव, सौर आदि सभी मन्त्रों एवं उनके तत्तद् यन्त्रों से पाठक को साक्षात्कार कराने वाला एक बृहत्काय ग्रन्थ है। स्वामी विद्यारण्य यति द्वारा छत्तीस श्वासों में गुम्फित यह ग्रन्थरत्न पूर्वार्द्ध एवं उत्तारार्द्ध रूप दो खण्डों में समुपलब्ध है। अंग-उपांगसहित श्रीविद्या के सविधि विवेचन के साथ-साथ अन्य देवी-देवताओं के भी मन्त्र-यन्त्रों का समग्र रूप मे विवेचन, उनके उपसना की विधि एवं उपासना के फलस्वरूप प्राप्त होने वाले फलों को भी स्पष्टतया अभिव्यक्त करना इस ग्रन्थ की सर्वातिशायी विशेषता है। अन्य ग्रन्थों में जहाँ किसी भी उपास्य देवता के एक, दो, चार अथवा कतिपय प्रमुख मन्त्र-यन्त्रों का ही विवेचन उपलब्ध होता है; वही इस ग्रन्थ में विवेच्य समस्त देवी-देवताओं के प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध सभी मन्त्र-यन्त्रों को उनकी विधियों सहित स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है; फलस्वरूप सम्बद्ध देवता के किसी भी मन्त्र-यन्त्र अथवा उसकी विधि को जानने के लिये साधक को किसी अन्य ग्रन्थ का अवलम्ब ग्रहण करने की लेशमात्र भी आवश्यकता नहीं रह जाती। संक्षेप में कहा जा सकता है कि श्रीविद्यारण्ययति-प्रणीत 'श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्' एकमात्र ऐसा ग्रन्थ है, जो साधक के समस्त कामनाओं की पूर्ति करने में सर्वतोभवेन समर्थ है।

अस्तु; यह ग्रन्थ अद्यावधि अपने मूल स्वरूप में ही, बिना किसी भाषा-टीका के उपलब्ध था, जिससे जिज्ञासु साधकों को आराधना में पग-पग पर दुरूह कठिनाइयों का अनुभव होता था एवं ग्रन्थ के ताप्तर्य से अवगत ने हो पाने के कारण वे बार-बार विशयग्रस्त हो जाते थे। इसी को हृदयङ्गम कर तन्त्रग्रन्थों के ख्यातिनाम भाषा-भाष्यकार श्री कपिलदेव नारायण ने इस विशालकाय ग्रन्थ को भाषा टीका से अलंकृत कर सर्वनहृद्य बनाने का साहसिक प्रयास किया है। सर्वजनसुलभ इस हिन्दी भाष्य द्वारा श्री नारायण ने कूटाक्षर में निबद्ध मन्त्र-यन्त्रों को भी स्पष्ट करके साधकों का महनीय उपकार किया है।

पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध के विभाजन से दो भागों में विभक्त यह विशालकाय ग्रन्थ भाषा-भाष्य से अलंकृत होने के फलस्वरूप और भी बृहद् कलेवर को प्राप्त हो गयाः फलस्वरूप जिज्ञासुओं के सौकर्य को दृष्टिगत कर इसे पाँच भागों (पूर्वार्द्ध—दो भाग एवं उत्तरार्द्ध—तीन भाग) में प्रकाशित किया जा रहा है। वृहत्तन्त्रसार, देवीरहस्य आदि मूल ग्रन्थों को सर्वजनसंवेद्य भाषा भाष्य से विभूषित कर सर्वजन सुलभ बनाने वाले विद्धान् भाष्यकार श्री कपिलदेवनारायण द्वारा प्रयोगपरक भाषा भाष्य से अलंकृत यह ग्रन्थ जिज्ञासुओं की समस्त जिज्ञासाओं का शमन करने में सर्वविध समर्थ होगा—इसमें विचिकित्सा के लिये लेशमात्र भी स्थान नही है।

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी